भारतीय अर्थशास्त्र

(प्रश्नोत्तर रूप मे)

लेखक

रघुवीर सिह जैन एम ए, एम कॉम

भूतपूर्व अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, जैन कालिज, बड़ौत

पूर्णतया सशोधित ९ वा सस्करण

प्रकाशक

रस्तोगी एण्ड कम्पनी

मुद्रक तथा प्रकाशक, मेरठ

[मूल्य ८ रुपये

नवम संस्करण की भूमिका

"भारतीय अर्थशास्त्र' का नवम परिवर्द्धित तथा संशोधित संस्करण आपके सामने प्रस्तुत करते हुए मुझे बड़ा हर्ष है। पुस्तक का अष्टम संस्करण अल्प काल में ही समाप्त हो गया और फिर भी माग बनी रही इसके लिये मैं अपने सहयोगी अध्यापकों तथा प्रिय छात्रों का हृदय से आभारी हूं। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि पुस्तक विद्यार्थियों को उपयोगी सिद्ध हो सकी। जितने भी सुझाव मेरे पास आये हैं उनका पुस्तक में यथोचित ढंग से समावेश किया गया है।

प्रस्तुत संस्करण की विषय सामग्री प्राय नये रूप से जुटाई गई है तथा बिल्कुल ताजे आँकडे दिये गये हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कारण अगले पाँच वर्षों में देश की अर्थ व्यवस्था में जो परिवर्तन होने की सम्भावना है उनका यथास्थान उल्लेख किया गया है तथा तीसरी योजना की रूप रेखा भी दी गई है। प्रश्न संख्या भी बढ़ा दी गई है और पुस्तक का कलेवर भी बढ़ गया है। फिर भी मूल्य में कोई वृद्धि नहीं की गई जिससे कि अधिक से अधिक विद्यार्थी लाभ उठा सकें।

अन्त में मैं पुन अपने प्रिय छात्रों तथा विद्वान अध्यापकों का धन्यवाद देना अपना कर्तव्य समझता हूं जिन्होंने पुस्तक को अपनाकर मेरा उत्साह बढ़ाया है।

सुझावों के लिये मेरा निमन्त्रण है।

कलकत्ता
१५-६-५६

विनीत
रघुबीर सिंह जैन

विषय-सूची

घास-फूस के सहारे पशु पाले जाते है। पर किस स्थान पर किस प्रकार के पशु पाले जाएं यह इस बात पर निर्भर है कि वहाँ पर कितनी वर्षा होती है तथा कितनी घास उगती है। यदि किसी स्थान पर अधिक वर्षा होने के कारण लम्बी घास उत्पन्न होती है तो वहाँ पर भेड़, बकरियाँ पाली जाती है।

जलवायु के पश्चात् पशुओ का आर्थिक उन्नति पर प्रभाव पडता है। हमारे देश मे पजाब तथा काश्मीर मे भेड बकरियाँ पाली जाती हैं जिसके कारण वहाँ ऊनी कपडे के कारखाने हैं। इसके विपरीत, उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश आदि मे गाय, बैल आदि पाले जाते हैं जिसके कारण कानपुर आदि स्थानो मे चमडे का काम खूब होता है। इसके अतिरिक्त, इस प्रदेश से करोडो रुपए का चमडा व खालें विदेशो को भेजी जाती है। चमडे के उद्योग के अतिरिक्त इस प्रदेश मे दुग्ध उद्योग भी खूब होता है। यह बात अवश्य है कि पशुओ की खराब नसल के कारण हम इतना दूध नही पाते जिससे कि उसको आस्ट्रेलिया आदि देशो के समान विदेशो को भेज सके परन्तु यह बात सत्य है कि सारे गगा-यमुना के प्रदेशो मे स्थान-स्थान पर दूध का काम होता है।

इन सबके अतिरिक्त देश के खनिज पदार्थो का भी आर्थिक उन्नति पर बहुत बडा प्रभाव पडता है। वह देश जहाँ पर खनिज पदार्थ पर्याप्त मात्रा मे पाए जाते हैं, औद्योगिक होता है और वहाँ के लोग बहुत समृद्धि शाली होते है। पर जहाँ खनिज पदार्थो की कमी है वहाँ के लोग कम उन्नत होते हैं, जैसे इङ्गलैंड तथा अमेरिका खनिज पदार्थों के कारण ही आज दुनिया के बड़े-चढ़े देशो मे हैं और भारतवर्ष खनिज पदार्थों की कमी के कारण बहुत पिछडा हुआ है।

इस प्रकार हम देखते है कि किसी देश की प्राकृतिक परिस्थितियो का उस देश की उन्नति पर बहुत प्रभाव पडता। प्राकृतिक परिस्थितियो के कारण ही भारतवर्ष एक खेतीहर देश है। इसी कारण गगा, यमुना के मैदान मे अधिक जनसख्या है तथा वह बहुत उन्नत है और दक्षिण का पठार तथा हिमालय प्रदेश बहुत पिछडे हुए हैं।

५ सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव

किसी देश की सामाजिक रचना भी उस देश की आर्थिक उन्नति पर बहुत और प्रभाव डालती है। देशो मे किस प्रकार से लोग अपना सामाजिक जीवन व्यतीत करते है, किस धर्म के मानने वाले है, किस प्रकार के उत्तराधिकार के नियम है, किस प्रकार से घरेलू जीवन व्यतीत करते है, यह सभी बातें देश की आर्थिक उन्नति पर ऊपर प्रभाव डालती हैं। भारतवर्ष को ही लीजिये, भारतवर्ष के लोग अधिकतर हिन्दू है, वे अहिंसा मे विश्वास करते है तथा उनका विचार है कि मनुष्य को अपनी इच्छाओ को नही बढाना चाहिये। इस कारण वह मछली, माँस आदि कम खाते है, जिसके कारण देश मे अन्न सकट रहता है और अपने खेतो मे हड्डी तथा मछली की

अच्छी खाद देना पसन्द नही करते । कम इच्छायें होने के कारण वे कम धन एकत्र करते हैं और नई-नई चीजो की खोज भी कम करते है ।

इसके अतिरिक्त भारतवर्ष मे जाति-पाति का भेद बहुत पाया जाता है जिससे आर्थिक उन्नति मे बहुत बाधाये उत्पन्न होती हैं । 'इसके अतिरिक्त इस देश मे लोग अधिकतर एक परिवार के रूप मे रहते हैं । इस देश के परिवारो मे इङ्गलैंड देश के परिवारो की भाँति किसी व्यक्ति की स्त्री, बच्चे आदि ही नही होते वरन् माँ बाप दादा, परदादा आदि बहुत से लोग होते है । इस सामूहिक परिवारिक प्रथा के कारण भी देश मे कई प्रकार के लाभ तथा हानियाँ होती हैं, जैसे एक साथ रहने तथा कमाने के कारण परिवार के कुछ लोगो को अधिक काम करना पडता है और कुछ लोग निकम्मे हो जाते है । इस कारण धन एकत्र करने मे बहुत कठिनाई उत्पन्न होती है और यह बात देश की आर्थिक उन्नति मे बहुत बाधक है । पर इस पारिवारिक प्रथा के टूटने के कारण वृद्ध, बच्चे तथा अबलाए' निराश्रित रह गई तथा भूमि का बटवारा हो जाने पर छोटे-छोटे खेत हो गये है । इसके अतिरिक्त देश के उत्तराधिकार के नियमो का भी देश की आर्थिक उन्नन्ति पर बहुत प्रभाव पडा है। इस देश मे कुछ ऐसे सामाजिक नियम है जिनके कारण दादाइलाही भूमि पर पिता के सब लडको का अधिकार होता है । समाज के इस नियम के कारण यहाँ पर बँटवारा होते-होते एक कृषक के पास भूमि के छोटे-छोटे टुकडे रह गये हैं, जिनमे खेती करना बिल्कुल भी लाभदायक नही है । इस देश की पर्दे की प्रथा के कारण स्त्री समाज का श्रम देश के कुछ काम नही आता और इससे देश को बहुत हानि होती है । इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि देश की सामाजिक परिस्थितियाँ भी दश की आर्थिक उन्नति पर बडा प्रभाव डालती है ।

Q 3 Give an idea of the natural resources of India Have they been Properly developed? If not what suggestions would you offer for the purpose?

प्रश्न ३—भारतवर्ष के प्राकृतिक साधनों पर प्रकाश डालिये । क्या उनका उचित ढग से विकास हुआ ? यदि नहीं, तो उन्नति के लिये सुझाव दीजिये ।

भारतवर्ष एक बहुत विस्तृत देश है । विभाजन के पश्चात् इसका क्षेत्रफल जम्मू 'काश्मीर सहित १२,६६,९०० वर्ग मील रह गया और इस देश की जनसख्या १९५८ मे ३९७५ करोड थी । यह देश ग्रेट ब्रिटेन का १३ गुना है और इसमे फ्रास, बेल्जियम, हालैंड, जर्मनी, डेनमार्क आस्ट्रिया, हगरी, स्वीटजरलेंड, स्पेन, पुर्तगाल, इटली, रूमानिया समा सकते हैं । इसकी जनसख्या भी ससार की कुल जनसख्या की ⅙ है । इतने विस्तृत देश मे भगवान ने हर प्रकार की सामग्री मनुष्य के लिये रख छोडी है । यहाँ पर पहाड, मैदान, पठार आदि सभी प्रकार की भूमि पाई जाती है जिसमे भिन्न-भिन्न प्रकार की फसलें सुविधा के

साथ उगाई जा सकती हैं। देश की जलवायु मानसूनी है जो फसलें उगाने के लिये बहुत उपयोगी है। जहा पर वर्षा होती है वहाँ पर बहुत से वन मिलते है, जिनमे बाँस चीड देवदार, फर, आबनूस आदि की बहुत उपयोगी लकडियाँ प्राप्त होती है। बांस कागज बनाने तथा दूसरे कामो मे आता है। दूसरे प्रकार की लकडियाँ भी फर्नीचर बनाने जलाने तथा अन्य दूसरे कई कामो में काम आती हैं। इस देश मे लगभग १,८०, १५६ वर्गमील पर वन है। उनम से बहुत कम वन काम मे लाये गये हैं। इन वनो की ओर भी सरकार का ध्यान अभी हाल ही मे गया है। ये वन हिमालय पर्वत व उसकी तराई, पश्चिमी घाट तथा मध्य प्रदेश के इलाके मे पाए जाते हैं। मैदानो में जितने वन थे वे सब काटकर साफ कर दिये गये हैं और उनमे बहुत प्रकार की फसलें उत्पन्न की जाती है, जैसे चावल, गेहू, जौ, ज्वार, बाजरा, गन्ना, कपास, जूट, दालें आदि। जिन स्थानो मे वर्षा अधिक होती है वहाँ पर फसले उगाने मे कोई बाधा उपन्न नही होनी पर जहाँ पर वर्षा कम होती है वहाँ पर सिचाई के सहारे बहुत सी फसलें उत्पन्न की जाती है। यह बात सत्य है कि भारतवर्ष मे आजकल अन्न की कमी है पर यह अन्न की कमी केवल प्राकृतिक कारणो से नही वरन् और भी बहुत सी बातो के कारण है।

भारतवर्ष खनिज पदार्थों से भी भरपूर है, यहाँ पर बहुत कोयला मिलता है जो बङ्गाल, बिहार-उडीसा, मध्य भारत, मध्य प्रदेश, हैदराबाद, राजपूताना आदि मे मिलता है। यह अनुमान लगाया गया है कि भारत मे ६,००० करोड टन कोयला है। भारत मे अच्छी प्रकार का कच्चा लोहा भी खूब मिलता है, जो बङ्गाल, बिहार, उडीसा तथा मद्रास राज्य मे पाया जाता है। मैसूर मे भी बहुत सा अच्छा लोहा पाया जाता है। भारतवर्ष मे मैंगनीज बहुत अधिक मात्रा मे पाया जाता है, इसके प्रमुख स्थान मध्य प्रदेश, मद्रास, बम्बई, मैसूर, बिहार व उडीसा मे हैं। भारतवर्ष मे सोना भी पाया जाता है। यह सोना दुनिया की सोने की उत्पत्ति का ३ प्रतिशत है। भारतवर्ष मे दुनिया के सब देशो से अधिक अभरक मिलता है। यह अभरक बिहार मे हजारी बाग के स्थान पर और आध्र मे नेलोर स्थान पर पाया जाता है। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष मे अन्य कई प्रकार की धातुएँ पाई जाती हैं जो कि देश के लिये बहुत उपयोगी हैं।

इस देश मे पशुओ की भी कमी नही है। यहाँ के पशुओ की सख्या तीस करोड के लगभग है। यह पशु कई प्रकार के हैं। इनमे कुछ दूध देने वाने है जैसे गाय, भैंस, कुछ बोझा ढोने वाले हैं, जैसे बैल, भैंसे, गधे, घोडे, ऊँट आदि। कुछ माँस तथा ऊन देने वाले है, जैसे भेड, बकरी आदि। ये पशु देश के लिये कई प्रकार से लाभदायक हैं, जैसे इनसे बहुत सी खाद मिलती है जो देश भी कृषि के लिये अनिवार्य हैं। इसके अतिरिक्त इन पशुखो से चमडा तथा खालें भी प्राप्त होती है जिनसे देश को हर वर्ष बहुत सी आय होती है।

इस देश मे कई प्रकार के शक्ति के साधन भी पाये जाते हैं। जिनमे लकडी

कोयला, मिट्टी का तेल, यहाँ पर कम मात्रा मे पाया जाता है। इसके क्षेत्र केवल आसाम मे हैं। इस कारण मिट्टी का तेल यहाँ पर दूसरे देशो से मँगाना पडता है। अत यहा पर शक्ति का एक बहुत बडा साधन जल-शक्ति है। इस शक्ति का अनुमान चार करोड किलोवाट लगाया जाता है। परन्तु इसमे से १९५६-५७ तक केवल ३६ लाख किलोवाट के लगभग उपयोग मे लाई गई है। इसलिये भविष्य मे भारतवर्ष पर्याप्त मात्रा मे बिजली शक्ति के ऊपर निर्भर रह सकता है। भारतवर्ष मे बिजली शक्ति उत्पन्न करने के लिये बहुत प्रकार की योजनाएं चल रही हैं जिनसे अगले पाँच दस वर्षों मे बहुत सी बिजली उत्पन्न होने की आशा है। बिजली के अतिरिक्त शक्ति का एक दूसरा साधन भी है। इस देश मे बहुत गन्ना पैदा होता है जिससे चीनी बनाई जाती है। चीनी बनाने में जो शीरा बचा रहता है उसको अभी बहुत कम उपयोग मे लाया गया है। यदि इस शीरे को काम मे लाया जाय तो इससे पर्याप्त मात्रा म अल्कोहल बनाया जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतवर्ष मे सभी प्रकार के प्राकृतिक साधन पर्याप्त मात्रा मे पाए जाते है पर यह देश निर्धन है। यहाँ के लोगो की वार्षिक आय दुनिया के प्राय सब देशो के मनुष्यो से कम है। यहाँ के तीन चौथाई से अधिक लोगो को दो समय खाना भी नही मिलता और जो खाना मिलता है उसमे शरीर को बलवान बनाने की बहुत कम शक्ति है। लोगो के पास पहनने के लिये बहुत कम कपडा है। बहुत से मनुष्य तो नगे ही रहकर अपना जीवन काट देते हैं। यहाँ के लोगो के पास रहने के लिये ठीक प्रकार के मकान भी नही है और बहुतो के पास तो मकान है ही नहीं। इस प्रकार हम देखते है कि भारतवर्ष एक निधन देश है यद्यपि वह साधनो की दृष्टि से बहुत धनवान है। ऐसा क्यो है ? इसके निम्न-लिखित कारण हैं—

(१) १५ अगस्त १९४७ ई० के पूर्व तक हमारा देश अङ्गरेजो का दास था। अङ्गरेज लोग इस देश की आर्थिक उन्नति में कोई विशेष दिलचस्पी नही रखते थे। यही कारण है कि अगरेजो के डेढ सौ वर्ष के शासन-काल मे हमारा देश बहुत कम आर्थिक उन्नति कर पाया।

(२) हमारे देश मे पूजी की बडी कमी हैं। हाल ही मे जो पूजी थी वह भी शर्मीली कही जाती थी। पूजी की कमी के कारण किसी प्रकार की भी आर्थिक उन्नति कैसे हो सकती थी।

(३) हमारे देश मे कुशल श्रम (Skilled labour) की बडी कमी है। बिना कुशल श्रम के खेती तथा उद्योग-धन्धो की उन्नति कैसे हो सकती थी।

(४) हमारे देश मे अभी तक भी साख सस्थाओ जैसे बैंक, बीमा कम्पनिया आदि की बडी कमी है। बिना साख सस्थाओ की उन्नति के न तो व्यापार ही और न उद्योग धन्धे व खेती ही उन्नत हो सकी।

(५) हमारे देश मे यातायान के साधनो की बहुत कम उन्नति हुई है। यहा पर लगभग ३४८८६ मील लम्बी रेल व १,२७,००० मील पक्की सडकें हैं। गावो मे कच्ची सडके ही पाई जाती है। आवागमन के साधनो की उन्नति न होने के कारण हमारे देश के व्यापार तथा उद्योग धन्धो की उन्नति न हो सकी क्योंकि हम सभी जानते है कि आवागमन के साधनो के उन्नत होने पर ही कच्चा माल औद्योगिक केन्द्रो तक ही जा सकता है तथा पक्का माल उन स्थानो पर पहुचाया जा सकता है जहाँ उसकी माग होती है। इनकी उन्नति पर ही हर प्रकार का माल विदेशो को भेजा जा सकता है।

(६) सन् १६२३ ई० से पूव तक हमारा देश अबाध व्यापार (Free Trade) की नीति को अपनाये हुए था। सन् १६२३ ई० के पश्चात् भी हमारे देश को विवेकात्मक सरक्षण (Discrimination Protection) ही दिया गया। अबाध व्यापार की नीति के कारण हमारे देश के उद्योग धन्धो को विदेशी उद्योग धन्धो से प्रतियोगिता करनी पडी और इस प्रतियोगिता के कारण यहा के उद्योग पनप न पाये।

(७) हमारे देश की सरकारी माल मोल लेने की नीति (Stores Purchase Policy) भी हमारी उन्नति के मार्ग मे एक बाधा रही है। प्रतिवर्ष अग्रज सरकार करोडो रुपये का माल इङ्गलेण्ड से खरीदती थी। यदि यह इस माल को भारत से ही खरीदती तो यहा के बहुत से छोट बड उद्योग धन्धे उन्नति कर जाते।

(८) हमारे देश मे आधारभूत उद्योग (Basic or Key Industries) का तो प्राय अभाव ही है। इसलिय हमको हर प्रकार की मशीनो के लिय विदेशो का मुँह ताकना पडता है। विदेशो से मशीन आन म समय तथा धन अधिक खच होता है। बहुधा विदेशी लोग हमको माल भेजते ही नही। इसके फलस्वरूप प्राकृतिक साधनो के उन्नत करने मे बाधा पडना स्वाभाविक ही है।

इन सब बातो के कारण हमारे देश के प्राकृतिक साधनो का उपयोग न हो सका। भविष्य म हमको चाहिय कि इन सब साधनो का पूरा पूरा प्रयोग किया जाय। ऐसा करने क लिय हमको कुछ निम्नलिखित बातें करनी पडेंगी।

(१) हमको समस्त क्षेत्रो से सम्बन्धित एक योजना बनानी पडगी। पच-वर्षीय योजना इस ओर एक ऐसा प्रयत्न है।

(२) सरकार को सरक्षण नीति का आधार देश का हित बनाना पडगा जिसम कि सब प्रकार के उद्योग देश के हित में यहा उन्नत हो सक। द्वितीय वित्त आयोग (Fiscal Commission) की सिफारिश के अनुसार इस बात को भी मान लिया गया है।

(३) सरकार का चाहिय कि वह अपनी आवश्यकता का प्राय सभी सामान देश से ही खरीदे जिससे यहाँ के सब प्रकार के उद्योग धन्धे पनप सक तथा देश के प्राकृतिक साधनो का उपयोग हो सके।

(४) देश मे कुशल श्रम की पूर्ति बढाने के लिये सरकार को बहुत से टेक्नीकल स्कूल खोलने चाहियें।

(५) पू जी की कमी को विदेशो से ऋण लेकर पूरा किया जा सकता है।

(६) देश मे आधारभूत उद्योगो के उन्नत करने की भी आवश्यकता है।

(७) बिना आवागमन के साधनो की उन्नति के भी हम अपने प्राकृतिक साधनो का उपयोग न कर सकेगे। इसलिये उनको उन्नत करना चाहिये।

(८) देश मे बैंक आदि भी खोलने चाहिये। बैको की गावो मे विशेष आवश्यकता है।

इन सब बातो के पूरा करने से हम यह आशा करते है कि हम अपने प्राकृतिक साधनो का पूरा-पूरा उपयोग कर सकेगे।

Q. 4 Give a short account of India's mineral wealth and discuss its bearing upon our future industrial development

प्रश्न ४—भारतवर्ष के खनिज पदार्थों का संक्षिप्त विवरण दीजिये और बताइये कि देश की भविष्य की औद्योगिक उन्नति पर उनका क्या प्रभाव पडता है ?

उत्तर—भारतवर्ष खनिज पदार्थों की दृष्टि से एक बहुत धनी देश है परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि उनको पूर्णरूप से तथा वैज्ञानिक रीति से उन्नत किया जाये। सन् १८८० ई० तक उन खानो के खोदने का यहा पर कोई विशेष प्रबन्ध न था। इस कारण इन धातुओ से इस देश को कोई विशेष लाभ न पहुच सका। जब से इस देश के लोगों का ध्यान खानें खोदने की ओर गया है तब से उनको यह विश्वास हो गया है कि यद्यपि इस देश के खनिज पदार्थ दुनिया मे सबसे अधिक नही है तो भी इस देश के बहुत से उद्योग-धधे चलाने के लिये वे पर्याप्त मात्रा मे है। सन् १६१८ मे नियुक्त औद्योगिक आयोग की रिपोर्ट से यह स्पष्ट है कि भारतवर्ष मे खनिज सम्पत्ति पर्याप्त मात्रा मे है, जिसके द्वारा यहा के मूल उद्योग-धन्धो को सरलता से चलाया जा सकता है। हाँ, वे उद्योग जो निकल, बडम आदि पर निर्भर है उनके लिए अवश्य ही हमे दूसरे देशो पर निर्भर रहना होगा। भारतवर्ष मे निम्नलिखित खनिज पदार्थ पाये जाते हैं—

कोयला (Coal)—*ससार के कोयला उत्पन्न करने वाले देशो मे भारत का सातवा स्थान है। इस देश मे कोयले का अपार भण्डार है। इस भण्डार का अनुमान* विभिन्न रूप से किया गया है। सन् १६५० मे Geological Survey of India द्वारा किये गये अनुमान के अनुसार कोयले का भण्डार ३०,००० मिलियन टन है परन्तु १६५२ ई० मे डा० सी० एस० फाक्स द्वारा किये गये अनुमान के अनुसार कोयले का भन्डार १००० फीट की गहराई तक ६०,००० मिलियन टन है। इसके अतिरिक्त बिहार के करनपुर क्षेत्र व आसाम, जम्मू व काश्मीर तथा दक्षिणी अरकाट

मे कोयले का बहुत बडा भडार बताया जाता है परन्तु यह सब घटिया प्रकार का है। परन्तु इनमे से २००० मिलियन टन ही कारखानो के काम आने वाला है। यद्यपि भारत मे इतना अधिक कोयला है तो भी यह अमरीका तथा ग्रेट ब्रिटेन की अपेक्षा बहुत कम है। अमेरिका के भण्डार का अनुमान २९,३०,००० मिलियन टन तथा ग्रेट ब्रिटेन का १,७६,००० मिलियन टन है।
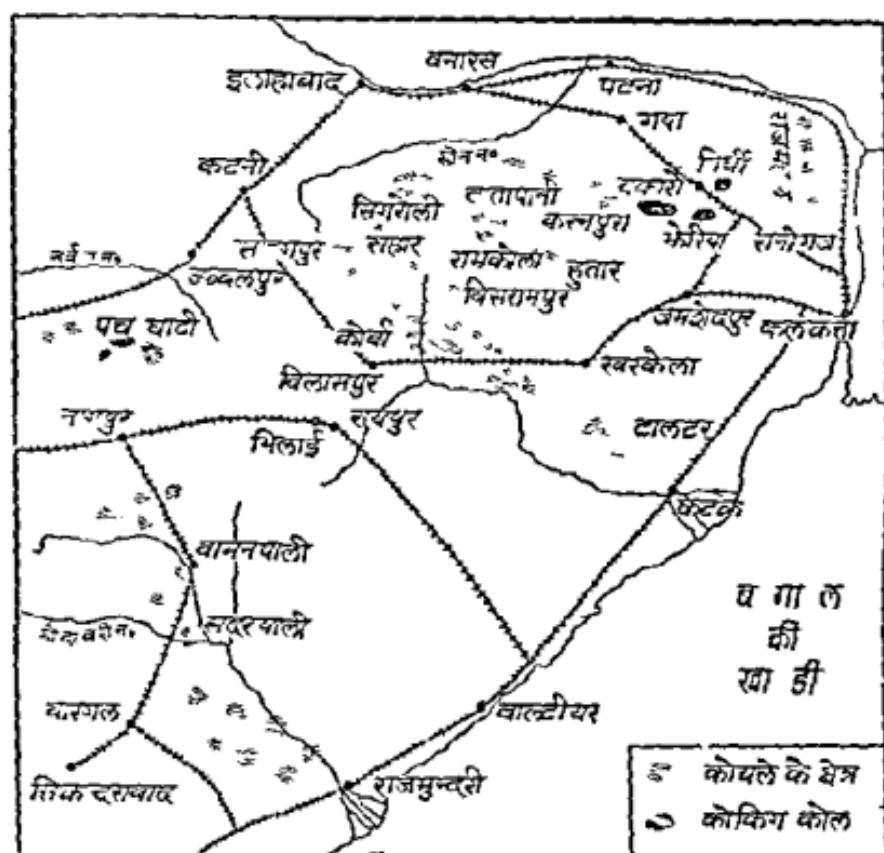
इस समय देश मे ८०० कोयले की खाने हैं जिनमे से ७०० बगाल और बिहार मे हैं। पिछले कुछ वर्षों से हमारे देश का कोयले का उत्पादन निरन्तर बढ रहा है। सन् १९३१ मे हमारा वार्षिक उत्पादन केवल २ २ करोड टन था परन्तु १९५४ मे यह बढ कर ३ ६८ करोड टन तथा १९५५ मे ३ ८२ करोड टन, १९५६ मे ३ ९४ करोड टन, १९५७ मे ४ ३५ करोड टन तथा १९५८ मे ४ ६१ करोड टन हो गया। द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्त तक इसकी उत्पत्ति ६ करोड टन तक बढने की आशा है जो प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष से २ ३ करोड टन अधिक होगी। इसमे ४ ५ करोड टन निजी क्षेत्र तथा शेष सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा उत्पन्न किया जायेगा।

देश मे उत्पन्न होने वाले कुल कोयले का $\frac{1}{3}$ रेलो द्वारा, १० प्रतिशत लोहे व इस्पात के उद्योग द्वारा तथा ७-७ प्रतिशत जहाजो, निर्यात तथा बिजली उत्पन्न करने के काम आता है।

भारतवर्ष मे अधिकतर कोयला रानीगज व झरिया की खानो से प्राप्त होता है। १९५६ ई० मे भारत की कोयले की उत्पत्ति लगभग ४ करोड टन थी जिसमे से २ करोड टन केवल बिहार मे प्राप्त हुआ था। इस क्षत्र के बाहर कोयले के प्रमुख क्षेत्र, हैदराबाद मे सिगरैनी और ससनी मे है। मध्य प्रदेश, आसाम, पजाब, राजपूताना आदि मे भी कुछ कोयला खानो से खोदा जाता है। उत्तर प्रदेश मे मिर्जापुर के पास भी कोयले का भण्डार बताया जाता है जो क्षेत्र मे लगभग १६ वर्ग मील है। परन्तु ऐसा अनुमान है कि यह उत्तर प्रदेश तथा पजाब की कोयले की आवश्यकता को पूरा कर सकता है। भारतवर्ष मे जितना कोयला निकलता है उसका ५५ प्रतिशत बिहार से, २८ प्रतिशत बगाल से, ६ प्रतिशत मध्य प्रदेश से, ५ प्रतिशत पूर्वी राज्य एजेन्सी से, ४ प्रतिशत हैदराबाद से, १ प्रतिशत आसाम से, $\frac{1}{2}$ प्रतिशत के लगभग पजाब, उडीसा, राजपूताना से प्राप्त होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतवर्ष मे सभी स्थानो पर कोयले का समान बटवारा नही है, इस कारण वह अभी तक उद्योग-धन्धे के लिये लाभदायक सिद्ध नही हुआ है। दूसरी बात यह है कि भारतवर्ष का कोयला विदेशी कोयले की अपेक्षा खराब है। तीसरी बात यह है कि भारतवर्ष मे कोयला कम मात्रा मे है। सन् १९३७ मे भारतीय कोयला समिति ने यह अनुमान लगाया था कि भारत मे अच्छा कोयला १२२ वर्ष तक तथा साधारण कोयला ६२ वर्ष तक चलेगा। एक दूसरे विशेषज्ञ ने अभी हाल ही मे कहा है कि भारतवर्ष मे अच्छे कोयले का अभाव इसी शताब्दी के अन्त तक हो जायेगा। इस कारण भारतवर्ष उद्योग-धन्धो की उन्नति के लिये बहुत समय तक कोयले पर निभर नही रह सकता। आजकल भारतवर्ष मे कोयला खोदने का ढङ्ग बडा असन्तोषजनक है। बहुत सा कोयला खोदने मे नष्ट कर दिया जाता है। यह कहा जा सकता है कि टैक्नीकल दृष्टि से कोयले का उद्योग अभी तक अवनत अवस्था मे है। चौथी बात यह है कि भारतवर्ष मे अच्छे कोयले को रेलो द्वारा भाप बनाने मे नष्ट किया जा रहा है और उसको धातु कार्यों के लिये बहुत कम काम मे लाया जाता है।

अब इस बात की बडी आवश्यकता है कि कोयले को ठीक प्रकार खोदा जाये तथा उसको अधिक से अधिक लाभदायक चीजो पर खर्च किया जाय। योजना आयोग की सिफारिश है कि अच्छे कोयले को केवल लोहे और फौलाद के उद्योग को बढाने के काम मे ही लाया जाये और भाप बनाने के काम मे दूसरे प्रकार का कोयला काम मे लाया जाए। इसके अतिरिक्त आयोग का यह भी सुझाव है कि भारतवष के कोयले के साधनो का ठीक प्रकार से पता लगाया जाए, उसका उचित वर्गीकरण किया जाए जिससे कि हर श्रेणी का कोयला ठीक प्रकार से काम मे लाया जा सके, कोयले का उचित ढङ्ग से बँटवारा किया जाए, ग्याङ्गार कोयले (Cooking Coal) का उत्पादन

बढाया जाए। इसके अतिरिक्त आयोग का यह भी सुझाव है कि निम्नलिखित बातो के लिए कानून पास किए जाएँ—

(१) उचित उपयोग, (२) कई उपकरो के स्थान पर एक सामूहिक उपकर, (३) कोयला बोर्ड की स्थापना।

इन सुझावो के आधार पर केन्द्रीय सरकार ने १९५२ मे 'कोयला खान सुरक्षा एक्ट' पास किया। इसके अन्तर्गत सरकार को कोयले के उचित उपयोग तथा उसकी सुरक्षा के लिए कार्य करने की शक्ति दी गई है। इसके अतिरिक्त सरकार को यह भी अधिकार दिया गया है कि वे कोयले पर उपकर लगाए। एक कोयला बोर्ड की स्थापना भी की गई। १ जोलाई १९५३ से कोयले के क्षेत्रीय (Regional) बटवारे की योजना भी बनाई गई है। मई १९५६ की एक सूचना के अनुसार विश्वसनीय सूत्रो से पता लगा है कि भारत सरकार ने कम्पनीज एक्ट के अन्तर्गत एक कम्पनी स्थापित करने का निश्चय किया है जो कि सार्वजनिक क्षेत्र मे कोयले का उत्पादन तथा बटवारा करेगी। सरकार दूर-दूर की खानो को खोदने के लिये सहायक कम्पनियां भी बनाने की बात सोच रही है।

१९५५ ई० मे भारत सरकार ने कोयले की खानो का एकीकरण करने के लिए एक समिति नियुक्त की थी जिसने सुझाव दिया है कि वे खाने जो कि १०,००० टन वार्षिक से कम कोयला उत्पन्न कर रही हैं उनका एकीकरण कर दिया जाय। यद्यपि इस कार्य को करने के लिए स्वय इच्छा को प्रोत्साहन दिया जायगा परन्तु फिर भी कुछ कानूनी कार्यवाही करने की आवश्यकता पड सकती है।

३० अप्रेल १९५६ ई० के औद्योगिक नीति प्रस्ताव मे भारत सरकार ने कहा है कि भविष्य मे सब नई खाने सरकार द्वारा खोदी जाएँगी। यही कारण है कि द्वितीय पचवर्षीय योजना काल की २२ मिलियन टन की वृद्धि मे से १० मिलियन टन केवल सार्वजनिक क्षेत्र से प्राप्त होगी। सार्वजनिक क्षेत्र मे कोयले की खानो को चलाने के लिए एक राष्ट्रीय कोयला विकास प्रमण्डल की स्थापना की गई है।

लोहा (Iron)—यदि कोई देश अपनी औद्योगिक उन्नति के लिए किसी दूसरे देश का दास नही रहना चाहता तो उसे यन्त्रादि बनाने वाली धातुओ मे स्वावलम्बी होना अनिवार्य है। इस दृष्टि से लोहे का बहुत महत्व है। यह अभी ठीक प्रकार से नही कहा जा सकता कि भारत मे लोहे का प्रयोग कब से आरम्भ हुआ। परन्तु फिर भी यह कहा जा सकता है कि वैदिक काल के लोग लोहे का प्रयोग जानते थे। ईसा से ३२६ ई० पूर्व जब सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया तब यहा के निवासी लोहे का उतना ही उपयोग जानते थे जितना कि यूनान के लोग। दिल्ली के पास लोहे का खम्बा ४१५ ई० मे चन्द्रगुप्त द्वितीय की विजय की यादगार मे गाडा गया था।

यह नही कहा जा सकता कि भारत का उद्योग कैसे समाप्त हो गया। हो सकता है कि यह इसलिए नष्ट गया हो क्योकि यहाँ के लोहारो ने वैज्ञानिक रीति से काम नही किया।
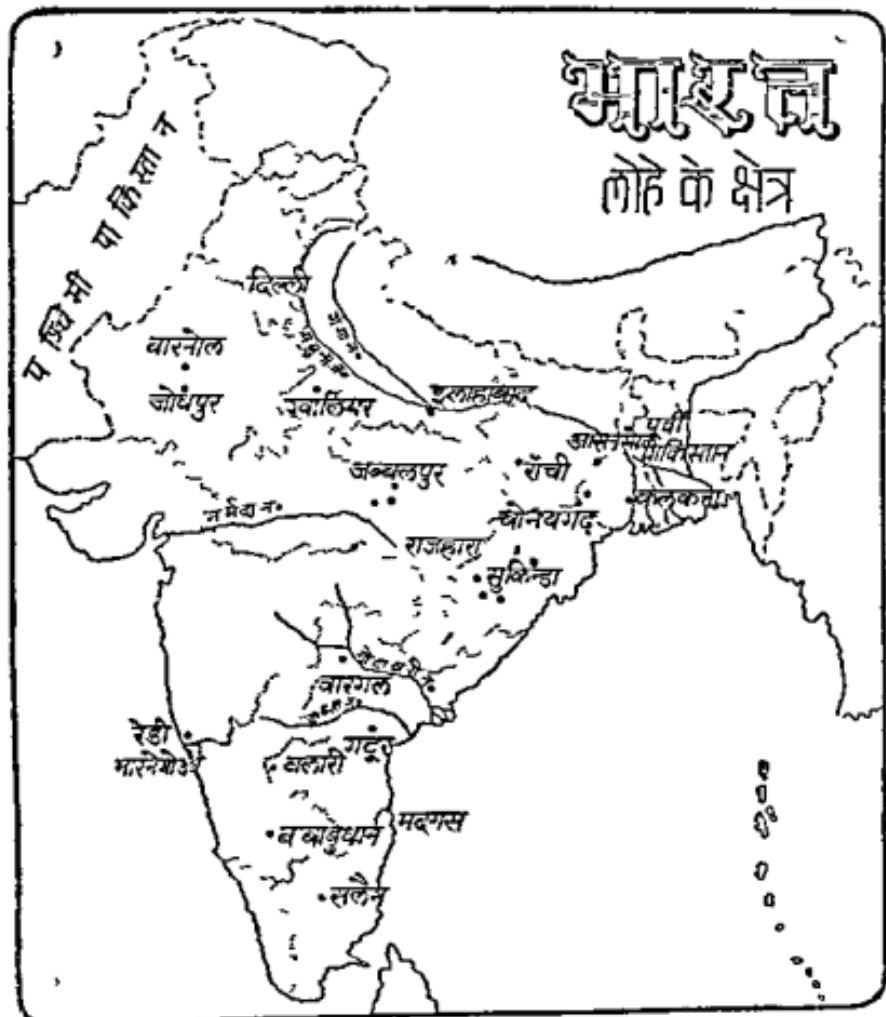
एशिया भर मे भारत लोहे की उपज की दृष्टि से काफी धनी देश है। भूगर्भ-वेत्ताओ का तो यहाँ तक कहना है कि भारत मे ससार के सभी देशो से अधिक तथा बढ़िया लोहा है। भारत की कच्ची धातु मे ६०–७० प्रतिशत लोहा बताया जाता है। इसके अतिरिक्त यह कहा जाता है कि सुदूर दक्षिण से लेकर हिमालय तक अथवा शान रियासत सघ से लेकर बिलोचिस्तान तक सिवाय मुलायम मिट्टी के मैदानो के कठिनाई से ही कोई जिला है जहाँ पुराने लोहे का मल (Slag) न पाया गया हो। भारतवर्ष मे अच्छा लोहा बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, मद्रास, बम्बई, गोआ तथा मैसूर मे पाया जाता है। अभी हाल ही मे पता चला है कि बम्बई प्रदेश के रतनगिरी प्रदेश मे लोहे की बहुत अच्छी खानें है जिनका क्षेत्र १०० वर्ग मील है। यह अनुमान लगाया जाता है कि भारतवर्ष मे अच्छे लोहे का भडार २१,००० मिलियन टन से भी अधिक है जो कि ससार के कुल लोहे के भडार का एक चौथाई है। इसमे ६० प्रतिशत से भी अधिक धातु है। इसके अतिरिक्त दक्षिण मे ऐसी बहुत सी कच्ची

धातु मिलती हैं जिसमे २० से ३० प्रतिशत तक लोहा निकलता है। भारत मे आज-कल सबसे अधिक लोहा बगाल, विहार और उडीसा से प्राप्त किया जाता है। सिंहभूमि, क्योंझर, वोनाई, मयूरगज, बगाल, मैसूर मे लोहा अनन्त राशि मे भरा पडा है। भारतीय खनिज सम्पत्ति विभाग (Indian Mineral Resources Bureau) का अनुमान है कि मद्रास राज्य के सलीम और नेलोर जिलो मे लोहे की अनन्त राशि भरी पडी है। सौभाग्यवश लोहे की खानें कोयले की खानो के समीप हैं जिससे लोहा गलाने मे काफी सुविधा मिलती है। जबकि सयुक्तराष्ट्र अमेरिका की कोयले और लोहे की खानो मे १२०० मील का अन्तर है और भारत मे यह अन्तर २०० मील से अधिक नहीं है। इस कारण यातायात का खर्च बहुत कम हो जाता है। १९५६ मे ४७४८ हजार टन, १९५७ मे ४६२० हजार टन तथा १९५८ मे ६००० हजार टन कच्चा लोहा उत्पन्न किया गया। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे कच्चे लोहे की उत्पत्ति का विन्दु १२ ५ मिलियन टन रखखा गया है। अभी तक भारत मे ससार का १ प्रतिशत, फ्रास का ३० तथा अमेरिका का ३० कच्चा लोहा उत्पन्न होता है। योजना आयोग की गले हुए लोहे तथा फौलाद की उत्पत्ति बढाने की योजना के लिये भारतवर्ष को १३ लाख टन कच्चा लोहा, १५ टन कोयला ३० हजार टन मैंगनीज की धातु तथा तीन लाख टन चूने की और आवश्यकता है।

मैंगनीज (Manganese)—यह एक बहुत मूल्यवान धातु है और फौलाद बनाने के काम आता है। यह भारी रासायनिक विद्युत और काँच के उद्योग धन्धो के काम मे भी आता है। भारतवर्ष मे यह धातु बहुत पाई जाती है। इस विषय मे सही आकडे तो प्राप्त नही हैं फिर भी मैंगनीज के भण्डार का अनुपात १५० और २०० करोड टन के बीच मे है। इसमे लगभग ५० प्रतिशत धातु निकलती है। इससे खराब धातु के भडार का अनुमान इससे लगभग तीन गुना है। १९३८ म इसकी उत्पत्ति ९,६७,९२९ टन थी जो सारी की सारी विदेशों को भेजने के काम मे आती है। भारतवर्ष के लोहे और फौलाद के उद्योग द्वारा इसका बहुत कम भाग काम मे लाया जाता है। १९५५ की उत्पत्ति १५,७०,००० टन थी इसमे से ४४ २ प्रतिशत मध्य प्रदेश मे, २५ ५ प्रतिशत उडीसा म, १९ प्रतिशत वम्बई मे, ७ २ प्रति-शत मैसूर मे, ७ १ प्रतिशत आध्र मे तथा शेष बिहार, राजस्थान तथा मध्य भारत मे उत्पन्न हुआ। परन्तु १९५६ ई० मे यह उत्पत्ति बढ कर १६८७,००० टन हो गई। १९५७ मे उत्पत्ति घट कर १५७४००० टन रह गई। १९५८ की उत्पत्ति केवल १२ लाख टन थी। परन्तु १९५३ ई० मे भारत मे सबसे अधिक उत्पत्ति हुई जो कि १९००,००० टन थी। यह उत्पत्ति ससार की १७ प्रतिशत थी। परन्तु द्वितीय योजना का ध्येय विन्दु ३५ लाख टन है।

भारतवर्ष मे उत्पन्न की जाने वाली धातु मे से बहुत सी विदेशो को भेजी जाती है। वास्तव मे हमारे लिये विदेशी विनिमय को प्राप्त कराने का यह वडा साधन है। १९५३-५४ मे भारत मे से १५६८००० टन धातु का निर्यात किया

गया। योजना कमीशन का निर्यात का विन्दु १५००,००० टन तथा निर्यात प्रोत्साहन समिति का ध्येय विन्दु १५ लाख से २० लाख टन के बीच मे है। परन्तु १९५३-५४ के पश्चात् हमारी निर्यात कम हो रही है। यहा तक कि १९५६-५७ मे हमारी निर्यात ८७५००० टन थी। १९५७-५८ मे इससे कम धातु का निर्यात किया गया। इसका कारण यह नही कि हमारी धातु की प्रति इकाई कीमत बढ गई है। वस्तु मे भाडा, सरकारी चुङ्गी आदि के कम होने से एक मैंगनीज की इकाई का मूल्य जो पहले अमेरिका मे १ ७५ डालर था वह घट कर १ २५ डालर रह गया। यह बात भी नही है कि विदेशो मे मैंगनीज की माँग कम हो गई है। कम होने की अपेक्षा वह बढ गई है। तो फिर हमारी निर्यात के कम होने का क्या कारण है? इसका कारण स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन का आना है। विदेशी लोग एक सरकारी एकाधिकारी कारपोरेशन से माल खरीदना पसन्द नही करते। इसके अतिरिक्त दूसरे कुछ देश इस धातु का उत्पादन बढा रहे है। इन देशो मे धातु निकालने का नया ढङ्ग होने के कारण लागत भारत से कम है। इस कारण आवश्यकता इस बात की है कि भारत के निर्यात को बढाया जाये। इसके लिये सरकार को चाहिए कि खान के मालिको को सबकी सब धातु निर्यात करने का अधिकार दे। इसके अतिरिक्त सरकार को चाहिये कि वह नीचे तथा मध्यम श्रेणी की धातु पर से निर्यात कर हटा दे। इसके अतिरिक्त इस बात की आवश्यकता है कि विदेशियो से १०-२० वर्ष के अग्रिम सौदे किये जाये क्योकि इस धातु के मूल्य मे बड परिवर्तन होते रहते है। इसके अतिरिक्त खोदने की लागत मे भी कमी करने की आवश्यकता है।

सोना (Gold)—भारतवर्ष मे सोना बहुत कम मात्रा म पाया जाता है। यह मैसूर रियासत के कौलार नमी क्षत्र म मिलता है। इस क्षेत्र मे कुल उत्पत्ति का ९९ प्रतिशत उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त हैदराबाद मे हट्टी और मद्रास मे अनन्तपुर आदि स्थानो पर भी सोना मिलता है। भारतवर्ष मे १९५७ मे १७६१९६ ओस सोना उत्पन्न किया गया। थोडा बहुत सोना रेत आदि को साफ करके भी प्राप्त किया जाता है।

मिट्टी का तेल (Petroleum)—भारतवर्ष मे मिट्टी का तेल नाम मात्र को ही निकलता है। ब्रह्मा व पाकिस्तान के भारतवर्ष से अलग होने के पूर्व इस देश को बाहर से बहुत कम मिट्टी का तेल मगवाना पडता था। परन्तु इन दोनो देशो के अलग होने के पश्चात् इस देश को अधिकतर तेल विदेशो से मगवाना पडता है। भारतवर्ष अपनी आवश्यकता का १० प्रतिशत से भी कम तेल पैदा करता है शेष विदेशो से मगाता है। १९५५ मे कुल शक्ति का ४६ प्रतिशत गोबर व लकडी से, ३४ प्रतिशत मनुष्य तथा पशु शक्ति से तथा केवल २० प्रतिशत कोयला, बिजली व तेल से प्राप्त हुआ। भारतवर्ष मे मिट्टी के तेल के क्षेत्र आसाम मे डिगबाई है। आजकल ६५-७० मिलियन गैलन मिट्टी का तेल प्राप्त होता है। देश की आवश्यकता को देखते हुए यह मात्रा बहुत कम है। परन्तु अब ऐसा विश्वास किया जाता है

कि उत्तरी भारत के मैदानो मे बहुत सा तेल है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना मे इस बात का विशेष प्रयत्न किया जाएगा कि देश मे तेल के साधनो की उन्नति हो तथा नये तेल के क्षेत्रो का पता लगाया जाए। पश्चिमी बगाल मे आजकल खोज की जा रही है। आसाम मे अभी नये तेल के कुओ का पता लगाया गया है। राजस्थान के जेसलमेर के स्थानो पर भी खोज का कार्य शुरू कर दिया गया है। इस कार्य को पजाब 'ज्वालामुखी, होशियारपुर, जम्मू, आसाम तथा गगा घाटी मे बरौनी व शाहजहापुर मे बढाने की योजना है। पिछले दो वर्षों मे भारत मे तेल की खोज जोरो से की गई है। १९५६ ई० मे सरकार ने एक Oil and Natural Gas Commission की स्थापना की है जो कि तेल के पता लगाने, उसको खोदकर निकालने तथा साफ करने का कार्य करेगा। रूस और रूमानिया के शिल्पज्ञो की सहायता से यह कमीशन अब ज्वालामुखी मे खोज का कार्य कर रहा है। इस खोज के फलस्वरूप *ज्वालामुखी मे बहुत से तेल का पता लगाया गया है।* इसी प्रकार आसाम तेल कम्पनी ने भी नहारकेटिया, मोरू तथा हुगरीजन मे बहुत से तेल का पता लगाया है। भारत सरकार तथा बर्मा आयल कम्पनी ने अभी एक समझौते पर हस्ताक्षर किये है जिसके फलस्वरूप एक कम्पनी का निर्माण होगा जो कि उत्तरी आसाम मे तेल निकालने का कार्य करेगी। यह कम्पनी न केवल तेल के उत्पादन का कार्य करेगी वरन् बिना साफ किए हुए तेल को बरौनी (Barauni) (जो बिहार मे है) एव तेल के नलो के द्वारा पहुचाने का कार्य करेगी।

इसके अतिरिक्त भारत सरकार यह प्रयत्न भी कर रही है कि देश मे मिट्टी का तेल साफ करने के कारखाने स्थापित किये जायें। भारत मे एक ऐसा कारखाना १८९९ से डिगबोई म कार्य कर रहा है। स्वतन्त्रता के पश्चात् Burmah Shell तथा Standard Vacuum Refineries जो दोनो बम्बई के पास है, स्थापित की गई है। इन कारखानो की शक्ति क्रमशः २'० तथा १'२५ मिलियन टन की है। एक तीसरा कारखाना Caltax Refinery विशाखापटनम मे है। इसकी शक्ति '६७५ मिलियन टन की है। सरकार अब सरकारी तेल के साफ करने के कारखाने बनाने की योजना बना रही है। इनमे एक आसाम मे होगा तथा दूसरा बिहार मे।

भारत मे अब तेल की माग बढती जा रही है। १९४८-५५ के बीच यह दुगनी हो गई और यह आशा की जाती है कि यह ८ प्रतिशत प्रति वर्ष के हिसाब से बढेगी। इस कारण तेल की उत्पत्ति बढाने की बडी आवश्यकता है। यदि हमारे देश मे मिट्टी के तेल की उत्पत्ति बढ गई तो हम अपने विदेशी विनिमय के साधनो को बहुत हद तक बचा सकेंगे क्योकि पिछले कई वर्षों मे हमारी आयात लगभग ८१ करोड रुपये वार्षिक की रही है।

—क्रोमाइट (Chromite)—यह युद्ध के काम आता है। इससे क्रोमियम या नमक भी तैयार किया जाता है जो चमड़ा रङ्गने के काम आता है। भारतवर्ष मे अभी

तक इस धातु का उपयोग बहुत कम किया जाता है परन्तु जैसे-जैसे इस देश की औद्योगिक उन्नति होती जायेगी वैसे ही वैसे इस धातु का उपयोग मोटर और हवाई जहाज बनाने मे होना जाएगा।

भारतवर्ष मे यह धातु बिहार, मैसूर, बम्बई, मद्रास और उडीसा मे पाई जाती है। पहले यह धातु अधिक्तर निर्यात की जाती थी परन्तु १९५१ से अच्छी धातु का निर्यात बिल्कुल बन्द कर दिया गया है। १९५४ मे इसकी उत्पत्ति ४५५०७ टन थी जो बढकर १९५५ मे ८९३४९ टन होगई। १९५५ मे ४८८०० टन का निर्यात किया गया। भारत मे इस धातु के भडार का अनुमान १३२ लाख टन है।

बाक्साइट (Bauxite)—यह अल्यूमीनियम के धन्धे मे काम आती है। यह बिहार, मध्यप्रदेश, उडीसा, मद्रास, बम्बई तथा काश्मीर मे पाई जाती है। इसके भण्डार का अनुमान २५ करोड टन है जिसमे से अच्छी प्रकार की धातु ३५ करोड टन के लगभग है।

इसकी औसत उत्पत्ति १९४०–४४ के बीच मे १५,००० टन वार्षिक थी। परन्तु १९५१ मे यह ६७,००० टन से भी अधिक हो गई। १९५५ मे उत्पत्ति वढ कर ८१,१७२ टन हो गई।

भारत मे इस समय अल्यूमीनियम बनाने के दो करखाने है जो ७५०० टन वार्षिक उत्पत्ति करते है। परन्तु यह उत्पत्ति देश की बढती हुई माग को पूरा करने के लिए पर्याप्त नही है। अनुमान लगाया गया है कि इसकी माग १९६०–६१ तक ४०,००० टन वार्षिक हो जायगी। इस माग को पूरा करने के लिये वर्तमान प्लान्ट की उत्पादन-शक्ति को तिगुना किया गया है तथा १०,००० टन और १५,००० टन के दो और नये प्लान्ट बनाये जा रहे है।

यद्यपि भारत मे अच्छी प्रकार का बाक्साइट पर्याप्त मात्रा मे बनाने की लागत बहुत अधिक है परन्तु आशा की जाती है कि बिजली की शक्ति के उन्नत होने पर इसकी लागत घट जायेगी तथा भारत ससार के अल्यूमीनियम उत्पन्न करने वाले सबसे प्रमुख देशो मे गिना जायगा।

जिप्सम (Gypsum)—यह अभी तक सीमेट और पेरिस प्लास्टर की कच्ची धातु के रूप मे काम मे लाया गया है। परन्तु जब से सिंदरी की खाद की फैक्टरी बन गई है तब से इसका महत्व और अधिक बढ गया है। सिंदरी मे इस समय ५२८,००० टन जिप्सम काम मे लाया जा रहा है परन्तु यह माग बढकर ७००,००० टन होने की आशा है। इसके अतिरिक्त अल्वाई को खाद की फैक्टरी मे ४३००० टन वार्षिक जिप्सम काम मे लाया जाता है। सब सीमेट के कारखानो की वार्षिक माँग २५०,००० टन है।

भारत मे जिप्सम के क्षेत्र मुख्यत राजस्थान के जोधपुर तथा बीकानेर डिविजन है और यहाँ ३० फीट की गहराई तक १२० मिलियन टन का भण्डार

बताया जाता है। इसमे से ४० मिलियन टन जोधपुर डिविजन मे तथा ८० मिलियन टनबीकानेर डिविजन मे है। इसके अतिरिक्त जिप्सम का भडार सौराष्ट्र तथा कच्छ मे भी पाया जाता है। Geological Survey of India के अनुसार रन मे ३७७६००० टन, भाटिया मे १७५००० टन तथा वीरपुर मे ३६००० टन जिप्सम का भडार है। इसके अतिरिक्त मद्रास राज्य के त्रिचनापोली जिले मे भी जिप्सम का भण्डार है। इस प्रकार भारत का कुल भण्डार २०० मिलियन टन के लगभग है। १९६०-६१ तक इसकी माँग १.६७ मिलियन टन होने की आशा है। भारत मे १९५५ ई० मे ६८९९०५ टन जिप्सम उत्पन्न किया गया है। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे १८.६ लाख टन जिप्सम प्राप्त करने की योजना है।

अभ्रक (Mica)—यह एक बहुत उपयोगी धातु है और बहुत सी चीजें बनाने के काम मे आता है। विशेषकर विद्युत तथा दहकती हुई भट्टियों मे यह काम मे लाया जाता है। यह धातु भारतवर्ष मे दुनिया के सब देशो से अधिक उत्पन्न होती है। भारतवर्ष मे ससार के कुल भण्डार का आधा भण्डार है और भारतवर्ष ससार की ७० से ८० प्रतिशत आवश्यकता को पूरी करता है। इसके मुख्य स्थान बिहार मे हजारीबाग व आँध्र मे नैलोर है। इसके अतिरिक्त यह सलीम तथा मालाबार जिलो, ट्रावनकोर, अजमेर, मारवाड और राजपूताना मे भी पाया जाता है। भारत की उत्पत्ति का लगभग ७५ प्रतिशत बिहार मे प्राप्त होता है। भारतवर्ष मे १९५७ मे ६.०७ लाख हण्डर्वेट तथा १९५८ मे ६,३६०४० लाख टन अभरक उत्पन्न किया गया। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे अभरक के उत्पादन का ध्येय २००,००० हण्डर्वेट रखा गया है।

भारतवर्ष मे यद्यपि अभरक की उत्पत्ति बढ गई है तो भी खान खोदने का ढग पुराना है। बहुत सा अभरक खोदने मे नष्ट कर दिया जाता है।

प्रथम पचवर्षीय योजना मे अभरक के उद्योग को उन्नत करने के लिए निम्न-लिखित सुझाव दिये गए हैं—

(१) बिहार और मद्रास के भडारो का फिर से नक्शा बनाना तथा राजस्थान मे विस्तार पूर्वक भौतिक कार्य (Geological work), (२) अभरक के गुण के अनुसार उसका वर्गीकरण करने के लिये अनुसन्धान, (३) छोटे-छोटे उत्पादको की सहकारी समिति बनाई जाना, (४) इस बात की खोज करना कि क्या अभरक को बेचने के लिए केन्द्रीय बिक्री बोर्ड बन सकता है अथवा नही।

यहा यह बात बता देनी आवश्यक है कि १९५२ के पश्चात् से अभरक के निर्यात मे कमी होती जा रही है जिसके कारण इस उद्योग पर सकट आ गया है। हाल ही मे सरकार ने अभरक के निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये एक Export Promotion Council बनाई है।

तांबा (Copper)—भारतवर्ष मे तॉबा बिहार मे ८० मील लम्बी पेटी मे पाया जाता है। १९५८ मे भारत मे ४११,००० टन तॉबा उत्पन्न हुआ।

शोरा (Salt-petre)—इसकी बहुत से उद्योगो के लिये बहुत माँग है, जैसे यह शीशा बनाने के काम मे आता है और अन्न को कीडो से बचाने के लिये भी काम मे आता है। यह अधिक्तर, बिहार, उत्तर प्रदेश व पजाब मे पाया जाता है। एक समय था कि भारतवर्ष का शोरे की पूर्ति पर एकाधिकार था। परन्तु भारतीय सरकार की प्रशुल्क नीति (Traiff Policy) तथा दूसरे कारणो से भारतवर्ष मे इस उद्योग का पतन हो गया। १९१४–१८ मे भारतवष से ४,४०,००० हण्डर्वेट शोरा बाहर को जाता था, परन्तु १९४१–४२ मे १,७७,००० हण्डर्वेट ही भेजा गया था तथा १९५५ मे ६०,००० हडर्वेट की उत्पत्ति मे से केवल २२२८ हडर्वेट ही विदेशो को भेजा गया। आजकल अधिक्तर शोरा बाहर को भेजा जाता है परन्तु यदि हम उसको खाद के रूप मे काम मे लायें तो हमे बहुत लाभ हो सकता है।

उपर्युक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि भारतवर्ष मे अनेको बहुमूल्य धातुयें पर्याप्त मात्रा मे पाई जाती हैं। इनके अतिरिक्त भारत म आधारभूत उद्योगो के लिये पर्याप्त मात्रा मे लोहा और कोयला है। भारतवर्ष मे अल्यूमीनियम की कच्ची धातु, घिसने वाली धातु तथा चूना पर्याप्त मात्रा मे हैं। टिटेनियम, थोरियम तथा अभरक भी पर्याप्त मात्रा मे हैं। परन्तु खेद की बात है कि इन खनिज पदार्थों का अधिकाश भाग कच्चे रूप मे विदेशो को निर्यात कर दिया जाता है। हम अभरक के टुकडो से माइकानाइड, मोनोजाइट से सीरियम तथा इलमेनाइट से श्वेत टिटेनियम तैयार कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त यदि हमारे उद्योग धन्धे विकसित हो जायें तो हम ४३ विभिन्न प्रकार के कच्चे खनिज पदार्थों का अच्छा प्रयोग कर सक्ते हैं। बाक्साइट, क्रोमाइट, जिप्सम, चूना, टिटेनियम, टग्सटन तथा वैनडियम का हम अपने उद्योगो मे अच्छा प्रयोग कर सक्ते हैं। इस प्रकार हमारे प्राकृतिक साधन हमारे देश के औद्योगिक विकास के लिये पर्याप्त हैं। कुछ ऐसी भी धातु हैं जो हमारे देश मे पर्याप्त मात्रा मे नही हैं जैसे पेट्रोल, ताँबा, टीन, शीशा, गिलट आदि। इनको हम विदेशो से मगाकर अपना काम चला सकते हैं।

आशा है कि हमारी सरकार इस ओर ध्यान देगी। अभी हाल ही मे भूगर्भ विभाग को अधिक सुसगठित करने की ओर सरकार ने क्रियात्मक कदम उठाया है जिसके द्वारा भारत की खनिज सम्पत्ति का और भी पता लगाया जा सकेगा तथा देश का औद्योगिक और आर्थिक विकास किया जा सकेगा। १९४८ मे दिल्ली मे खनिज सूचना विभाग का निर्माण किया गया है। यह विभाग खनिज पदार्थ सम्बन्धी प्रयोग करके औद्योगिको को खनिज सम्पत्ति सम्बन्धी मामलो मे उचित परामर्श देगा।

१९४९ ई० में खान और खनिज व्यवस्था तथा विकास विधेयक (Mines and Metal Regulations and Development Act) पास किया गया। इसके द्वारा अब दुर्लभ खनिज पदार्थों की खानो का ठेका देते समय राज्य सरकारो को केन्द्रीय सरकार की सलाह लेनी पडेगी। इसके अतिरिक्त देश मे खानो की स्थिति

का, उनमे मिलने वाले पदार्थों का तथा उनकी क़िस्म का पता लगाने के लिये भूगर्भ विभाग (Geological Department) की स्थापना की गई।

१९५० ई० मे राष्ट्रीय ईन्धन विज्ञान शाला (National Fuel Research Laboratory) की स्थापना की गई। राष्ट्रीय शोधन विज्ञान-शाला (National Metallurgical Laboratory) तथा केन्द्रीय ग्लास तथा सिरामिक विज्ञानशाला (Central Glass and Ceramic Research Institute) की स्थापना भी की गई है। इस प्रकार यह आशा की जाती है कि निकट भविष्य म हम अपने खनिज पदार्थों को देश के हित के लिय अधिकाधिक काम मे लाने लगेंगे।

Q 5 Discuss the importance of water power in India What are the existing water power resources in this country? What are the principal features of the multipurpose hydel projects undertaken by the government and envisage their prospects

प्रश्न—भारतवष की जल-विद्युत शक्ति के विषय मे आप क्या जानते हैं? देश की वर्तमान विद्युत शक्ति के साधन बतलाइये तथा बहु उद्देश्य विद्युत-शक्ति की जो योजनायें सरकार ने चलाई हैं उनके विषय में विस्तारपूर्वक लिखिये।

बिजली का महत्व—भारतवर्ष म शक्ति के साधनो मे जल शक्ति का एक प्रमुख स्थान है। इस देश मे शक्ति के दूसरे साधन जैसे कोयला मिट्टी का तेल आदि बहुत कम मात्रा मे पाये जाते हैं। इस कारण भविष्य मे भारतवर्ष विद्युत शक्ति के ऊपर ही निर्भर रह सकता है। इस शक्ति के द्वारा सभी प्रकार के लोगो की आवश्यकतायें पूरी हो सकती हैं। एक परिवार को ही लीजिय। परिवार म बिजला से कई प्रकार के काम लिये जा सकते हैं, जैसे खाना पकाना, पानी गरम करना, रोशनी करना, गरमी के दिनो मे पखा चलाना, जाडो म हीटर जलाना आदि। बिजली मनोरजन का साधन भी, है क्योकि इससे रेडियो आदि चलाय जाते है। यह व्यापार के लिये भी बहुत उपयोगी है क्योंकि इसके द्वारा टेलीफून, तार, बेतार का तार आदि दूर के स्थानो तक भेजे जा सकते हैं। यह देश की कृषि के लिय भी बहुत उपयोगी है क्योकि इससे ट्यूबवैल बनाकर सिंचाई के साधन उपलब्ध किये जा सकत हैं। यह छाट-छोटे उद्योग धन्धो के लिये अत्यन्त आवश्यक है। जापान, स्विटजरलेड आदि देशो मे बिजली के द्वारा बहुत प्रकार के छोटे उद्योग धन्धे चलाये जाते हैं और इन्ही के कारण ये देश बहुत समृद्धिशाली हो गए हैं। यदि हमारे देश मे भी सस्ती बिजली की शक्ति उत्पन्न होन लगे और वह समस्त छोट छोटे गावो तक फैल जाए तो हमारे देश म बहुत से, उद्योग धन्धे चालू हो जाय। देश के उन लोगो के समय का सदुपयोग हो जाये तथा उनको धन भी प्राप्त हो

जायेगा जिनके पास वर्ष के बारह महीनो मे से केवल कुछ ही महीने काम रहता है, जैसे किसान। यह देश के बडे-बडे उद्योग-धन्धो के लिए भी बहुत ही उपयोगी है। क्योकि इसकी सहायता से यह उद्योग धन्धे बडी सुगमता से चलाए जा सकते है। इसके सिवाए हमारे देश मे कोयला कुछ थोडे से स्थानो मे केन्द्रित है, इस कारण देश मे बडे-बडे उद्योग केवल उन्ही स्थानो मे चलाये जा सकते हैं, जो कोयले के क्षेत्रो के निकट है। ऐसा करने मे उद्योग-धन्धो के अधिक केन्द्रीकरण का भय है। यदि देश मे सस्ती बिजली हो तो उससे उद्योग-धन्धो का विकेन्द्रीकरण (Decentralization) होना सम्भव हो जाएगा और औद्योगिक क्षेत्रो मे जो आजकल अधिक जनसख्या की समस्या तथा दूसरी प्रकार की समस्यायें पाई जाती है उसका स्वय ही हल हो जाएगा। इस लाभ के अतिरिक्त बडे-बडे उद्योग धन्धो को यह भी लाभ होगा कि उनको कारखाने चलाने मे शक्ति के ऊपर जो व्यय करना पडता है उस व्यय मे भी कमी हो जायेगी क्योकि बिजली शक्ति अन्य शक्तियो की अपेक्षा सस्ती होती है। इसके सिवाय बिजली से देश की आवागमन की समस्या भी बहुत सुलझ सकती है। बिजली की गाडिया, ट्राम्बे कार और दूसरी प्रकार के आवागमन के साधन बडी आसानी से चलाये जा सकते है। बिजली का प्रयोग रसायनशालाओ मे बहुत से अनुसन्धान करने के लिये भी किया जा सकता है। बिजली अस्पतालो मे भी बहुत सी बीमारियो को अच्छा करने के काम मे भी लाई जाती है। बिजली से दुग्ध उद्योग तथा बागवानी भी उन्नत की जा सकती है। दूध को बिजली की मशीनो से निकाला जा सकता है तथा उसको सुरक्षित भी रखा जा सकता है। इसी प्रकार पौधो को भी बिजली से आवश्यकतानुसार गर्मी पहुचा कर फूला फलाया जा सकता है। मुर्गी पालने के उद्योग को भी बिजली से उन्नत किया जा सकता है क्योकि बिजली से आवश्यकतानुसार अण्डे सेकर बच्चे निकाले जा सकते है। इस प्रकार हम देखते है कि जीवन के प्राय सभी क्षेत्रो मे बिजली का एक प्रमुख स्थान है, यदि हमारे देश मे बिजली की शक्ति उन्नत हो जाये तो उसको बहुत लाभ हो।

भारतवर्ष, मे जन-शक्ति के साधन—भारतवर्ष मे बिजली की शक्ति का अनुमान ३·५ करोड किलोवाट लगाया जाता है। परन्तु इसमे भी १९५६–५७ तक केवल ३६ ६ लाख किलोवाट शक्ति मे लाई जाने के लिये मशीने लगाई गई हैं। दूसरी योजना काल के अन्तिम वर्ष तक बिजली का उत्पादन का ध्येय ६९ लाख किलोवाट रखा गया है। इसका कारण यह है कि बिजली की शक्ति उत्पन्न करन के लिये जो कारखाने लगाये जाते हैं उनमे बहुत अधिक धन की आवश्यकता होती है। दूसरे गरमी के दिनो मे यहा की नदियो मे बहुत कम पानी रह जाता है और बहुत सी नदिया तो सूख जाती है। ऐसी स्थिति मे दो ही बातें सम्भव है या तो कारखाने गरमी के दिनो में बन्द हो जायें या बडे बडे बाँध बनाकर गर्मी के लिये पानी एकत्र किया जाये। तीसरा कारण यह भी है कि बिजली उत्पन्न करने

के लिये जिन मशीनो की आवश्यकता होती है उनको बाहर से मगाना पड़ता है और बाहर से आने म मशीनो के लिये वर्षो चाहियें, इस कारण कोई काम शीघ्रता से आरम्भ नही किया जा सकता। इन सब बाधाओ के कारण ही हमारे देश मे बहुत कम बिजली उत्पन्न होती है।

हमारे देश मे प्रति व्यक्ति बिजली का प्रयोग केवल ३५ किलोवाट घटे (KWh) वार्षिक है। इसकी अपेक्षा इगलैंड तथा कनाडा मे यह खर्च क्रमश २००० तथा ५४५० KWh है। नार्वे मे तो यह ७२५० KWh है। उत्पत्ति की दृष्टि से भी भारत को अभी बहुत रास्ता तय करना है। इसका पता नीचे की तालिका से लगता है—

देश	बिजली की शक्ति के साधनो का अनुमान (मिलियन KW)	वास्तविक उत्पत्ति (मिलियन KW)
१—ब्रिटेन	५	४
२—नार्वे	७ ५	२ ६
३—फ्रास	४ ५	४ ५
४—सयुक्त राष्ट्र	१००	१८
५—रूस	६०	१ ७
६—भारत	३५	० ६
७—ससार	५००	१३

भारत मे अभी तक बिजली की शक्ति की बहुत कम उन्नति हुई है। बिजली की शक्ति की उन्नति की दृष्टि से हम भारत को ६ क्षेत्रो मे बाट सकते है—बम्बई बगाल, बिहार, मद्रास, मैसूर, उत्तर प्रदेश तथा पजाब।

बम्बई—इस क्षत्र म बिजली की शक्ति की उन्नति का श्रय टाटा को है। अभी हाल ही मे सरकार ने भी बहुत कुछ प्रयत्न किया है। टाटा का सबसे पहला कारखाना १९१५ ई० म खोपोली मे जो बम्बई से ४५ मील है स्थापित हुआ। दूसरे दो स्टेशन १९२५ तथा १९२७ मे स्थापित किय गए। अभी हाल मे सरकार ने भी ५४००० किलोवाट शक्ति उत्पन्न करन के लिये मशीनें लगाई है।

टाटा के अतिरिक्त अहमदाबाद मे भी एक बडी योजना है जहाँ कि ६० मिलो मे से प्रत्येक की माँग १००० किलोवाट है। यहाँ की कोयना (Koyna) योजना जब पूरी हो जायेगी तो उससे २,४०,००० KW बिजली उत्पन्न होन लगेगी।

मैसूर—यहाँ पर बहुत सी नदियाँ है जिन से बहुत सी बिजली उत्पन्न की जाती है। यहाँ की सब योजनाय सरकारी है। मैसूर राज्य की कावेरी योजना दक्षिणी भारत मे सबसे बडी है। यह १९०२ ई० मे चालू हुई। इसकी वर्तमान शक्ति ४२००० किलोवाट है। इससे कोलार की सोने की खानोंतथा दूसरे स्थानो

को बिजली दी जाती है। इस योजना के अतिरिक्त मैसूर मे शिमला योजना (१७००० KW) तथा जोगपाल योजना (१२००० KW) हैं।

मद्रास—इस राज्य मे अभी तक बिजली की बहुत कम उन्नति हुई है। परन्तु १६१४ ई० से इस राज्य मे पाच बिजली की योजनायें उन्नत हुई हैं। ये पैंकारा, मेटूयर, पायानासाम, नैयर तथा पेरियार योजनाएं हैं। पैंकारा योजना १६३० मे प्रारम्भ हुई। इससे ७०,००० KW बिजली उत्पन्न होगी। यह बाँध ३,००० फीट ऊँचा है। मैंटूयर योजना १६३७ मे चालू की गई। इसकी बिजली उत्पन्न करने की शक्ति ४०,००० KW है। पायानासाम योजना मे थम्बरापरनी नदी का जल काम मे लाया गया है। यह योजना १६५२ मे शुरू हुई। इसकी निर्मित शक्ति १८,००० KW है। नैयर योजना प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत पूरी की गई है। यह पैंकारा स्टेशन के नीचे का पानी काम मे लाती है। इसकी उत्पन्न करने की शक्ति ३६,००० KW है। पेरियर योजना की शक्ति १,०५,००० KW है। यह केरल राज्य की पेरियार झील का पानी काम मे लाती है। यह योजना १६५८–५६ मे पूरी होने की आशा है। इसके अतिरिक्त मद्रास तथा मदुराई मे दो भाप के स्टेशन हैं जिनकी अन्तिम शक्ति एक मिलियन किलोवाट से भी अधिक होगी।

पजाब—बिजली की शक्ति उत्पन्न करने का कार्य इस राज्य मे १६२६ ई० से हुआ। ऊल (Uhl) नदी का पानी इसके लिये काम मे लाया गया। इसकी अंतिम शक्ति १,२०,००० KW है जिसमे से ४८,००० KW १६३३ ई० से काम मे लाई जा रही है। यह मण्डी योजना कहलाती है। इसके अतिरिक्त इस राज्य मे भाखड नागल नामक योजना प्रथम पचवर्षीय योजना मे प्रारम्भ की गई। इसके कई स्थानों से बिजली उत्पन्न करके लोगो को दी जा रही है।

उत्तर प्रदेश—इस राज्य की सबसे प्रसिद्ध योजना गगा की योजना है। इस मे गगा की नहर पर ८ स्थानो मे झरने बनाकर बिजली उत्पन्न की गई है। इसकी वर्तमान शक्ति ७६,००० KW है। इस क्षेत्र मे बिजली से बिजली के कुएँ बनाकर सिंचाई की जा रही है। इसके अतिरिक्त शारदा नदी की योजना अभी हाल ही मे पूरी की गई है। इसकी निर्मित शक्ति ४८,००० KW है, इसके अतिरिक्त रिहाड योजना रिहाड नदी पर पीपरी गाव के पास तैयार की जा रही है। पावर हाऊस मे ६ शक्ति उत्पन्न करने वाले सैट होगे जो ४०,००० KW के होंगे।

पश्चिमी बगाल व बिहार—पश्चिमी बगाल मे कलकत्ता इलेट्रिक सप्लाई कार्पोरेशन लिमिटेड है जिसने अपना काम १८६७ ई० से आरम्भ किया। आरम्भ मे इसकी बिजली उत्पन्न करने की शक्ति केवल १,००० KW थी परन्तु १६५६ ई० तक इसने इसको बढा कर ४ लाख KW करली।

यहाँ की दूसरी योजना दामोदर घाटी योजना है जो कि बहु उद्देश्य है और बगाल, बिहार तथा केन्द्र की सहायता से पूरी होगी। इस योजना के अन्तर्गत

तलैया तथा बोकारो फरवरी १९५३ से कार्य कर रहे है। तलैया पावर स्टेशन है तथा इसकी शक्ति ४००० KW है। बोकारो स्टेशन कोनार नदी पर बोकारो के पास है जो विहार मे है। इसमे ५०,००० KW की शक्ति के तीन स्टेशन हैं तथा इतना ही शक्ति का एक चौथा बनाने की योजना है। कोनार, मैथोन तथा पचत हिल नामक तीन और बाँध बनाने की योजना है। कोनार की उत्पादन शक्ति ४०००० KW है। यह ५०० फीट की ऊँचाई से काय करेगा। मैथोन स्टेशन भूमि के नीचे बाराकर के समीप बनाया जाएगा। यह बगाल विहार की सीमा के समीप है। इसकी शक्ति ६० ००० KW है। पचत हिल दामोदर पर बगाल विहार की सीमा पर है। इसकी शक्ति ४० ००० KW है।

उडीसा—यहा हीराकुड बाँध महानदी पर बनाया गया है। अभी तक इसम ७२,००० KW की दो यूनिट तथा २४००० KW की शक्ति की दो यूनिट हैं। इस योजना के अन्तगत उडीसा, विहार का कुछ भाग तथा मध्य प्रदेश

की आवश्यकता पूरी होगी। अन्त मे इस योजना, दामोदर योजना तथा मच्छकुण्ड मे सम्बन्ध स्थापित किया जाएगा।

आंध्र—यह राज्य १९५३ से बना है। अभी तक यहाँ पर कोयले की शक्ति से २६०५० KW तथा डीजल स्टेशनो से १०,००० KW बिजली उत्पन्न की जा रही है। अधिकतर बिजली मैसूर तथा मद्रास राज्य से मोल ली जाती है। यहाँ की मच्छकुण्ड योजना आन्ध्र तथा उडीसा की एक सामूहिक योजना है। यहां का जलपत स्टेशन अन्त मे १०२००० KW बिजली उत्पन्न कर सकेगा। तुगभद्रा योजना जो कि मद्रास तथा हैदराबाद की सामूहिक योजना है इस राज्य को भी लाभ पहुचाएगी।

बहु उद्देश्य बिजली की योजनाओं की विशेषता—जैसा ऊपर कहा गया है कि हमारे देश मे अभी तक बिजली उत्पन्न करने के लिए एक बहुत बडा क्षेत्र पडा है इस कारण भारतीय सरकार ने अमेरिका की टैनिसी घाटी की योजना (Tennessee Valley Authority) के अनुसार नदियो मे बहने वाले पानी का सदुपयोग करने के लिए बहु-उद्देश्य नदियो की योजनाएं (Multi-purpose river-projects) तैयार की हैं जिनसे बाढ के रोकने, वन लगाने, मछली पकडने, सिंचाई करने के अतिरिक्त बिजली भी पैदा की जाएगी। इस प्रकार की बहुत सी योजनाएँ इस समय चल रही है। जितनी योजनाएँ इस समय देश मे चल रही हैं उनके पूरा होने तक ७६५ करोड रु० खर्च होने का अनुमान है। इसमे प्रथम पँचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ६४६ करोड रुपया खर्च किया जाएगा। योजना के अन्तिम वर्ष मे इन योजनाओ से १६ मिलियन एकड अतिरिक्त भूमि सींची जाने की आशा थी व १५ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न किए जाने का अनुमान है परन्तु प्रथम योजना काल मे केवल ११ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न की जा सकी। इसमे सिंचाई सम्बन्धी लाभ इस प्रकार होने की आशा है—१६७ मिलियन एकड भूमि प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत, २१ मिलियन एकड द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत जिसमे ९० लाख एकड उन योजनाओ से होगी जो कि प्रथम योजना काल की होगी तथा ३० लाख एकड नई योजनाओ से होगी तथा शेष उसके पश्चात्। शक्ति सम्बन्धी लाभ मे से ३ ४ मिलियन किलोवाट प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्त तक, ३ ५ मिलियन किलोवाट द्वितीय योजना के अन्तर्गत तथा शेष उसके बाद होगा। दूसरी योजना मे कुल ४२ बिजली व भाप उत्पन्न करने वाली योजनाएँ चालू की जाएँगी।

(१) **हीरा कुड बाँध**—उडीसा राज्य मे महानदी के विनाशकारी कार्यों को रोकने के लिये यह बाँध बनाया गया है। महानदी का उद्गम मध्यप्रदेश के रामपुर जिले मे है, इसकी लम्बाई ५३३ मील है। इसमे हर साल ७ करोड ४० लाख एकड फुट पानी बहता है और साल भर का औसत निकास १ लाख क्यूजेक है। इस जलराशि का मुश्किल से २० वा भाग काम आता है। शेष बङ्गाल की खाडी मे बह कर चला जाता है। उडीसा की भूमि को उचित मात्रा मे पानी मिलने पर वहा की उपज दुगनी तिगुनी बढ सकती है।

महानदी को नियन्त्रण में लाने के लिये सबसे पहले १९२७ ई० में प्रयत्न किया गया। १९४५ में यह समस्या केन्द्रीय सिंचन तथा नौका नयन आयोग को सौंपी गई।

महानदी पर हीराकुड, टीकापारा और नारज तीन बांध बनाने की योजना है। १९४८ में सबसे पहले हीराकुड बाँध पर कार्य शुरू हुआ। इस बाध की लम्बाई १५,७४८ फुट होगी। इसके दोनों ओर लगभग १३ मील लम्बे बाँध होंगे। इस बाँध से सिंचाई, बिजली नौका नयन सुविधाएँ प्राप्त होंगी।

इस योजना के दो भाग हैं। पहले भाग में मुख्य बाँध दोनों ओर के बांधों, बिजली घर (१,२३,००० किलोवाट) ४०० मील लम्बी तार की लाइनों और ८ छोटे बिजली घरों का निर्माण शामिल है। इस पर ७० करोड ७८ लाख रुपये खर्च होने का अनुमान है जिसमें से दिसम्बर १९५६ तक ५३ ७६ करोड रु० खर्च किये गये। योजना के दोनों भागों पर १ अरब रुपया खर्च होगा।

बाँध बनाकर तीन नहरें निकालने की योजना है। तीनों नहरों और उनकी शाखाओं से २½ मिलियन एकड भूमि में सिंचाई होगी और इससे ४५ लाख टन गन्ना पैदा हो सकेगा।

अक्तूबर १९५८ तक २,४१,९८३ एकड भूमि को पानी की सुविधा प्रदान की गई। नहर के पानी का बटवारा करने के लिये नहर की शाखाय आदि सितम्बर १९५९ तक पूरी हो जायेंगी। चारों बिजली घरों से बिजली प्राप्त होनी शुरू हो गई है। इस बिजली को अब राजगगपुर की सीमेन्ट फैक्ट्री, रूरकेला के इस्पात के कारखाने, जोदा के फेरोमगनीज के प्लान्ट, ब्रजराजनगर की कागज की मिल और चौदवार के टैक्सटाइल तथा दूसरे उद्योगों को बिजली दी जा रही है। हीराकुण्ड से कटक, पुरी, सम्बलपुर, सुन्दरगढ, बारगृह तथा दूसरे अन्य शहरों को बिजली प्रदान की जा रही है।

डेल्टा की सिंचाई के लिए भी एक योजना स्वीकार की जा चुकी है। इसका कार्य १९६० म पूरा हो जायेगा। इस योजना पर १४ ९२ करोड रुपया खर्च होंगे तथा १५७ लाख एकड पर प्रतिवर्ष सिंचाई होगी।

बिजली की अधिक भाग को पूरा करने के लिये दूसरे भाग के बनाने की भी मंजूरी हो चुकी है। इस पर १४ ३२ करोड रुपया खर्च होंगे इसके पूरा होने पर कुल निर्मित शक्ति १०९,००० KW हो जायगी। इसके अतिरिक्त डेल्टा की सिंचाई के लिये १४ ९२ करोड रुपए की एक योजना बनाई गई है जिससे १८ ७ लाख एकड पर सिंचाई होगी।

अभी हाल ही में भारत सरकार यह सोच रही है कि हीराकुड बाध व रूरकेला थरमल पावर स्टेशन को एक दूसरे से सम्बन्धित कर दिया जाये जिससे कि हीराकुड बाध का बिजली रूरकेला पावर स्टेशन को प्राप्त हो सके। इस योजना क

अनुसार दोनो स्थानो की विजली एक जगह एकत्र करके उसको आवश्यकतानुसार बाटा जायगा। इसके फल स्वरूप हीराकुण्ड के पानी का विजली के उत्पन्न करने के लिये अधिक सदुपयोग हो सकेगा तथा मुख्य बाध पर ६ बिजली उत्पन्न करने वाली इकाईया का बनाना सम्भव हो सकेगा। ऐसा करने से रूरकेला के इस्पात, अल्यूमीनियम तथा खाद के उद्योगो को ही लाभ न हो सकेगा वरन् इस क्षेत्र मे रेलो का विजलीकरण भी सभव हो सकेगा। इसके कारण रूरकेला के इस्पात के कारखाने मे जो शक्ति उत्पन्न होगी वह हीराकुड बांध को प्राप्त हो सकेगी। इसके कारण रूरकेला मे जो २५००० KW उत्पन्न करने वाला स्टेशन, अचानक पड़ने वाली आवश्यकता के लिए वनाया जाने वाला था उसकी आवश्यकता न पड़गी। इस योजना के फलस्वरूप हीराकुड बांध से रूरकेला के इस्पात के कारखाने को दिन के कुछ घण्टो मे जो शक्ति प्राप्त होगी वह शेष घण्टो मे लौटा दी जायगी। इस प्रकार इस योजना से उडीसा को बडा लाभ होगा।

(२) **दामोदर घाटी योजना**—इस योजना के अनुसार दामोदर नदी पर एक बाँध बनाने की योजना है। दामोदर नदी मे प्रतिवर्ष भयकर बाढ आती है जिसके कारण बगाल, बिहार राज्य के एक बहुत बडे भाग की तबाही व बर्बादी हो जाती है। लोगो को इस तबाही व बर्बादी से बचाने व इस विनाशकारी नदी को लाभदायक बनाने के लिये ही वह बाध बनाया जा रहा है।

इस बाध के बनाने मे कई वर्ष लगेगे। प्रथम पचवर्षीय योजना मे केवल चार वाध बनाये जायेंगे जिनसे १,०४,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जायगी। दुर्गापुर मे एक ऐसा बाध बनाया जायगा जिससे न केवल सिचाई ही होगी वरन् यह नौका वहन के काम भी आयेगा। बोकारा थरमल स्टेशन भी बनाया जायेगा जिससे १½ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न हो सकेगी।

ऊपर जिन चार बाधो का वर्णन किया गया है उनमे से तलया बांध १९५५ मे पूरा हो चुका है। यह बाध २४,००० एकड भूमि को खरीफ मे तथा ७५,००० एकड भूमि को रबी मे सींचेगा। इसके अतिरिक्त इस बाध से कोदारमा तथा हजारी बाग की अबरक की खानो को बिजली पहुचाई जायेगी। इसकी निर्मित शक्ति १½ लाख किलोवाट है परन्तु अन्त मे यह बढा कर २,२५,००० KW कर दी जायेगी।

दूसरा कोनर बाध मई १९५४ मे पूरा हो चुका है। यह बोकारा थरमल प्लाट को ठण्डा करने के लिये पानी ही प्रदान नही करता वरन् इससे १,०४,००० एकड भूमि भी सींची जायेगी। अन्त मे बाँध के नीचे बिजली उत्पन्न करने के लिये एक प्लाट बनाने की योजना है जिसकी उत्पादन शक्ति ४०,००० किलोवाट होगी।

तीसरे मैथोन बाँध से सिचाई करने व बाढ को रोकने का कार्य किया जायेगा। यह ११ लाख एकड़ फुट पानी एकत्र करेगा तथा इसके समीप एक बिजली

घर बनाया जायेगा। जिसकी उत्पादन शक्ति ६०,००० किलोवाट होगी। इसको १९५७ ई० मे पूरा किया गया।

चौथा बांध पचत हिल है। यह इन चारो मे सबसे बड़ा है। इसका मुख्य कार्य बाढ को रोकना है। यह २२ लाख एकड फीट पानी एकत्र करेगा तथा इसके समीप एक बिजली घर बनाया जायेगा जिसकी शक्ति ४०,००० किलोवाट होगी। इसको १९५८ ई० मे कार्य मे लाया जायेगा।

दुर्गापुर बाध पश्चिमी बंगाल मे है। यह १० ४ लाख एकड से भी अधिक भूमि सींचेगा। इसकी १५५७ मील नहर मे से ८५ मील लम्बी नहर म नाव चलेगी। इस प्रकार कलकत्ता और कोयले की खानो के बीच एक दूसरे रास्ते का निर्माण हो जायेगा। दुर्गापुर बाध का उद्घाटन उप-राष्ट्रपति द्वारा ९ अगस्त १९५५ को किया गया। नहरें जून १९५९ ई० म पूरी हो जायगी।

(३) **कोसी योजना**—यह योजना उत्तर बिहार, नैपाल के लिये है। इसम एक बांध नैपाल मे और दूसरा नैपाल-बिहार की सीमा पर बनाया जायेगा। इसमे से पहला बाध नैपाल की दस लाख एकड भूमि को सींचेगा और उससे एक लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न हो सकेगी और दूसरा बाध जो दुनिया म सबसे ऊँचा होगा बिहार की १३ ९७ लाख एकड भूमि को सींच सकेगा। इसकी लागत ४४ ७६ करोड रुपये होगी।

(४) **भाखडा नागल योजना**— यह योजना पजाब, पेप्सू तथा राजस्थान के लिये है। इसमे ३६,००,००० एकड से भी अधिक भूमि सींची जाने की आशा है और पूरा होने पर ३,६५ ००० किलोवाट बिजली की शक्ति उत्पन्न होगी। इस पर १७० करोड रुपये खर्च होने की आशा है। नागल नहर का उद्घाटन ८ जौलाई १९५४ को हो चुका है तथा गगवाल पावर हाउस भी २ जनवरी १९५५ से चालू हो गया है और दूसरा कोटला पावर हाउस ३० जौलाई १९५६ ई० को पूरा हुआ। १९५७-५८ मे राजस्थान व पजाब मे इस योजना से क्रमश १५ लाख एकड भूमि पर सिचाई हुई।

(५) **तुङ्गभद्रा योजना**—इस योजना से आन्ध्र मैसूर तथा हैदराबाद को लाभ पहुंचेगा। इससे ८ २ लाख एकड भूमि पर सिंचाई हो सकेगी और १,९५,००० किलोवाट बिजली भी उत्पन्न होगी। इस पर ६० ७९ करोड रुपये खर्च होने की आशा है।

(६) **कोकरापारा योजना**—इस योजना द्वारा सरकार ताप्ती नदी को उन्नत कर रही है। इसके द्वारा सूरत की ६,५२,००० एकड भूमि पर सिंचाई होगी। बांध जून १९५३ मे चालू हो चुका है तथा नहरे १९६३ मे पूरी हो जायेंगी।

(७) **रिहद बांध योजना**—यह एक बहुउद्देश्य योजना है। यह योजना दक्षिणी मिर्जापुर जिले के पीपरी स्थान पर चालू की गई है। प्रारम्भ म इस योजना पर ३५ करोड रुपये खर्च होने का अनुमान था परन्तु अब यह बढ़ा कर ४९ ०५

करोड रु० कर दिया गया है। इस बाध से लगभग १९ लाख एकड भूमि पर सिचाई की जायेगी जो कि उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त बिहार के एक भाग पर भी होगी। इसके अतिरिक्त इस बाध की बिजली उत्पन्न करने की शक्ति २·५ लाख किलोवाट होगी। यह सिंचाई, रोशनी, रेलगाडियो आदि के काम मे लाई जाएगी।

इन योजनाओ के अतिरिक्त और भी बहुत सी योजनाये हैं जो कि बहुत सी राज्य सरकारे अपने हाथ मे लिए हुए हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश मे बहुत सी नदी घाटी योजनाये चल रही है। इन योजनाओ का उद्देश्य १५–२० वर्ष मे सिंचित क्षेत्र को दुगना कर देना है। इसके अतिरिक्त इन योजनाओ के द्वारा बहुत सी बिजली भी उत्पन्न होगी। यही नहीं बहुत सी उन नदियो को जो आजकल बाढ के द्वारा बहुत से क्षेत्रों मे तबाही पैदा कर देती है, रोककर मनुष्य के लिए उपयोगी बनाया जायगा। इसके अतिरिक्त कुछ बाँधो मे नावे चलाने का काम भी किया जायगा।

इस प्रकार ये योजनाये न केवल खेती के लिए ही उपयोगी है वरन् उद्योग धन्धो के लिए भी है। खेती को ये पानी पहुचाकर बहुत सा अन्न पैदा करने मे सहायता देंगी। ऐसा करने से हमारे देश मे अन्न का सकट शीघ्र ही दूर हो जाएगा। उद्योगो को इससे प्रत्यक्ष व परोक्ष लाभ होगा। प्रत्यक्ष लाभ तो यह होगा कि इनको बिजली की सहायता से चलाया जायगा। सस्ती शक्ति प्राप्त होने पर इसका लाभ बढ जायगा। बडे उद्योगो के अतिरिक्त छोटे उद्योगो के लिए तो बिजली का महत्व बहुत अधिक है। बिजली के आने पर देश के छोटे-छोटे गाँवो मे छोटे-छोटे उद्योग उन्नत हो जायेगे। इससे देश को बहुत लाभ होगा। इसके अतिरिक्त यदि बिजली से रेलें भी चलने लगी तो बहुत सा कोयला बच जायगा जो इस्पात बनाने के काम आ सकेगा। परोक्ष लाभ यह होगा कि खेती के उन्नत होने पर कच्चा माल अधिक मात्रा मे तथा सस्ता मिलेगा। इस प्रकार दश को बडा लाभ होगा।

द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बिजली की शक्ति की उन्नति—प्रथम पचवर्षीय योजना मे बिजली का उपयोग १४ यूनिट से बढ कर २५ यूनिट प्रति व्यक्ति हो गया है। १९५१ ई० के शुरू मे केवल ३६७८ गावो व कस्बो मे बिजली पहुची हुई थी परन्तु प्रथम योजना के अन्त मे वह सख्या बढ कर ६५०० गाँव व कस्बे मे हो गई। द्वितीय योजना मे बिजली का खर्च २५ यूनिट से वढ कर ५० यूनिट होने की आशा है। बिजली की उत्पन्न शक्ति जो प्रथम योजना से पहले ६ ६ मिलियन किलोवाट घर्ट थी प्रथम योजना के अन्त में बढ़कर ११ मिलियन किलोवाट घण्टे तथा दूसरी योजना के अन्त मे १२ मिलियन किलोवाट घण्टे होने की आशा है अर्थात् १९५५–५६ मे जहाँ हमारी निर्मित शक्ति ३ ४ मिलियन किलोवाट थी वहाँ १९६०–६१ मे यह ६ ९ मिलियन किलोवाट होने की आशा है।

गाँवो मे छोटे-छोटे उद्योग धन्धे फैलाने तथा भूमि के नीचे के पानी को खेती के काम मे लाने के लिये यह आवश्यक है कि छोटे गावो व कस्बो मे बिजली पहुचवाई

जाये। प्रथम योजना के अन्त तक २०,००० और उससे ऊपर वाली आबादी के कस्बो मे से ६५ प्रतिशत मे बिजली पहुँचाई जा चुकी है। दूसरी योजना मे ५००० से २०,००० तक की आबादी के गावो व शहरो मे बिजली पहुचाने की योजना है। इस योजना के अन्त तक ७५०० अतिरिक्त गावो व कस्बो मे पहुच जायगी।

दूसरी योजना मे विभिन्न राज्यो मे बिजली की अतिरिक्त शक्ति किलोवाट इस प्रकार बढने की आशा है—

आन्ध्र	१४०,३००
आसाम	२१,५००
बिहार	२०५,०००
बम्बई	४२५,०००
मध्य प्रदेश	१६३,०००
मद्रास	२८७,०००
उडीसा	२४३ ०००
पजाब	५४८,०००
उत्तर प्रदेश	३०२,०००
पश्चिमी बगाल	२४१,५००
जम्मु काश्मीर	११,०००
मध्य भारत	५६,०००
मैसूर	४७,६००
राजस्थान	७२,८००
सौराष्ट्र	५०,०००
ट्रावनकोर कोचीन	१६१,०००

Q 6 What different type of forests are found in India ? Indicate their importance to the economy of the country Mention measures adopted for their improvement Have you any suggestions to offer ?

प्रश्न ६—भारतवर्ष में किस प्रकार के वन पाये जाते हैं ? देश की अर्थ-व्यवस्था मे उसके वनों का महत्व बताइये। उनको उन्नत करने के लिये क्या कार्य किया गया है ? क्या आप कोई सुझाव देंगे ?

उत्तर—वनों के प्रकार—भारतवर्ष एक बहुत बडा महाद्वीप है। इसम कई प्रकार की वनस्पति पाई जाती है। यहाँ पर निम्नलिखित पाँच प्रकार के वन पाये जाते है —

(१) **सदाबहार वन** (Evergreen forests)—यह वन उन प्रदेशो मे पाये जाते हैं जहाँ वर्षा बहुत अधिक होती है जैसे पूर्वी हिमालय तथा आसाम प्रदेश तथा पश्चिमी घाट के प्रदेश मे। इन वनो को वर्ष भर पानी मिलता रहता है इसलिये ये सदा हरे भरे रहते हैं। इन वनो के वृक्ष बहुत लम्बे और छतरीनुमा होते हैं। इनके नीचे अनेक प्रकार की बेले उग आती हैं। इन वनो मे मुख्यतया बाँस, बेत, महोगिनी आदि के पेड पाये जाते हैं।

(२) **चौडी पत्ती वाले पतझड वन** (Deciduous or Monsoon forests)—इन वनो के प्रदेश वे हैं जहाँ ४०″ से ८०″ तक वर्षा होती है। दक्षिणी पठार का भीतरी भाग इन वनो का प्रधान क्षेत्र है। ये वन सदाबहार के समान घिनके नही होत और इनमे उगने वाले वृक्ष अधिक लम्बे भी नही होते। गर्मी के दिनो मे जब पानी भाप बनकर उडने लगता है तो ये पेड अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं। इन वनो मे साल, सागौन हल्दू, शीशम, चन्दन, सेभल आदि लकडियाँ पाई जाती हैं।

(३) **शुष्क वन** (Dry forests)—ये वन उन स्थानो पर मिलते हैं जहाँ ४०१″ से कम वर्षा होती है। इन वन प्रदेशो मे काँटेदार वृक्ष व कटीली झाडियाँ उगती है। ये वृक्ष छोट छोटे होते हैं परन्तु इन पेडो व झाडियो की जड लम्बी होती हैं। इनकी छाल मोटी व कडी होती है। यहाँ, कीकर, बबूल, खजेडा आदि वृक्ष उत्पन्न होते है। इस प्रकार के वन राजस्थान, गुजरात, मध्यभारत तथा दक्षिणी पजाब मे मिलते है। वास्तव मे इनको वन नही कह सकते क्योकि वनो का दृश्य नही दिखाई नही पडता। इधर-उधर केवल पेड व झाडियाँ ही दिखाई पडती हैं।

(४) **पर्वतीय वन** (Mountain forests)—हिमालय पर्वत पर विशेष प्रकार के वन पाये जाते है। ये वन किसी एक प्रकार के नही होते। पर्वत की तलहटी से १६ ००० फीट की ऊँचाई तक तापक्रम की भिन्नता के अनुसार प्राय वे सभी प्रकार के वन मिलते हैं जो भूमध्य रेखा से ध्रुव प्रदेशो तक भूमण्डल पर मिलते है। इन वनो मे देवदार, पाइन, स्प्रूस, सनोवर, बलूत आदि की लकडियाँ पाई जाती हैं।

(५) **समुद्र-तट वन** (Tidal forests)—इन वनो का विस्तार नदियो के डेल्टाई प्रदेश मे है। गङ्गा के वन इनमे विशेष महत्वपूर्ण है। यहाँ सुन्दरी नामक वृक्ष प्रचुरता से मिलता है। इसलिये इन वनो को सुन्दर वन कहते है। इसके अतिरिक्त ये वन महानदी, गोदावरी, कावेरी आदि के डेल्टा प्रदेशो मे भी मिलते है। इन वनो मे पाई जाने वाली लकडी जलाने के काम आती हैं और छाल चमडा रगने के काम आती है। इनसे नावे भी बनाई जाती है।

वनों का क्षेत्रफल (Forest areas)—भारतवर्ष १९४१–५२ मे २,८०,१५९ मील भूमि पर वन थे। यह कुल देश के क्षत्रफल का २२ ११ प्रतिशत है। परन्तु १२ मई १९५२ ई० के वन नीति प्रस्ताव (Forest Policy Resolution) मे

सुझाव दिया गया है कि भारतवर्ष की कुल क्षेत्रफल के ⅓ पर वन उगाने का ध्येय अपने सामने रखना चाहिये।

विभाजन (Distribution)—भारत के वनो का विभाजन ठीक प्रकार का नहीं है। उत्तर प्रदेश के कुल क्षेत्र के १६.४ प्रतिशत पर, पंजाब के ११ प्रतिशत पर बिहार के १४.८ प्रतिशत पर, उड़ीसा के १३.७ प्रतिशत पर, मद्रास के २६.६ प्रतिशत पर, बङ्गाल के ५२.२ प्रतिशत पर, आसाम के ३९ प्रतिशत पर और मध्य प्रदेश के ४७.७ प्रतिशत पर वन पाये जाते हैं।

उपज (Productivity)—भारत के वन न केवल क्षेत्र में कम हैं वरन् उनसे उपज भी कम मिलती है। जहा भारत मे प्रतिवर्ष प्रति एकड २.५ घन फीट लकडी प्राप्त होती है वहा फ्रास में ५६.८ घन फीट, जापान मे ३७ घन फीट, सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे १८ घन फीट लकडी प्राप्त होती है।

वनों का आर्थिक महत्व—

वन किसी देश की बहुमूल्य सम्पत्ति होते हैं। उनसे जलाने की लकडी मिलती है। वे पशुओ के लिये चारा प्रदान करते हैं। वे बहुत से उद्योग-धन्धो के लिये कच्चा माल जैसे लकडी, बाँस आदि प्रदान करते हैं। वे भूमि की उवरा शक्ति को कायम रखते हैं तथा मिट्टी को कटने से बचाते हैं। इस प्रकार हम वनो के लाभो को दो भागो म बाट सकते है—(१) प्रत्यक्ष लाभ (Direct advantages) तथा (२) अप्रत्यक्ष लाभ (Indirect advantages)।

(१) प्रत्यक्ष लाभ—वनो से हमको कई प्रकार की उपयोगी वस्तुए प्राप्त होती हैं। इनमे से जलाने की लकडी मुख्य है। जलाने की लकडी की वर्तमान उत्पत्ति (१९५४–५५ मे) का अनुमान २०८,३४६ हजार घन फीट है। इसका मूल्य ३ करोड ५६ लाख ९१ हजार रु० था। इस प्रकार भारत मे प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष लकडी का उपयोग आधे मन (·००२ टन) से भी कम है। इसके विपरीत सयुक्त राष्ट्र अमेरिका का प्रति व्यक्ति उपभोग एक टन के लगभग है। लकडी का अभाव गङ्गा सिंध के मैदानो म अधिक है जिसके कारण यहाँ गोबर जलाने की आदत पड गई। परन्तु यह दुर्भाग्य की बात है क्योकि गोबर हमारे देश मे खाद के रूप मे काम मे लाया जाता है। Inspector General of forests ने कुछ वर्ष पूर्व अनुमान लगाया था कि भारत म २२० मिलियन टन गोबर की खाद प्रतिवर्ष जलाई जाती है। Imperial Council of Agricultural Research के अनुमान के अनुसार भारत मे प्रतिवर्ष ५५० मिलियन टन गोबर की खाद जलाई जाती है। लकडी की पूर्ति बढाने के लिये पचवर्षीय योजना मे दो सुझाव दिये गये हैं। पहला, गाँवो मे पेड लगाना जो सामूहिक विकास योजना (Community Development Plan) के अन्तर्गत हो रहा है। दूसरा कोयले के उपभोग को बढाना। १९५५–५६ तक गाँव म दस लाख टन कोयले का उपभोग बढाने की योजना थी।

वनो का दूसरा लाभ यह है कि उनसे हमको इमारती लकडी प्राप्त होती है। युद्ध काल मे इमारती लकडी की उत्पत्ति बहुत बढ गई थी परन्तु अब वह काम हो रही है। लकडी की आयात सहित हमारे देश मे इमारती लकडी की पूर्ति लगभग २१ लाख टन है। इसमे से ७३ प्रतिशत नागरिको के काम मे आती है और शेष सरकार के। हमारे देश मे फौलाद की कमी के कारण पचवर्षीय योजना मे सुझाव दिया गया है कि बिजली, टेलीफोन तथा तार के खम्बे फौलाद के स्थान पर लकडी के होने चाहिये। हमारे देश मे इस प्रकार के ५०,००० खम्भे अण्डमान से तथा २०,००० सुन्दर वन तथा महानदी क्षेत्र से प्राप्त हो सकते है। १९५४–५५ मे भारत मे १०७,०५४ हजार घन फीट हमारती लकडी प्राप्त हुई जिसका मूल्य १५ करोड ८२ लाख ८० हजार रु० था।

वनो का तीसरा लाभ यह है कि इनसे कई उद्योगो के लिये कच्चा माल प्राप्त होता है। इन उद्योगो मे से दियासलाई कागज फर्नीचर आदि के उद्योग मुख्य है। १९५४–५५ मे कागज व दियासलाई की लकडी १२२८ हजार घन फीट प्राप्त हुई जिसका मूल्य १३ लाख ८७ हजार रु० था।

वनो का चौथा लाभ यह है कि इनसे बहुत सी उपयोगी वस्तुयें जैसे लाख, चमडा रगने का सामान, गोद, कत्था, जडी बूटियाँ, तारपीन का तेल आदि प्राप्त होती हैं। इन वस्तुओ की वार्षिक आय (१९५४–५५ मे) ७७४ लाख रुपये के लगभग थी। इनमे से लाख और हर्रा तो विदेशो को भी भेजी जाती है। १९५०–५१ मे भारतवर्ष से ११ ८७ करोड रुपये का लाख तथा १ ३२ करोड रुपय का हर्रा विदेशो को भेजा गया। वनो का पाँचवा लाभ यह है कि इनसे पशुओ के चराने का चारा प्राप्त होता है। इस प्रकार राज्यो को ९५ लाख रुपये वार्षिक की आय प्राप्त होती है। इनसे १ करोड ३० लाख गाय बैलो, ३९ लाख भैसो तथा ९० लाख दूसरे पशुओ को चारा प्राप्त होता है। परन्तु हमारे वनो मे पशुओ के चराने पर कोई नियन्त्रण न होने के कारण बहुत सा चारा खराब हो जाता है। इसलिये पचवर्षीय योजना मे सुझाव दिया गया है कि किसानो को अपने उतने ही पशुओ को नि शुल्क चराने की आज्ञा देनी चाहिये जो खेती तथा घरेलू काम के लिये आवश्यक है।

(२) **अप्रत्यक्ष लाभ**—वनो के बहुत से अप्रत्यक्ष लाभ भी है। वनो के कारण वर्षा की मात्रा बढ जाती है। वन पानी के बादलो को अपनी ओर खीचते है और उससे वर्षा बढ जाती है। मिस्र मे नील नदी के डेल्टे मे केवल ६ रोज वर्षा का औसत था। परन्तु जब से वहाँ करोडो की सख्या मे पेड लगे है तब से वर्षा के औसत दिन बढकर ४० हो गये है।

इसका दूसरा लाभ यह है कि पेड बरसात के दिनो मे काफी पानी सोख लेते है। यह पानी भूमि मे पहुचकर भूमि के नीचे बहने वाली पानी की धारा मे मिल जाता है और पानी की मात्रा को बढा देता है। इसके कारण कुओ मे ऊपर ह

पानी निकल आता है। ऐसा न होने पर किसानों को सिंचाई करने में बड़ी कठिनाई होती है।

वन पृथ्वी की मिट्टी के कटने को रोकते हैं। जब बरसात में पानी बहुत वेग से बहने लगता है तो पेड़ उसके प्रभाव को रोक देते हैं। बहुत सी मिट्टी इनके आस-पास जमा हो जाती है। मिट्टी के कटने को रोकने का मुख्य उपाय पेड़ लगाना ही है।

वन बाढ़ की भीषणता को भी बहुत कम कर देते हैं। यदि पहाड़ों पर वन न हों तो पानी बड़े वेग से बहता हुआ आए और अपने साथ बहुत से बड़े-बड़े पत्थरों को भी लुढ़का लाए जिसके कारण बहुत से आदमी मर सकते हैं तथा बहुत सा सामान नष्ट हो सकता है। चीन ने जब से अपने पहाड़ी वनों को साफ किया है तभी से वहाँ बाढ़ की भयङ्करता बहुत बढ़ गई है।

पेड़ अपनी जड़ों में बहुत सा पानी एकत्र किये रहते हैं और इस पानी को धीरे-धीरे निकालते रहते हैं। इस कारण प्रतिदिन की हवा में नमी रहती है। गर्मी में इसके कारण अच्छा मौसम रहता है। पेड़ हमारे स्वास्थ्य की दृष्टि से भी बहुत उपयोगी हैं। वह हवा को साफ करते हैं और इस प्रकार हमको बहुत सा लाभ पहुँचाते हैं। वन देश की सुन्दरता को भी बढ़ाते हैं।

सरकारी नीति (Government Policy)—

१८५७ ई० के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के पूर्व भारतवर्ष में वनों को बिना सोचे-समझे काटा जाता था जिसके कारण देश को बड़ी हानि हो रही थी। परन्तु इसके पश्चात् सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ और सरकार ने प्रान्तीय तथा केन्द्रीय वन विभाग स्थापित किये। १८४३ ई० में वनों के महानिरीक्षक की नियुक्ति की गई। १८९४ ई० में सरकार ने वनों को निम्नलिखित चार श्रेणियों में विभाजित किया—

(१) वे वन जिनका रखना जलवायु तथा भौतिक कारणों से आवश्यक है। इन पर सरकारी नियन्त्रण होता है। इस प्रकार के वन वर्षा के लिये उपयोगी हैं। बाढ़ आदि की रोक-थाम के लिये भी ये उपयोगी हैं। इनको सुरक्षित वन (Reserved forest) कहते हैं। १९५४–५५ में इन वनों के नीचे १,३८,०५६ वर्ग मील का क्षेत्र था।

(२) वे वन जिनमें बहुमूल्य लकड़ी प्राप्त होती है जैसे टीक, साल, देवदार आदि। सरकार इन पर इतना अधिक नियन्त्रण तो नहीं करती जितना कि वह पहले प्रकार के वनों पर करती है परन्तु फिर भी इन वनों पर सरकार का कुछ न कुछ नियन्त्रण अवश्य रहता है। इनमें लोगों को पैसे देकर पशु चराने तथा लकड़ी काटने की आज्ञा मिल जाती है। इन वनों को रक्षित वन (Protected Forests) कहते है। सन् १९५४–५५ में भारत में ६२६०४ वर्ग मील पर इस प्रकार के वन थे।

(३) वे जगल जो केवल पशुओ को चराने के लिए आवश्यक है। वास्तव मे इन्हे जगल नही कहा जा सकता। इनको श्रेणी रहित (Unclassed) कहा जाता है। १९५४-५५ मे इन वनो के नीचे ८०२३६ वर्ग मील का भाग था।

सरकार ने इन वनो की रक्षा के लिए वन विभाग (Forest Department) स्थापित किया है। इस विभाग के दो मुख्य कार्य हैं—(१) वनो को अत्याधिक शोषण से बचाना, (२) वनो की उत्पादन शक्ति मे वृद्धि करना। १९०६ ई० मे वन अन्वेषण-शाला (Forest Research Institute) खोली गई जिसने खोज की है कि सवाई व भाभर घास के अतिरिक्त बाँस से भी कागज तैयार हो सकता है। इस अन्वेषण शाला ने यह भी पता लगाया है कि लकडी तथा बास को कीडो से कैसे बचाया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त सरकार ने अभी पिछले कई वर्षों से वन महोत्सव मनाना आरम्भ किया है। प्रतिवर्ष १ जौलाई से ८ जौलाई तक सारे देश मे पेड लगाये जाते है। इनमे जनता, सरकार तथा स्थानीय स्वशासन सभी भाग लेते हैं। इस प्रकार देश मे वनो को बढाने का प्रयत्न बराबर किया जा रहा है।

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत वन नीति—

पचवर्षीय योजना मे बताया गया है कि हमारे देश मे जलाने की लकडी का बडा अभाव है और यह विशेषत गगा सिन्ध के मैदान मे है। इसलिए वनो को योजना अनुसार बढाना आवश्यक है। इसके लिए बेकार पडी भूमि की नाप तोल करनी आवश्यक है और उस पर उचित ढग से वन उगाना आवश्यक है। इसी बीच मे केन्द्रीय वन बोर्ड को यह बताना चाहिए कि प्रत्येक राज्य मे वनो के नीचे कितना क्षेत्रफल होना चाहिए। योजना मे बताया गया है कि वन उसी समय काटने की आज्ञा देनी चाहिए जब कि वे आवश्यकता से अधिक हो या काटे गए क्षेत्र के बराबर क्षेत्र पर वन लगाए जा सकें। योजना मे सुझाव दिया गया है कि जमीदारी उन्मूलन के फलस्वरूप जो राज्य सरकारो के आधीन ४ करोड एकड भूमि आ गई है उसमे से अधिकतर पर से पेड गिरा दिये गए है। इस भूमि पर पेड उगाए जा सकते है। योजना मे सुझाव दिया गया है कि अल्पकाल मे तीन प्रकार से वनो का क्षेत्र बढाया जा सकता है—(१) मिट्टी के कटाव को रोकने के लिए वन लगाकर (२) अधिक क्षेत्र पर पेड लगाकर तथा (३) गाव मे बाग लगा कर।

वनो के प्रबन्ध मे केन्द्र और राज्यो की नीतियो मे सामञ्जस्य नही पाया जाता। इस कमी को पूरा करने के लिए इस योजना मे सुझाव दिया गया है कि राज्य सरकार को प्रतिवर्ष अपनी योजना वनो के महा निरीक्षक (Inspector General of Forests) के पास भेज देनी चाहिए। समय-समय पर राज्यो के वन अधिकारियो का सम्मेलन बुलाना चाहिए जिससे कि प्रत्येक राज्य की कठिनाई दूर करने का प्रयत्न किया जाय।

इस योजना के अनुसार विभिन्न राज्यों में वनों के विकास के लिये प्राथमिकता प्रदान करने मे निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए —

(१) जिन देशों में बडी-बडी रियासतों का विलय हुआ है अथवा जमींदारी उन्मूलन के कारण निजी वन सरकार के पास आ गए हैं उन वनों केप्रबन्ध को और अधिक मजबूत बनाना।

(२) युद्ध की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिक काटे गए वनों का फिर से लगाना।

(३) जिस स्थान पर अधिक मिट्टी कट गई है वहाँ पेड लगाना।

(४) वनों मे यातायात की उन्नति करना।

(५) गाँव मे बाग लगाना।

(६) लकडी की पूर्ति बढ़ाने के लिए काम में न आने वाली लकडियों का रासायनिक ढग से शोधना।

ऊपर की प्राथमिकताओं के आधार पर वन-विकास योजना में निम्नलिखित ढङ्ग से व्यय करने की योजना—

वन विकास	६११ ३ लाख रु०
प्रबन्ध	२४६ ४ लाख रु०
वन-उद्योग	९६ ५ लाख रु०
शिक्षा तथा ट्रेनिङ्ग	३६ ३ लाख रु०
अनुसन्धान	१० ० लाख रु०
कुल व्यय	९५६ ५ लाख रु०

इस योजना काल मे विभिन्न राज्यों ने जो कार्य किया उसके फलस्वरूप ७५,००० एकड भूमि पर हरी परत प्रदान की गई तथा ३,००० एकड प्रति वर्ष दर पर दियासलाई की लकडी के पेड लगाए गए। ३००० मील लम्बी वन सडक बनाई गई तथा २० लाख एकड वन निजी अधिकार से लेकर सरकारी अधिकार मे लाए गये।

द्वितीय पचवर्षीय योजना और वन—

इस योजना मे वनों के लिये २४ ३२ करोड रुपये रखे गए हैं। इस योजना मे ३ ८० लाख एकड पर के पतित हुए वनों को फिर से उन्नत किया जायेगा, ५०,००० एकड पर टीक आदि व्यापारिक पेड लगाये जायेंगे, १३००० एकड पर नीला गोंद तथा अन्य पेड लगाये जायेंगे तथा दूसरे २००० एकड पर जडी बूटियाँ लगाई जायेंगी। ५०,००० एकड पर दियासलाई की लकडी उगाई जायगी। नहरों तथा सडकों, गाँव की बेकार भूमि आदि पर भी पेड लगाने की योजना है। इस योजना मे वनों की सडकों को उन्नत करने तथा इमारती लकडी को अच्छे ढग से प्राप्त करने की भी योजना है। इसके अतिरिक्त लकडी को ठीक समय उगाने व

पकने के लिये प्लान्ट लगाये जायेंगे तथा वनो का सर्वे करने के लिये एक संस्था की स्थापना की जायेगी। दक्षिणी भारत के लिये एक वन रिसर्च की स्थापना की जायगी।

उन्नति के सुझाव—

भारतीय सरकार ने सर्वप्रथम १८९४ ई० मे अपनी वन-नीति को घोषित किया जिसमे इस बात पर जोर दिया गया कि जलवायु को ठीक रखने के लिये वनो की रक्षा करना बहुत आवश्यक है। यह भी घोषित किया गया कि यद्यपि कृषि वनो से अधिक आवश्यक है तो भी कृषि करने के लिये वनों के क्षेत्र को एक निश्चित सीमा से कम नही करना चाहिए। इनसे स्थानीय लोगो की आवश्यकताओ को पूरी तरह पूरा करके खूब धन प्राप्त करना चाहिए।

यद्यपि वन-नीति (Forest Policy) घोषित किए इतना समय हो गया है तो भी इस देश मे वन लगाने की ओर सरकार की रुचि कभी नही हुई। सरकार ने कभी इस बात की ओर ध्यान नही दिया कि वनो के लिये कम से कम कितना क्षेत्रफल होना आवश्यक है। दूसरे उसने कभी यह नहीं सोचा कि देश के उस क्षेत्र-फल पर जहा आज वन नही है कितने वन लगाये जा सकते है। यही नही सरकार ने कभी वनो की रक्षा के लिये कोई ध्यान नही दिया। देश के २,८०,१५६ वर्गमील मे से केवल २,५६,५६० वर्ग मील वन सरकार के अधिकार मे हैं और शेष वनो पर जनता का नियन्त्रण है। वह वन जो कि सरकार के अधिकार मे है सबके सब वन विभाग के अधिकार मे नहीं है वरन् उनमे से ८६,०१६ वर्ग मील पर ही वन विभाग का अधिकार है। जिस क्षेत्र पर वन-विभाग का अधिकार है उसमे से केवल ६५,७७३ अथवा कुल वनो के क्षेत्रफल का ४०% सुरक्षित भाग है और सुरक्षित भागो मे भी कुछ ऐसी बाते होती है जो वनो की रक्षा के हेतु नही होनी चाहियें। इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश के लगभग तीन चौथाई वनो पर सरकार का विशेष नियन्त्रण नही है। इसके सिवाय हमारे देश मे वनो का ऊपर बताई हुई तीनो श्रेणियो मे इस प्रकार विभाजन किया गया है कि उसके कारण न तो वन विभाग भूमि को कटने ही से बचा सकता है और न बाढ को रोक सकता है। उदाहरणार्थ बम्बई राज्य मे वनो का विभाजन इस प्रकार से है कि यदि आधी पहाडी सुरक्षित है तो आधी जनता के लिये खुली है। इस कारण वन-विभाग कोई इस प्रकार की योजना नही बना सकता कि जिससे मिट्टी न कटे और न ही बाढ कोई हानि पहुचा सके।

इसलिये यह आवश्यक है कि इस प्रकार की वन-नीति को समाप्त किया जाय। सरकार को चाहिये कि वह इस प्रकार की नीति बनाये जिससे कि मिट्टी कटने तथा बाढ की समस्या ठीक प्रकार से हल हो सके। ऐसा करने मे यह सम्भव है कि जनता के अधिकारो को कम करना पडे। पर इसकी कोई चिन्ता न करनी चाहिए।

एक बात और बताने योग्य है वह है यह, कि आजकल वन-विभाग राज्य

इन मजदूरो की वार्षिक आय का औसत २०४ रुपये है। अधिकतर मजदूरो की इससे कम ही है। इतनी कम आय होने के कारण उनकी आर्थिक स्थिति बहुत खराब है। इस प्रकार खेती पर लगे हुये लगभग २५ करोड लोगो मे से अधिकतर की आर्थिक स्थिति बहुत खराब है। इससे अधिक लोगो के खेती पर लगे होने के कारण ही देश की कुल राष्ट्रीय आय का लगभग ४५ प्रतिशत खेती से ही प्राप्त होता है। जहाँ भारत मे खेती पर इतने लोग लगे हुए है वहा इङ्गलैड और अमरीका मे इसकी अपेक्षा बहुत कम लोग लगे हुये है। जहाँ भारत के १००० व्यक्तियो मे से ७०६ खेती, पशु, वन तथा मछली पकडने मे लगे हुए है वहाँ सयुक्त राष्ट्र अमरीका मे केवल १२८ तथा ग्रेट ब्रिटेन मे केवल ५९ इस कार्य मे लगे हुए है।

इसके विपरीत भारत मे बहुत कम लोग उद्योगो तथा दूसरे कार्यों मे लगे हुए हैं। जहा हर १००० व्यक्तियो मे से भारत के केवल १५८ व्यक्ति ही खानो, उद्योगो तथा वाणिज्य मे लगे हुये है वहाँ सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे ४५६ तथा ग्रेट ब्रिटेन मे ५५५ व्यक्ति लगे हुए हैं। यही नही, दूसरे उद्योगो तथा सेवाओ मे भी भारत के बहुत कम लोग लगे हुये हैं। इनमे लगे हुये लोगो का अनुमान प्रति १००० मे से १४१ है। इनके विपरीत यह सख्या सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे ४१६ तथा ग्रेट ब्रिटेन मे ३९५ है। इन सबके कारण सयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा ग्रेट ब्रिटेन मे सतुलित अर्थ-व्यवस्था है, अर्थात् इन दोनो देशो मे लगभग आधे लोग खेती आदि तथा आधे दूसरे कार्यो मे लगे हुए हैं। इस कारण यदि इन देशो मे खेती खराब हो जाए तो भी देश को विशेष चिन्ता नही होती परन्तु हमारे देश मे ऐसा होने पर सारी आर्थिक व्यवस्था बिगड जाती है। यही कारण है कि हमारे देश मे इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि देश के बहुत से लोगो को खेती से हटाकर छोटे-बडे उद्योगो मे लगा दिया जाय। परन्तु ऐसा करना बहुत काल तक सम्भव न हो सकेगा क्योकि ऐसा अनुमान लगाया गया है कि १९७५-७६ मे भी खेती पर लगभग ६० प्रतिशत लोग लगे रहेगे।

खेती पर इतनी अधिक निर्भरता के कारण हमारे देश के खेत बहुत छोटे-छोटे है जिनके कारण हमारे देश की प्रति एकड उपज ससार के दूसरे देशो से कम है। इस कारण देश मे बेरोजगारी व गरीबी पाई जाती है। इन दोनो बातो के कारण हमारे देश के लोगो का जीवन-स्तर बहुत नीचा है। यही गरीबी हमारे लिए अभिशाप बनी हुई है और हमारी उन्नति के बहुत से मार्ग बन्द किए हुए है।

सामाजिक तथा धार्मिक संस्थायें

३

Q 11 What are the different social and religious institutions that are found in India and how do they affect the economic life of the people ?

प्रश्न ११—भारतवर्ष मे कौन-कौन सी सामाजिक तथा धार्मिक सस्थायें पाई जाती हैं और वह लोगों के आर्थिक जीवन पर क्या प्रभाव डालती हैं ?

भारतवर्ष मे कई प्रकार की धार्मिक तथा सामाजिक सस्थाये पाई जाती है, जो इस देश के लोगो के आर्थिक स्थिति के ऊपर एक बहुत बडा प्रभाव डालती हैं। उनमे मुख्य-मुख्य ये है—

(१) जाति प्रथा (२) सामूहिक परिवार प्रथा,
(३) उत्तराधिकार के नियम, (४) पर्दा प्रथा।

जाति प्रथा (Cast System)—एक जाति कुछ ऐसे परिवारो का समूह होती है जिनका एक ही वश और पेशा होता है तथा जो एक ही प्रकार से रीति-रिवाजो का पालन करते है और जो अपने को एक महापुरुष की सतान बताते हैं। एक जाति के लोग एक से ही सामाजिक नियमो का पालन करने के कारण एक दूसरे से सम्बन्धित होते है। ये समय-समय पर उत्सवो के रूप मे एक स्थान पर एकत्र होते है और इस प्रकार से अपने सामाजिक सम्बन्धो को अधिक मजबूत बनाते हैं। जाति-पाँति की प्रथा हमारे यहाँ इतनी मजबूत है कि एक जाति के लोग दूसरी जाति के लोगो से न खाने-पीने के सम्बन्ध रखते है और न एक जाति के लोग दूसरी जाति के लोगो से विवाह आदि करते हैं। भारतवर्ष मे इस प्रकार की जातियाँ तथा उप-जातियाँ दो हजार से कम नही है। पर उनमे से चार मुख्य है—ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र।

जाति प्रथा के लाभ—जाति-पाति प्रथा मे चाहे आज भले ही अवगुण आ गये हो तो भी पुराने समय मे इससे बहुत से लाभ थे। एक जाति के लोग अपने आपको एक बड़े परिवार का घटक समझते थे। उनमे आपस मे बडा प्रेम था। वे एक दूसरे के सुख-दुख के साथी होते थे। यदि जाति के किसी घटक पर कोई आपत्ति आती थी तो वे सब मिलकर उसका सामना करते थे और इस प्रकार से जाति के लोगो की रक्षा होती थी। जाति के लोग मिल-जुलकर अपने बच्चो की शिक्षा का प्रबन्ध भी करते थे। यदि जाति की कोई स्त्री विधवा हो जाती थी या कोई मनुष्य अपने पीछे कुछ बच्चे छोडकर मर जाता था तो जाति वाले ही उनकी

रक्षा करते थे। यदि जाति के कुछ घटको मे आपस मे कुछ झगडा हो जाता था तो निपटारा वे स्वय अदालत मे जाये बिना ही कर लेते थे।

आर्थिक दृष्टि से भी जाति प्रथा का बडा महत्व था। एक जाति के लोग साधारणतया एक ही पेशे वाले होते थे। यह पेशा पीढी दर पीढी चलता रहता था इसलिये हर पेशे के लोगो की कार्यक्षमता बहुत अधिक होती थी। उस समय किसी आदमी को अपने लडके को अपने पेशे की शिक्षा देने के लिये कही भेजने की आवश्यकता न थी। अपने परिवार मे रहकर ही लडका अपने पेशे के सब भेदो को समझ जाता था। यह बात उस समय इसलिये आवश्यक थी कि उस समय शिक्षा का अभाव था। जाति प्रथा के अभाव मे लडके अपने पेशे की शिक्षा पाने से वंचित रह जाते।

जाति प्रथा बनाम गिल्ड—भारत की पेशेवर जातियो की तुलना योरोप की गिल्डो से की गई है। गिल्ड के समान वह अपने सदस्यो को शिक्षा देती थी, उनमे *अच्छी भावनायें पैदा करती थी। उनके झगडो का निपटारा करती थी, उनकी* मजदूरी और काम पर नियन्त्रण करती थी और आपत्ति काल मे उनकी सहायता करती थी। परन्तु जाति और गिल्ड मे बहुत से अन्तर थे।

गिल्ड स्वय इच्छा से बनाये सगठन होते थे परन्तु जाति इस प्रकार के सगठन नही होते थे।

(२) गिल्ड के सदस्यो के ऊपर विवाह सम्बन्धी कोई भी रुकावट न थी गिल्ड का सदस्य अपनी इच्छानुसार किसी से भी शादी कर सकता था। परन्तु एक जाति का आदमी अपनी ही जाति की लडकी से शादी कर सकता था।

(३) गिल्ड के सदस्यो का आपसी सम्बन्ध पेशे के आधार पर था परन्तु जाति के लिये पेशे का होना आवश्यक बात नही।

जाति प्रथा के दोष—प्रारम्भ मे चाहे इस प्रथा से कुछ भी लाभ हुआ हो पर आजकल यह मानना पडेगा कि यह प्रथा भारतवर्ष की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक उन्नति मे बहुत बाधक है। जाति-पाति के भेद-भाव के कारण लोगों मे इतना बैर और वैमनस्य बढ गया है कि एक जाति के लोग दूसरी जाति के लोगो को सहन ही नही कर सकते। इसके कारण यह देश राजनीतिक दृष्टि से बहुत दुर्बल हो गया है। इसी दुष्परिणाम के कारण इस देश का विभाजन हुआ और आगे भी और बहुत सी बाते हो सकती हैं। दक्षिणी भारत मे हुये ब्राह्मणो तथा गैर ब्राह्मणो के झगडो की निन्दा करते हुये प० नेहरू ने हाल ही मे कहा था कि जाति प्रथा ने भूतकाल मे भारतवर्ष की एकता को कमजोर तथा नष्ट किया और यदि यह बहुत दिनो तक चलती रही तो भारत बिल्कुल भी उन्नति नही करेगा। जाति प्रजातन्त्र तथा समाजवाद के विरुद्ध है। जाति-पाति की प्रथा के कारण आर्थिक क्षेत्र मे भी एक बहुत बडी बाधा उत्पन्न होती है। इस प्रथा के

कारण लोगों के पेशे प्राय निश्चित से हो गये हैं, जैसे ब्राह्मण विद्या सिखाने का कार्य करते हैं, क्षत्री रक्षा का, वश्य वाणिज्य का और शूद्र सेवा का। इससे यह हानि होती है कि यदि एक जाति का आदमी कोई ऐसा पेशा करना चाहे जिसको दूसरी जाति के लोग करते हैं तो वह बहुधा ऐसा नही कर सकता जैसे एक ब्राह्मण का लडका यदि जूते बनाने या लुहार का कार्य करना चाहे तो उस जाति के लोग उसको इस काम के करने के लिये मना करेंगे। इसी कारण लोगो की बुद्धि का विकास उस दिशा मे नही होने पाता जिसमे होना चाहिये। इससे देश को आर्थिक दृष्टि मे बहुत हानि होती है। जाति-पाति के भेद भाव के कारण ही लोगों का खाना पीना तथा वस्त्र आदि भी निश्चित से हो गये हैं। इस कारण सब चीजो की माग देश की हरएक जाति की ओर नही आती वरन् वह एक वर्ग विशेष से आती है। इसी कारण यहा पर बडे-बडे उद्योग धन्धे नही होने पाते। पुराने समय मे जाति-पाति के भेद-भाव के कारण लोग एक स्थान से दूसरे स्थान मे नही जाना चाहते थे। इस कारण किसी स्थान पर तो श्रम की बहुत अधिकता रहती थी और किसी स्थान पर बहुत कमी। पुराने समय मे पू जी भी श्रम के साथ ही इधर-उधर आती जाती थी इसलिये पू जी भी किसी स्थान पर कम और किसी पर अधिक रहती थी। इस प्रथा का सबसे बडा दोष यह है कि हमारे देश का शूद्र वर्ग जिसकी सख्या दस बारह करोड से कम नही है अपने आप को सदा ही पतित समझता है और अपने आपको ऊँचा उठाने के सब मार्ग बन्द समझता है।

जाति प्रथा का पतन—यद्यपि भारत के कोटि-कोटि निवासियो के लिये आज भी जाति प्रथा अत्यन्त महत्वपूर्ण है तब भी वे लोग जो कि पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव मे हैं उनका दृष्टिकोण बदल गया है आजकल के शिक्षित लोग व्यक्ति-वाद की भावना मे हैं उनका दृष्टिकोण बदल गया है आजकल के शिक्षित लोग व्यक्ति वाद की भावना से प्रभावित हैं। इसलिये जाति के बन्धन ढीले पडते जा रहे हैं। आजकल के शिक्षित लोग भिन्न-भिन्न जाति के लोगो के साथ खाने पीने मे कोई सकोच नही करते। अन्तर्जातीय विवाह भी होने शुरु हो गये हैं। बहुत से युवक भविष्य मे उन्नति की इच्छा से अपने पैतृक कार्य को छोडकर अन्य कार्यों को कर रहे हैं। आवागमन के साधनो की उन्नति होने से गावो की पृथकता समाप्त हो रही है, व्यापार और उद्योगो की उन्नति हो रही है। इसलिये युवक वर्ग वही पेशा करता है जो लाभप्रद होता है। रेल और मोटरो द्वारा यात्रा करते समय कोई किसी की जाति नही पूछता। ब्राह्मण और शूद्र बराबर-बराबर बैठते है। स्कूलो मे भी सब जातियो के लडके लडकिया एक ही साथ बैठकर शिक्षा ग्रहण करते हैं। इन सब बातो के कारण भी जाति प्रथा का पतन होता जा रहा है। इन सबके अतिरिक्त महात्मा गाधी के अस्पृश्यता को दूर करने के आन्दोलन और उनके ऐतिहासिक पूना उपवास ने भी भारत की जाति प्रथा के पतन मे बडी सहायता पहुचाई है। जब से भारत स्वतन्त्र हुआ है तब से सब जातियो के लोगो को समान अधिकार प्राप्त

हो गये हैं। इसलिए कोई भी आदमी जो राजनीति मे आना चाहता है वह किसी दूसरी जाति के लोगो से अधिकाधिक सम्पर्क मे आना चाहता है जिससे कि वह उनका मत प्राप्त कर सके। आजकल ब्राह्मण एवं शूद्र के पास जाने म कोई सकोच नही करता। वह उसको गले लगाने का प्रयत्न करता है। इस कारण जाति प्रथा की भूतकाल की दृढता कहीं भी दृष्टिगोचर नही होती। इस प्रकार हम देखते हैं कि आजकल जाति प्रथा के बन्धन ढीले होते जा रहे है।

(२) सामूहिक परिवार प्रथा (Joint Family System)—यह भारतवर्ष की दूसरी विशेष सस्था है। सामूहिक परिवार म पाश्चात्य देशो की भाँति पति पत्नि तथा बच्चे ही नही होते वरन् इस देश म परिवार का रूप बहुत बडा होता है। यहाँ पर दादा, परदादा, पुत्र, पिता-माता, दादी, परदादी, भाई भावज, स्त्री बच्चे आदि सब एक साथ रहते हैं। उनका भोजन एक साथ पकता है। परिवार के कमाने वाले व्यक्ति अपनी सब कमाई परिवार कर्त्ता को दे देते हैं और वह ही उन धन का व्यय करता है। इस प्रकार परिवार के लोगों म बहुत ही प्रेम होता है।

लाभ—सामूहिक परिवार प्रथा के बहुत से लाभ है। इसम सबको सब सम्पत्ति एक ही साथ रहती है। इस कारण जब तक सामूहिक परिवार प्रथा हमारे देश म रही तब तक इस देश म भूमि का बटवारा नही हुआ और छोट छोट खेतो की जो समस्या हमारे देश के सामने आजकल है वह न थी। पर सामूहिक परिवार के टूटने से यह समस्या भयकर रूप से हमारे सम्मुख आ खडी हुई। सामूहिक परिवार का एक लाभ यह भी है कि सारे परिवार का भोजन एक ही साथ पकना है। इस कारण धन के उपभोग म बडी कमी हो जाती है। सामूहिक परिवार म रोगी, दुर्बल, अबलाओं को इधर उधर नहीं भटकना पडता, उनको घर ही म आश्रय मिल जाता है। यह बात हमारे देश के लिये बहुत ही उपयोगी है, क्योंकि यहाँ पर इङ्गलैड आदि देशों कि भाँति सरकार की ओर से ऐसे लोगों का कोई प्रबन्ध नहीं होता। इसका एक बहुत बडा लाभ यह भी है कि इससे परिवार के लोगो मे प्रेम, भ्रातृभाव आज्ञा मानने की आदत आदि कई अच्छे गुण उत्पन्न हो जाते हैं। इसका एक यह भी लाभ है कि इसके कारण उचित प्रकार का श्रम विभाजन हो जाता है। परिवार के कमजोर आदमियो को हल्का काम करने को दिया जाता हैं और ताकतवर आदमी भारी काम कर लेते हैं।

दोष—पर जहाँ पर सामूहिक परिवार के इतने गुण हैं वहा पर वह दोष युक्त भी है। इस प्रथा के कारण परिवार के कुछ लोग सदा ही आलसी बने रहते हैं वह कुछ काम नहीं करते और दूसरों की कमाई पर रहते हैं। दूसरे, इस प्रथा के कारण पूंजी का सचय भी कठिन हो जाता है क्योंकि आपस की खर्च करने की होड के कारण परिवार का हरएक घटक अधिक से अधिक खर्च करना चाहता है। इस प्रथा के कारण ही लोगों मे घर का मोह इतना अधिक हो जाता है कि वे इधर उधर नही जाना चाहते। इससे कई स्थानों पर श्रमिकों की कमी हो जाती है

और देश की उत्पत्ति को हानि होती है। अन्त मे इनके कारण परिवार के लोगो को काम करने का कोई प्रोत्साहन नही मिलता। परिवार का एक आदमी जब यह देखता है कि वह तो खूब काम करता है और दूसरा काम नही करता परन्तु दोनो एकसा ही जीवन व्यतीत करते है तो वह भी काम करना छोड देता है। इससे बडी हानि होती है।

सामूहिक परिवार प्रथा के पतन के कारण—परन्तु आजकल सामूहिक परिवार का पतन हो रहा है। इसका कारण यह है कि हमारे देश के लोगों पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव पडने के कारण उनमे व्यक्तिगत भावना प्रबल हो रही है। इसलिये कोई भी व्यक्ति अपने परिवार म उस भारी बोझ को जो कि उसकी व्यक्तिगत सुख भोग तथा महत्वाकाँक्षा मे बाधक होता है, उठाना नही चाहता। आवागमन के साधनो की उन्नति के कारण युवक रोजगार की खोज म इधर उधर जाने मे सकोच नही करते। उत्तर प्रदेश तथा बिहार के बहुत से मजदूर बम्बई के कारखानो तथा आसाम के चाय के बागो मे काम करते है तथा बङ्गाल और मद्रास के लोग दिल्ली, पजाब तथा उत्तर प्रदेश म कार्य करते हैं। पारिवारिक पेशो के नष्ट हो जाने के कारण भी यह असम्भव हो गया कि एक परिवार के सब व्यक्ति एक ही स्थान पर ही रहे। उनको रोजगार की तलाश मे इधर-उधर जाना ही पडता है। अग्रजी न्यायालयो की स्थापना ने भी सामूहिक परिवार के पतन मे सहायता पहुचाई है क्योकि इनके द्वारा परिवार की सम्पत्ति का बटवारा सरलता से सम्भव हो गया है। इस प्रथा के समाप्त होने का एक यह भी कारण है कि अब परिवार के घटको मे एक दूसरे के साथ प्रेम नही रहा और न ही वे एक दूसरे के लिये बलिदान करने को तैयार है। उनमे आपस म बहुत झगडे रहते है। इन सब बातो के कारण अब सामूहिक परिवार बडी तेजी से टूटते जा रहे है।

(३) उत्तराधिकार के नियम (Laws of Inheritance and Suceession)—

भारतवर्ष मे उत्तराधिकार के दो नियम है—

(१) मिताक्षर (Mitakshara), (२) दाय भाग (Dayabhag)

(१) मिताक्षर—यह नियम बगाल को छोडकर शेष सारे भारतवर्ष म लागू होता है। इस नियम के अन्तर्गत परिवार की दादाइलाही सम्पत्ति पर पिता और पुत्रो का अधिकार समान होता है। यद्यपि पिता सम्पत्ति की देख रेख करता है तो भी कोई भी लडका अपने पिता के जीवित रहते हुये भी सम्पत्ति का बटवारा करा सकता है। इस प्रकार इस नियम के अनुसार पिता और पुत्रो के बीच भी सम्पत्ति का बटवारा हो सकता है। यदि पिता के जीवन काल मे सम्पत्ति का बटवारा नही हुआ तो उसकी मृत्यु के पश्चात् सम्पत्ति पर स्वय ही पुत्रो का अधिकार हो जाता है। यदि कोई पिता सम्पत्ति को बेचना चाहे तो वह अपने पुत्रो की इच्छा के बिना उसको बेच नही सकता है।

(३) दाय भाग नियम—यह नियम बंगाल में चालू है। इसके अन्तर्गत परिवार की सम्पत्ति पर परिवार के कर्ता का पूरा अधिकार होता है। वह उस सम्पत्ति की देख-रेख करता है। यदि वह ठीक समझे तो वह इसको बिना पुत्रों की इच्छा के बेच भी सकता है। इस प्रकार इस नियम के अनुसार सम्पत्ति का बटवारा केवल पिता की मृत्यु के पश्चात् भाइयों में ही होता है।

इन दोनों ही नियमों के अन्तर्गत लड़की को सम्पत्ति का कोई भी भाग नहीं दिया जाता। परन्तु हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम १९५६ ई० के अनुसार अब सम्पत्ति का बटवारा केवल लड़कों में ही न होगा वरन् लड़कियों, विधवाओं, माँ, मरे हुए लड़के के लड़के, लड़की, मरी हुई लड़की की लड़की, मरे हुए लड़के की विधवा, में भी बाटी जायगी। इनमें से कोई न होने पर सम्पत्ति का बटवारा कुछ और में जो कि द्वितीय श्रेणी में रक्खे गए हैं किया जायगा।

(४) मुस्लिम नियम—मुसलमानों के यहाँ सम्पत्ति केवल लड़कों में ही नहीं बाटी जाती वरन् लड़कियों को भी सम्पत्ति का कुछ भाग दिया जाता है।

हानि—उत्तराधिकार के इन नियमों के कारण देश की कृषि को एक बहुत बड़ी हानि हुई। इन नियमों के कारण देश की भूमि धीरे-धीरे छोटे-छोटे टुकड़ों में बँट गई और आज यह स्थिति है कि देश में दूर-दूर तथा छोटे-छोटे खेत पाए जाते हैं जिनके ऊपर लाभप्रद खेती हो ही नहीं सकती। यही कारण है कि हमारे देश में प्रति एकड़ में संसार के सब देशों से कम अन्न उत्पन्न होता है।

इसके अतिरिक्त इन नियमों के कारण हरएक व्यक्ति को सम्पत्ति का एक छोटा सा भाग मिलता है। इसलिए पूंजी का संचय नहीं हो सकता और न ही बड़े बड़े उद्योग चलाए जा सकते हैं।

लाभ—इन नियमों का एक बड़ा लाभ यह है कि इससे परिवार के सब लड़कों को जीवन के प्रारम्भ में ही कुछ न कुछ सम्पत्ति मिल जाती है और इससे देश के अन्दर एक शक्तिशाली मध्यम वर्ग का निर्माण हो जाता है। इसका एक लाभ यह भी है कि इससे सारे समाज में सम्पत्ति का बटवारा समान हो जाता है।

पर उत्तराधिकार के इन नियमों से जो लाभ हैं वह दोषों की अपेक्षा बहुत कम महत्व रखते हैं। हम यह कह सकते हैं कि इन नियमों से देश की आर्थिक उन्नति को बहुत क्षति पहुँची है।

(५) पर्दा प्रथा (Purdah System)—इस देश में पर्दे का रिवाज मुगलों के काल से आरम्भ हुआ। इस प्रथा के कारण देश को बहुत हानि हुई। इसके कारण इस देश का स्त्री समाज सदा ही घर की चाहर दीवारी के भीतर बन्द रहता है। इसके कारण स्त्रियों का स्वास्थ्य खराब रहता है। इसी के कारण स्त्री जाति को शिक्षा प्राप्त करने का कम अवसर प्राप्त होता है। इसलिए इन स्त्रियों से जो सन्तान उत्पन्न होती है वह निर्बल तथा कम बुद्धि वाली होती है। इसी के कारण

स्त्री जाति जिसकी सख्या आधे के लगभग है घर के बाहर कोई श्रम नहीं कर सकती और वह श्रम देश के लिए कोई काम नही आता ।

(६) भारतीय धर्म (Indian Religion)—कुछ लोगो का विश्वास है कि भारतवर्ष मे धर्म के कारण बहुत ही आर्थिक हानि हुई है । पर हम इस मत से बिल्कुल भी सहमत नही है । भारतीय धर्म, कर्म सिद्धान्त पर आधारित है । फिर यह धर्म मनुष्य को निकम्मा कैसे बना सकता है ? फिर यदि हम इतिहास को देखें तो हमको पता लगेगा कि भारतवासियो ने जीवन के हर क्षेत्र म बहुत ही उन्नति की थी । वे कला-कौशल, गायन-विद्या आदि मे बहुत ही निपुण थे । वे अपने ही देश के जहाजो मे बैठ कर दूर-दूर के देशो मे गए और वहा पर अपने बडे-बडे राज्य स्थापित किए । फिर हम यह कैसे कहे कि धर्म भारतवासियो की उन्नति के मार्ग मे बाधक है । हाँ भारतीय धर्म लोगो पर इस बात का जोर देता है कि अपनी इच्छाओ का क्षेत्र सीमित रक्खो, अधिक धन एकत्र मत करो । अपना ही नही वरन् सारे समाज का हित सोचो । जहा तक इन बातो का सम्बन्ध है ये सब बहुत ही उत्तम बातें हैं । इन बातो से देश की आर्थिक उन्नति मे कोई बाधा नही पड सकती, इसके विपरीत, इन आदर्शो का कडा पालन करने से वर्तमान काल की बहुत सी समस्याएं सुलझ जाएंगी । इस कारण हम कह सकते है कि भारतीय धर्म भारतवर्ष की उन्नति मे बाधक नही है, सहायक है ।

यदि हम भारतवर्ष के पिछडे हुए होने के कारण तलाश करें तो वह हम को भारतीय धर्म मे नही वरन् दूसरी बातो मे मिलेगे, जैसे हमारे देश की जलवायु इस प्रकार की है कि उसमे बुखार, मलेरिया, प्लेग आदि कई प्रकार के रोग हो जाते है । इन रोगो का जो भी आदमी शिकार होता है वह या तो मर जाता है या इतना कमजोर हो जाता है कि वह भविष्य मे कोई काम नही कर सकता । इसके अतिरिक्त हमारे देश मे समय-समय पर बडे भयकर अकाल पडते रहते हैं जिनमे मनुष्यो को भोजन भी प्राप्त नही होता । इस प्रकार की कठिनाइयो के कारण ही भारतवर्ष के लोग निराशावादी हो गए और वे भाग्य पर विश्वास करने लगे । इसके अतिरिक्त अग्रजी राज्य की स्थापना से पहले हमारे देश मे बडी लूटमार, चोरी, डाके पडते थे । कोई भी मनुष्य अपनी जान व माल को सुरक्षित नहीं समझता था । ऐसी स्थिति मे भारत के लोग किस प्रकार बडे-बडे उद्योग चला सकते थे तथा किस प्रकार पूंजी का सचय इस देश मे हो सकता था । इन बातो के अतिरिक्त हमारे पतन का एक कारण और भी है और वह है छूआछूत । इस कारण हमारे देश के लगभग $\frac{1}{3}$ लोग यह भावना रखते हैं कि वे जीवन मे कभी भी उन्नति नही करेंगे । इन सब बातों के कारण ही हमारे देश का आर्थिक विकास रुक गया । परन्तु हमारे लिए निराश होने का कोई कारण नही है क्योकि आधुनिक विज्ञान की उन्नति से पहले योरोप के देश भी कुछ ऐसी ही बातो के कारण उन्नति नही कर रहे थे । परन्तु विज्ञान की उन्नति के होते ही उन्होने बडी उन्नति की ।

भारत के आर्थिक जीवन में परिवर्तन

४

Q 12 Give an idea of the social and economic conditions in India at the beginning of the 19th century What changes were brought about by the economic method and commercial policy of the East India Company

प्रश्न १२—१९वीं शताब्दी के आरम्भ मे भारतवर्ष की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति कैसी थी ? ईस्ट इण्डिया कम्पनी के आर्थिक ढङ्गों तथा उसकी व्यापारिक नीति से उसमे क्या परिवर्तन हुये ?

१९वीं शताब्दी के आरम्भ मे हमारा देश सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछड़ी हुई अवस्था मे था। परन्तु इस देश मे ईस्ट इण्डिया कम्पनी का राज्य स्थापित होने के पश्चात् देश की सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति मे एक बहुत बड़ा परिवर्तन आया। आधुनिक भारत उसी की देन है।

सामाजिक अवस्था—१९वीं शताब्दी के आरम्भ मे भारतवर्ष की सामाजिक व्यवस्था मे तीन मुख्य बातें पाई जाती थी—

(१) आत्म निर्भर गाव (Self Sufficient Villages)

(२) जाति प्रथा (Caste System)

(३) सामूहिक परिवार प्रथा (Joint Family System)

गाँव के लोग सादा जीवन व्यतीत करते थे। उनकी आवश्यकतायें बहुत कम थी। गाँव मे किसानो के सिवाय बढ़ई, कुम्हार, धोबी, लुहार, सुनार, आदि भी रहते थे। इन सब लोगो मे आपस के बहुत कुछ अच्छे सम्बन्ध थे। वे एक दूसरे का कार्य बिना कुछ लिये दिये करते थे। हाँ, हर वर्ष या छ माह पीछे उन्हे कुछ अन्न तथा और दूसरी वस्तुयें फसलाने के रूप मे मिल जाती थी। उनमे आपस मे कोई झगडा नही होता था और यदि होता था तो उसका निपटारा गाँव मे ही कर दिया जाता था। ये लोग प्राय सामूहिक परिवार मे रहते थे जिसमे बाप-दादा से लेकर बेटे पोतो तक एक साथ रहते थे। ये सब लोग बहुत से धर्मो के मानने वाले थे उनमे कोई विशेष धार्मिक विरोध नही था। इस प्रकार गाव के लोग सुख के साथ अपना जीवन बिताते थे। इनकी आवश्यकतायें कम होती थी और जितनी थी उनके पूरा करने के लिये गाव मे साधन पाये जाते थे इस प्रकार उनका आस-पास के नहरो या गावो से कोई सम्बन्ध न था। इस प्रकार लोगो का जीवन सीधा सादा और शान्त था।

आर्थिक व्यवस्था—उन समय की आर्थिक व्यवस्था आजकल से प्राय भिन्न ही थी। जैसा ऊपर कहा गया है गाँव प्राय आत्म निर्भर थे। हरएक गाव मे श्रम, पूंजी तथा योग्यता आदि गाव के लोगो से ही प्राप्त हो जाती थी। गाव के लोग तीन भागो मे बट हुये थे—

(१) किसान, (२) गाँव के अफसर, (३) गाँव के कारीगर और श्रमिक। *किसान लोग या तो काश्तकार थे या वे स्वय भूमि के स्वामी थे। दोनो ही प्रकार के* लोग खुली खेती करते थे। किसान लोग अपनी तथा अपने परिवार की सहायता से खेती किया करते थे। कभी-कभी वे मजदूरो को मजदूरी पर भी बुला लेते थे। उनके पास अपनी स्वय की पूंजी होती थी। यदि कुछ अधिक पूंजी की आवश्यकता होती थी तो वे गाव के जमींदार या गाव के महाजन से ऋण के रूप मे ले लेते थे। *गाव मे जो चीजें उत्पन्न होती थी वे गाव मे ही बच दी जाती थी।*

गाव के अफसरो मे गाव का पटेल (*जो रैयतवारी गावों मे पाया जाता* था), गाव का पटवारी या गाव का चौकीदार होता था। पटवारी खेती सम्बन्धी कार्य करता था और चौकीदार रक्षा का कार्य करता था। गाव के अन्दर पंचायतें बनी हुई रहती थी। ये पचायतें गाव के सब झगडो का निपटारा करती थी तथा गाव की शिक्षा तथा सफाई का प्रबन्ध करती थी। इस कारण गाव के लोगों को आजकल की तरह कचहरी मे नहीं आना पडता था।

गाव के दस्तकारो मे बढई, लुहार, कुम्हार, नाई, मोची, धोबी, सुनार, तेली आदि सम्मिलित थे। बडे बडे गावो मे जुलाहे भी होते थे। वे सब लोग कोई मज़दूरी नही लेते थे वरन् उनको साल भर या छ महीने पीछे अपने यजमानो से फसलाने के रूप मे कुछ न कुछ मिल जाता था। इसी से उनका जीवन चलता था। दस्तकार लोग काम सीखने के लिये कहीं बाहर नही जाते थे, वरन् अपने घर मे अपने हर माता पिता से काम सीख लेते थे। *काम धन्धे छोटे-छोटे होने के कारण* श्रम विभाजन (Division of Labour) का कोई स्थान न था। आने जाने के मार्गों की कमी होने के कारण बाहर की प्रतियोगिता (Competition) का कोई भय नही था।

गाव के अतिरिक्त कुछ छोटे-छोटे शहर भी पाये जाते थे। शहर या तो राजाओ की राजधानी होते थे या तीर्थ स्थान होते थे। कुछ व्यापारिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हो गये थे। इस प्रकार शहर उद्योग धन्धो के कारण महत्वपूर्ण नहीं थे, पर इन शहरो मे बहुत सी चीजो के कारखाने पाए जाते थे जैसे बनारस मे ताँबे पीतल के बर्तन बनते थे। ये बर्तन गगा जी के पवित्र जल भरने के लिये बनाये जाते थे। वे शहर जो राजधानी थे उनमे कमख्वाब तथा जरी का काम खूब होता था। इनमे लकडी तथा पत्थर के ऊपर खुदाई का काम भी होता था। ये सब चीजें हाथ से बनती थी, पर होती थी बहुत सुन्दर। ढाके की मलमल उसका एक उदाहरण है। काश्मीर मे बहुत अच्छी प्रकार के शाल दुशाले बनते थे। इन दोनों

चीजो के लिये भारतवर्ष ससार मे प्रसिद्ध हो गया था। दस्तकार लोग महाजनो से सामान लेकर उनके लिये सामान बनाते थे और उन्ही को बेच देते थे इस प्रकार शहर अपनी दस्तकारी के लिये प्रसिद्ध थे। उस समय मे व्यापार कम होने के कारण व्यापारिक नगर बहुत कम थे। व्यापारिक नगर अधिकतर नदियो के तट पर बसे थे क्योकि उस समय का व्यापार नावो द्वारा होता था।

गाँवो व शहरो के जीवन मे काफी भिन्नता थी। शहरो मे गाँवो की अपेक्षा अधिक जनसख्या थी। शहर के लोग बाहर से आए हुये अनाज तथा दूसरी चीजो पर निर्भर रहते थे। वहाँ पर लोग बहुत प्रकार के कारोबार करते थे। दस्तकारियों की व्यवस्था भी गाँवो म कुछ अच्छी थी। बाजार गाँवो की अपेक्षा बडे होते थे। गाँवो की अपेक्षा यहाँ द्रव्य का अधिक उपयोग किया जाता था। हुडी आदि मे भी काम लिया जाता था।

उस समय मे आवागमन के साधनो का तो मानो लोप ही था। न तो आजकल के समान रेलगाडी, मोटर, हवाई जहाज आदि ही थे और न सडकें ही थी। सडके कच्ची थी जो वर्षा ऋतु म प्राय बन्द हो जाती थी। आने जाने के साधन केवल बैलगाडी, गधे, ऊँट ही थे। ये सब साधन बहुत धीमे तथा उनसे यात्रा करने म जान व माल का भय सदा बना रहता था। आवागमन के साधनों की कमी के कारण देश के एक भाग का देश दूसरे भाग से कोई सम्बन्ध न था। हा कुछ बनजारे तथा अनाज के व्यापारी इधर उधर व्यापार करते थे। इन्ही के द्वारा एक स्थान की आवश्यकता से अधिक वस्तुए दूसरे स्थान पर जाती थी ऐसी अवस्था मे यदि व्यापार उन्नत न हो तथा एक स्थान तथा दूसरे स्थान के भावो मे पृथ्वी आकाश का अन्तर हो तो कोई आश्चर्य नही। १८३३ ई० के भयकर अकाल म गेहू का भाव आगरे मे १३½ सेर था। पर उसी समय खान देश म गेहू ३१ सेर बिक रहा था। अकाल के समय एक और हानि भी होती थी। अकाल के समय एक स्थान को दूसरे स्थान से कोई सहायता नही मिल सकती थी।

उस समय द्रव्य का सचालन बहुत कम था। शहरो मे द्रव्य से कुछ काम लिया जाता था पर गाँव के प्राय सभी सौदे वस्तु परिवर्तन से तय होते थे। मजदूरो की मजदूरी भी वस्तुओ के रूप मे ही दी जाती थी। आजकल के समान वेतन व लगान प्रतियोगिता द्वारा निश्चित नही होते थे वरन् वे रीति-रिवाज तथा मनुष्य के जीवन स्तर द्वारा निश्चित होते थे।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा की हुई बदल—जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी भारतवर्ष मे आई तब देश की यह स्थिति थी। बहुत समय तक तो ईस्ट इण्डिया कम्पनी देशी अथवा विदेशी शक्तियो से लडती रही पर जब अन्त मे उसने उन सबके ऊपर विजय प्राप्त कर ली तब उसने अपने शासन को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिये बहुत से नये-नये परिवर्तन जो इङ्गलैंड तथा दूसरे देशों मे हो रहे थे इस देश मे भी किये।

(१) आवागमन के साधनों की उन्नति—सबसे पहली चीज जो बताने योग्य है वह है आवागमन के साधनो की उन्नति करना। इस देश मे १८५० ई० के पश्चात् रलें आरम्भ हुई। रेलो के बनाने से इस देश के एक स्थान का सम्बन्ध दूसरे स्थान से होने लगा। इससे व्यापार की उन्नति हुई। देश के जो खेत पहले केवल गाँव के लिये ही अन्न उत्पन्न करते लगे थे वे अब दूर-दूर के शहरो तथा देशो के लिये भी उत्पन्न करने लगे। इसके विपरीत दूर-दूर के देशो का पक्का माल यहाँ पर आने लगा। इस पक्के माल के आने से हमारे देश के उद्योग-धन्धे धीरे-धीरे नष्ट होने लगे और वह लोग जो पहले धन्धो मे लगे हुये थे वे भी खेती करने की ओर झुकने लगे। इस प्रकार थोडे ही समय मे हमारा देश कच्चे माल का निर्यातकर्ता तथा पक्के माल का आयातकर्त्ता हो गया। पर रेलो के बनने से इस देश को यह लाभ भी हुआ कि एक स्थान की सभ्यता दूसरे स्थान पर फैलने लगी। अकाल के समय अकाल पीडित क्षेत्रो की सहायता करना बहुत ही सरल हो गया।

(२) औद्योगीकरण—ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इस देश मे बडी-बडी कम्पनियाँ खोली जिनसे कि इस देश मे लोहे, कपडे, जूट, दियासलाई आदि के उद्योग धन्धो की उन्नति हुई। यदि अङ्गरेज लोग यहाँ अपनी पूँजी लगाकर कारखाने न खोलते तो शायद हमारे देश मे बडे-बडे उद्योग-धन्धे उन्नत होने मे बहुत समय लग जाता।

(३) सिंचाई का प्रबन्ध—खेती की उन्नति के लिये देश मे करोडो रुपये लगाकर बडी-बडी नहरे बनाई गई। यद्यपि ऐसा करने मे अङ्गरेजो का अपना स्वार्थ था क्योकि वे अपनी मिलो के लिये कच्चा माल चाहते थे तो भी हम कह सकते है कि इन नहरो से इस देश का भी बहुत लाभ हुआ। नहरें बनने से अकाल का डर कम हो गया। देश मे पहले से अधिक अन्न तथा दूसरा सामान उत्पन्न होने लगा।

(४) साख संस्थाओं की उन्नति—देश मे बैंक तथा बीमा कम्पनियाँ भी खुली। इसके अतिरिक्त ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने १८३३ ई० मे सारे देश के लिये एक सी मुद्रा प्रणाली स्थापित की। इससे देश के व्यापार तथा कृषि की बहुत उन्नति हुई।

इस प्रकार हम देखते है कि यद्यपि ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने अपने स्वार्थ के हेतु तथा व्यापार व उद्योग-धन्धो की उन्नति करने के लिये इस देश मे कुछ सुधार किये पर हमको यह बात माननी पडेगी कि इन सुधारो से देश को बहुत लाभ हुआ। यदि ये सुधार न किये जाते तो देश आर्थिक दृष्टि से कभी उन्नति न करता। परन्तु यह बात अवश्य कहनी पडेगी कि यदि अङ्गरेज इस देश से प्रेम करके इन सब सुधारो को ठीक ढङ्ग से करते तो देश और भी अधिक उन्नति कर जाता।

Q 13 How did the entry of India in the world markets affect agricultural conditions of the country after 1857. In what manner have these effects been harmful ?

प्रश्न १३—१८५७ ई० के पश्चात भारतवर्ष के संसार के बाजारों मे आने का उसकी कृषि पर क्या प्रभाव पड़ा ? ये प्रभाव किस प्रकार हानिकारक सिद्ध हुए ?

उत्तर—१८५७ ई० से पहले भारतवर्ष मे ऐसे गाँव थे जो आत्म-निर्भर थे और जिनका दूसरे स्थानो से कोई सम्बन्ध नही था। भारतीय औद्योगिक कमीशन ने उस समय के गावो की स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया है, "पुराने समय मे प्रत्येक गाव अपने लिए अन्न ही उत्पन्न नही करता था वरन् वह अपने साधनो द्वारा अथवा समीप के स्थानो से अपनी थोडी सी सीधी सादी आवश्यकताओ को पूरा कर लेता था। गाँव के कपडे तथा उसके लिए कच्चा माल, उसकी शक्कर, उसके रग, उसके खाने तथा जलाने का तेल, उसके घरेलू बर्तन और उसके खेती करने के औजार सभी या तो स्वय कृषक बनाता था या गाव के दस्तकार जो गाँव मे समाज के घटक होते थे और जिनको पैदावार का एक भाग मिलता था उन औजारो को बनाते थे। उस समय किसान लोग या तो काश्तकार होते थे या वे स्वय भूमि के स्वामी होते थे। दोनो ही प्रकार के कृषक खुली खेती करते थे। किसान लोग अपनी तथा अपने परिवार की सहायता से खेती करते थे। कभी-कभी वे आवश्यकता पडने पर कुछ श्रमिको को भी नौकर रख लेते थे। उनके पास अपनी स्वय की पूजी होती थी। यदि कुछ अधिक पूजी की आवश्यकता होती थी तो वे गाव के महाजन अथवा जमीदार से ऋण ले लेते थे। अन्न केवल गाव की आवश्यकता के लिए ही उत्पन्न किया जाता था वह बाहर नही भेजा जाता था। इस प्रकार उस समय खेती सीधे साद ढग से की जाती थी।"

पर १८५७ ई० के पश्चात् इस देश मे रेले बननी आरम्भ हो गई। इसके अतिरिक्त १८६९ मे स्वेज नहर के मार्ग का पता लग गया। इन दोनो कारणों से भारतवर्ष मे यूरोप के देशो का सस्ता माल आने लगा, रेलो के द्वारा उस सामान के भीतरी भागों मे बँटने मे बहुत आसानी हो गई। इन सबका फल यह हुआ कि धीरे-धीरे यहाँ की हाथ से बनाई जाने वाली चीजो की उत्पत्ति प्राय बन्द हो गई और जो लोग इन चीजो को बनाते थे वे भी खेती की ओर ही झुकने लगे। इसलिए भूमि पर गड्ढे, नालो, फलस्वरूप, ढिले-ढिले, कडके लगे। एक तो इस कारण से तथा दूसरे उत्तराधिकार के नियमो के कारण से इस देश की भूमि के छोटे-छोट टुकडे हो गए और खेती करना एक घाटे का पेशा हो गया। इसका एक दूसरा भी परिणाम हुआ। भारतवर्ष मे बाहर से सस्ता मशीन का बना हुआ माल आने के कारण यहा पर उद्योग-धन्धो की उन्नति न हो सकी और देश कच्चे माल का बाहर भेजने वाला तथा पक्के माल का मँगाने वाला बन गया। इस प्रकार हमारा देश कृषि प्रधान देश बन गया।

ससार के बाजारो मे घुसने के कारण गाव के वे लोग जो केवल गाव के लिए ही फसले उगाते थे सारे ससार के लिए उगाने लगे। इसके अच्छे और बुरे दोनो प्रकार के परिणाम निकले। इसका अच्छा परिणाम तो यह था कि इसके कारण हमारे देश के किसान अधिक धन कमाने की चिन्ता मे अधिक अन्न व दूसरी चीजें गाव की आवश्यकता से भी अधिक उगाने लगे। दूसरे वे अन्न उगाने की अपेक्षा कपास, जूट, गन्ना आदि फसलें उगाने लगे जिससे कि वे अधिक धन कमा सके।

अन्तर्राष्ट्रीय बाजारो मे घुसने का साधारणतया अच्छा ही प्रभाव होना चाहिए था। पर भारतवर्ष मे ऐसा नही हुआ। यहाँ यूरोप के देशो से विपरीत परिस्थिति थी। जब यूरोप के देशो ने व्यापार मे उन्नति की तो उन्होने छोटे-छोटे खेतो को बडे-बडे खेतो मे बदल दिया और उन खेतो पर आधुनिक ढङ्ग की मशीनो से खेती की जिसके कारण उन देशो को किसी प्रकार की हानि न हुई। उल्टे इनको बडे पैमाने की खेती (Large scale farming) करने का अवसर मिल गया। पर हमारे देश मे ऐसा नहीं हुआ। हमारा देश जब ससार के बाजारो मे घुसा तो यहा से छोटे-छोटे उद्योग धधे प्राय नष्ट हो गए और जो लोग इनमे लगे हुए थे वे खेती पर निर्भर रहने लगे। इसी प्रकार यहाँ पर बडे-बडे खेतो की अपेक्षा छोटे-छोटे खेत हो गए। इन खेतो पर यूरोप के देशो के समान आधुनिक यन्त्रो का प्रयोग नही किया गया वरन् पुराने यन्त्रो से ही खेती होती रही। यही कारण है कि ससार के दूसरे देशो के समान हमारे देश मे उत्पत्ति व्यय (Cost of production) घटने की अपेक्षा उल्टा बढ गया। किसानो को इससे बहुत हानि हुई। पर दूसरा कोई धन्धा न होने के कारण वे खेती ही करते रहे और हानि उठाते रहे। पर कब तक हानि उठाते। धीरे-धीरे उनको ऋण लेना पडा। इससे उनकी भूमि भी उनके हाथ से जाने लगी। यह भूमि उन लोगो के हाथ मे चली गई जो स्वय खेती नही करते थे। इस कारण उन लोगो को खेती की उन्नति करने की कोई परवाह न थी, वे केवल लगान वसूल करने की ही चिन्ता रखते थे। इस प्रकार हमारे देश मे बहुत सारे मध्य-जन (Middle men) हो गए जो कि तटस्थ जमीदार (Absentee landlord) थे। इन जमीदारो ने कभी भी खेती की उन्नति नहीं की पर वे तरह तरह से किसानो का शोषण करते रहे। वे उनसे खूब लगान लेते थे। समय-समय पर नजराना व भेंट भी लेते थे और आवश्यकता पडने पर उनसे बेगार भी लेते थे। इस प्रकार हमारे देश के किसान सदा ही निर्धन रहे और उनको सामाजिक तथा आर्थिक दृष्टि से कभी भी ऊपर उठने का अवसर प्राप्त न हुआ। इस प्रकार [illegible] कह सकते है कि भारतवर्ष के ससार के बाजार मे घुसने का परिणाम अच्छे की अपेक्षा बुरा हुआ।

उत्पादन क्रमश ५६० पौंड तथा ३१२ पौंड है। इसी प्रकार हमारी गन्ने की उपज क्यूबा का एक तिहाई, जावा का छठा तथा हवाई द्वीपों का सातवाँ भाग है। इसी कारण कांग्रेस के ६२ वें अधिवेशन की Steering समिति ने कहा है कि भारत मे गल्ले का उत्पादन ससार मे प्राय सबसे कम है।

खेती की पिछड़ी दशा के कारण—खेती की पिछडी हुई दशा के निम्नलिखित कारण है—

(१) **वर्षा की कमी**—कृषि वर्षा के ऊपर निर्भर है। यदि वर्षा हो जाए तो खूब अन्न व दूसरी फसलें उत्पन्न हो जाती हैं पर यदि वर्षा न हो तो सब जगह हाहाकार मच जाता है। भारतवर्ष के कुछ ऐसे प्रदेश हैं जहाँ पर वर्षा की कमी कभी प्रतीत नही होती जैसे बङ्गाल व बिहार, पर कुछ ऐसे भी प्रदेश हैं जहाँ पर वर्षा का होना निश्चित नही है, जैसे उत्तर प्रदेश, पजाब, राजस्थान आदि। यही कारण है कि इन भागो मे समय-समय पर अकाल पडा करते है।

(२) **खेती करने का पुराना ढङ्ग**—इस मशीन एवं वैज्ञानिक युग में भारतवर्ष मे आज भी लकडी के हल तथा बैलो से खेती की जाती है। यह हल केवल भूमि खुरच ही सकता है उसको खोद नही सकता। इस कारण पौधो की जडे भूमि से पूरी तरह खुराक नही खीच सकती और पौधे बहुत ही दुर्बल रह जाते है।

(३) **खाद की कमी**—इस देश मे खेतो मे ठीक प्रकार से खाद भी नही डाली जाती। यहा पर अधिकतर गोबर की खाद काम मे आती है। यद्यपि इस देश के लिये यह बहुत ही उपयुक्त है तो भी यह ठीक प्रकार से न बनाए जाने के कारण खेती को अधिक लाभ नही पहुँचा सकती। बहुत सी खाद उपलो के रूप मे जला दी जाती है गोबर के जलाने का अनुमान २५० मिलियन टन से लेकर ५५० मिलियन टन तक किया गया है। इसके अतिरिक्त हड्डी तथा मछली आदि की खाद यहा पर काम मे नही लाई जाती।

(४) **उत्तम बीज का न होना**—इस देश के किसान बीज की ओर भी कोई विशेष ध्यान नही देते। वे अच्छा बुरा सभी प्रकार का बीज बो देते हैं। यह बीज किसान लोग अधिकतर गाव के बनिये से मोल लेते है। बीज अच्छा न होने के कारण फसल भी अच्छी नही होती।

(५) **दुर्बल पशु**—इस देश की कृषि का मुख्य सहारा बैल है। पर बैल चारे की कमी के कारण बहुत ही दुबल होता है। यह बहुत सी बीमारियो का शिकार रहता है। इस कारण वह नए-नए यन्त्रो को जो कि भारी होते हैं चलाने मे असमर्थ है।

(६) **तटस्थ जमींदारी**—इस देश की ७० प्रतिशत जोती हुई भूमि पर जमीदारी प्रथा पाई जाती है। बाकी भाग जहा पर रैयतवारी या और दूसरी प्रथाये पाई जाती है वहा पर किसान की वही स्थिति है जैसी जमीदारी प्रदेशो मे है। इस देश के जमीदार लगान वसूल करने की धुन मे रहते है, वे खेती की ओर बिल्कुल

ध्यान नही देते। वे किसानो से खूब लगान वसूल करते है, उनसे नजराना व बेगार का काम लेते हैं तथा उनको कई प्रकार से कष्ट पहुचाते है। सुधारो से पहले तो वे जब उनको चाहते थे भूमि से निकाल बाहर कर देते थे। इन सबके कारण किसान को भूमि मे कोई विशेष रुचि नही रहती। वह भूमि से बिना कुछ लगाये उससे अधिक से अधिक प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। इसी कारण धीरे-धीरे भूमि की उपजाऊ शक्ति प्राय नष्ट होती चली गई।

(७) बिक्री के दोष—इस देश के किसान अपनी फसल को बेचकर उतना दाम प्राप्त नही कर सकते जितना कि उनको करना चाहिए। गेहू की बिक्री की रिपोर्ट मे बताया गया है कि किसान को उस धन का जो कि उपभोक्ता देता है केवल ६० प्रतिशत मिलता है। इसी प्रकार चावल, कपास आदि को बेचकर भी उसको बहुत ही कम धन मिलता है। ऐसा इसलिये है कि यहाँ पर आने-जाने के मार्ग खराब हैं, नियन्त्रित बाजार नही है बाट भी ठीक नही हैं। मण्डी का आढती किसान की ढरी मे से बहुत सामान कई प्रकार के बहानों से निकाल लेता है। यहाँ पर फसल के रखने के लिय गोदाम भी नही है। इसलिय बहुत सी फसल को चूहे तथा दूसरे प्रकार के जीव जन्तु खा जाते हैं। इन सब बातो के होते हुए कोई अचम्भा नही है कि किसान को अपनी फसल को बेचकर बहुत कम धन प्राप्त होता है। यह तो रही मण्डी मे बेचने की बात परन्तु यदि किसान गाँव के बनिये को अपनी फसल बेचता है, और वह अधिकतर ऐसा ही करता है, तो उसको बहुत ही कम धन प्राप्त होता है। बिक्री के दोषो के कारण किसान की आर्थिक स्थिति सुधरने नही पाती।

(८) गाँव का महाजन—गाव का महाजन भी खेती की उन्नति मे बहुत बाधक है। वह किसान को ऊची दर पर ऋण देता है और उसके बदले किसान से सस्ते मूल्य पर फसल खरीद लेता है। फसल का एक बडा भाग तो ब्याज तथा मूलधन के चुकाने मे ही चला जाता है, जो शेष बचता है वह किसान की वर्ष भर की आवश्यकता को पूरा करने के लिये पर्याप्त नही होता। इस कारण उसको महाजन से दूसरे वर्ष भी ऋण लेना पडता है। दूसरे वर्ष फिर वही होता है। इस प्रकार किसान के सिर से कभी भी ऋण का भार नही उतरता। ऋण की अवधि समाप्त होने पर किसान की भूमि महाजन के हाथ मे चली जाती है। इस प्रकार हमारे देश की भूमि महाजन के हाथ मे चली जाती गई। ऋणग्रस्त होने के कारण किसान के पास खेती की उन्नति करने के लिये धन नहीं रहता।

(९) लगान नीति—श्री० आर० सी० दत्त जैसे लोगो का कहना है कि हमारे देश मे लगान निरन्तर बढता जा रहा है तथा वह बडी कडाई के वसूल किया जाता है जिसके कारण किसान को गाँव के महाजन से ऋण लेना पडता है तथा उसको अपनी फसल उस समय बेचनी पडती है जबकि वस्तुओ का मूल्य बहुत नीचा

होता है। इसके कारण किसान ऋणग्रस्त रहता है और वह खेती मे उन्नति नहीं कर सकता।

(१०) **कीड़ों द्वारा हानि**—ऐसा अनुमान किया जाता कि कीडो के कारण हमारे देश की १० से २० प्रतिशत तक फसल खराब हो जाती है। परन्तु अभी तक ३५० मिलियन एकड मे से ½ मिलियन एकड को ही कीडो से बचाने का प्रयत्न किया गया है।

इन दोषों को सुधारने का ढंग

(१) **सिचाई का प्रबन्ध करना**—वर्षा की कमी को सिचाई से पूरा किया जा सकता है। परन्तु अभी तक भारतवर्ष मे कुल जोते गये क्षेत्र के केवल १८ प्रतिशत पर सिंचाई का प्रबन्ध है। इस देश में सरकार ने बहुत सी नहरें, कुए तथा तालाब बनाकर सिचाई का प्रबन्ध किया है पर अब भी देश के बहुत से भाग ऐसे है जहा सिचाई की बडी कमी है। ऐसे स्थानो पर सिचाई का प्रबन्ध भी करना चाहिये। सरकार बहु-उद्देश्य योजनायें बनाकर इस कमी को पूरा करने का प्रयत्न कर रही है। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश की सरकार ट्यूबवैल भी लगवा रही है। इस प्रकार प्रथम योजना काल म १६ ३ मिलियन एकड पर सिंचाई का प्रबन्ध किया गया। इसमे से १० मिलियन एकड पर छोटी सिंचाई की योजनाओ म सिचाई हुई और शेष बडी योजनाओ से। प्रथम योजना काल मे ५००० ट्यूबवैल भी लगाये गये। आशा है कि इन सब योजनाओ के पूरा होने पर देश मे खेती के लिये पानी की इतनी कमी नही रहेगी।

(२) **नये यन्त्रो से खेती करना**—कृषि की उन्नति तभी हो सकती है जबकि नये-नये यन्त्रो से खेती की जाय। जहाँ पर इन यन्त्रो का प्रयोग किया गया है वहाँ बहुत अच्छा परिणाम निकला है। परन्तु एक बात अवश्य ध्यान रखनी चाहिये कि नये ढङ्ग के यन्त्रो को हम तभी काम मे ला सकते है जबकि हम बैलो की स्थिति को सुधारे। बिना ऐसा किये दुर्बल बैल इन यन्त्रो को न खीच सकेंगे और इन यन्त्रो पर खर्चा किया हुआ धन बेकार हो जायेगा। १९२८ के कृषि कमीशन के मतानुसार आजकल हमको नये यन्त्रो का प्रयोग करने की अपेक्षा पुराने यन्त्रो को सुधारना चाहिये। हमारे देश मे आजकल ट्रैक्टरो का प्रचार बढता जा रहा है और देश मे लगभग २०,००० ट्रैक्टर काम मे लाये जा रहे हैं।

भारत मे कृषि के आधुनिकरण का समर्थन करते हुए श्री पारितोषरे ने स्टेट्समैन के खाद्य तथा कृषि सप्लिमेंट मे कहा है कि इङ्गलैंड अमेरिका आदि देशो के तजर्बे के आधार पर कहा जा सकता है कि कृषि का मन्त्रीकरण करने से न केवल लागत खर्च घटता है वरन् उपज मे भी काफी वृद्धि होती है। उन्होने बताया है कि भारत मे आधुनिक मशीनो के आर्थिक मूल्य को अधिकाधिक महसूस किया जा रहा है। उन्होने कहा कि बहुत से आदमी यह कहते है कि मशीनो से खेती करने से पशुओ को खेती से हटाना पडेगा परन्तु ऐसा सोचना उचित नही

है क्योकि आजकल पशु इतना गल्ला खा जाते है जो १० करोड लोगो को पर्याप्त होगा। कुछ लोगो का कहना है कि भारत मे पहले ही सस्ता श्रम पर्याप्त मात्रा मे है जिसके कारण मशीनो मे खेती करना लाभप्रद न होगा। इसके अतिरिक्त मशीनो के मगाने से बेरोजगारी और भी बढ जायगी। परन्तु उन्होने बताया है कि इस बात का भी कोई भय नही है क्योकि श्रम को पशु पालन, दुग्ध उद्योग, खाद के बनाने व वितरण करने, कतारो के बीच की खेती, डौल के बनाने स्थानीय सिंचाई की उन्नति, खेतो की सडको के बनाने तथा उनको ठीक रखने आदि कार्यो मे लगाया जा सकता है। आगे उन्होने कहा है कि बहुत से आदमी कभी-कभी यह कहते हैं कि मशीनो का लगाना छोटे-छोटे खेतो पर लाभप्रद नही है। परन्तु उन्होने कहा है कि उत्तरी आयरलेड के तजर्बे के आधार पर यह कहा जा सकता है कि छोटे खेतो पर भी मशीनें लगाई जा सकती हैं। उन्होंने यह भी बताया है कि पिछले दस वर्षों मे अल्सटर ट्रैक्टर १ ७५% बढ गये है और उनमे से ८०%५० एकड तथा उनसे नीचे के खेतो पर लगाये गये हैं। इनके लगाने से उत्पत्ति, न केवल मूल्य मे बढी है वरन् मात्रा मे भी बढी है। अन्त मे उन्होंने कहा है कि हर प्रकार की बाधा होने हुये भी भारत के किसान यह महसूस करते जा रहे है कि उपज को बढाने के लिये खेतो पर मशीनो का लगाना बहुत आवश्यक है। भारत मे कृषि आत्म-निर्भरता तभी प्राप्त हो सकती है जबकि खेतो पर मशीन लगाई जाये।

(३) **खाद का प्रबन्ध करना**—यह आवश्यक है कि खाद को न जलाया जाय। परन्तु यह काम तभी हो सकता है जबकि वन विभाग गावो को सस्ती लकडी दे। यह भी आवश्यक है कि खाद उत्तम रीति से तैयार की जाय। खाद को गोबर मूत्र तथा कूडा करकट मिलाकर बनाना चाहिये। ऐसी खाद से चीन तथा जापान आदि देशो को बहुत लाभ पहुचा है। इसके सिवाय किसानो को हड्डी, खली तथा हरी खाद भी काम मे लानी चाहिये। खाद के बिना अधिक अन्न की उपज नही हो सकती। भारत मे खाद का महत्व अब खूब अनुभव किया जा रहा है। इस कारण यहा सब प्रकार की खाद बढाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इसमे रासायनिक खाद, कम्पोस्ट गोबर की खाद आदि पर विशेष जोर दिया जा रहा है।

(४) **अच्छे बीजों का प्रबन्ध करना**—अच्छा बीज अच्छी फसल के लिये बहुत आवश्यक है। इससे करीब १०–१५ प्रतिशत अधिक अन्न उपजता है। अच्छे बीज का प्रबन्ध या तो कृषि विभागों को करना चाहिये या सरकारी समितियों द्वारा इसका प्रबन्ध कराना चाहिये। प्रबन्ध इस प्रकार का होना चाहिये कि प्राय सभी किसानो को उत्तम बीज मिल जायें।

भारत मे हाल ही तक बीजों के बढाने व वितरण का कोई उचित प्रबन्ध न था। इस कारण द्वितीय योजना काल के लिये प्रत्येक सामूहिक योजना ब्लाक के लिये एक बीज-गृह की स्थापना की सिफारिश की गई है।

इस सिफारिश को कार्यान्वित करने के लिये एक माडल स्कीम तैयार की गई है। इसके अन्तर्गत ४३२८ बीज-खेत स्थापित किये जायेगे। प्रत्येक बीज-खेती २७ एकड की आवश्यकता पूरी करेगा। ऐसा अनुमान है कि दूसरी योजना के चौथ वर्ष मे २१५ मिलियन एकड भूमि को शुद्ध बीज मिल सकेगा। इसके अतिरिक्त विकास ब्लाको मे पाच बीज गोदाम स्थापित किये जायेंगे जिनकी शक्ति २५०० मन होगी। बीज-खेतो तथा गोदामो पर खर्च का अनुमान १३०६ ८० लाख रुपये है जिसमे से ११५० ५० लाख रु० केन्द्र खर्च करेगा तथा १५६ ३० लाख राज्य। राज्यो को दिये गये धन का ५२ प्रतिशत सहायक अनुदान के रूप मे होगा तथा शष ४८ प्रतिशत ऋण के रूप मे। ऋण की आदायगी १५ वष तक की जा सकेगी। १९५६-५७ तथा १९५७-५८ के लिये राज्य को सहायता निम्नलिखित ढङ्ग स दी गई—

(लाख रुपयो मे)

वर्ष	ऋण	सहायक अनुदान	कुल
१९५६-५७	६३ ७०	८२ ९२	१४६ ६२
१९५७-५८	२३४ ८४	१९५ ६३	४३० ४७

१९५६-५७ के १४६ ६२ लाख रुपयो मे से १७५ ६० लाख रुपयो की मजूरी दी जा चुकी है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश मे उन्नत बीजो की ओर खूब ध्यान दिया जा रहा है।

(५) पशुओं की उन्नति करना—देश के पशु तभी उन्नत हो सकते हैं जबकि उनको पर्याप्त मात्रा मे चारा मिले तथा अच्छे बैल उत्पन्न करने के लिये अच्छे साडो का प्रबन्ध हो। बैलों की बीमारी की चिकित्सा करने के लिये पशुओं के हस्पताल खोले जायें। बिना पशुओं के उन्नत किये हम उत्तम और नय ढङ्ग के यन्त्रों का प्रयोग भी नही कर सकते।

(६) जमींदारी प्रथा को समाप्त करना—बिना जमींदारी प्रथा को समाप्त किय देश के किसान कुछ भी उन्नति नहीं कर सकते। यह हर्ष का विषय है कि हमारे देश मे प्राय सभी राज्यो मे यह प्रथा तोडी जा रही है। ऐसा होने पर आशा हैं कि देश के किसान भूमि के स्वामी होने के पश्चात् किसान भूमि मे खूब परिश्रम करके अधिक से अधिक अन्न उपजाने का प्रयत्न करेगा और भूमि की उपज कम न होने देने का प्रयत्न करेगा।

(७) बहु-उद्देश्य सहकारी समितियों को स्थापित करना—यदि देश मे बहु-उद्देश्य समितियां स्थापित हो जायें तो उन किसानो को बहुत से लाभ होंगे। किसान महाजन के फंदे मे से निकल सकेगा और समितियो द्वारा उपज को बेचने के कारण किसान को उतना ही धन मिलेगा जितना कि उसको मिलना चाहिये

इसके अतिरिक्त इन समितियों से किसान को खाद, बीज, पशु, यन्त्र आदि मिलने का भी प्रबन्ध किया जा सकता है। देश के बड़े बड़े लोगों का मत है कि इन सहकारी समितियों से बहुमुखी उन्नति हो सकती है।

(८) **खेती सम्बन्धी अनुसंधान**—इस समय सबसे महत्वपूर्ण समस्याओं में से खेती का अनुसंधान भी एक है। इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि देश के भौतिक, रासायनिक, जल तथा पशु साधनों पर खोज की जाय तथा यह देखा जाय कि उनको लघु तथा दीर्घकाल में कैसे काम में लाया जाय ऐसा करने से वैज्ञानिकों का सीधा सम्बन्ध खेती तथा उद्योगों से स्थापित हो जायगा जिससे बहुत लाभ होगा।

इनके अतिरिक्त भी बहुत से और ढङ्ग बताए गए हैं जिनसे खेती की उपज बढ़ सकती है जैसे सामूहिक विकास योजना पर हुई राष्ट्रीय कान्फ्रेंस ने अपने समग्र सेशन में बताया कि सींचे जाने वाले क्षेत्रों में चकबन्दी करने तथा प्रत्येक गाँव में एक पंचायत अथवा एक बहु-उद्देश्य समिति जो कि यह देखे कि प्रत्येक परिवार की उपज बढ़ाने की एक पूर्ण योजना है, स्थापित की जाय। परन्तु प० नेहरू के विचार से सामूहिक विकास योजना को ठीक प्रकार नियन्त्रण में लाने तथा सींचे जाने वाले क्षेत्रों में गहन ढङ्ग (Intensive) खेती करने से उत्पादन बहुत बढ़ सकता है। कांग्रेस के ६३ वें अधिवेशन की स्टीयरिंग समिति का विचार है कि मिट्टी को सुरक्षित रखने व गहन खेती करने से उपज को तीन-चार गुना बढ़ाया जा सकता है। इस हेतु उसने १२ बिन्दुओं का एक प्रोग्राम दिया है। इसमें निम्नलिखित चीजें सम्मिलित हैं—

(१) बन्धे तथा नालियाँ बनाकर प्राप्त पानी के साधनों का पूर्ण उपयोग करना, (२) ट्यूबवेल के पानी की दर प्रारम्भ में इतनी नीची रखी जाए जो कि किसान की शक्ति के अन्दर हो। पीछे इन दर को साधारण दर तक बढ़ाया जा सकता है, (३) पुराने तालाब व कुओं की मरम्मत करना, (४) लघु सिंचाई योजनाओं को तैयार करना, (५) मिट्टी को कटने से रोकना, बाँध बनाना तथा पेड़ लगाना, (६) प्रत्येक सामूहिक विकास क्षेत्र में अच्छा बीज उत्पन्न करने के लिये एक क्षेत्र सुरक्षित रखना; (७) हरी खाद के उत्पादन तथा प्रयोग को प्रोत्साहन देना, रासायनिक खाद के अतिरिक्त कम्पोस्ट का प्रयोग करना, (८) प्रत्येक किसान तक पहुँच करके उसके उत्पादन का एक बिन्दु निश्चित करना, (९) स्थानापन्न गल्ले को उन्नत करने के लिये नियन्त्रित प्रयत्न करना तथा सन्तुलित भोजन को प्रोत्साहन देना; (१०) कम अवधि वाली फसलों का उत्पादन ढंग से तथा एकदम हाथ में लेना, (११) ऊसर तथा खार लगी हुई भूमि को खेती के काम में लाना; (१२) गड्ढों में पानी एकत्र होने के विरुद्ध कुछ कदम उठाना।

भारत सरकार के प्रकाशन विभाग से प्रकाशित हुई एक पुस्तक 'सिंचाई, उन्नत बीज तथा भूमि प्राप्त करना' में बताया गया है कि उत्पादन को सिंचाई

उन्नत बीजो तथा बेकार भूमि को खेती को योग्य बनाने से उपज को खूब बढ़ाया जा सकता है।

यह अति आवश्यक है कि इन सब सुधारो को शीघ्रतापूर्वक किया जाये नही तो हमारे देश की आर्थिक उन्नति होने की बहुत कम सम्भावना है क्योंकि खेती के ऊपर ही हमारे देश के और दूसरे उद्योग-धन्धे आधारित है।

Q 15 'Farming to a cultivator is a mode of life rather than a business' Comment upon this statement.

प्रश्न १५—'किसान के लिये खेती करना व्यापार की अपेक्षा जीवन का एक ढंग है।' इस कथन की आलोचना कीजिये।

उत्तर—मनुष्य व्यापार सदा लाभ के लिये करता है। जब तक उसको लाभ होता है वह व्यापार करता है परन्तु घाटा होने पर वह उसको छोड़ देता है, यदि उसको इस बात की पूर्ण आशा होती है कि वह भविष्य मे व्यापार से लाभ न कमा सकेगा। यह बात सभी व्यवसायो के लिये सत्य है, चाहे वह खेती हो अथवा व्यापार या कोई उद्योग धन्धा।

ससार के अन्य देशो मे कृषकों के लिये कृषि एक व्यवसाय है अर्थात् ये खेती इसलिये करते है कि उनको खेती करने से लाभ प्राप्त होता है अथवा लाभ प्राप्त करने की आशा होती है परन्तु दुर्भाग्यवश हमारे देश मे यह दशा नही है। यहाँ किसान खेती इसलिये नही करता कि वह उसके लिये लाभप्रद है वरन् वह खेती इसलिये करता है कि उसके पास खेती के अतिरिक्त और कोई कार्य करने को नही है। ऐसी परिस्थिति मे किसान खेती करता रहता है फिर चाहे उसको लाभ हो अथवा हानि।

यदि हम भारतीय कृषि की ओर दृष्टि उठाकर देखे तो हमको पता चलेगा कि वह एक घाटे का सौदा है। किसान के खेत छोटे-छोटे तथा बिखरे हुये हैं। उसके बैल दुर्बल तथा खेती के लिये अयोग्य है, उसके हल तथा कृषि सम्बन्धी दूसरे औजार पुराने है। उसको न ठीक प्रकार का बीज ही मिलता है और न ठीक प्रकार की खाद ही। खेती मानसून पर निर्भर होती है। यदि मानसून आता है तो खेती अच्छी हो जाती है और यदि वह फेल हो जाता है तो खेती एक दम चौपट हो जाती है। मानसून के अतिरिक्त कई प्रकार के कीड़े-मकौडे जैसे टिड्डी, चूहे आदि भी फसल को खराब करते रहते हैं। कभी-कभी ओले तथा अधिक वर्षा के कारण भी फसल खराब हो जाती है। यही नही आवश्यकता पड़ने पर किसान को उचित ब्याज की दर पर ऋण भी नही मिलता। किसान ऋण गाँव के महाजन से प्राप्त करता है जो उससे बडी ऊँची ब्याज की दर लेता है। इसके अतिरिक्त महाजन

उस ऋण के दबाव मे किसान की फसल सस्ते भा(उत्पा)दन बढाने का प्रयत्न किया
ब्याज और मूलधन मिलकर इतना अधिक हो जाता है न्तर बढती जा रही है।
कर सकता और उसको अपनी भूमि से हाथ धोकर बैठना पे स्तर पर पहुच गई
हमारे देश की बहुत सी भूमि उन लोगो के हाथ मे चली गई २–५२ मे पैदावार
करते। हमारे देश के लगभग ७० प्रतिशत क्षेत्र पर जमींदारी प्रथा ५ लाख टन हो
अब उसका अन्त हो रहा है। जिसके फलस्वरूप किसान की भूमि भी अन्
होती। वह भूमि को जमीदार से लगान पर लेता है। जो लगान किसान जमींद
देता है वह अत्यधिक लगान होता है। जमींदार आर्थिक लगान से ही सतुष्ट नह
हो जाता, वह किसान से समय-समय पर नजराना तथा बेगार भी लेता रहता है।
यदि वह नही देता तो उससे भूमि छुडा लेता है। यही नही, किसान से लगान इतनी कडाई से वसूल किया जाता है कि बहुधा वह अपनी फसल को उचित मूल्य, उचित स्थान तथा उचित समय पर बेच भी नही पाता। उसको यह फसल गाँव के महाजन को सस्ते दामो पर बेचनी पडती है। जो लोग फसल को मण्डियो मे भी बेचते है उनको भी अपने माल का ६० प्रतिशत से अधिक मूल्य नही मिल पाता। इन सब कठिनाइयो के होते हुए यदि खेती एक लाभप्रद व्यवसाय न हो तो कोई आश्चर्य की बात नही है।

यहाँ एक प्रश्न उठ सकता है कि जब खेती एक लाभप्रद व्यवसाय नही है तो फिर किसान उसको करता क्यो है। इसका उत्तर बिल्कुल सीधा है और वह यह है कि उसके पास दूसरा कोई काम करने को नही है। इङ्गलैड की औद्योगिक क्रांति से पूर्व हमारे देश के कुछ लोग खेती पर लगे हुये थे और कुछ कुटीर उद्योग धन्धो मे। परन्तु औद्योगिक क्रांति के पश्चात् जब इङ्गलैंड के कारखानो का सस्ता माल भारत मे आने लगा तब हमारे कुटीर उद्योग धीरे-धीरे नष्ट होने लगे। कुटीर उद्योगो के नष्ट होने पर दस्तकार लोगो को यदि कारखानो मे अथवा और कही काम मिल जाता तो कोई हर्ज की बात न थी परन्तु ऐसा नही हुआ। दस्तकार बिना कुछ काम के रह गया और कोई काम न देखकर दस्तकारो ने खेती करनी आरम्भ कर दी। उसके पश्चात् जनसख्या निरन्तर बढती रही परन्तु व्यवसाय के साधन न बढे क्योकि अङ्गरेज सरकार की यही नीति थी कि वह भारतवर्ष को एक कृषि प्रधान देश बनाये। व्यवसाय के साधन न बढने के कारण अधिकाधिक लोग खेती की ओर झुकने लगे और आजकल यह स्थिति है कि हमारे देश के लगभग ७० प्रतिशत लोग खेती पर लगे हुये है। इनमे से अधिकतर लोग खेती पर इसलिये नही लगे हुय है कि वे खेती करना चाहते हैं वरन् इसलिये लगे हुये हैं कि उनके पास दूसरा कोई काम करने को नही है। इसलिये किसान निरन्तर खेती करते रहते है यद्यपि उनको खेती करना लाभप्रद नही है और उनके ऊपर ऋण भार निरन्तर बढ रहा है। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व इस ऋण का अनुमान १८०० करोड रुपये के लगभग था। ऐसी परिस्थिति मे यदि हम कृषि को एक व्यवसाय कह तो उचित न होगा क्योकि

व्यवसाय का उद्देश्य तो लाभ कमाना है। इसलिये हम उनको जीवन का एक ढङ्ग कह सकते हैं अर्थात् हम कह सकते हैं कि कृषि किसान के जीवन का अङ्ग है। हमारा किसान तरह-तरह की कठिनाइयाँ उठाता रहता है, तरह-तरह के अपमान सहता रहता है, आये दिन हानि उठाता रहता है तो भी वह खेती करना नहीं छोड़ता। अब तो स्थिति यह है कि यदि उसको कोई दूसरा काम भी मिले तो भी वह खेती को कठिनाई से ही छोड़ता है। इसी कारण हम खेती को व्यवसाय न कह कर किसान के जीवन का ढङ्ग कह सकते हैं।

Q 16 What are the important agricultural crops in India ? Give thegraphical distribution

प्रश्न १६—भारतवर्ष की मुख्य फसलें क्या हैं ? उनका भौगोलिक विवरण दीजिये।

भारत के अधिकतर भाग की भूमि बहुत उपजाऊ तथा नर्म है। जलवायु गर्म है और वर्षा अधिक होती है। इस कारण उपज अच्छी होती है। उत्तरी भारत म सदा सर्दी तथा गर्मी दोनों ऋतुयें नियमानुसार होती हैं तथा दो फसलें उत्पन्न होती है। शीतकाल मे गेहू, जौ, सरसो, तम्बाकू और पोस्त की फसल होती हैं। इनको बोने के लिये थोड़े जल की आवश्यकता होती है। ग्रीष्म काल मे चावल, गन्ना, नील तथा मक्का की खेती होती है। दक्षिणी भारत मे जहाँ शीतकाल नही होता वहाँ समशीतोष्ण कटिबन्ध के अनाज नही बोये जाते। कृषि विभाग के निरीक्षण मे भारत की कृषि मे बहुत उन्नति हुई है। आजकल इस ओर ध्यान दिया जा रहा है कि उत्तम बीज प्राप्त हो सके और उत्तम यन्त्र काम मे लाये जायें और कृषि के वैज्ञानिक साधनो से लाभ उठाया जाये और नई-नई फसले बोई जायें।

खाद्य पदार्थ

चावल—यह भारतवर्ष की सबसे प्रसिद्ध उपज है। इसे बहुत गर्मी तथा जल की आवश्यकता है। क्योंकि चावल का पौधा कई दिन तक जल मे डूबा रहना चाहिये इसलिय यह उन खेतो मे उगता है जहाँ जल ठहर सके। यह बगाल, बिहार, महानदी, गोदावरी, कृष्णा तथा कावेरी नदी के डेल्टाओ मे, उत्तर प्रदेश के कुछ भागो मे तथा पजाब मे जहाँ सिंचाई हो सकती है उगाया जाता है।

भारतवर्ष मे जितने क्षेत्रफल पर खेती होती है उसके एक चौथाई भाग पर चावल की खेती होती हैं। परन्तु वहा पर दूसरे देशो की *अपेक्षा प्रति एकड़ पर* बहुत कम चावल उत्पन्न होता है। जैसे यदि भारत की धान की प्रति एकड उपज ८३२ पौण्ड थी तो वह मिश्र की २०३० पौण्ड, जापान की २४७४ पौण्ड, इटली की २९४० पौण्ड तथा स्पेन की २५०० पौण्ड थी। इस कारण प्रतिवर्ष बहुत सा चावल बाहर से मगाना पड़ता है। जब कभी चावल के बाहर के आने मे कठिनाई होती है तो देश को एक बड़े भारी सकट का सामना करना पड़ता है।

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत चावल का उत्पादन बढाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इसके फलस्वरूप चावल की पैदावार निरन्तर बढ़ती जा रही है। १९५२–५३ में चावल की पैदावार २२५ ३७ लाख टन के नय स्तर पर पहुच गई और १९५३–५४ म पैदावार २७७ ६६ लाख टन हो गई। १९५४–५५ म पैदावार घटकर २४८·२१ लाख टन हो गई। १९५६–५७ की उपज २८० ८२ लाख टन हो
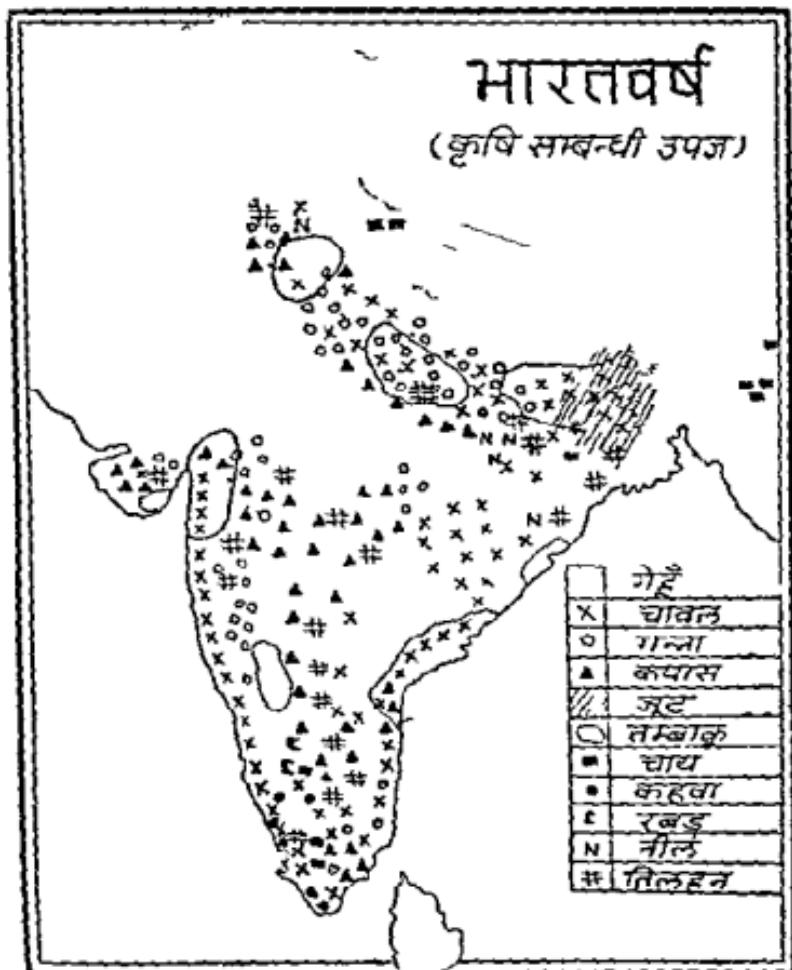
गई। परन्तु १९५७–५८ मे पैदावार घटकर २३८ २१ लाख टन रह गई। यह चावल ७ करोड ९० लाख एकड पर बोया गया था। १९५३–५४ म कई राज्यो न चावल उगाने का जापानी ढङ्ग अपनाया जिसके द्वारा प्रति एकड अतिरिक्त पैदावार १९५३–५४ म १३ ३५ मन १९५४–५५ म १५ ८० मन १९५५–५६ म १० ३४ मन हुई। परन्तु यह केवल ४ लाख एकड भूमि म चावल उगाते समय अपनाया गया है। १९५६–५७ तक २३ ७४ लाख एकड भूमि पर जापानी ढग खेती की गई।

इस प्रयत्न का फल यह हुआ कि चावल का आयात अब प्राय समाप्त हो गया। जबकि १६५१ और १६५२ मे ७५ लाख टन से अधिक चावल विदेशों से मगाया गया। १६५३ मे केवल १४ ७४ लाख रुपये का चावल आयात हुआ। १६५४ मे स्वदेशी पैदावार से ही देश की आवश्यकता की पूर्ति की गई और जो आयात हुआ भी वह केवल गोदामो के लिये हुआ। १६५८-५६ की आयात का अनुमान ५ लाख टन है।

गेहू—गेहू समशीतोष्ण कटिबन्ध का पौधा है। इसे पकते समय उष्ण तथा शुष्क वायु की आवश्यकता होती है, परन्तु आरम्भ से शीत की। वर्षा विशेषकर बुआई और उपज के समय थोडे दिनो से अन्तर से होनी चाहिये। कडी चिकनी मिट्टी तथा बालू जो नदियाँ अपने साथ बहा लाती हैं इसके लिये बहुत अनुकूल हैं। यह प्राय पजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश के भागो मे बोया जाता है। अत्यन्त गर्मी और अत्यन्त शीत इसके शत्रु हैं। बगाल तथा दक्षिण मे गेहू उत्पन्न नही होता। १६४७-४८ मे इस देश मे लगभग २ करोड एकड भूमि पर गेहू बोया गया था और उसमे ५५ ७ लाख टन की उपज हुई पर यह उपज भारतवर्ष की आवश्यकता के लिये पर्याप्त न थी। इस कारण विदेशो से भी बहुत सा गेहू मगाना पडा। परन्तु १६५३-५४ मे २ करोड ६४ लाख एकड पर गेहू बोया जिससे ७८ ६० लाख टन उगाया गया। १६५४-५५ मे बोया गया क्षेत्र २ करोड ७८ लाख एकड हो गया तथा उपज बढकर ८६ ०० लाख टन हो गई। १६५६-५७ मे बोया गया क्षेत्र ३ करोड ३६ लाख एकड हो गया तथा उपज ६३ १४ लाख टन हो गई। १६५७-५८ मे बोया गया क्षेत्र २ करोड ६६ लाख ५७ हजार एकड तथा उपज ७६ ५४ लाख टन रह गई।

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत गेहू की पैदावार भी बढाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इसके फलस्वरूप १६५६-५७ मे पैदावार बढकर ६३ १४ लाख टन हो गई। यह युद्ध पूर्व की पैदावार से भी अधिक थी।

ज्वार बाजरा—ये शुष्क जलवायु मे उत्पन्न होते है। इस कारण राजपूताना, पजाब तथा दक्षिण मे इनकी खेती होती है। भारत मे १६५३-५४ मे ७ करोड ४० लाख एकड भूमि पर ज्वार, बाजरा आदि की खेती हुई थी व उनसे १२,४२६ हजार टन अन्न प्राप्त हुआ था। १६५४-५५ मे बोया गया क्षेत्र घट कर ७ करोड १२ लाख एकड रह गया परन्तु उपज बढकर १२,५१६ हजार टन हो गई। १६५६-५७ मे ज्वार बाजरा ६ करोड ८२½ लाख एकड भूमि पर बोया गया तथा उससे १०१३४ हजार टन उपज प्राप्त हुई। १६५७-५८ मे बोया गया क्षेत्र ६ करोड ६८ लाख ६४ हजार एकड हो गया और उपज बढकर ११६२१ हजार टन हो गई।

दालें—यह अधिकतर उत्तर प्रदेश, पूर्वी पजाब, बम्बई और मध्य प्रदेश मे उत्पन्न होती हैं। इन सबमे चने का स्थान मुख्य है। १६५६-५७ मे २४२६५ हजार

एकड पर चना बोया गया तथा उससे ६२ ६४ लाख टन चना उपजाया गया। १९५७–५८ म २२४०५ हजार एकड पर चना बोया गया तथा ४७ ५४ लाख टन प्राप्त हुआ। १९५६–५७ मे दूसरी दालें ३३९५० एकड भूमि पर बोई गई तथा उनकी उत्पत्ति ५२ ३९ लाख टन हुई। १९५७–५८ मे अन्य दालें ३२२५० हजार एकड पर बोई गई तथा ३४ ६२ लाख टन उपज मिली।

जौ—यह अधिकतर उत्तर प्रदेश, बिहार और पूर्वी पजाब म उत्पन होता है। १९५३–५४ मे इसकी खेती लगभग ८७१९ हजार एकड पर हुई और इससे ५९ ०५ लाख टन अन्न प्राप्त हुआ परन्तु १९५७–५८ मे बोया गया क्षेत्र घटकर ७५३१ हजार एकड रह गया तथा उत्पत्ति घटकर केवल २१ ७५ लाख टन रह गई।

फल—यह समस्त भारत मे उत्पन्न होते हैं परन्तु काश्मीर म बहुत अच्छे फल उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त और भी भागो मे फल उत्पन्न होते हैं। जैसे नागपुर मे सतरे, इलाहाबाद मे अमरूद आदि।

यहा पर बहुत प्रकार की साग भाजी भी उत्पन्न होती है। जैसे आलू, टमाटर, गोभी, भिन्डी, प्याज आदि। यह सब्जियाँ देश के प्राय सभी भागो मे उत्पन्न होती हैं।

अभी पिछले दिनो हमारे देश मे अन्न की बहुत कमी थी। इस कारण इस बात के ऊपर अधिक जोर डाला जा रहा था कि देश मे अन्न की कमी को सागभाजी द्वारा पूरा किया जाय।

गन्ना—भारतवर्ष ससार म सबसे अधिक गन्ना पैदा करने वाला देश है। यह उपजाऊ भूमि पर होता है और इसे ऊँचा तापक्रम और एकसा किन्तु काफी पानी चाहिए। सिचाई के सहारे इसकी उत्पत्ति बढ जाती है। भारत मे गन्ना उत्तर प्रदेश, बिहार, पजाब तथा बङ्गाल मे उत्पन्न होता है।

हमारे देश मे जब से चीनी उद्योग को सरक्षण मिला है तब से गन्ने की उत्पत्ति बहुत बढ गई है। १९५२–५३ म हमारे देश म ४२७२ हजार एकड भूमि पर गन्ना बोया गया और ५०१९० हजार टन गन्ना उत्पन्न किया गया। परन्तु उस वर्ष चीनी व गुड आदि के भावो के गिरने के कारण अगले वर्षों म इसका उत्पादन बहुत कम हो गया तथा गन्ना कम क्षेत्र पर बोया गया। जैसे १९५३–५४ मे बोया गया क्षेत्र गिर कर ३९८५ हजार एकड रह गया तथा उपज घट कर ४३७०९ हजार टन रह गयी। उसके पश्चात् चीनी तथा गुड का मूल्य बढ़ने से बोया गया क्षेत्र तथा उत्पत्ति फिर बढने लगे। इस प्रकार १९५५–५६ म गन्ने का क्षेत्र बढकर ४५६४ हजार एकड तथा उत्पत्ति ५९ ५९ लाख टन रह गई। १९५७–५८ म बोया गया क्षेत्र ५०२१ हजार एकड हो गया तथा उपज ६४४४२ हजार टन हो गई। १९६०–६१ के लिए दूसरी योजना मे ७८ लाख टन का ध्येय रखा गया है।

अब विभिन्न राज्यो मे गन्ने की उत्पत्ति करने का प्रयत्न किया जा रहा है। और १९५२–५३ तक गन्ने के कुल क्षेत्र का १० प्रतिशत उत्तर प्रदेश मे, ५ प्रतिशत विहार मे, ३९.४ प्रतिशत बम्बई मे तथा ६५ प्रतिशत मद्रास मे उन्नत गन्ने के अन्तर्गत वोया गया। दूसरी योजना मे गन्ने की उत्पत्ति का ध्येय बिन्दु ७४ लाख टन है। १९५९–६० ई० के बीच भारत के समस्त राज्यो मे १७.३७ लाख एकड भूमि पर उन्नत खेती की जायगी।

रेशे वाली फसले

कपास—इसके लिये गर्म, नम तथा समान जलवायु की आवश्यकता है। परन्तु अधिक जल इसके लिए हानिकारक है। दक्षिण की काली मिट्टी मे जिसमे नमी बहुत काल तक रह सकती है इसकी अच्छी उपज होती है। यह अधिकतर गुजरात, काठियावाड मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पजाब राज्यो मे कई भागो मे उत्पन्न होती है। पजाब मे नहरो के किनारे अमेरीकन कपास बोई जाती है।

भारतवर्ष मे अच्छे प्रकार की कपास बहुत कम उत्पन्न होती है। यहाँ की कपास छोटे धागे वाली होती है, इस कारण अच्छे प्रकार की कपास विदेशो से मँगानी पडती है। जब सिंध भारतवर्ष का एक अङ्ग था उस समय अच्छे प्रकार की कपास की इतनी कठिनाई न थी जितनी कि आजकल है। अब भारतवर्ष, अमेरिका, मिस्र तथा सूडान से अच्छी कपास मँगाता है। सन् १९५२–५३ मे भारत मे ३१९४ हजार गाँठे पैदा हुई परन्तु १९५३–५४ मे ३९४७ गाँठे हो गई, और १९५७–५८ मे वह बढकर ४७५३ हजार हो गई। कपास की एक गाँठ ३९२ पौंड की होती है। १९५३–५४ मे उसका क्षेत्रफल १७२.६५ लाख एकड था, तथा १९५७–५८ मे २०१.५८ लाख एकड। दूसरी योजना का ध्येय बिन्दु ५५ लाख गाँठे है। परन्तु राज्यो के मन्त्रियो ने हाल ही मे इसको बढ़ाकर ६५ लाख गाठें कर दिया है।

जूट—इसके लिए गर्म तथा आर्द्र जलवायु तथा ऐसी भूमि की आवश्यकता है जिसमे प्रतिवर्ष नई मिट्टी बनती रहे। इसलिए गगा नदी और ब्रह्मपुत्र के निचले भाग मे अथवा आसाम व बङ्गाल मे बहुत जूट उत्पन्न होता है।

विभाजन के पहले भारतवर्ष को जूट की पूर्ति (Supply) का एकाधिकार (Monopoly) था। पर विभाजन के पश्चात् लगभग ७० प्रतिशत भाग पाकिस्तान के अधिकार मे चला गया। इस कारण यहाँ जूट की मिलो को जो कि सबकी सब भारतवर्ष मे हैं बडी कठिनाइयो का सामना करना पडा।

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत जूट की २०.९ लाख गाँठें बढाने की योजना थी परन्तु अभी तक इनमे सतोषजनक प्रगति नही हुई है। जहाँ योजना के प्रथम वर्ष मे उत्पादन १४ लाख गाठें बढ गया था योजना के दूसरे वर्ष मे इसमे लगभग कोई वृद्धि नही हुई और १९५३–५४ मे जूट तथा मस्ता का क्षेत्रफल और

उत्पादन क्रमश १६६१ हजार एकड तथा ४५५१ हजार गाठ कहे जाते है, अर्थात् १९५२-५३ की अपेक्षा १९५३-५४ मे क्षेत्रफल मे ३४ २ प्रतिशत की और उत्पादन मे ३ २१ प्रतिशत की कमी हो गई है। १९५३ मे खाद्य तथा कृषि मन्त्रालय ने जूट को उन्नत करने तथा उत्पत्ति मूल्य घटाने के लिए एक एक्सपर्ट कमेटी नियुक्त की। इसकी सिफारिश को मानकर ही सरकार ने योजना काल मे निश्चित ५० लाख रु० के खर्च को बढा कर ८० लाख रु० कर दिया। १९५५-५६ मे क्षेत्र २२१० हजार एकड तथा उत्पत्ति ५३ ५१ लाख गाठ व १९५७-५८ मे क्षेत्र २४८० हजार एकड तथा उपज ५२ ९९ गाठें थी। दूसरी योजना का ध्येय बिन्दु ५० लाख गाठें हैं। परन्तु राज्य मन्त्रियो की बैठक मे इस बिन्दु को बढा कर ५५ लाख गाँठें कर दिया गया है। जूट की गाठ का वजन ४०० पौड होता है।

रेशम—जो रेशम के कीडो से प्राप्त की जाती है, वह मैसूर, काश्मीर, बङ्गाल, मद्रास, आसाम और पूर्वी पजाब मे पाई जाती है। इसके अतिरिक्त टसर भी उत्पन्न होती है जो बिहार, उडीसा, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश मे पाई जाती है।

तिलहन

इनमे सरसो, तिल, अलसी, अरण्ड तथा बिनौले आदि सम्मिलित हैं। यह प्राय सारे भारतवष मे उत्पन्न होते हैं और विशेषकर बङ्गाल, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा पजाब मे इनकी खेती अधिक होती है। सरसो अधिकतर पजाब तथा अलसी बङ्गाल, बिहार और मध्य प्रदेश मे होती है। तिल अधिकतर दक्षिण मे होते हैं। मू गफली भी दक्षिण मे बहुत अधिक होती है। तेल निकालने के बीज यूरोप को भेजे जाते हैं, वहां इनका तेल, साबुन, रङ्ग, रोगन और वनस्पति घी बनता है। तेल निकालने के बीज बाहर न भेजे जायें तो इससे देश को बहुत लाभ हो क्योकि तेल निकालने मे बहुत से लोगो को रोजगार मिलेगा तथा खली को खाद के रूप म काम मे लाया जा सकेगा तथा तेल को बाहर भेजने से अधिक धन की प्राप्ति होगी।

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत तेल निकालने वाले बीजो की दशा कुछ सुधरी है। मू गफली का क्षेत्र जो १९५१ म १२१५१ हजार एकड था वह बढकर १९५४-५५ मे १३६९३ हजार एकड हो गया तथा १९५७-५८ म केवल १४४५७ हजार एकड रह गया परन्तु इसकी उत्पत्ति निरन्तर घटती जा रही है जैसे यह १९५१ म ३१४२ हजार टन, १९५२ मे २८८२ हजार टन थी। परन्तु १९५७-५८ मे उत्पत्ति ४२७१ हजार टन हो गई। दूसरे तेल निकालने के बीजो की उत्पत्ति भी कम होनी जा रही है जैसे १९५१ मे यह १६७२० हजार टन रह गई तथा क्षत्र १८०० हजार एकड रह गया। परन्तु इन बीजो का क्षेत्र १९५६ मे १६८०५ हजार एकड तथा पैदावार १९४६ हजार टन थी। दूसरी योजना मे इसकी उत्पत्ति का ध्येय बिन्दु ७० लाख टन है। परन्तु राज्य मन्त्रियो की सभा म इस ध्येय को ७६ लाख टन रखा गया है।

मादक पदार्थ

तम्बाकू—इसके लिए आर्द्र गर्म जलवायु की आवश्यकता है। मद्रास, उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा बङ्गाल में इसकी खेती होती है। भारतवर्ष में संसार का १७ प्रतिशत तम्बाकू उत्पन्न होता है। १९४५–४६ में भारतवर्ष में दस लाख एकड़ पर तम्बाकू बोया गया था और इससे ३,३५,००० टन तम्बाकू उत्पन्न हुआ परन्तु १९५३ में केवल ९१२ हजार एकड़ पर ही तम्बाकू बोया गया और उससे २.६८ लाख टन तम्बाकू पैदा हुआ परन्तु १९५७–५८ ई० में इसका क्षेत्र ९२६ हजार एकड़ तथा उपज २.५२ लाख टन हो गई। भारतवर्ष का तम्बाकू दूसरे देशों की अपेक्षा कुछ खराब है।

अफीम—पोस्त की खेती भारत सरकार के आधीन है। इसे गर्म आर्द्र जलवायु तथा उपजाऊ भूमि चाहिए। पटना, गाज़ीपुर, बनारस के समीप के प्रान्त, पूर्वी राजपूताने में स्थित मालवा प्रान्त तथा मध्य प्रदेश की एजेन्सी में इसकी खेती होती है। सन् १९३९–४० में ६१३८ एकड़ पर अफीम बोई जाती थी।

चाय—इसको गर्म तथा आर्द्र जलवायु की आवश्यकता है। यह पर्वती ढालों पर उत्पन्न होती है जिससे कि इसकी जड़ों में जल एकत्र होकर जड़ों को हानि न पहुंचा सके। इसको बारम्बार वर्षा की आवश्यकता रहती है जिससे नये पत्ते निकलते रहें। आसाम, दार्जिलिङ्ग, देहरादून तथा नीलगिरि की पहाड़ियों पर इसकी खेती अधिक होती है। हमारे देश के निर्यात में चाय का मुख्य स्थान है। यह इङ्गलैण्ड तथा अमेरिका को भेजी जाती है। हमारे देश में चाय की उत्पत्ति १९५१–५२ में ६४१ मिलियन पौंड, १९५२ में ६७५ लाख पौंड और १९५६–५७ में ६६८ लाख पौंड थी। दूसरी योजना का ध्येय बिन्दु ७०० लाख पौंड है।

कहवा—इसके लिए आर्द्र तथा नम जलवायु की आवश्यकता है। परन्तु जिस स्थान पर इसे बोया जाय वह स्थान समुद्रतट से प्राय तीन हजार फुट की ऊँचाई पर होना चाहिए। यह मैसूर, ट्रावनकोर, कोचीन तथा नीलगिरि पर्वत पर उत्पन्न नहीं होता है। पहले भारतवर्ष से बहुत सा कहवा विदेशों को भेजा जाता था पर अब यह स्थान ब्राजील ने ले लिया है। सन् १९५५ में कहवे का क्षेत्र २४० हजार एकड़ तथा उत्पत्ति ६८ लाख पौंड थी।

विविध फसलें

रबड़—यह मुख्यत दक्षिणी भारत में उत्पन्न होती है। इसके मुख्य स्थान ट्रावनकोर, कोचीन, कुर्ग और मद्रास हैं। रबड़ की उत्पत्ति १९५३–५४ में ४५ मिलियन पौंड के लगभग थी तथा यह १६९ हजार एकड़ पर बोई जाती है। परन्तु १९५६–५७ की उत्पत्ति ४९ लाख पौंड हो गई और बोया गया क्षेत्र १८४ हजार एकड़ हो गया।

(३) भूमि का समान बटवारा होना-
नही होता, जैसे इङ्गलैंड मे, उनमे सबसे बडे लडके को तो खूब मि—
परन्तु छोटे लडके को कुछ नही मिलता। इस प्रकार सम्पत्ति का असमान ब—
हो जाता है। यह सामाजिक अन्याय नही तो क्या है। यह अन्याय खेतो को सब लडको मे समान बाटने पर दूर हो जाता है। सब लडको को सम्पत्ति का कुछ न कुछ भाग मिल जाने के कारण वे साधनहीन नही रह जाते और अपने साधनो से वे अपने भविष्य के जीवन को चलाने मे बडी सहायता पाते है। इस प्रकार देश मे एक शक्तिशाली मध्यम वर्ग का जन्म हो जाता है जो किसी राष्ट्र की रीढ की हड्डी होती है।

(४) **कुछ फसलों के लिये छोटे खेत आवश्यक**—कुछ फसलें, जैसे चावल, छोटे खेतो पर ही ठीक प्रकार से उगाई जा सकती हैं। मद्रास आर्थिक मण्डल का कहना है, "धान की खेती सारी भूमि पर एकसा धरातल प्राप्त करने के लिये सबसे अच्छी छोटे खेतो पर की जाती है और खेती की सुविधा के लिये एक व्यक्ति की भूमि बहुधा छोटे-छोटे टुकडो मे बाँटी जाती है।"

(५) प्रो० श्रीमन्नारायण अग्रवाल विनोवा जी के भूमिदान यज्ञ का समर्थन करते हुये कहते हैं कि बडे-बडे खेतो की अपेक्षा छोटे-छोटे खेतो पर खेती करना अधिक लाभप्रद है। अपने विचार के समर्थन मे उन्होंने बहुत से बडे-बडे लोगो के विचार दिये है। इसके अतिरिक्त उन्होंने बताया है कि जापान के अच्छे-अच्छे गाँवो २·५ एकड के खेत है। इसके पश्चात् उन्होंने बताया है कि चीन की नई सरकार बडे-बडे खेतो को समाप्त करके छोटे-छोटे खेत बनाकर भूमि का पुनर्बटवारा कर रही है। यही नही रूस मे भी जहाँ बडे-बडे खेत पाये जाते है वहाँ पर भी किसानो को ½ एकड से लेकर २½ एकड तक निजी भूमि दी गई है। इन छोटे खेतो पर रूसी किसान बडे परिश्रम से काम करता है और अपने परिवार के लिये पर्याप्त अन्न उत्पन्न करता है। इस प्रकार छोटे खेत किसी प्रकार भी खराब नही कहे जा सकते। रूस से देशो का भी यह अनुभव है कि छोटे खेतो की प्रति एकड उपज बडे खेतो से अधिक होती है।

परन्तु यदि हम छोटे-छोटे तथा बिखरे खेतो को लाभ व हानियो की तुलना तो हमको पता चलेगा कि इसकी हानियाँ अधिक है और लाभ बहुत ही कम। कारण यह आवश्यक है कि इस स्थिति को सुधारा जाय।

सुधार के ढंग—

छोटे तथा छिटके खेतो की बुराई को कई प्रकार से ठीक किया जा सकता है। इनमे से निम्नलिखित मुख्य है—

(१) **आर्थिक खेत (Economic Holdings) बनाना**—आर्थिक खेती की परिभाषा कई प्रकार से की गई है। पर हमारे विचार मे आर्थिक खेत वहाँ खेत होते

हैं जो किसान तथा उसके परिवार को निरन्तर काम दे सकें तथा जिनसे उसको इतनी आय प्राप्त हो जाय जिससे कि वह अपने परिवार को सुख से रख सके।

इस प्रकार के खेत कई प्रकार से बनाये जा सकते है। एक ढङ्ग तो यह है कि रूस के समान सरकार सारी भूमि पर अधिकार कर लें और फिर उस भूमि को सामूहिक ढङ्ग (Collective basis) से जोता जाय। दूसरा ढङ्ग यह है कि भूमि के स्वामी तो स्वयं किसान ही रहे पर वे सब मिलकर सहकारी खेती (Co-operative farming) करें। तीसरा ढङ्ग यह है कि बिखरे हुये खेतो की चकबन्दी (Consolidation) कर दी जाये।

पहले ढङ्ग को अपनाने मे यह डर है कि इस देश मे उसका बडा विरोध होगा। हमारे देश के लोग निजी सम्पत्ति (Private Property) के सदा ही इच्छुक रहे है। इस कारण वह कभी भी यह बात पसन्द न करेगे कि भूमि पर से उनका अधिकार छीना जाये। इसके अतिरिक्त, इस ढङ्ग को अपनाने मे रूस का रक्तपात आंखो के सामने आ जाता है। इस कारण इस ढङ्ग को इस देश मे नही अपनाया गया।

इक कारण हमारे देश मे **सहकारी खेती** तथा चकबन्दी से ही इस समस्या को सुलझाने का प्रयत्न किया गया है। परन्तु अभी तक इस कार्य मे कोई विशेष प्रगति नही हुई *क्योकि गाव के स्तर पर न तो कोई व्यवस्था है और न लोगो मे* काम करन का उत्साह। सहकारी खेतो पर अभी हाल ही मे बडा जोर दिया जा रहा है। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे कहा गया है कि योजना काल मे इस प्रकार के पग उठाये जायेंगे जिससे कि देश मे सहकारी खेती एक मजबूत नीव पर खडी हो सके। ऐसा करने से १० वर्ष मे अधिकतर खेती सहकारी ढङ्ग से होने लगेगी। भूमि सुधार के लिये नियुक्त पेनल की एक विशेष समिति ने सुझाव दिया है कि वे भूमि जो कि राज्यो को उच्चतम सीमा नियुक्त करके प्राप्त हो अथवा गाव के पास की भूमि जो राज्यो को जमीदारी समाप्त करने पर प्राप्त हो उसको सहकारी ढङ्ग से खेती के काम मे लाया जाये। भारत के कुछ विशेषज्ञो ने १६५६ ई० मे चीनी की सहकारी खेती का अध्ययन भी किया है। इन विशेषज्ञो ने अपने बहुत से सुझाव दिये है जिनमे से एक यह भी है कि कृषि को मजबूत आधार पर रखने के लिय देश मे मजबूत बहु उद्देश्य सहकारी समितियो का निर्माण किया जाय।

दिसम्बर १६५८ मे समस्त राज्यों मे सहकारी कृषि समितियों की सख्या २०२० थी। हैदराबाद मे सरकार ने इस प्रकार की समितियो के निर्माण को प्रोत्साहन देने के लिये लगान मे कमी, कृषि आय-कर मे कमी, नि शुल्क टैक्निकल सलाह, कम ब्याज की दर पर ऋण आदि बहुत सी सुविधाये प्रदान करने के लिये कहा हैं। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे इस प्रकार की खेती की उन्नति के लिये १३८५७ लाख रुपये रखे हैं।

विभिन्न राज्यो मे इन समितियो की सख्या इस प्रकार थी—

राज्य	समितिया की सख्या	राज्य	समितियो की सख्या
आन्ध्र प्रदेश	३१	मनीपुर	३
आसाम	१७०	मैसूर	१००
बिहार	७७	उडीसा	२८
बम्बई	४०२	पजाब	४७८
देहली	२२	राजस्थान	१०५
जम्मू व काश्मीर	७	त्रिपुरा	१२
केरल	५५	उत्तर प्रदेश	२५५
मध्य प्रदेश	१४०	पश्चिमी बङ्गाल	१७८
मद्रास	३७		

७ जून १९५८ ई० की एक सूचना के अनुसार राज्य सरकार १९५८–५९ म ५१३ तजर्बे वाले सहकारी खेत चालू करगी । परन्तु राष्ट्रीय विकास समिति का बिन्दु इस वर्ष के लिये ६०० था । इस प्रकार यह प्रगति ध्येय बिन्दु से कम होगी । परन्तु सरकारी क्षेत्रो का कहना है कि सहकारो खेतो के निर्माण मे इनका सख्या को न देख कर उनके गुणात्मक प्रकार को देखना चाहिये । पिछले वर्षो मे स्थापित सहकारी खेतो की योजना कमीशन द्वारा की गई जाँच से पता लगता है कि वर्तमान के १६०० खेतो मे से केवल ५० वास्तविक अथवा किसी मात्रा मे सफल कहे जा सकते हैं । भविष्य मे सरकारी तथा गैर-सरकारी सस्थाओ का यह प्रयत्न होगा कि केवल उन लोगो को सहकारी खतो म सम्मिलित होने दिया जाय जो कि सहकारिता की टेक्नीक मे विश्वास रखते है । इस प्रकार यह आशा है कि भविष्य मे इन सहकारी खतो के निर्माण से सहकारी आन्दोलन म एक बडी बदल आ जायगी ।

चकबन्दी का कार्य सबसे पहले पजाब में १९२० मे आरम्भ हुआ । यह काय कानून द्वारा तथा स्वय इच्छा से किया गया है । ३१ दिसम्बर १९५७ तक ८५,८०,८७४ एकड भूमि पर चकबन्दी का कार्य पूरा हो चुका था तथा ५६,१७,४३८ एकड पर यह काय चल रहा था ।

पजाब के पश्चात् चकबन्दी का कार्य उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा बरार आदि मे भी हुआ । उत्तर प्रदेश मे सहकारी तथा कानूनी ढङ्ग से ही चकबन्दी का कार्य हुआ । १९५३ ई० मे खती की चकबन्दी से सम्बन्धित एक कानून पास किया गया इसम १९५६ मे कुछ सशोधन किया गया है । जिसके अनुसार चकबन्दी का कार्य एक पूव के जिले मे तथा एक पश्चिम के जिले म आजमाया जायगा । इस प्रकार का कार्य अब २१ जिलो मे किया जा रहा है । ३१ दिसम्बर १९५७ तक वह क्षेत्र जिस पर चकबन्दी का कार्य पूरा हो चुका था १३९८५९२ एकड था तथा ३७३५१२९ एकड पर यह काय चल रहा था ।

जम्मू तथा काश्मीर		२२¾ एकड
मैसूर	हैदराबाद क्षेत्र	१८ से २७० एकड
पंजाब	पेप्सू क्षेत्र	३० स्टैण्डर्ड एकड (उखड़े हुए लोगों के लिये ४० स्टैण्डर्ड एकड)
राजस्थान	अजमेर क्षेत्र	५० एकड (जहां भूमि मध्यस्थों पर है।)
पश्चिमी बंगाल		२५ एकड
हिमाचल प्रदेश		चम्बा जिले में ३० एकड तथा दूसरे क्षेत्रों में १२५ रु० लगान देने वाला क्षेत्र

पंजाब में सरकार ने इस बात का अधिकार दिया है कि जिन जमींदारों के पास ३० स्टैण्डर्ड एकड से अधिक भूमि है उन पर किसानों को बसा दिया जाय। केरल का Agrarian Relations Bill जो अब एक प्रवर समिति के सामने है। भविष्य में प्राप्त की जाने वाली भूमि के लिये १५ से ३० एकड तक अधिकतम सीमा निश्चित करता है। Madhya Pradesh Land Revenue Code Bill, १६५८ में प्राप्त की जाने वाली भूमि के लिए एक अधिकतम सीमा निश्चित करता है, परन्तु अधिकतम सीमा नियमों के अनुसार निश्चित होगी।

खेतों की उच्चतम सीमा के दो पहलू हैं—(१) भविष्य में प्राप्त की जाने वाली भूमि की उच्चतम सीमा तथा (२) वर्तमान के खेतों की उच्चतम सीमा। भविष्य में प्राप्त की जाने वाली भूमि की उच्चतम सीमा निम्नलिखित राज्यों में निश्चित की जा चुकी है—

आन्ध्र प्रदेश	तेलंगाना क्षेत्र	१८ से १८० एकड
आसाम	मैदानी जिले	५० एकड
बम्बई	(भूतपूर्व) बम्बई क्षेत्र	१२ से ४८ एकड
	मराठवाड़ा क्षेत्र	१२ से १८० एकड
	सौराष्ट्र क्षेत्र	८० से १२० एकड
	विदर्भ तथा कच्छ क्षेत्र	तीन परिवार के लिए (क्षेत्र ट्रिब्यूनल द्वारा निश्चित किया जायेगा)
जम्मू तथा काश्मीर		२२¾ एकड
मध्य प्रदेश	मध्य भारत क्षेत्र	५० एकड
	राजस्थान क्षेत्र	३० से ६० एकड तक (भूमि की श्रेणी के अनुसार)

मैसूर	बम्बई क्षेत्र	१२ से ४८ एकड
	हैदराबाद क्षेत्र	१२ से १८० एकड
पजाब		३० स्टैण्डर्ड एकड
राजस्थान	(अजमेर क्षेत्र सहित)	३० सींचे गये एकड अथवा ६० शुष्क एकड
उत्तर प्रदेश		४० एकड
पश्चिमी बगाल		२५ एकड
दहली		३० स्टैण्डर्ड एकड

मैसूर मे वर्तमान तथा भविष्य मे प्राप्त की जाने वाली भूमि के लिये ऐसी सीमा निश्चित की गई है जिसकी वार्षिक आय ३६०० रु० होगी। Andhra Pradesh Ceiling on Agricultural Holdings Bill 1958 ऐसी उच्चतम सीमा निश्चित करना चाहता है जिससे कि वर्तमान के खेतो से ५४०० रुपये की वार्षिक आय प्राप्त हो सके तथा भविष्य मे प्राप्त खेतो से ३६०० रुपये की वार्षिक आय प्राप्त हो सके। जम्मू तथा काश्मीर मे वर्तमान के खेतो की उच्चतम सीमा के कानून को कार्यान्वित किया जा चुका है। पजाब के पेपसू क्षेत्र तथा आसाम मे नियम बन चुके है तथा भूमि के स्वामियो से इस बात के घोषणा पत्र लिये जा रहे हैं कि उनके पास कितनी भूमि है। पश्चिमी बगाल मे सरकार ने भूतपूर्व जमीदारो के फालतू भूमि पर अधिकार कर लिया है। यह भूमि एक-एक वर्ष के लिये बिना भूमि के मजदूरो को दी जाती है।

Q 18 What different types of soils are found in India? Discuss the problem of soil erosion in the country and suggest remedies

प्रश्न १८—भारत मे कौन सी भिन्न-भिन्न मिट्टियाँ पाई जाती है? देश की मिट्टी के कटाव की समस्या का वर्णन कीजिये तथा ठीक करने के सुझाव दीजिये।

उत्तर—भारतवर्ष मे निम्नलिखित प्रकार की मिट्टिया पाई जाती हैं—

(१) दोमट मिट्टी (Alluvial Soil)—यह भारतवर्ष की सबसे अधिक उपजाऊ मिट्टी है। यह मिट्टी गङ्गा सिंध के मैदान तथा समुद्र तट के मैदानो मे पाई जाती है। यह मिट्टी नदियो द्वारा लाई जाती है। इसकी गहराई का अनुमान लगाना बडा कठिन है। खोदने पर कई सौ फुट गहराई तक यह मिट्टी पाई गई है। यह मिट्टी पौधो को उगाने के लिये बडी उपयुक्त है परन्तु इसमे नत्रजन (Nitrogen) की कमी है। यह मिट्टी पजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बङ्गाल, आसाम,

उत्तरी राजस्थान और समुद्र तट के मैदानों में पाई जाती है। इस मिट्टी में चावल गन्ना तथा गेहूं उगाए जाते हैं।
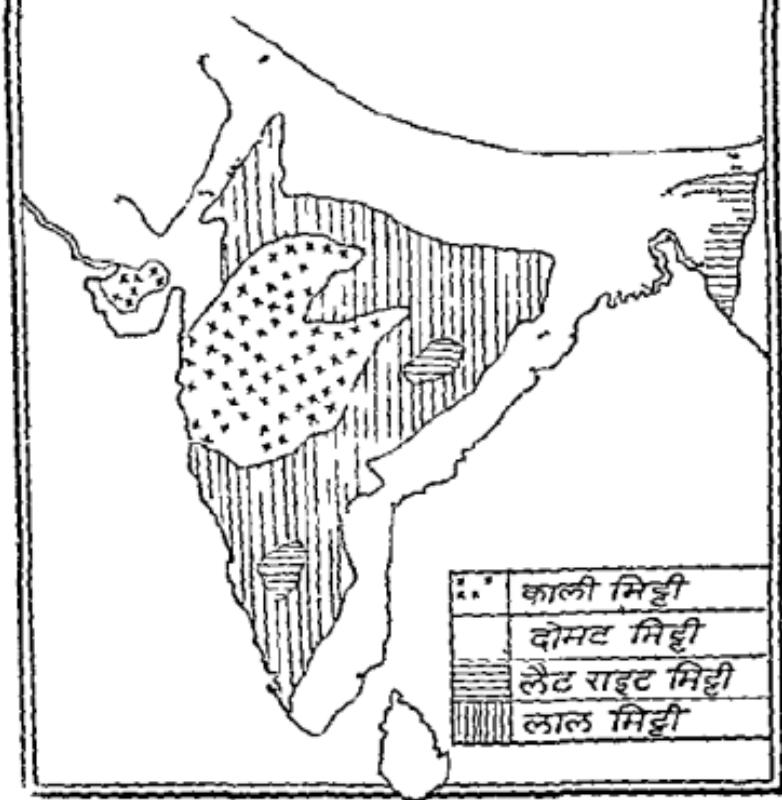
(२) काली मिट्टी (Black Soil)—यह मिट्टी लगभग दो लाख वर्ग मील में पाई जाती है। इसके क्षेत्र काठियावाड़ बरार हैदराबाद पश्चिमी मध्य प्रदेश बम्बई और मद्रास के कुछ भाग हैं। बरसात के दिनों में यह मिट्टी चिकनी व लिबलिबी हो जाती है और गर्मी के दिनों में इसमें बहुत सी दरारें पड़ जाती हैं। यह मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है। इसमें धातुओं की अधिक मिलावट होने के कारण इसका रङ्ग काला होता है। यह मिट्टी कपास के लिये बहुत उपयुक्त है। इस मिट्टी का मुख्य गुण यह है कि यह नमी को बहुत समय तक अपने अन्दर बनाये रखती है। इस मिट्टी में फास्फोरिक एसिड व नत्रजन कम होता है परन्तु पोटाश और चूना अधिक होता है।

(३) **लाल मिट्टी (Red Soil)**—यह मिट्टी इसलिये लाल होती है क्योंकि इसमे लोहा मिला होता है। यह मद्रास, मैसूर, दक्षिण-पूर्व, बम्बई, हैदराबाद और मध्य प्रान्त के पूर्व मे छोटा नागपुर, उडीसा और बङ्गाल के दक्षिण म पाई जाती है। इस मिट्टी का रङ्ग हर जगह एक सा नही होता। कही लाल, कही भूरा, कही पीला, कही खाकी और कही काला भी होता है। परन्तु क्योंकि इसका रङ्ग अधिकतर भागो मे लाल होता है इसीलिये यह लाल मिट्टी कहलाती है। इस मिट्टी का क्षेत्रफल लगभग ८ लाख वर्ग मील है। यह मिट्टी छेददार होती है। ऊंचे भागो की मिट्टी हल्की, पतली तथा कंकरीली होती है इसीलिये उपजाऊ नही होती। इस पर बाजरा पैदा हो जाता है। परन्तु जो मिट्टी मैदानो और घाटियो मे पाई जाती है वह गहरी तथा बारीक कणो वाली होती है जिसमे कई प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं। इस मिट्टी मे लोहा, मैंगनेशियम तथा एल्युमीनियम का अ श अधिक होता है किन्तु नत्रजन, फास्फोरस, चूना, पोटाश तथा जीवांश कम होता है।

(४) **लेटराइट मिट्टी (Laterite Soil)**—इस मिट्टी का रङ्ग भी लाल या लाली से युक्त पीला होता है। यह मिट्टी मध्य भारत, आसाम तथा पश्चिमी व पूर्वी घाटो के पास पाई जाती है। ऊंचे भागो की मिट्टी कंकरीली व छेददार होती है, पानी बहुत जल्द सोख लेती है। अनुपजाऊ होने के कारण कृषि के लिये उपयुक्त नहीं है। परन्तु निचले भागो की मिट्टी चिकनी अथवा दोमट होती है। यह अधिक समय तक नमी धारण कर सकती है इसलिये खेती के लिये उपयुक्त है। इस पर चाय की खेती खूब होती है तथा चावल उगाया जाता है। इस मिट्टी म अल्युमीनियम व लोहे का अंश अधिक होता है किन्तु चूना, मैगनेशियम, फास्फोरस व नत्रजन कम होता है। सोडा, क्षार पदार्थ तथा पोटाश बिल्कुल नही होते।

भारतवर्ष में मिट्टी के कटाव की समस्या
(Problem of Soil-erosion in India)

भारतवर्ष जैसे कृषि प्रधान देश के लिये मिट्टी का जो महत्व है उसके सम्बन्ध मे कोई बात कहने की आवश्यकता नही है। अनुमान है कि एक इंच भूमि बनने मे लगभग ३०० से १००० वर्ष लगते हैं। परन्तु जिस समय से मनुष्य ने भूमि को खेती के लिये उपयोगी बनाया है उसी समय से उसकी अज्ञानता के कारण मिट्टी के कटाव की समस्या उसके सामने आ गई है। मिट्टी के कटाव के कारण भूमि की ऊपरी परत हवा अथवा पानी द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर चली जाती है। इस प्रकार ऊपरी परत की मिट्टी चले जाने के कारण जो मिट्टी बच रहती है वह खेती के लिये उपयुक्त नही रह जाती। क्योंकि ऊपर वाले परत की मिट्टी के वह गुण भी जो पौधो को उगाने के लिए आवश्यक हैं मिट्टी के साथ उडकर अथवा बह कर चले जाते हैं। नीचे वाली मिट्टी पर खेती होने पर और भी अधिक मिट्टी का कटाव हो जाता है। आधुनिक काल मे अधिकाधिक खेती होने के कारण यह समस्या

और भी उग्र रूप धारण कर रही है। बहुत से क्षेत्रों में मरुस्थल आगे बढ़ता रहता है और उसके रोकने का उचित समय पर ठीक साधन प्रयोग में लाये गये तो उसका बटावा बढ़ता ही रहता है और दूसरे हरे-भरे क्षेत्रों में रेत लाकर वहाँ की पुरानी फसलों और वृक्षों के उत्पादन को नष्ट करके उसको वीरान बना देता है। हमारे देश में मथुरा व आगरे के जिलों के पास मरुस्थल आगे बढ़ रहा है।

मिट्टी का कटाव मनुष्य के लिये एक बड़ी भयङ्कर चीज है। इसके कारण बड़ी-बड़ी सभ्यताओं का नाश हो गया। डा० एच० एच० बेटन (Dr. H H Betten) का मत है कि "मिट्टी के कटाव के कारण पुरानी सभ्यताओं का नाश हो गया है, जिनके टूटे-फूटे शहर अब उन निर्जन खण्डरों में पड़े हुये हैं जो कभी संसार के सबसे उपजाऊ क्षेत्र थे।' चीन का गोबी मरुस्थल, मिस्र का बड़ा मरुस्थल, भारत तथा बेबीलोन के खण्डर इस मौन एवं अचूक सभ्यता के विनाश के प्रमाण हैं।

मिट्टी के कटाव के कारण (Factors responsible for soil erosion)--मिट्टी के कटाव के बहुत से कारण हैं। इनमें से कुछ निम्नलिखित हैं--

(१) हवा--जब तेज हवा अथवा आंधी चलती है तो वह अपने साथ मिट्टी के कण उड़ाकर ले जाती है। इस प्रकार मरुस्थल बढ़ता रहता है।

(२) पानी--पानी के द्वारा दो प्रकार का कटाव होता है--(अ) समतल तथा (अ) गहरा।

(अ) समतल कटाव--जिस भूमि में घास अथवा फसल उगी हुई नहीं होती उस पर जब पानी पड़ता है तो उस भूमि के कण पानी में मिलकर बहकर चले जाते हैं। इस प्रकार जीवांश तथा पौधों की खुराक के बहुमूल्य अंश पानी में बहकर भूमि की उर्वरा शक्ति को कम कर देते हैं। समतल कटाव धीरे-धीरे होता है और इसका पता तब लगता है जबकि खेत से प्राप्त उपज घटती है। ऐसे कटाव की रोक-थाम करने के लिये मेंड़ों की मेडबन्दी करना सबसे सरल उपाय है। इसके अतिरिक्त ऐसी फसलें भी बोई जायें जो भूमि के कणों को अच्छी तरह पकड़ सकें और भूमि के कटाव को रोकें।

(आ) गहरा कटाव--वर्षा के समय पानी ऊँचे मेंड़ों से नीचे की ओर बह कर चलता है जिसके साथ भूमि-कण भी अधिकांश मात्रा में होते हैं। जैसे-जैसे पानी बहकर आगे चलता है इसकी भूमि काटने तथा भूमि कणों को अपने साथ बहा ले जाने की शक्ति बढ़ जाती है। कुछ दूर बहकर यह पानी छोटी-छोटी नालियाँ बना लेता है जो निरन्तर बढ़ती रहती हैं। अन्त में वे बड़े-बड़े नालों का रूप धारण कर लेती हैं। उस समय भूमि बहुत ऊबड़-खाबड़ हो जाती है। इसको गहरा कटाव कहते हैं। हमारे देश में आगरा व इटावे के जिलों में गहरे कटावों ने बहुत बिकराल रूप धारण कर लिया है। ये कटाव इतने बड़े-बड़े हैं कि उन्होंने छोटी-छोटी पहाड़ियों का रूप धारण कर लिया है। ऐसे गहरे कटावों को जहाँ पृथ्वी के बहुत ऊबड़-खाबड़ होने के कारण कोई फसल उत्पन्न नहीं हो सकती, कन्दरायुक्त बन्जर भूमि

(रेवाइन) कहते हैं। समतल तथा गहरे दोनो कटावो म से समतल कटाव अधिक हानिकारक है क्योकि इसका ज्ञान किसान को नही हो पाता।

मिट्टी के कटाव के कारण (Causes of soil erosion)—मिट्टी के कटाव के बहुत से कारण है जिसमे से कुछ नीचे दिये जाते हैं—

(१) वनो को असावधानी से काटना और काटने के पश्चात् वृक्ष न लगाना।

(२) घास पतवार का बुरी तरह काटना तथा उसम दूसरी घास न उगाना। इसके अतिरिक्त भेड, बकरी तथा दूसरे घरेलू पशुओ को अनियमित रूप से चराना और चरागाहो की अच्छी प्रकार देखभाल न करना।

(३) अनियमित रूप से बार बार फसल बोना और उसम पूरी मात्रा मे जीवाश और खाद का न डालना। ऐसा करने से भूमि के कणो की सगठन शक्ति कम हो जाती है और इसके कारण पानी सरलता से वह जाता है।

(४) ऊंचे-नीचे खेतो की ठीक प्रकार से मेड बन्दी न करना और पानी के निकास का ठीक प्रबन्ध न करना।

(५) जहाँ मरुस्थल बढ रहा हो वहाँ वृक्षो का न लगाना।

सबसे अधिक मिट्टी ढालू पहाडो के नीचे की भूमि को काटती है। हमारे देश मे आसाम, उडीसा, आध्र, छोटा नागपुर तथा मध्य प्रदश मे बहुत सी मिट्टी खेती की जोत को बदलते रहने के कारण कट गई है। केवल उडीसा मे ही इस प्रकार की हानि का अनुमान १२,००० वर्ग मील है। परन्तु इसका सबसे अधिक प्रभाव मैदानो मे पडता है। "उत्तरी भारत की मुलायम मिट्टी के क्षत्रो मे नदी व सोतो के किनारे अच्छी उपजाऊ मिट्टी की बडी हानि हो रही है और दरार वाली भूमि बिना रुकावट के बढती जा रही है।" हमारे देश मे जमना नदी के दक्षिण म बुन्देलखण्ड मे तथा मध्य भारत, बिहार, बम्बई, मद्रास तथा पजाब के कुछ भागो मे मिट्टी के कटने की समस्या बहुत भयङ्कर हो गई है। बगाल और आसाम मे जहाँ ७०" से २००" तक वर्षा होती है मिट्टी का कटाव जङ्गलो के कटने तथा भूमि की जोत को जल्दी बदलने के कारण होता रहता है। इसके अतिरिक्त हाल ही मे छोटा नागपुर की पहाडियो के वन कट जाने के कारण बडी भयङ्कर बाढ आती है जिससे बहुत सी मिट्टी कट जाती है। इस प्रकार दरार वाली भूमि का क्षेत्र उत्तर प्रदेश मे ३० लाख एकड तथा राजस्थान, विंध्य प्रदेश, बम्बई, सौराष्ट्र आदि मे ३९ से ५० लाख एकड के बीच है।

पानी के अतिरिक्त हवा से भी मिट्टी कटती रहती है, समुद्र के किनारे हवा के कारण ही मरुस्थल देश के भीतर की ओर बढ रहा है।

इस प्रकार यह अनुमान लगाया गया है कि भारतवर्ष की लगभग दो करोड एकड भूमि मिट्टी के कटने के कारण बिल्कुल नष्ट हो गई और लगभग १० लाख एकड भूमि को अभी ठीक बनाना है इसलिए यह बिल्कुल आवश्यक है कि मिट्टी के

इस प्रकार कटने को एक दम रोका जाय नही तो हमको बडी कठिनाइयो का सामना करना पडेगा ।

मिट्टी का कटाव रोकने के उपाय—

मिट्टी के कटाव को निम्नलिखित ढङ्ग से रोका जा सकता है—

(१) **पेड लगाकर**—वनो के लगाने से मिट्टी का ढीलापन जाता रहता है तथा नदियो की बाढ का वेग कम हो जाता है । इसके अतिरिक्त पेडो से गिरी हुई पत्तियो व टहनियो से भूमि की सतह ढक कर सुरक्षित हो जाती है । वन आधियो के वेग को कम करके हवा द्वारा की जाने वाली क्षति को भी रोक देते है ।

(२) **बाँध बनाकर तथा डौल बनाकर**—मिट्टी के कटने को रोकने के लिये बाध बनाए जाने चाहिये तथा खेतो के चारो ओर डौल बना देनी चाहिये । ऐसा करने से जब पानी मिट्टी को बहाकर ले जायगा तो वह मिट्टी बाध अथवा डौल से रुक जायेगी ।

(३) **पशुओ के चरने की ठीक व्यवस्था करके**—पशुओ के चरने की ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे कि वनस्पति धीरे धीरे समाप्त हो । पशुओ को बिना सोचे समझे चराने के कारण वनस्पति जल्दी समाप्त हो जाती है और मिट्टी कटनी आरम्भ हो जाती है ।

(४) **ठीक प्रकार खेती करके**—खेती को ठीक प्रकार करके भी मिट्टी के कटने को बहुत कुछ रोका जा सकता है । खेतों की ठीक प्रकार जुताई करके उनमे डौल बनानी चाहिये । ढलान की भूमि को वर्षा के पहले लम्बानुसार जोत देने से पानी भूमि मे रुक जाता है तथा भूमि का कटाव नही होता ।

मिट्टी को बचाने का प्रयत्न—प्रथम पचवर्षीय योजना मे इस कार्य के लिये ३ २५ करोड रुपये रखे गये थे पर द्वितीय योजना मे इस कार्य के लिये २६ ८३ करोड रुपये रखे गये हैं । इसमें से ४ करोड रुपए तो केन्द्र खर्च करेगा और शेष राज्य सरकारें खर्च करेगी । इस धन मे से ३ २४ करोड रुपये नदी योजना क्षेत्रो के लिये रखे गये हैं । जोते हुए तथा जोते जाने योग्य खेतो की मिट्टी के कटाव को रोकने के लिये १३ करोड रुपये रखे गये हैं । लोक सभा मे इसके लिये एक River Board Bill भी पेश किया गया है जिसके द्वारा राज्य की सलाह के River-Board बनाये जायेंगे । उनके बन जाने के पश्चात् Soil Conservation Boards उनकी सलाह से अपने अपने क्षेत्र की योजनायें बनायेंगे । श्री कृष्णामचारी का सुझाव है कि राज्यो को ऐसे कानून बनाने चाहियें जो कि सरकार को मिट्टी के बचाने के लिये योजना बनाने की शक्ति दें और भूमि जोतने वालो पर यह जिम्मेदारी ही कि वे मिट्टी को कटने से बचावें ।

Central Soil Conservation Borad ने मिट्टी को बचाने के लिये कई स्थानो पर ट्रेनिंग का कार्य किया है जहा पर बहुत से आदमियो को ट्रेनिंग दी जा

चुकी है तथा बहुत से लोगो को ट्रनिंग दी जा रही है। १६५६–५७ मे बोर्ड ने देहरादून मे एक Land use Survey and Planning Organisation की स्थापना की मजूरी दी है। इसकी शाखायें नागपुर तथा राची मे होगी। बोर्ड ने जाधपुर मे एक Desert Reclamation Scheme को चालू करने का निश्चय किया है। जिसके अन्तर्गत द्वितीय योजना काल मे २ ५ लाख एकड मरुस्थली भूमि को प्राप्त किया जायेगा। एक ऐसी सस्था भी स्थापित की जायगी जो कि पहाडी जातियो मे खेती को बदलते रहने के विरुद्ध प्रचार करेगी। इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारी सरकार मिट्टी के कटाव को रोकने के लिये बहुत प्रयत्नशील है।

एक केन्द्रीय बोड की स्थापना हो चुकी है और राज्यो की सलाह से एक प्रोग्राम बनाने का प्रयत्न जारी है। इस काय के लिय किसानो क सहयोग की आवश्यकता है जो कि सामूहिक विकास योजना व राष्ट्रीय विस्तार मेवा के द्वारा प्राप्त हो सकता है। मरुस्थल को न बढने देना इस योजना का एक मुख्य अङ्ग है।

Q 19 State the different forms of irrigation in India What is meant by productive and protective works ? Point out the relative importance of irrigation works in different states of India Give post war schemes

प्रश्न १६—भारत मे सिंचाई के विभिन्न साधनो को बताइये। उत्पादक तथा रक्षात्मक नहरों का क्या अभिप्राय है ? भारत के विभिन्न राज्यो मे सिंचाई के ढगो का सापेक्षिक महत्व बताइये। युद्ध पश्चात् की योजनाए दीजिये।

भारतवर्ष मे सिंचाई का महत्व—यह बात हर एक जानता है कि बिना पानी के भूमि से कुछ भी नही उगाया जा सकता। इसलिये जहाँ पर पर्याप्त मात्रा मे वर्षा नही होती वहा पर खेती को दूसरे ढग से पानी पहुचाया जाता है।

भारतवष की वार्षिक जल वर्षा लगभग ४५ इन्च है। स्थान-स्थान पर इसमे बहुत घटत बढत होती रहती है। उदाहरण के लिये राजपूताने मे केवल १० इन्च वर्षा होती है जबकि बगाल मे ६० से ८० इन्च तक होती है। यही नही वर्षा वर्ष के सब महीनो मे एक सी नही होती। किसी महीने मे अधिक होती है ता किसी मे कम। जैसे लगभग ९० प्रतिशत वर्षा जून से सितम्बर तक होती है और शेष १० प्रतिशत शष ८ मास मे होती है। वर्षा के मम्बन्ध मे यह भी बात बताने योग्य है कि वह अनिश्चित है कभी होती है और कभी नही भी होती है। इसी कारण भारतीय कृषि को मानसून का जुआ बताया गया है (Indian agriculture is gamble in the monsoon)।

ऐसी अवस्था मे कृषि को वर्षा के ऊपर छोडना देश मे आये दिन सकट

बुलाना है। इसी कारण सिंचाई का प्रबन्ध किया गया है। जब से देश के अन्दर सिंचाई का प्रबन्ध हुआ है तब से देश मे अकाल का भय बहुत कम हो गया है।

सिंचाई करने से एक दूसरा लाभ यह है कि इससे एक से अधिक फसलें उत्पन्न करने का अवसर प्राप्त हो जाता है और ठीक समय पर पानी पहुंचने के कारण प्रति एकड अधिक अन्न उत्पन्न होता है, उदाहरण के लिए उत्तर प्रदेश के जिन भागो मे सिंचाई होती है उन भागो मे एक एकड पर १५५० पौण्ड गेहूं तथा जौ पैदा होता है। परन्तु जिन भागो मे सिंचाई का प्रबन्ध नही है उनमे केवल ७५० या ८०० पौण्ड ही उत्पन्न होता है। यही हाल दूसरी फसलो के साथ भी है।

कुछ ऐसी फसलें भी हैं जो बिना सिंचाई के उत्पन्न ही नही हो सकती। जैसे सब्जी तथा फल को हर समय पानी चाहिये जो वर्षा से प्राप्त नही हो सकता।

यदि हमारे देश मे सिंचाई का प्रबन्ध न होता तो आज हमारे देश के पजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि भाग मरुस्थल मे बदल जाते और देश मे भीषण अकाल पडते हैं जिसमे न केवल जन धन की ही हानि होती वरन् देश की सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था नष्ट-भ्रष्ट हो जाती।

इसलिये हम यह कह सकते हैं कि भारतवर्ष मे सिंचाई की बडी आवश्यकता है। यह बात तब और भी अधिक समझ मे आ सकती है जबकि यह बताया जाय कि हमारे देश का मुख्य पेशा कृषि है और इसके ऊपर देश की ७० प्रतिशत जन-सख्या निर्भर है।

भारत में सिंचाई के साधन—

भारत म मुख्यत तीन प्रकार के साधनो से सिंचाई होती है—

(१) कुए, (२) तालाब, (३) नहर।

कुंए—हमारे देश मे कुआ सिंचाई का एक प्रमुख साधन है। इनसे हमारे देश की कुल सींची हुई भूमि की लगभग ३० प्रतिशत भूमि सींची जाती है। कुओ की सख्या हमारे देश म २२ लाख से अधिक है और उनमे लगभग १०० करोड रुपये लगे हुये हैं। १९५५-५६ मे इनसे हमारे देश की १६६ लाख एकड भूमि सींची गई।

कुए साधारणतया उन स्थानो पर पाये जाते हैं जहाँ मुलायम मिट्टी होती है तथा पानी कम गहराई पर मिल जाता है। वैसे तो सारे भारतवर्ष मे ही कुओ द्वारा सिंचाई होती है परन्तु उत्तर प्रदेश म यह सबसे अधिक सख्या मे पाये जाते हैं। उत्तर प्रदेश मे कुओ की सख्या लगभग ११ लाख से भी अधिक है। दूसरा नम्बर मद्रास का आता है जहाँ ६½ लाख कुए पाये जाते हैं। पूर्वी पजाब, बम्बई, मध्य प्रदेश और राजपूताने का नम्बर इसके पश्चात् आता है।

कुए कच्चे और पक्के दोनो प्रकार के होते हैं। कच्चे कुंए लगभग ४० रुपये की लागत पर तैयार हो जाते हैं। परन्तु पक्के कुओ पर लगभग ३००० रुपये खर्च

होते हैं। ये कुए पशु, तेल, बिजली तथा ढेकली से चलते हैं। कच्चे कुए अधिक्तर ढेकली से चलते है और सागभाजी वाले इनको बना लेते है।

उत्तर प्रदेश के नल कूप (Tube wells)—

उत्तर प्रदेश के नल कूपो को सिचाई का एक प्रमुख साधन बनाया जा रहा है। इन कुओ से बिजली की शक्ति से पानी निकाला जाता है। यह कुए बहुत सी भूमि पर सिंचाई कर सक्ते है। सरकार इस ओर विशेष ध्यान दे रही है। १९४६ के अन्त तक उत्तर प्रदेश मे १८४७ नल कूप थे। परन्तु १९५२ के अन्त म इनकी सख्या बढकर २३९२ हो गई। १९५६ के अन्त तक उत्तर प्रदेश मे ५०००' नलकूप बन गये हैं। इन कुओ से अन्त मे २ मिलियन अतिरिक्त भूमि सीची जायेगी तथा ३ लाख टन अतिरिक्त अन्न तथा दूसरी फ्सले उत्पन्न हो सकेंगी। Indo-American Technical Assistance Programme के अन्तर्गत भारत सरकार ने २९७६ ट्यूब वैल बनाये हैं तथा दूसरे २९५२ ट्यूब वैलो पर कार्य चालू हो गया है।

उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त बम्बई सरकार की भी ५०,००० कुए बनवाने की योजना है। यह कुए प्रतिवर्ष १०,००० की गति से बनाये जायगे। सरकार की ओर से ५०० रुपये अथवा लागत का २५ प्रतिशत, इन दोनो मे से जो भी कम हो, कुए बनाने वालो को सहायता के रूप मे दिया जायेगा। शेष लागत तकावी ऋण के रूप मे ३½ प्रतिशत ब्याज की दर से सरकार की ओर से दी जायेगी। इसी प्रकार मद्रास मे भी बिजली के कुए बनाने के लिये सरकार की ओर से सहायता दी जा रही है।

(२) तालाब—१९५५–५६ मे हमारे देश के कुल सीचे हुये भाग के लगभग १९ प्रतिशत भाग अर्थात् १०९ लाख एकड पर तालाबो द्वारा सिचाई की जाती है। तालाब अधिकतर दक्षिणी भारत मे पाये जाते है जहाँ पर बहुत सख्त मिट्टी है। इस प्रकार की मिट्टी मे कुए खोदने बडे कठिन हैं और वहाँ नहरें बनाना भी कठिन है क्योकि वहाँ की भूमि सख्त है और वहाँ की नदियाँ बरसात मे ही चलती हैं। यह तालाब अधिकतर मद्रास, मैसूर, बम्बई, हैदराबाद, राजपूताना तथा मध्य भारत मे पाये जाते हैं। वर्षा के पानी को इन तालाबो मे रोक दिया जाता है और फिर इस पानी को नहाने, कपडे धोने और पीने के काम मे लाया जाता है। यह तालाब छोटे बडे सभी प्रकार के होते हैं। मद्रास मे ऐसे ४०,००० तालाब हैं। बहुत से तालाब बहुत बडे हैं। इनमे बम्बई राज्यो मे फाइफ (Fife) और किर्लिंग, मेवाड मे जग समुद्र झीलें ४५ वर्गमील हैं। मेसूर राज्य का कृष्णा राज सागर और हैदराबाद का उस्मान सागर आदि बहुत बडे तालाब और झीलें हैं।

(३) नहर—वर्तमान काल मे नहरें हमारे देश की सिंचाई की मुख्य साधन है। यह अधिकतर सरकार ने बनाई हैं। १९५५–५६ मे भारत मे २३२ लाख एकड भूमि नहरो द्वारा सीची जा रही थी। कुल सीचे हुये भाग का ४१ प्रतिशत सरकारी

नहरो तथा केवल ५ २ प्रतिशत निजी नहरो मे सीचा जाता है। नहरे दो प्रकार की है—(१) बरसाती (Inundation), (२) सदा बहने वाली (Perennial)। बरसाती नहरें केवल बरसात मे ही बहती हैं। इन नहरो मे नदियो की बाढ का पानी आता है। पुराने समय मे अधिकतर इसी प्रकार की नहरे थी सदा बहने वाली नहरें हिमालय पहाड से निकले वाली नदियों से जिनमे सदा ही जल भरा रहता है, निकलती है। यह नहरें अङ्गरेजो के शासनकाल मे बहुत बडी लागत लगा कर बनाई गई थी। इन नहरो से उत्तर प्रदेश, पूर्वी पजाब, बिहार, उडीसा आदि राज्यो में सिंचाई होती है। जब ये नहरे बनी तब से इन भागो मे अकाल का भय बहुत कम हो गया है। इन दो प्रकार की नहरो के अतिरिक्त कुछ ऐसी नहरें भी है जो किसी स्थान पर पानी एकत्र करके उसमे से निकाली जाती है। इस प्रकार की नहरें दक्षिण, मध्य.प्रदेश तथा बुन्देलखण्ड मे पाई जाती हैं।

१९२१ से पूर्व नहरें तीन भागो मे विभक्त थी–(१) उत्पादक (Productive) (२) रक्षात्मक (Protective) और (३) छोटी (Minor)।

(१) उत्पादक—वे नहरे थी जिनसे बनने के १० वर्ष के भीतर इतनी आय प्राप्त हो जाये जो कि उनमे लगी हुई पू जी पर ब्याज तथा चालू खर्चो के बराबर हो। इस प्रकार की नहरे अधिकतर उत्तरी भारत तथा मद्रास मे पाई जाती हैं। १९३८–३९ मे इस प्रकार की नहरो मे ११४ करोड रुपया लगा हुआ था और उनसे ७ ६१ प्रतिशत की आय मिल रही थी।

(२) रक्षात्मक—यह वह नहरें जो लाभ उत्पादन करने के हेतु नही बनाई जाती वरन् इसलिये बनाई जाती है जिससे कि अकाल का भय कम हो जाये। यह नहरें अकाल सहायता तथा बीमा कोष (Femine Relief and Insurance Fund) मे से बनाई जाती हैं। १९३८–३९ म इस प्रकार की नहरें लगभग ३० लाख एकड भूमि को सीचती थी और उनमे ३९ करोड रुपया लगा हुआ था। इस प्रकार की नहरें अधिकतर दक्षिण भारत मे पाई जाती हैं।

(३) छोटी इनमे विविध प्रकार की छोटी-छोटी नहर सम्मिलित थी। यह प्रतिवर्ष की सरकार की आय मे से बनाई जाती है।

परन्तु १९२१ के पश्चात् इस प्रकार का विभाजन समाप्त कर दिया गया। आजकल सब नहरें या तो उत्पादक (Productive) है अथवा अनुत्पादक (Unproductive) है।

विभिन्न राज्यो की नहरे

पूर्वी पजाब की नहरें

विभाजन से पूर्व पजाब प्रान्त से नहरो की सबसे बडी व्यवस्था थी परन्तु उनमे से कई बडी बडी नहरें पाकिस्तान मे चली गई है। अब पूर्वी पजाब मे अग्रलिखित नहरें पाई जाती हैं।

(१) **पश्चिमी यमुना नहर**—यह नहर यमुना नदी से ताजवाला (जिला अम्बाला) स्थान पर निकाली गई। इससे पूर्वी पंजाब के करनाल व हिसार जिलो मे सिंचाई होती है। राजस्थान व देहली के कुल भागो पर भी इसी से सिंचाई होती है। इस नहर की शाखाओ सहित लम्बाई लगभग २००० मील है जिनसे १०.१८ लाख एकड भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(२) **सरहिन्द नहर**—यह सतलज से रोपड (जिला अम्बाला) स्थान से निकाली गई है। इसके द्वारा लुधियाना, फिरोजाबाद, हिसार जिलो तथा पटियाली संघ की पटियाला, नाभा, जींद, मलरे कोटला व कलासिया रियासतो मे सिंचाई होती है इस नहर की शाखाओ सहित लम्बाई २७३३ मील है १४.८३ लाख एकड भूमि पर सिंचाई की जाती है।

(३) **अपर बारी दोआब नहर**—यह नहर पठानकोट के निकट माधोपुर स्थान से रावी नदी से निकाली गई। इसके द्वारा गुरुदासपुर व अमृतसर जिलो म सिंचाई होती है। नहर के बनाय जाने से पूर्व इन भागो मे जंगल थे जिनको साफ करके यहा खेती की जाती है। इससे ८.२८ लाख एकड भूमि पर सिंचाई होती है।

(४) **सतलज घाटी की नहर**—यह नहर सतलज नदी पर फिरोजपुर स्थान से निकाली गई है। यह राजस्तान के बीकानेर राज्य मे सिंचाई करती है।

उत्तर प्रदेश की नहरे

(१) **ऊपरी गंगा नहर**—यह नहर हरिद्वार से निकाली गई है। हरिद्वार मे अलीगढ तक भूमि का ढाल अधिक होने के कारण कई स्थानो पर बाध लगाकर झरने बनाये गये हैं जिनसे बिजली बनाने का काम लिया जाता है। यह १७.२७ लाख एकड पर सिंचाई करती है।

(२) **निचली गंगा की नहर**—यह नहर हरिदुआगंज (जिला बुलन्दशहर) से गंगा नदी से निकाली गई है। इस नहर तथा इसकी शाखाओ की लम्बाई लगभग ५१२४ मील है और यह लगभग ११.५२ लाख एकड भूमि को सींचती है। यह नहर कासगंज के पास ऊपरी नहर से मिल गई है जिससे ऊपरी नहर मे पानी की मात्रा बहुत बढ जाती है। परन्तु यह फिर उससे अलग होकर कानपुर व इटावा जिलो मे सिंचाई करती है।

(३) **पूर्वी जमुना नहर**—यह नहर ताजवाला जिला (अम्बाला) पर जमुना नदी से निकाली गई है। इसकी लम्बाई ९०० मील है तथा यह ४ लाख एकड भूमि को सींचती है। सहारनपुर, मुजफ्फरनगर तथा मेरठ जिलो मे इसी नहर से सिंचाई होती है। अन्त मे नहर दिल्ली के पास जमुना नदी से मिल जाती है। अभी हाल ही मे इसको चौडा करके अधिक भूमि को सींचने की व्यवस्था की गई।

(४) **आगरा नगर**—यह नहर दिल्ली के दाई ओर ११ मील नीचे ओखला स्थान से निकाली गई है। इसके द्वारा आगरा, मथुरा जिलो तथा भरतपुर रियासत

के शुष्क भागो मे सिंचाई की जाती है। यह लगभग १००० मील लम्बी है और लगभग ४४७ लाख एकड भूमि को सींचती है।

(५) शारदा नहर–यह बनबसा (बमदेव) स्थान मे शारदा नदी म से निकाली गई है। यह उत्तर प्रदेश की सबसे बडी नहर है। इसकी अनेक छोटी छोटी शाखायें है। इसमे मुख्यत अवध व रुहेलखण्ड प्रदेश मे सिंचाई होती है। इसके द्वारा लगभग १६७२ लाख एकड भूमि पर सिंचाई होती है।

इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश मे बतवा नहर, केन नहर घागरा नहर धासन नहर, माल नहर आदि भी हैं।
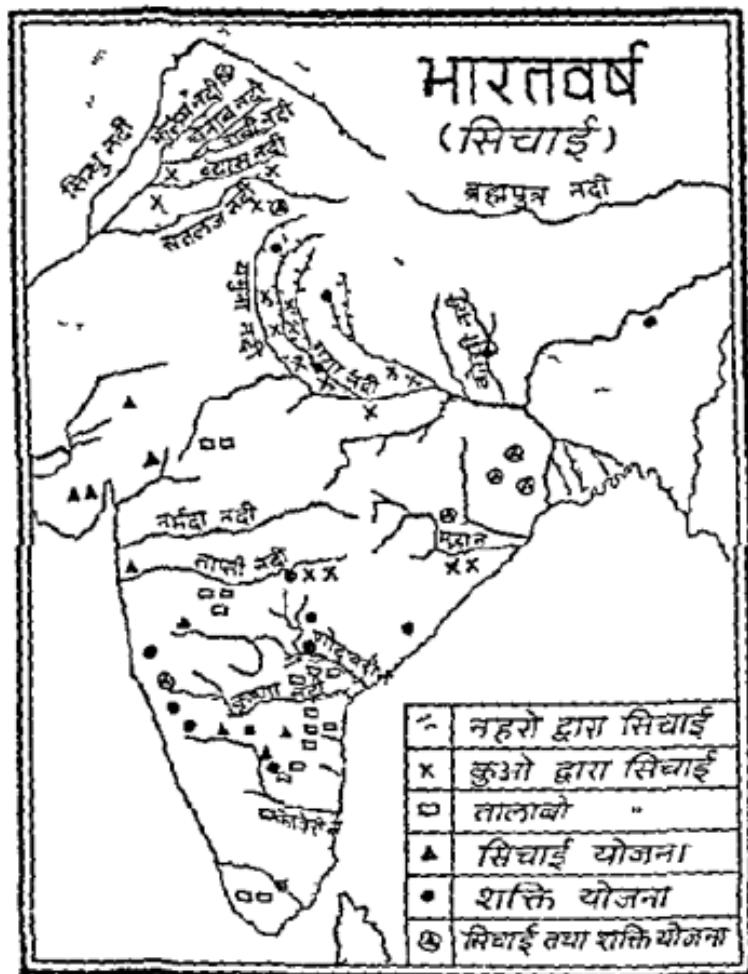
मद्रास की नहरे

मद्रास के उत्तरी भाग मे कुल छोटी छोटी नहरें अकाल के समय मनुष्यो की सहायता करने की दृष्टि से बनाई गई हैं। पैरियर नहर प्रणाली इस राज्य की सब स महत्वपूर्ण प्रणाली है। पैरियर नदी पहले अरब सागर मे जाकर गिरती थी परन्तु

अब यह मदुरा जिले को पानी देती है। इसके द्वारा लगभग १ ४३ लाख एकड भूमि सीची जाती है। इस राज्य की दूसरी नहर कावेरी मेट्टूर प्रोजेक्ट है जिससे कावेरी डेल्टे मे ३ ०१ लाख एकड पर सिचाई होती है।

बम्बई की नहर

बम्बई राज्य मे दो महत्वपूर्ण बाँध हैं—

(१) भदारदारा बाध (Bhandardara Dam)—यह बाध भारत मे सबसे बडा बाध है। यह गोदावरी की एक सहायक नदी का पानी लेता है और अहमदनगर जिले मे ६० हजार एकड भूमि की सिचाई करता है।

(२) लायड बाँध (Lloyd Dam)—यह कृष्णा नदी की एक सहायक नदी पर बनाया गया है और पूना तथा शोलापुर जिलो की सिचाई करता है।

भारतवर्ष मे सिचाई के वर्तमान साधन व भविष्य की योजनायें—

भारतवर्ष मे १९५५-५६ मे ३१ ८२ करोड एकड पर खेती होती थी। इस क्षेत्र मे से ५ ६२ करोड एकड भूमि पर सिचाई होती थी। यह क्षेत्र कुल का १८ प्रतिशत के लगभग था। इसमे से लगभग २ ३१ करोड एकड भूमि पर नहरो से, १ ०९ करोड एकड पर तालावो द्वारा, १ ६६ करोड एकड पर कुओ द्वारा तथा ५५ लाख एकड पर अन्य साधनो द्वारा सीची जाती थी। भारतवर्ष मे ससार के सब देशो मे अधिक क्षेत्र पर सिचाई होती है। भारतवर्ष का सीचा हुआ क्षेत्र सयुक्त राष्ट्र अमरीका का २½ गुना है। यह क्षेत्र सयुक्त राष्ट्र अमरीका, रूस, जापान तथा इटली के कुल सीचे गये क्षत्र से भी बडा है। परन्तु इन सब देशो का क्षेत्रफल भारत के क्षत्रफल से दस गुना है। परन्तु अभी तक भारतवर्ष मे सिचाई के लिये बहुत कुछ करना शेष है। अभी तक हमारे देश की नदियो का ५ ६ प्रतिशत पानी उपयोगी कामो मे प्रयोग किया जाता है। शेष ९४ ४ प्रतिशत पानी समुद्र मे बहकर चला जाता है। अब इस पानी को काम मे लाने के लिये देश के भिन्न-भिन्न भागो मे ३०० योजनायें चल रही हैं। जिन पर लगभग ७६५ करोड रुपये खर्च होने की आशा है। इनमे से १२ को हम बडी योजनायें कह सकते हैं और शेष को छोटी बडी योजनाओ पर १० करोड रुपये से अधिक, मध्यम श्रेणी की योजनाओ पर २ करोड से १० करोड तक तथा छोटी योजनाओ पर २ करोड रुपये से कम खच होगा। यह योजनायें ५ से १० वर्ष तक पूरी होने की आशा है। इन योजनाओ से योजना के अन्तिम वर्ष मे ८६ लाख एकड भूमि के सीचे जाने की आशा है। परन्तु जब यह योजनायें पूर्ण रूप से उन्नत हो जायेगी तब उनसे २ करोड २० लाख भूमि सीची जायगी। इन योजनाओं से अग्रलिखित ढङ्ग से लाभ प्राप्त होने का आशा है—

वर्ष	व्यय (करोड रुपये में)	अतिरिक्त सिंचाई (एकड में)	अतिरिक्त शक्ति (किलोवाट मे)
१९५१-५२	८५	६४६,०००	५८,०००
१९५२-५३	१२१	१,८९०,०००	२३६,०००
१९५३-५४	१२७	३,५५५,०००	७२४,०००
१९५४-५५	१०७	५,७४६,०००	८७५,०००
१९५५-५६	७८	८,५३३,०००	१०८२,०००
अन्त में		१६,९४२,०००	१,४६५,०००

जबकि प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्त तक कुल सींचा हुआ क्षेत्र ६७ मिलियन एकड होगा दूसरी योजना के अन्त तक वह ८८ मिलियन एकड होगा। प्रथम पचवर्षीय योजना की कुछ सिंचाई की योजनायें दूसरी योजना मे भी चलती रहेंगी। इनके अतिरिक्त कुछ नई योजनायें भी चालू की जायेंगी। दूसरी योजना मे सिंचाई व बाढ नियन्त्रण के लिये ४८६ करोड रुपये रखे गये है।

इन योजनाओ मे से कुछ निम्नलिखित है—

(१) भाखडा नगल योजना (पंजाब)

इस योजना के अन्तर्गत सतलज नदी पर भाखडा नामक गाँव मे एक बाँध बनाया गया है। इससे ३६ लाख एकड भूमि सींचे जाने की आशा है तथा इससे १३ लाख टन अतिरिक्त गल्ला प्राप्त हो सकेगा। कुछ इलाको म तो इससे सिंचाई भी होने लगी है। १९५७-५८ मे इस नहर से पजाब और राजस्थान मे लगभग १५ लाख एकड पर सिंचाई हुई। ६६ ७ लाख एकड भूमि पर इस का अधिकार है। पूर्ण होने पर यह ३६ लाख एकड भूमि पर सिंचाई करेगी।

(२) दामोदर घाटी योजना (बङ्गाल और बिहार)

बङ्गाल और बिहार की सरकारों ने मिलकर एक 'दामोदर घाटी की सयुक्त तथा बहु-उद्देश्य वाली उन्नतिकारी योजना' (Unified Multipurpose Damodar Valley Development Project) बनाई है। इस योजना के अन्तगत दामोदर नदी पर एक बाँध बनाया जाने वाला है जिससे बाढ रोकने, सिंचाई करने, बिजली पैदा करने आदि का काम लिया जायेगा। इस योजना से लगभग १० लाख एकड भूमि को पानी मिलेगा और दामोदर नदी मे जो बाढ आती रहती हैं वह रुक जायेंगी। १९५२-५३ मे इससे ५ हजार एकड भूमि को पानी मिला। दामोदर घाटी के चार बाँध हैं जिनमे से तलैया बाँध का उद्घाटन प्रधान मन्त्री द्वारा २१ फरवरी १९५३ ई० को हो चुका है। इससे २४,००० एकड खरीफ तथा ७५,००० एकड रबी की फसल सींची जायगी। इसका दूसरा बाँध कोनर बाँध है जिसका उद्घाटन मई १९५४ मे हो चुका है। इससे १,०४,००० एकड भूमि सींची जायेगी। इसके तीसरे बाँध को १९५७ ई० मे पूरा किया गया।

(३) हीराकुड योजना (उडीसा)

उडीसा राज्य मे महानदी पर हीराकुड नामक योजना बनाई गई है। इसके अन्तर्गत टीका पारा, नरज और हीराकुण्ड नामक स्थानो पर महानदी पर बाँध बाँधने की योजना है। इससे लगभग २२.५ लाख एकड भूमि सीची जायेगी। इस योजना की काफी प्रगति हो चुकी है। १९५६ ई० मे बारगढ नहर से पानी छोड दिया गया है।

(४) कोसी योजना (बिहार और नैपाल)

इस योजना के अन्तर्गत एक बाँध नैपाल मे और दूसरा नैपाल और बिहार की सीमा पर बनाया जायेगा। इसमे पहला बाँध नैपाल की १० लाख एकड भूमि को और दूसरा बाँध बिहार की १३.९७ लाख एकड भूमि को सीचेगा।

(५) तुङ्गभद्रा योजना (आंध्र, मैसूर)

इस योजना मे मैसूर, आँध्र व हैदराबाद की ८.२ लाख एकड भूमि सीची जायेगी और २१०,००० टन अतिरिक्त गल्ला प्राप्त हो सकेगा।

(६) ककरापारा योजना (बम्बई)

इस योजना से सूरत व बरोच की ६,५२,००० एकड भूमि पर सिंचाई होगी। यह जून १९३५ मे चालू हो चुकी है। इससे १६०,००० टन अतिरिक्त गल्ला तथा १६००० टन अतिरिक्त कपास मिल सकेगी।

(७) पीपरी योजना (उत्तर प्रदेश व रीवा)

इस योजना से १९ लाख एकड भूमि पर सिंचाई की जाने की आशा है।

इनके अतिरिक्त द्वितीय योजना काल मे २० नई योजनायें चालू की जायगी जिनमे से केवल १८ पर ५ करोड रु० से अधिक खर्च होगा। इन सब पर ४५० करोड रु० खर्च होगे जिसमे से लगभग आधा खर्च १९६०–६१ तक हो जायेगा।

बडी-बडी योजनाओ के अतिरिक्त योजना मे बहुत सी छोटी छोटी योजनाय भी है। इनमे पुराने तालाबो व कुओ से बिजली के पम्पो द्वारा पानी निकालना, छोटे छोटे बाँध अथवा बम्बे बनाना आदि सम्मिलित हैं। इस प्रकार ८.२ मिलियन एकड पर इन योजनाओ द्वारा सिंचाई हो सकेगी। इनके अतिरिक्त छोटी-छोटी सहायक योजनाओ से ३ मिलियन एकड पर सिचाई हो सकेगी। इन पर ३० करोड रु० खर्च होगा। इस प्रकार छोटी छोटी योजनाओ से ७७ करोड रु० खच करके ११.२ मिलियन एकड पर सिंचाई हो सकेगी। इस प्रकार सब प्रकार की योजनाओ से १९.७ मिलियन एकड पर सिंचाई करने की योजना है। इनसे ४२ मिलियन टन अतिरिक्त गल्ला प्राप्त हो सकेगा।

प्रथम पचवर्षीय योजना में १६.३ मिलियन एकड भूमि पर सिचाई का प्रबन्ध किया गया जिसमे से १० मिलियन एकड छोटी तथा ६.३ मिलियन एकड

बड़ी योजनाओ द्वारा हुआ। बडी व छोटी सभी प्रकार की योजनाओ की काफी प्रगति हुई है। बडी योजनाओं की प्रगति के विषय मे हम पहले ही लिख चुके हैं। छोटी योजनाओ मे १५६३४८ कुए बनाये गये। ६८४७२ कुओ की मरम्मत की गई, ३१३४ तालाब बनाय गये तथा ५७८८ की मरम्मत की गई, ३८४८५ रहट बुए बनाय गये, ३३८७२ बाँध तथा बम्बे बनाये अथवा उन्नत किये गये, १८६६४ पम्प नदियो तथा बम्बो पर बनाये गये। इनके अतिरिक्त १४१५४ सिंचाई की दूसरी योजनाये भी पूरी की गई।

Q 20 Describe plans contemplated to meet the manurial deficiencies of our soil.

प्रश्न २०—हमारी मिट्टी की खाद सम्बन्धी कमी को पूरा करने की जो योजनायें विचारी गई हैं उनको बताइये।

उत्तर—यदि हम राष्ट्रीय आधार पर खेती की उत्पत्ति को बढाना चाह तो उसके लिये खाद का एक महत्वपूर्ण स्थान होगा। खाद की आवश्यकता न केवल खाद्य पदार्थों के लिये ही होती है वरन् व्यापारिक फसलो जैसे जूट, कपास आदि के लिये भी होती है। नदी योजनाओ के पूर्ण होने पर तो खाद की और भी अधिक आवश्यकता होगी क्योकि बिना खाद के केवल पानी की सहायता से फसल नही उगाई जा सकती। द्वितीय पचवर्षीय योजनाकाल मे आशा की जाती है कि देश म खाद की सहायता से २५ लाख टन अधिक गल्ला उत्पन्न हो सकेगा जो कि योजनाकाल मे अधिक उत्पन्न होने वाले गल्ले का २० प्रतिशत होगा। इसके अतिरिक्त यह भी बात है कि बहुत पुराने समय से प्रयोग मे लाने के कारण भारतवर्ष की मिट्टी की उर्वरा शक्ति अपनी न्यूनतम सीमा पर पहुच गई है। भूमि की इस खाई हुई शक्ति को प्राप्त करने के लिये हमको बहुत अधिक खाद की आवश्यकता है क्योंकि कहावत है कि जब तक भूमि रहेगी तब तक बीज का समय तथा फसल कभी समाप्त न होगे।

भूमि पर खेती करने से उसकी उर्वरा शक्ति नष्ट हो जाती है। इस कमी की पूर्ति के लिये ही खाद देने की आवश्यकता पडती है। परन्तु सब स्थानो म एकसी खाद नही दी जा सकती क्योकि सब स्थानो की मिट्टी मे एक से ही पदार्थों की कमी नही होती। जिस मिट्टी मे जिस-जिस प्रकार के पदार्थों की आवश्यकता होती है उसी प्रकार की उस मिट्टी मे खाद देनी पडती है। भारतवर्ष की मिट्टी में (Nitrate), फोसफेट (Phosphate), कार्बोनेट (Carbonates), सलफट (Sulphate), चूना (Calcium) तथा नमी (Humus) की कमी है। इसलिये भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिये यह आवश्यक है कि इन सब चीजो को भूमि

की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के लिये यह आवश्यक है कि इन सब चीजो को भूमि को दिया जाये। खाद कई प्रकार की होती है जैसे, (१) गोबर की खाद, (२) मल-मूत्र की खाद, (३) हड्डी की खाद, (४) खली की खाद, (५) हरी खाद, (६) मछलियो की खाद, (७) रासायनिक खाद आदि।

(१) गोबर की खाद—हमारे देश मे सबसे अधिक गोबर की खाद काम मे लाई जाती है। परन्तु यह खाद भी मात्रा मे कम है। पश्चिमी बङ्गाल के हुगली तथा चौबीस परगने के क्षेत्र मे किये गये एक अनुसधान से पता चला है प्रति एकड गोबर की खाद का औसत हुगली मे १२४ मन तथा चौबीस परगने मे ११४ मन है जबकि आवश्यकता फसल के अनुसार १०० मन से ४०० मन की है। यह खाद हमारी मिट्टी को नत्रजन (Nitrogen) तथा नमी प्रदान करती है। परन्तु हमारे देश मे इस खाद को ठीक प्रकार तैयार नही किया जाता तथा बहुत सी खाद उपलो के रूप मे नष्ट कर दी जाती है। उपलो के रूप मे नष्ट की गई खाद का अनुमान २५० मिलियन टन से लेकर ५५० मिलियन टन तक है। इसलिए इस बात की आवश्यकता है कि जहा तक हो किसान को वन विभाग से सस्ती लकडी मिल जाय। इसके अतिरिक्त किसानो को बताया जाये कि खाद किस प्रकार तैयार की जा सकती है। अच्छी खाद तैयार करने के लिये किसानो को गोबर कई महीनो तक गड्ढो मे रखना पडेगा। गड्ढो मे रखने से गोबर ठीक प्रकार सड जाता है और उससे अच्छी खाद तैयार होती है।

(२) मल-मूत्र की खाद—गोबर के अतिरिक्त मनुष्य के मल-मूत्र से भी अच्छी खाद तैयार हो जाती है। इस खाद मे नाइट्रट, पुटास और फासफेट बहुत अधिक मात्रा मे होती है। परन्तु अभी तक इसका कोई विशेष उपयोग नही किया गया है। गांव मे तो इसका कोई उपयोग नही किया जाता और शहरो मे भी यह बहुत कम काम मे लाई जाती है। यदि गावो मे सार्वजनिक शौच-कूप (Pit laterines) बना दिये जायें तो गाँव गन्दगी से भी बच सकता है और उससे अच्छी खाद भी मिल सकती है। बड बडे शहरो मे जहाँ नल और नदियो का गन्दा पानी बहुत बडी मात्रा मे एकत्र होता है। वहा वैज्ञानिक क्रियाओ द्वारा मल को दुर्गन्धरहित और सूखा बनाया जा सकता है। उसके उपयोग मे किसान को कोई आपत्ति न होगी।

आजकल इस ढङ्ग से खाद तैयार करने का काम बड जोरो से चल रहा है। सामूहिक विकास योजना तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा योजना वाले क्षेत्रो मे २ ४ लाख गड्ढ खोदे जा चुके है। इस कार्य के लिये छाटी हुई ३००० जगहो मे से १७२९ जगहो मे १९५३-५४ मे खाद बनाने का काम चल रहा था और शहर मे इस प्रकार १८ ५० लाख टन खाद तैयार की गई है।

खाद तैयार करने का जापानी ढग—आजकल हमारे देश मे खाद तैयार करने के इस ढग पर बडा जोर दिया जा रहा है। इस ढङ्ग के अनुसार कूडा करकट,

सडी गली सब्जी व फल, हड्डियाँ, पखाना, गोवर, बीट आदि को एक जगह मिला दिया जाता है और उससे खाद तैयार की जाती है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि ५००० जनसख्या से अधिक वाले ४२२३ नगरो के कूडे करकट से १ करोड मन अच्छी खाद तैयार हो सकती है और उससे १½ या २ करोड टन गल्ला प्रतिवर्ष उत्पन्न हो सकता है।

१९५७–५८ मे २२ २ लाख टन कम्पोस्ट खाद तैयार की गई। १९५८–५९ का ध्येय बिन्दु २६ ४० लाख टन है। १९५७–५८ मे १९ २५ लाख टन कम्पोस्ट बाटा गया। प्रमुख शहरो मे १५३० लाख खाद के पानी का प्रयोग करने के लिये Sewage Utilization Schemes जारी रखी गई। स्थानीय खाद की कमी को दूर करने के लिये चार योजनायें कार्यान्वित की गई जिससे कि (१) राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रो मे स्थानीय खाद के साधनो का अधिक अच्छा उपयोग हो सके (२) ग्राम पचायतो मे कम्पोस्ट खाद उत्पन्न की जा सके, (३) छोटे-छोटे गाँवो मे पायलेट आधार पर नाईट-सॉयल तैयार हो सके, (४) हरी खाद के प्रयोग का प्रचार किया जाय। इस योजना के अन्तर्गत १५१९ राष्ट्रीय विस्तार सेवा खडो मे तथा विभिन्न राज्यो मे ७९२ पचायतो मे इस कार्य को पूरा करने की अनुमति दी गई। बहुत से राज्य सरकारो ने हरी खाद का प्रचार करने के लिये हरी खाद क बीज बाटे। बिहार मे नाईट-सायल तथा गाव की गन्दगी से कम्पोस्ट तैयार करने क लिये एक पायलेट प्रोजेक्ट तैयार किया गया।

(३) हड्डी की खाद—हमारे देश मे धार्मिक भावनाओ के कारण हड्डी की खाद का बहुत कम प्रयोग किया जाता है। यहा से प्रतिवर्ष बहुत सी हड्डिया तथा उनका चूरा विदेशो को भेजा जाता है। परन्तु यदि हड्डियो को खाद क रूप मे लाया जाये तो देश को बहुत लाभ हो सकता है।

(४) खली की खाद—तेल निकालने के पश्चात् जो खली बचती है उसको भी खाद के रूप मे काम मे लाया जा सकता है। परन्तु अभी तक हमारे देश मे खली की खाद का बहुत कम प्रयोग हुआ है। इसका पहला कारण यह है कि यह भारतीय किसान की गरीबी के कारण उसकी क्रय-शक्ति के बाहर है। दूसरे, हमारे देश से प्रतिवर्ष अधिकतर तेल निकालने के बीजो का निर्यात कर दिया जाता है। इसलिय खली की खाद यहाँ कम मिलती है। यदि हमारे देश से तेल निकालने के बीजो का निर्यात न किया जाय तो इससे बडा लाभ होगा।

(५) हरी खाद—उन स्थानो मे जहाँ पानी आसानी से मिल सकता है अथवा जहाँ वर्षा खूब होती है, हरी खाद का प्रयोग किया जा सकता है। कुछ फसले, जैसे मूग, अरहर, सनई, ढैचा आदि मे नाइट्रेट बहुत अधिक मात्रा मे होती है। यदि इन फसलो को उगाकर उनके कुछ बडा हो जाने पर खेत मे हल चला दिया जाय तो बहुत अच्छी खाद मिल सकती है। परन्तु इसमे दो कठिनाइयाँ हैं। पहली, यह कि यह बहुत महगी है और किसान अपनी निर्धनता के कारण उसको काम मे नही ला

सकता। दूसरे, यह पानी बहुत चाहती है और हमारे देश मे पहले ही पानी की कमी है इसलिये यह कम काम मे लाई जाती है।

(६) मछलियो की खाद—मछलियो का भी उपयोग खाद के रूप मे किया जा सकता है। परन्तु इस प्रकार की खाद भारत के समुद्र-तट के मैदानो में ही प्रयोग की जा सकती है। समुद्र के दूर के मैदानो मे इस खाद का प्रयोग नही हो सकता।

(७) रासायनिक खाद—इनके अतिरिक्त सल्फेट ऑफ अमोनिया तथा नाइट्रेट का भी उपयोग खाद के रूप मे किया जा सकता है। हमारे देश में इस प्रकार की खाद तैयार करने के दो कारखाने है। एक तो बिहार के सिंदरी नगर मे और दूसरा ट्रावनकोर म है। परन्तु यह खाद बहुत महगी है। इसलिये इसका प्रयोग अभी तक हमारे देश मे कम किया जाता है। १६५३ ई० मे हमारे देश मे ४ ३ लाख टन रासायनिक खाद का प्रयोग किया गया। योजना मे १६५५-५६ के लिये ६ १ लाख टन का ध्येय रखा गया है। यह ध्यय पूरा हो चुका है। १६५६ मे इस दश म ६७५,००० टन अमोनिया सल्फेट तथा १ लाख टन सुपर फास्फेट का उपभाग किया जा रहा था। दूसरी योजना काल के लिय इनके उपभोग का ध्येय क्रमश १८ ५ लाख टन तथा ७ ० लाख टन रखा गया है। यह अनुमान लगाया जाता है कि खाद के अधिक उपभोग के कारण देश मे २५ लाख टन अतिरिक्त गल्ला उत्पन्न हो जायगा। खाद की इस बढती हुई माग को पूरा करने के लिय तीन नई फैक्ट्री खोली जायेंगी। यह नदल, रूरकेला तथा नैवेल्ली मे स्थित होगी। दिसम्बर १६५७ ई० मे श्री अजित प्रसाद खाद्य मन्त्री ने यह स्वीकार किया है कि इस देश मे खाद की पूर्ति आवश्यकता मे २५ प्रतिशत है तथा अगले वर्ष की कमी का अनुमान ४०% है। इस कमी का कारण यह बताया गया है कि विदेशी विनिमय की कमी के कारण इसका आयात नही किया जा सकता। १६५८-५६ मे इस प्रकार की खाद की माग ६ लाख टन थी परन्तु देश की पूर्ति ६ ०२ लाख टन थी जिसमे से ३ ३५ लाख टन सिंदरी से ० ६५ लाख टन देशी साधनो से तथा २ ०२ लाख टन का आयात किया गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश में यद्यपि किसान नई प्रकार को अच्छी खाद काम मे ला सकता है परन्तु वह उनमे से बहुत सी काम मे नही ला सकता जैसे, खली, हरी तथा रासायनिक खाद तो वह महगी होने के कारण काम मे नही ला सकता। इसके अतिरिक्त ये खादे पानी बहुत चाहती है और हमारे देश मे सिंचाई के साधनो की पहले ही कमी है। इसलिये ये खाद कम काम म लाई जाती है। हड्डी व मछली की खादे किसान धार्मिक भावनाओ के कारण काम मे नहीं लाता। मल-मूत्र से भी खाद तैयार नहीं की जाती। इन सबके पश्चात् केवल गोबर की खाद ही बनती है। जिसको किसान काम मे लाता है। परन्तु इसको ठीक प्रकार तैयार न कर सकने के कारण इससे इतना अधिक लाभ नही पहुचता जितना कि

पहुँचना चाहिये । इसलिये इस बात की आवश्यकता है कि किसान को खाद तैयार करने का ढङ्ग बताया जाय और विशेषत उसको जापानी ढङ्ग से खाद तैयार करने का ढङ्ग तथा उस खाद का लाभ बताया जाय । बन-विभाग को भी गावो मे सस्ती लकडी बेचनी चाहिये जिससे कि किसान गोबर को उपलो के रूप मे न जलाये । यह सब करने से हमारे देश मे खाद की कमी दूर हो सकती है ।

खाद जांच समिति की सिफारिश

ज्ञात हुआ है कि खाद जाच समिति ने देश मे खाद के उत्पादन और नियत्रण के लिये एक केन्द्रीय बोर्ड स्थापित करने की सिफारिश की है । समिति का सुझाव है कि देश की तमाम फैक्टरियां, चाहे वे सरकारी हो अथवा सरकार से सहायता प्राप्त करती हो, बोर्ड के आधीन कार्य करे ।

केन्द्रीय उत्पादन मन्त्री श्री के० सी० रेड्डी ने यहा बताया कि भाखडा नगल के खाद कारखाना बनाने के लिये विदेशी फर्मों के जो प्रस्ताव आये हैं उन पर विचार के लिये एक टैक्नीकल समिति नियुक्त की गई है जिसके अध्यक्ष डा० ए० नागराज राव हैं । इस कारखाने का लक्ष्य प्रतिवर्ष दो लाख टन अमोनियम नाइट्रेट तैयार करना होगा । रूरकेला (उडीसा) में भी एक फैक्टरी स्थापित होगी जिससे ४,४२,००० टन नाइट्रोलाइम स्टोन उत्पन्न होगा ।

ज्ञात हुआ है कि खाद जाच समिति ने यह भी सिफारिश की है कि दक्षिणी आरकोट मे नैवेली नामक स्थान पर अथवा विजयवाडा मे एक और फैक्टरी खोली जाय ।

दो अन्य कारखाने ट्राम्बे व इटारसी मे भी खोलने का सुझाव दिया गया है ।

खाद से लाभ—रासायनिक खाद के प्रयोग से सभी प्रकार की फसलो को लाभ होता है । अनुभवो से पता लगा है कि अमोनियम सल्फेट तथा सुपर फास्फेट का प्रयोग धान उगाने मे करने मे क्रमश २७ रु० तथा ११ रु० प्रति एकड का लाभ होता है । नत्रजन के प्रयोग से लाभ १०० प्रतिशत है । इसका प्रयोग पजाब मे करने से ५० रु० प्रति एकड का लाभ हुआ है । फास्फोरस का प्रयोग मध्यम काली मिट्टी तथा लाल मिट्टी से क्रमश ५० रुपये तथा ३२ रुपये प्रति एकड का लाभ हुआ है ।

Q. 21. 'The cattle problem is the crux of Indian agriculture.' Appraise the truth of this statement.

प्रश्न २१—'पशु समस्या भारतीय कृषि की पहेली है।' इस कथन की सत्यता का मूल्याकन कीजिये ।

पशुओं का महत्व—पशु भारतीय कृषक का सबसे बहुमूल्य धन है । एम० एल० डार्लिङ्ग ने ठीक ही कहा है "बिना उनके खेत बिना जुते पडे रहते हैं, गोदाम और

खत्ती खाली रहती है, खाने-पीने का आधा स्वाद जाता रहता है, क्योकि एक माँस न खाने वाले देश मे इससे खराब बात क्या हो सकती है कि लोगो को न दूध मिले, न मक्खन, न घी ?" भारतवर्ष मे पशुओ का महत्व इस कथन से समझ मे आ सकता है।

वास्तव मे भारतवर्ष मे पशु किसान का एक मात्र सहारा है। बिना उसके वह कोई काम नही कर सकता। उसकी सहायता से वह अपने खेतो को जोतता है। उसी के द्वारा वह कुए से पानी निकालकर अपने खेतो को सीचता है। उसी की खाद को वह खेतो मे देकर भूमि की उर्वरा शक्ति को बढाता है। उसी के द्वारा वह भसे से गेहू को अलग करता है। उसी को गाडी मे जोतकर वह शहर मे अपनी फसल को बेचने के लिये ले जाता है। उसी को गाडी मे जोतकर वह भाडा कमाता है उसी के द्वारा मक्खन, पनीर का उद्योग चलाकर अपनी आय को बढाता है। उसी के दूध व घी से वह अपने खाने की कमी को पूरा करता है। इस प्रकार भारतीय कृषक के लिये पशु का वही महत्व है जो उसके लिये उसके हाथो और पैरो का है। बिना पशु के भारतीय किसान कुछ भी नही कर सकता।

पशुओ से भारत की राष्ट्रीय आय मे प्रतिवर्ष १,००० करोड रुपये की वृद्धि होती है। कुल राष्ट्रीय आय का ३०० करोड रुपया दूध तथा उससे सम्बन्धित उद्योगो से, ४० करोड रुपया खालो व चमडे से, २७० करोड रुपया खाद से, **१६१** करोड रुपया सामान ढोने से तथा ३००–४०० करोड रुपये का खेत परिश्रम के रूप मे प्राप्त होता है।

पशुओं की हीन दशा—परन्तु भारतवर्ष मे पशुओ का इतना महत्व होते हुए भी उनकी दशा बडी खराब है। वे निर्बल और आधे भूखे रहते है। उनकी कार्य शक्ति बहुत कम है। गायो ने दूध तक देना छोड दिया है। बैल नाटे निर्बल तथा दुबले-पतले होते है। वे खेती के योग्य नही हैं। इसका कारण यह है कि भारतवर्ष मे उनकी सख्या बहुत अधिक है। १९५६ की जनगणना के अनुसार हमारे देश मे १५ ८९ करोड गाये, बैल तथा ४ करोड ४९ लाख भैसे थी तथा पशुओ की कुल सख्या ३० करोड ६५ लाख थी। भारतवर्ष मे पशुओ की सख्या ससार की $\frac{1}{3}$ तथा एशिया की $\frac{3}{4}$ है। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि भारतवर्ष मे प्रति १०० एकड बोये हुये क्षेत्र के पीछे ३७ पशु है। पश्चिमी बङ्गाल के हुगली तथा २४ परगना क्षेत्रो मे किये गये एक अनुसधान से पता चला है कि हुगली जिले मे पशुओ की सख्या के प्रति १०० एकड के पीछे ५८ है तथा २४ परगनो मे ६० है। इसके विपरीत हालैंड मे केवल ३८ और मिस्र मे केवल २५ ही हैं।

कृषि कमीशन ने बताया है कि पशुओ की गणना से पता चलता है किसी जिले मे बैलो की सख्या उनकी माँग पर निर्भर होती है। किसी स्थान पर पशुओ को पालने की जितनी कम सुविधाये प्राप्त है उतने ही अधिक पशु वहाँ पर रक्खे जाते है। जैसे ही पशुओ की सख्या बढती है वैसे ही पशुओ को चारा कम मिलता

है। चारे की कमी के कारण पशु कमजोर हो जाते हैं। पशुओ की कमजोरी के कारण और अधिक पशु रखने पडते हैं और पशुओ की अधिकता के कारण चारे की समस्या और भीषण हो जाती है। इस प्रकार एक कुचक्र (Vicious circle) बन जाता है।

पशुओं की हीन दशा के कारण—पशुओ की हीन दशा के तीन कारण हैं—(१) चारे की कमी, (२) नस्ल का खराब होना तथा (३) पशुओ के रोग।

(१) चारे की कमी—भारतवर्ष मे पशुओ को खिलाने के लिये चारे की बडी कमी है। यहाँ पर जैसे-जैसे जनसख्या बढती जाती है वैसे ही फसलें उगाने के लिये अधिक भूमि की आवश्यकता पडती है। इसके फलस्वरूप चागाहो की कमी होती जाती है। चारगाहो की कमी होने के कारण चारे की समस्या बढती जाती है। चरागाहो की कमी होने पर भी किसान ने पशुओ को पालने के ढङ्ग को नही बदला। वह दूध देने वाले पशुओ को केवल तभी तक पर्याप्त भोजन देता है जब तक कि व दूध देते हैं, उसक पश्चात् वह उनको चरने के लिये छोड देता है। जब तक हमारे देश मे चरागाहे अधिक थी तब तक तो पशु अपना पट भर लेते थे परन्तु अब वे ऐसा नही कर सकते। देखने मे आता है कि भारतवर्ष मे दिसम्बर से लेकर जौलाई तक चारे की बहुत कमी रहती है। मार्च और जून के बीच मे तो घास भी गर्मी के कारण सूख जाती हैं। इसलिये इस समय पशुओ को बहुत कम चारा मिल पाता है। व इधर-उधर खाने की तलाश मे घूमते रहते हैं और जो कुछ भी उनको इधर-उधर मिलता है उसी को खा जाते हैं। भूखे पशुओ को कपडा, कागज, गली-सडी चीजें तक खाते हुये देखा गया है। पशुओ की यह दशा वास्तव मे बडी खराब है और इसमे सुधार करने की आवश्यकता है।

भारत मे चारे की क्या स्थिति है इस का पता Indian Council of Agricultral Reserch द्वारा छापी गई एक पुस्तक 'Dairying in India' से लग सकता है। इसके पृष्ठ २ पर इस प्रकार लिखा है—पशुओ की एक पर्याप्त बडी सख्या सिवाय वर्षा ऋतु के लघुकालीन समय के या तो कम चारा पाती है या रस भरा चारा पाती ही नही। प्राकृतिक घासों के बडे-बडे क्षेत्र या तो काम मे लाये ही नही जाते या बुरी प्रकार से काम मे लाये जाते है। सूखे चारो की स्थिति कुछ ठीक है परन्तु वे कम शक्ति प्रदान करने वाले होते हैं। साइलेज अथवा सुरक्षित हरे चारे की उपयोगिता जो कि गर्मी तथा कमी के समय काम मे लाया जा सकता है, किसानो को मालूम ही नही। खली, बिनौला, कोकर आदि चीजें लगभग दुर्लभ हैं। हरे चारे, सूखे चारे तथा खली आदि की वर्तमान पूर्ति पशुओ की पौष्टिक आवश्यकता का एक छोटा अश ही प्रदान कर सकती है। नमक तथा दूसरी खनिज पदार्थो का उपयोग बहुत कम है। यह भी कहा जा सकता है कि पानी जो कि पशुओं का स्वास्थ्य तथा निरन्तर दूध प्राप्त करने के लिये आवश्यक है गर्मी के दिनो मे प्राप्त नही होता।

कीटिङ्ग (Keating) ने ठीक ही कहा है 'भारतवर्ष मे लोगो के सीखने के लिये शायद ही कोई ऐसा सबक इतना महत्वपूर्ण होगा जितना कि चारे की फसल उगाना, उचित रूप से उठाकर रखना तथा मितव्ययिता से प्रयोग मे लाना।

चारे की समस्या को दो प्रकार से सुलझाया जा सकता है—(अ) चरागाहो को बढाकर, (ब) वर्तमान भूमि पर अधिक चारा उगाकर। कृषि विशेषज्ञो तथा कृषि कमीशन की राय है कि चरागाहो की भूमि को नही बढाया जा सकता। इसलिये वर्तमान भूमि पर ही अधिक से अधिक चारा उत्पन्न करने के लिये हमको कई उपाय करने पडेंगे। पहले, गाँव के आस-पास बेकार भूमि पर घास उगाई जा सकती है। दूसरे, गाँव के चरागाहो पर ग्राम पचायत का नियन्त्रण होना चाहिये जिससे कि पशुओ की नियन्त्रित चराई की जा सके। तीसरे, यदि ज्वार, बाजरा आदि का साइलेज बनाकर पशुओ को खिलाया जाये तो बहुत अच्छा होगा। चौथे, जहाँ सिचाई का प्रवन्ध है वहाँ किसानो को चारे की फसल उगानी चाहिये। पाँचवें, रिजका और क्लोवर आदि घासें बिना किसी मुख्य फसल का त्याग किये जल्दी से उगाई जा सकती है। छठे, चारे की समस्या सुलझाने मे वन-विभाग भी बहुत सहायता कर सकता है। बनो की घास काटकर रेलो द्वारा (यदि उनका भाडा सस्ता हो जाय) देश के उन भागो मे भेजी जा सकती है जहाँ उसकी कमी है।

(२) नस्ल का खराब होना—हमारे देश मे पशुओ की नस्ल खराब है। इसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ पर अच्छे साडो की कमी है। हमार देश मे यह रिवाज है कि जब किसी वृद्ध की मृत्यु हो जाती है तो उसके वशज किसी बछडे को साड बनाकर छोड देते है। पहले अच्छे बछडे छोडे जाते थे परन्तु अब उसकी नस्ल की ओर ध्यान नही दिया जाता। इसके फलस्वरूप हमारे देश मे लाखो साँड ऐसे है जिनकी नस्ल खराब है तथा जो बहुत दुबले पतले हैं। जब इस प्रकार के साडो से बच्चे पैदा करान का काम लिया जायेगा तो फिर नस्ल कैसे ठीक हो सकती है। क्योंकि हमारे देश मे गाय को पवित्र माना जाता है इस कारण खराब गाय और साडो को भी नही मारा जाता। इसलिये उनकी नस्ल खराब है। परन्तु भैंसो के मारने के विषय म इस प्रकार की कोई पवित्र भावना नही है। इसलिय खराब पशुओ का बध होता रहता है। यही कारण है कि भैंसो की नस्ल गायो से अच्छी होती है और वे गायो से कई गुना दूध देती है।

इसलिय आवश्यकता इस बात की है कि साडो की नस्ल को सुधारा जाय। ऐसा करने के लिये हमको अच्छी नस्ल के साडो को छोडना पडेगा और खराब नस्ल के साडो को नपुसक बनवाना पडेगा। इसके साथ साथ यह नियम भी बनाना पडेगा कि भविष्य मे खराब नस्ल के साड न छोडे जायें। नस्ल को सुधारने के लिये जिला बोर्डो, गोशालाओ तथा सहकारी नस्ल सुधार समितियो से भी सहायता ली जा सकती है।

पशुओं की नस्ल सुधारने के लिये पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ६०० ऐसे प्रमुख ग्राम केन्द्र (Key Village Centres) खोलने की व्यवस्था की गई है। प्रत्येक प्रमुख ग्राम केन्द्र ३–४ गावो के बीच मे होगा जिसमे ३ वर्ष से अधिक आयु वाली लगभग ५०० गायें तथा ३ या ४ अच्छी नस्ल वाले साड होगे। घूमने वाले अन्य साडो को वहा से हटा दिया जायगा अथवा नपुसक बना दिया जायेगा। प्रत्येक केन्द्र पर पशुओ की नस्ल दुग्धोत्पादन आदि का विस्तृत लेखा रखा जायगा। इनके अतिरिक्त १५० कृत्रिम प्रजनन केन्द्र (Artificial insemination centres) भी खोल जायेगे। प्रथम योजना मे देश म ५५५ प्रमुख ग्राम केन्द्र तथा १४६ कृत्रिम प्रजनन केन्द्र खोले गये। दूसरी योजना मे १२५८ प्रमुख ग्राम केन्द्र तथा २४५ कृत्रिम प्रजनन केन्द्र तथा २५४ विस्तार केन्द्र खोलने की योजना है। इस योजना से ४२००० उन्नत साँड, ६५०,००० उन्नत बैल तथा १० लाख उन्नत गायें प्राप्त हो सकगी।

गो-सदन—भारत सरकार ने गो-सदन की योजना भी बनाई है। जहाँ प्रमुख ग्राम केन्द्र योजना का उद्देश्य वर्तमान पशुओ की दशा सुधारना तथा पशुओं की नस्ल को उन्नत करना है वहाँ गो-सदनो का उद्देश्य बूढे तथा बेकार जानवर को अलग करना है। परन्तु इस ओर अधिक काय नहीं हुआ। प्रथम योजना काल तक केवल २५ गो-सदन ही प्राप्त हुए थ। इस योजना के ढीले चलने के कई कारण हैं—(१) अच्छे प्रकार के बड़े-बड़े भूमि के टुकडो का न मिलना। (२) जनता द्वारा सहयोग न दिया जाना। कुछ राज्यो द्वारा अपने हिस्से का धन न देना। दूसरी योजना म ६० गो-सदन खोलने की योजना है जिसम ३० हजार पशु रख जायेंगे। १९५७–५८ तक २१ गो-सदन स्थापित किये गय तथा ७२ गोशालाओं को गहन उन्नति के लिये छाटा गया।

(३) पशुओ के रोग—भारतवर्ष मे प्रति वर्ष लाखो पशु रिंडरपेस्ट, जहरबाद तथा मुँह और पैरो के रोगो से मरते हैं। इनमे रिंडरपेस्ट सबसे अधिक भयकर रोग है। रोगों के कारण पशु मरते ही नही है बरन् जो जीवित बचते है वे बहुत दुर्बल हो जाते है और उनकी काय शक्ति घट जाती है। इस कारण किसान को अधिक पशु रखने पडते है।

पशुओं को रोग से बचाने के लिये आवश्यक है कि उनको साफ-सुथरे स्थान पर बाधा जाय और उनको तालाब का गन्दा पानी न पीने दिया जाय। इसके अतिरिक्त जब किसी पशु को छूत का रोग हो तो उस स्थान के सब पशुओ क टीका लगवा देना चाहिये। रोगो के कारण तथा उपचार के विषय मे भारतीय पशु चिकित्सा सस्था Indian (Veterinary Research Institute) ने बहुत अधिक और उत्तम ढङ्गो की खोजें की हैं, किन्तु किसानो को अभी तक इनका लाभ नहीं पहुचाया जा सका है। पचवर्षीय योजना मे पशुओं के रोगों को दूर करने के लिये केवल १५ ७ लाख रुपये का प्रबन्ध किया गया है। योजना के अनुसार ६४० पशु

चिकित्सालय खोले जायेंगे। अभी हाल ही मे १७३ पशु चिकित्सालय की कमी को पूरा करने के लिये आजकल पजाब और हैदराबाद के पशु कालिजो मे दो पालिया चल रही हैं। दूसरी योजना काल मे १६०० पशु चिकित्सालय खोले जायेंगे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यद्यपि पशुओ के बिना भारतीय कृषि सम्भव नही है तो भी पशुओं की हालत बडी खराब है और इस कारण पशु भारतीय कृषि की एक जटिल समस्या बन गये हैं। बिना पशुओ की उन्नति हुये हम भारतीय कृषि मे उन्नति करने की बात सोच ही नही सकते। इसलिये पशुओ की उन्नति करना हमारा कर्त्तव्य है। यह उन्नति उनको पर्याप्त चारा देने, उनकी नस्ल सुधारकर तथा उनको रोगो से मुक्त करके की जा सकती है।

अभी हाल ही मे सरकार पशुओ की उन्नति की ओर विशेष ध्यान दे रही है। Indian Council of Agricultural Research के द्वारा किये गये सर्वे के आधार पर विभिन्न नस्लो के पशुओ का वर्गीकरण किया गया है जिससे की अधिक महत्वपूर्ण नस्लो की शुद्धता बनी रहे। लोगो को विभिन्न प्रकार की नस्लें दिखाने के लिये अखिल भारतीय पशु प्रदर्शनी की जाती है। इसके अतिरिक्त और बहुत सी ऐसी प्रदर्शनियाँ भी की जाती हैं। आजकल सरकार की यह नीति है कि पशुओ की दूध देने की शक्ति को बढाया जाय। भारतवर्ष मे आजकल २०० पशु उत्पन करने वाले खेत है जिनमे से १३० सरकारी हैं। इन खतो पर पशुओ की नस्ल को उन्नत करने का प्रयत्न किया जाता है। परन्तु अच्छी प्रकार के साडो की वार्षिक उत्पत्ति केवल १००० है जबकि आवश्यकता इससे कई गुनी है। परन्तु इस कमी को पूरा करने के लिय ही कृत्रिम प्रजनन केन्द्र खोले गये हैं। परन्तु इन सब प्रयत्नो के द्वारा भी कमी पूरी नही हुई है। आशा है सरकार इस ओर और अधिक ध्यान देगी।

Q 22 Mention the main defects in the Marketing of Agricultural products in India and state their evil effects what steps have been taken to remedy them ? Have you any suggestions to offer ?

प्रश्न २२—भारतवर्ष मे खेती की फसल की बिक्री मे क्या मुख्य दोष हैं और उसके क्या कुपरिणाम हैं ? उनको दूर करने के लिये क्या कदम उठाये गये हैं ? क्या आपको कोई सुझाव देने हैं ?

फसल की बिक्री के दोष—जिस समय तक भारतवर्ष के गावो का सम्बन्ध दूसरे देशो तथा विदेशो से नही हुआ था, फसल की बिक्री बडे सीधे सादे ढङ्ग से हो जाती थी। पर जब से भारतवर्ष मे आने जाने के मार्गों की उन्नति हुई और व्यापारिक फसलें उन्नत होने लगी, तब से फसल की बिक्री की एक समस्या भारतीय

कृषक के सामने उत्पन्न हुई। यह सत्य ही है कि उत्पत्ति करने का कार्य इतना कठिन नही है जितना कि उसको बेचने का। उचित रूप में फसल के बेचने मे कई बातें बहुत आवश्यक हैं, जैसे जो बीज बेची जाय वह साफ और स्वच्छ होनी चाहिए और उसमे किसी प्रकार का भी मिलाव नही होना चाहिये। दूसरे बेचने वाले की आर्थिक स्थिति पर भी ठीक प्रकार की होनी चाहिये ताकि वह उस फसल को बेच सके जबकि उसको अच्छा मूल्य प्राप्त हो। तीसरे, आने जाने के मार्ग बहुत सुगम और तेज होने चाहिये जिससे कि कम से कम खर्च करके फसल दूर के स्थानो पर शीघ्रातिशीघ्र ले जाई जा सके। चौथे, जिन बाजारो मे फसल बेची जाय उनके ऊपर ठीक प्रकार का नियन्त्रण हो। पाचवें, बेचने वाला व्यक्ति समझदार होना चाहिये जिससे कि उसको कोई धोखा न दे सके। यदि इन सब बातो को ध्यान मे रखते हुए हम भारतवर्ष में फसल की बिक्री के वर्तमान ढङ्ग को देखें तो हमको पता लगेगा कि हमारे देश से इनमे से कोई भी बात नही पाई जाती। इस कारण हमारे देश की फसल की बिक्री म अवगुण या दोष पाये जायें तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

हमारे देश के कृषक अपनी फसल को गाँव के बनिये ही को जो बहुधा किसानो को ऋण भी देता है बेचते हैं। ऐसा अनुमान लगाया गया है कि पंजाब मे कुल गेहू का ६० प्रतिशत, कुल कपास का ३५ प्रतिशत तथा कुल तिलहन का ७० प्रतिशत गाव मे ही बिकता हैं। उत्तर प्रदेश मे ८० प्रतिशत गेहू, ४० प्रतिशत कपास तथा ७५ प्रतिशत तिलहन और बिहार, उडीसा तथा बंगाल मे ८ प्रतिशत तिलहन तथा ९० प्रतिशत जूट गाव मे ही बेचा जाता है। बनिया जिस समय ऋण देता है उसी समय अगली फसल का भाव ठहरा लेता है। यदि भाव ऊंचे या नीचे होते हैं तो उसका लाभ किसान को नही पहुंचता। बनिया बाट भी ठीक नही रखता और बहुधा वह तोलने म भी बेईमानी कर जाता है। बेचारा किसान इन सबको सहन करता है क्योकि वह ऋणग्रस्त होता है और बाजार की परिस्थिति से अनभिज्ञ होता है।

पर अब यह सवाल आता है कि किसान अपनी फसल मण्डी मे क्यो नहीं ले जाता। इसके कई कारण हैं। पहला यह की किसान ऋणग्रस्त है, दूसरा यह कि किसान के पास मण्डी तक ले जाने के लिये गाडी भर सामान नही होता, तीसरा यह कि आने जाने के मार्ग सुगम नही हैं।

यदि किसान अपनी फसल को शहर की मण्डी मे ही ले जाता है तब भी कोई विशेष लाभ नही होता, क्योकि मण्डी की बिक्री मे भी बहुत से दोष पाये जाते हैं। पहले, किसान को फसल को मण्डी तक ले जाने मे कठिनाई पडेगी क्योकि गाँव से मण्डी तक सडक बहुधा कच्ची होती हैं और उनमे काठ की गाडी को किसान के पतले-दुबले बैल बहुत कठिनाई से खींचते हैं। बरसात मे तो जब यह सडकें पानी से भर जाती हैं तो गाँव से मण्डी तक का रास्ता बिल्कुल बन्द सा हो जाता

गेहू के वेचने मे किसान को केवल ६८ ५ प्रतिशत, चावल के वेचने मे ७८ ८ प्रतिशत, चीनी के वेचने मे ६५ १७ प्रतिशत मिलता है। इस प्रकार किसान को अपने परिश्रम का पूरा फल नही मिलता। उस फल मे से बहुत सा भाग मध्यस्थ खा जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि किसान की आर्थिक अवस्था कभी सुधरने नही पाती। इसका प्रभाव न केवल किसान के जीवन-स्तर पर ही पडता है वरन् खेतो की उन्नति पर भी पडता है। किसान को इतना कम मिलने के कारण वह खेती की उन्नति के लिए न अच्छे बीज मोल ले सकता है, न अच्छा खाद, न अच्छे बैल और न ही वह खेती की स्थायी उन्नति कर सकता है।

दूसरे यह कि किसान को अपनी फसल प्रतिकूल स्थान पर, प्रतिकूल समय तथा प्रतिकूल भाव पर वेचनी पडती है। यह तो इसलिये कि किसान के पास फसल रखने के लिए कोई स्थान नही होता। दूसरे इसलिए है कि किसान की आर्थिक स्थिति खराब होने के कारण वह अनुकूल भाव की बाट नही देख सकता क्योंकि उसको सिंचाई व्यय तथा लगान आदि देने पडते हैं। इस प्रकार किसान को भविष्य मे भाव के बढने से कोई लाभ नही होता।

तीसरे, यह कि किसान फसल वेचने मे कुछ भी नहीं सीख सकता। न वह यह जानता है कि उपभोक्ता किस प्रकार की चीज पसन्द करते है और न यह कि कहा तथा किस प्रकार फसल वेचनी चाहिए।

चौथे, किसान को बनिये तथा आढती की बेईमानी का शिकार होना पडता है।

पाचवें, यह कि किसान के पास फसल को रखने का उत्तम प्रबन्ध न होने के कारण उसकी बहुत सी फसल को कीडे मकौडे खा जाते हैं।

छठे, यह कि बिक्री के इस ढङ्ग के कारण बहुत से मध्यस्थ पैदा हो गए हैं जो सिवाय किसान को लूटने के कोई काम नही करते।

बिक्री के ढग मे सुधार—बिक्री के इस ढग मे दो प्रकार से सुधार हो सकते हैं। पहले यह कि नियन्त्रित बाजार (Regulated Markets) और दूसरे यह है कि सहकारी बिक्री समितिया (Co-operative Marketing Societies) स्थापित की जायें। हमारे देश मे इन दोनो ही ओर प्रयत्न किया गया है। अभी तक प्रयत्न आवश्यकता से बहुत कम है इस कारण किसान को कोई विशेष लाभ नही हुआ है।

नियन्त्रित बाजार—नियन्त्रित बाजार किसानो के लिये बहुत आवश्यक है। ऐसे बाजारो मे किसानो का माल आसानी से बिक जाता है और उसको अपनी फसल का उचित मूल्य मिल जाता है। ऐसे बाजारो मे किसान दुकानदारो की धोखेबाजी से भी बच जाता है। ऐसे बाजारो मे बिक्री की देख-भाल करने के लिये इन्सपैक्टर रखे जाते हैं। बाजारो का नियन्त्रण करने के लिये क्रेताओं और विक्रेताओं तथा किसान के प्रतिनिधियो की समिति बनी होती है। इस प्रकार किसानो को ऐसे बाजारो से बडा लाभ होता है।

इस देश मे नियन्त्रित बाजार स्थापित करने का प्रयत्न सबसे पहले बरार मे हुआ। कृषि कमीशन (Agricultural Commission) ने यह सुझाव रखा कि *इस प्रकार के बाजार सारे देश मे स्थापित होने चाहियें।* इसके पश्चात् बहुत से प्रातो तथा रियासतो ने इस प्रकार के कानून बनाये। जैसे बम्बई मे १६२७ ई० मे (यह कानून सन् १६३० मे बदल दिया गया), हैदराबाद रियासत मे सन् १६३० मे, मद्रास मे १६३३, मध्य प्रदेश मे १६३५ ई० मे तथा पजाब मे १६३६ ई० मे पास हुये। इस प्रकार प्रथम योजना से पहले ऐसे कानून ७ राज्यो मे थे। योजना काल मे ये कानून तीन और राज्यो मे पास किये गये। पर इन कानूनो की यह विशेषता है कि यह किसी स्थान की एक या दो चीजो पर लागू होते है अन्य चीजो पर नही होते। जैसे बम्बई, बरार के कानून रुई के लिये लागू होते हैं, बङ्गाल का कानून जूट के लिये। दूसरे यह कि इनके ऊपर इतना बडा नियन्त्रण नही होता जितना कि होना चाहिये। इस कारण यह किसानो को इतना लाभ नही पहुँचा सकते जितना कि उनसे पहुच सकता है। अभी तक १८०० बाजारो मे ५५० नियन्त्रित बाजार हैं, तथा ५०० बाजारो की दूसरी योजना काल के अन्त तक नियन्त्रित करने की योजना है। हैदराबाद, मैसूर तथा पजाब मे तो प्राय. सारे महत्वपूर्ण थोक बाजार नियन्त्रित है।

सहकारी बिक्री—आजकल बहुत से लोगो का यह विचार है कि किसान की स्थिति तभी सुधर सकती है जबकि ऋण देने वाली सहकारी समितियां बिक्री भार भी अपने ऊपर ले। हमारे देश मे सहकारी समितियो ने हाल ही मे बहुत उन्नति की है। जैसे कि बम्बई की ६३ कपास सहकारी बिक्री समितियो ने सन् १६५१–५२ ई० मे ३७४ लाख रुपये का माल बेचा तथा अन्य ४४ ने फल व सब्जी को सहकारी आधार पर बेचने का प्रबन्ध किया। मद्रास की प्राय सभी ऋण देने वाली समितियाँ बिक्री समितियो से सम्बन्धित कर दी गई हैं। सन् १६५२–५३ मे मद्रास की बिक्री *समितियो ने ४७ लाख रुपये का माल बेचा। उत्तर प्रदेश मे बहुत सा गन्ना, घी,* खाद्य-सामग्री तथा तिलहन सहकारी बिक्री समितियो द्वारा बेचे जाते हैं। १६५२–५३ मे उत्तर प्रदेश की १०६ गन्ना समितियो ने चीनी मिलो की आवश्यकता का ६३ ३ प्रतिशत उन्हे प्रदान किया। १६४७–४८ मे भारतवर्ष मे ३,७५१ ऐसी समितियाँ थी जिनकी सदस्यता २० लाख तथा पूजी ५ ५ करोड रुपये थी।

दूसरी योजना काल मे इस बात का प्रयत्न किया जायगा कि सहकारी उन्नति से सम्बन्धित सभी बातो को एक साथ मिला दिया जाय। इस प्रकार साख, बिक्री, फसल को बाजार के लिये तैयार करना, फसल को गोदामो मे एकत्र करना आदि बातो का एक दूसरे से सम्बन्ध होगा। एक राष्ट्रीय विकास तथा गोदाम बोर्ड (National Co-operative Development and ware-housing Board) की स्थापना की जा चुकी है। एक केन्द्रीय गोदाम प्रमण्डल तथा १६ राज्य गोदाम प्रमण्डलो की स्थापना की जा चुकी है। इन सबके अन्तर्गत जो गोदाम स्थापित किये

जायेंगे उनमें २० लाख टन गल्ला एकत्र किया जा सकेगा। इन गोदामों की रसीद के आधार पर किसानों के लघुकालीन ऋण प्राप्त हो सकेंगे। द्वितीय योजना के पहले दो वर्षों मे १९८३ गोदाम बनाने के लिये सहकारी बिक्री समितियों तथा कुछ बड़ी सहकारी समितियों को सहायता दी गई। १९५८-५९ मे १.५६ करोड की लागत के १०९० गोदाम बनाने की योजना है।

सरकारी समितियों द्वारा फसल को बेचने से बहुत लाभ हैं-(१) इससे मध्य जन (Middle men) का लाभ बहुत कम हो जाता है। (२) इसके द्वारा किसान को अपनी फसल के ठीक दाम मिल जाते हैं। (३) किसान को भविष्य मे होने वाले ऊंचे दाम का ठीक लाभ पहुँचता है। (४) फसल को बेचते समय किसान बहुत सी नवीन बातें सीखता है। (५) किसान को अधिक मात्रा मे फसल बेचने का लाभ भी प्राप्त हो जाता है।

सरकारी प्रयत्न--कृषि कमीशन तथा केन्द्रीय बैंकिंग कमेटी के सुझाव के अनुसार भारतीय सरकार ने भी फसल की बिक्री की ओर ध्यान देना आरम्भ कर दिया है। उसने १९३४ म फसल की बिक्री के एक परामर्शदाता (Agriculture Marketing Adviser) को नियुक्त किया। उसकी सहायता के लिये एक उप परामर्शदाता भी है इसके अतिरिक्त एक जाच का परिचालक (Director of Inspection), ६ ज्येष्ठ बिक्री अफसर (Senior Marketing Officer), २ सहायक जाँच परिचालक निरीक्षण अफसर (Supervising Officer) और १५ सहायक बिक्री अफसर भी नियुक्त किये गये हैं। इसी प्रकार बिक्री की व्यवस्था बहुत से राज्यों में भी पाई जाती है।

इस सारी व्यवस्था द्वारा तीन प्रकार के काम किए जाते हैं--(१) अनुसंधान कार्य (Investigation), (२) उन्नति कार्य (Development), (३) श्रेणीबद्ध करने के कार्य (Grading)। अनुसंधान के कार्य म मुख्य वस्तुओ की बिक्री की खोज करना, नियन्त्रित बाजारों की समस्या के बारे मे सोचना, आवागमन के साधनों की समस्या पर विचार करना आदि हैं। उन्नति का कार्य अधिकतर बिक्री की खोज के परिणाम पर निर्भर होगा। इसके द्वारा यह प्रयत्न किया जायगा कि किसान और व्यापारी को उपभोक्ता की आवश्यकता की बाबत खबर दी जाय तथा उनमें इस बात का प्रचार किया जाय कि वह केवल स्टेण्डर्ड श्रेणी (Standard Grade) की ही वस्तुये बेचें। श्रेणीबद्ध करने का कार्य टेक्नीकल (Technical) है और उसके द्वारा तिलहन, फल, अन्न आदि वस्तुओ के भौतिक तथा रासायनिक गुण की जाच की जाती है।

बिक्री की इस व्यवस्था ने बहुत सा लाभदायक कार्य किया किया है। पिछले २५ वर्षों में ८८ वस्तुओं की बिक्री के ढङ्ग की जाच की जा चुकी है। इनमें से मुख्य चावल, गेहू, मूंगफली, तम्बाकू, चना, फल, आलू, चीनी आदि हैं। ये सब रिपोर्ट छप चुकी है। इनसे बहुत सी उपयोगी बातों का पता चलता है। १९३७ ई०

मे कृषि-उपज (श्रेणी तथा कृषि) एक्ट (Agricultural Produce Grading And Marketing act) पास किया गया। यह फल, तम्बाकू, कहवा, चावल, बुरा, गेहू, आटा, गुड, तेल निकालने के बीज, वनस्पति घी, कपास, लाख, सन, खालें व चमडा, ऊन, लकडी, अखरोट आदि पर लागू होता है। इस एक्ट के अन्तर्गत प्रति वर्ष कई करोड रुपये के सामान को श्रेणीबद्ध करके बेचा जाता है। यह कानून ३८ वस्तुओं पर लागू होता है और अभी तक ११७ वस्तुओं के ग्रेड स्टेन्डर्ड किये जा चुके हैं। घी वेजीटेबिल आयल, मक्खन, चावल, आटा, गुड, अण्डे, फल आदि के लिये ३८० ग्रेडिंग केन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं। सन, सिगरेट, तम्बाकू की पत्ती, ऊन, सन्दल की लकडी का तेल आदि को निर्यात करने से पूर्व Agmark की मोहर लगवानी आवश्यक है। इन चीजो की माग विदेशी बाजारो मे बढती जा रही है। १९५७-५८ मे २७ ५३ करोड रु० का ऐसा माल विदेशो को निर्यात किया है तथा १९५८-५९ के पाच महीनो मे १२ ६५ करोड का।

दूसरी योजना मे सिफारिश की गई है कि मिर्च, अदरक, हल्दी, वनस्पति, तेल, हाथ द्वारा निकाली गई मूगफली, खाल व चमडा आदि का निर्यात करने से पूर्व अनिवार्य रूप मे ग्रेडिंग कर दिया जाय।

इसके अतिरिक्त १९३९ ई० मे केन्द्रीय सरकार ने Standards of Weight Act पास किया जो कि १९५२ मे लागू हो गया। इससे सभी स्थानो पर एक से बाट हो जायँगे। इस ऐक्ट पर अमल करने के लिये उत्तर प्रदेश, बम्बई, बिहार, पूर्वी पजाब, हैदराबाद, उडीसा, मध्य प्रदेश, मैसूर आदि मे अलग कानून हुए पर उन पर कोई अमल न किया गया और आज भी देश मे बहुत प्रकार के बाट पाये जाते हैं। १९४८ ई० मे Indian Standards Institute ने सारे देश के लिये मीट्रिक बाट (Metric weights) ग्रहण करने की सिफारिश की और बहुत सोच विचार के पश्चात् सरकार ने इस सुझाव को मान लिया है तथा अक्तूबर १९५८ से देश के कुछ भागो म मीट्रिक बाटो का चलन आरम्भ हो गया है।

इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने फरवरी १९५६ ई० मे Central Co operation Development and Ware-housing Board की स्थापना के लिये लोक सभा मे एक बिल पेश किया जिसका कार्य उत्पत्ति, बिक्री फसल को गोदाम मे रखने, खेती की फसल का आयात तथा निर्यात करने आदि की योजना बनाना तथा उसम उन्नति करना होगा। इस योजना के अन्तर्गत १७०० प्रारम्भिक सहकारी समितिया बनाई जायेंगी। इन समितियो की सदस्य १२००० बडी बडी प्रारम्भिक साख समितिया होंगी जो कि किसानो को खेती सम्बन्धी सामान बाटेंगी तथा बिक्री के लिय उनकी फसल एकत्र करेंगी। बिक्री तथा साख समितियों के पास छोटे-छोटे गोदाम होंगे। दूसरी योजना काल मे ६५७० ऐसे गोदाम बनाये जायेंगे। इनके अतिरिक्त १९६०-६१ तक ३५० लाइसेन्सड गोदाम बनाने की भी योजना है।

इसके अतिरिक्त All India Radio, Delhi से हर रोज मुख्य-मुख्य

वस्तुओ का मूल्य घोषित किया जाता है, विदेशो मे भारतीय ट्रेड कमिश्नरो द्वारा भी भारतीय वस्तुओ का प्रचार किया जाता है। पर विदेशो मे हमारे देश की वस्तुओ के बेचने मे यह कठिनाई होती है कि हमारे देश की चीजो मे मिलावट होती है तथा वे अच्छे प्रकार की नही होती।

सुझाव—अभी तक बिक्री की उन्नति के लिये कार्य किया गया है वह आवश्यकता की अपेक्षा बहुत कम है। आवश्यकता इस बात की है कि इस कार्य को अधिक वेग से बढाया जाये। नियन्त्रित बाजार जो अभी तक एक दो मुख्य स्थानीय वस्तुओं तक सीमित है उनको सभी पदार्थों की बिक्री के लिये लागू किया जाये। दूसरे, सहकारी बिक्री समितिया अधिकाधिक खोली जायें तथा जहा तक सम्भव हो उनको ऋण देने वाली समितियो से जोड दिया जाये। तीसरे, सामान रखने के लिये सरकार को गोदाम बनाने चाहियें। इससे यह लाभ होगा कि किसान फसल को एकत्र करने मे जो हानि होती है वह कम हो जायेगी और किसान को गोदाम की रसीद पर ऋण लेने मे सुविधा हो जायगी। सरकार का हाल ही मे इस ओर उठाया हुआ पग बहुत लाभदायक सिद्ध होगा।

Q 23 In what manner would you assure full employment for the landless laboures in our rural areass ? Describe your schemes

प्रश्न २३—आप किस प्रकार अपने गाँवो के बिना भूमि के मजदूरों को पूर्ण रोजगार प्रदान कर सकते हैं ? अपनी योजना बताइये।

बिना भूमि के मजदूर वे होते है जो भूमि पर आश्रित होते हैं परन्तु जिनके पास अपनी स्वय कार्य की भूमि नही होती वरन् वे दूसरे लोगो के खेतो मे मजदूरा के समान काय करते हैं। भारतवर्ष मे ऐसे मजदूरों की सख्या निरन्तर बढ रही है। १८८२ ई० मे ऐसे मजदूरो की सख्या केवल ७५ लाख थी परन्तु १९२१ ई० म यह सख्या बढकर २ करोड १५ लाख और १९३१ ई० मे ३ करोड ३० लाख हो गई। १९५१ की जनसख्या के अनुसार कृषि मजदूर तथा उन पर निर्भर रहने वालो की सख्या ४ ६ करोड थी जो कि खेती पर निर्भर रहने वाली कुल जनसख्या की २० प्रतिशत थी। परन्तु कृषि श्रम जाँच खोज के अनुमार ३०.४% ग्रामीण परिणाम परिवार कृषि मजदूर हैं।

बिना भूमि के मजदूरो की सख्या मे वृद्धि के कारण—भूमि के मजदूरो की सख्या में वृद्धि के कई कारण हैं। पहला, हमारे देश मे जनसख्या की निरन्तर वृद्धि हो रही है परन्तु उसके साथ उद्योग-धन्धो की वृद्धि नही हो रही है जिससे कि बढ्ती हुई जनसख्या को रोजगार मिल सके। इसलिये लोगो को खेती की ओर झुकना पडता है। दूसरे, हमारे देश के कुटीर उद्योग-धन्धो विदेशी माल की प्रतियोगिता के कारण नष्ट हो गये जिसके फलस्वरूप उन उद्योगो मे लगे हुए दस्तकारो को किसी और स्थान पर कार्य न मिलने क कारण खेती की ओर झुकना पडा

क्योकि उनमे से बहुतो के पास भूमि न थी इसलिये उनको मजदूरो के रूप में काम करना पडा। तीसरे, किसानो ने कुछ सामाजिक कुप्रथाओ के कारण गाव के महाजन से ऊँची व्याज दर पर ऋण लिया जिसके न चुका सकने के कारण उनकी भूमि उनके हाथो में से निकल गई और वे बिना भूमि के मजदूरो के रूप में काम करने लगे। डा० राधा कमल मुखर्जी का कहना है कि 'प्रत्येक परिस्थिति जिसके कारण कि छोटे किसान की आर्थिक स्थिति कमजोर हुई है उसने खेत मजदूरों की सख्या मे वृद्धि कर दी है।

बिना भूमि के मजदूरों की पूर्ति—भारतवर्ष मे बिना भूमि के मजदूरो की पूर्ति के कई स्रोत हैं जैसे वे परिवार जिनके पास अपनी स्वय की भूमि नही है, वे परिवार जिनके पास भूमि तो है परन्तु इतनी अपर्याप्त है कि उस पर परिवार के सब सदस्यों को पूरे वर्ष तक काम नही मिल सकता। गाव के सेवक तथा दस्तकार तथा कहीं-कहीं दासता का भी जीवन विताने वाले मजदूर पाये जाते हैं। ये मजदूर अधिकतर वे होते हैं जो महाजनो से रुपया लिये हुए रहते हैं, परन्तु उसको चुका नही सकते।

बिना भूमि के मजदूरों की अवस्था—खेतो पर मजदूरो को निरन्तर काम नहीं मिलता। रोजगार की अवधि फसल के प्रकार तथा खेती करने के ढग पर निर्भर होती है। उदाहरण के लिये उत्तर पश्चिम के सींचे हुये भागो तथा उत्तर प्रदेश के गेहू व गन्नो मे मजदूरो को ६ मास तक काम मिल जाता है परन्तु पूर्व के उन भागो मे जहा गेहू नही उगाया जाता मजदूरो को केवल ४ महीने ही काम मिलता है। कुल भारत का औसत २१८ दिन है जिसमे १८९ दिन वे खेती पर काम करते हैं तथा २९ दिन इधर-उधर का काम करते हैं। भारतवर्ष मे वे मजदूर जो कि स्थायी रूप से कार्य करते हैं केवल १०–११ प्रतिशत हैं, शेष को कभी-कभी कार्य मिल जाता है।

भारत में बिना भूमि के मजदूरो की अवस्था बडी खराब है। कहीं-कहीं तो इनको दासता का जीवन बिताना पडता है। बहुत अधिक समय तक कार्य करने पर भी उनको बहुत कम मजदूरी मिलती है और इस पर भी मालिक की डाट-डपट सहन करनी पडती है। ऐसा अनुमान है कि १९४४–४५ तथा ४६ में बम्बई, पजाब तथा मद्रास मे इनकी मजदूरी १० आने और १ रुपये के बीच मे थी और स्त्रियों की मजदूरी तो इससे भी कम थी। आजकल भी इनकी मजदूरी इस प्रकार है—

औसत दैनिक मजदूरी (आनों में)

क्षेत्र	पुरुष	स्त्री
उत्तरी भारत	१८.८	१६.८
पूर्वी भारत	१६.६	१५.७
दक्षिणी भारत	१६.२	९.८

पश्चिमी भारत	१८६	१२·५
मध्य भारत	१२·८	८२
उत्तरी पश्चिमी भारत	२२८	१५८
समस्त भारत	१७५	१०८

इस प्रकार के मजदूरो के परिवार की औसत वार्षिक आय ४८७ रुपये है तथा इन मजदूरो की प्रति व्यक्ति आय केवल १०४ रुपये है जबकि कुल भारत मे प्रति व्यक्ति आय २६६ रुपये है।

गाँवो मे अन्न की कमी या मूल्य के बढने का प्रभाव सबसे पहले इन मजदूरो पर पडता है। ये मजदूर पशु रखकर तथा उनका घी, दूध बेचकर अपनी आय बढाने का प्रयत्न करते हैं। प्राय वे उन्हे खेतो के आस-पास चराते है और उसके बदले किसान की बेगार करते हैं। कभी-कभी उनको आस पास के शहरो मे भी कारखानो मे काम मिल जाता है। इस प्रकार इन मजदूरो की अवस्था बहुत ही खराब है।

उन्नति के सुझाव—बिना भूमि के मजदूरो को रोजगार दिलाने के लिए यह आवश्यक है कि खेती करने के ढङ्ग मे महत्वपूर्ण परिवर्तन किया जाय। खेती करने की कला को बदला जाय। सिचाई की अधिक सुविधायें प्रदान की जायें। फसल की बिक्री के ढङ्ग मे परिवर्तन किया जाय। अधिक भूमि को खेती के लायक बनाया जाय। खेती मे अच्छा बीज व खाद काम मे लाई जाय। ऐसा करने से बहुत से लोगो को रोजगार मिल जायेगा।

परन्तु खेती के उन्नत करने पर भी सब मजदूरो को रोजगार न मिल सकेगा। इसलिये यह आवश्यक है कि गावो मे कुटीर उद्योग-धन्धो को प्रोत्साहन दिया जाय। इन उद्योगो के लिए हमारे देश मे बहुत गुंजाइश है। इन उद्योगो म हमारे देश के बहुत से बेरोजगार मजदूर लग सकते हैं।

खेत रहित मजदूरो को रोजगार दिलाने के लिये यह भी आवश्यक है कि हमारे देश मे प्रादेशिक उन्नति (Regional Development) की योजना अपनाई जाय। इस प्रकार की उन्नति से स्थान-स्थान पर बडे-छोटे उद्योगो की उन्नति हो जायेगी और मजदूरो को रोजगार की तलाश मे दूर के शहरो मे नही जाना पडेगा।

इसके अतिरिक्त स्थान-स्थान पर बिना भूमि के मजदूरो की सहकारी समितियां बनाई जायें और इन समितियो को दुग्धशालायें खोलने के लिये प्रोत्साहन दिया जाय। इस प्रकार के कार्य के लिये भी हमारे देश मे बहुत गुंजाइश है।

बिना भूमि के मजदूरो को रोजगार दिलाने मे विनोबा भावे का भूमिदान यज्ञ बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है। इस योजना के अनुसार उन लोगो की कुछ भूमि जिनके पास वह आवश्यकता से अधिक है दान मे लेकर उन लोगो को दे दी जाती है जिनके पास भूमि नही है। आजकल हमारे देश के बहुत से लोगो का ध्यान इस ओर आकर्षित हो गया है और श्री जयप्रकाश नारायण जैसे बडे-बडे नेता इस

कार्य मे लग गये हैं। परन्तु अभी बहुत मंजिल तय करनी शेष है। इस योजना को हमारे देश प्रोत्साहन देना बहुत आवश्यक है।

इन सबके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि सरकार सड़कें, रेलें, नहरें, इमारतें आदि बनाने का कार्य अपने हाथ मे ले। ऐसा करने से देश के बेरोजगार मजदूरो को रोजगार मिल जायेगा।

इन सब बातो के साथ-साथ यह आवश्यक है कि मजदूरो को न्यूनतम मजदूरी दिलाने का प्रबन्ध किया जाय नहीं तो उनका शोषण किया जा सकता है। हमारे देश मे ऐसा कानून १९४८ ई० मे पास हो चुका है। प्रथम पचवर्षीय योजना मे इस प्रकार की मजदूरी सारे पजाब, राजस्थान, अजमेर, कुर्ग, देहली, हिमाचल प्रदेश, कच्छ तथा त्रिपुरा मे निश्चित की जा चुकी है। दूसरे साल राज्यो मे न्यूनतम मजदूरी कुछ निश्चित भागो मे निश्चित की गई है। द्वितीय योजना मे सुझाव दिया गया है कि न्यूनतम मजदूरी सब राज्यो के सब भागो मे निश्चित कर देनी चाहिये। ९ जनवरी १९५५ ई० को उत्तर प्रदेश की सरकार ने वयस्क कृषि श्रमिको के लिये १ रु० प्रतिदिन या २६ रु० प्रति मास तथा १८ वर्ष से कम आयु के बच्चो के लिये १० आने प्रतिदिन या १६)५० प्रति मास न्यूनतम वेतन निश्चित किया है। यह सुल्तानपुर, प्रतापगढ, आजमगढ, बादा, बाराबकी, जौनपुर, रायबरेली, फैजाबाद, हमीरपुर, बलिया, गाजीपुर और जालौन के जिलो मे लागू होगा। इसका कारण यह है कि हमारे देश मे विश्वासपात्र आकडो की कमी है तथा मजदूर असगठित हैं। इसके अतिरिक्त कृषि सुधार समिति (Agrarian Reforms Committee) का यह भी सुझाव है कि इन मजदूरो के काम करने के घण्टे पुरुषो के लिये प्रतिदिन १२ तथा स्त्रियो के लिये १० रखे जायें। इस प्रकार के कार्यो से मजदूरो का शोषण न हो सकेगा।

पचवर्षीय योजना मे इस कार्य के लिये १५ करोड रुपये रखे गये हैं। योजना मे इस समस्या को सुलझाने के लिय बडे-छोटे सिंचाई के साधनो को उन्नत करना, बडे पैमाने पर भूमि खेती के लिये प्राप्त करना, ग्रामीण उद्योगो की उन्नति तथा विकास करना आदि बताये गये हैं। इसके अतिरिक्त मिश्रित खेती (Mixed Farming) तथा सार्वजनिक निर्माण कार्य (Public Works Programme) के ऊपर विचार करने के लिये भी योजना मे सुझाव दिया गया है। द्वितीय योजना मे इस बात को माना गया है कि भूमि पर जनसख्या के वर्तमान दबाव के कारण केवल थोडे से मजदूरो को ही भूमि दी जा सकती है। परन्तु आर्थिक कारणो से ही नहीं वरन् सामाजिक नीति के कारण भी यह आवश्यक है कि देश की अर्थ व्यवस्था से उन लोगो को भी कुछ लाभ पहुँचाया जाय जो कि अभी तक सदा दुखी रहे हैं तथा जिनकी सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति करने का कोई अवसर प्राप्त नहीं हुआ है।

योजना मे कहा गया है कि यह अच्छा होगा कि प्रत्येक राज्य मे सरकारी तथा गैर सरकारी लोगो का एक विशेष बोर्ड बनाया जाय जो कि बिना भूमि के

मजदूरो सम्बन्धी योजनाओ की उन्नति की जाच कर सके तथा मजदूरो के फिर से बसाने की योजनाओ पर नसीहत कर सके । इसी प्रकार का एक बोर्ड सारे भारत-वर्ष के लिये होना चाहिये जो कि नीति तथा व्यवस्था के प्रश्नो पर विचार करे तथा समय-समय पर मजदूरो को भूमि पर बसाने की योजनाओ की उन्नति की जाच करता रहे।

योजना मे कहा गया है कि जहाँ तक हो सके वह भूमि जो कि खेतो की उच्चतम सीमा निश्चित करने के पश्चात् बचे भूदान आन्दोलन से प्राप्त हो, भूमि को खेती योग्य बनाकर प्राप्त हो, उसको भूमिहीन मजदूरो को दी जाय। परन्तु क्योकि इस प्रकार पर्याप्त भूमि प्राप्त नही हो सकेगी। इस कारण इस सब कार्य से समस्या पूरे तौर पर नहीं सुलझ सकेगी। इसी कारण इस बात की आवश्यकता है कि इन भूमिहीन मजदूरो की सहकारी समितिया बनाई जायें तथा उनका निर्माण कार्य और कुटीर उद्योगो मे लगाया जाय। योजना कमीशन ने इस बात पर जोर दिया है कि इन मजदूरो को घर बनाने मे भूमि मुफ्त दी जाय तथा उनको न्यूनतम मजदूरी कानून के अन्तर्गत लाया जाय।

Q 24. What would you perfer—(a) The development of capitalistic farming, or (b) Collective farming, or (c) Co-operative farming or (d) Peasant proprietorship in India ? Give reasons

प्रश्न २४—भारतवर्ष मे आप किसको पसन्द करेंगे—(अ) पूंजीवादी खेती की उन्नति अथवा (आ) सामूहिक खेती अथवा (इ) सहकारी खेती अथवा (ई) कृषक स्वामित्व ? कारण दीजिये।

भूमि स्वत्व (Lond Tenures) के पश्चात् यह प्रश्न बड़ा ही महत्वपूर्ण है कि खेती करने का ढङ्ग क्या हो क्योंकि इसके ऊपर ही यह बात निर्भर होती है कि हमको खेती की कितनी उपज प्राप्त होती है। यह पहले ही बताया जा चुका है कि भारतवर्ष छोटे-छोटे खेतो का देश है। भारतवर्ष मे एक खेत का औसत क्षेत्रफल ५ एकड है। इसके विपरीत अमरिका मे एक खेत का औसत क्षेत्रफल १४५ एकड, डेनमार्क म ४० एकड, स्वीडन मे ७५ एकड, जर्मनी म २१ एकड तथा इङ्गलैंड म २० एकड है। इतने छोटे छोटे खेतो म आधुनिक कृषि यन्त्रो का प्रयोग होना असम्भव है। यही कारण है कि हमारी कृषि की अवस्था बडी खराब है। अब जबकि हमारे देश म जमीदारी उन्मूलन (Zamidary Abolition) हो रहा है तब हमारे सामने यह प्रश्न बडा महत्वपूर्ण है कि हम अपने देश मे किस प्रकार की खेती करे। ससार मे आजकल अनेक प्रकार के कृषि सगठन चल रहे हैं जिनमे से निम्नलिखित मुख्य हैं—

(अ) **पूंजीवादी खेती**—इस प्रकार की खेती अधिकतर इङ्गलैंड और अमेरिका मे की जाती है। भारतवर्ष मे भी कम्पनी के शासन काल मे अंग्रेजी मिलो के लिये कपास उगाने के वास्ते बडे-बडे खेत बनाने का प्रयत्न किया गया परन्तु राजनीतिक कारणो से इस विचार धारा को प्रोत्साहन न मिला। अन्त मे १८५७ ई० के स्वतन्त्रता सग्राम के पश्चात् अग्रेजी अफसरो को बडे-बडे खेत चाय, कहवा, रबड उगाने के लिये दिये गये। पजाब, उत्तर प्रदेश तथा सिन्ध के सीचे हुए भागो में बडे-बडे खेत भारतीय तथा अग्रजी लोगो को दिये गये। अभी कुछ ही वर्ष पूर्व बम्बई सरकार ने ६,००० एकड का एक क्षेत्र एक चीनी सभा (Sugar syndicate) को पट्टे पर उठाया है। जब से चीनी के उद्योग को सरक्षण मिला है तब से दक्षिणी भारत मे गन्ना उगाने वाले कई खेत स्थापित हो चुके है। कही-कही फल उगाने के लिये बडे-बडे खेत स्थापित किये गये हैं।

पूंजीवादी खेती दो प्रकार की हो सकती हैं।

(१) बडे-बडे खेत जिनके ऊपर एक व्यक्ति या एक सभा या एक मिश्रित पूँजी कम्पनी खेती करती हो। ऐसे खेतो पर सब कार्यों के लिये मजदूर लगाये जाते हैं और खेतो की देखभाल करने के लिये बडे-बडे चतुर इन्जीनियर आदि लगाये जाते हैं। ऐसे खेतो पर रासायनिक खाद तथा आधुनिक मशीनें बहुत अधिक मात्रा मे काम मे लाई जाती हैं। इस प्रकार के खेत हमारे देश मे दक्षिणी भारत मे गन्ना तथा पहाडी भागो मे चाय उगाने का काम मे लाये जाते हैं।

(२) बडे-बडे खेत जिनके ऊपर किसी व्यक्ति अथवा कार्पोरेशन का अधिकार होता है परन्तु ऐसे खेतो को छोटे-छोटे टुकडो मे विभाजित करके किसानो मे बाँट दिया जाता है। इन किसानो के रहने के लिये मकान, खेतो मे देने के लिये अच्छी खाद व बीज दिया जाता है तथा उनको अपनी फसल की बिक्री के लिये सुविधायें दी जाती हैं। किसानो के स्वास्थ्य तथा शिक्षा का लाभ भी पहुचाया जाता है। सर डैनियल हैमिल्टन की गोसाबा (बगाल) की भूमि इस प्रकार की खेती का एक उदाहरण है।

इसमे कोई सन्देह नही कि बडे-बडे खेतो से छोटे-छोटे खेतो की अपेक्षा अधिक उपज प्राप्त होती है क्योकि बडे खेत वाले लोगो के पास हर प्रकार की सुविधायें होती है। इस प्रकार राष्ट्रीय आय के दृष्टिकोण से इस प्रकार की खेती बहुत अच्छी होती है। परन्तु अभी यह बात कहनी कठिन प्रतीत होती है कि इस प्रकार की खेती करने से हम अपने भूमि के साधनो का सदुपयोग कर सकें। इसके अतिरिक्त यदि किसानो से उनकी भूमि लेकर बडे-बडे खेतो के रूप मे किसी पूंजीपति को दे दी जाय तो उनको उन खतो पर अपने परिवारो सहित मजदूरो के रूप मे कार्य करना पडेगा। इस प्रकार से कार्य करने मे किसानो का शोषण होने का डर है। भारत मे चाय के बागों पर इस प्रकार के शोषण से मजदूरो को बचाने के लिये कानून बनाया गया है। इस प्रकार की खेती से यह भी डर है कि इसके

कारण हजारों आदमी जो अब खेती पर लगे हुए हैं बेरोजगार हो जायेंगे। बेरोजगारी की समस्या को हल करने के लिये यह आवश्यक है कि बड़े-बड़े खेतो के साथ उनसे सम्बन्धित उद्योगो को चलाया जाय। परन्तु यह कोई सरल कार्य नही है। इस प्रकार भारत की वर्तमान स्थिति मे इस प्रकार की खती उपयुक्त नही है।

(आ) सामूहिक खेती—इस प्रकार की खेती रूस मे की जाती है। इस प्रकार की खेती को प्राप्त करने के लिये रूस के अन्दर बडी सख्ती से काम लिया गया। बहुत सा रक्त बहा। भारत मे भी इस प्रकार की सख्ती करने की आवश्यक्ता करनी पड़ेगी क्योकि यहाँ पर व्यक्तिगत सम्पत्ति से लोगो को बडा प्रम है। किसानो से इस प्रकार खेतो को प्राप्त करके खेतो का प्रबन्ध एक निर्वाचन समिति को, जो सरकार की आज्ञानुसार कार्य करती है, दे दिया जाता है। इस समिति की देख-रेख मे किसानो को खेतो पर मजदूरो के रूप में कार्य करना पड़ता है। मजदूरो को कार्य अथवा पारिवारिक आवश्कतानुसार मजदूरी दी जाती है। किसानो के इस प्रकार मजदूरो के रूप मे कार्य करने से उनकी कार्य सचालन की सब शक्ति नष्ट हो जाती है। इसके अतिरिक्त रूस के उदाहरण को सामने रखने पर हमको पता चलता है कि इस प्रकार की खेती से उतना लाभ नही होता जितना कि उससे आशा की जाती है। नोम जस्नी (Naum Jasny) के अनुसार (जो कि जार सरकार तथा सोवियत सरकार के आधीन कृषि विशेषज्ञ क रूप मे काय कर चुका है), सामूहिक खेती के कारण १६२८ और १६३७–३८ के बीच की खेती पर आश्रित जनसख्या की प्रति व्यक्ति आय १० प्रतिशत घट गई। इन सब बातो के कारण हम कह सकते हैं कि हमारे देश के लिये इस प्रकार की खेती उपयुक्त नही है। भारतवर्ष मे सौराष्ट्र तथा भोपाल मे ५–५ तथा त्रिपुरा और कुर्ग मे १–१ सामूहिक कृषि समिति है।

(इ) सहकारी खेती—इस प्रकार की खेती मे किसान आपस मे मिलकर कार्य करते है ~~1-वे अपनी~~ भूमि, पूजी और पशुओ को एकत्र करके फार्म के ऊपर स्वय अपने द्वारा निर्वाचित समिति की देख रेख मे काम करते है। किसानो का खेतो पर व्यक्तिगत अधिकार होता है और इसके लिये उनको सामूहिक खेतो मे उनकी भूमि के क्षेत्र के अनुसार लाभाँश दिया जाता है। जो किसान खेत पर कार्य भी करते हैं उनको उनके काम की मजदूरी भी जाती है। इस प्रकार किसानो को लाभाँश तथा मजदूरी मिलती है।

सहकारी खेती का उद्देश्य पूजीवादी खेती के दोषो को दूर करते हुए उसके लाभो को समाप्त करना है। खतो को इस प्रकार एकत्र करने से उन पर आधुनिक मशीनो का प्रयोग किया जा सकता है तथा उनके लिये अच्छा बीज व खाद खरीदी जा सकती है। किसानो के उनके कार्य की मजदूरी मिल जाती है तथा लाभाँश भी मिल जाता है। इस प्रकार उनका शोषण नही होता। उनको काय करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है।

भारतवर्ष के कुछ राज्यो मे सहकारी खेती करने का प्रयत्न किया गया है। बम्बई मे ३४६ सामूहिक खेती समितियाँ थी जिनके १०६६४ सदस्य थे। १६५६-५७ मे १४ समितिया रजिस्टर्ड की गई। मद्रास में १६५३ मे २६ उपनिवेशक समितियाँ थी जिनको पट्टे पर भूमि दी गई है। यह भूमि सदस्यों को एक योजना के अनुसार बाँटी गई है और उनको मकान के लिये भी भूमि दी गई है। सदस्य अपने उत्तराधिकार को भी नियुक्त करते हैं। सदस्य के उत्तराधिकारी के न होने पर भूमि समिति के पास चली जाती है। सरकार ने किसानो को कुए बनाने बैल, खाद तथा औजार खरीदने के लिये ऋण भी दिया है। सदस्यो की फसल एक स्थान पर एकत्र करके बेच दी जाती है और इससे प्राप्त धन सदस्यो मे बाँट दिया जाता है। इन समितियो को सफलता अवश्य मिली है। १९५६ मे मद्रास राज्य मे २ सहकारी समितियाँ स्थापित हुई तथा १९५७-५८ के लिये ५ और समितियाँ स्थापित करने की योजना थी विनोबा भावे से मिले हुए तामिलनाद के २०० गाँवो मे सहकारी खेती करने की बात सोची जा रही है। अभी हाल ही मे इस प्रकार की खेती उत्तर प्रदेश के कुछ भागो मे भी की गई। परन्तु इस प्रकार के कार्य म कोई विशेष सफलता नही मिली है। इसका कारण यह है कि किसान लोग सहकारी खेती के लिये अपनी सबसे घटिया भूमि, कमजोर बैल आदि देते हैं तथा उस पर उस लगन मे कार्य नही करते जिससे कि वे अपने खेतो पर करते हैं। कही ऐसा भी देखने म आया है कि सरकारी खेती मे केवल एक उत्साही व्यक्ति के कारण सफलता प्राप्त हुई है और उस व्यक्ति के हटते ही इसके समाप्त होने की आशा है। आजकल उत्तर प्रदेश मे २१६ ऐसी समितियाँ थी जो ५०६६२ एकड पर खेती करती थी। उत्तर प्रदेश मे आजकल सहकारी अच्छी खेती, सहकारी के साझेदारी खेती, सहकारी किसान खेती तथा सहकारी सामूहिक खेती को आजमाया जा रहा है। दूसरी योजना मे १०० समितियाँ बनाने की योजना है परन्तु उसमे से अभी तक १५ स्थापित हो चुकी हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश मे सहकारी खेती ने कोई विशेष प्रगति नही की है। इसका कारण यह है कि अभी तक हमारे देश के लोगो मे सहकारिता की भावना आई हा नही है और जब तक यह भावना जागृत हो हमे और प्रकार की खेती के ढङ्ग को अपनाना पडेगा योजना आयोग का मत है कि भारत की १६०० सहकारी खेती समितियो मे से केवल ५० वास्तविक कही जा सकती है। परन्तु हमारा अन्तिम ध्येय सहकारी खेती ही होना चाहिए दूसरे प्रकार की खेती केवल एक अन्तर्कालीन पग ही समझना चाहिए।

आर्थिक समीक्षा (२३ जुलाई १९५५) मे श्री कैलाशनाथ काटजू सहकारी खेती की अवनति के विषय मे कहते हैं कि एक विस्तृत अर्थ म तो सहकारी खेती तभी कार्यान्वित हो सकती है, जब जमीन का एकीकरण कर दिया जाय। पिछले १८ वर्षों के भीतर मैंने इस मामले पर काफी सोच विचारा है और मुझे ऐसा प्रतीत

होता है कि इस प्रकार जमीनो के एकीकरण के मार्ग मे जो कठिनाइयाँ हैं, उन पर पार पाना असम्भव है।

इसके कारण बताते हुए काटजू साहब कहते हैं कि किसानो मे अपनी ही जमीन पर खेती करने की परम्परागत और चिरकाल भावना पाई जाती हैं। वे अपनी जमीन पर पृथक परिश्रम करके अपनी आजीविका प्राप्त करते हैं। किसान अपनी खेती-बाडी का काम स्वय ही नही करता उसके बाल बच्चे और परिवार के लोग भी उसकी सहायता करते हैं। यदि उससे कहा जाय कि वह सम्मिलित खेती का ढङ्ग अपना ले तो वह इस बात को कदापि स्वीकार नहीं करेगा। ' 'परिवार के सभी सदस्य सम्मिलित जमीन पर मिल जुल कर काम करते हैं। किन्तु उनसे यह आशा करना कि वह गाँव के सभी किसानो को एक सयुक्त परिवार का सदस्य समझें' निरी कल्पना होगी।

दूसरी कठिनाई यह बात निश्चित करने म है कि दो व्यक्तियो के श्रम के बीच परस्पर समता किस प्रकार स्थापित की जाय।

तीसरे इस प्रकार की खेती करने पर परिवार के बाल बच्चो का श्रम काम न आ सकेगा।

श्री काटजू का मत है कि भारत के लिये बडे पैमाने की खेती उतनी उचित नहीं है जितनी कि छोटे पैमाने की। उन्होंने कहा कि यदि भारतीय किसान को उसकी आवश्यकता के अनुसार ठीक समय पर अच्छा बीज, खाद और पानी मिलने लगे तो वह अपने श्रम के बल पर उतनी ही अच्छी फसल पैदा कर सकता है जितनी की दुनिया मे किसी भी देश के किसान पैदा करते हैं। जापानी ढङ्गो ने इस तथ्य की पुष्टी कर दी है।

योजना कमीशन द्वारा स्थापित Re organisation Committee of Land Reforms Panel की रिपोर्ट—

इस समिति ने सुझाव दिया है कि खेतों की उच्चतम सीमा निश्चित करने के पश्चात जो भूमि बचे तथा सरकार के पास जो बेकार भूमि बेकार (Waste land) पड़ी है उसको सहकारी खेती के लिये एकत्र कर दी जाए। जिन किसानों की भूमि का जोतना लाभदायक नहीं है उनकी भूमि भी उसी में मिला देनी चाहिये। इस प्रकार देश मे तीन प्रकार के खेत हो जायेंगे —

(१) सहकारी खेत जिनमे सरकार के अतिरिक्त (Surplus), दूसरी भूमि *तथा किसानो द्वारा स्वय इच्छा से एकत्र किये हुए खेत होंगे।*

(२) वे खेत जो खेतो की न्यूनतम सीमा निश्चित करने पर बचें। इनको पहले प्रकार की भूमि के साथ मिलाकर दोनो को एक साथ सहकारी ढग से जोतने का प्रयत्न किया जायगा।

(३) किसानो के खेत जो न्यूनतम सीमा से बडे होंगे। इनकी किसान स्वय देख भाल करेंगे परन्तु यहा भी यह प्रयत्न किया जायगा कि किसान स्वय इच्छा से सहकारी खेतो मे सम्मिलित हो जायें।

समिति ने यह अभी तक निश्चत नही किया कि सहकारी खेतों का नियन्त्रण किस ढग से हो। परन्तु सम्मिलित तीनो ढंगो मे से एक अपनाया जा सकता है—

(१) सारे खेत को पारिवारिक यूनिटो मे बाटना और उसको खेती करने के लिये छोटे-छोटे परिवारो मे बाँट देना। परिवार सहकारी समिति को लगान देंगे।

(२) सारे खेत को जोतने, बोने तथा काटने के लिये एक इकाई मानना परन्तु सिंचाई आदि के लिये उसको छोटी-छोटी इकाइयो मे बाँट देना और उनको वर्ष प्रतिवर्ष परिवारो में बाँट देना।

(३) सारे खेत का सब कार्यों के लिये एक साथ नियन्त्रण करना तथा सदस्यो को समयानुसार अथवा कार्यानुसार मजदूरी देना।

समिति का सुझाव है कि सारे देश मे एक बड़े पैमाने पर हर फसल के क्षेत्र मे सहकारी खेती का एक योजनाबद्ध तजुर्बा किया जाये।

समिति का यह भी सुझाव है कि हर राज्य मे एक छोटी समिति स्थापित की जाय जिसका चेयरमैन सहकारिता का मन्त्री हो। इसके सदस्य वे लोग हो जिनका सहकारी सिद्धान्त मे विश्वास हो तथा जो अनुभवी हो। इस समिति की सहायता के लिये एक ऐसा अफसर हो जो कि सारे राज्य मे सहकारी खेतो का सचालन करे।

सहकारी खेतो को बहुत प्रकार की छूट तथा सहायता देनी पडेगी जैसे उनको सरकार तथा सहकारी सस्थाओ से ऋण मिलना, खेती की स्वीकृत योजनाओ के लिये उनको औरो की अपेक्षा सरकार से पहले आर्थिक सहायता, बीज, खाद, खेती औजार मिलना, कुछ समय के लिये उनका लगान घटा देना तथा उनको कृषि आय कर से छूट देना आदि।

अभी १६५७ ई० के आरम्भ के महीनो मे हमारे देश मे इस बात पर बडा वादविवाद हुआ कि भारत मे सहकारी खेती को अपनाया जाय। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे कहा गया है कि योजना काल मे मुख्य कार्य यह होगा कि कुछ ऐसे मुख्य पग उठाये जायें जिनसे कि सहकारी खेती की नीव दृढ हो जाये, जिनसे दस वर्ष या ऐसे ही समय मे अधिकतर कृषि भूमि सहकारी आधार पर होने लगे। पडित नेहरू सहकारी खेती का समर्थन इसलिये करते हैं क्योकि इसके कारण किसान को टेक्नोलॉजिकल लाभ प्राप्त होता है। परन्तु इस प्रकार की खेती का मुख्य विरोध चौधरी चरणसिंह द्वारा किया गया है जो कि उत्तर प्रदेश के आय मन्त्री है। उनका कहना है कि सहकारी खेतो के कारण कुछ चुने हुये लोग अधिकतर लोगो की सादगी, नासमझी, श्रद्धालुता तथा आलस्य का लाभ उठायेंगे। इस प्रकार हम एक प्रकार के मध्यस्थो को हटाकर उनके स्थानो पर उनसे भी सख्त मध्यस्थो को स्थापित कर देंगे। इसके अतिरिक्त चौधरी साहब का यह भी कहना है कि इस प्रकार की

खेती से उत्पादन कम हो जायेगा । इससे प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तो को ठेस पहुच जायेगी' इसके द्वारा तानाशाही स्थापित हो जायेगी तथा इसके होने पर खेती का मशीनीकरण उसके सब परिणामो सहित हो जायेगा ।

(ई) कृषक स्वामित्व—इस प्रकार की खेती हमारे देश मे रैयतवारी क्षेत्रों जैसे बम्बई, मद्रास आदि मे पाई जाती है । इसमे किसानो का भूमि पर मौरूसी अधिकार होता है और भूमि हस्तान्तरित भी की जा सकती है । पजाब मे भी इस प्रकार की खेती पाई जाती है । वहाँ पूरे गाँव पर ही मालगुजारी निर्धारित की जाती है और फिर उसका बटवारा किसानो मे कर दिया जाता है । परन्तु जहा जहाँ भी ऐसी खेती की जाती है वहा भी किसानो की अवस्था खराब है । हम इस प्रकार की कृषक-स्वामित्व कृषि के समर्थक नही हैं। हम चाहते हैं कि हमारे देश मे उस किसान को जो स्वय भूमि को जोतना बोता है भूमि का स्वामी माना जाय और वह सीधा सरकार को मालगुजारी दे । यदि वह भूमि स्वय न जोते तो उसकी भूमि सरकार के आधीन चली जाये। इस प्रकार किसान भूमि का विश्वास भाजक (Trustee) रहे ।

इस प्रकार की खेती हमारे देश की वर्तमान परिस्थिति के लिये बहुत उपयुक्त जान पडती है । हमारे देश मे किसानो को निजी सम्पत्ति से बडा मोह है । इस प्रकार की खेती से किसानो की निजी सम्पत्ति की भूख सतुष्ट हो जायगी । इसके साथ-साथ भूमि पर अपना अधिकार होने के कारण किसान उस पर जी तोड कर कार्य करेगा और इसके कारण खेती की उन्नति होगी क्योकि यह ठीक ही कहा गया है निजी सम्पत्ति का जादू (Magic of private property) मरुस्थल को भी उपवन मे बदल देता है । इसके अतिरिक्त किसान की कार्य सचालन की बुद्धि (Initiative) पर भी कोई आघात न होगा। उसको अपनी इच्छानुसार कार्य करने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो जायेगा। इस प्रकार की खेती के कारण किसान किसी का दास भी न रहेगा जैसे कि वह पू जीवाद तथा सामूहिक खेती के अन्तर्गत रहेगा ।

परन्तु इस प्रकार की खेती चालू करने से पहले हमें निम्नलिखित बातो का ध्यान रखना पडेगा—

(१) किसान की भूमि को ऋणो के भुगतान मे न ली जाय ।

(२) यदि किसान खेती स्वय न करे तो भूमि सरकार के अधिकार मे चली जाय ।

(३) भूमि का हस्तान्तरण केवल उन लोगो को किया जा सके जो स्वय खेती करते हो ।

(४) किसान को भूमि लगान पर देने का अधिकार न दिया जाय ।

(५) खेत का एक न्यूनतम क्षेत्र निश्चित कर देना चाहिये जिसका भविष्य मे बटवारा न किया जा सके ।

(९) किसान अपने लिये बीज, खाद, औजार आदि खरीदने तथा अपनी फसल को बेचने के लिये सहकारी समितियाँ बनाये।

Q 25 'The ideal of the Community Projects is to create the Welfare State where people and Government will in co operation promote the objective.'

Discuss fully the various steps and activities proposed to implement the objective underlying the projects

प्रश्न २५—'सामूहिक विकास योजना का उद्देश्य एक लोक हितकारी राज्य की स्थापना करना है जहा जनता तथा सरकार उद्देश्य की पूर्ति के लिये सहयोग से कार्य करेंगे।'

योजना मे निहित उद्देश्यों की पूर्ति के लिये जो पग उठाये तथा कार्य किये गये हैं उनकी पूर्ण रूप से विवेचना कीजिये।

उत्तर—सामूहिक विकास योजना का विचार भारतवर्ष के लिये नया नही है। यह विचार इतना पुराना है जितने कि वेद। वैदिक यज्ञ सारे समाज के हित के लिये किये जाते थे और इन यज्ञो मे समाज के सारे व्यक्ति किसी न किसी रूप मे हाथ बटाते थे। चौथी शताब्दी पूर्व म भी मेगस्थनीज ने बताया कि भारतीय समाज सामूहिक जीवन बिताता था। जैन तथा बौद्धो के ग्रंथो से पता चलता है कि भारतवर्ष के लोग मेल-जोल से अपना जीवन बिताने के अभ्यस्त थे।

इस प्रकार सामूहिक विकास योजना भारत के लिये कोई नई वस्तु नही है। यह पुराने सामूहिक जीवन को फिर से चलाने का एक आधुनिक प्रयत्न है। इसमे आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर लिये गये है। इस योजना मे अलग-अलग गाँव म उन्नति करने का प्रयत्न न करके बहुत से गावो मे एक साथ उन्नति करने का प्रयत्न किया गया है। यह योजना किसी एक उद्देश्य की पूर्ति के करने के लिये ही चालू नही की गई है वरन् यह समाज के जीवन के हर पहलू को लेकर चालू की गई है। इस प्रकार इस योजना के अन्तगत विद्या, सफाई, चिकित्सा, कृषि, उद्योग धन्धे, सामाजिक कार्य आदि सभी चीज आती है। इस प्रकार इस योजना मे इस बात का प्रयत्न किया गया है कि गाव के लोग आर्थिक तथा नैतिक दृष्टि से उन्नत हो जायें। परन्तु इस प्रकार की उन्नति वे स्वय करें यह उनके ऊपर थोपी न जाय।

उद्देश्य—१९५१ की जनगणना के अनुसार भारत की ८२.५ प्रतिशत जनता ग्रामो म रहती है। इसलिये भारत जैसे प्रजातांत्रिक देश म यह आवश्यक है कि सरकार का ध्यान ग्रामो मे रहने वाली इस जनता की ओर आकर्षित हो। पिछले दो वर्षों मे ग्रामो मे से पूजी, योजना आदि शहरो की ओर चली जा रही है। इस प्रकार गाँवो मे अज्ञानता, गन्दगी, भूख आदि का साम्राज्य रहता है। भारत के स्वतन

हो जाने के पश्चात् यह आवश्यक हो गया है कि लोगों की भूख को शान्त किया जाए, रोगों को समूल नष्ट कर दिया जाय तथा अज्ञानता को जड से उखाड फेंका जाय। इसके अतिरिक्त लोगों के लिये कुछ खाली समय की भी आवश्यकता है ताकि वे काम से थक जाने पर अपनी शक्ति बटोर सके और समाज के दूसरे लोगों से मिल-जुल सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये यह आवश्यक है कि गाँव के लोगों के जीवन के हर पहलू को उन्नत किया जाय। सामूहिक विकास योजना द्वारा ऐसा ही प्रयत्न किया गया है। सामुदायिक विकास कार्यक्रम मे शुरु ही से इस बात पर जोर दिया गया है कि सारे समाज की उन्नति हो और पिछडे वर्गों पर खास ध्यान दिया जाय क्योकि विकास कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य देहातो मे ऐसे समाज का निर्माण करना है जिसमे किसी वर्ग के साथ भेद भाव या अन्याय न हो। कार्यक्रम का उद्देश्य यह भी है कि देहात के लोगो को आत्मोन्नति के लिये प्रेरित किया जाय और इसके लिये जनता के सगठनो की स्थापना करायी जाय, ताकि देहात मे ऐसे आदमी तैयार हो जो अपने लोगो को उन्नति के मार्ग पर ले चल। इस प्रकार सामूहिक विकास योजना का उद्देश्य अधिकाधिक लोगो का अधिकाधिक हित करना है। यही एक लोक हितकारी राज्य का उद्देश्य होता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सामूहिक विकास योजना का उद्देश्य एक लोक हितकारी राज्य की स्थापना करना है। परन्तु बलवन्त राय मेहता समिति की रिपोर्ट के विपक्ष मे अपना नोट देते समय श्री वी० जी० राव ने कहा है कि लोक हित कार्यो की अपेक्षा आर्थिक उन्नति कार्यो की ओर अधिक ध्यान देना चाहिये।

सामूहिक विकास योजना के अन्तर्गत विकास के निम्नलिखित कार्य किय जायेंगे—

(१) कृषि तथा कृषि सम्बन्धी कार्य
(२) यातायात
(३) शिक्षा
(४) स्वास्थ्य
(५) प्रशिक्षा (Training)
(६) सहायक रोजगार
(७) मकान
(८) सामाजिक कल्याण

(१) कृषि—इसके अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य किये जायेंगे—परती तथा गई भूमि को खेती के योग्य बनाना, तालाब, नहरो, कुओ तथा नलकूपो द्वारा सिचाई की योजना बनाना जिससे कि योजना काल मे कम से कम आधी भूमि पर सिचाई के साधन उपलब्ध हो जायें, उत्तम बीज तथा खाद का प्रबन्ध करना, फसल के बेचन तथा साख का प्रबन्ध करना, पशुओ के प्रजनन केन्द्रो का प्रबन्ध करना, देश के भीतर मछलियो के उद्योग को उन्नत करना, फलो तथा सब्जियो की काश्त की उन्नति करना, भूमि सम्बन्धी अनुसधान करना, यथा सम्भव प्रत्येक गाँव अथवा ग्राम समूह मे बहुउद्देश्य सहकारी समिति की स्थापना करना जिसका सदस्य प्रत्येक परिवार का एक व्यक्ति अवश्य हो।

(२) यातायात—इसके अन्तर्गत सडको का प्रबन्ध किया जायगा तथा

मोटर यातायात को प्रोत्साहन दिया जायगा। इसके अतिरिक्त बैलगाडी आदि का भी प्रबन्ध किया जायगा।

(३) शिक्षा—इसके अन्तर्गत प्रारम्भिक आवश्यक तथा निशुल्क शिक्षा का प्रबन्ध करना, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा का प्रबन्ध करना, सामाजिक शिक्षा तथा पुस्तकालयों का प्रबन्ध करना आदि हैं।

(४) स्वास्थ्य—इसके अन्तर्गत सफाई तथा चिकित्सा का प्रबन्ध, दाइयों का प्रबन्ध करना आदि है।

(५) प्रशिक्षा—इसके अन्तर्गत दस्तकारी के स्तर को ऊँचा करने के लिये प्रशिक्षा का प्रबन्ध करना, कृषकों को प्रशिक्षा देना, निरीक्षकों को प्रशिक्षा देना, प्रबन्धकों को प्रशिक्षा देना, स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षा का प्रबन्ध करना आदि सम्मिलित हैं।

(६) सहायक रोजगार—इसके अन्तर्गत गृह तथा छोटे उद्योगों को प्रोत्साहन देना आता है जिससे कि बेकार तथा अर्द्ध बेकार लोगों को काम मिल सके तथा इस प्रकार की योजना बनाना जिससे कि व्यापार सहायक उद्योग तथा लोक हित सेवाओं में मजदूरों का समान बटवारा हो जाय।

(७) मकान—इसके अन्तर्गत गावों में उत्तम प्रकार के मकान बनाने के विषय में प्रदर्शन तथा शिक्षा का प्रबन्ध करना तथा जो गाँव घने बसे हैं उनमें नये स्थानों पर मकान बनाना आदि आते हैं।

(८) सामाजिक कल्याण—इसके अन्तर्गत दृश्य तथा श्रव्य (auto-visual) प्रणाली के अनुसार ग्रामों में मनोरंजन के साधनों का प्रचार किया जायगा। इसमें मनोरंजन गरबार्थ, खेल-कूद आदि की व्यवस्था की जायेगी। इसी के अन्तर्गत सहकारी संस्थाओं की उन्नति भी आती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सामूहिक विकास योजना के अन्तर्गत किये जाने वाले कार्य अधिक ही नहीं हैं, वरन् उनमें से प्रत्येक कार्य बडा व्यापक है। इतने बडे कार्य को सरकार के लिए करना असम्भव है। इसलिए यह आवश्यक है कि इस सब कार्य को करने के लिये ग्रामीण जनता का पूरा-पूरा सहयोग हो। यह सहयोग श्रम, धन, योग्यता आदि सभी चीजों के रूप में होगा। इतना बडा यह कार्य तभी सफल होगा जबकि गाँव के लोग यह निश्चित करेंगे कि उनको किस चीज की आवश्यकता है तथा वह किस प्रकार प्राप्त की जा सकेगी। उनको हिम्मत करके हाथ में फावडा लेना पडेगा तथा स्वयं तथा दूसरों के साथ मिलकर कार्य करना पडेगा। सरकार की सहायता उनको उस समय मिलेगी जबकि उनके बिना उनका काम न चलेगा। इस प्रकार सामूहिक विकास योजना जनता तथा सरकार के सहयोग द्वारा पूरी हो सकेगी—किसी एक से वह पूरी न हो सकेगी।

कार्यक्रम तथा संगठन—

इन सब उद्देश्यों को लेकर २ अक्टूबर १९५२ ई० से सामूहिक विकास

योजना का कार्यक्रम आरम्भ किया गया। इसके अनुसार सारे देश को अनेक योजना क्षेत्रो मे बाँटा गया है। प्रत्येक योजना क्षेत्र (Project Area) मे लगभग ३०० गाँव होगे जिनमे लगभग २ लाख आदमी तथा १ लाख ५० हजार एकड खेती योग्य भमि होगी। प्रत्येक योजना क्षेत्र को तीन विकास खण्डो (Development Blocks) मे बाँटा जायगा। प्रत्येक विकास खण्ड मे लगभग १०० गाँव तथा २० से ६० हजार तक जनसख्या होगी। प्रत्येक खण्ड को पाँच से दस ग्रामो के समूह मे बाँटा जायगा। प्रत्येक ग्राम समूह एक ग्राम-स्तर कर्मचारी (Village Level Worker) का काय क्षेत्र होगा

प्रत्येक विकास खण्ड मे एक मण्डी इकाई होगी। विकास खण्ड के गावो के लिए मण्डी इकाई आर्थिक, सामाजिक तथा सामूहिक कार्यों का केन्द्र होगी तथा विकास खण्ड मे यह ऐसे स्थान पर होगी जहाँ से यह काय अत्यन्त सफलतापूर्वक ढङ्ग मे हो सके। मण्डी इकाई मे साधारणतया एक औषधालय तथा स्वास्थ्य केन्द्र होगा जो गतिशील औषधालयो द्वारा गाव मे पहुचेगा। औषधालय मे एक डाक्टर, स्वास्थ्य निरीक्षक तथा सफाई निरीक्षक कार्य करेंगे। मण्डी इकाई मे यातायात खेता के औजार तथा सामान ठीक करने का केन्द्र, वस्तु के क्रय-विक्रय का केन्द्र, कृषि की उपज के लिये एक गोदाम तथा पशु सम्बन्धी केन्द्र होग। इसके अतिरिक्त कुछ मनोरजन तथा शिक्षा सम्बन्धी केन्द्र स्थापित किये जायग।

सगठन (Organisation)—यह कार्यक्रम भारत सरकार तथा विभिन्न राज्यो के सहयोग से किया जायगा।

केन्द्रीय सगठन—सामूहिक विकास कार्य की महत्ता व इसके बढ़ते हुए काय के कारण सितम्बर १९५६ ई० म इसके लिये एक अलग मन्त्रालय का निर्माण किया गया। यह मन्त्रालय इस प्रोग्राम के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी है। आधारभत नीति के सामने एक केन्द्रीय समिति को प्रस्तुत किये जाते है जिसका सभापति प्रधान मन्त्री तथा जिसके सदस्य योजना आयोग के सदस्य, खाद्य तथा कृषि तथा सामूहिक विकास योजना के मन्त्री होते हैं। इस कार्य से सम्बन्धित दूसरे मन्त्रालयो से जो सम्बन्ध स्थापित किया जाता है वह या तो विशेष समितियो के द्वारा या समय-समय पर विचार विनिमय के द्वारा किया जाता है। केन्द्रीय सगठन के अन्तर्गत एक केन्द्रीय समिति तथा सामूहिक योजना प्रबन्धक (Community Project Administrator) होंगे। सामूहिक योजना प्रबन्धक देश भर मे सामूहिक योजना के नियोजन, निर्देशन तथा समन्वय के लिए उत्तरदायी होगा तथा इस कार्य मे भिन्न-भिन्न राज्यो के उपयुक्त अधिकारियो से सलाह लेगा।

राज्य सगठन—प्रत्येक राज्य म राज्य-विकास समिति (State Development Committee) होगी जिसमे राज्य के मुख्य मन्त्री सभापति, विकास मन्त्री सदस्य तथा विकास कमिश्नर सचिव होंगे। विकास कमिश्नर पर ही राज्य म

इस योजना के कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व होगा । वह समिति के सचिव के रूप मे कार्य करेगा । यही समिति राज्य मे समस्त सामूहिक नियोजन का मार्ग दर्शन करेगी ।

जिला सगठन—जिलाधीश जिला योजना अथवा विकास समिति का अध्यक्ष होगा । एक विकास अफसर जिसको जिला योजना अफसर कहा जायगा इस समिति का सचिव होगा । जिले मे सब विकास विभागो के अध्यक्ष इस समिति के सदस्य रहेगे । इसके अतिरिक्त जिला बोर्डों के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष भी इस समिति मे रहेगे । जिलो मे जहा आवश्यक होगा एक जिला विकास अधिकारी (district Development officer) नियुक्त किया जायगा । यह विकास कार्य का उत्तरदायी कार्य करेगा । यह अफसर अपने जिले के सामूहिक विकास कार्य का उत्तरदायी होगा ।

सामूहिक योजनाओ को कार्यान्वित करने के लिये प्रमुख कर्मचारी योजना कार्यकारी अधिकारी (Project Executive Officer) होगे । योजना को कार्यान्वित करने के लिये इन्हे पूर्वी पजाब के नीलोखेरी नामक स्थान पर इस कार्य की विशेष शिक्षा दी गई थी । ये अपने क्षेत्र के सामूहिक कार्यक्रम के लिये उत्तरदायी होगे । इनकी सहायता के लिये, कृषि, सहकारिता, पशु-पालन, कुटीर उद्योग आदि के विशेषज्ञ होगे । अन्त मे एक गाँव स्तर कार्यकर्ता (Village Level Worker) होता है जो कि बहुउद्देश्य व्यक्ति का कार्य करता है । यह व्यक्ति ५ से १० गाँवों मे कार्य करता है । गाव वालो का सहयोग प्राप्त करने के लिये भारत सेवक समाज की स्थापना की गई है । यह राजनीतिक दल नही है ।

वित्त व्यवस्था— इस योजना को पूरा करने के लिये सरकार तथा जनता दोनो ही धन की व्यवस्था करेंगे । जनता का सहयोग श्रम व धन के रूप मे होगा । जो धन सरकार खर्च करेगी उसके स्थायी खर्च का बटवारा केन्द्र और राज्यों मे ३ १ के अनुपात मे होगा । तथा चालू खर्च को केन्द्र तथा राज्य बराबर-बराबर खर्च करेंगे । परन्तु तीन वर्ष पश्चात् सामूहिक खण्डो का कुल खर्च राज्य ही सहन करेंगे । परन्तु इस योजना को चलाने वाले कर्मचारियो का खर्च केन्द्रीय सरकार भी सहन करेगी । परन्तु किसी वर्ष मे केन्द्र का हिस्सा ५० प्रतिशत अथवा ६ करोड रुपये (इन दोनो मे जो कम हो) होगा । एक और सामूहिक क्षेत्र का खर्च ६५ लाख रुपये होगा जो तीन वर्ष मे किया जायगा । इस वर्ष मे से ६ ५३ लाख सयुक्त राष्ट्र सहन करेगा । नगरो के एक क्षेत्र का खर्च ११ लाख होगा जिसमे से ७ ५ लाख सयुक्त राष्ट्र अमेरिका का होगा । परन्तु साधनो की कमी के कारण एक राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्र तथा एक सामूहिक विकास क्षेत्र का दूसरी योजना काल मे तीन वर्ष का खर्च क्रमश ४ लाख व १२ लाख रुपया रखा गया है । यदि सामूहिक विकास योजना क्षेत्र मे जिसका कार्य सितम्बर १६५७ ई० मे पूरा हो जाना चाहिये था कोई बचत हुई है तो उस धन को मार्च १६५६ तक खर्च करने का निश्चय किया

गया है। इस खर्च को केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें ही एक निश्चित योजना के अनुसार करेंगी। द्वितीय योजना काल के लिये यह निश्चय किया गया है कि सामूहिक विकास योजना क्षेत्रों में कार्य के प्रति लोगों में दिलचस्पी बनाये रखने के लिये प्रत्येक क्षेत्र पर तीन वर्ष तक प्रतिवर्ष ३०,००० रुपये 'स्थानीय कार्य' तथा 'सामाजिक शिक्षा' के मद के अन्तर्गत खर्च किये जायेंगे। यह खर्च भी केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों में एक निश्चित योजना के अनुसार किया जायेगा।

प्रथम योजना काल में ९६.५ करोड़ रुपये खर्च करने का निश्चय किया गया था। परन्तु इसमें से वास्तविक खर्च का अनुमान ५२.४ करोड़ था। इस प्रकार ४४.१ करोड़ दूसरी योजना काल में खर्च होगा। दूसरी योजना में इस कार्य के लिये २०० करोड़ रुपए रखे गये हैं।

विदेशी सहायता—इस सब कार्य को पूरा करने के लिये भारत को संयुक्त राष्ट्र अमेरिका ने १९५२-५३ से १९५६-५७ तक १२,७७१,८६० डालर का मागन देने का वचन दिया। उसमें से १२.०१५ मिलियन डालर सामान मगाने का आर्डर दिया गया था। परन्तु उसमें से १५ सितम्बर १९५६ तक केवल ९.७२३ मिलियन डालर का सामान आ पाया था। कुछ विशेषज्ञों की सेवायें भी भारत तथा राज्य सरकारों को प्रदान की गई हैं।

इसके अतिरिक्त भारत को प्रारम्भ से ही Ford Foundation से बड़ी सहायता प्राप्त हो रही है। वह योजना को चलाने वाले हजारों कार्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षा दे रहा है। इसने १५ पायलेट प्राजेक्टों को चलाने के लिये भी सहायता प्रदान की है। ये प्राजेक्ट गाव की उन्नति में सहायक होंगे।

राष्ट्रीय विस्तार सेवा—(National Extension Service)

यह योजना २ अक्तूबर १९५३ से चालू की गई। इसके चालू करने की सिफारिश अधिक अन्न उपजाओ जाच समिति तथा योजना आयोग ने की थी। इसके द्वारा १,२०,००० गावों अर्थात् कुल जनसख्या के एक चौथाई तक पहुचाने का प्रयत्न किया गया है। क्योंकि सामूहिक विकास योजना तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा का उद्देश्य एक ही है इस कारण केन्द्र तथा राज्यों में इनको मिला दिया गया है। परन्तु जबकि सामूहिक विकास योजना केवल ३ वर्ष के लिये है राष्ट्रीय विस्तार सेवा स्थायी है। इस योजना के द्वारा द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्त में तक सारे देश के लोगों तक पहुचने का अवसर प्राप्त हो जायगा।

राष्ट्रीय विस्तार सेवा का उद्देश्य गाव के लोगों को खेती तथा घरेलू विज्ञान के विषय में जानकार कराना है। इसके अतिरिक्त खेती आदि में जो अन्वेषण होंगे उनके विषय में भी उनको जानकारी कराई जायगी। उनको खेती करने के उन्नत ढगों के विषय में भी जानकारी कराई जायगी। यदि किसी समस्या पर ध्यान देने की आवश्यकता होगी तो उसके विषय में अन्वेषण सस्थाओं को सूचित किया

जायगा। इनके अतिरिक्त किसानों को अवसर दिया जायेगा कि वे मिल-जुल कर एक दूसरे से खेती सम्बन्धी बहुत सी बातें सीखें।
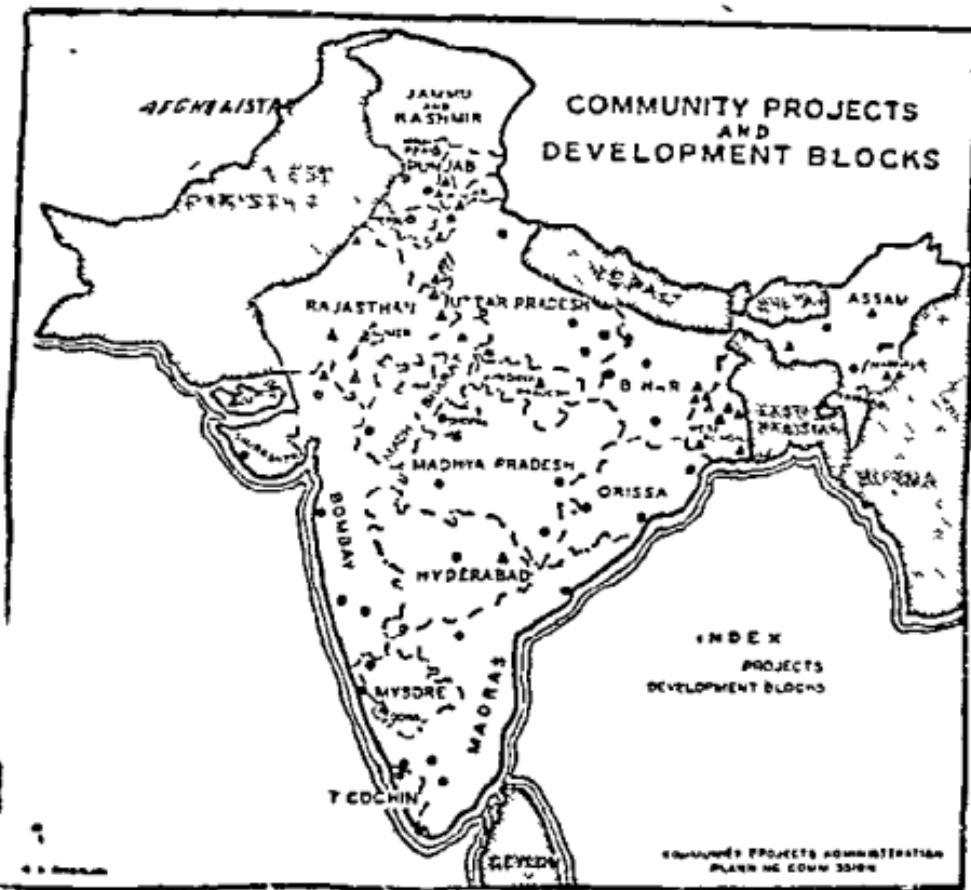
राष्ट्रीय विस्तार सेवा का आधारभूत सिद्धान्त यह है कि समाज के लोग स्वयं अपनी ओर ध्यान दें और यदि आवश्यकता पड़े तो सरकार उनको समाज सेवा तथा ऋण देकर सहायता करे। इसके द्वारा गाँव की सब समस्यायें सहकारी सिद्धान्त पर सुलझाने का प्रयत्न किया जायेगा।

इस योजना की व्यवस्था सामूहिक विकास योजना के अनुसार ही है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में इस योजना पर १०१ करोड़ रु० खर्च किये गये। केन्द्रीय सरकार ने स्थायी खर्च का ७५ प्रतिशत तथा बार-बार होने वाले खर्च का ५० प्रतिशत सहन किया। शेष राज्य की सरकारों ने खर्च किया। इस योजना को कोई विदेशी सहायता प्राप्त न हुई।

राष्ट्रीय विस्तार योजना द्वारा ३१ मार्च १९५७ तक निम्नलिखित कार्य किया गया—

अब तक सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रो की जनता धन, सामग्री और श्रम के रूप मे ६६ करोड ३१ लाख रु० दे चुकी है। सरकार न ६० करोड ४ लाख रुपये खर्च किये है। इस प्रकार जन सहयोग का अनुपात सरकार के खर्च का ६० प्रतिशत होता है। इस समय देश के ५,५८,०६६ गावो मे से २,३४,९१० गाँवो के १३ करोड निवासी इस कार्य-क्रम के अन्तर्गत है।

जन सहयोग दिलाने मे पचायतो ने बहुत भाग लिया है। वैसे तो सभी राज्य ज्यादा से ज्यादा पचायतो को स्थापित और उन्हे साधन सम्पन्न बनाने म प्रयलशील है फिर भी सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षत्रो मे पचायतो की स्थापना पर इन्हे जोर दिया गया है और विशेष ज्यादा अधिकार और आय के साधन सौंपे गये है।

अक्तूबर, १९५२ मे कार्यक्रम के आरम्भ से पिछले वर्ष के अन्त तक सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रो मे ३४,००० पचायते और अन्य निकाय कायम हुये। पहली पचवर्षीय आयोजना की अवधि मे पचायतो की सख्या ८३,०८७ से बढकर १,१७,५९३ हो गई।

अधिकाश पचायतो को स्कूलो के भवन बनाने और उनकी देखभाल करने गाँव की गलियो को पक्की करने, सामुदायिक केन्द्र, पचायतघर और कुएँ बनाने का काम सौंपा गया है। गाँव की गलियो म रोशनी, गाँव मे सफाई, जलाशयो और मछली पालने के तालाबो को बनाना, वनो और बागो की देखभाल और परती भूमि को खेती योग्य बनाने का काम भी पचायतो के जिम्मे है।

पिछले कई वर्षो मे (अर्थात् ३० सितम्बर १९५८ तक) सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रो मे प्रौढ शिक्षणालयो की सख्या ८७,००० और वाचनालयो की सख्या ४५१०० हो गई। देहातो मे ५,०७,००० शौचालय बनाये गये, १,८६,१५,००० गज लम्बी नालियाँ खोदी गई, १,२६,००० कुएँ बनाये गये और ७८६०० मील कच्ची सडके बनाई गई तथा ९१,४०० मील लम्बी सडक को उन्नत किया गया। इन सब कामो मे पचायतो और अन्य निकायो ने महत्वपूर्ण भाग लिया।

सहकारी सस्थाओ ने भी बहुत काम किया। वास्तव मे कार्यक्रम की एक उल्लेखनीय सफलता यह है कि लोगो को विविध कामो के लिये सहकारी सस्थाये बनाने की प्रेरणा मिली। इससे खेती और उद्योग धन्धो की उन्नति हुई। नमूने की पडताल मे पता चलता है कि सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रो मे अन्न की उपज २० से २५ प्रतिशत तक बढी है। ३० सितम्बर १९५८ तक किसानो के खेतो पर ४८,५१,००० प्रदर्शन किये गये। १,५७,९८,००० मन उन्नत बीज तथा २,९०,२६,००० मन रासायनिक खाद बाँटी गई, ११,७५,००० उन्नत औजार बाटे गये। ५०,१५,००० कम्पोस्ट गड्ढे खोदे गये।

इसी बीच ४५८० प्रजनन केन्द्र चालू किये गये। १० ५ मिलियन पशुओ को रिडरपेस्ट से बचाया गया। २२,००० साड तथा ३१८,००० बिछिया बाटी गई।

लोगो को अपना अधिकतर काम सहकारी ढङ्ग से करने को प्रेरित करने के लिये प्रत्येक खड मे सहकारी विस्तार अधिकारी नियुक्त किये गये है। इन अधिकारियो को काम सिखाने के लिये ८ केन्द्र खोले गये हैं।

३० सितम्बर १९५८ तक सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रो मे १,२७,१२५ सहकारी सस्थायें खोली गई। सहकारी सस्थाओ के नये सदस्यों की सख्या ८७·८ लाख है।

देहातो की कला और शिल्प को बढावा देने के लिये २६४८ प्रदर्शन एव प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये हैं। इन केन्द्रो मे ६२,००० आदमियो को सिखाया और पुनरभ्यास कराया गया। लगभग ५,७८,००० लोगो को आशिक रोजगार और १,७१,००० लोगो को पूरा रोजगार दिलाया गया। १९५६ के अन्त तक विकास कार्यक्रम से १,०३,७०,००० परिवारो को लाभ पहुचा।

विकास मण्डलो, ग्राम परिषदो, ग्राम सभाओ या ग्राम सघो जैसी सस्थाओ का काम भी कम महत्वपूर्ण नही रहा। १९५६ के अन्त तक सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय विस्तार सेवा और क्षेत्रो मे इस प्रकार की ४८,००० सस्थायें स्थापित की गई। इमी अवधि मे युवक सघ, किसान सघ, महिला समिति जैसे १,३८,००० जन सगठन बनाये गये।

द्वितीय योजना का कार्यक्रम—सितम्बर १९५५ ई० मे राष्ट्रीय विकास कौंसिल ने मजूर किया कि द्वितीय पचवर्षीय योजना मे सारे देश में राष्ट्रीय विस्तार सेवा को फैलाना चाहिये तथा कम से कम ४० प्रतिशत राष्ट्रीय विस्तार क्षत्रो (National Extension Blocks) को सामूहिक उन्नति क्षेत्रों (Community Development Blocks) मे गहन उन्नति के लिये बदल देना चाहिये। इस प्रकार द्वितीय योजना मे ३८०० अतिरिक्त राष्ट्र विस्तार क्षेत्रो मे कार्य करना पडेगा तथा उनमे से कम से कम १९२० को सामूहिक उन्नति क्षेत्रो मे बदलना पडेगा।

इस कार्य मे २६३ करोड रुपये खर्च होने का अनुमान है परन्तु योजना मे केवल २०० करोड रुपये रखे गये हैं।

प्रथम योजना मे खेती, पशु-पालन, सिचाई, शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई, यातायात के क्षेत्रो मे बहुत सा काम किया गया। द्वितीय योजना मे इन सब क्षेत्रो मे साधारण काम तो चलता रहेगा परन्तु इसके अतिरिक्त अग्रलिखित क्षेत्रो मे विशेष कार्य किया जायगा—

(१) कुटीर उद्योगो की उन्नति जिससे कि गांव के लोगो को रोजगार मिले।

(२) सहकारी कार्यों की उन्नति।

(३) स्त्रियों व बच्चो मे काम फैलाना, तथा

(४) पिछडी जातियो मे अधिक कार्य करना।

आलोचनायें—योजना कमीशन ने इस कार्य की पडताल करके उसकी एक आलोचनात्मक रिपोर्ट प्रस्तुत की है। इसमे इस कार्य की बहुत सी कमजोरियो को बताया है तथा उनको दूर करने के ढङ्ग भी बताये है। परन्तु इसका अभिप्राय यह नही है कि कमीशन ने इस कार्य को बिल्कुल बेकार माना है क्योकि इस कार्य के फलस्वरूप प्रत्येक विकास क्षेत्र के गावो मे कुछ न कुछ कार्य हुआ है। इस कार्य मे विशेष उल्लेखनीय खेती करने का उन्नत ढङ्ग अपनाना तथा सिचाई के लिये प्रबन्ध करना है।

इस कार्य के होने के कारण गाव के लोग अब यह अनुभव करने लगे हैं कि सरकार न केवल शासन करने के लिय है वरन् वह लोगो की सहायता करने के लिये भी है। परन्तु इस आशा के कारण ही कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न हमारे सामने उपस्थित होते हैं। उनमे से मुख्य यह हैं कि सरकार कहाँ तक लोगो की आशाओ को पूरा कर सकती है। इसी ओर योजना कमीशन की रिपोर्ट ने हमारा ध्यान आकर्षित किया है।

इस रिपोर्ट मे बताया गया है कि लोग अब सरकार से इतनी सहायता की आशा करते हैं कि वह सरकार के वर्तमान साधनो से पूरी नही हो सकती। इसके विपरीत लोगो मे आत्म निर्भरता तथा स्वय कार्य करने की इच्छा न तो व्यक्तिगत आधार पर और न सामूहिक आधार पर ही उत्पन्न हुई है। इस कारण जब तक सरकार गावो मे अधिक धन खर्च नही करेगी तथा जब तक गाव के लोग आत्म-निर्भरता तथा स्वय कार्य करने की भावना पैदा नही करेंगे, तब तक ग्रामीण भारत मे एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जायेगी जिसके कारण बहुत सी कठिनाइया उत्पन्न हो जायेंगी।

इस रिपोर्ट मे आगे बताया गया है कि इस कार्य के सचालन मे एक बडी कमी यह है कि इसका लाभ सब स्थानो पर समान नही पहुँचता। विकास क्षेत्रो के गावो मे ही उन गावो को अधिक लाभ होता है जो कि पहुँच के अन्दर हैं परन्तु दूर के गावों को कम लाभ प्राप्त होता है। व्यक्तियो मे किसानो तथा गैर किसानो के लाभ मे अन्तर है तथा किसानो मे भी उनको अधिक लाभ प्राप्त होता है जिनके पास बडे खेत हैं। इस रिपोर्ट मे कहा गया है कि यह बात बडी चिन्ता का विषय है। इस चिन्ता का आधार न केवल यह है कि यह सामाजिक तथा क्षेत्रीय आधार पर अनुचित है वरन् जैसे-जैसे लोगो मे राजनीतिक जाग्रति उत्पन्न होती जाती है वैसे ही वैसे यह राजनीतिक दृष्टि से बडी कठिनाई उत्पन्न करेगा।

रिपोर्ट मे यह भी बताया गया है कि लोगो के सामाजिक दृष्टिकोण मे अभी तक कोई अन्तर नहीं आया है। इसका पता इस बात से लगता है कि लोग सामूहिक केन्द्रो, युवक क्लबो तथा स्त्रियो के सगठनो मे भाग लेने के लिये तैयार नहीं हैं। लोग सहकारी समितियो तथा पचायतो मे भी कम भाग लेते हैं।

इस रिपोर्ट मे बडे लोगो की शिक्षा तथा कुटीर उद्योगो के विषय मे भी भेद प्रगट किया गया है। इसके अतिरिक्त रिपोर्ट मे यह भी कहा गया है कि सामूहिक विकास योजना के उद्देश्यो तथा उनकी टक्नीक न तो पर्याप्त है और न समान। सलाहकार समितियों तथा पचायतो की ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। सामूहिक विकास ने उसके पश्चात् किय जाने वाले गहन कार्य के बीच वाले समय मे पहला किया सब कार्य प्राय समाप्त हो गया है।

इस रिपोर्ट मे इस बात पर भी जोर दिया गया है कि विकास का कार्य पचायतो तथा सहकारी समितियों के द्वारा किया जाना चाहिये जिससे कि जनता इस कार्य मे हाथ बटाती रहे तथा यह कार्य बहुत समय तक चलता रहे।

इस रिपोर्ट म यह भी कहा गया है कि विकासात्मक कार्य का शासनात्मक पहलू भी समझना आवश्यक है। इसमे सुझाव दिया गया है कि जिले के मुख्य शासन कर्ता का मुख्य कार्य विकास करना होना चाहिये और उसको मालगुजारी वसूल करने तथा शान्ति स्थापित करने के लिय कुछ लोगो से सहायता प्राप्त होनी चाहिये। इस क्रम का उल्टा करना ठीक नही है।

इस रिपोर्ट मे ग्राम सेवक के कार्य के लिये भी सुझाव दिया गया है। इस रिपोर्ट मे ऋण की भी एक व्यापक नीति की आवश्यकता बताई गई है जिसके कारण आर्थिक उन्नति सम्भव हो सके।

सुझाव—

अभी हाल ही म बलवन्त राय महता कमटी ने सामूहिक विकास योजना पर अपनी रिपोर्ट दी है जिसमे कहा गया है कि सामूहिक विकास कार्य मे लोग हितकारी कार्यो (Welfare activities) मे ध्यान हटाकर आर्थिक उन्नति के अधिक महत्व-पूर्ण पहलुओ (More demanding aspects of economic development) की ओर ध्यान दना चाहिये।

समिति का मत है कि सामूहिक विकास योजनाओ पर नियन्त्रण करने वाली मशीनरी का प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीयकरण (Democratic decentralization) म ही वास्तविक ग्राम्य उन्नति हो सकती है। समिति का मत है कि नियन्त्रण का काय पचायत समिति के हाथ मे होना चाहिय जिसका काय क्षेत्र एक विकास क्षत्र (Development block) जितना होना चाहिय। इस क्षेत्र की जनसख्या ८०,००० से अधिक नही होनी चाहिय। यह समिति गाव पचायतो मे से (Indirect elections) द्वारा बनानी चाहिए। इसम जिल के जीवन के सभी अङ्गो का प्रतिनिधित्व होना चाहिए। इसका कार्य खेती, लघु सिचाई कार्यो आदि की उन्नति, प्रारम्भिक स्कूलो का नियन्त्रण तथा स्थानीय उद्योगो का प्रोत्साहन देना होगा समिति का कहना है कि राज्य सरकारो को चाहिये कि वे इन सब कार्यो को तभी अपने हाथ म ल जबकि पचायत समिति इनको न कर सके। इस समिति के साधनो मे भूमि कर की एक निश्चित कानूनी प्रतिशत, व्यवसायो तथा व्यापार पर कर तथा अचल

सम्पत्ति कर पर एक उपकर (Surcharge) सम्मिलित होंगे। समिति का यह भी सुझाव है कि पचायत समिति मे दो प्रकार के अफसर होंगे—ब्लाक-स्तरीय (Block- level) तथा ग्राम स्तरीय (Village-level)। ये सब अफसर राज्य केडर (Cadre) से लिये जायेंगे। उनके वेतन, महगाई, पेन्शन आदि की जिम्मेदारी राज्य सरकारो की होगी। पचायत समिति उनके आने जाने के खर्चे को ही सहन करेगी।

रिपोर्ट म यह भी कहा गया है कि जो विषय जो राज्यो के हाथ मे हैं उनमे केन्द्रीय सरकार को चाहिये कि वह केवल धन से राज्य सरकारो की सहायता करे तथा उच्चतम स्तर पर अनुसधान के एकीकरण का कार्य करे। इस रिपोर्ट मे कहा गया गया कि जिन विषयो की जाँच राज्य के टेक्नीकल अफसरो ने कर ली है योजना मे सम्मिलित करने अथवा केन्द्रीय सरकार से सहायता प्राप्त करने के लिये उनकी जाँच फिर से केन्द्रीय सरकार के टेक्नीकल अफसरो द्वारा करानी अनावश्यक है। इसी प्रकार यदि योजना कमीशन द्वारा कोई योजना स्वीकार हो गई है तो केन्द्रीय सरकार द्वारा फिर से उनकी जाच कराने की कोई आवश्यकता नही है।

रिपोर्ट मे यह भी बताया गया है कि सामूहिक विकास क्षत्रो म किस प्रकार *खेती की उन्नति की जा सकती है।* इसमे यह भी कहा गया है कि वे क्षत्र जहाँ सिचाई की सुविधायें नही हैं उनमें मोट अनाज के उन्नत बीज बाटे जायें। रिपोर्ट म यह भी कहा गया है कि राष्ट्रीय विस्तार सेवा का कार्य द्वितीय योजना काल म पूरा होना कुछ वातो के कारण सभव नही। इस कारण इसके पूरा करन के समय को ३ वर्ष बढ़ा देना चाहिये।

यहाँ यह वात बताने योग्य है कि मुख्य मन्त्रियो ने जनवरी १६५८ की राष्ट्रीय उन्नति कौंसिल (Standing Committee) की छठी बैठक मे बलवन्त राय महता कमेटी के इस सुझाव को सिद्धात मे मान लिया है कि प्रत्यक विकास क्षेत्र मे एक प्रजातान्त्रिक सस्था स्थापित की जाय।

परन्तु ५ अप्रैल १६५८ को सामूहिक उन्नति मन्त्री श्री दे ने लोक सभा में स्वीकार किया कि यद्यपि सभी राज्यों ने महता समिति को सिद्धान्त मे स्वीकार कर लिया था परन्तु फिर भी आन्ध्र और मद्रास को छोड़कर कहीं भी प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीयकरण को कार्यान्वित नही किया गया है। उन्होने बताया कि कुछ प्रभाव शाली तत्व इसको कार्यान्वित करन मे बाधक हैं।

२३ अप्रैल १६५८ की एक बैठक मे सामूहिक विकास की केन्द्रीय समिति न योजना तथा उन्नति के कार्यों का शीघ्र ही विकेन्द्रीकरण करने की वात स्वीकार कर ली है। समिति ने सुझाव दिया है कि ब्लाक अथवा जिला-स्तर पर कानूनी सस्थायें स्थापित की जाए। जिनकी योजना तथा विकास की पूरी जिम्मेदारी हो। राज्यो से कहा जायेगा कि वे इस बात का आश्वासन द कि अगले तीन वर्षों मे ऐसी

सस्थाये स्थापित कर दी जायेगी। इनके पूर्ण करने की अवधि को भी अक्तूबर १९६३ तक बढा दिया गया है।

यह आवश्यक है कि समय-समय पर गाँवो की सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति की जाच की जाय जिससे कि आर्थिक उन्नति का पता लग सके। यह भी आवश्यक है कि गाव के बेरोजगार अथवा कम समय रोजगार पाने वालो की जाच की जाय तथा यह भी देखा जाय कि कौन से कुटीर उद्योगो मे लगाये जा सकते है। इस कार्य को ग्राम पचायतो को करना चाहिये। लोगो के सहयोग को अधिकाधिक प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाय तथा घूसखोरी को रोका जाय।

सामूहिक विकास योजना पर अपना विचार प्रगट करते हुये प० नेहरू ने कहा कि मेरे विचार मे सामूहिक विकास प्रोग्राम तथा इनके द्वारा किया गया कार्य आश्चर्यजनक है। यह बहुत प्रशसनीय है। परन्तु यह कहने के पश्चात् यह भी ठीक है कि सामूहिक विकास की उन्नति के कारण ही यह कुछ कठिनाइयो मे पड गया है और ये कठिनाइया आधारभूत तथा महत्वपूर्ण है। यदि यह आन्दोलन छोटे-छोटे कार्यकर्त्ताओ की ओर दौडेगा तो यह समाप्त हो जायेगा। यह ठीक है कि इससे फिर भी कुछ लाभ होगा परन्तु इस प्रोग्राम की आधारभूत कीमत चली जायगी। यह बात याद रखनी चाहिये कि गाव मे छोटा सा कार्यकर्त्ता भी एक बडा अफसर बन जाता है।

Q. 26 Discuss the economic significance of Vinoba Bhave's Bhoomidan Yajya Movement? Will it solve the problem of landless labourers?

प्रश्न २६—विनोबा भावे के 'भूदान यज्ञ आन्दोलन' का आर्थिक महत्व बतलाइये। क्या इसके बिना भूमि के मजदूरो की समस्या सुलझ जायेगी?

उत्तर—१९५५ की जनगणना के अनुसार भारतवर्ष की जनसख्या ३५.७८ करोड है। जिसमे लगभग ४½ करोड ऐसे मजदूर है जिनके पास अपनी भूमि जोतने के लिये नही है इसके विपरीत भारत मे लगभग ५६ लाख ऐसे व्यक्ति है जिनके पास भूमि तो है परन्तु वे उसको स्वय नही जोतते। भूमि दान यज्ञ के द्वारा आचार्य विनोबा भावे इस बात का प्रयत्न कर रहे है कि गाँवो मे मनोवैज्ञानिक जागरण हो अर्थात् उन लोगो से भूमि लेकर जिनके पास आवश्यकता से अधिक है उन लोगो को दे दी जाय जिनके पास वह बिल्कुल नही है। इस प्रकार बिना भूमि के मजदूरो को कार्य दिखाने का प्रयत्न किया जा रहा है। इस प्रकार विनोबा जी भारतीय सविधान की उस धारा को कार्यान्वित करने का प्रयत्न कर रहे है जिनमे यह दिया हुआ है कि

सरकार को इस बात का प्रयत्न करना चाहिये कि प्रत्येक व्यक्ति को कार्य करने का अधिकार है जिससे कि वह एक अच्छा जीवन-स्तर चला सके।

'भूदान-यज्ञ' आन्दोलन का विचार विनोबा जी के मस्तिष्क मे उस समय आया जबकि वे हैदराबाद से पैदल लौट रहे थे। रास्ते मे नालगोंडा जिले के एक गाव मे वे ठहरे। यहाँ प्रार्थना सभा मे कुछ व्यक्तियो ने उनसे प्रार्थना की कि वे सरकार से कहकर उनको कुछ भूमि दिला दें। उन्होने उनको ऐसा करने का वचन दिया परन्तु उसी क्षण उनके मन मे विचार आया कि वे क्यो न जमीदारो से भूमि दान मे लेकर इस प्रकार के भूमिहीन श्रमिको को दिला दे। बस तभी उन्होने पाँच करोड एकड भूमि दान मे एकत्र करने का निश्चय किया जिससे कि वे बिना भूमि के मजदूर परिवार को कम से कम छ, सात एकड भूमि काम करने के लिये दे सकें। उसी दिन से विनोबा भावे सारे भारतवर्ष की पैदल यात्रा कर रहे हैं और अपनी प्रार्थना सभाओ मे जमीदारो से अपील करते हैं कि वे अपनी भूमि, बिना भूमि के किसानो को दान मे दे दें। इनकी अपील पर स्थान-स्थान पर उनको भूमि दान मे दी गई है, इस प्रकार उन्होने लाखो एकड भूमि दान के रूप मे प्राप्त कर ली है।

भूमिदान यज्ञ वास्तव मे एक नया प्रयोग है। जहाँ दूसरे देशो मे जमीदारो से उनकी भूमि या तो बहुत सा धन क्षति पूर्ति के रूप मे देकर प्राप्त की गई है या उनको बिल्कुल नष्ट करके प्राप्त की गई है वहाँ विनोबा भावे अहिंसात्मक ढङ्ग से जमीदारो मे भाई-चारे की भावना जागृत करके उनको बिना किसी क्षति-पूर्ति के प्राप्त कर रहे हैं। उनकी सफलता को देखकर देश के कुछ बडे-बडे राजनीतिक दलो ने भी इसका समर्थन किया है और कुछ लोग तो विनोबा जी के समान ही स्थान-स्थान पर घूमकर भूमि प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे है।

भूमिदान आन्दोलन केवल भूमि का ही नही, सम्पूर्ण समाज को बदलने, सम्पूर्ण समाज के उदय सर्वोदय का आन्दोलन है किन्तु आरम्भ मे भूमि क्यो ? इसलिये कि भूमि उत्पत्ति के साधनो मे मुख्य है और उत्पत्ति के साधन उत्पादक के हाथ मे देना—स्वस्थ प्रजातन्त्री अर्थ-व्यवस्था का मूल है। भारत में ४½ करोड व्यक्ति खेतिहर मजदूर हैं, जिनमे अछूत भी सम्मिलित हैं और जो आज भी उपेक्षित हैं। इतने बडे वर्ग को सर्व प्रथम लेना उचित ही है। इसके अतिरिक्त भूमि का विभाजन इतना विषम है कि करोडो के पास इतनी कम भूमि है कि उनकी स्थिति भूमिहीनो से किसी भी प्रकार श्रेष्ठ नहीं है। व्यक्तिगत स्वामित्व के कारण अधिकांश भूमि श्रम-हीन अनुत्पादक के हाथो मे चली गई है। भूमि का सदुपयोग न होने के कारण उसका प्रभाव राष्ट्र की खाद्य समस्या पर पडा है। बेकारी, जनसंख्या वृद्धि, जन-स्वास्थ्य आदि के प्रश्न बहुत कुछ इसी से जुडे हुए हैं। इसीलिये विनोबा जी ने सर्वोदय के पहले चरण के रूप मे भूदान को लिया है। वे भूमि पर ईश्वर का या समाज का अधिकार मानते हैं। आकाश, प्रकाश वायु और वर्षा की भाति भूमि पर भी

भूदान के साथ सम्पत्ति दान का कार्य-क्रम भी चलाया जा रहा है। भूमि न दे सकने वाले लोग अपनी सम्पत्ति का छठा भाग दे सकते हैं। सम्पत्ति के ट्रस्टी वे स्वय ही रहेंगे परन्तु उनका विनियोग विनोबा या इस कार्य के लिये नियुक्त समिति करेगी। जिनके पास देने को न भूमि है न सम्पत्ति, वे अपना श्रम का समाज के निर्माण कार्यों को दान दे सकते हैं। श्रम दान से पैसे के स्थान पर श्रम की प्रतिष्ठा बढ़ेगी, ऊच-नीच भावना का लोप होगा और आर्थिक समानता का मार्ग प्रशस्त होगा। श्रमदान से यदि सब निर्माण-कार्य करने वाले अपनी बुद्धि का दान करेंगे तो शिक्षण, स्वास्थ्य चिकित्सा का रूप ही बदल जायेगा।

हमारे देश मे इस यज्ञ के विषय मे बहुत कुछ कहा जा चुका है। कुछ लोगों का विचार है कि इस यज्ञ के द्वारा भारत के बिना भूमि के किसानो की समस्या बहुत कुछ सुलझ जायेगी परन्तु दूसरे कुछ लोगो का विचार है कि इसके द्वारा खेत और अधिक छोटे हो जायेंगे और इस प्रकार देश की खेती अनार्थिक हो जायेगी।

जो लोग भूमिदान यज्ञ का समर्थन करते हैं उनमे प्रो० श्रीमन्नारायण अग्रवाल भी एक हैं। अपने एक लेख मे उन्होंने भूमिदान यज्ञ की बडी प्रशंसा की है। उनका विचार है कि बड़े-बड़े खेतो की अपेक्षा छोटे-छोटे खेतो पर खेती करना अधिक लाभप्रद है। अपने इस विचार के समर्थन मे उन्होंने कई बडे २ लोगो के विचार दिये हैं। यही नही, उन्होंने बताया कि जापान के अच्छे-अच्छे गाँवो मे २ ५ एकड खेत हैं। आगे चलकर वे कहते हैं कि चीन की नई सरकार बड़े-बड़े खेतो को समाप्त करके छोटे-छोटे खेत बनाकर भूमि का पुनर्बटवारा कर रही है। यही नहीं रूस मे भी जहाँ बडे-बड़े खेत पाये जाते है वहाँ पर भी किसानो को ½ एकड से लेकर २½ एकड तक निजी भूमि दे रखी है। इन सब छोटे-छोटे खेतों पर रूसी किसान बडे परिश्रम से कार्य करके अपने परिवार की आवश्यकता के लिये अन्न उत्पन्न करता है। इन सब उदाहरणो को देखकर यह कहा जा सकता है कि खेती करना बडे खेतो पर नहीं वरन् छोटे खेतो पर लाभप्रद होता है। इस प्रकार यह कहना कि विनोबा के भूदान यज्ञ के कारण खेतो के छोटा होने का कारण खेती का पेशा अनार्थिक हो जायेगा, गलत है। प्रो० अग्रवाल ने आगे चलकर बताया है कि छोटे पैमाने पर की गई खेती के स्तर को ऊचा करने के लिये किसान अपनी सहकारी समितियां बना सकते हैं और सामूहिक रूप से बीज, खाद, सिंचाई, फसल की बिक्री आदि का प्रबन्ध कर सकते हैं। अन्त मे प्रो० अग्रवाल कहते हैं, "बिना भूमि के श्रम की बेरोजगारी से छुटकारा दिलाने तथा उनकी भूमि की वास्तविक भूख को शान्त करने के लिये यह आवश्यक है कि भूमि का पुनर्बटवारा एक बहुत बडे पैमाने पर हो। आचार्य विनोबा का भूमिदान यज्ञ अमीर लोगो से गरीब लोगो को बिना किसी क्षतिपूर्ति के सद्भावना तथा सहानुभूति के आधार पर भूमि को हस्तांतरित करने मे आवश्यक वायुमण्डल उत्पन्न कर रहा है। इस प्रकार भूमि के

शान्त पुर्नवटवारे का वायुमण्डल ही देश को खूनी क्रान्ति से बचा सकता है। जिसमे सम्मिलित होने के लिये साम्यवादी सदा तत्पर रहते हैं।''

भूदान यज्ञ के विषय म श्री भगवानदास केला लिखते हैं, 'यह पद्धति अहिंसक क्रान्ति का मार्ग प्रशस्त करती है। इसके पीछे विकेन्द्रीकरण और स्वावलम्बन की कल्पना है।'

भूदान यज्ञ के महत्व के विषय मे श्री रामेश्वर दयालु ने लिखा है, 'भारत भूमि की यह विशेषता है कि यहाँ जब धर्म चक्र चलता है, तब जनता मंत्रमुग्ध सी सर्वस्व अपण कर देती है। साथ ही हमे यह भी समझना चाहिये कि भूदान आन्दोलन से उत्पन्न जन शक्ति के प्रभाव से हमारी अर्थ रचना सर्वोदय की दिशा मे प्रगति करेगी जिस अर्थ रचना मे किसी के हाथ मे अत्यधिक पूँजी नही एकत्र हो सकेगी क्योंकि प्राथमिक आवश्यकताओ के विषय म विकेन्द्रित स्वावलम्बी व्यवस्था होगी। शेष बडे उद्योग, जो केन्द्रित रूप से ही चल सकते है उनके राष्ट्रीयकरण की सफलता क लिय जिस वातावरण शुद्धि की आवश्यकता है, वह भूमिदान-आन्दोलन मे छिपी है।''

'इस आन्दोलन का प्रभाव न केवल आर्थिक क्षेत्र मे अपितु राजनीतिक और सामाजिक क्षत्र मे भी होगा। पक्षातीत राज्य-व्यवस्था का उद्घोष भारतीय राजनीति मे होने लगा है। भूदान आन्दोलन उसके लाने का वातावरण निर्माण करेगा। इसी से समाज की जाति, वर्ण, स्त्री पुरुष आदि की असमानताय भी दूर होगी।''

जो लोग इस आन्दोलन का विरोध करते है उनका कहना है कि इसके द्वारा देश के पहले ही छोट छोटे खेत और भी छोट हो जायग। इस प्रकार खेती की उन्नति करना सम्भव न होगा। उनका यह भी कहना है कि इसके द्वारा वह भूमि जो आजकल जङ्गलो अथवा चरागाहो के नीचे है उस पर भी खेती होने लगगी और इस प्रकार भूमि के कटाव आदि की समस्या उग्ररूप धारण कर लेगी। उनका यह भी कहना है कि जो भूमि दान मे दे दी जा रही है उनम से अधिकतर खती योग्य नही है। इसलिये यदि बकार भूमि को दान म दिया गया तो क्या लाभ? उनका यह भी कहना है कि विनोबा भावे ने भूमि को दान म लेकर उसका कोई उचित प्रबन्ध नही किया है। वे भूमि को दान मे लेकर जिलाधीश को सौंप देते है। उनका यह भी कहना है कि विनोबा जी भूमि लेने समय यह नही देखत कि भूमि झगडे की तो नही है। इस प्रकार उनको जो भूमि मिली है उसमे से बहुत सी झगडे की है।

इनमे से कुछ बात ठीक हो सकती है परन्तु उसके कारण हमे इस आन्दोलन का विरोध नही करना चाहिये। यह हम मान सकते हैं कि कुछ भूमि झगडे की हो सकती है कुछ खेती के अयोग्य हो सकती है, कुछ पर वन भी हो सकते हैं। परन्तु दान मे मिली सब भूमि तो ऐसी नही है। जिस मात्रा मे अच्छी भूमि दान मे मिली है उस सीमा तक तो भूमिहीन किसानो को भूमि मिल जायेगी। इसके

अतिरिक्त हमे यह बात भी ध्यान रखनी चाहिये कि हमे यह न देखना चाहिये कि विनोबा भावे को अपने मिशन मे कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई है वरन् हमे उस भावना की प्रशसा करनी चाहिये जिसको लेकर यह आन्दोलन चलाया गया है तथा उस वायु मण्डल की भी प्रशसा करनी चाहिये जो कि इस आन्दोलन द्वारा देश मे उत्पन्न हो रहा है यदि इस आन्दोलन द्वारा देश के जमीदार अपनी भूमि दे सक्ते है तो इसके पश्चात् यह आशा भी की जा सकती है कि देश के पू जीपति अपनी पू जी के दान मे देने लगेंगे तथा इसके पश्चात् दूसरे लोग भी अपनी सम्पत्ति का कुछ भाग अथवा अपना श्रम अथवा अपनी बुद्धि देशहित के लिये देने लगेंगे। ऐसा होने पर देश की काया पलट हो जायेगी। यदि हम इस आन्दोलन को इस दृष्टिकोण से देखें तो हम इसकी प्रशसा किये बिना नही रह सक्ते। हमे पूरी आशा है यदि इस आन्दोलन ने देशव्यापी रूप धारण कर लिया तो उससे देश के भूमिहीन किसानो की समस्या बहुत सुलझ जायेगी।

भूमिदान यज्ञ आन्दोलन की प्रगति

अप्रैल १९५७ ई० म मसूरी मे हुई छठी विकास कमिश्नरो की सभा मे इस बात पर सहमति प्रगट की गई कि भूदान तथा ग्रामदान आन्दोलनो को अधिक से अधिक सहायता तथा प्रोत्साहन दिया जाय। प्रवर समिति का सुझाव था कि जिन राज्यो मे इन आन्दोलनो के लिये आवश्यक कानून नही है वहाँ लोगो मे इस प्रकार की भावना जाग्रत करने के लिये प्रयत्न करना चाहिये जिससे कि सामूहिक विकास कार्य अधिक प्रभाव से चल। इस समिति का यह भी सुझाव है कि एक सरकारी सस्था निर्माण की जाय जो कि भूदान तथा ग्रामदान के कार्य मे सहायता दे तथा भूमि का बटवारा करने मे सहायता दे। परन्तु इस प्रकार सहकारी एजेन्सी के कार्य पर सभा सदस्यो मे मत भेद था। श्रीमन्नारायण अग्रवाल का मत था कि समाज को अपने हित के लिय ग्रामदान तथा भूदान आन्दोलनो की सहायता करनी चाहिये। उन्होने कहा कि प्रत्येक राज्य को ग्रामदान इकाई को स्वीकार करना चाहिय तथा इसको आवश्यक सहायता देनी चाहिये। प० नेहरु ने कहा कि बिना सरकार की सहायता के भूदान आन्दोलन उस भूमि का क्या करेगा जो कि उसको प्राप्त होगी। सरकार ने हर पग पर काय किया है। बहुत से राज्यो मे कानून पास करके इस कार्य की सहायता की गई है।

जो आन्दोलन १८ अप्रैल १९५१ ई० को छोटे रूप मे शुरू हुआ था वह अब सारे देश मे फैल गया है। अब यह आन्दोलन ग्राम दान के रूप मे विकसित हुआ है। ग्राम दान का अर्थ है 'सारे गावो के दान।" इसका ध्येय यह है कि समस्त गाव की भूमि पर सारे ग्राम वासियो का सामूहिक अधिकार होना चाहिये।

द्वितीय पच वर्षीय योजना मे यह बात स्वीकार की गई है कि ग्राम दान गाँवो के रूप मे जो सफलता प्राप्त की गई है उसका सहकारी गाँव की उन्नति पर बड़ा महत्व पूर्ण प्रभाव पडेगा। सितम्बर १९५७ मे पलवल (मैसूर राज्य) मे हुई

अखिल भारत सर्व सेवा संघ में इस बात की इच्छा प्रगट की गई है कि सामूहिक विकास आन्दोलनों (Community Development Programme) तथा ग्रामदान आन्दोलन में बड़ा गहरा सम्बन्ध होना चाहिये। मई १९५८ में माउन्ट आबू में हुई विकास कमिश्नरों की कान्फ्रेन्स में यह निश्चय किया गया कि भूदान तथा ग्राम दान में निकट सम्बन्ध होना चाहिये। भविष्य में ग्राम दान वाले गावों में ही सबसे पहले सामूहिक विकास का कार्य किया जायगा।

आन्ध्र प्रदेश, बिहार, बम्बई (सौराष्ट्र क्षेत्र), मध्य प्रदेश, मद्रास, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, देहली हिमाचल प्रदेश में भूदान के दान को प्राप्त करने तथा उसके बटवारे को सुविधाजनक बनाने के लिये कानून पास किये जा चुके हैं।

१९५४-५५ से विभिन्न राज्यों ने इस आन्दोलन को जो आर्थिक सहायता प्रदान की है वह इस प्रकार है —

(हजार रु० में)

राज्य	१९५४-५५	१९५५-५६	१९५६-५७	१९५७-५८	१९५८-५९
आन्ध्र प्रदेश	—	—	—	३०	३०
बिहार	—	३३०	१०००	१८६०	—
बम्बई					
१ विदर्भ	—	—	—	२००	—
२ सौराष्ट्र	४९	२५३	२५३	१६९	२१०
मध्य प्रदेश					
१ मध्य प्रदेश	५००	५००	५००	३००	३००
२ मध्य भारत	—	१५०	३००	२००	२००
३ भोपाल	—	—	—	—	२५
पंजाब	—	—	—	५०	५०
राजस्थान	१०	१००	२५०	३००	—
उत्तर प्रदेश	—	—	—	—	५००
हिमाचल प्रदेश	—	—	—	५०	—

भारत सरकार भी इस आन्दोलन को आर्थिक सहायता प्रदान कर रही है। १९५६-५७ में उसने ११-९९ लाख रु० तथा १९५७-५८ में १० लाख रु० की आर्थिक सहायता उसने प्रदान की। इसके अतिरिक्त वह सर्वसेवा संघ द्वारा तैयार की गई स्कीम के लिये वह ६८ लाख रु० और देगी। १९५७-५८ में बिना भूमि के मजदूरों को भूमि पर सहकारिता के आधार पर बसाने के लिये भी २ ५० लाख की मंजूरी दी गई है।

अब तक प्राप्त आंकडो से ज्ञात हुआ है कि देश मे जून मई १६५८ ई० तक आचार्य विनोबा भावे के भूदान यज्ञ मे कुल ४४ लाख एकड जमीन दानस्वरूप प्राप्त हुई है और इसमे से ८ लाख एकड जमीन वितरित की जा चुकी है।

भूदान मे बिहार का स्थान सर्व प्रथम रहा है जहा से २१ लाख १३ हजार ६३८ एकड जमीन प्राप्त हुई। बिहार से प्राप्त हुई इस जमीन मे से २,८६२८६ एकड जमीन का वितरण भी हो चुका है।

भूदान के लिये अपने जीवन का दान करने वालो की कुल सख्या १,६४५ है जिनमे से १.०६८ जीवनदानी अकेले बिहार से हैं।

दूसरा नम्बर उत्तर प्रदेश का आता है जहा से भूदान मे ५ लाख ८७ हजार ६३० एकड जमीन प्राप्त हो गई है। राजस्थान का नम्बर तीसरा है जहा ४ लाख २६ हजार ४८८ एकड जमीन मिली है। इसके अतिरिक्त आन्ध्र प्रदेश मे २,४१,६५० एकड भूमि प्राप्त हुई आसाम मे २३,१६६ एकड, बम्बई राज्य मे कुजरात प्रदेश मे ४७४८६ एकड, महाराष्ट्र मे ६४३६० एकड सौराष्ट्र मे ३१२३७, विधर्व मे ८६७७८ एकड मध्य प्रदेश मे १,७८,८१६ एकड, पजाब म १६६२६ एकड, मद्रास मे ७०८२३ एकड, उडीसा मे ४,२४,६३५ एकड।

ग्राम दान मे ३१ दिसम्बर १६५८ तक ४५७०-गाँव प्राप्त हुये।

सम्पत्ति दान के २० मई १६५७ तक विनोबा जी को २ लाख ६७ हजार १४६ रुपय ७ आने दान म मिले है। जिसमे पेप्सू और पजाब से ६३ हजार ६४२ रुपये १३ आ० ३ पाई मिले है। यह दान अन्य सभी प्रान्तो मे सर्व प्रथम है।

६

भारत की खाद्य-समस्या तथा अकाल

Q. 27 Discuss about the food problem of India What has been done in recent years in India to meet food shortage in the country ? What more would you wish to be done in this respect ?

प्रश्न २७—भारतवर्ष की खाद्य-समस्या के विषय मे लिखिये। हाल ही मे अन्न की कमी को पूरा करने के लिये क्या किया गया है ? आप इस ओर और क्या करना चाहते हैं ?

खाद्य समस्या का अनुमान (An idea of the food problem)—१९४३ ई० के बङ्गाल के अकाल के पश्चात् भारत की खाद्य समस्या निरन्तर बिगडती चली गई। इसका अनुमान हम इस बात से लगा सकते हैं कि युद्ध से पूर्व हमारे देश मे एक व्यक्ति प्रतिदिन १९१० क्लोरी का उपभोग करता था परन्तु १९५१-५२ मे वह केवल १९५० क्लोरी का और १९५२-५३ मे १६४० क्लोरी का उपभोग करता था। परन्तु आजकल वह १७५० क्लोरी का उपभोग करता है। इसके विपरीत १९५२-५३ मे इगलैंड का एक आदमी ३०६०, सयुक्त राष्ट्र का ३११७ तथा डेन्मार्क का ३२५० क्लोरी का उपभोग करता था। इस बीच मे हमारे देश मे प्राय सभी चीजो का उपभोग कम हो गया है। इसका पता हमे नीचे की तालिका से चलता है।

वर्ष	उपभोग प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष (किलोग्राम मे)									
	खाद्य पदार्थ	दालें	चीनी	चर्बी	फल	सब्जी	मांस	अण्डे	मछली	दूध
१९३४-३८	१४३	२२	१४	३	२६	२५	३	०४	१	६५
१९४९-५०	११०	२०	१३	३	२५	१६	२	०·१	२	४५

इस प्रकार हम देखते हैं कि हम पहले से मात्रा मे कम भोजन ही नहीं करते वरन् भोजन गुण (Quality) मे भी पहले से घट गया है। हमारे भोजन मे चर्बी, प्रोटीन, विटामिन आदि आवश्यक पदार्थों की बडी कमी है। खाद्य पदार्थों की

कमी के कारण हमको बहुत सी विदेशी विनिमय खर्च करके विदेशो से गल्ला मगाना पडा। कई वर्षो तक गल्ले का आयात निरन्तर बढता रहा, जैसे १६४८ मे २८ लाख टन, १६४६ मे ३७ लाख टन, १६५० मे २१ लाख टन, १६५१ मे ४७ लाख टन। इसके पश्चात् स्थिति मे कुछ सुधार हुआ और इसके फलस्वरूप हमारे आयात घटते गये। इस प्रकार १६५२ मे ३६ लाख टन, १६५३ मे २०० लाख टन और १६५४ मे ८ लाख टन गल्ला विदेशो से मगाया गया। १६५५ मे भी लगभग ७ लाख टन गल्ला विदेशो से मगवाया गया। परन्तु इस वर्ष भारत ने एक लाख टन चावल का निर्यात भी किया। १६५६ की आयात १४ लाख टन थी, १६५७ की ३६ लाख टन तथा १६५८ की आयात लगभग ३२ लाख टन थी। १६५६ की आयात का अनुमान १५ लाख टन है।

भारतवर्ष की खाद्य की समस्या की ओर सबसे पहले १६१४ ई० की मूल्य-जाच समिति (Price Inquiry Committee) ने लोगो का ध्यान आकर्षित किया था। उसने बताया था कि भारत मे कृषि योग्य भूमि की अपेक्षा जनसख्या अधिक तेजी से बढ रही है। परन्तु इससे पूर्व १८८० ई० के अकाल आयोग ने अनुमान लगाया कि भारत मे ५० लाख टन गल्ला आवश्यकता से अधिक है। १८६८ ई० के आयोग का भी यही अनुमान था। इसका अभिप्राय यह है कि हमारे देश की खाद्य समस्या इस शताब्दी के प्रारम्भ से बिगडती जा रही है। एक अनुमान के अनुसार १६०१ और १६३१ ई० के बीच मे हमारी जनसख्या १७ प्रतिशत बढी परन्तु इसी बीच मे खाद्य सामग्री कुल १६ प्रतिशत बढी। १६३० और १६४० के बीच मे हमारी जनसख्या १५ २ प्रतिशत बढी परन्तु खाद्य पदार्थ तथा दालो की उत्पत्ति ३६ प्रतिशत घट गई। १६३३ ई० मे सर जान मेगा (Sir John Megaw) ने एक जाच के पश्चात् बताया था कि भारत म ३६ प्रतिशत लोगो को पर्याप्त भोजन ४१ प्रतिशत लोगो को कम भोजन तथा २० प्रतिशत लोगो को प्राय भोजन मिलता ही नही। युद्धकाल तथा उसके पश्चात् की स्थिति के विषय मे हम पहले ही बता चुके हैं कि वह युद्ध पूर्व के काल से भी खराब हो गई। अशोक महता समिति का अनुमान है कि अगले कुछ वर्षो म हमारे देश मे २–३ मिलियन टन गल्ला आयात करने की आवश्यकता पडेगी।

खाद्य पदार्थों की कमी के कारण (Causes of the food deficit)—भारतवर्ष मे खाद्य पदार्थों की कमी के निम्नलिखित कारण है—

(१) हमारे देश मे जनसख्या जिस गति से बढ रही खाद्य सामग्री उससे कम गति से बढ रही है। श्री० पी० के० वत्तल ने १६१३–१४ से १६३५–३६ के बीच के समय मे हिसाब लगाकर बताया था कि हमारे देश मे जनसख्या १ प्रतिशत वार्षिक के हिसाब से बढी। परन्तु खाद्य सामग्री ० ६५ प्रतिशत वार्षिक के हिसाब से बढी। डा० ज्ञानचन्द ने भी बताया है कि हमारे देश मे १६०० और १६३४ ई० के बीच मे जनसख्या की वृद्धि २१ प्रतिशत हुई परन्तु जोती हुई भूमि मे केवल ११ प्रतिशत की वृद्धि हुई।

(२) पिछले बहुत से वर्षो से हमारे देश मे खाद्य पदार्थो के नीचे के क्षेत्र मे कोई विशेष वृद्धि नही हुई परन्तु जनसख्या निरन्तर बढ रही है जैसे १९२९-३० और १९३९-४० के बीच मे खाद्य पदार्थो के बीच के क्षेत्र मे केवल १ ५ प्रतिशत की वृद्धि हुई परन्तु इस बीच मे जनसख्या मे १५ २ प्रतिशत वृद्धि हुई । इसका कारण यह है कि हमारे देश के किसान भूमि को खाद्य पदार्थो के उत्पादन से हटाकर कपास, जूट, गन्ने आदि की उत्पत्ति की ओर लगा रहे हैं ।

(३) खाद्य सामग्री की कमी का एक कारण यह भी है कि अभी कुछ दशाब्दो से हमारे देश के किसान गेहू, चावल आदि पौष्टिक पदार्थो से अपना ध्यान हटाकर ज्वार, बाजरा, मक्का आदि कम पौष्टिक पदर्थो की ओर लगा रहे है । इसका पता नीचे की तालिका से चलता है—

नाम पदार्थ	१९१०-१५	१९१५-२०	१९२०-२५	१९२५-३०	१९३०-३५	१९३५-३८	१९१०-३८
चावल	१००	११४०	१०८४	१०७२	११०२	१०३०	३५
गेहू	१००	९६२	९३४	९३०	९७८	१०४२	४२
ज्वार	१००	१६७४	१६७०	२१०८	२०८८	२०९७	१०९७५
जौ	१००	२२४२	२०२६	१७२७	१७३०	१५७१	६७१
बाजरा	१००	११४०	१०५०	१२६०	१२५२	१२५१	२५०
मक्का	१००	११४०	१०६०	१०६०	११२०	१०५०	५०

उपर्युक्त तालिका से विदित है कि १९१०-३८ के बीच मे चावल व गेहू का उत्पादन तो बढा क्रमश ३५ और ४२ प्रतिशत परन्तु ज्वार का १०९७ प्रतिशत, जौ का ६७ १ प्रतिशत बाजरे का २५ प्रतिशत तथा मक्का का ५% ।

(४) १९३७ ई० मे ब्रह्मा हमारे देश से अलग कर दिया गया जिसके फलस्वरूप हमारे देश मे १३ लाख टन चावल की कमी हो गई ।

(५) १९४७ ई० में देश के विभाजन पर हमारे देश को अविभाजित भारत की ८० प्रतिशत जनसख्या तथा ७६ प्रतिशत खाद्यान्न की उपज का भाग मिला । इसी के कारण हमारे सीचे हुये भाग मे भी कमी हो गई है । इसके अतिरिक्त हमारे देश को जूट तथा लम्बे रेशे वाली कपास उगाने वाले क्षेत्र का भी बहुत कम भाग मिला है जिसके फलस्वरूप हमारे देश मे इन चीजो की कमी हो गई है । यदि पाकिस्तान इन चीजो को उचित मूल्य पर हमे देता रहता तो कोई कठिनाई उत्पन्न न होती परन्तु ऐसा नही हुआ । उसने अपनी मुद्रा का अवमूल्यन न करके अपने माल का मूल्य ४४ प्रतिशत बढा दिया । इसी कारण हमको बहुत से क्षेत्रो पर कपास तथा जूट उगाना पडा । इसके फलस्वरूप खाद्य पदार्थो के अन्तर्गत जो क्षेत्र था उसमे कमी पड गई ।

(६) द्वतीय महायुद्ध मे हमारे देश मे बहुत सा अनाज विदेशो को भेजा गया तथा बहुत सा अनाज सरकार ने फ़ौजो के लिये खरीद लिया। इसके अतिरिक्त हमारे देश मे अमेरिका की सेनाये भी रही जिसके कारण गल्ले की माग और भी बढ गई। इन सब बातो के कारण खाद्य सामग्री की ओर भी कमी हो गई।

(७) प्राय. प्रतिवर्ष हमारे देश का बहुत सा अन्न वर्षा न होने, बाढ आने, ओले पडने तथा टिड्डी दल के आने से नष्ट हो जाता है। १६५५ मे आसाम, बङ्गाल, बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश मे बाढ के कारण करोडो रुपये की हानि हुई है।

इन सब बातो के कारण हमारे देश मे गल्ले की बडी कमी है। १६५१ ई० मे जम्मू और काश्मीर को छोडकर हमारे देश की जनसंख्या ३५ करोड ६८ लाख थी। यदि प्रति १०० व्यक्ति को ८६ बडे व्यक्तियो के बराबर माना जाय तो हमारे देश की कुल सख्या लगभग ३०७ करोड बडे व्यक्तियो के बराबर होती है। यदि बडे आदमी को प्रतिशत २४ औंस भोजन दिया जाय तो हमारी जनसख्या के लिये ४७ करोड टन गल्ला प्रतिवर्ष चाहिये। हमारे देश की कुछ वर्षों की उपज इस प्रकार थी—

(करोड टनो मे)

वर्ष	चावल	गेहू	ज्वार, बाजरा	सब खाद्य पदार्थ
१६४६–५०	२२८	६५	१६२	४५५
१६५०–५१	२२१	६७	१४५	४४२
१६५१–५२	२२८	६२	१५४	४४४

इस प्रकार हमारे देश मे प्रतिवर्ष खाद्य सामग्री की उपज लगभग ४४ करोड टन है। यदि इसमे से लगभग १० से १२½ प्रतिशत बीज बोने तथा नष्ट होने वाले भाग मे निकाल दिया जाय तो हमारे देश के प्रतिवर्ष लोगों के उपयोग के लिये लगभग ३६ से ४० करोड तक गल्ला उपलब्ध होता है। इस प्रकार हमारे देश मे प्रतिवर्ष लगभग ४०–५० लाख टन गल्ले की कमी पडती है। अशोक महता समिति के अनुसार गल्ले की कमी का अनुमान २०–३० लाख टन है।

खाद्य समस्या को सुलझाने का प्रयत्न—बहुत समय तक तो सरकार ने खाद्य समस्या को सुलझाने का कोई प्रयत्न न किया, पर १६४२ ई० मे जब खाद्य समस्या ने एक भीषण रूप धारण कर लिया तब सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। अन्न की उत्पत्ति बढाने के लिये सरकार ने उस वर्ष मे एक 'अधिक अन्न उपजाओ योजना' (Grow-More Food Campaign) चालू की जिसके अन्तर्गत ८० लाख एकड भूमि अन्न उपजाने के काम में लाई गई। खाद्य समस्या की ओर अधिक ध्यान देने के लिये केन्द्रीय सरकार ने एक नया खाद्य विभाग खोला। उसने खाद्य समस्या की जाच करने के लिये एक ग्रेगिरी समिति (Gregory Committee) भी नियुक्त की। इस समिति ने यह बताया कि खाद्य समस्या को सुलझाने के लिये विदेशो से अन्न मंगाना चाहिये, राशनिंग चालू करना चाहिये तथा

एक अन्न भण्डार बनाना चाहिये। अन्न भण्डार की सिफारिश अन्न नीति समिति (Foodgrains policy Committee) ने भी की। १६४३ ई० के अकाल के पश्चात् तो कमीशन नियुक्त किया गया था उसने इस बात के ऊपर जोर दिया कि जनता को अन्न देने का भार सरकार पर है। सरकार ने इस बात को माना और उसके पश्चात् सरकार ने लगातार विदेशो से अन्न मगाकर खाद्य समस्या को सुलझाने का प्रयत्न किया है। १६४८ ई० मे सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास की अध्यक्षता मे एक अन्न नीति की समिति नियुक्त हुई जिसने यह बताया कि अगले पाँच वर्षों मे देश मे एक करोड टन अन्न की वृद्धि होनी चाहिये। इस समिति ने वे ढङ्ग भी बताये जिनके द्वारा देश की खाद्य समस्या सुलझ सकती थी। उसने बताया कि इस देश मे अधिक सिंचाई के साधन होने चाहियें। अधिक बेकार पड़ी हुई भूमि को जोतना चाहिये। खेतो को अधिक खाद देनी चाहिये अच्छे बीज का प्रबन्ध करना चाहिये और ५० करोड रुपया लगाकर एक Central Land Reclamation Organisation बनाना चाहिये।

१६४७ के अन्त में महात्मा गांधी के जोर देने पर राशनिंग और कन्ट्रोल समाप्त कर दिया गया। परन्तु कुछ समय ही पश्चात् जब वस्तुओ का मूल्य बहुत ऊँचा हो गया तो सरकार ने पुन राशनिंग चालू कर दिया। जिसके अनुसार प्रांतीय तथा केन्द्रीय सरकारों ने अन्न खरीदकर लाईसेन्सदार दुकानो के द्वारा जनता मे बटवाया। सरकार ने अपनी योजना को सफल बनाने के लिये विदेशो से बहुत सा अन्न मगवाया। १६४८ ई० मे २८ लाख टन, १६४६ ई० मे ३७ लाख टन, १६५० ई० मे ४० लाख टन व १६५१ ई० मे ४७ लाख टन के लगभग अन्न विदेशो से मगवाया गया। परन्तु उसके पश्चात् से फसलो के अच्छा होने तथा कन्ट्रोल मे ढिलाई हो जाने के कारण गल्ले का आयात कम हो गया।

१६४६ ई० में भारतीय सरकार ने इस बात की घोषणा की कि चाहे जो भी कुछ हो मार्च १६५१ ई० के पश्चात् भारतवर्ष अन्न का एक दाना भी विदेशो से नही मगायेगा। किन्तु खेद का विषय है कि सरकार इस योजना मे सफल न हो सकी और खाद्य पदार्थों में स्वावलम्बी हो जाने की तिथि को मार्च १६५२ तक के लिये बढा दिया गया। पर सन् १६५२ मे भी सरकार अपनी योजना मे सफल न हो सकी। योजना कमीशन के मतानुसार भविष्य मे कई वर्षों तक भारतवर्ष को तीस लाख टन गल्ला विदेशों से मगाना पडेगा। परन्तु पिछले दो वर्षों मे फसल के अच्छा होने के कारण हमारा गल्ले का आयात तीस लाख टन न होकर २३ लाख टन तथा ६ लाख टन के लगभग हो गया। परन्तु १६५६ मे फिर १४ लाख टन गल्ला विदेशो से मगाना पडा। १६५८–५६ मे २५ लाख टन गल्ला विदेशों से मगवाया जायेगा। १६५६–६० का अनुमान १५ लाख टन है।

केन्द्रीय सरकार के अतिरिक्त राज्य सरकारो ने भी अन्न की उत्पत्ति बढाने के लिये बहुत कार्य किये, जिनमे के ट्यूबवैल लगवाना, अच्छी खाद व बीज

देना, नई भूमि के ऊपर खेती करना आदि मुख्य हैं। हाल ही मे केन्द्रीय सरकार अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से कम लगी हुई भूमि को सुधारने के लिये एक करोड डालर ऋण लिया है। पानी की समस्या को सुलझाने के लिये बहुत सी बडी-बडी सिंचाई की योजनायें भी बनाई गई हैं। संयुक्त राष्ट्र भी हमारे देश की खेती की उन्नति मे बहुत सहायता पहुंचा रहा है और उसने पाईण्ट ४ (Point 4) प्रोग्राम के अन्तर्गत भारतवर्ष को ५ करोड डालर की सहायता देने का वचन दिया। इस धन की सहायता से लोहे फौलाद का प्रबन्ध, खाद का प्रबन्ध, टिड्डी का रोकना, समुद्र मे मछलियो की उत्पत्ति बढाना, ट्यूबवैल बनवाना आदि काम किये जायेंगे। इस योजना मे भारतवर्ष को अपना भी धन लगवाना पड़ेगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश मे खाद्य समस्याओ को सुलझाने के लिये सरकार बहुत प्रबन्ध कर रही है।

पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत खाद्य नीति—इन सब प्रयत्नो के अतिरिक्त सरकार ने खाद्य समस्या को सुलझाने के लिये पंचवर्षीय योजना मे एक बडी धन राशि रखी गई है। ऐसी आशा की जाती है कि खेती सामूहिक विकास योजना (Community Development Projects) पर ३६०.४३ करोड रुपये तथा सिंचाई तक विद्युत उत्पादन पर २६१.७१ करोड रुपये व्यय होंगे और इससे १९५५-५६ तक लगभग ७६ लाख टन अधिक अन्न उत्पन्न होगा। परन्तु यह हर्ष का विषय है कि १९५०-५१ तथा १९५३-५४ के बीच हमारा खाद्यान्न ६५ लाख टन बढ गया है। द्वितीय योजना मे १० मिलियन टन अधिक अन्न उपजाने की योजना है जिसको सिंचाई, खाद, बीज नई भूमि को प्राप्त करके तथा भूमि की उन्नति करके प्राप्त किया जायगा।

खाद्य समस्या को सुलझाने के लिये सरकार ने खाद्य-नियन्त्रणों को धीरे धीरे हटा दिया है और अब प्राय सभी चीजो पर से नियन्त्रण हट गया है। नियन्त्रण हट जाने के कारण हमारी खाद्य समस्या की गम्भीरता बहुत कुछ कम हो गई है। दो वर्ष तो अनाज इतना पैदा हुआ कि गेहू, चने आदि के भाव बहुत गिर गये और भविष्य मे और गिरने की आशा थी। इन वस्तुओ के मूल्यो को गिरने से रोकने के लिये सरकार ने निश्चय किया कि वह दूसरी फसल के बाजार मे आते ही गेहू खरीदेगी जिससे कि गेहू का मूल्य १० रुपये मन से नीचे न गिरे। परन्तु अभी कुछ दिनो से गल्ले के मूल्यो मे फिर बडी वृद्धि होती जा रही है जिसके फलस्वरूप देश के मजदूरो व कर्मचारियो मे बडी अशांति बढती जा रही है। इसलिये भारत सरकार ने एक केन्द्रीय खाद्य जाच समिति की नियुक्ति की जिसके अध्यक्ष श्री अशोक मेहता थे। इस समिति ने खाद्य सामग्री के बढते हुये मूल्यो की जाच करके अपनी रिपोर्ट दी है।

समिति ने सुझाव दिया है कि मूल्य सम्बन्धी नीति के निश्चित करने तथा इसको लागू करने के लिये एक प्रोग्राम बनाने के लिये एक उच्च-शक्ति मूल्य-स्थिरता

वार्ड (Hight power price stabilization Board) स्थापित किया जाये। इसी के साथ एक खाद्य-सामग्री स्थिरता संस्था (Foodgrains stabilization organisation) भी सम्बन्धित होगी जो कि मूल्यों को स्थिर रखने के लिए खाद्य पदार्थों के क्रय विक्रय कार्य करेगी। समिति ने यह सुझाव भी दिया है कि गैर सरकारी लोगों की एक केन्द्रिय खाद्य सलाहकार समिति स्थापित की जाय जो कि खाद्य मन्त्रालय तथा मूल स्थिरता बोर्ड को सहायता करे। इसमें कृषि, व्यापार, मजदूरों, उद्योगों, उपभोक्ताओं, बैंकिंग, सहकारी संस्थाओं, मुख्य मुख्य राजनीतिक दलों, अर्थशास्त्रियों के प्रतिनिधि होंगे। समिति का मत है कि न तो पूर्ण मूल्य नियन्त्रण ही होना चाहिये और न पूर्ण स्वतन्त्र व्यापार ही होना चाहिये। समिति की राय में मूल्य नियन्त्रण व्यापार में बाधा बनकर खड़ा नहीं होना चाहिये वरन् उसको ठीक करने वाला होना चाहिये। ऐसा करने के लिये केवल खाद्य पदार्थों के मूल्यों की ओर ही ध्यान देना होगा वरन् कुछ ऐसी चीजों के मूल्यों की ओर भी ध्यान देना होगा जो गल्ले के मूल्य पर अपना प्रभाव डालती है। समिति ने कहा है कि पश्चिमी बङ्गाल के पूर्वी तथा उत्तरी जिले पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा पश्चिमी मध्य प्रदेश आदि क्षेत्रों में बाढ़, वर्षा की कमी आदि होने के कारण जो आपत्ति आती है उसको शीघ्र ही देख लिया जाय तथा उस पर शीघ्र कार्य किया जाय। समिति का यह भी सुझाव है कि थोक व्यापार का समाजीकरण किया जाय। इसके लिये प्रारम्भ में सरकार गल्ले की खरीद व बिक्री कर सकती है। बाजार में व्यापार करने वाले व्यापारियों को लाइसेंस लेने का कहा जाय। सरकार को चावल व गेहूं का एक रिजर्व बनाना चाहिए तथा चावल व गेहूं का आयात करना चाहिये। सरकार को यह प्रोपगण्डा भी करना चाहिये कि लोग मोटा अनाज खाय। समिति ने सुझाव दिया है कि गल्ले का वितरण उचित मूल्यों की दुकानों अथवा राशन की दुकानों अथवा सहकारी समितियों द्वारा करना चाहिये। समिति ने गल्ले का उत्पादन बढ़ाने के भी कुछ सुझाव दिये है और उसके साथ साथ जनसंख्या के रोक-थाम पर भी जोर दिया है।

यहाँ यह बात बताने योग्य है कि समिति के सुझावों पर देश में बड़ा वाद विवाद हुआ और सरकार भी पूर्णरूप से समिति के मत से सहमत नहीं है।

१९५९-६० में भारत सरकार ने निश्चय किया है कि वह गेहूं व चावल में राज्य व्यापार (State Trading) करेगी। कृषि मंत्रालय द्वारा प्रस्तुत रूप रेखा के अनुसार खाद्यानों के राज्य व्यापार योजना के दो अङ्ग हैं। एक अन्तरिम आयोजन और दूसरे अन्तिम रूप। अन्तरिम व्यवस्था में एक तो थोक व्यापारियों के द्वारा ही राज्य व्यापार होगा और अभी इसमें गेहूं और चावल ही आते हैं। थोक व्यापारी लाइसेंस प्राप्त व्यापारी होंगे जो किसानों से निर्धारित मूल्य पर अनाज क्रय कर नियन्त्रित भावों पर बेचेंगे। यह क्रय विक्रय का न लाभ न घाटा के आधार पर होगा। अन्तरिम काल में सहकारी संगठन ज्यों ज्यों संगठित होते जायेंगे वे अधिकाधिक थोक व्यापार अपने हाथ में लेते जायेंगे।

योजना के अन्तिम रूप मे ग्राम-स्तर पर सहकारी समितियाँ अनाज एकत्र करेगी तथा उसे हाट सहकारी समितियो को पहुँचा देगी जिससे उपभोक्ता अपनी आवश्यकतानुसार क्रय करेंगे।

इस योजना का विरोध कई बातो के कारण किया गया है। लोगो का कहना है कि सरकार के पास यह कार्य करने के लिये साधन नही हैं। इसके अतिरिक्त कई लाख व्यापारी जो गल्ले के काम मे लगे हुए हैं वे बेकार हो जायेंगे। इसके अतिरिक्त लोगो का यह भी कहना है कि गावो से उचित रूप मे न तो गल्ले का संग्रह ही हो सकेगा और न ही उसका उचित वितरण।

ऐसा अनुमान है कि केन्द्रीय सरकार गेहू और चावल का २-३ मिलियन टन का एक बफर फूड स्टाक (Buffer Food Stock) बनायेगी। यह गल्ला देश के भीतर से एकत्र किया जायगा तथा थोडा गल्ला विदेशो से भी आयात किया जायगा।

इसके अतिरिक्त सरकार सारे देश को कुछ क्षेत्रो मे बाटना चाहती है। वे क्षेत्र जिनमे गल्ले की कोई कमी नही होती उनको उन क्षत्रो से अलग रखा गया है जिनमे गल्ले की कमी होती है। इसके अतिरिक्त गल्ले मे सट्टेबाजी को समाप्त करने का प्रयत्न किया जायगा।

सरकार को क्या करना चाहिये—सरकार को खाद्य-समस्या को सुलझाने के लिये अभी कुछ करना बाकी है। हमारे देश मे ठीक आँकडो की बहुत कमी है। बिना ठीक आकडो के कोई भी योजना सफल नही हो सकती। ठीक आकडो को एकत्र करने के लिये सरकारी तथा गैर सरकारी सभी प्रकार की सस्थाओ से काम लेना पडेगा।

सरकार को चाहिये कि वह खेती को अधिमान का पद दे। उसको चाहिये कि वह खेती के लिये अधिक धन खर्च करे और खेती की देख भाल करने के लिये अधिक मनुष्यो को नियुक्त करे। सयुक्त राष्ट्र अमरीका मे केन्द्रीय सरकार एक आदमी के पीछे ८० रुपया व्यय करती है। पर हमारी केन्द्रीय सरकार कुल एक आना व्यय करती है। हमारे देश मे केन्द्रीय सरकार जितना सब मदो पर खर्च करती है उसमे से हर १०० रुपये के पीछे केवल १२ आने खेती पर खर्च होते है। राज्य सरकारें भी, जिनके ऊपर खेती की उन्नति करने का मुख्य भार है, १९४७–४८ मे इस प्रकार से खर्च करती थीं—

आसाम कुल खर्च का १.५ प्रतिशत, बिहार ४.५ प्रतिशत, बम्बई ७ प्रतिशत मध्य प्रदेश ३.२ प्रतिशत, मद्रास ४ प्रतिशत, पूर्वी पजाब २.२ प्रतिशत और उत्तर प्रदेश ३.६ प्रतिशत।

भारतवर्ष मे दूसरे देशो की अपेक्षा खेती की देख-भाल करने वाले व्यक्ति भी बहुत कम हैं। इस देश मे भारतीय सरकार ने एक करोड व्यक्तियो के पीछे केवल ६ कृषि अफसर (Agricultural Officer) रक्खे हुये हैं। पर सयुक्त राष्ट्र अमेरिका

रित करना तथा उनको एक सूत्र मे लाना हो। केन्द्रीय सरकार का कार्य केवल नीतियों को निर्धारित करना तथा उनको एक सूत्र म करना होना चाहिये।

इस समिति न यह भी बताया कि दीर्घकालीन तथा मध्यकालीन ऋण केन्द्रीय तथा राज्य सरकारो को देन चाहियें तथा कम समय वाले ऋण सहकारी समितियो को दो चाहियें। इसने यह भी बताया कि छोटी छोटी सिंचाई की योजनाओ पर अधिक ध्यान देना चाहिए। इस प्रकार हमारी खाद्य उत्पत्ति बढ़ाने की आशा है।

१९५१–५२ के पश्चात् से इस दृष्टि से जा काय किया गया है वह दो प्रकार का है—पहला कुए, तालाब छोट गाँव, ट्यूब वैल आदि बनाना, ट्रैक्टर, बडिंग तथा बेकार पडी हुई भूमि को साफ करके खेती के योग्य बनाना तथा दूसरा, खाद, बीज आदि बाँटना। नीचे की तालिका से यह पता चलता है कि भारत सरकार, ने राज्य सरकारो को 'अधिक अन्न उपजाओ' योजना के अन्तगत १९५१ से ५६ तक कितनी आर्थिक सहायता प्रदान की है।

योजना का नाम	१९५१–५२ वास्तविक करोड रु० म	१९५२–५३ वास्तविक करोड रु० म	१९५३–५४ वास्तविक करोड रु० म	१९५४–५५ वास्तविक करोड रु० मे	१९५५–५६ स्वीकृत करोड रु० मे
लघु सिंचाई	७ ४५	८ ०१	९ ८४	७ ९५	१२ ९९
भूमि प्राप्त	२ ७५	२ ६०	२ ८४	३ ३३	३ १८
खाद	१ ४५	१ ५८	६ १५	७ ४४	९ ६५
बीज	० ५५	० ६१	० ५३	०·६५	१ २२
अन्य	० ९३	१ ०४	० ७९	० ७१	० ९३
योग	१३ ०४	१४ ०४	२० १५	१९ ९८	२७ ९७

लघु सिंचाई—प्रथम योजना म यह अनुमान किया जाता है कि लगभग १ करोड एकड भूमि छोटी योजनाओं द्वारा तथा ६३ लाख एकड भूमि बडी योजनाओ द्वारा सीची गई। दूसरी योजना म सीचा हुआ भाग २ १० करोड एकड बढा दिया जायगा जिसम से ९० लाख एकड छोटी योजनाओं से बढ गा।

खाद—प्रथम योजना से पहले देश म अमोनियम सल्फेट का उपभोग २ ७५ लाख टन था। परन्तु योजना काल के प्रथम ३ वर्षो म इसका उपभोग बढकर ६ १० लाख टन हो गया। दूसरी योजना मे नत्रजन खाद का उपभोग १८ लाख टन हो जायगा। नई तरह की खाद का प्रचार बढाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

भूमि प्राप्त करना—प्रथम योजना काल मे केन्द्रीय ट्रैक्टर विभाग ने १७ ८९ लाख एकड भूमि तथा राज्य ट्रैक्टर विभागो ने १७ लाख एकड भूमि प्राप्त की। इसके अतिरिक्त बहुत सा क्षेत्र किसानो ने स्वयं उन्नत किया। दूसरी योजना म १५ लाख एकड भूमि को प्राप्त किया जायगा तथा २० लाख एकड भूमि पर ट्रैक्टर विभागो द्वारा उन्नति की योजनायें चलाई जायगी।

उन्नत बीज—उन्नत बीजो का बटवारा बडी तेजी से बढ रहा है। यह कार्य अधिक्तर सहकारी समितियो के द्वारा किया जा रहा है। दूसरी योजना मे प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार क्षेत्र मे एक या दो बीज गोदाम स्थापित किये जायेंगे।

जापानी ढग की खेती—१९५५-५६ मे १९.५३ लाख एकड भूमि पर इस प्रकार की खेती हो रही थी। दूसरी योजना मे इस क्षेत्र को बढाकर ४० लाख एकड कर दिया जायगा।

Q 29 What were the causes of famines in India ? What measures were taken by the Government of India to meet the situation and with what effect ?

प्रश्न २९—भारतवर्ष मे अकाल पडने के क्या कारण थे ? भारतवर्ष सरकार ने इस सकट का सामना करने के लिये क्या किया और उसका क्या प्रभाव पडा ?

भारत मे अकाल का इतिहास—भारत मे बहुत पुराने समय से अकाल पडते आये है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र मे भी इनका वर्णन आता है। मुसलमानो के समय मे भी बहुत से भीषण अकाल पडे पर ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समय मे वे कुछ अधिक सख्या मे पडे। १७७० ई० से १८५४ ई० तक बारह भयकर अकाल पडे। इनका कारण वर्षा की कमी तथा कम्पनी राज्य की अव्यवस्था थी। कम्पनी के पश्चात् जब भारतवर्ष ब्राउन के अधिकार मे चला गया तब भी इस देश मे बहुत से अकाल पड। एक अकाल उत्तरी भारतवर्ष मे १८५० ई० मे पडा जिसका कारण वर्षा न होना था। सरकार ने लोगो को सहायता के रूप मे काम दिया और जो काम नही कर सकते थे उनको बिना काम लिये सहायता दी। इसके पश्चात् १८६६ ई० मे एक दूरा भयकर अकाल पडा जिसमे उडीसा, मद्रास, उत्तरी बङ्गाल और बिहार आदि प्रान्त अकालग्रस्त हो गये। इसमे उडीसा प्रदेश के लगभग दस हजार आदमी मर गये। एक दूसरा अकाल १८६८ मे उत्तरी तथा मध्य भारत मे पडा। यह अकाल अन्न, चारे और पानी की कमी के कारण पडा। इसके साथ ही साथ हैजे की बीमारी भी फैली। इसी कारण बहुत से आदमी इसमे मर गये। इसके पश्चात् एक अकाल १८७३ मे पडा जिसने बिहार और उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलो पर अपना प्रभाव डाला। इसी के पश्चात् इससे भी एक भीषण अकाल १८७६ मे मद्रास, बम्बई, उत्तर प्रदेश व पजाब मे पडा। इस अकाल मे सरकार तटस्थ बैठी रही और उसने घोषणा की कि अकाल पीडित लोगो को बचाना उसके कार्यक्षेत्र से बाहर है। इसमे बहुत से आदमी मरे। इसके पश्चात् १८९८ मे एक अकाल पडा जिसने सारे भारतवर्ष पर अपना प्रभाव डाला। परन्तु इस समय तक सरकार अपने कर्तव्य को जान गई थी और उसने बहुत बडे पैमाने पर अकाल पीडितो की सहायता की। इस

काल मे सरकार के सात करोड रुपये से अधिक खर्च हो गये। इसके दो साल पश्चात् ही १८९९ ई० मे भी एक और भीषण अकाल पडा जिसने १,८९००० वर्गमील पर प्रभाव डाला और २८०,००,००० आदमी इसके शिकार हुये। इस अकाल मे सरकार के दस करोड रुपये खर्च हुये। बीसवी शताब्दी मे अकाल बहुत ही कम पडे। १९२९–३० मे एक अकाल उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और पजाब मे पडा। १९३६ मे एक दूसरा अकाल बङ्गाल तथा भारत के दूसरे भागो मे पडा। इसके कुछ समय पश्चात् १९४३ ई० मे एक भीषण अकाल पडा जिसमे लगभग ३५ लाख आदमी मर गये। इसका कारण यह था कि ब्रह्मा के ऊपर जापान का अधिकार होने से इस देश मे वहाँ का चावल आना बन्द हो गया। दूसरे इस देश से बहुत सा अन्न विदेशो को भी भेजा गया। तीसरे, कुछ प्राकृतिक विपदायें जैसे टिड्डी, बाढ़ तूफान आदि भी उस समय आई। चौथे, एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त मे गल्ला आना जाना बन्द हो गया। पाँचवे, आने-जाने की सुविधायें भी बहुत कम थी। छठे, कन्ट्रोल व राशनिंग भी कुछ गलत ढग से लगाया गया। सातवे व्यापारी लोग जनता की विपत्ति की चिन्ता न करते हुये अधिक रुपया कमाने की चिन्ता मे लगे हुये थे। अकाल इस देश से अभी तक भी नही गये। यहाँ पर १९४५ मे लडाई के समाप्त होने के पश्चात् से ही अकाल की स्थिति हो गई। जिसका प्रभाव प्राय सारे भारतवर्ष पर हुआ। अभी हाल ही मे बङ्गाल, मद्रास, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पजाब के हिसार प्रदेश मे और उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलो मे अन्न और जल की बहुत कमी थी। राजस्थान और हिसार आदि प्रदेशो मे तो चारे की भी बहुत कमी थी जिसके कारण सैकडो पशु मर गये। बहुत से पशुओ को आस-पास के राज्यो मे भेज दिया गया।

अकाल के कारण—

इस प्रकार हम देखते है कि अकाल प्राकृतिक तथा आर्थिक कारणो से पडते है। प्राकृतिक कारणो से वर्षा की कमी या अधिकता, ओलो का पडना, टिड्डी दल का आना, बाढ से फसलो का नष्ट होना आदि बातें सम्मिलित है। आर्थिक कारणो मे रोजगार का न होना, अन्न का ठीक बटवारा न होना, ऊँचे दामो का होना, आने जाने के मार्गो की कमी होने के कारण अन्न के एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने मे कठिनाई होना आदि सम्मिलित हैं।

अकाल के प्रभाव—

समाज के ऊपर अकाल का एक बहुत बडा प्रभाव होता हैं। इससे बहुत से मनुष्य व पशु मर जाते हैं और जो बच जाते हैं वे इतने दुर्बल हो जाते है कि बहुत समय तक वे कोई काम करने योग्य नही रहते। इसके कारण देश का व्यापार प्राय नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है और देश मे पूँजी की भी बहुत कमी हो जाती है, चारो ओर आपत्तियां दिखाई पडती हैं। ऐसे समय मे लोगो का बहुत भारी नैतिक पतन भी हो जाता है। सरकार की आय भी घट जाती है और उल्टे उसको लोगों की सहायता

मे उतने ही व्यक्तियो के पीछे ५०८ कृषि अफसर हैं। इङ्गलैंड जैसे छोटे से देश म
हम रे देश की अपेक्षा ७० गुने कृषि अफसर हैं। हमारे देश मे दूसरे देशो के समान
इस बात की आवश्यकता है कि कृषि विभागो का कृपक के साथ सम्बन्ध स्थापित
करने के लिय अधिक से अधिक कृषि अफसर रखे जायें।

देश के अन्दर अधिक से अधिक सहकारी समितियाँ खाली जानी चाहियें।
ये समितियाँ कृपक तथा सरकार के बीच अच्छा सम्बन्ध स्थापित कर सकती हैं।
य विदेशो से खेती के यन्त्र तथा खाद भी मगा सकती हैं कृषकों को अच्छा बीज भी
दे सकती हैं, उनका ऋण भी दे सकती हैं और इस प्रकार के व्यक्तियो को भी नौकर
रख सकती हैं जो किसानो को कृषि सम्बन्धी शिक्षा दें। ये आकडे भी एकत्र कर
सकती हैं।

८ सितम्बर १९४८ ई० को कृषि मन्त्री सभा (Agricultural Ministers
Conference) के सम्मुख भाषण करते हुय श्री जयराम दौलतराम ने कहा था कि
मेरे विचार मे अमेरिका तथा दूसरे देशो म कृषि की उन्नति इस कारण नही हुई कि
उन देशो मे बडी-बडी मशीनो से काम लिया गया वरन् इस कारण हुई कि उन देशो
मे कृषि की उन्नति करने के लिय बहुत अधिक सख्या मे मनुष्य लगे हुए हैं। भूतकाल
मे चाहे हमारी जो भी योजनायें रही हो अथवा भविष्य के लिय हम चाहे जो भी
योजना बनायें हम उस समय तक सफल न होंगे जब तक कि हम अधिकाधिक सख्या
म ऐसे लोगो को नियुक्त नही करेंगे जो इन योजनाओ को हमारे देश के लाखो
कृषको तक पहुँचा सकें।

सरकार को यह भी ध्यान रखना चाहिये कि खाद्य-सामग्री का बटवारा
समस्त देश मे ठीक रूप से हो। इस हेतु देश के उन भागो को जहाँ खाद्य-सामग्री
की अधिकता है उन भागों से जोड देना चाहिये जहाँ खाद्य-सामग्री की कमी है।
सरकार को एक भण्डार भी बनाना चाहिये जिसम हर समय अन्न रखा जाय जिसको
आवश्यकता के समय काम मे लाया जा सके।

सरकार को यह भी देखना चाहिये कि यन्न को ठीक प्रकार से गोदामो म
एकत्र किया जाय। ऐसा न करने से हमारे देश का लाखो मन अनाज हर वर्ष नष्ट
हो जाता है।

यह भी आवश्यक है कि सरकार आगामी कुछ वर्षों के लिय कृषि वस्तुओ
का अधिकतम व न्यूनतम मूल्य निश्चित करे। इस प्रकार गल्ले के एकत्र करने की
प्रवृत्ति समाप्त हो जायगी। इसके साथ साथ सरकार को यह भी देखना पडेगा कि
निश्चित किये गय मूल्यो से अधिक व कम पर सौदे न हो अन्यथा मूल्य निश्चित करने
से कोई लाभ न होगा केवल घूसखोरी को प्रोत्साहन मिलेगा।

इस बात का भी प्रयत्न करना चाहिये कि साख तथा दूसरी विकासात्मक
सुविधाओ अर्थ-सहायता अनुदान आदि का सम्बन्ध सरकार द्वारा उचित मूल्य
दुकानो के लिये निश्चित मूल्य पर खरीदे गये गल्ले से होना चाहिये।

ऐसा करने से इन दुकानो का देश की बाजारी मशीनरी मे एक महत्वपूर्ण स्थान हो जायगा।

यह भी आवश्यक है कि गल्ले आदि के पीछे बैंक व्यापारियो को साख प्रदान न करें। यहाँ यह बताया जा सकता है कि रिजर्व बैंक कई बार बैंको को ऐसा न करने का आदेश दे चुका है परन्तु वह अभी सफल नही हुआ।

सरकार को यह भी देखना चाहिये कि गल्ले मे कोई सट्टे वाले सौदे न करे क्योंकि भविष्य के मूल्यो के कारण ही व्यापारियो तथा स्टाक करने वालों को माल एकत्र करने का प्रोत्साहन मिलता है।

सरकार को खेती की उच्चतम सीमा भी निश्चित कर देनी चाहिये और उसको शीघ्र ही कार्यान्वित करना चाहिये। ऐसा करने से बड़े-बड़े उत्पादकों की गल्ले को एकत्र करने की प्रवृत्ति समाप्त हो जायगी।

आशा है कि ये सब प्रयत्न करने से हमारे देश की खाद्य-समस्या अवश्य सुलझ जायगी।

Q 28 Analyse the causes of the meagre achievements of the 'Grow-More food campaign' in India

प्रश्न २८—भारतवर्ष मे 'अधिक अन्न उपजाओ योजना' की कम सफलता के कारण लिखो।

उत्तर—'अधिक अन्न उपजाओ-योजना' इस देश मे १९४३ ई० से चालू हुई। इसका उद्देश्य यह था कि देश की खाद्य समस्या सुलझ जाय। इस योजना की मुख्य विशेषताये ये है—

(१) खाद्य सामग्री बढाने के लिये नई तथा खाली पडी हुई भूमि को काम मे लाया जाये। दो दो फसलें उत्पन्न की जाय। दूसरी फसलो से भूमि को हटा कर खाद्य सम्बन्धी फसलें उगाई जायें। नई भूमि को जोतने का प्रोत्साहन देने के लिये सरकार को चाहिये कि वह बिना ब्याज के ऋण दे, बिना लगान पट्टे पर भूमि दे, लगान मे छूट की जाय, मुफ्त सिंचाई का प्रबन्ध किया जाए अथवा सस्ते दामो पर इसका प्रबन्ध हो, कम मूल्य पर किसानो को बीज दिया जाए और लगान सम्बन्धी कानून मे बदल की जाए।

(२) सिंचाई के लिये नहरें अथवा कुए बनाकर अधिक जल का प्रबन्ध किया जाये।

(३) खाद का अधिक उपयोग किया जाए।

(४) अच्छे बीज का भी प्रबन्ध हो।

इस योजना के अन्तर्गत प्रान्तो से यह कहा गया कि वे नई भूमि प्राप्त करें कुए बनाये, अच्छा बीज काम मे लाये, हरी खाद तथा दूसरी प्रकार की खादो को

प्रयोग करें। उनसे यह भी कहा गया कि वे पशुओ की उन्नति की ओर भी ध्यान दे तथा विदेशो से ट्रैक्टर मँगवाये और खेती की उन्नति के लिये हर प्रकार के प्रयत्न करें।

यह योजना केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारो के सहयोग से चलाई गई। इसमे केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारो का भाग ५० ५० था। योजना के पहले चार वर्षों मे केन्द्रीय सरकार ने राज्यो को ऋण व अनुदान के रूप मे सहायता दी जिससे कि वे उत्पत्ति बढा सके। अब केन्द्रीय सरकार निश्चित प्रोग्राम के लिये सहायता प्रदान करती है। आजकल इस योजना के दो प्रकार के कार्यक्रम हैं—निर्माण कार्यक्रम तथा पूर्ति कार्यक्रम। पहले मे कुओं, तालाबो, छोटे-छोटे बाँधो ट्यूबवैलो आदि का बनाना तथा उनकी मरम्मत सम्मिलित है। दूसरे मे खाद व अच्छे बीजो का वितरण है।

१९५१-५२ से इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि इस योजना को विस्तृत बनाने के बदले गहन बनाया जाए। १९५०-५१ के पश्चात् पचवर्षीय योजना चालू हो गई जिसके अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार ने राज्यो को अधिक अन्न उपजाओ योजना के लिये बहुत सा धन दिया है। इस योजना की नई नीति यह है—

(१) स्थायी उन्नति की योजनाओ जैसे सिंचाई तथा भूमि की उन्नति की ओर अधिक ध्यान दिया जाए।

(२) बडे पैमाने पर ट्यूबवैल बनाने का कार्य किया जाए।

(३) उन क्षेत्रो मे जहाँ पर्याप्त वर्षा अथवा सिंचाई के साधन हैं खाद व उन्नत बीज बाँटे जायें।

(४) पशुओ, मछलियो तथा बागबानी की उन्नति मे सहायता प्रदान करना।

(५) इन सिद्धान्तो को मानना कि केन्द्र की सहायता धीरे-धीरे समाप्त कर दी जाये।

केन्द्रीय सरकार पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राज्यो को खेती की उन्नति के लिये जो सहायता प्रदान करती है वह अधिक अन्न उपजाओ योजना के लिए ही है। १९५१-५२ मे केन्द्र ने छोटी सिंचाई की योजनाओ, भूमि प्राप्त करने, खाद व बीजो के लिये १७ ३९ करोड रुपये की अनुमति दी। परन्तु उसमे से केवल ११ २९ करोड रुपया खर्च हुआ। १९५२-५३ मे १९ ३५ करोड की अनुमति दी गई परन्तु १४ १६ करोड रुपया खर्च किया गया तथा १९५३-५४ मे २१ ७४ करोड की अनुमति दी गई परन्तु खर्च का पता नही। १९५६-५७ के लिए २५ ६२ करोड रुपये राज्यो को देने के लिए रखे गये।

इस योजना के सम्बन्ध मे यह कहावत चरितार्थ होती है—'खोदा पहाड निकला चूहा'। इसकी हर तरफ बडी धूमधाम मची। विज्ञापनो द्वारा जनता मे इसका खूब प्रचार किया गया। इस प्रकार इस योजना पर सरकार ने करोडो रुपया व्यय किया पर फल कुछ भी न निकला। जितना प्रयत्न हुआ उतनी ही खाद्य

समस्या भयङ्कर होती चली गई और खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति बजाये बढने के घट गई। यह बात नीचे दी हुई तालिका से अच्छी प्रकार समझ मे आ सकती है।

वर्ष	क्षेत्रफल	उत्पत्ति दस लाख टनोमे	प्रति एकड उत्पत्ति पौंडो म
१९३६–३७ से १९३८–३९ का औसत	१५ ८८	४० ९	५७७
१९४२–४३	१६४ ०	४४·०	६०३
१९४३–४४	१६६ ०	४५ ०	६१२
१९४४–४५	१८३ ०	४६ ०	५६४
१९४८–४९	१८९ ६	४४ ०	५३२
१९४९–५०	१९५ ६	४५ ९	५२५

इस प्रकार हम देखते हैं कि १९४३–४४ की अपेक्षा १९४९–५० मे भी देश मे खाद्य-सामग्री की उत्पत्ति मे बहुत कमी थी।

इस बात की खोज करने के लिये रिजर्व बैंक तथा और दूसरी सस्थाओ ने बहुत प्रयत्न किया है। इनके मतानुसार इस योजना की सफलता के निम्नलिखित कारण हैं—

(१) देश के किसी भी भाग मे द्वितीय महायुद्ध आरम्भ होने से पूर्व जितने क्षेत्रफल पर खेती होती थी उनमे ५ प्रतिशत से अधिक कही भी वृद्धि नही हुई है।

(२) खाद्य पदार्थों पर कन्ट्रोल होने तथा तम्बाकू आदि पर न होने के कारण लोगो ने खाद्य पदार्थों को बोना बन्द कर दिया।

(३) जैसा कि ऊपर की तालिका दिखाया गया है, यद्यपि खाद्य-पदार्थों के क्षेत्रफल मे वृद्धि हुई, तो भी प्रति एकड उत्पत्ति घटती चली गई।

बम्बई सरकार ने भी इस योजना की सफलता के कारण जानने का प्रयत्न किया। उसकी छान-बीन से पता चला कि इस राज्य मे यह योजना निम्नलिखित कारणो से असफल हुई—

(१) सरकार के पास आवश्यकता की अपेक्षा साधन बहुत कम थे और जितने भी थे उनका वितरण उत्तम रीति से नही हुआ।

(२) सरकार के पास योजना के लिये देखभाल करने वाले व्यक्ति बहुत कम थे। इसके फलस्वरूप जो साधन अन्न-उत्पत्ति के काम आने चाहिये थे वे दूसरी वस्तुओ के उत्पन्न करने मे व्यय हो गये।

(३) इस योजना मे दिखावट अधिक हुई और काम कम हुआ। सरकार ने यह प्रयत्न नही किया कि वर्तमान साधनो को अधिक उपयोगी बनाया जाय वरन् उसने यह प्रयत्न किया कि नये साधनो के प्रयोग द्वारा चकाचौंध करने वाले फल दिखाये जावें। उदाहरण के लिये पुराने कुओं की मरम्मत करने के बदले सरकार ने नये कुएँ बनवाये।

यता करने के लिये बहुत सा रुपया खर्च करना पडता है।

भारत सरकार की अकाल सम्बन्धी नीति—भारतीय सरकार ने १८७६–७८ के अकाल के बाद एक कमीशन की नियुक्ति की जिसने यह बात बताई कि सरकार को चाहिये कि अकाल के समय जनता की सहायता करे। जो मनुष्य काम कर सकते हैं उनको काम दे, जो काम नहीं कर सकते उनको बिना कुछ लिये सहायता दे। अन्न के वितरण करने का कार्य जनता ही के हाथ मे रहना चाहिये। यदि जनता सुचारु रूप से इस कार्य को न कर सके तो सरकार को स्वयं यह कार्य करना चाहिये। जो लोग खेती करते हैं उनको ऋण दिया जाये और जिस अंश मे फसलें नष्ट हो गई है उस अंश तक लगान मे छूट करनी चाहिये।

सरकार ने इन सब बातो को मान लिया और आगे के अकालो मे इसी नीति से काम लिया गया। सरकार ने अकाल सम्बन्धी कानून बनाया और उसकी जाच १८९६–९७ वाले अकाल मे की। अकाल मे ४० लाख लोगो को सहायता दी गई और सरकार का ७½ करोड रुपया खर्च हुआ। इसमे से १¾ करोड रुपया ऋण के रूप मे लोगो को दिया गया और १½ करोड रुपये की लगान मे छूट की गई। १¾ करोड रुपया दान के रूप में खर्च किया गया। फिर भी अकाल में अंग्रेजी भारत में ७½ लाख मनुष्य मर गये। १८९९ के अकाल कमीशन ने यह बात बताई कि अकाल पीडितों को बिना कुछ लिये सहायता देनी चाहिये और अलग-अलग स्थानों पर अकाल पीडितो की सहायता का प्रबन्ध करना चाहिये। १९०१ के अकाल कमीशन ने इस बात की सिफारिश की कि अकाल पडते ही शीघ्रतासीघ्र लगान की छूट कर देनी चाहिये और तकावी ऋण लोगो को देना चाहिये। उसने इस बात पर जोर दिया कि भारतीय कृषि की समस्यायें सहकारी समितियों द्वारा सुलझ सकती हैं। उसने यह भी बताया कि अकाल को रोकने के लिये सिंचाई का प्रबन्ध होना चाहिये। सरकार ने इन सब बातो को मान लिया। १९०४ ई० मे एक सहकारी साख समिति ऐक्ट पास किया गया जिससे किसानो को बहुत लाभ पहुचा। इसके पश्चात् सरकार का ध्यान नहरें बनवाने की ओर भी लग गया और पचासो करोड रुपया खर्च करके सरकार ने देश के बहुत से भागो मे नहरें बनाई।

अकाल निवारण कोष (Famine Relief Fund)—

१८७६ ई० मे अकाल से बचने के लिये सरकार ने एक योजना बनाई जिसके अनुसार हर वर्ष डेढ करोड रुपया एक कोष मे इसलिये एकत्रित किया गया जिससे अकाल मे बचने के लिये लगातार कुछ न कुछ काम होता रहे। इस कोष मे १९१९ के ऐक्ट के अनुसार केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारें एक निश्चित धन राशि हर वर्ष जमा करती थी। इस कोष के अतिरिक्त एक ट्रस्ट फंड भी खोला गया जिसमे महाराजा जयपुर ने पन्द्रह लाख रुपया दान किया। इसके पश्चात् भी इस ट्रस्ट मे बहुत सा धन एकत्रित किया गया। इस ट्रस्ट का रुपया सूद पर चढा हुआ है और

उसकी आय से सहायता देने का कार्य किया जाता है।

अकाल सम्बन्धी नयी नीति—आजकल हर राज्य सरकार ने अकाल रक्षक कोष (Famine Insurance Fund) खोला हुआ है जिसमे हर वर्ष बजट मे से कुछ न कुछ धन जमा किया है। आजकल सहायता पहुचाने का कार्य निम्नलिखित ढग से होता है।

जिस समय अकाल पडने का डर होता है उस समय सरकार लोगो को सचेत कर देती है। सारे देश का नक्शा बनाकर उसको बहुत से सहायक क्षेत्रो मे बांट दिया जाता है। यदि वर्षा नही होती तो सरकार एकदम अकाल नीति घोषित करती है। जनता से सहायता की याचना की जाती है। लगान मे छूट कर दी जाती है और कृषि के लिये ऋण दिया जाता है। बहुत से जाच घर (Test works) खोल दिये जाते हैं और यदि उनमे बहुत से आदमी आते है तो उन जाच घरो को सहायता घरो (Relief Works) मे बदल दिया जाता है। जो मनुष्य कार्य कर सकते हैं। उनको काम दिया जाता है और जो कार्य नही कर सकते उनको बिना कुछ लिये सहायता पहुँचाई जाती है। बीमारी से बचने के लिये अस्पताल भी खोले जाते हैं। ये मनुष्य यहाँ पर उस समय तक रक्खे जाते है जब तक वर्षा नही होती। वर्षा होने पर उनको छोटे-छोटे सहायता घरो मे जो अकाल पीडितो के गाँवो के पास होते हैं पहुचा दिया जाता है और यहा पर उनको हल, बैल, बीज आदि मोल लेने के लिये ऋण दिया जाता है। जब पतझड ऋतु की फसल पककर तैयार हो जाती है तो बचे हुये सहायता केन्द्र भी बन्द कर दिये जाते हैं। इस प्रकार अकाल पीडितो की सहायता की जाती है।

इस नीति से पहले भले ही कुछ अधिक लाभ न हुआ हो पर पिछले कई वर्षों से इससे देश को बहुत लाभ पहुचा है। इसी नीति के कारण हिसार, राजस्थान, मद्रास, पूर्वी उत्तर प्रदेश आदि मे बहुत से लोग जो भूख और प्यास से मर जाते थे उनको बचा लिया गया है। अकाल से बचाने के लिये केन्द्रीय सरकार भी राज्य सरकारो को बहुत सा धन सहायता रूप मे देती रहती है। अभी हाल ही मे उसने राजस्थान को बहुत सा धन दिया है और उत्तर प्रदेश को भी बहुत से ट्यूबवैल बनाने के लिये सहायता दी है। इस प्रकार केन्द्रीय और राज्य दोनो ही सरकारें अकाल पीडितो की सहायता करती हैं।

अभी अप्रैल १९५८ ई० मे बिहार मे अकाल की स्थिति आ गई थी जिसने १६ ५ मिलियन लोगो के ऊपर अपना प्रभाव डाला। इस स्थिति का मुख्य कारण वर्षा की कमी था। इस स्थिति का मुकाबला करने के लिये बिहार राज्य मे १२७०० उचित मूल्य की दुकाने खोली गई। सकट वाले क्षेत्रो मे सहायता प्रदान करने का कार्य किया गया। इस कार्य मे भारी मिट्टी का कार्य, हल्का कार्य तथा छोटे-छोटे सिंचाई के कार्य किये गये। इस कार्य मे ३ ५ मिलियन लोग लगाये गये। इसके अतिरिक्त २६५००० आदमी कोसी बाध, जल माग तथा सार्वजनिक कार्य की

योजनाओं में लगाये गये। राज्य सरकार ने ८० लाख रु० जाँच कार्यों (Test Works) के लिये मज़ूर, ७० लाख रु० तकावी तथा कृषि ऋण के रूप मे मज़ूर किये गये तथा १० लाख रु० भूमि की उन्नति के लिये ऋण के रूप मे दिये गये। इसके अतिरिक्त १२ लाख रु० मुफ्त सहायता, ३ ६८ लाख रुपये सार्वजनिक स्वास्थ्य कार्य तथा दूध तथा अन्य खाद्य पदार्थों के लिये दिये गये।

उपर्युक्त वितरण से यह बात समझ मे आ सकती है कि राज्य सरकारें किस प्रकार अकाल के समय लोगों की सहायता करती हैं।

भारत में भूमि अधिकार-पद्धति तथा जमींदारी-उन्मूलन

७

Q (30) Give an account of the forms of land tenure in different parts of India and estimate their economic effects

प्रश्न ३० भारतवर्ष के भिन्न भिन्न भागो मे भूमि अधिकार की जो प्रथायें हैं उनका विवरण दीजिये और उनके आर्थिक प्रभाव का अनुमान लगाइये ।

भूमि अधिकार से उस प्रथा का बोध होता है जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि खेती करने वाले काश्तकार को किन शर्तों व अधिकारो के अन्तर्गत भूमि जोतने बोने के लिये दी गई है । भूमि अधिकार की समस्या एक बहुत महत्वपूर्ण समस्या है । यदि खेत का जोतने वाला स्वय भूमि का स्वामी होता है तो भूमि अधिकार की कोई विशेष समस्या उत्पन्न नही होती परन्तु जब किसान किसी दूसरे से भूमि जोतने बोने के लिये लेता है तब भूमि अधिकार की समस्या का अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण होता है ।

भारतवर्ष मे सदा से ही सरकार भूमि की सर्वोच्च स्वामी (Supreme landlord) रही है और इस नाते यह किसान से भूमि-कर लेती रही है । मनु ने बताया है कि सरकार को कुल उत्पत्ति का छठा भाग मालगुजारी के रूप मे लेना चाहिये । हिन्दु राजाओ के शासनकाल मे सरकार इसी दर से मालगुजारी लेती रही । उस समय मालगुजारी का प्रबन्ध कुटुम्ब के आधार पर होता था । प्रत्येक कुटुम्ब का प्रमुख गाँव की सभा का सदस्य होता था । गाँव का मुखिया इस सभा का अध्यक्ष होता था । दस गाँवो के मुखिया मिलकर एक दूसरी सभा बनाते थे जिसका अध्यक्ष चौधरी कहलाता था । दस चौधरी एक परगना सभा बनाते थे और दस परगनो की एक बडी सभा राजा के आधीन कार्य करती थी । मुखिया लोग अपने अपने गावो की मालगुजारी राजा से तय करके अपने गाँव के कुटुम्बो मे बाँट देते थे । मुसलमानी शासनकाल के आरम्भ मे भी यही प्रथा रही । परन्तु जब मुस्लिम शासन दृढ हो गया तब उन्होने इस देश मे जागीरदारी प्रथा प्रारम्भ की । परन्तु जागीरदारी प्रथा जमींदारी प्रथा से बहुत भिन्न थी । अकबर के शासनकाल मे जागीरदारी के स्थान पर ठेकेदारी प्रथा चालू की गई । इसके अनुसार मालगुजारी वसूल करने का ठेका ठेकेदारो (Revenue Farmers) को दे दिया गया । ये निश्चित रकम या पैदावार सरकारी खजानो मे जमा करते थे । टोडरमल ने भूमि का नया बन्दोबस्त करके नये सिरे से मालगुजारी निश्चित की । कुछ समय तक तो कार्य इस प्रकार होता रहा परन्तु जब मुगल सत्ता निर्बल पडने लगी तब बहुत से सूबेदार,

सरदार, टेकेदार अपनी मनमानी करने लगे और धीरे-धीरे वे बड़े शक्तिशाली हो गये। जब अंग्रेजों के हाथ मे बगाल की मालगुजारी वसूल करने का अधिकार आया तब उन्होंने भूल से इन ठेकेदारो आदि को ही भूमि का स्वामी बना लिया और उसके इस अधिकार को स्वीकार किया। १७९३ ई० मे लार्ड कार्नवालिस ने बगाल मे इनकी मालगुजारी सदा के लिये निश्चित करके स्थायी बन्दोबस्त की नीव डाली। उसने उनको भूमि मे हर प्रकार के अधिकार दे दिये। इस प्रकार भारतवर्ष मे जमीदारी प्रथा का जन्म हो गया। बगाल के पश्चात् स्थायी बन्दोबस्त वाली जमीदारी प्रथा को दक्षिण मे भी पहुचाने का प्रयत्न किया गया परन्तु वहाँ पर कुछ जमीदारी लोगो के विरोध के कारण यह प्रथा चालू न की जा सकी। इस प्रकार दक्षिणी मद्रास तथा बम्बई प्रान्तो मे सरकार ने किसानो और अपने बीच मे किसी मध्यजन (Middle man) के अधिकारो को स्वीकार न करके अपना सीधा सम्बन्ध किसानो से रक्खा। दूसरे शब्दो मे इन प्रान्तो मे सरकार ने रैयतवारी प्रथा चलाई।

स्थायी बन्दोबस्त के दोष सरकार को कुछ ही समय बाद दिखाई देने लगे। इस कारण भारत के दूसरे प्रान्तो मे जैसे सयुक्त प्रान्त, पजाब, मध्यप्रदेश आदि मे सरकार ने अस्थायी बन्दोबस्त किया। इन प्रदेशो मे बन्दोबस्त को २० से ४० वर्षों मे बदला जाता है। इन प्रदेशो मे भूमि अधिकार की दृष्टि से दो प्रकार की प्रथायें पाई जाती हैं—(१) महालवारी तथा (२) मालगुजारी। इस प्रकार भारत मे चार प्रकार की भूमि अधिकार प्रथायें पाई जाती हैं—(१) जमीदारी (२) रैयतवारी (३) महालवारी तथा (४) मालगुजारी।

(१) जमींदारी—

इस पद्धति मे सरकार और किसान के बीच मे एक मध्यजन होता है जिसको जमीदार कहते हैं। यह जमीदार जमीन का मालिक होता है। वह स्वयं खेती नही करता वरन् अपनी भूमि को किसानो को उठा देता है। ये किसान जमीदार को लगान देते हैं। लगान वसूल करके जमीदार सरकारी खजाने मे उसका कुछ भाग मालगुजारी के रूप मे जमा करता है। यदि किसी वर्ष किसान जमीदार को लगान नहीं देता तब भी जमीदार को सरकारी मालगुजारी तो देनी ही पडती है। इस प्रकार मालगुजारी देने की पूरी जिम्मेदारी जमीदार पर होती है। जमीदार अपनी जमीन का पूरी तरह मालिक होता है। यह किसान को किसी भी शर्त व अधिकारों के अन्तर्गत जमीन दे सकता है। वह उनके साथ किसी भी प्रकार का व्यवहार कर सकता है। वह उनको भूमि पर अपनी इच्छानुसार रख व निकाल सकता है। सरकार इसमे कोई हस्तक्षेप नही कर सकती। इस प्रकार जमीदारी प्रथा मे सरकार व किसान का कोई सम्बन्ध नही होता। यह प्रथा बगाल, बिहार उत्तरी मद्रास, बनारस और अवध तथा बम्बई और मध्यप्रदेश के कुछ भागो मे पाई जाती है। अधिकांश बगाल, उत्तरी मद्रास, बिहार और बनारस मे सरकार और जमीदारो मे स्थायी बन्दोबस्त है और शेष राज्यो मे अस्थायी बन्दोबस्त है।

जमींदारी प्रथा के लाभ—जिस समय बङ्गाल मे जमींदारी प्रथा चालू की गई थी उस समय उससे निम्नलिखित लाभ होने की आशा थी—

(1) इसके द्वारा सरकार को एक निश्चित धन-राशि प्रतिवर्ष प्राप्त हो जायेगी।

(२) इससे जमीदार वर्ग सदा ही सरकार का स्वामीभक्त रहेगा और इसके द्वारा अंग्रेजी राज्य की जड़ें इस देश मे मजबूती के साथ जम जायेंगी।

(३) इसके द्वारा जमीदार वर्ग उत्पन्न हो जायगा। यह वर्ग शिक्षित होगा पर इसके पास कुछ अधिक कार्य करने को न होगा। इस कारण यह वर्ग समाज का राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्रो मे मार्ग-प्रदर्शन कर सकेगा।

(४) जमीदार अपने काश्तकारो को आवश्यकता पड़ने पर धन से सहायता पहुँचायेगा तथा भूमि की उन्नति मे सहायक होगा।

(५) श्री रमेशदत्त अपने 'भारत के आर्थिक इतिहास' (छठे सस्करण) मे पृष्ठ ५८ पर जमीदारी प्रथा के लाभ बताते हुये कहते हैं कि जो लोग ध्यानपूर्वक चीजों का अध्ययन नही करते उन्होंने जमीदारो को भूमि के ऊपर एक भार बताया है, परन्तु गम्भीर आदमी जिन्होंने भारत के सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास को ध्यानपूर्वक पढा है एक दूसरा ही मत रखते हैं। उनका कहना है कि इस राजनीतिक लाभ के अतिरिक्त कि जमीदार एक विदेशी सरकार तथा किसानो के उस राष्ट्र के बीच जिसका सरकार मे कोई प्रतिनिधित्व नही था एक प्रभावशाली वर्ग के रूप मे कार्य करते थे। यह भी लाभ था कि देश के इन लोगो का मत तथा प्रभाव जमीदारी प्रथा की गलतियो को ठीक करता तथा सरकार को लोगो के अधिक सम्पर्क मे लाता था।

जमींदारी प्रथा के दोष—परन्तु व्यवहार मे इनमे से बहुत मे लाभ न हो सके। यह बात तो सत्य है कि जमीदारी प्रथा के द्वारा सरकार की आय निश्चित हो गई और वे सरकार के स्वामीभक्त बन गये और उन्होंने कृषक वर्ग मे नागरिक जागृति पैदा न होने दी परन्तु उनसे जिन आर्थिक लाभो के प्राप्त होने की आशा थी वे न हो सके। इसके विपरीत इस देश मे जमीदार तटस्थ जमीदार (Absentee landlord) बन गये हैं। वे कभी भी अपने काश्तकारो की धन से सहायता नही करते और न वे कभी भूमि की उन्नति मे कोई सहायता पहुँचाते हैं। उल्टे वे भूमि की उन्नति मे बाधक हैं। वे मनचाहा लगान किसान से वसूल करते हैं। उनसे बेगार तथा नजराना लेते हैं। समय-समय पर वे बहुत सा धन अबवाब के रूप मे भी लेते हैं। यदि बेचारा किसान न दे तो उसको भूमि से निकाल बाहर करते हैं। वे स्वय कभी भी काश्तकार से नही मिलते वरन् वे गुमाश्ते रखते हैं जो काश्तकारो को हर प्रकार से सताते रहते हैं। इस प्रकार इस देश मे स्थायी बन्दोबस्त करने से कोई लाभ नही हुआ उल्टे हानि ही हुई। किसान और सरकार का सीधा सम्बन्ध न होने के कारण किसान की आर्थिक स्थिति दिनो-दिन बिगडती जा रही है। शाय

ही साथ सरकार को भी बहुत आर्थिक हानि हुई है क्योंकि आजकल जमीदार लोग काश्तकारो से ले तो रहे हैं १६½ करोड रुपये प्रतिवर्ष और सरकार को दे रहे हैं केवल ४ करोड । इस प्रकार जमीदारो की जेब मे केवल बङ्गाल में १२½ करोड रुपये चले जाते हैं। यदि ये सब रुपये सरकार को मिलते तो उसको बिक्री कर इत्यादि न लगाने पडते और वह अधिक रुपया शिक्षा, कृषि, सडक आदि पर व्यय कर सक्ती।

इन सब दोषो ने जब बहुत उग्र रूप धारण कर लिया तब सरकार को हस्त-क्षेप करना पडा। उसने पहले कानून द्वारा काश्तकारो के अधिकारो को सुरक्षित करने का प्रयत्न किया और अन्त मे जब से हमारे देश मे अपनी सरकार आई है तब से वह इस प्रथा को समाप्त करती जा रही है।

(२) रैयतवारी—

इसके अन्तर्गत काश्तकारो तथा सरकार के बीच मे कोई जमीदार नही होता वरन् काश्तकार सीधे सरकार से भूमि लेते हैं। यहाँ पर मालगुजारी काश्तकार के पास जिस प्रकार की भूमि होती है वह उस पर क्या फसल उगाता है, उस भूमि को वर्षा तथा आवागमन के साधनो की कितनी सुविधा प्राप्त है, आदि को ध्यान मे रख कर निश्चित की जाती हैं। इन सब बातो के हेर फेर होने के कारण मालगुजारी समय-समय पर घटती-बढती रहती है। यह ढङ्ग मद्रास, बम्बई, आसाम, बरार तथा मध्य प्रदेश मे पाया जाता है।

इस प्रकार इस प्रथा की निम्नलिखित विशेषतायें हैं—

(१) इसमे सरकार व किसान के बीच में कोई मध्यजन नही होता। सब भूमि की अन्तिम मालिक सरकार होती है चाहे वह भूमि जोती हुई हो, चाहे वह बकार पडी हो।

(२) किसान को अपनी भूमि जोतने, हस्तातरित करने तथा छोडने का पूरा अधिकार होता है।

(३) प्रत्येक किसान सरकारी लगान के लिय अलग-अलग जिम्मेदार होता है।

(४) लगान एक निश्चित समय के लिये निर्धारित किया जाता है और फिर उसमे परिस्थिति के अनुसार बदल कर ली जाती है।

इस प्रथा के गुण—(१) इसका पहला गुण यह कहा जा सकता है कि इसमे *सरकार और किसान के बीच में कोई मध्यजन नही होता वरन् किसान का सरकार* से सीधा सम्बन्ध होता है। इस कारण सरकार किसानो की समय-समय पर होने वाली कठिनाइयो को समझकर उनके दूर करने का प्रयत्न कर सक्ती है।

(२) जमींदारी प्रथा के स्थायी बन्दोबस्त के समान इस प्रथा मे मालगुजारी सदा के लिये निश्चित नही होती वरन् लगभग २० वर्ष पश्चात् दोहराई जाती है। इस प्रकार भूमि पर होने वाली उन्नति का लाभ सरकार को पहुच जाता है।

(३) जमीदारी प्रथा के समान इस प्रथा मे किसान को सताने वाला कोई

व्यक्ति नहीं होता। यहाँ जमींदारी प्रथा के समान किसी को नजराने, अबवाब आदि देने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती।

(४) जिन भागों में यह प्रथा पाई जाती है उसमें चकबन्दी, भूमि की उन्नति बड़े पैमाने पर खेती करने आदि का कार्य बड़ी सुगमता से किया जा सकता है।

इस प्रथा के दोष—(१) यद्यपि इस प्रथा में कहने के लिये तो सरकार और किसान का सीधा प्रबन्ध है परन्तु वास्तव में वहाँ भी जमींदारी प्रथा के समान, बहुत से मध्यजन आ गये हैं जो किसानों को खूब लूटते हैं। इस प्रकार देखने में यह प्रथा भले ही अच्छी दिखाई पड़ती हो पर वास्तव में ऐसी बात नहीं है।

(२) प्रत्येक व्यक्ति का लगान अलग निर्धारित करने के कारण ग्राम पंचायतों के कार्यों का अन्त हो गया।

(३) किसानों को भूमि हस्तांतरित करने की स्वतन्त्रता होने के कारण उनकी बहुत सी भूमि महाजनों के हाथों में चली गई है।

(४) सरकारी लगान केवल भूमि के क्षेत्रफल पर निर्धारित किया जाता है और प्रतिवर्ष की कृषि उत्पादन की वृद्धि अथवा ह्रास का उसमें कोई ध्यान नहीं रखा जाता। सर जार्ज क्लार्क ने लार्ड की प्रवर समिति के समक्ष गवाही देते हुए कहा कि रैयतवारी देश के लिये सबसे अधिक घातक है। रैयतवारी प्रान्तों में मालगुजारी नियन्त्रण करने का कार्य बन्दोबस्त अफसरों के अन्दाजे पर निर्भर होता है।

(५) जब भी बन्दोबस्त बदला जाता है तो साधारणतया लगान बढ़ाया ही जाता है, घटाया नहीं जाता। इस कारण खेती पर किसी प्रकार की स्थाई उन्नति सम्भव नहीं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि यद्यपि यह प्रथा देखने में बड़ी अच्छी मालूम पड़ती है परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है इसमें भी किसानों की स्थिति जमींदारी क्षेत्रों के किसानों की स्थिति से कोई अच्छी नहीं है।

(३) महालवारी—

इस प्रथा में गाँव की जमीन का मालिक कोई एक जमींदार नहीं होता वरन् गाँव के वे सब लोग मिलकर होते हैं जो गाँव की जमीन के किसी न किसी हिस्से के मालिक होते हैं। यदि कोई व्यक्ति खेती तो करता है परन्तु वह उसका मालिक नहीं होता वरन् वह किसी मालिक की जमीन लगान पर लेकर जोतता बोता है तो वह सरकार की मालगुजारी देने का जिम्मेदार नहीं होता। गाँव में जो मालगुजारी देने के जिम्मेदार होते हैं वे साधारणतया एक ही परिवार के सदस्य होते हैं। परिवार के टूटने पर उनमें आपस में भूमि का बटवारा हो जाता है। इस कारण उनको सामूहिक तथा व्यक्तिगत रूप से मालगुजारी के लिये जिम्मेदारी ठहरा दिया जाता है। यह प्रथा उन स्थानों पर भी पाई जाती है जहाँ ग्राम संस्था इतनी शक्तिशाली थी कि व्यक्तिगत रूप से सरकार और जमीन के मालिकों का

कोई भी सम्बन्ध न था और ग्राम सस्था सभी हिस्सेदारो का प्रतिनिधित्व करती थी। ऐसी स्थिति मे जब अङ्गरेजो ने इस प्रकार के गावो मे मालगुजारी प्रथा का न्या सगठन किया तब उन्होंने सब हिस्सेदारो से सामूहिक रूप से इकरारनामा किया और हिस्सेदारो को सामूहिक रूप से तथा व्यक्तिगत रूप से सरकार को मालगुजारी देने के लिये जिम्मेदार वना दिया। उन हिस्सेदारो मे से सरकार एक को नम्बरदार नियुक्त कर देती है। यह नम्बरदार सब हिस्सेदारो से मालगुजारी वसूल करके सरकारी खजाने मे जमा कर देता है। इस प्रकार यह प्रथा भी जमीदारी प्रथा के समान ही है। अन्तर केवल इतना है कि जमीदारी प्रदेशो मे केवल एक आदमी सरकारी मालगुरी देने का जिम्मेदार होता है। परन्तु महालवारी मे कई आदमियो के ऊपर यह भार होता है।

यह प्रथा उत्तर प्रदेश (बनारस और अवध को छोड़कर) पजाब और मध्य प्रदेश मे पाई जाती है। इस प्रथा मे सारी भूमि की पैमायश करके उसको जोतो मे बाँट दिया जाता है और सरकार लगान का लगभग आधा भाग मालगुजारी के रूप मे लेती है।

(४) माल गुजारी—

मालगुजारी का यह ढङ्ग मध्य प्रदेश मे पाया जाता है। इसमे मालगुजारी तो इसी प्रकार निश्चित की जाती है जिस प्रकार कि उत्तर प्रदेश मे, यहाँ पर एक अन्तर है। यहाँ पर मराठो के समय मे जो लोग काश्तकार थे उन्ही को सरकार ने काश्तकार मान लिया है और उनको भूमि पर स्वामित्व का अधिकार भी दे दिया है। यहाँ पर वन्दोबस्त अफ्सर (Settlement officer) यह निश्चित करते है कि मालगुजारी सरकार को कितनी मालगुजारी देगा तथा वह काश्तकारो से कितना लगान लेगा। यह इसलिये किया जाता है जिससे कि मालगुजारी काश्तकारो को न लूट सके।

महालवारी तथा मालगुजारी प्रथाओं के गुण व दोष—ये दोनो प्रथायें जमीदारी प्रथा के समान ही हैं। इनमे जो लोग भूमि के स्वामी होते है वे स्वय खेती नही करते वरन् वे किसानो को भूमि लगान पर उठा देते हैं और वे उसी प्रकार किसानो को सताते हैं जैसे जमीदार लोग उनको सताते हैं। श्री रमेशदत्त ने अपनी पुस्तक "भारत का आर्थिक इतिहास" मे लिखा है कि श्री चिशेल्म जो अपने समय के सबसे योग्य वन्दोबस्त अफसरो मे से एक था कहा है कि मैं नही जानता कि यह भूमि सम्बन्धी कौन सा अधिकार है जिसको कि मालगुजारी अथवा उसके साझीदार काम मे नही लाते सिवाय इसके कि वे भूमि को बेच नही सकते और न उसको रहन रख सकते। वह अपने गाँव को हस्तान्तर नही कर सकता क्योकि दशी सरकार ने अपनी सकुचित दृष्टि के कारण उसका यह अधिकार स्वीकार नहीं किया परन्तु जब भूमि उसके अधिकार मे होती थी तो उसको आन्तरिक व्यवस्था पर पूर्ण अधिकार था। वह काश्तकारो को बसा सकता था उनको निकाल सकता

था, उनका लगान बढा सकता था, भूमि पर बाग लगा सकता था, तालाब बना सकता था। इस प्रकार वह गाँव के प्रशासन मे वही अधिकार रखता था जो कि दूसरे स्थानो पर मालिकों का होने थे जिनका भूमि मे निर्विवाद अधिकार स्वीकार कर लिया गया था परन्तु इन प्रदेशो मे बन्दोबस्त ३०-४० वर्षो मे बदला जाता है और उस समय सरकार मालगुजारी घटा बढा सकती है। इस प्रकार स्थायी उन्नति का कुछ लाभ सरकार को सरकार को भी मिल जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारत मे भूमि अधिकार की चाहे जो भी पद्धति पाई जाती हो उसी मे किसानो का शोषण किया जाता है।

Q 31 Give merits and demerits of the Permanenl and Temporary Settlement

प्रश्न ३१—स्थायी तथा अस्थायी बन्दोबस्त के लाभ व हानिया बनाइये।

बन्दोबस्त का अर्थ— बन्दोबस्त द्वारा राज्य भूमि की मालगुजारी निश्चित करता है। इसके अन्तर्गत तीन बातें होती हैं (१) भूमि की उत्पत्ति म राज्य का भाग निश्चित किया जाता है। (२) राज्य को जो व्यक्ति या व्यक्तियो का समूह मालगुजारी देगा उसको निश्चित कर दिया जाता है। (३) यह भी निश्चित किया जाता है कि जिन व्यक्तियो को भूमि दी गई है उनके उसमे क्या अधिकार होगे।

बन्दोबस्त दो प्रकार का हो सकता है—

(१) स्थायी (२) अस्थायी।

(१) स्थायी बन्दोबस्त (Permanent Settlement)—

यह सबसे पहले बगाल मे १७९३ ई० म चालू किया गया। इसके अनुसार जमीदारी की मालगुजारी सदा के लिय निश्चित हो गई है। जमीदारी जितना लगान काश्तकार म लेता है उसका १०/११ भाग सरकार को देता है और १ ११ अपन परिश्रम के रूप मे रख लता है। मालगुजारी मे सरकार ने कोई वृद्धि नही की। इस कारण यद्यपि आजकल बगाल के जमीदार अपने काश्कारो से १६½ करोड रुपया प्रतिवर्ष वसूल कर रहे हैं तथापि वह सरकार को मालगुजारी के रूप म ४ करोड रुपया ही दते हैं। जब तक सरकार का लगान मिलता रहता है उस समय तक जमीदार को किसी प्रकार का कोई डर नही रहता पर यदि किसी वर्ष जमीदार मालगुजारी न दे सके, चाहे उस वर्ष अकाल ही पडा हो तो उसकी भूमि नीलाम करके उससे मालगुजारी वसूल कर ली जाती है। यद्यपि सरकार लगान नही बढाती तो भी सरकार को यह अधिकार है कि वह कृषकों के हितो की रक्षा करने के लिय कोई भी कानून चालू कर सकती है।

स्थायी बन्दोबस्त के उद्देश्य—स्थायी बन्दोबस्त निम्नलिखित उद्देश्य से इस देश मे चालू किया गया था—

(१) इसके द्वारा सरकार को एक निश्चित धन राशि हर वर्ष प्राप्त हो जायगी।

(२) इससे जमीदार वर्ग सदा ही सरकार का स्वामी भक्त रहेगा और इसके द्वारा राज्य की जडे इस देश मे मजबूती के साथ जम जायगी।

(३) इसके द्वारा जमीदार वर्ग उत्पन्न हो जायगा। यह वर्ग निश्चित होगा पर इसके पास कुछ अधिक कार्य करने को न होगा। इस कारण यह वर्ग समाज का राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्रो मे मार्ग दर्शन कर सकेगा।

(४) जमीदार अपने काश्तकारो को आवश्यकता पडने पर धन से सहायता पहुचावेगा तथा भूमि की उन्नति मे सहायक होगा।

स्थायी बन्दोबस्त के लाभ—विलियम म्योर, उत्तर पश्चिम प्रान्त के लेफ्टी-नेन्ट गवर्नर तथा भारत के वित्त मन्त्री ने स्थायी बन्दोबस्त के लाभ को ६ श्रेणियो मे बाँटा है—

(१) समय-समय पर बन्दोबस्त बदलने का खर्च कम हो जायेगा।

(२) बन्दोबस्त बदलने के झगडो से जनता मुक्त हो जायगी।

(३) अस्थायी बन्दोबस्त मे बन्दोबस्त बदलने के कुछ समय पूर्व से जो भूमि की उपजाऊ शक्ति मे ह्रास होता है वह स्थायी बन्दोबस्त मे नही होता।

(४) स्थायी बन्दोबस्त के कारण लोगो को भूमि पर स्थायी उन्नति करने का प्रोत्साहन मिलता है और इसके कारण खुशहाली बढेगी।

(५) भूमि का मूल्य बहुत अधिक बढ जावेगा।

(६) लोगो मे सतोष रहेगा।

सर जान लारेन्स भारत मन्त्री की कौंसिल के एक सदस्य ने स्थायी बन्दोबस्त से लाभ बताते हुए कहा, "मै स्थायी बन्दोबस्त का समर्थन इसलिये करता हू। क्योकि मेरा यह विश्वास है कि चाहे देश ने हाल ही मे कितनी उन्नति कर ली हो इसके साधन इससे भी अधिक तेजी से बढेगे यदि सरकारी माग को कम कर दिया गया। इस कार्य के द्वारा भूमि मे रुपया लगाने को और भी प्रोत्साहन मिलेगा और माल-गुजारी मे इससे भी अधिक स्थायीपन आ जायेगा। इसके द्वारा एक शक्तिशाली मध्य वर्ग का निर्माण होगा। जाति और धर्म की भावनाओ का भारत के लोगो पर बडा प्रभाव है परन्तु उनको भूमि से और भी अधिक प्रेम है। उत्तरी भारत के हजारो कदाचित लाखो व्यक्ति जो कि भारत की सब जातियो मे सबसे अधिक लडाकू हैं, ऐसे लोगो की सतान हैं जिन्होंने अपनी भूमि की रक्षा के लिये अपने धर्म को भी छोड दिया।"

दोष—कम्पनी को आशा थी कि उपर्युक्त उद्देश्य जमीदार उसी प्रकार पूरा कर सकेंगे जिस प्रकार कि वे इङ्गलैंड मे पूरा कर रहे थे। परन्तु ऐसा नही हुआ।

इस देश मे जमीदारी तटस्थ जमीदार (Absentee landlord) बन गये। उन्होने कभी अपने काश्तकारो की धन से सहायता नही की और न उन्होने कभी भूमि की उन्नति मे कोई सहायता पहुंचाई। उल्टे वे भूमि की उन्नति मे बाधक हो गये। वे मनचाहा लगान किसान से वसूल करते हैं। उनसे बेगार तथा नजराना लेते हैं। समय समय पर वे बहुत सा धन अबवाब के रूप म भी लेते हैं। यदि बेचारा किसान न दे तो उसको भूमि से निकाल बाहर करते है। वे स्वयं कभी भी काश्तकार से नही मिलते वरन् वे गुमास्ते रखते हैं जो काश्तकारों को हर प्रकार से सताते रहते है। इस प्रकार इस देश म स्थायी बन्दोबस्त करने से कोई लाभ नही हुआ, उल्टे हानि ही हुई। किसान और सरकार का सीधा सम्बन्ध न होने के कारण किसान की आर्थिक स्थिति दिन प्रति दिन बिगडती चली गई। साथ ही साथ सरकार को भी बहुत आर्थिक हानि हुई क्योकि आजकल जमीदार लोग बगाल मे काश्तकारो से ले तो रहे हैं १६३ करोड रुपये प्रति वर्ष और सरकार को दे रहे हैं केवल ४ करोड। इस प्रकार जमीदारो की जेब म केवल बगाल से १२३ करोड रुपये चले जाते है। यदि यह सब रुपये सरकार को मिलते तो उसको बिक्री कर आदि न लगाने पडते, और वह अधिक रुपया शिक्षा, कृषि, सडक आदि पर व्यय कर सकती। इसी कारण बगाल के फ्लाउड कमीशन ने बन्दोबस्त को शीघ्रातिशीघ्र समाप्त करने की सिफारिश की है।

(२) अस्थायी बन्दोबस्त (Temporary Settlement)—

भारत म मालगुजारी का दूसरा ढङ्ग अस्थायी बन्दोबस्त है। इसके अन्तगत जमीदार के ऊपर मालगुजारी स्थायी बन्दोबस्त के समान सदा के लिये निश्चित नही की जाती वरन् वह एक निश्चित समय के लिये तय की जाती है। इस निश्चित समय के पश्चात् बन्दोबस्त बदला जाता है। उस समय फिर यह तय किया जाता है कि सरकार को कितनी मालगुजारी चाहिये तथा उसको कौन देगा। बन्दोबस्त बदलते समय बहुधा मालगुजारी बढाई ही जाती है घटाई नही जाती। भूमि के मालिक भी बहुधा नहीं बदले जाते बल्कि वही रहते है। बन्दोबस्त बदलने का समय मध्य प्रदेश मे २० से ३० वर्ष, मद्रास मे ३० वर्ष और उत्तर प्रदेश मे ४० वर्ष है। इस ढङ्ग के अन्तगत मालगुजारी तय करने मे तीन बात करनी पडती है। पहले तो सारे गांव का नक्शा, मालगुजारी का लेखा तथा अधिकारो का लेखा तैयार करना पडता है। सारे गाव की भूमि की नाप तोल की जाती है और उसकी डौलबन्दी कर दी जाती है। इसके पश्चात् यह देखा जाता है कि मिट्टी किस प्रकार की है। इसी के साथ साथ यह बात भी निश्चित कर दी जाती है कि मालगुजारी कौन जमा करेगा। इस लेखे मे आवश्यकतानुसार बदल कर दी जाती है ताकि वह बिल्कुल ठीक रहे। इसके पश्चात् दूसरी बात मालगुजारी के धन का निश्चित करना है। तीसरे, यह भी निश्चित किया जाता है कि मालगुजारी कहाँ और किस प्रकार जमा की जायेगी।

अस्थायी बन्दोबस्त के लाभ—अस्थायी बन्दोबस्त के निम्नलिखित लाभ कहे जा सकते हैं—

(१) इस प्रकार के बन्दोबस्त में सरकार को भविष्य में होने वाली स्थायी उन्नति के लाभ का एक अंश प्राप्त हो जाता है।

(२) इस बन्दोबस्त में सरकार को किसान के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का अवसर प्राप्त हो जाता है और इस प्रकार वह उसकी बहुत सी शिकायतों को दूर कर सकती है।

(३) इस प्रकार के बन्दोबस्त में फसल के नष्ट होने पर मालगुजारी में छूट कर दी जाती है। इस छूट का लाभ जमींदार व किसान दोनों को पहुंचता है।

दोष—परन्तु इस प्रकार के बन्दोबस्त में निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं—

(१) जब बन्दोबस्त बदला जाता है तो गाँव का आर्थिक जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है।

(२) बन्दोबस्त के अस्थायी होने के कारण भूमि का अधिकारी भूमि पर स्थायी उन्नति नहीं करता क्योंकि उसको इस बात का विश्वास नहीं होता कि भविष्य में भी वह भूमि उसी के पास रहेगी।

(३) बन्दोबस्त होने के कुछ वर्ष पूर्व से ही भूमि पर किसी प्रकार की उन्नति नहीं की जाती जिससे कि लगान न बढा दिया जाय।

(४) बन्दोबस्त के समय अफसर लोग पक्षपात से काम लेते हैं तथा किसानों को सताते हैं।

(५) बन्दोबस्त के समय भूमि उसी आदमी को दी जाती है, जो सबसे अधिक बोली बोलता है। इस प्रकार बहुधा भूमि निकम्मे आदमियों के हाथों में चली जाती है।

Q 32 "Tenancy legislation in all the provinces where it has been enacted has generally aimed at granting the benefits of three F's to tenants" Explain these F's and illustrate with reference to recent tenancy legislation in the U P or in any other province in India, how the benefits of these F s have been conferred on the tenants ?

प्रश्न ३२—"उन सब प्रान्तों में जहां कहीं भी लगान सम्बन्धी कानून पास हुये हैं उनका उद्देश्य किसानों को तीन 'एफ' का लाभ पहुँचाने का रहा है।" इन तीनों एफों का विवरण करो और उत्तर प्रदेश अथवा भारतवर्ष के और किसी प्रांत में हाल ही में पास हुए कानून की सहायता से यह बताइये कि काश्तकारों को किस प्रकार से इन तीनों एफों का लाभ प्रदान किया गया है।

जिस समय तक कृषक स्वयं भूमि का स्वामी होता है उस समय तक लगान की कोई समस्या नहीं होती परन्तु जब भूमि का स्वामी तथा उसका जोतने वाला

एक ही व्यक्ति नही होता तब बहुत सी समस्यायें आकर उपस्थित हो जाती है। भूमि किसान को कितने समय के लिए दी जाती है, जमीदार किसान से क्या लगान लेता है, वह किसान के साथ कैसा व्यवहार करता है, आदि बाते भूमि की उपज तथा किसान की आर्थिक स्थिति पर बहुत बडा प्रभाव डालती है। इस कारण सभी देशो मे लगान सम्बन्धी कानून पास किये गए है जिससे जमीदार किसान के साथ बुरा बर्ताव न कर सकें।

लगान के कानूनो का उद्देश्य किसान को तीन एफो (Three F's) का लाभ देना होता है। ये तीन एफ Fixity of Tenure (निश्चित शर्तो व अधिकारो के अन्तर्गत जोतने के लिए भूमि देना), Fair Rents (उचित लगान) तथा Freedom of Transfer (हस्तातर करने की स्वतन्त्रता) होते है। जब तक कृषक का उपर्युक्त सुविधाये प्राप्त नही होगी तब तक किसान भूमि की उन्नति मे कोई दिलचस्पी नही लेगा। इस कारण किसी अच्छी लगान पद्धति मे यही तीनो बाते होनी चाहियें। अब हम इनका सक्षिप्त वर्णन करेगे।

Fixity of Tenure—किसान जिस भूमि को जोत बो रहा है उसके ऊपर उसका पूर्ण अधिकार होना चाहिए। उसको पूर्ण विश्वास होना चाहिए कि उस भूमि मे से उसको कोई बाहर नही निकालेगा। यदि उसको यह विश्वास नही होगा तो वह भूमि की उन्नति के लिए कुछ भी न करेगा। जब तक हमारे देश मे किसान भूमि को राजा से लेते थे और उसी को लगान देते थे उस समय तक हमारे देश की भूमि मे इतना अन्न उत्पन्न होता था कि यह विदेशो को भी गल्ला खिला सकती थी। परन्तु मुगलकाल के पश्चात् जब भारत पर अङ्गरेजों का आधिपत्य हुआ और उन्होंने यहा पर जमीदार वर्ग उत्पन्न किया तो किसान का यह विश्वास जाता रहा। बहुत समय तक जमीदार लोग किसान को भूमि पर से जब चाहते हटा देते थे। इस कारण किसानो ने भूमि मे दिलचस्पी लेनी छोड दी और देश की भूमि की उपजाऊ शक्ति दिन प्रति दिन नष्ट होती चली गई। अन्त मे सरकार को इसम हस्तक्षेप करना पडा और सबसे पहले बङ्गाल मे १८५६ ई० मे एक कानून पास हुआ जिसके कारण बारह वर्ष लगातार भूमि जोतने वाले को भूमि मे मौरूसी हक (Occupancy right) प्राप्त हो जाते थे। जिस किसान को मौरूसी हक प्राप्त हो जाता था उसको जमीदार भूमि से उसके जीवनकाल मे बाहर नही निकाल सकता था। परन्तु हुआ क्या ? जमीदार ने किसान को मौरूसी हक प्राप्त करने का अवसर ही नही दिया। वह बारह वर्ष पूरे होने से पहले ही किसान से यह भूमि छुडवा लेता था और उसको दूसरी भूमि दे देता था। इस कारण इस कानून को बङ्गाल मे १८८५ ई० मे बदल दिया गया। नये कानून मे यह रक्खा गया कि जो किसान एक गाव की किसी भी भूमि को लगातार बारह वर्ष तक जोतना रहेगा उसको उस पर मौरूसी हक प्राप्त हो जायेगा। आगरा मे भी १९०१ ई० मे एक ऐसा कानून पास किया गया जिससे कि जमीदार लोग पहले कानून को न तोड सके।

इसी प्रकार का एक कानून अवध मे भी १८८६ ई० मे पास हुआ। इस कानून के अनुसार उन किसानो को मौरूसी हक दिया गया जो पहले भूमि के स्वामी थे परन्तु जिनके अधिकार से भूमि चली गई थी। इसके अतिरिक्त कुछ कानूनी काश्तकार भी बनाये गए जिनको सात वर्ष तक भूमि से नही निकाला जा सकता था और न ही उनका लगान बढाया जा सकता था। परन्तु इस कानून से किसानो की स्थिति मे विशेष बदल न हुई। सात वर्ष समाप्त होने पर जमीदार किसान से भूमि भी छुडवा लेते थे और उनका लगान भी बढा देते थे। इस कारण १६२१ ई० मे अवध मे एक दूसरा कानून पास किया गया जिससे कि कानूनी काश्तकारो को मौरूसी काश्तकार बना लिया गया। इन काश्तकारो का लगान ५ या १० वर्षो मे बढाया जा सकता था।

अवध के अतिरिक्त आगरा प्रान्त मे भी १६०१ ई० मे एक कानून पास किया गया जिसके अनुसार १२ वर्ष तक लगातार भूमि जोतने वाले को मौरूसी हक प्राप्त हो जाता था। इसमे यह भी रक्खा गया कि जो व्यक्ति १८५६ ई० वाले कानून को नही मानेगा उसको दण्ड दिया जायेगा। जब इस कानून से भी किसानो को विशेष लाभ न हुआ तो १६२६ ई० मे एक दूसरा कानून पास किया गया जिससे हर ऐच्छिक काश्तकार (Tenant-at-will) को मौरूसी हक प्राप्त हुआ। ये काश्तकार कानूनी काश्तकार (Statutory Tenants) कहलाये। इन काश्तकारो को जमीदार उनके जीवन काल मे भूमि से बाहर नही निकाल सकता था और उनकी मृत्यु के पश्चात् भी किसान के उत्तराधिकारी पाँच वर्ष तक भूमि से नही निकाले जा सकते थे। मौरूसी काश्तकार मौरूसी ही रहे। गैर मौरूसी काश्तकार (Non-occupancy tenants) अपना हक जमीदार से खरीद सकते थे। कानूनी काश्तकारो का लगान जमीदार केवल २० वर्ष के पश्चात् बढा सकता था। परन्तु इस कानून से भी सीर के किसानो को कोई लाभ नही हुआ। इस कारण १६३६ ई० मे अवध लगान कानून १६२१ ई० तथा आगरा लगान कानून सन् १६२६ ई० को मिलाकर यू० पी० लगान कानून (U P Tenancy Act) पास किया गया। इन कानून मे भी १६४७ ई० मे कुछ परिवर्तन किया गया। १६४७ ई० के पश्चात् उत्तर प्रदेश मे बेदखली बिलकुल बन्द कर दी गई।

लगान सम्बन्धी सुधारो के विषय मे योजना मे सुझाव दिया गया है कि किसान को भूमि स्वत्व की सुरक्षा (Security of tenure) होनी चाहिये। मालिक को स्वय खेती करने के लिये थोडी सी भूमि प्राप्त करने की आज्ञा देनी चाहिए। परन्तु मालिक को भूमि देते समय यह देखना चाहिए कि किसान बे जमीन न रह जाये। जिस खेती मे किसानो को स्थायी अधिकार दिये हुए है उनमे किसान को अधिकार दिया जाये कि वह मावजा देकर उस खेत का स्वामित्व प्राप्त कर ले। योजना मे यह भी कहा गया है कि यदि किसान स्वय इच्छा से भी अपने खेत को छोडना चाहे तो भी इसको मालिक के नाम मे उस समय तक रजिस्टर न किया

जाए जब तक कि यह निर्णय न कर लिया जाए कि किसान वास्तव म भूमि को स्वय इच्छा से छोड रहा है और उस पर स्वामी का कोई दबाव नही है। इसके अतिरिक्त मालिक के नाम मे केवल उतनी भूमि ही रजिस्टर करनी चाहिय जितनी पर वह स्वय खेती करेगा। उससे अधिक भूमि पर मालिक का अधिकार न होकर सरकार का अधिकार होना चाहिये। इस प्रकार धीरे धीरे हमारे किसानो को लगान के स्वामित्व का लाभ प्राप्त हो गया है। अब उत्तर प्रदेश मे सरकार और किसानों का सीधा सम्बन्ध हो गया है। सरकार जमीदारो को मावजा देकर उनकी भूमि प्राप्त करेगी।

Fair Rent—एक आदश लगान पद्धति मे दूसरी बात यह होनी चाहिय कि काश्तकार से उचित लगान लिया जाये। यदि काश्तकार से अधिक लगान लिया जायगा तो उसके पास बहुत कम धन बचेगा। इस धन से न तो वह अपना तथा अपने परिवार का जीवन निर्वाह ही कर सकता है और न वह खेती की उन्नति ही कर सकता है।

हमारे देश मे जब तक जमीदारो के ऊपर कोई कानूनी पाबन्दी न थी तब तक वे काश्तकारो से बहुत अधिक लगान लेते थे। यदि वे अधिक लगान देन से इन्कार करते थे तो उनका भूमि से निकाल दिया जाता था। जमीदार लोग अधिक लगान लेने से सन्तुष्ट नही होते थे वरन् वे काश्तकारो को हर प्रकार से सताते थे। वे उनसे बगार लेत थे। उनसे शादी विवाह के अवसर पर नजराना लेने थ। जब बाप की मृत्यु के पश्चात् भूमि लडके को दी जाती थी तब भी उससे नजराना लिया जाता था। यदि जमीदार हाथी रखता था तो काश्तकारो से हथियाना लिया जाता था। डा० राधा कमल मुकर्जी ने बताया है कि उडीसा मे काश्तकारो पर ७२ भिन्न-भिन्न कर लगे हुये थे जिनम बाल काटने तक का कर भी सम्मिलित था। ऐसी दशा म यदि काश्तकारो की स्थिति खराब हो तो कोई अचम्भा नही।

काश्तकारो को अधिक लगान से बचाने के लिये देश के भिन्न-भिन्न राज्यो मे कानून पास किये गये। उदाहरण के लिये अवध प्रान्त मे १६२१ ई० मे जो कानून पास किया गया उसके अनुसार कानूनी काश्तकारो का लगान १० वष से पहले नही बढाया जा सकता था। इसी प्रकार १६२६ ई० के कानून के अनुसार कानूनी काश्तकारो का लगान २० वर्ष से पूव नही बढाया जा सकता था। परन्तु इस कानून से नजराने का लेना बन्द नही हुआ। इस कारण १६३६ ई० के कानून म यह प्रबन्ध किया गया कि जो कोई भी जमीदार काश्तकार से नजराना लेगा उसको दण्ड दिया जाएगा। इस कानून के अनुसार किसी काश्तकार का लगान २० वष से पहले नही बढाया जा सकता। इस समय के पश्चात् भी यदि लगान बढाया जाएगा तो वह तभी बढ़ाया जा सकता था जबकि जमीदार ने भूमि पर कुछ उन्नति की हो तथा फसल का मूल्य बढ गया हो। योजना मे कहा गया है कि किसानो द्वारा दिया गया लगान कुल उपज के $\frac{1}{4}/\frac{1}{5}$ से अधिक नही होना चाहिये।

Freedom of Transfer—आदर्श लगान के ढङ्ग मे तीसरी बात यह होनी चाहिये कि काश्तकार को अपनी भूमि हस्तान्तर (Transfer) करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिये। यदि काश्तकार को भूमि हस्तान्तर करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होगी तो उसकी साख (Credit) बढ जायगी और अपनी भूमि को बन्धक करके आवश्यकता पडने पर ऋण ले सकेगा। इस ऋण के द्वारा वह भूमि पर हर प्रकार की उन्नति कर सकता है।

हमारे देश मे अधिकतर भाग मे जमीदारी प्रथा थी। जिसमे भूमि का स्वामी जमीदार होता था। इस कारण काश्तकार को यह अधिकार नही था कि वह भूमि को हस्तान्तर कर सके। जिन भागो मे रैयतवाडी प्रथा थी वहाँ पर भी अधिकतर काश्तकार ही भूमि को जोतते थे। इन काश्तकारो को भी भूमि हस्तान्तर करने का कोई अधिकार नही होता था। इस प्रकार देश के प्राय सारे राज्यो मे काश्तकार को भूमि हस्तान्तर करने का कोई अधिकार नही होता था। अब उत्तर प्रदेश मे जबकि जमीदारी समाप्त हो गई है और काश्कारो को भूमिधर के अधिकार प्राप्त हो गये हैं तो काश्तकारो को अब भूमि हस्तान्तर करने का अधिकार प्राप्त हो गया है। पर सीरदार तथा दूसरी प्रकार के काश्तकारो को यह अधिकार अब भी प्राप्त नही है।

योजनाओं के अन्तर्गत भूमि-सुधार

प्रथम पञ्चवर्षीय योजना के भूमि सुधार के विषय मे निम्नलिखित सुझाव थे—(१) लगान मे कमी, (२) भूमि-स्वत्व की निश्चतता, (२) किसानो को अपनी भूमि खरीदने का अधिकार देना। इस ओर अभी तक जो प्रयत्न किया गया है वह इस प्रकार है—

आन्ध्र प्रदेश

पहले के आंध्र क्षेत्र मे उन किसानो को जो १ जून १९५६ ई० को भूमि पर अधिकार रखते थे चार वर्ष का कम से कम समय दिया गया है और जो उसके पश्चात् दाखिल किये गये है उनको छ वर्ष का कम से कम समय दिया गया है। सरकारी साधनो द्वारा सीचे गये क्षत्रो का लगान कुल उपज का ५० प्रतिशत, सूखी भूमि मे ४५ प्रतिशत तथा बेलिग द्वारा सीचे गये भागो मे २८⅓ प्रतिशत से अधिक नही होगा।

आसाम

यदि कोई जमीदार स्वय खेती करना चाहे तो वह अधिक से अधिक ३३⅓ एकड भूमि प्राप्त कर सकता है। साझेदारी मे लगान ¼। (जहाँ जमीदार जोतने का खर्च बर्दाश्त करता है) से ½ तक हो सकेगा। स्थायी बन्दोबस्त वाले क्षेत्रो मे किसान से उस रकम से १०० प्रतिशत से अधिक नही लिया जा सकता जितना कि जमीदार मालगुजारी देता है। अस्थायी बन्दोबस्त मे ५० प्रतिशत से अधिक नही लिया जा सकता।

बिहार

मौरूसी अधिकार १२ साल के लगातर अधिकार से प्राप्त किया जा सकता है। नकद लगान rental value के ५० प्रतिशत से अधिक नही हो सकता, यदि भूमि रजिस्टर्ड पट्टे के आधीन हो तथा दूसरी हालतो मे २५ प्रतिशत से अधिक नही हो सकता। वैसे लगान कुल उपज के १/२० से अधिक नही हो सकना।

बम्बई

पहले बम्बई राज्य मे एक जमीदार ५० प्रतिशत भूमि पर उस समय अधिकार प्राप्त कर सकता है जब कि उसकी खुद काश्त की भूमि तीन आर्थिक जोतो (१२ से ४८ एकड) से कम होगी। दूसरे क्षेत्रो मे भूमि पर किसान का अधिकार माना जायगा जब तक कि जमीदार के पास एक आर्थिक जोत (३ से १२ एकड) से कम भूमि न हो। अधिकतम लगान कुल उपज का १/६ अथवा मालगुजारी के पाँच गुने इन दोनो मे जो कम हो से अधिक नही हो सकना।

जम्मू तथा काश्मीर

काश्मीर क्षेत्र मे भूमि को खुदकाश्त के लिये तर भागो मे २ एकड तक तथा सूखे भागों मे ४ एकड तक प्राप्त किया जा सकता है। जम्मू मे यह सीमा ४ तथा ६ एकड है। १२१/२ एकड से अधिक भूमि रखने वाले किसानो का लगान नम भागो मे कुल उपज का १/४ तथा सूखे भागो मे १/३ से अधिक नही हो सकता।

केरल

इस राज्य मे किसानो को भूमि से नही निकाला जा सकता तथा जमीदार को भूमि प्राप्त करने का कोई अधिकार नही है।

मध्य प्रदेश

इस राज्य मे किसानो को पाँच वर्ष मे तीन वर्ष भूमि जोतने पर मौरूसी अधिकार प्राप्त हो जाते है। पहले विन्ध्य प्रदेश मे किसानो को ७ वर्ष की सुरक्षा प्रदान की गई है। मध्यभारत तथा भोपाल क्षेत्रो मे किसानो को भूमि से नही निकाला जा सकता।

मद्रास

इस राज्य मे किसानो की बेदखली कुछ समय के लिये रोक दी गई है। कुछ हालतो मे जमीदारो को भूमि प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है। लगान सीचे हुये भागो मे कुल उपज के ४० प्रतिशत से तथा अन्य हालतो मे ३३१/३ प्रतिशत से अधिक नही हो सकता।

उडीसा

किसानो को ३० जून १९५९ तक बेदखल नही किया जा सकता। अधिकतम लगान कुल उपज के १/४ से अधिक नही हो सकता।

पंजाब

इस राज्य मे भी किसानो को लगान सम्बन्धी सुरक्षा प्रदान की गई है। लगान कुल उपज के १/३ से अधिक नही हो सकता।

राजस्थान

किसान इतनी भूमि रख सकता है जो उसको १२०० रु० वार्षिक की वास्तविक आय प्रदान करती रहे। लगान कुल उपज के १/६ से अधिक नही हो सकता।

उत्तर प्रदेश

सब किसानो का सरकार से सीधा सम्बन्ध हो गया है।

पश्चिमी बगाल

यहाँ भी जमीदारो को समाप्त करके किसानो को सरकार के सम्बन्ध मे लाया गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश मे समय-समय पर कानून द्वारा काश्तकार को 'तीन एफ' का लाभ पहुचाने का प्रयत्न किया गया है। इसके कारण आज देश के काश्तकार न तो भूमि से निकाले जा सकते हैं और न उन पर लगान ही बढाया जा सकता है। बहुत स्थानो पर वे भूमि के स्वामी बन गये हैं।

Q 33 Discuss the problem of the abolition of zamindari in India What compensation, if any, should be paid to the zamindar, and how ? What system should replace zamindari ?

प्रश्न ३३—भारतवर्ष मे जमींदारी उन्मूलन की समस्या का वर्णन कीजिये। जमींदार को क्या और किस प्रकार क्षतिपूर्ति के रूप मे मिलना चाहिये ? जमींदारी प्रथा के पश्चात् भूमि का क्या बन्दोबस्त होना चाहिये ?

उत्तर—भारतवर्ष मे जमीदारी प्रथा का श्रीगणेश अ ग्रेजी शासन से हुआ। उससे पहले भी इस देश मे कुछ जमीदार थे पर वे भूमि के स्वामी न थे। उनका कार्य केवल लगान वसूल करना था। पर अ ग्रजो ने इस देश मे ऐसे जमीदार उत्पन्न किये जो न केवल लगान वसूल करत थे वरन् भूमि के स्वामी भी थे। इससे पूर्व इस देश मे भूमि का स्वामी बहुधा राजा ही होता था।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इस देश मे जमीदारी प्रथा की नीव दो कारणो से डाली। पहला कारण तो यह था कि वह अपने हिस्सेदारो को निश्चित धन लाभ राशि के रूप मे हर वर्ष देना चाहती थी। दूसरा यह कि जिन प्रदेशो पर कम्पनी ने विजय पाई थी उनमे एक ऐसा वर्ग उत्पन्न करना चाहती थी जो सदा ही राज्य का हितैषी बना रहे। इन बातो के अतिरिक्त अग्रजो का यह भी विश्वास था कि वेकवैल, वेट्स तथा टरनिप टाउनशेन्ड के समान जमीदार लोग अपनी-अपनी भूमि पर ही रहेंगे और वहाँ रहकर वह खेती की उन्नति के लिये हर प्रकार का प्रयत्न करेंगे। वे यह समझते थे कि जमीदार अपने काश्तकारो की धन तथा बुद्धि से भी सहायता करेंगे।

पर यह सब नही हुआ। जमीदार लोगों ने अधिक्तर अपनी भूमि से बहुत दूर शहरो मे रहना पसन्द किया। भूमि की देखभाल करने के लिये गुमाश्ते अथवा मुन्शी लोग नियुक्त किये गये। ये मुन्शी लोग ही काश्तकारो के सम्पर्क मे आते थे जमींदार का लगान वसूल करके उसको दे देते थे। पर वे लोग काश्तकारों से बहुत बुरा बर्ताव करते थे उनसे घूस के रूप मे बहुत सा धन वसूल करते थे। उनको जमीदार से झूठी शिकायत करके उनको भूमि से निकलवा देते थे। उनमे लगान भी सख्ती से वसूल करते थे। काश्तकार को यह सब सहन करना पडता था क्योंकि वे जमीदार के पास जाकर ये सब बातें नही कह सकते थे।

मुन्शी अथवा गुमाश्तो के बुरे बर्ताव के अतिरिक्त जमींदार लोग भी अपने काश्तकारों से कोई प्रेम नही रखते थे। उनसे अधिक से अधिक लगान लेते थे। वे इसी से ही सन्तुष्ट न थे वरन् वे उनसे समय-समय पर नजराने के रूप मे बहुत सा धन वसूल करते थे। काश्तकारो को केवल नजराना ही नही देना पडता था वरन् उनके ऊपर कई प्रकार के कर लगे हुये थे। ये कर बहुत प्रकार के थे। डा० राधा कमल मुकर्जी के मतानुसार उडीसा प्रान्त मे इस प्रकार के ७२ कर काश्तकारो पर लगे हुये थे। इन करो मे हथियाना तथा जमीदार के बाल कटवाने तक का शामिल था।

इन सब करो तथा ऊंचे लगान के कारण काश्तकार लोगों की आर्थिक स्थिति बहुत बुरी थी। उनके पास अपने बच्चो के पालन-पोषण के लिये भी पर्याप्त मात्रा मे धन नही बचता था। पर फिर भी वे इसी व्यवसाय को करते थे क्योंकि देश मे उनके करने के लिये दूसरा कोई व्यवसाय नही था। अपनी निर्धनता के कारण काश्तकार लोग भूमि की उन्नति के लिये कुछ भी न कर सकते थे और जमीदार लोगो को सिवाय अपने लगान के भूमि मे कोई रुचि नही थी इसी कारण भूमि की स्थिति दिनो-दिन बिगडती चली गई और आजकल यह स्थिति आ गई है कि हमारी भूमि विदेशो की भूमि की अपेक्षा बहुत ही कम उत्पन्न कर सकती है।

जमीदारी प्रथा के कारण देश मे भूमि का बटवारा भी ठीक नही रहा। उत्तर प्रदेश मे लगभग ½ या एक प्रतिशत जमीदारो के पास राज्य की ५० प्रतिशत भूमि है। बम्बई राज्य मे ५० प्रतिशत छोटे-छोटे काश्तकारो के पास केवल १० प्रतिशत भूमि है जबकि १०६३ प्रतिशत बडे-बडे जमीदारो के पास कुल भूमि का ५० प्रतिशत भाग है। यही अवस्था दूसरे राज्यो मे भी है। इस प्रकार हमारे देश मे ७% भूमि उन लोगो के अधिकार मे है जो भूमि पर स्वय खेती नही करते। इस प्रकार इस देश मे भूमि रहित मजदूरो (Landless labourers) की सख्या दिनो दिन बढती जा रही है। १८७२ ई० के गणना कमीशन (Census Commission) के अनुसार इस देश मे एक भी भूमि रहित मजदूर नही था, पर १८८२ ई० मे इनकी सख्या ७० लाख हो गई। १६३१ ई० मे भूमि रहित मजदूर दो करोड से भी अधिक थे और आजकल इनकी सख्या ५ करोड के लगभग है। इन मजदूरो

को बहुत ही कम वेतन मिलता है। इन मजदूरों की स्थिति दास जैसी है यह सब जमीदारी प्रथा के कारण ही हुआ। अब हमारे देश मे दो वर्गो के लोग हैं—एक शोषण करने वाले (Those who exploit) और दूसरे शोषित (exploited)। इन दोनो वर्गों मे अभी तक शोषण करने वाला वर्ग ही बलशाली है। पर अब जमीदारी को प्राय सभी राज्यो मे समाप्त कर दिया गया है।

जमीदारी प्रथा के कारण राज्य कोष को भी बहुत हानि हुई। १७९३ ई० मे जबकि बङ्गाल मे स्थायी बन्दोबस्त प्रारम्भ किया गया उस समय बङ्गाल सरकार को मालगुजारी के रूप मे २,८५,८७,७७२ रु० मिलता था। उस समय जमीदार लोग काश्तकारो से ३½ या ४ करोड रुपया लगान के रूप मे लेते थे। १९०९ ई० मे इस प्रान्त मे केवल ४ करोड रुपया मालगुजारी के रूप मे जमा किया जाता था पर जमीदार काश्तकारो से १६ करोड रुपया वसूल करते थे। इस प्रकार सरकारी आय तो २८५,८७,७७२ रुपये से बढकर केवल ४ करोड रुपया हुई पर जमीदारो की आय ३ अथवा ४ करोड से बढकर १६ करोड हो गई। यदि यह प्रथा इस राज्य मे न होती तो राज्य सरकार को ही यह सब लाभ होता। यह बात बङ्गाल तक ही सीमित नही है वरन् यह उत्तर मे भी है जहाँ जमीदार लोगो की जेबो मे लगभग ९ करोड रुपया प्रतिवर्ष चला जाता है। यही स्थिति दूसरे प्रान्तो मे भी है। यदि यह सब धन सरकारी राजकोष म जाता तो आज देश की राज्य सरकारो के पास शिक्षा, स्वास्थ्य आदि मदो पर व्यय करने के लिये बहुत सा धन होता।

जमीदारी प्रथा के इन दोषो के कारण कांग्रेस सरकार ने राज्य सत्ता हाथ मे लेते ही जमीदारी उन्मूलन एक्ट पास किये। इन एक्टो के द्वारा जमीदरी प्रथा प्राय सभी राज्यो मे समाप्त होती जा रही है।

प्रथम योजना का एक महत्वपूर्ण ध्येय जमीदारी प्रथा को समाप्त करना था। इस कार्य मे बहुत कुछ प्रगति हो चुकी है। जमीदारो को समाप्त करने सम्बन्धी कानून प्राय सभी जगह पास हो चुके हैं और इस प्रकार मध्यस्थ प्राय सभी स्थानो पर समाप्त हो गये हैं। बिना जोती हुई भूमि सरकार ने अपने अधिकार मे ले ली है तथा इसको ग्राम पचायतो को सौंप दिया गया है। इस प्रकार देश की कुल बोई हुई भूमि का ४३ प्रतिशत जो पहले जमीदारो, जागीरदारो, इनामदारो के हाथो मे थी वह अब घट कर केवल ५ प्रतिशत उनके अधिकार मे रह गई है।

विभिन्न राज्यो मे इस कार्य की प्रगति इस प्रकार है—

(१) आसाम मे १८२ लाख एकड भूमि जो स्थायी बन्दोबस्त के आधीन थी उस पर जमीदारो के अधिकारो को समाप्त करने के लिये कानून पास हो चुका है। इसी प्रकार मैसूर, हिमाचल प्रदेश तथा देहली मे भी इस प्रकार के कानून पास हो चुके हैं। राजस्थान मे जागीरदारो को ४ करोड रु० लगान के रूप मे मिलते थे। उसमे से उन जागीरदारो की भूमि जिससे कि २'८९ करोड लगान प्राप्त होता था, उनसे प्राप्त की जा चुकी है। उत्तर प्रदेश मे भी जमीदारी समाप्त करने

के लिये बहुत पहले कानून पास हो चुका है। १९५६ ई० मे इस कानून के नाम पर राज्य की जमीदारी भी समाप्त कर दी गई है। अभी कुछ स्थानो पर जमीदारी को प्राप्त करने के लिये कानून पास करने शेष हैं। एक अनुदान के अनुसार इन सब प्रकार के मध्यस्थो के क्षतिपूर्ति तथा पुनर्वास अनुदान के रूप मे ६२५.२५ करोड रु० देने हैं। इसका ६७ प्रतिशत केवल उत्तर प्रदेश तथा बिहार को देना है। अभी तक सब राज्यो मे ९८.८७ करोड रु० दिया गया है।

क्षति पूर्ति की समस्या—क्षति पूर्ति देने के प्रश्न पर इस देश मे बहुत मत-भेद है। कुछ लोगो का कहना है कि जमीदारो को उनकी भूमि के बदले पूरा-पूरा बाजारी मूल्य मिलना चाहिय। इसके विपरीत कुछ लोग ऐसे हैं जो यह कहते है कि जमीदारो को कुछ भी नही मिलना चाहिये। इन लोगो का विचार है कि जमीदारो ने अपनी भूमि या तो खरीदी ही नही और यदि उन्होने खरीदी भी है तो उनको जमीदारी से इतना धन प्राप्त हो चुका है कि उनको एक पैसा भी नही मिलना चाहिये। पर ये दोनो ही विचार गलत मालूम पडते हैं। यदि सरकार जमीदारो को उनकी भूमि का पूरा बाजारी मूल्य दे तो यह उनके लिये असम्भव होगा। दूसरे, जमीदार लोग भी इतनी क्षति-पूर्ति पाने का कोई हक नही रखते। यदि सरकार जमीदारो को भूमि के बदले कुछ न दे तो यह भी ठीक न होगा क्योकि हमारे विधान की ३१ वी धारा म यह बात स्पष्ट रूप से दी हुई है कि जब सरकार कोई भी सम्पत्ति जनता से लेगी तो उसके बदले क्षति-पूर्ति देगी। यदि ऐसा है तो सरकार जमीदारो से ही भूमि बिना कुछ दिये कैसे ले सकती है क्योकि सरकार एक प्रकार की तथा दूसरे प्रकार की सम्पत्ति मे कोई भेद-भाव नही कर सकती। यह तो रही वैधानिक बात, न्याय की दृष्टि से भी जमीदारो को कुछ न कुछ मिलना ही चाहिये। यह कहना कि सब ही जमीदारो को भूमि या तो दान मे मिल गई है या छल-कपट से मिली है या पुरस्कार के रूप मे मिली है सरासर गलत है। बहुत से जमीदार ऐसे भी हैं जिन्होंने भूमि को न्याय से कमाये हुये धन से खरीदा है। ऐसी दशा मे इन जमीदारो को कुछ भी क्षति पूर्ति न देना बिल्कुल अन्याय है और यह बात भी जानना बडा कठिन है कि किस जमीदार ने किस ढङ्ग से भूमि खरीदी है। इस कारण यह बात ठीक ही जान पडती है कि जमीदारो को क्षति-पूर्ति के रूप मे कुछ न कुछ मिलना ही चाहिये।

क्षति-पूर्ति के प्रश्न पर हमारी राज्य सरकारो मे कोई मत-भेद नही है। वे सभी जमीदारो को कुछ न कुछ देना चाहती है पर उसके क्षतिपूर्ति आकने के ढङ्ग भिन्न-भिन्न हैं, उदाहरण के लिये आसाम, बिहार, उडीसा तथा मध्य प्रदेश में क्षति-पूर्ति का धन वास्तविक आय (Net Income), उत्तर प्रदेश मे वास्तविक सम्पत्ति (Net assets) तथा मद्रास मे आधारभूत वार्षिक आय (Basic annual sum) से हिसाब निश्चित किया जायगा। पर यह ध्यान रहे कि उत्तर प्रदेश मे वास्तविक सम्पत्ति उसी अर्थ मे काम मे लाई गई है जिस अर्थ मे कि दूसरे प्रदेश

मे वास्तविक आय काम मे लाई गई है। वास्तविक आय लगान मे से जमीदार के
सब खर्च जैसे मालगुजारी, कृषि आयकर भूमि के रखने के कारण जो जमीदार
को खर्च करना पड़ता है, आदि घटाकर निकाली जाती है। इस प्रकार वास्तविक
आय या वास्तविक सम्पत्ति निकालकर सरकार इस धन का कुछ गुना जमीदारो
को देगी। उत्तर प्रदेश मे क्षतिपूर्ति वास्तविक आय की आठ गुनी तथा राजस्थान
व मध्य प्रदेश के कुछ भागो मे सात गुनी है। मध्यभारत मे जमीदारी उन्मूलन
के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति आठ गुनी है तथा जागीर उन्मूलन कानून के मातहत सात गुनी
है। अन्य राज्यो म आसाम मे क्षतिपूर्ति दुगुनी से लेकर १५ गुनी तक, बिहार म
तीन गुनी से २० गुनी तक, मद्रास मे १२½ गुनी से ३० गुनी तक तथा मध्यप्रदेश म
मे विलीन हुए प्रदेशो मे दुगुनी से दस गुनी तक है। कम आमदनी वाली जमीदारियो
पर क्षतिपूर्ति अधिक है तथा अधिक आय वाली जमीदारियो पर कम है।
उडीसा पश्चिमी बगाल और भूपाल मे क्षतिपूर्ति का कुछ अलग हिसाब है।

भारत मे विभिन्न राज्यो को जमीदारी तथा अन्य भूमि अधिकारों को समाप्त करने
के लगभग ३७०४ करोड रुपये क्षतिपूर्ति के रूप म तथा ८९ ९ करोड रुपये पुनर्वास
अनुदानो के रूप मे देने पड़ेंगे। बिहार और उत्तर प्रदेश को उपरोक्त बडी रकमो मे
से लगभग ७० प्रतिशत का भुगतान करना पडेगा।

क्षतिपूर्ति का धन निश्चित करने के पश्चात् दूसरी बात जो सामने आती
वह है कि इस धन को जमीदारो को किस प्रकार दिया जाय। यह बात तो
स्पष्ट ही है कि राज्य सरकार इतना धन रुपये पैसे के रूप मे नहीं दे सकती क्योंकि
उनके कोष मे इतना धन है ही नहीं। दूसरे, यह सब धन वह केन्द्रीय सरकार तथा
जनता से ऋण के रूप मे नहीं ले सकती क्योंकि केन्द्रीय सरकार के पास इतना धन
देने के लिये है ही नहीं। जनता से भी बहुत सा धन पचवर्षीय योजना के लिये
लिया जा चुका है। यदि प्राप्त हो भी जाय तो भी केन्द्रीय सरकार उनको ऐसा न
करने देगी क्योंकि उसको इसके पश्चात् जनता से ऋण लेने मे बडी कठिनाई होगी
रिजर्व बैंक ने भी इसकी सहायता करने से इन्कार कर दिया है। इस प्रकार राज्य
सरकारो के लिये यह सब धन एक दम देना असम्भव सा प्रतीत होता है। इन
कारण प्राय सभी राज्य यह धन छोटे-छोटे जमीदारो को द्रव्य के रूप मे तथा बडे-
बडे जमीदारो को इकरारनामो (Bonds) के रूप मे देगी इन इकरारनामो का समय
अलग-अलग राज्यो मे अलग-अलग है जैसे उत्तर प्रदेश मे ४० वर्ष उडीसा मे ३० वर्ष
आदि। इन पर जो ब्याज की दर दी जायेगी वह भी भिन्न भिन्न है। उत्तर
प्रदेश की सरकार ने यह निश्चित किया कि वह जमींदारो को धन तथा इकरा-
नामो के रूप मे क्षतिपूर्ति देगी। इसके लिये उसने १९४९ ई० मे जमीदारी उन्मूलन
कोष (Zamindari Abolition) चालू किया। इस कोष मे जो कोई काश्तकार
अपने लगान का १० गुना जमा कर देता है। उसको भूमिधर बना दिया जाता है
भूमिधर को भूमि पर पूर्ण अधिकार होता है। इस कोष के कारण उत्तर प्रदेश म

५८७३ करोड रु० जमीदारो को दिया जा चुका है। यदि यह बात दूसरे राज्यो मे भी हो तो बहुत लाभ होगा। क्योकि जमीदारो को केवल इकरारनामो के रूप म देने से उसको इस समय कोई लाभ न होगा। इसलिये उनको कुछ धन तथा शेष धन के बदले इकरारनामे मिलने चाहियें।

जमीदारी उन्मूलन से प्रभावित जागीरदारो और जमीदारो की सख्या मद्रास मे ३६०००, सौराष्ट्र मे ४६०००, मध्यप्रदेश मे ११ लाख तथा उत्तर प्रदेश मे २ लाख है।

जमीदारी उन्मूलन के पश्चात भूमि की व्यवस्था

जमीदारी उन्मूलन के पश्चात् एक महत्वपूर्ण प्रश्न हमारे सामने आता है और वह है कि जमीदारी उन्मूलन के पश्चात् भूमि की क्या व्यवस्था होनी चाहिय। जमीदारी उन्मूलन के पश्चात् चार प्रकार से खेती की जा सकती है—(१) सरकारी खेती (State farming), (२) सामूहिक खेती (Collective) farming), (३) सहकारी खेती (Cooperative) और (४) किसान खेती (Peasant farming)।

(१) सरकारी खेती—सरकारी खेती करने मे यह लाभ है कि इससे हमारे देशके छोटे-छोटे खेत बडे हो जायेंगे और इन पर आधुनिक यन्त्रो द्वारा खेती हो सकेगी। इससे दश की खूब उपज बढेगी परन्तु इससे लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होगी। इससे किसानो को अपने आप स्वय इच्छा से कार्य करने का भी कभी अवसर प्राप्त न होगा। वे मजदूरो के रूप म खेती पर कार्य करेंगे। दूसरे सरकारी उद्योगो म निजी लाभ के लिये स्थान न होने के कारण काम करने वाले कम से कम कार्य करने का प्रयत्न करते है। तीसरे, सरकार के पास खेतो का सचालन करने के लिये उपर्युक्त व्यक्ति नही हैं। चौथ, खेती जैसे उद्योग मे इतना रुपया लगाने के लिये भी सरकार के पास धन नही है। इस कारण सरकारी खेती करना उपर्युक्त नही है।

(२) सामूहिक खेती—इस प्रकार की खेती रूस मे होती है। वहा पर लगभग ९४ प्रतिशत जोती हुई भूमि पर इस प्रकार की खेती होती है। इस खेती मे किसान अपनी भूमि को एक जगह एकत्र कर लेते है। उनके यन्त्र तथा पशु आदि भी सामूहिक ही होते हैं। खेती करने से जो लाभ होता है वह सब मे बाँट दिया जाता है। रूस मे किसानो को सरकार की ओर से आदश मिलता है कि वे कितनी भूमि पर क्या फसल उगाये। इस प्रकार किसान वहा पर काम करने मे स्वतन्त्र नही है। हमारे देश मे इस प्रकार की खेती भी उपयुक्त नही है। इस देश के लोगो को निजी सम्पत्ति से बडा प्रेम है। इस कारण वे अपनी भूमि को एक स्थान पर इकट्ठा नही करेंगे। दूसरे, खेती के इस ढङ्ग से रूस का वह सब रक्तपात जो वहा पर हुआ आखो के सामने आ जाता है। तीसरे, रूस का ही अनुभव यह

बताता है कि वहा पर यद्यपि कुल उपज मे वृद्धि हुई है तो भी प्रति एकड उपयुक्त नही होगी।

(३) **सहकारी खेती**—इस प्रकार की खेती मे किसान लोग अपनी खेती को एक स्थान पर एकत्र कर लेते हैं और सब मिलकर खेती करते हैं। खेती करने मे सभी साझी मेलजोल से काम करते है। इस प्रकार की खेती मे रूस के समान सरकार का कोई हस्तक्षेप नही होता। खेती से जो प्राप्त होता है उसको सब आपस मे बाँट लेते हैं। इस प्रकार की खेती बहुत लाभदायक है। जहा पर भी यह ठीक प्रकार से की गई है वहा पर फल बहुत अच्छा निकला है। हमारे देश म बम्बई, मद्रास तथा उत्तर प्रदेश मे इस प्रकार से खेती की जा रही है। इस प्रकार खेती करने का परिणाम अच्छा ही निकला है। पर अभी तक इस देश म इस प्रकार की खेती प्रारम्भिक दशा मे है। इस कारण हम यह नही कह सकते कि इस प्रकार की खेती हमारे देश की वर्तमान स्थिति के उपयुक्त है या नही। यह भी देखने मे आया है कि जहा कही भी इस प्रकार की खेती सफल सिद्ध हुई है, वे ऐसे स्थान है जहा पर किसानो को सरकार ने भूमि जोतने के लिये दी है। जहा कही किसानो के खेतो को एकत्र करके सहकारी खेती करने का प्रश्न आता है वहा पर सफलता नही मिली क्योकि किसान अपनी भूमि को एकत्र करने को तैयार नहीं हैं। इस कारण हम कह सकते हैं कि इस प्रकार की खेती को धीरे-धीरे चालू किया जा सकता है, एक दम नही। दूसरी योजना मे यह ध्येय रखा गया ह कि योजना काल मे ऐसे पग उठाये जायें जिससे कि दस वर्ष मे अधिकतर भूमि पर सहकारी खेती होने लगे। कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन के स्वीकृत प्रस्ताव मे कहा गया है कि हमारा लक्ष्य और मकसद सयुक्त सहकारी खेती है। लेकिन अगले तीन वर्षो तक हम अपना प्रयास सेवा सहकारी समितियो पर ही केन्द्रीत करना चाहिये।

(४) **किसान खेती**—इसमे किसान स्वय भूमि के स्वामी होते हैं। व स्वय खेती करते है। इस प्रकार की खेती हमारे देश के लोगो के लिये बहुत उपयुक्त प्रतीत होती है क्योकि इस देश के लोग निजी सम्पत्ति के बहुत प्रेमी हैं। चौधरी चरणसिंह जी इस प्रकार की खेती को ही देश के लिये उपयुक्त बताते हैं। इस कारण इस खेती को ही इस देश म चालू किया जा सकता है। पर ऐसा करने म थोडी सी सावधानी से काम लेना पडेगा। सरकार को चाहिये कि वह किसानो के ऊपर ऋण के बदले भूमि को बेचने तथा रहन रखने के ऊपर कडा बन्धन लगा दे। उसको यह भी चाहिये कि वह यह पाबन्दी लगा दे कि जिस समय किसान भूमि बेचना चाहे तो उसको खरीदने का पहला अधिकार सरकार को होगा। किसानो पर भी पाबन्दी लगनी चाहिए कि किसान लोग भूमि को केवल उन्ही लोगो को हस्तातर करें जो स्वय खेती करते है। खेती को लगान पर देने की भी पाबन्दी होनी चाहिये। यदि यह सब सावधानी की जायेगी तो इस प्रकार की खेती से हमारे देश को लाभ

हो सकता है । जैसे-जैसे देश मे सहकारी समितियो का प्रचार बढता जायेगा वैसे ही वैसे उस ढङ्ग से खेती करनी चाहिये क्योकि सहकारी खेती से बहुत प्रकार के लाभ होते हैं जो किसान की खेती से नही होते ।

यहा सब बात बताने योग्य है कि योजना के लिये जो मन्त्री मण्डल की स्थायी काग्रेस कमेटी (The Standing Committee on planning of the *Congress party in Parliament) है वह भी इस समय सहकारी खेती के विरुद्ध* है । उसका कहना है कि भूमि की भूख को पहले व्यक्तिगत किसान की खेती करके सन्तुष्ट करना चाहिये । इसके पश्चात् किसानो को बताया जाय कि उनको आपस के लाभ के लिये मुख्य-मुख्य खेती के कार्यो जैसे जोतना, बोना, फसल काटना, फसल बेचना तथा खेती के लिये सामान मोल लेना आदि के लिये सहकारी समितिया चाहियें । यही बात इस समय दिखाई पडती है ।

Q 34 Discuss the changes that have been brought about in India's land policy in recen years

प्रश्न ३४—अभी हाल ही मे हुई भारतीय भूमि नीति मे जो बदल हुई है उसका उल्लेख कीजिये ।

अङ्गरेजो के शासन काल मे इस दश मे जमीदारी प्रथा की नीव पडती जिसमे मध्यस्थो के अधिकार को स्वीकार करके सरकार ने असली खेत जोतने वालो के अधिकारो को समाप्त कर दिया । इसके कारण किसानो की जो दुर्दशा हुई उसके कारण अङ्गरेजी सरकार को भी कानून बनाने के लिये मजबूर होना पडा । परन्तु अङ्गरेजी शासन काल मे जो कानून बनाये गये उनसे किसानो को कोई विशेष लाभ न हुआ । इसी कारण काँग्रेस सरकार ने प्रान्तो मे राज्य सत्ता सम्भालते ही अपना ध्यान इस ओर आकर्षित किया । १९४७–५० के बीच सरकार ने कई प्रकार से इस विषय मे जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न किया । इस बीच काग्रेस ग्राम सुधारक समिति (Congress Agrarian Reforms Committee)की रिपोर्ट उल्लेखनीय है।

अप्रैल १९५१ ई० मे प्रथम पचवर्षीय योजना का सूत्रपात हुआ और सारे देश के लिये भूमि सुधार की एक योजना तैयार की गई । परन्तु इससे पहले भी विहार, बम्बई, मध्य प्रदेश, मद्रास, उत्तर प्रदेश, हैदराबाद तथा पेप्सू मे मध्यजनो के अधिकारो को समाप्त करने के लिये कानूनी कार्यवाही शुरू कर दी गई थी । परन्तु उत्तर प्रदेश तथा बिहार मे जमीदारो पर सरकार को जमीदारी अधिकार समाप्त करने के अधिकार को चुनौती देने के कारण कानून कुछ समय तक लागू न किया जा सका ।

योजना कमीशन के भूमि सुधार के विषय मे निम्नलिखित सुझाव थे—

(१) खेती करने वाले तथा सरकार के बीच से मध्यस्थो को समाप्त करना ।

(२) लगान सम्बन्धी ऐसे कानून पास करना जो लगान को कम करें और किसानों को भूमि पर एक निश्चित मुआवजा देने के पश्चात् स्थायी अधिकार प्राप्त करने का अवसर दें परन्तु यदि जमींदार स्वयं खेती करने के लिये भूमि प्राप्त करना चाहें तो उसको इस कार्य के लिये भूमि प्राप्त करने का अधिकार देना।

(३) एक खेत की उच्चतम सीमा निश्चित करना।

(४) चकबन्दी व भूमि का भविष्य में बटवारा रोक कर खेती का सुधार करना तथा सहकारी ग्राम प्रबन्ध व सहकारी खेती की उन्नति करना।

योजना कमीशन के सुझावों के फलस्वरूप भारत सरकार ने सन् १९५३ में भूमि सुधार के लिये एक केन्द्रीय समिति नियुक्त की जिसका कार्य राज्य सरकारों में भूमि सुधार के प्रस्तावों पर विचार करके योजना कमीशन की भूमि सुधार विंग का मार्ग-दर्शन करना होगा।

प्रथम योजना के चालू होने के पश्चात् या तो राज्यों में जमींदारी प्रथा को समाप्त करने वाले कानून पास हो चुके हैं या होने वाले हैं। जम्मू व काश्मीर को छोड़कर शेष सभी राज्यों में जमींदारों को उनका अधिकार प्राप्त करने के लिये क्षति-पूर्ति दी जायगी। क्षति-पूर्ति देने के पश्चात् जब भूमि सरकार के हाथ में आ जायगी तब उसकी आय में अवश्य वृद्धि होगी।

प्रथम योजना में भूमि सुधार के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं—

(१) लगान को कम करना, (२) भूमि स्वत्व (Tenure) सम्बन्धी निश्चितता, (३) किसानों को अपनी भूमि खरीदने का अधिकार देना।

बहुत से राज्यों ने अधिकतम लगान निश्चित कर दिये हैं जो कि योजना कमीशन द्वारा बनाई हुई सीमा से अधिक नहीं है। ऐसे कानून आंध्र, मध्य प्रदेश, मद्रास, उड़ीसा, पंजाब, पश्चिमी बङ्गाल, जम्मू, काश्मीर, मध्य भारत, मैसूर, पेप्सू, ट्रावनकोर, कोचीन तथा भोपाल में पास किये जा चुके हैं। उत्तर प्रदेश तथा देहली में ऐसे कानून पास हो चुके हैं जिनके द्वारा मौजूदा किसानों को भूमि रखने तथा उनको प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है। इन राज्यों में किसानों को उनकी भूमि से नहीं निकाला जा सकता।

बम्बई, पंजाब, हैदराबाद, हिमाचल प्रदेश, पेप्सू, सौराष्ट्र तथा कच्छ में जमींदारों को स्वयं खेती करने के लिये भूमि प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है। पंजाब में केवल वही किसान भूमि को खरीद सकते हैं जो उसको लगातार १२ वर्ष से जोत रहे हैं। मध्य प्रदेश, मद्रास तथा मैसूर में किसानों को भूमि प्राप्त करने का अधिकार नहीं दिया गया है।

बहुत से राज्यों में खेती की उच्चतम सीमा भी निश्चित हो चुकी है जैसे जम्मू काश्मीर में २२¾ एकड़, उत्तर प्रदेश में १२½ एकड़, बिहार में ५ आदमियों के परिवार के लिये ३० एकड़ तथा छोटा नागपुर के पहाड़ी जिले के लिये ४५ एकड़, हैदराबाद में एक फसल उगाने वाली नम भूमि के लिये ७ से ९ एकड़ तक, चाक

मिट्टी वाली भूमि के लिये ३० से ६० एकड तक, काली मिट्टी व लेटराइट मिट्टी के लिये २१ से ३६ एकड तक, सौराष्ट्र मे आर्थिक खेत की तीन गुनी, दिल्ली मे ३० स्टेण्डर्ड एकड।

वर्तमान स्थिति—खेती करने के ढङ्गो पर अब भी सामाजिक रिवाजो व ढगो का बडा प्रभाव है। खेती साधारणतया छोटे-छोटे खेतो मे व्यक्तिगत रूप से की जाती है। ग्राम सुधार दो बातो को ध्यान मे रखकर किया है—

(१) अधिक उत्पत्ति प्राप्त करना तथा (२) सामाजिक न्याय लाना। राज्यो द्वारा किये गये सुधारो को निम्नलिखित चार श्रणियो मे बाँटा जा सकता है—

(१) मध्यस्थो का अन्त।

(२) भूमि स्वत्व सम्बन्धी कानून, (अ) लगान को फसल के ⅙ तथा ¼ के बराबर करने, (आ) काश्तकार को भूमि मे स्थायी अधिकार देने व जमीदार को अपने स्वय के जोतने के लिये एक निश्चित मात्रा मे भूमि प्राप्त करने, (इ) काश्तकार को जमीदार से एक मामूली मुआवजा देकर भूमि प्राप्त करने का अधिकार देने के लिये बनाये गये हैं।

(३) खेत की उच्चतम सीमा निश्चित करना।

(४) खेती का पुनर्गठन करना जिसमे चकबन्दी करना। खेती का बटवारा रोकना तथा सहकारी ग्राम व्यवस्था तथा सहकारी खेती करना आदि सम्मिलित हैं।

इस प्रकार सारे राज्यो में अब जमीदारी प्रथा का अन्त हो गया है और इस प्रकार किसान को सरकार के सम्पर्क मे लाया गया है। बहुत से राज्यो म लगान घटा दिया गया है। यद्यपि किसानो को लगान सम्बन्धी मामलो म निश्चितता प्राप्त हो चुकी है तो भी अभी तक उनको भूमि का मालिक नही बनाया जा सका। इस सम्बन्ध मे जो कठिनाई है वह यह है कि खेतो के आकार व उनके बटवारे सम्बन्धी सही आँकडे न होने के कारण छोटे मालिको व किसानो के अधिकारो म कैसे एकता लाई जाय। परन्तु अब क्योंकि १९ राज्यो के खेतो के आकार सम्बन्धी आँकडे (Rural Credit Survey तथा National Sampel Survey) प्राप्त हो चुके हैं इस कारण शायद हालत कुछ सुधर जायगी। किसानो को अब खेतो से नहीं निकाला जा सकता।

इस प्रकार वर्तमान भूमि नीति का मुख्य उद्देश्य छोटे छोटे किसान मालिको का निर्माण करना, उनको भूमि स्वतन्त्र सम्बन्धी स्थायी अधिकार देना, खेतो का अधिकतम आकार निश्चित करना, सहकारी खेती को प्रोत्साहन देना तथा लगान मे कमी करना है।

मई १९५५ ई० मे योजना आयोग ने प्रथम पचवर्षीय योजना काल मे भूमि सुधार के मामले से हुई प्रगति की जाच करने तथा द्वितीय योजना के लिये भूमि सुधार नीति निर्धारण करने के लिये सुझाव देने के लिये एक पेनल की

नियुक्ति की। इस पेनल ने बहुत से मामलो की जाँच की जिनमे भूमि सुधार, खेती का पुनर्गठन, खेतो की चकबन्दी, उनका प्रबन्ध, कानून, सहकारी खेती, भूदान आदि मुख्य हैं। लगान सुधार समिति की रिपोर्ट ६ मार्च १९५६ को दी गई। इस रिपोर्ट मे कहा गया है कि भूमि के स्वामित्व का आधार उत्तराधिकार न होकर श्रम होना चाहिये। इस प्रकार 'जोतने वाले को भूमि' मिलने का सिद्धान्त स्वीकार किया गया है।

द्वितीय योजना काल मे भूमि सुधार के दो उद्देश्य हैं—पहला, कृषि उत्पत्ति के मार्ग मे से ऐसी बाधायें दूर करना जो कि देश से कृषि प्रधान होने के कारण आती हैं और दूसरे इस प्रकार की हालतें निर्माण करना जिससे कि शीघ्रातिशीघ्र उच्च श्रेणी की कार्यकुशलता तथा उत्पादनशीलता वाली ग्रामीण अर्थव्यवस्था का देश मे निर्माण हो सके। ये सब प्रश्न एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था की उन्नति के लिये बहुत से सुझाव दिये गये हैं जिनमे खेतो की चकबन्दी, खेती का नियन्त्रण, सहकारी खेती आदि मुख्य हैं।

Q 35 Explain the main features of the U P Zamindari Abolition and Land Reforms Act

प्रश्न ३५—उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन तथा भूमि सुधारक एक्ट की मुख्य विशेषतायें समझाइये।

१ जौलाई १९५२ ई० को रात के ठीक १२ बजे उत्तर प्रदेश सरकार ने एक असाधारण गजट द्वारा यह घोषणा की कि आज से सारी भूमि की स्वामी सरकार हो गई है। यह घोषणा ढोल पीटकर राज्य के प्रत्येक गाव म पटवारियों द्वारा की की गई। इस अवसर को मनाने के लिये प्रभात फेरियां निकाली गई तथा मिठाइयाँ बाँटी गई।

उत्तर प्रदेश मे जमींदारी उन्मूलन तथा सुधारक एक्ट मे ३१४ धारायें हैं। प्रारम्भ मे यह राज्य की ४१३ करोड एकड भूमि मे से केवल ३६० करोड एकड भूमि पर लागू होगा। यह बनारस, टीहरी गढवाल तथा रामपुर रियासतो पर सरकारी जायदादो पर, कुमायू प्रदेश के अधिक भाग पर, देहरादून जिले के जानसार बावर परगने पर, मिर्जापुर जिले मे कैमपुर पहाडी के दक्षिणी भाग पर, बनारस जिले के परगना कसवार राजा स्थान पर। म्युनिस्पिल, टाउन एरिया, कैन्टोनमैंट तथा नोटिफाइड एरिया के अन्तर्गत जितना क्षेत्र है उस पर लागू नहीं होता। इन स्थानो के लिये एक अलग कानून बनाया जायगा। परन्तु १९५५ तथा १९५६ ई० मे इन सब मे जमींदारी प्रथा को समाप्त करने के लिये भी कानून पास कर दिये गये हैं।

उत्तर प्रदेश की विधान सभा (Assembly) ने ८ अगस्त १९४६ ई० को

एक प्रस्ताव पास किया जिसमें उसने यह निश्चय किया कि इस राज्य में जमीदारी प्रथा का अन्त होना चाहिये। जमीदारी उन्मूलन की योजना तैयार करने के लिये एक समिति नियुक्त करने का भी निश्चय किया गया। जमीदारी उन्मूलन समिति ने अपनी रिपोर्ट अगस्त १९४८ ई० में पेश की। ७ जौलाई १९४९ ई० को सबसे पहले विधान सभा में जमीदारी उन्मूलन तथा भूमि सुधारक बिल पेश किया गया। इस बिल के पास होने में काफी समय लगा क्योंकि जमीदार लोगो ने इसमें बहुत से रोडे अटकाये। यद्यपि दोनो सभाओ से पास होकर इस बिल को राष्ट्रपति की अनुमति २४ जनवरी १९५१ ई० को मिल गई थी तो भी इसके ऊपर कार्य न हो सका क्योंकि जमीदार लोगो ने उत्तर प्रदेश सरकार के विरुद्ध एक मुकदमा चालू किया जिसमें कि उन्होने सरकार को जमीदारो की भूमि इस प्रकार से लेने की चुनौती दी। पर वे इलाहाबाद हाईकोर्ट तथा सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) से हारे और अन्त में १ जौलाई १९५२ ई० को सरकार ने सब भूमि को अपने अधिकार में लेने की घोषणा की। इसके फलस्वरूप मध्यस्थो के सभी हित जिनमें जोती, बोई जाने वाली जमीन, बाग की जमीन, बजर भूमि, वन मीनाश्य हाट, बाजार आदि सम्मिलित थे बिना किसी प्रबन्ध के राज्य सरकार में निहित हो गये।

इस एक्ट के दो भाग हैं। पहले भाग में पुरानी पद्धति को नष्ट करने तथा दूसरे भाग में नई पद्धति को जन्म देने का वर्णन है।

पहले भाग में जमीदारी प्राप्त करने जमीदारो को क्षतिपूर्ति तथा पुनर्वासन प्रदान करने आदि का वर्णन है।

क्षतिपूर्ति—इस ऐक्ट के अनुसार जमीदारो की भूमि जमीदारो की खालिस सम्पत्ति (Net assets) का ८ गुना देकर प्राप्त की जायेगी। छोटे-छोटे जमीदारो (जिनकी सख्या बहुत अधिक है) को क्षतिपूर्ति के अतिरिक्त पुनर्वास के लिये भी खालिस सम्पत्ति के एक गुने से लेकर २० गुने तक देने की योजना है। सबसे कम पुनर्वासन का धन उन जमीदारो को दिया जायेगा जिनकी खालिस सम्पत्ति सबसे अधिक होगी। जैसे-जैसे खालिस सम्पत्ति घटती जायेगी वैसे ही वैसे पुनर्वासन धन की मात्रा बढ़ती जायेगी। इस प्रकार उस जमीदार को जिसकी खालिस सम्पत्ति सब से कम होगी २० गुना पुनर्वासन धन के रूप में मिलेगा।

यह बात निश्चित करने के लिए कि किसको क्या धन क्षतिपूर्ति के रूप में मिलना चाहिए क्षतिपूर्ति अफसर (Compensation officers) नियुक्त किये गए हैं। क्षतिपूर्ति हरएक सम्पत्ति पर अलग-अलग निश्चित की जायेगी। परन्तु पुनर्वासन सहायता धन जमीदार की आर्थिक स्थिति पर निर्भर होगा। सबसे छोटे जमीदार को सबसे अधिक पुनर्वासन धन मिलेगा। जो भूमि वक्फ तथा ट्रस्ट के आधीन हैं उन को भी सरकार अपने अधिकार में ले लेगी। परन्तु इनमें से जिन भूमियो की आय व्यक्तिगत लाभ के लिये व्यय होती है उन पर क्षतिपूर्ति का धन उसी प्रकार दिया

जायेगा जिस प्रकार कि दूसरे जमींदारो को। परन्तु जिन भूमियो का धन दान देने तथा जनता की भलाई के काम मे खर्च होता है उन पर और सम्पत्तियो के समान क्षतिपूर्ति मिलने के अतिरिक्त वार्षिक सहायता (Annuity) भी इतनी मात्रा मे दी जायेगी जितनी कि उनसे आजकल वार्षिक आय प्राप्त होती है।

जिस समय सरकार किसी भूमि को अपने अधिकार मे लेगी उस समय सरकार को क्षतिपूर्ति देनी होगी। जब तक सरकार क्षतिपूर्ति का धन जमीदार को न देगी उस समय तक सरकार को उस धन के ऊपर २½ प्रतिशत का ब्याज देना पडेगा। परन्तु यदि सरकार को ली हुई भूमि का धन निश्चित करने मे ६ महीने से अधिक लगेंगे तो सरकार जमीदार को अन्तर्कालीन क्षतिपूर्ति (Interim Compensation) देगी। १९५७ के अन्त तक अन्तर्कालीन क्षतिपूर्ति के रूप मे ५९ ७३ करोड रुपये दिये गए।

सरकार को क्षतिपूर्ति तथा पुनर्वासन के रूप मे लगभग १७९ करोड रुपया देना पडेगा। अन्तर्कालीन क्षतिपूर्ति के अतिरिक्त क्षतिपूर्ति इकरारनामो (Bonds) के रूप मे दी जायेगी।

उत्तर प्रदेश सरकार ने विभिन्न प्रकार के किसानो के लिए भूमि प्राप्त करने की दर मे अभी हाल ही मे बदल करने की घोषणा की है जो इस प्रकार है—उन भूमिधरों को जो भूमि प्राप्त करने की घोषणा के छपने के पूर्व भूमिधर हुये hereditary rates पर किये गए मूल्याकन का ४० गुना अथवा मालगुजारी का ८० गुना, इन दोनो मे जो भी अल्प हो, दिया जायगा।

सीरदारो को hereditary rates पर किये गए मूल्याकन का २० गुना दिया जाएगा। यदि भूमिधर अथवा सीरदारो द्वारा दी गई मालगुजारी hereditary rates पर किये गए मूल्याकन से कम है तो मूल्याकन तथा मालगुजारी के अन्तर का २० गुना क्षतिपूर्ति के धन मे जोड दिया जायेगा।

गाँव समाज अथवा स्थानीय सस्था के आसामी को उनके द्वारा दिये गए अथवा दिये जाने वाले ५ वर्ष के लगान के बराबर क्षतिपूर्ति दी जायेगी। दूसरे आसामियो को hereditary rates पर किये गए मूल्याकन का ५ गुना क्षतिपूर्ति के रूप मे दिया जायेगा। अधिवासियो को hereditary rates पर किये गए मूल्याकन का ७½ गुना क्षतिपूर्ति के रूप मे दिया जायेगा। आसामी अथवा अधिवासी को जो क्षतिपूर्ति दी जाएगी वह उसके भूमि के स्वामी को दी जाने वाली क्षतिपूर्ति मे से कम कर दिया जायेगा।

जमींदारी उन्मूलन कोष (Z A fund)—जमीदारी उन्मूलन बिल के पास होने से पहले ही सरकार ने जमींदारी उन्मूलन कोष बिल पास किया। इस बिल के अनुसार कोई भी काश्तकार जो अपने लगान का १० गुना जमीदारी उन्मूलन कोष मे जमा कर देगा उसको भूमिधर बना दिया जायेगा। भूमिधर को भूमि मे पूरा-पूरा अधिकार होगा। अभी तक यह निश्चित नही किया गया कि इस धन को किस

प्रकार खर्च किया जायेगा। पर यह सम्भावना है कि इसको एक सिंकिंग फण्ड (Sinking fund) मे रखा जाये,जिसमे कि प्रतिवर्ष ३ करोड रुपया जो सरकार को जमीदारी उन्मूलन के पश्चात् मालगुजारी के रूप मे आजकल से अधिक प्राप्त होगा जमा किया जाये और इस धन से ४० वर्ष पीछे इकरारनामो का धन उनके स्वामियो को दिया जाये।

भूमि की नई पद्धति

भूमि की नई पद्धति का वर्णन इस ऐक्ट के दूसरे भाग मे किया गया है। इस नई पद्धति को हम तीन भागो मे बाट सकते है—(१) ग्राम जातियो (Village communities) अथवा ग्राम समाज की स्थापना, (२) मालगुजारी प्रथा (Land Tenures), (३) सहकारी खेती की उन्नति।

(१) ग्राम जाति अथवा ग्राम समाज—एक ग्राम जाति मे ग्राम के काश्तकार तथा ग्राम के निवासी सम्मिलित होगे। ग्राम समाज के आधीन ग्राम की सामूहिक भूमि (Common Land), ग्राम की सीमा के भीतर के वन, सब वृक्ष जो किसी खेत मे न हो, जनता के कुएँ, तालाब, आने जाने के मार्ग, घाट, मछली, हाट तथा बाजार होगे। ग्राम समाज एक ग्राम पचायत नियुक्त करेगी जिसका कार्य यह होगा कि वह, वे सब काम करे जो कानून उस पर सौंपे। इस ग्राम पचायत का कार्य ग्राम की देख-भाल करना तथा ग्राम समाज का जो भूमि सौंपी गई उसका प्रबन्ध तथा देख भाल करना होगा। इसका यह भी कर्तव्य होगा कि वह खेती तथा कुटीर उद्योग धन्धो की उन्नति करने मे सहायक हो। सरकार यदि चाहे तो वह पचायत द्वारा मालगुजारी भी वसूल करा सकती है। गाव पचायत एक कमेटी नियुक्त करेगी जिसका कर्त्तव्य यह होगा कि वह खाली पडी हुई भूमि तथा दूसरी भूमि का प्रबन्ध करेगी।

(२) मालगुजारी प्रथा—इस ऐक्ट के अनुसार इस राज्य मे दो प्रकार के बडे-बडे काश्तकार तथा दो प्रकार के छोटे काश्तकार होगे। बडे काश्तकारो को भूमिधर तथा सीरदार और छोटे काश्तकारो को आसामी तथा अधिवासी कहेगे।

भूमिधर—भूमिधारी का अधिकार उस सब भूमि मे होगा—(१) जो जमीदार की सीर, खुद काश्त अथवा कुज की है, (२) अवध मे स्थायी पट्टे की भूमि जिस पर काश्तकार या तो स्वय खेती करता हो या उस पर उसका कुज हो, (३) जिस भूमि का काश्तकार निश्चित लगान देता हो अथवा उस पर वह कोई लगान न देता हो, (४) मौरूसी काश्तकार अथवा उस काश्तकार की भूमि जिसमे उसको उत्तराधिकार का अधिकार है और जिस पर वह स्थायी लगान देता हो अथवा कोई लगान ही नही देता अथवा धारा १७ मे दिये पट्टा द्वामी अथवा इस्तमरारी काश्तकार की भूमि जिसको बेचकर उसको हस्तान्तर करने का अधिकार हो।

इन सब के अतिरिक्त वे सब काश्तकार जो सीरदार होंगे उनको यह अधिकार होगा कि वे अपने लगान का १० गुना भूमि उन्मूलन कोष मे जमा करके भूमिधर बन सकते हैं।

भूमिधर को अपनी भूमि मे स्थायी पीढी पर चलने वाला तथा हस्तातरण-शील अधिकार (Permanent heritable and transferable right) होगा। वह अपनी भूमि को इच्छानुसार किसी भी काम मे ला सकेगा। ये बेदखल नही किया जा सकेगा। भूमिधर को भविष्य मे कोई लगान न देना पडेगा। वह केवल मालगुजारी देगा जो कि वर्तमान लगान की आधी होगी। इस प्रकार वह ४० वर्ष तक आधा लगान देगा। इसके पश्चात् उसको जो मालगुजारी देनी पडेगी वह नए बन्दोबस्त पर निर्भर होगी।

सीरदार—सीरदार का अधिकार हरएक मौरूसी काश्तकार (Occupancy tenent) को होगा। इस प्रकार हरएक काश्तकार जिसके पास की अवधि मे विशेष शर्तों पर भूमि है, भूतपूर्व मालिक काश्तकार (Ex proprietory tenent), मौरूसी काश्तकार, उत्तराधिकार का अधिकारी रखने वाला काश्तकार, विशेष लगान की दर देने वाला काश्तकार तथा कुज रखने वाला काश्तकार सीरदार बन जावेगा।

सीरदार को भूमि मे स्थायी तथा पीढी दर पीढी चलने वाले अधिकार होंगे। परन्तु वह भूमि को अपनी इच्छानुसार हरएक काम मे नही ला सकेगा। वह अपनी भूमि पर केवल खेती बागवानी अथवा पशुपालन का कार्य ही कर सकेगा।

आसामी—आसामी का अधिकार निम्नलिखित काश्तकारो का होगा—(१) कुज वाली भूमि के काश्तकार अथवा उप-काश्तकार को, (२) उस मनुष्य को जिसके पास किसी काश्तकार ने अपनी भूमि रहन रक्खी हो, (३) चरागाहो अथवा नदी के पानी के नीचे की भूमि अथवा वह भूमि जो वन लगाने के लिये रख छोडी गई हो अथवा नदिया की वह भूमि जिस पर कभी कभी खेती होती है, के काश्तकार को, (४) उन मनुष्यो को जिनके पास भूमिधर अथवा सीरदार से एक्ट के अनुसार भूमि पीछे आई हो।

आसामी को अपनी भूमि पीढी दर पीढी चलने वाले अधिकार तो होंगे परन्तु उसके अधिकार भूमि मे स्थायी न होगे।

अधिवासी—अधिवासी सीर के काश्तकार अथवा उप-काश्तकार होंगे। इन काश्तकारो को एक्ट के चालू होने के पश्चात् पाँच वर्ष तक भूमि रखने का अधिकार होगा। पाच वर्ष पश्चात वे भूमि के लगान का १५ गुना जमीदारी उन्मूलन कोष मे जमा करके भूमिधर बन सकते हैं।

भविष्य मे भूमिधर तथा सीरदार तो मालगुजारी देंगे और आसामी तथा अधिवासी लगान देंगे।

इस एक्ट मे इस बात का भी प्रबन्ध किया गया है कि किसी काश्तकार के

वर्ग इसलिये खेती नहीं करता क्योंकि उसको इस बात का विश्वास नहीं होता कि उसको अपनी फसल का उचित मूल्य भी मिल सकेगा या नहीं। यदि पदार्थों का मूल्य स्थिर कर दिया जाये तो यह वर्ग अपने उत्पादन व्यय का हिसाब लगा कर अपने लाभ को निकाल सकेगा और यदि उसको लाभ दिखाई देगा तो यह वर्ग अवश्य इस कार्य में लग जायगा। इसके कारण कृषि उद्योग की अवश्य उन्नति होगी।

यदि अभी कृषि पदार्थों के मूल्य को स्थिर न किया गया तो भविष्य में वे गिर जायेंगे। इसके कारण किसानों का ऋण भार भविष्य में बढ़ जायगा। १९३०–३४ के बीच होने वाली मन्दी के कारण भारत का ग्रामीण भार कई अरब रुपया बढ़ गया था।

यदि कृषि पदार्थों के मूल्यों को स्थिर करने के कारण कृषि की उन्नति होगी तो इसके कारण हमारी राष्ट्रीय आय बढ़ जायगी। देश में व्यापार की उन्नति होगी। सरकार व रेलों की आय बढ़ जायगी। इस प्रकार इसके कारण बहुत लाभ होने की आशा है।

इसके विपरीत जो लोग कहते हैं कि कृषि पदार्थों के मूल्यों को स्थिर नहीं करना चाहिये उनका कहना है कि यदि मूल्य स्थिर किये गये तो वे ऊंची सीमा पर स्थिर किये जायेंगे और यदि ऐसा हो गया तो उससे कई प्रकार की हानि होगी। पहली, यह कि इसके कारण उपभोक्ता का खर्च बढ़ा हुआ रहेगा और उसको कभी भी चैन न मिल सकेगा। दूसरी यह कि इसके कारण कच्चे माल का मूल्य अधिक रहेगा और उसके कारण पक्के माल का मूल्य भी अधिक हो जायगा। पक्के माल का मूल्य अधिक न होने के कारण हमारे माल की विदेशों में माँग घट जायगी और विदेशी माल की माग हमारे देश में बढ़ जायगी। इसके कारण देश के उद्योगों की अवनति होगी। तीसरी, यह कि इसके कारण मजदूरों का जीवन-स्तर बढ़ जाने के कारण उनकी मजदूरी बढ़ जायगी और इसके कारण भी पक्के माल का मूल्य बढ़ जायगा और उसका प्रभाव हमारे देश के पक्के माल के निर्यात पर पड़ेगा।

यदि हम कृषि वस्तुओं के मूल्यों की स्थिरता के पक्ष व विपक्ष के तर्कों को देखें तो हम यह कह सकते हैं कि मूल्यों की स्थिरता से हमको लाभ अधिक होगा और हानि कम। पर यह तभी सम्भव हो सकता है जबकि मूल्यों को सोच समझ कर स्थिर किया जाय तथा उसमें समय-समय पर परिवर्तन करने की गुञ्जायश छोड़ी जाय। मूल्य स्थिर करते समय हमको केवल किसान के हितों को ही नहीं देखना चाहिये वरन् उपभोक्ताओं तथा उद्योग-धन्धे के हितों को भी देखना पड़ेगा। ऐसी बात ध्यान में रखने से हमको कोई विशेष हानि न होगी। इसके अतिरिक्त यह बात भी है कि यदि हमको मूल्य स्थिर करने से थोड़ी हानि हो भी गई तो हमको उसको सहन करना चाहिये। इसका कारण यह है कि हमारा कृषि उद्योग बड़ो

खराब हालत मे है और उसको उन्नत करना बडा आवश्यक है। एक बार इस उद्योग के उन्नत होने पर हम कृषि मूल्यो को स्वतन्त्र छोड सकते हैं।

यहाँ यह बात बताने योग्य है कि अशोक महता कमेटी ने कहा है कि मूल्य के ढाँचे को स्थिर नही किया जा सकता। जब तक कि मूल्य इस प्रकार घटते-बढते है कि उनके कारण लागत व कुछ लाभ प्राप्त होता रहता है तब तक उनमे परिवर्तन कोई चिन्ता का विषय नही। परन्तु जब मूल्यो मे इतना परिवर्तन हो जाता है कि उसके कारण लागत और आय तथा मूल्य मे बहुत अन्तर हो जाता है तब वे चिन्ता का विषय बन जाते हैं। मूल्यो मे इतना अधिक परिवर्तन दूर करना चाहिये। इस बात को प्राप्त करने के लिये कमेटी ने सुझाव दिया है कि एक एक उच्च शक्ति मूल्य स्थिरता बोर्ड स्थापित किया जाय जिसका कर्तव्य यह हो कि वह मूल्य स्थिरता की सामान्य नीति को निश्चित करे तथा उसको समय-समय पर लागू करने के लिए कदम उठाये।

परन्तु सरकार ने पूरे तौर पर इस सुझाव को नही माना है क्योंकि मूल्य निश्चित करने का कार्य आर्थिक नीति का एक मुख्य अङ्ग है जिसको एक सरकार के बाहर एक कानूनी सस्था के हाथ मे नही छोडा जा सकता। परन्तु जून १९५८ की एक सूचना के अनुसार सरकार केन्द्रीय अर्थ-मन्त्रालयो के सभा सचिवो की एक समिति को यह काय सौंपेगी कि वह देश के मूल्य-स्तर की दिशा की जानकारी करे तथा उसको स्थिर करने का सुझाव दे।

एशिया तथा सुदूर पूर्व के देशों के लिये कृषि मूल्यो तथा आयो से सम्बन्धित हुई F. A O केन्द्र की एक बैठक इस निर्णय पर पहुची कि किसानो को एक न्यूनतम मूल्य का विश्वास दिलाने की अपेक्षा यह प्रयत्न करना चाहिये कि मूल्यो मे कम से कम सीमाओं के बीच परिवर्तन हो। मूल्यो मे बहुत अधिक स्थिरता को दूर करना चाहिये जिससे कि उत्पादन का माग के साथ सामञ्जस्य स्थापित हो जाय। परन्तु यह आवश्यक है कि फसल कटने के पश्चात् जो मूल्यो मे बहुत अधिक कमी आ जाती है उसको दूर किया जाए तथा उन क्षेत्रो पर निगाह रखी जाय जहा मूल्य बहुत ऊँचे तथा नीचे है। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि फसल की बिक्री के ढङ्ग को उन्नत किया जाय जिससे कि किसानो को अधिक लाभ हो। यह भी आवश्यक है कि उन सब कारणो को ध्यान मे रखा जाय जो कि मूल्य पर प्रभाव डालते है तथा उन पर एक-एक करके विचार किया जावे। यह भी आवश्यक है कि फसल बोने से बहुत पहले ही मूल्य सम्बन्धी निणय की घोषणा कर दी जाय जिससे कि उसका फसल के ऊपर अधिक से अधिक प्रभाव पडे और उससे किसान को अधिक से अधिक उत्पत्ति करने का प्रोत्साहन मिले।

यह हर्ष का विषय है कि हमारी सरकार इस ओर निरन्तर कदम उठा रही है। उसने गन्ने के मूल्यों को स्थिर कर दिया है। उसका प्रयत्न है कि रुई व पटसन के मूल्य एक न्यूनतम सीमा से नीचे न गिरे। अभी हाल ही मे जब गेहू के दाम गिरने

लगे तो केन्द्रीय सरकार ने घोषित किया कि वह स्वय गेहूँ को खरीदेगी जिससे कि गेहू का मूल्य १० रु० मन से कम न हो। अभी अगस्त १९५७ ई० मे खाद्य मन्त्री श्री अजीत प्रसाद जैन ने अखिल भारतीय कांग्रेस समिति को एक सुझाव भेजा है कि खाद्य पदार्थों के मूल्य वर्तमान स्तर पर स्थिर कर देने चाहियें। ऐसा करने से किसानो को बडा लाभ होगा। काग्रेस के नागपुर अधिवेशन मे भी यह बात स्वीकार की गई है किसानो को उचित लाभ का विश्वास दिलाने के लिये प्रत्येक फसल का न्यूनतम भाव फसल बोने से उचित समय पहले ही निश्चित कर देना चाहिये और जहा कही आवश्यक हो फसल को सीधे किसान से खरीदनी चाहिये। किसानो को लाभ होने से सारे देश को लाभ होगा क्योकि हमारे देश मे लगभग ७० प्रतिशत व्यक्ति किसान ही हैं।

Q 39 State in broad outline the policy of the state towards Indian agriculture from the middle of the nineteenth century upto the present day

प्रश्न ३९—१९ वीं शताब्दी के मध्य से आज तक सरकार की जो नीति भारतीय कृषि के लिए रही हो उसकी विस्तारपूर्वक रूपरेखा लिखिये।

उत्तर—स्वतन्त्रता से पूर्व इस देश की शासनसत्ता अंग्रेज लोगो के हाथ मे थी। अंग्रेजो को इस देश की आर्थिक उन्नति करने मे कोई रुचि नही थी। उनका उद्देश्य इस देश मे एक मजबूत राज्य स्थापित करना था। इसी से उन्होंने इस देश म कुछ सुधार जैसे विद्या का प्रचार, सती प्रथा रोकना आदि किये। इसी कारण उन्होंने दूसरी आर्थिक समस्याओ की ओर बहुत कम ध्यान दिया।

देश की आर्थिक समस्याओ की ओर सरकार का ध्यान १८७० ई० के पश्चात् आकर्षित हुआ जबकि देश मे बहुत से भीषण अकाल पडे। १८८० ई० के अकाल कमीशन (Famine Commission) ने इस बात पर जोर दिया कि हर प्रान्त मे कृषि विभाग (Agricultural Department) खोला जाये जो एक डाइरेक्टर के आधीन हो। इस विभाग का कार्य कृषि सम्बन्धी सूचनाये एकत्रित करना है जिससे कि वह आने वाले अकाल की बाबत सरकार को पहिले ही सूचित कर दे, कृषि मे इसलिए उन्नति करना जिससे कि अकाल फिर न पडे तथा अकाल के समय अकाल पीडितो की सहायता करना है। सरकार ने इस सुझाव के अनुसार १८८२ ई० मे प्रान्तीय कृषि विभाग खोले। इनका कार्य हर गाव से कृषि सम्बन्धी सूचनाये तथा आकडे एकत्रित करना था। एक नया शाही कृषि विभाग (Imperial Department of Agriculture) भी खोला गया।

१८८९ ई० मे डा० वालकर (Voelcker) को जो कि शाही कृषि सोसायटी का कृषि रसायनी सलाहकार था इस देश मे भेजा गया। उसका कार्य यह था कि वह बताये कि इस देश मे कृषि के ऊपर कैसे कृषि रसायन लागू की जा सकती है। उसने सारे देश का भ्रमण किया और तब अपनी रिपोर्ट दी। इस रिपोर्ट मे उसने बताया कि भारतीय कृषि न तो प्रारम्भिक दशा मे है और न पिछडी हुई मे। देश के बहुत से भागो मे खेती इतने उत्तम ढङ्ग से की जा रही है कि उसमे कुछ उन्नति करने की आवश्यकता ही नही है और जहां कही भी कृषि की बुरी दशा है वहाँ पर यह इसलिए नही है कि लोग खेती करना नही जानते वरन् इसलिये है कि वहा पर

खेती के लिए पर्याप्त मात्रा मे सुविधायें नही हैं। उसने खेती को उन्नत करने के लिए बहुत से सुझाव रक्खे।

१८९० ई० मे डा० वालकर के सामने ही कृषि सभा हुई। जिसमे डा० वालकर के कहने से भारतीय सरकार ने जे० डब्लू० लीदर को कृषि रसायनज्ञ (Agricultural chemist) नियुक्त किया। दूसरे क्षेत्रो मे भी कृषि उन्नत करने की आवश्यक्ता प्रतीत हुई। इस कारण १९०१ ई० में कृषि का एक इन्सपेक्टर जनरल तथा एक माईकोलोजिस्ट नियुक्त किया गया। इसके पश्चात् १९०३ ई० मे एक कृमिशास्त्रवेत्ता (Entomologist) भी नियुक्त किया गया। शिकागो के श्री हेर्ली फिप्स ने लार्ड कर्जन को ३०,००० पौंड का एक दान किया जो कि पूसा अनुसन्धान-शाला (Pusa Research Institute) खोलने के काम मे लाया गया। १९०५ ई० मे कृषि विभागो का फिर से सगठन किया गया और उनके आधीन अनुसधान शालाय (Research Institutes) तथा प्रयोगी खेत (Experimental farms) खोले गए। केन्द्रीय सरकार ने खेती की उन्नति के लिए २० लाख रुपये भी दिये। इसी बीच कृषको को ऋण लेने मे सुविधा देने के लिये सरकार ने १९०४ ई० मे एक सहकारी समिति एक्ट पास किया जिसके आधीन देश मे बहुत सी सहकारी समितियाँ खुल गईं। १९०६ ई० के पश्चात् इस देश मे सिंचाई की उन्नति के लिए भी बहुत कुछ कार्य किये गये।

१९१९ ई० के सुधारो के पश्चात् कृषि विभाग प्रान्तीय सरकारो के हाथ मे चला गया। केन्द्रीय सरकार का कार्य केवल उन चीजो से सम्बन्ध रखता था जो अखिल भारतीय महत्व की हो।

१९२६ ई० मे भारतीय कृषि की जाँच करने के लिये एक शाही कमीशन (Royal Commission) नियुक्त किया गया। इस कमीशन का कार्य भारतीय कृषि तथा ग्रामीण लोगो की आर्थिक स्थिति की उस समय की जाँच करना और ग्रामीण लोगो की आर्थिक उन्नति तथा कृषि की उन्नति के लिये सुझाव देना था। कमीशन की रिपोर्ट बहुत बड़ी है और इसमे कृषि आय (Land Revenue) तथा कृषि स्वत्व (Land Tenure) को छोडकर करीब-करीब सभी कृषि समस्याओ का निदान करने के लिये सुझाव रखे गये हैं। इस कमीशन ने यह सुझाव दिया कि एक शाही कृषि अनुसधान सभा (Imperial Council of Agricultural Research) की स्थापना की जाये जिसका कार्य भारत मे कृषि अनुसन्धान को उन्नत करना, उसका मार्ग दर्शन करना तथा समन्वय करना हो। इस सभा का कार्य कृषि तथा पशु सम्बन्धी सभी बातो की बाबत सूचना एकत्र करके उनको बतलाना है।

कमीशन की रिपोर्ट के पश्चात् इस देश मे एक शाही कृषि अनुसन्धान सभा चालू की गई जिसको आजकल भारतीय कृषि अनुसन्धान सभा (Indian Council of Agricultural Research) कहते हैं। यह खेती सम्बन्धी अनुसन्धानो के लिये सहायता भी देता है। इसका कार्य समय-समय पर योग्य लोग देखते रहते हैं।

१६२६ ई० के पश्चात् जब मूल्य गिरने लगे तो खेतों को बडी हानि हुई। कृषि पदार्थों के दाम सबसे पहले तथा सबसे अधिक गिरे। इससे भारतीय किसानो की तथा भारतीय कृषि की दशा बहुत बिगड गई। इस समय भारतीय सरकार ने दूसरे देशो की सरकारो के समान कृषक की सहायता करने के लिये कुछ भी नही किया। इस कारण किसानो के ऊपर ऋण का भार बहुत अधिक बढ गया। इसी बीच मे सरकार ने १६३४ ई० मे एक कृषि वस्तु बिक्री-सलाहकार को नियुक्त किया और १६३५ ई० मे रिजर्व बैंक के आधीन एक कृषि साख विभाग (Agricultural Credit Department) की स्थापना की जिसका कार्य कृषि को आर्थिक सहायता देना तथा सहकारिता के सम्बन्ध मे पूरी जाँच पडताल करना है। प्रान्तीय सरकार ने कृषको को महाजनो के पजे म से बचाने के लिये भी बहुत से कानून पास किये। इसके अतिरिक्त भूमि मे किसानो के स्वत्व की रक्षा करने के लिये प्रान्तीय सरकार ने बहुत कुछ काय किये। जिसके फलस्वरूप आज बहुत से राज्यो मे कृषक को भूमि से बेदखल नही किया जा सकता और न ही उससे नजराना आदि लिया जा सकता है। साथ-साथ राज्य सरकारो ने ग्राम सुधार की बहुत सी योजनायें भी बनाई क्योकि ऐसा अनुभव किया गया है कि ग्राम सुधार की बडी योजनाओ के बिना, केवल खेती की उन्नति करना कठिन होगा।

द्वितीय महायुद्ध मे कृषि पदार्थों के भाव बहुत ऊँचे हो गये। इसके कारण किसानो को बहुत लाभ हुआ। पर कन्ट्रोल के कारण उनको इतना लाभ न हो सका जितना कि होना चाहिये था।

जब से राष्ट्रीय सरकार आई है तब से उसने खेती की उन्नति की ओर काफी ध्यान दिया है। उसने जमीदारी का उन्मूलन किया है तथा खेतो की उच्चतम तथा न्यूनतम सीमायें निश्चित की है। इसके अतिरिक्त वह खेतो की चकबन्दी की ओर बडी तेजी से अग्रसर हो रही है। उसने उचित लगान निश्चित किये हैं तथा काश्तकारो को अनुचित अबवाब व नजरानो से बचाया है। उसने किसानों को जमीन खरीदने के लिये धन भी दिया है। इसके अतिरिक्त उसने बिना भूमि के किसानो को भूमि भी दी है।

सहकारी आन्दोलन की प्रगति के लिये उसने ऋण की विशेष सुविधाओ पर बल दिया है तथा सहकारी शिक्षा के प्रसार के लिये एक केन्द्रीय समिति भी नियुक्त की है। गाव के कार्यकर्त्ताओ के लिये भी शिक्षा का प्रबन्ध कर दिया गया है।

सरकार ने बहुत सा धन खर्च करके बडी व छोटी सिंचाई की योजनाओ को चालू किया है। जहाँ प्रथम पचवर्षीय योजना मे बडी बडी सिंचाई की बहु उद्देश्य योजनाओ पर सरकार ६६१ करोड तथा कृषि तथा सामूहिक विकास योजना पर ३५७ करोड रुपये तथा छोटी छोटी योजनाओ जैसे ट्यूबवैल पर ४५ करोड रुपये खर्च करने जा रही थी वहाँ दूसरी योजना मे वह सिंचाई तथा शक्ति योजनाओ पर ८६० करोड तथा कृषि सामूहिक विकास पर ५६८ करोड रु० खर्च करेगी।

सरकार 'अधिक अन्न उपजाओ योजना' तथा सामूहिक विकास योजना के अन्तर्गत भी सिंचाई का प्रबन्ध कर रही है।

प्रथम योजनाकाल में केन्द्रीय ट्रैक्टर संस्था ने ११.८८ लाख एकड़ भूमि तथा राज्य ट्रैक्टर संस्था ने १७ लाख एकड़ भूमि को खेती के योग्य बनाया है। लगभग २५ लाख एकड़ भूमि को कंटर बन्डिंग, मिट्टी की सुरक्षा, नालियों आदि के द्वारा लाभ पहुंचा है। प्रथम योजनाकाल में ६३ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई का प्रबन्ध करके खेती के योग्य बनाया गया।

संयुक्त राष्ट्र टेक्नीकल कोआपरेशन प्रोग्राम के अन्तर्गत ३०११ ट्यूबवेल बनाए जा रहे हैं।

उत्तर प्रदेश, बिहार तथा बम्बई में भी ट्यूबवेल बनाये जा रहे हैं। सरकार सरकारी समितियों को सहायता प्रदान कर रही है। इस प्रकार उत्तर प्रदेश में १५००, बिहार में १५० तथा पैप्सू में ३००, बम्बई (गुजरात क्षेत्र) में ४००, बम्बई (सौराष्ट्र क्षेत्र) में ७०, पश्चिमी बंगाल में १२५, मद्रास में २७८ ट्यूबवेल बनाये जाने वाले हैं।

बड़ी-बड़ी योजनाओं के अन्तर्गत १५-२० वर्ष में १.५ करोड़ एकड़ भूमि पर सिंचाई हो सकेगी।

सरकार मल-मूत्र आदि से खाद बनाने का भी बड़ा प्रयत्न कर रही है। सामूहिक विकास योजनाओं वाले क्षेत्रों में १९५७-५८ में २२.२ लाख टन कम्पोस्ट खाद तैयार की गई तथा १९५८-५९ का ध्येय २६.४० लाख टन है। इसके अतिरिक्त कुछ राज्यों में नालियों का पानी सिंचाई के काम में लाने की योजना है तथा कहीं-कहीं पशु वधशालाओं का खून भी खेती के काम में लाने की योजना है। इनके अतिरिक्त १९५८-५९ में रासायनिक खाद का उपभोग ६ लाख टन हो गया।

राज्यों में उन्नत बीजों के बाँटने का भी प्रयत्न हो रहा है। योजना के पहले तीन वर्षों में धान, गेहूं तथा दूसरे खाद्य-पदार्थों का २ लाख टन उन्नत बीज बाँटा गया। यह बीज खाद्य पदार्थों के नीचे के कुछ क्षेत्र का ८.५ प्रतिशत था। अब सरकार उन्नत बीज बाँटने की ओर बड़ी तेजी से ध्यान दे रही है। आशा है कि दूसरी योजना के अन्त तक प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्र में एक या दो बीज गोदाम स्थापित हो जायेंगे।

सरकार पौधों की रक्षा के लिये पौधा सुरक्षा संस्था चला रही है, तथा उसने इस सम्बन्ध में कई प्रकार की मशीनें भी खरीदी हैं। इसके अतिरिक्त टिड्डियों को रोकने के साधनों का भी आधुनिकरण कर दिया गया है।

सरकार मिट्टी के कटने को भी रोकने का प्रयत्न कर रही है और केन्द्रीय सरकार ने १९५३ में एक केन्द्रीय मिट्टी सुरक्षा बोर्ड की स्थापना की है जिसका कार्य मिट्टी की सुरक्षा के लिये अन्वेषण करना, राज्यों तथा नदी घाटी संस्थाओं को मिट्टी की सुरक्षा सम्बन्धी योजनाओं को बनाने में सहायता प्रदान करना, अफसरों

की टैक्नीकल प्रशिक्षा का प्रबन्ध करना तथा राज्यो और नदी घाटी अधिकारियो के लिये आर्थिक सहायता की सिफारिश करना है। इस बोर्ड ने अभी तक कच्छ मरुस्थल को रोकने का प्रयत्न किया है तथा उत्तर प्रदेश और राजस्थान मे पेड लगाये गये हैं। १७ राज्यो में ऐसे बोर्ड स्थापित हो चुके हैं।

१९५१ मे खाद्य पदार्थों के नीचे २३९.५९ मिलियन एकड भूमि थी जो १९५७-५८ मे बढकर २६७.३७ मिलियन एकड हो गई।

द्वितीय योजना काल के लिये सरकार का यह प्रयत्न है कि वह किसानो को सहकारी समितियो के द्वारा ऋण की अधिकाधिक सुविधाये प्रदान करे। सरकार किसान की फसल एकत्र करने के लिये गोदाम भी बनायगी तथा इनकी रसीद के आधार पर किसानो को ऋण भी दिया जायगा। इस कार्य के लिये सरकार ने दूसरी योजना के लिये ४० करोड रुपये रखे हैं।

अभी हाल ही मे सरकार ने फसलो को उन्नत करने का प्रचार किया है। रबी की फसल के लिये यह प्रचार ९ राज्यो मे किया गया। इस प्रचार के अन्तर्गत सरकार किसानो को समय पर उन्नत बीज व खाद देगी, बीज को कीडो से बचाने का प्रयत्न करेगी, सिंचाई की सुविधा प्रदान करेगी, उन्नत औजार प्रदान करेगी तथा ऋण देगी। इसके अतिरिक्त बहुत सी लाभदायक सूचनायें भी किसानो को दी गई तथा सामूहिक इनाम (community prizes) भी दिये गये। इसके अतिरिक्त किसानो को यह भी दिखाया गया कि उन्नत रीति से खेती करने से किस प्रकार लाभ होता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि राष्ट्रीय सरकार खेती की उन्नति के लिये हर प्रकार से प्रयत्नशील है। प्रथम योजना मे खेती को सबसे महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। दूसरी योजना मे यह स्थान उद्योग धन्धो को दिया गया है परन्तु फिर भी कृषि के महत्व को स्वीकार किया गया है।

Q 40 Distinguish clearly the principal characteristics of the Raiffeisen and the Schulz-Delitzsch types of co-operative societies

प्रश्न ४०—रैफीसन तथा शुल्ज डेलिश सहकारी समितियो की मुख्य बातो के भेद स्पष्टतया बताइये।

सहकारिता का अर्थ—सहकारिता न पूजीवाद है और न साम्यवाद, यह इन दोनो के बीच एक ऐसा प्रयत्न है जिसमे पूजीवाद के सब दुर्गुण दूर करते हुये समाजवाद के सब गुणो का प्राप्त करने का प्रयत्न किया गया है। सहकारिता आन्दोलन निर्धन तथा असहाय व्यक्तियो के लिये होता है। इनमे वे सब लोग जो आर्थिक दृष्टि मे कमजोर हो अथवा जिनको पूजीपतियो द्वारा लूटे जाने की आशङ्का हो एक साथ मिल जाते हैं और कुछ धन एकत्र करते हैं। इस धन से तथा सगठन के बल पर प्राप्त ऋण द्वारा वे अपनी आर्थिक, नैतिक तथा सामाजिक उन्नति करते हैं, और इस प्रकार अपनी योग्यतानुसार अपना पूर्ण विकास करते हैं।

सहकारी आन्दोलन का जन्म जर्मनी मे रेफीसन तथा शुल्ज डेलिश द्वारा हुआ। रेफीसन ने अपना कार्य ग्रामो तथा शुल्ज डेलिश ने अपना कार्य शहरो मे प्रारम्भ किया। क्योकि ग्राम तथा शहर के सामाजिक सगठन मे अन्तर होता है इस कारण एक से नियम दोनो प्रकार के व्यक्तियो पर लागू नही हो सकते। इस कारण हम देखते हैं कि दोनो प्रकार की सहकारी समितियो के सिद्धातो मे बहुत अन्तर है।

रेफीसन के सिद्धान्त—

रेफीसन (Raiffeisen) पद्धति के मुख्य सिद्धान निम्नलिखित हैं—

(१) इस प्रकार की समिति का कार्य-क्षेत्र बहुत छोटा होता है—एक गाव, एक व्यवसाय अथवा एक जाति, जिससे कि सब सदस्य पूर्ण रूप से एक दूसरे से परिचित हो।

(२) इस प्रकार की समिति मे कोई हिस्से (Shares) नही होते और यदि होते हैं तो बहुत कम जिससे कि लोग लाभाश (Dividend) के कारण समिति में सम्मिलित न हो और इस प्रकार निर्धन लोगो का शोषण न हो सके।

(३) इनके सदस्यो का दायित्व अपरिमित (Unlimited liability) होता है जिससे कि समिति की साख बढ जाए और सदस्य समिति के कार्य मे अधिक दिलचस्पी से भाग लें।

(४) ये समितियाँ बहुधा अपने ही सदस्यों को ऋण देती हैं और वह भी उत्पत्ति के कामो के लिये। इन कामो मे बीज, हल, बैल आदि आते हैं।

(५) ये कुछ अधिक समय के लिये ऋण देती हैं और अपने सदस्यो को किस्तो मे ऋण लौटाने की सुविधा देती हैं। इसका कारण यह है कि किसान लोग फसल के पश्चात् ही ऋण लौटा सकते हैं। खेती मे कम लाभ होने के कारण वे सब ऋण एक साथ नही लौटा सकते। इसलिये किस्तो का होना आवश्यक है।

(६) इनका एक स्थायी द्रव्य कोष (Reserve fund) होता है जिसमे लाभ नही बाटा जाता। यह इसलिये किया जाता है जिससे कि सहकारी समितिया अधिकाधिक अपने साधनो पर निर्भर रह सकें।

(७) ये अपने सदस्यो को लाभांश नही देती वरन् अपने लाभ को स्थायी कोष मे एकत्र करती रहती हैं। यह इसलिये किया जाता है जिससे कि धनी लोग लाभ के कारण इन समितियो मे न घुस जाये।

(८) इनके सब सदस्य बिना वेतन काम करते है। केवल मत्री-कोषाध्यक्ष (Secretary-treasure) को ही वेतन मिलता है।

(९) ये अपने सदस्यो के नैतिक उत्थान का भी प्रयत्न करती हैं।

शुल्ज डेलिश के सिद्धान्त—इसके विपरीत शुल्ज डेलिश सहकारी समितियो के सिद्धान्त ये हैं—

(१) इसका कार्य क्षेत्र विस्तृत होता है क्योंकि दस्तकार किसानो के समान पास-पास नही रहते। वे फैले रहते हैं।

(२) शेयर पूंजी (Shair Capital) पर अधिक जोर दिया जाता है।

(३) सदस्यो का दायित्व परिमित होता है क्योंकि वे दूर-दूर रहने के कारण एक दूसरे के विषय मे नही जान सकते। परिमित दायित्व के कारण उनको ऐसी परिस्थिति मे अधिक हानि हो सकती है।

(४) ये थोडे समय के लिये ऋण देती हैं क्योंकि दस्तकार लोग थोडे समय मे अपना सामान बनाकर तथा उसको बेचकर रुपया लौटा सकते है।

(५) इनका स्थायी कोष बहुत कम होता है क्योंकि ये लाभ को अपने सदस्यों को लाभांश के रूप मे बाट देतीं हैं।

(६) पदाधिकारियो को वेतन दिया जाता है।

(७) ये सदस्यो की नैतिक उन्नति की अपेक्षा भौतिक उन्नति पर अधिक जोर देती हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि दोनो प्रकार की समितियो मे बहुत बडा अन्तर है।

Q 41 Describe briefl the growth and working of the co-operative movement in India since 1904 What changes have been brought about in the working of the movement since then ?

प्रश्न ४१—१६०४ से भारतवर्ष मे सहकारी आन्दोलन की उन्नति तथा कार्य पद्धति सक्षेप मे लिखिये। उस समय से इसकी कार्य पद्धति मे क्या-क्या परिवर्तन हुये ?

उत्तर—भारतवष मे सहकारी आन्दोलन एक मुख्य सदेश लिये हुये है। यह ग्रामीण तथा शहरी समस्याओ का निदान करने के लिये बहुत उपयुक्त मार्ग है। जिस देश मे लोगो ने उत्तम रीति स इसको अपनाया है वहाँ पर इससे लोगो की सभी आर्थिक समस्यायें प्राय सुधर गई है। इसलिय हमारा विश्वास है कि सहकारिता से ही हमारे देश की आर्थिक उन्नति हो सक्ती है और किसी दूसरे ढङ्ग से नही।

१६०४ का कानून—इस देश म सहकारी समितियाँ सबसे पहले १६०४ ई० के सरकार साख समिति कानून (Co-operative Credit Societies Act) के अन्तर्गत चालू हुई। इससे पूव भी मद्रास आदि स्थानो पर निधि आदि खोलकर इस बात का प्रयत्न किया गया था कि लोगो की आर्थिक समस्या सुलझ जाये। पर ऐसे प्रयत्न उत्तम रीति से नही किये गए थे। इसी कारण हम यह कह सकते है कि सहकारिता का प्रारम्भ इस देश मे १६०४ के पश्चात् ही हुआ। इस कानून के अनुसार केवल साख समितिया ही स्थापित हो सक्ती थी। भारतवष मे ग्रामीण जनता की अधिकता के कारण ग्रामीण सहकारी समितियो पर अधिक जोर डाला गया। समितियो को दो श्रेणियो म बाटा गया—ग्राम तथा नगर। जिन समितियो मे कम से कम ⅘ सदस्य किसान होते थे वे ग्राम समितियाँ कहलाती थी और शेष सब नगर समितियाँ। ग्राम समितियो के सदस्यो का उत्तरदायित्व अपरिमित होता था और नगर समितियो का उत्तरदायित्व समितियो की इच्छानुसार परिमित अथवा अपरिमित हो सकता था। सरकार अपनी इच्छानुसार इन समितियो का हिसाब अपने अफसरो से निःशुल्क जचवा सक्ती थी तथा इनके काय की देखभाल के लिये इन्सपेक्टर नियुक्त कर सकती थी। सरकार ने इन समितियो को कर से बरी किया हुआ था तथा उनस कोई रजिस्ट्री की फीस भी नही ली जाती थी। ग्राम समितिया तो पूणरूप से रेफीसन के सिद्धान्त पर चलने वाली थी तथा नगर समितियाँ शुल्ज डलिश के सिद्धान्त पर।

इस कानून के पास हो जाने के पश्चात् सहकारी समितियाँ वेग से इस देश म बढने लगी। १६०६-७ म इन समितियो की सख्या केवल ८४३ थी और उनके सदस्यो की सख्या १००,८४४ थी तथा उनकी कार्यशील पूजी २३,७१,६८३ रुपये थी। १६११-१२ ई० मे समितियो की सख्या बढकर ८,१७७, सदस्यो की सख्या ४०३,३१८ तथा कार्यशील पूजी ३३५,७५,१६२ रुपये हो गई।

१९०४ के कानून के दोष—परन्तु थोडे ही दिनो पश्चात् इस कानून के कुछ दोष दृष्टिगोचर होने लगे। इसका सबसे बडा दोष यह था कि इसके अनुसार ग्राम तथा नगर समितियो का वर्गीकरण किया गया वह दोषपूर्ण तथा असुविधाजनक था। दूसरे, इस कानून मे साख समितियों के अतिरिक्त और दूसरे प्रकार की समितियाँ बनाने का कोई प्रबन्ध न था। तीसरे, उच्च श्रेणी की समितियाँ बनाने का भी प्रबन्ध न था। चौथे, पजाब तथा मद्रास आदि प्रान्तो मे जहाँ शेयर पूजी का अधिक महत्व था अपरिमित उत्तरदायित्व तथा लाभाँश देने के ऊपर रोक लगा देने के कारण बहुत ही असुविधा हुई। १९०४ ई० के कानून के इन दोषो को दूर करने के लिये सरकार ने १९१२ ई० मे एक दूसरा कानून पास किया।

१९१२ का कानून—

१९१२ ई० मे कानून मे गैर साख वाली सहकारी समितियां जैसे क्रय-विक्रय उत्पादन, बीमा, घर आदि की अनुमति दी गई। दूसरे, सहकारी समितियों को पूजी की सहायता देने तथा इनके निरीक्षण आदि के लिय नवीन सघो की व्यवस्था की गई। इनमे (१) सघ (Unions) जिनके सदस्य प्रारम्भिक समितियाँ थी और जिनका कार्य आपसी नियन्त्रण तथा हिसाब जाँचना था। (२) केन्द्रीय बैंक, जिनके सदस्य प्रारम्भिक समितियाँ तथा कुछ और व्यक्ति थे। (३) प्रान्तीय बक जिनके सदस्य कुछ बडे व्यक्ति थ, सम्मिलित थे। इस कानून मे यह आज्ञा दी गई थी कि मद्रास, पजाब प्रान्तो मे जहाँ शेयर पून्जी का बहुत महत्व था, अपरिमित दायित्व वाली समितियाँ भी लाभांश दे सकती थी। सभी समितियो का इस बात की आज्ञा दी गई कि वे अपने *लाभ का चौथाई भाग स्थायी द्रव्य कोष* (Reserve fund) मे हस्तान्तरित करने के पश्चात् लाभ का १० प्रतिशत दान, विद्या आदि कार्य के लिये व्यय कर सकती थी। इस कानून मे ग्राम तथा नगर समितियो के बदले परिमित तथा अपरिमित दायित्व वाली समितिया बनाई गई। इस कानून के अनुसार इन समितियो का दायित्व जिनके सदस्य दूसरी रजिस्टर्ड समितियाँ थी, परिमित था तथा जिनका उद्देश्य किसानो को ऋण देना था उनका अपरिमित था। इनके अतिरिक्त और जो समितियाँ थी उनका दायित्व उनकी इच्छा पर निर्भर था। इस प्रकार हम देखत है कि हमारे देश मे परिस्थिति के कारण रेफीसन का सिद्धान्त दृढता के साथ लागू न किया जा सका।

इस कानून के पास हो जाने से इस देश मे सहकारिता के आन्दोलन को बहुत प्रोत्साहन मिला। इसके पश्चात समितियो की सख्या उनके सदस्यो की सख्या तथा उनकी कार्यशील पून्जी मे बहुत वृद्धि हुई। पर यह वृद्धि सब प्रान्तो मे एक सी न थी। रैयतवारी प्रान्तो मे जैसे बम्बई, मद्रास आदि मे इस आन्दोलन ने बहुत उन्नति की। पर जमीदारी प्रान्तो मे अभी तक यह आन्दोलन बहुत कम लोगो तक पहुचा है।

मैक्लेगन समिति—

१९१४ ई० मे सरकार ने इस आन्दोलन की जाँच करने के लिये मैकलगन समिति (Maclagan Committee) नियुक्त की। इस समिति ने जाँच के पश्चात् यह बताया कि इस आन्दोलन मे कई दोष है और उनको दूर करना अत्यावश्यक है। मैक्लेगन समिति ने जो दोष बताये वह यह थे—सदस्यो का निरक्षर होना, प्रबन्ध करने वालो की स्वार्थपरता, पक्षपात, सरकार का आवश्यकता से अधिक हस्तक्षप जिसके कारण सदस्य सहकारी समितियो को 'सरकारी बैंक' समझते है, आदि-आदि।

१९१९ के सुधारो के पश्चात्—१९१९ ई० के सुधारो के पश्चात् सहकारिता प्रान्तीय सरकारो के आधीन चली गई। इसके पश्चात् प्रान्तीय सरकारो ने आवश्यकतानुसार अपने नए कानून पास करके इस आन्दोलन की उन्नति की। बम्बई मे सबसे पहले इस प्रकार का कानून १९२५ ई० मे पास किया गया। यह कानून १९१२ ई० के कानून पर आधारित था। बम्बई के पश्चात् मद्रास, बिहार तथा उडीसा प्रान्तो ने भी अपने-अपने कानून पास किये। कुछ प्रान्तो ने जैसे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा मद्रास ने जाँच समितियाँ (Enquiry Committees) नियुक्त की जिससे कि वे इस आन्दोलन की प्रगति की जाच कर सके। इन समितियो की तथा शाही कृषि कमीशन तथा प्रान्तीय और केन्द्रीय बैंक जाँच समितियो की रिपोर्ट बहुत ही लाभदायक है। इस बीच मे १९१९ मे मन्दी (*Depression*) आ गई और इसके साथ ही साथ भारत के सहकारी आन्दोलन के दुर्दिन आ गये। इस समय बहुत से प्रान्तो ने जाच समितिया बैठाई और उनके वह अनुसार सहकारी आन्दोलन का पुनर्निर्माण किया गया। इसके पश्चात् समितियो की सख्या बढाने की ओर ध्यान न देकर उनको सुधारने की ओर ध्यान दिया गया। इस काल मे आन्दोलन पर सरकारी हस्तक्षप और अधिक बढ गया। इस बीच मे रिजर्व बैंक की स्थापना हुई जिसके कारण इस आन्दोलन को बहुत ही लाभ पहुँचा। इस बैंक का कृषि साख विभाग (Agricultural Credit Department) कृषि साख की समस्याओ का अध्ययन करता है और जिन लागो की साख अथवा सहकारिता मे रुचि होती है उनको इस विभाग की बहुत सी उपयोगी सूचनाये मिल सकती है। यह विभाग समय समय पर अपनी रिपोर्ट छापता रहता है जिसमे सहकारी आन्दोलन की उन्नति का पूर्ण विवरण होता है।

द्वितीय महायुद्ध—द्वितीय महायुद्ध मे सभी वस्तुओ के मूल्य बहुत बढ गये। इस कारण सहकारी समितियो के सदस्यो की आर्थिक स्थिति बहुत कुछ सुधर गई। इसके फलस्वरूप समितियो का जो ऋण उनके सदस्यो पर था वह बहुत कुछ अशो मे चुका दिया गया और इन समितियो की स्थिति भी बहुत कुछ सुधर गई। महायुद्ध मे मध्यजनो (Middle men) से अपने आपको बचाने के लिये बहुत से उपभोक्ताओ ने उपभोक्ता सहकारी समितियो की स्थापना की। इसके अतिरिक्त

और प्रकार की गैर साख समितियाँ भी स्थापित हुई । इसके फलस्वरूप बहुत से लोगो तक यह आन्दोलन पहुच गया। युद्ध से पहले हर ४–५ गाव के पीछे एक समिति थी। पर १९४५–४६ ई० मे हर ३ ८ गावो के पीछे एक समिति हो गई। युद्ध से पूर्व केवल ६ २ प्रतिशत लोग इस आन्दोलन से लाभ उठाते थे पर १९४५–४६ ई० मे १० ६ प्रतिशत लोग लाभ उठाते थे। सन् १९४६ मे सहकारी योजना समिति (Co-operative Planning Committee) ने कुछ सुझाव पेश किये जिनके अनुसार प्रतिवर्ष लगभग २१६०० सहकारी समितियो की वृद्धि होगी। इस समिति ने यह भी सुझाव दिया कि ये समितिया बहु-उद्देश्य होनी चाहियें तथा ऐसा प्रयत्न करना चाहिये जिससे कि अगले १० वर्ष मे ५० प्रतिशत गाव तथा ३० प्रतिशत ग्रामीण जनता इस आन्दोलन स लाभ उठाने लगे। १९५१ ई० मे रिजर्व बैंक ने एक समिति नियुक्त की जिसन ग्रामीण अर्थ व्यवस्था की जाँच करके १९५४ ई० मे अपनी रिपोर्ट दी। इसने सहकारी आन्दोलन के ढाचे तथा उसकी कार्य-पद्धति पर प्रभाव डालने वाले बहुत से सुझाव दिय ह। इसने सबसे पहले बताया कि देश मे राज्य के सहयोग से सहकारी आदोलन चलना चाहिये। द्वितीय योजना मे इस प्रकार के सहकारी सहयोग को स्वीकार किया गया है।

आन्दोलन के कार्य करने के ढग मे समय-समय पर हुये परिवर्तन—

सहकारी समितियाँ इस देश मे १९०४ से चालू की गई। १९०४ के अधिनियम क अनुसार केवल साख समितियाँ ही स्थापित की जा सकती थी। समितियो को नगर तथा ग्राम समितियो मे बांटा गया था। ग्राम समितिया रेफीसन के सिद्धात पर तथा नगर समितिया शुल्ज डेलिश क सिद्धात पर स्थापित की गई थी। समितियाँ केवल एक ही उद्देश्य की पूर्ति के लिये स्थापित की जा सकती थी। १९१२ के अधिनियम के अनुसार समितियों का भेद ग्राम तथा नगर न होकर परिमित दायित्व वाली तथा अपरिमित दायित्व वाली समितियाँ हो गया। इसके अतिरिक्त सहकारी समितियाँ किसी भी कार्य क लिये स्थापित की जा सकती हैं। यही नही प्रारम्भिक सहकारी समितियो के अतिरिक्त उच्च स्तर की समितिया भी अब स्थापित की जा सकती हैं। इस प्रकार समितियो का कार्य चलता रहा। परन्तु कार्य करते-करते समय-समय पर समितियो के कार्य करने के ढङ्ग मे कुछ दोष दिखाई पडे जिनके कारण इनके कार्य करने के ढङ्ग मे बहुत से परिवर्तन हो गये हैं। उदाहरण के लिये जहाँ पहले कृषि समितिया केवल साख देने के लिये चालू की जा सकती थी वहाँ अब वे किसी भी कृषि समस्या को सुलझाने के लिये स्थापित की जा सकती हैं। यद्यपि आज भी साख समितियो की सख्या इस देश मे कुल की लगभग ७० प्रतिशत है तो भी हम कह सकते है कि इस देश मे गैर-साख समितियो की सख्या निरन्तर बढती जा रही है। इसके अतिरिक्त जहाँ पहले एक उद्देश्य समिति ही स्थापित की जा सकती थी वहा अब इस बात को विचारा जा रहा है कि सहकारी समिति को ग्राम के लोगो के सब कार्यो का केन्द्र बनाया जावे। दूसरे शब्दो मे सहकारी समितिया

बहु-उद्देश्य होनी चाहिये । यद्यपि अभी तक बहु-उद्देश्य समितिया भी केवल एक-दो कार्य ही करती हैं तो भी ऐसा अनुभव किया जा रहा है कि समितियो के कार्य का क्षेत्र बढाया जाये । ऐसी समितियों की सख्या अब बढती जा रही है । इसके अतिरिक्त पहले साख समितियो के सदस्यो का दायित्व अपरिमित होता था वहा अब परिमित दायित्व वाली समितिया बढती जा रही हैं । १९५५–५६ मे कृषि साख समितियो मे से ४१ ४ प्रतिशत समितियो के सदस्यो का दायित्व परिमित था । इसके अतिरिक्त जहाँ कृषि, साख समितियो का कार्य-क्षेत्र केवल एक गाव होता था वहा अब ३–५ मील के क्षेत्र के बहुत से गाव मिलकर समितिया बनाते है । द्वितीय पचवर्षीय योजना मे जो नई समितिया बनाई जा रही है उनका कार्य-क्षेत्र अब कई मील होता है । श्री डार्लिग ने अपनी हाल की रिपोर्ट मे बताया है कि उत्तर प्रदश मे एक समिति का क्षेत्र ३ मील मे बसे ३० गाव है, तथा राजस्थान मे ५ मील है । इसके अतिरिक्त अब समितियो का प्रबन्ध करने वाले अवैतनिक न होकर वेतन लेने वाले होते जा रहे हैं ।

श्री डार्लिग ने अपनी रिपोर्ट मे बताया है कि द्वितीय पचवर्षीय योजना म किस प्रकार रेफीसन के सिद्धान्तो का छोड दिया गया है । अपनी रिपोर्ट के पृष्ठ ८ पर उन्होने कहा है, "इस प्रस्ताव के कारण मौलिक परिवतन हो गये है—अपरिमित दायित्व वाली समितियो के स्थान पर परिमित दायित्व वाली समितिया, अवैतनिक प्रबन्ध के स्थान पर मुख्यत वैतनिक प्रबन्ध, कार्य क्षेत्र की दृष्टि से एक गाव क स्थान पर बहुत से गावो का समूह और अन्त म, परन्तु किसी प्रकार भी सबसे कम नही, सरकार का समिति मे एक हिस्सेदार के रूप म भाग लेना, वास्तव म रेफीसन सिद्धान्त जिसके ऊपर कि भारत मे कृषि सहकारी साख समितिया बनाई गई है उसको पूर्णरूप से छोड दिया गया है ।"

Q 42 Describe the structure of the co operative movement in India

प्रश्न ४२—भारतवर्ष मे सहकारी आन्दोलन की रूप रेखा लिखिये ।

उत्तर—भारत म सहकारी आन्दोलन की रूप रेखा निम्नलिखित है—
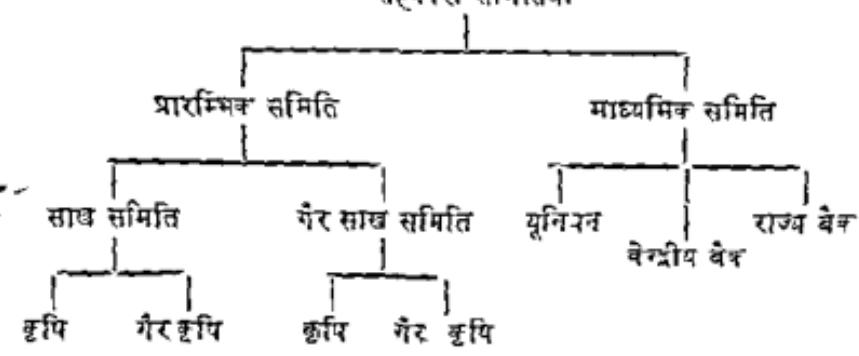
कृषि सहकारी साख समितियाँ (Agricultural Co operative Credit Societies) —इन समितियों को कोई भी दस व्यक्ति मिलकर बना सकते हैं। इन व्यक्तियों को समिति के रजिस्ट्रार मे यहा नामजद कराना पडता है। इनका कार्य क्षेत्र एक गाँव होता है। इनके सदस्यों का दायित्व बहुधा अपरिमित होता है। परन्तु अब अच्छे लोगो को समिति मे लाने के लिये कही कही दायित्व परिमित भी है और अब इस प्रकार के दायित्व वाली समितियों की सख्या बढती जा रही है। १९३९ ई० मे अपरिमित दायित्व वाली समितियो की सख्या केवल ८ प्रतिशत थी। परन्तु १९५५–५६ ई० म यह बढकर ४१ ४ प्रतिशत हो गई। इनका प्रबन्ध भी निशुल्क होता है। केवल मन्त्री कोषाध्यक्ष को ही वेतन मिलता है। परन्तु मद्रास सहकारी समिति ने १९४० म यह सुझाव दिया कि जहा तक हो प्रबन्धकर्त्ताओं को शुल्क देना चाहिये जिससे कि वे अपना पूरा समय लगाकर समिति के उत्थान के लिये प्रयत्न कर सके। इन समितियो की कार्यशील पूजी (Working Capital) सदस्यो के प्रवेश शुल्क, उनके डिपाजिट शेयर पूजी, समिति के लाभ, दूसरी समितियो के डिपोजिटस तथा ऋण, सरकार अथवा केन्द्रीय अथवा राज्य सरकारी बैंकों के लिये हुये ऋण आदि से एकत्र होती है। इसम ऋण की मात्रा बहुत अधिक होती है। ३० जून १९५८ तक ११ बडे बडे राज्यो मे कार्यशील पूजी का केवल ६ प्रतिशत से भी कम डिपोजिट था इसका अभिप्राय यह हुआ कि ये समितिया लोगो म किफायत की आदत नही डलवा रही हैं। सहकारी आन्दोलन पर दी गई १९५५–५६ की रिजर्व बैंक की रिपोर्ट म कहा गया है कि समितियो को इस ओर ध्यान देना चाहिये। ये समितियाँ बहुधा उत्पादन कार्यों के लिये ऋण देती हैं परन्तु कभी-कभी यह गैर उत्पादक कार्यों तथा पुराने ऋण को चुकाने के लिये भी ऋण देती है। ये समितिया अपने सदस्यो की सत्यता पर ही ऋण दे देती हैं। परन्तु अब ये उनसे कुछ धरोहर (Security) भी लेती है जिससे की समिति की आर्थिक स्थिति खराब न हो पाये। ये अपने लाभ को अपने सदस्यो मे नही बाटती वरन् उनको एक स्थायी कोष म एकत्र करती रहती हैं। परन्तु १९१२ ई० के कानून के पास होने के बाद ये लाभ का कुछ भाग दान तथा विद्या के लिये भी खर्च कर सकती हैं। १९५६–५७ मे इस प्रकार की समितियो की सख्या १६१५१० थी। उनकी सदस्यता ९१,१६,८४६ तथा उनकी कार्यशील पूजी ९८ ३० करोड थी। १९५६–५७ मे इन समितियो ने ०७ ३३ करोड के ऋण दिये। इस वर्ष के अन्त म इन समितियो की लेनदारी ७६ ८२ करोड रुपये थी। इस लेनदारी म से १६ ८२ करोड रुपये अर्थात् २०% की लेनदारी रुपया चुकाने के समय को पार कर चुकी थी। अपनी कार्यशील पूजी के लिये ये केन्द्रीय वित्तीय सस्थाओ पर निर्भर रहती है।

इन समितियों की ब्याज की दर बहुत ऊची होती है। बहुत से राज्यो मे यह दर १२½ प्रतिशत थी तथा मनीपुर राज्य म तो यह २१ प्रतिशत थी। परन्तु

उन राज्यो मे जहा सहकारी आदोलन की बहुत उन्नति हुई है ब्याज की दर ४ और १२ प्रतिशत क बीच म थी।

रिजव बेक की १९५६–५७ की सहकारी अन्दोलनो की रिपोर्ट से पता चलता है कि इन समितियो की स्थिति कुछ अच्छी नही है। रिपोट मे कहा गया है कि इन समितियो की सदस्यता का औसत ५६ था। एक समिति की औसत हिस्सा पूंजी केवल १२२८ रु० थी। प्रति सदस्य पूजी का औसत केवल २२ रु० था। प्रत्येक सदस्य के पीछे डिपोजिट का औसत केवल ९ रु० था। समितियों की कायशील पूजी का औसत केवल ६०८६ रु० था। तथा समितियो ने प्रति सदस्य केवल ६४ रु० का ऋण दिया। इन आकडो से पता चलता है कि न तो ये समितियाँ सदस्या म किफायत करने की आदत ही डाल रही हैं और न उनकी ऋण सम्बन्धी आवश्यकताओ को ही पूरी कर रही हैं। श्री डालिग ने अपनी रिपोट मे बताया है कि १९५५–५६ मे बिहार मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, हैदराबाद तथा पश्चिमी बगाल राज्यो मे केवल ८ प्रतिशत समितिगँ अ' 'ब श्रणी की थी।

कृषि सहकारी गैर साख समितियाँ (Agricultural Co operative non-credit Societies)—इस प्रकार की समितियो की आवश्यकता इस देश मे बहुत अधिक है परन्तु अभी तक उनकी उन्नति बहुत कम हुई है। १९५६–५७ मे इस प्रकार की समितिया साख समितियो की केवल ३१९०५ के लगभग ही थीं। इनके सदस्यो की सख्या २७ ५७,९११ थी तथा इनकी कायशील पूजी २८ ४१ करोड थी। इस प्रकार की समितिया खेती के औजार खरीदने तथा बीज खरीदने के लिये बनाई गई हैं। कहीं-कही बिक्री समितियाँ भी बनाई गई है। कही-कहीं बैलो तथ खेती के बीमे के लिय सहकारी बीमा समितियाँ भी खोली गई हैं। पजाब मे पशु पालने के लिय समितियाँ खुली हुई हैं। मद्रास तथा बगाल मे सिंचाई समतिया ह। पजाब तथा बम्बई मे सहकारी चकबन्दी समितियाँ पाई जाती हैं। अच्छी खेती को प्रोत्साहन दने के लिये बम्बई, मद्रास तथा पजाब म कुछ समितियाँ हैं।

इस प्रकार की समितियो की आज दश के लिय बहुत आवश्यकता है। इनके उन्नत हुए बिना हम किसान की आर्थिक उन्नति की कभी भी आशा नही कर सकते। जहा कही इस प्रकार की समितियाँ बनाई गई है वहाँ पर किसानो को बहुत लाभ हुआ है। इसी कारण हम आशा करते है कि भविष्य मे इस प्रकार की समितिया बहुत बड़ा लाभ पहुचाने वाली है।

गैर कृषि सहकारिता (Non Agricultural Co operation)—

साख समितियाँ (Credit Societies)—इस प्रकर की समितिया भी दश के लिय बहुत उपयोगी है। मैकलेगन समिति के मतानुसार वतमान युग मे जबकि वस्तुओ के भाव बढ़ रहे हो, मकानो की समस्या सामने हो, मजदूरी न दी जा रही हो, शिक्षा के प्रसार के कारण लोगो का जीवन-स्तर बढ रहा हो, इस प्रकार की समितियो की आवश्यकता है। दूसरे, खेती के लिये धन की आवश्यकता वर्ष के कुछ

ही महीनो मे रहती है । शेष महीनो मे केन्द्रीय तथा प्रान्तीय बैंको का रुपया बेकार पड़ा रहता है । इस रुपये को उपभोग मे लाने के लिये भी इस प्रकार की समितियो की देश मे आवश्यकता है । आज हमारे देश मे इस प्रकार की समितियो की सख्या बराबर बढती जा रही है । ये समितियाँ शुल्ज डेलिस के सिद्धान्त पर आधारित हैं।

१९५६–५७ मे इन समितियो तथा उनके सदस्यो की सख्या निम्न थी ।

समिति का प्रकार	सख्या	सदस्यता
क्रय विक्रय	२७९७ (परिमित दायित्व) ३४६ (अपरिमित दायित्व)	६,६६,५७५
उत्पादन तथा विक्रय	९७३१ (परिमित दायित्व)	७,५१,३२९
(अ) विक्रय (ब) अन्य	४५८७ (,,) ६७४ (अपरिमित दायित्व)	६,६०,०१४
उत्पादन	६८६५ (परिमित दायित्व) ११२२ (अपरिमित दायित्व)	४,६४,२०२
सामाजिक कार्य	५२४३ (परिमित दायित्व)	१,९८,७४६
गृह	५४० (,,)	१७०४५

योजना आयोग Programme evaluation organisation ने हाल ही मे इस बात की सिफारिश की है कि ग्राम समितियो को कुछ सहायता इस कारण की जानी चाहिये । जिससे कि वे किसानो को अपना माल इन समितियो को दे सकें। यह एक महत्व पूर्ण सिफारिश है क्योकि आजकल किसानो को अपनी फसल के कुल मूल्य का केवल ६० प्रतिशत ही मिलता है तथा इस पर भी उसको ब्याज देना पडता है । यह भी कहा गया है कि जैसे ही किसान अपनी फसल समिति को सौंपे तो उसको तुरन्त ही उसकी फसल के मूल्य का जितना भी अधिक अनुपात दिया सके वह देना चाहिये ।

विभिन्न प्रदेशो मे विभिन्न प्रकार की गैर कृषि साख समितियाँ पाई जाती हैं। जैसे बम्बई तथा मद्रास मे पीपिल्स बैंक हैं। ये बैंक इटली के लूजेटी बैंको के समान हैं। ये मध्य वर्ग के लोगो को आवश्यकता पडने पर धन की सहायता देते हैं। मद्रास, बम्बई तथा पजाब मे मध्य वर्ग के लोगो मे किफायत की आदत डालने के लिये मितव्ययिता समितिया पाई जाती हैं। बम्बई, मद्रास तथा बङ्गाल मे जीवन-बीमा समितिया पाई जाती हैं। दस्तकारो, जैसे जुलाहो, मोचियो, लुहारो, बढइयो, आदि को ऋण देने के लिये भी प्राय. सभी जगह समितियाँ बनी हुई हैं। इन समितियो द्वारा देश मे कुटीर तथा छोटे-छोटे उद्योग-धन्धो का बहुत प्रसार हो सकता है

इस कारण यह आवश्यक है कि इनकी सख्या बढाई जाय। बहुत से मिल क्षेत्रो मे मजदूरो ने अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये भी सहकारी समितिया बनाई है। कही-कही अछूत लोगो ने भी सहकारी समितियाँ बनाई हैं किन्तु अर्थाभाव के कारण ये समितियाँ अधिक सफलता प्राप्त नही कर सकी।

३० जून १९५७ ई० को इनकी सख्या १०१५० तथा इनके सदस्यो की सख्या ३२,३८७२७ थी। इनका हिस्सा पूजी उस समय २० ८४ करोड रुपये थी तथा इनके डिपोजिट ६४ ५९ करोड रुपय थे जो कि कुल कार्यशील पूजी के ६४ ३१ प्रतिशत थे। इससे पता चलता है कि इन समितियो मे लोग कृषि समितियों की अपेक्षा अधिक धन जमा करते है। १९५६–५७ ई० मे इन समितियो ने ८२ ०७ करोड रु० उधार दिये। ३० जून १९५७ ई० को इसमे से ७४ ९९ करोड पाना शेष था। इस धन मे से ६ १४ करोड चुकाने की तिथि को पार कर चुका था। इन समितियो ने कुछ विक्री का काय भी किया। १९५६–५७ मे इन्होंने ३ ५६ करोड का माल प्राप्त किया तथा ३ ५६ करोड का माल वेचा।

गैर साख समितियाँ (Non-credit Societies)—हमारे देश मे आज केवल कृषि समितियो अथवा गैर कृषि साख समितियो की ही आवश्यक्ता नही है वरन् और भी बहुत प्रकार की समितियो की आवश्यकता है। देश के बहु-सख्यक लोग आज धनी तथा मध्यजनो (Middle men) द्वारा लूटे तथा सताये जाते हैं। इन लोगो की सहायता यदि हो सकती है तो सहकारी समितियो द्वारा हो सकती है। गैर साख गैर कृषि समितियाँ बहुत प्रकार की हो सकती है। जैसे दस्तकार लोगो ने कच्चा माल खरीदने तथा पक्का माल वेचने के लिये अपनी समितियाँ बना रक्खी है। कही उपभोक्ता समितियाँ पाई जाती है। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व उपभोक्ता समितियाँ बहुत कम सख्या में थी। परन्तु महायुद्ध मे चोर बाजारी करने वालो से

समिति का प्रकार	सख्या	सदस्यता
क्रय विक्रय	५७७८ (अ) १ (ब)	११,१०,६६०
उत्पादन तथा विक्रय	१२,१६९ (अ) १८४ (ब)	१२,४१,९२२
उत्पादन	४४०६ (अ) ६६ (ब)	४,४४,२२२
सामाजिक कार्य	२,५६९ (अ) ३२२ (ब)	१,५२,४२७
गृह	३०७९ (अ) २ (ब)	२,०६,९२२
बीमा	६ (अ)	७८६७

(अ) परिमित दायित्व वाली (ब) अपरिमित दायित्व वाली

अपने आपको बचाने के लिये उपभोक्ताओं ने बहुत से स्थानो पर इस प्रकार की समितियाँ बनाई हैं। १९३८–३९ तथा १९४५–४६ के बीच उपभोक्ता समितिया की सख्या आसाम मे १३ से बढकर १०१३, बम्बई मे २५ से ६१२, मद्रास मे ८५ से १७४० तथा उडीसा मे ९ से ३७१ हो गई। उत्तर प्रदेश मे भी इन समितियो की सख्या बहुत तेजी से बढी। बहुत से स्थानो मे गृह समितियाँ (Housing Societies) भी बनाई गई हैं। ये समितियाँ बम्बई, मैसूर तथा मद्रास मे पाई जाती हैं। दूसरे स्थानो पर भी यह समितियाँ बढती जा रही हैं। इन समितियो से उन लोगो को बहुत लाभ है जो अपना मकान बनाना चाहते हैं पर उनके पास ऐसा करने के लिये पर्याप्त मात्रा मे धन नहीं होता है। इसी प्रकार और बहुत सी समस्याओ का निदान करने के लिये सहकारी समितिया बनाई जा सकती हैं।

केन्द्रीय समितिया (Central Societies)

केन्द्रीय समितियाँ तीन प्रकार की होती हैं—यूनियन, केन्द्रीय बैंक तथा राज्य बैंक। यूनियनो की सदस्यता केवल प्रारम्भिक समितियो के लिय खुली है। किन्तु केन्द्रीय बैंक तथा राज्य बैंको के सदस्य प्रारम्भिक समितियाँ तथा कुछ और व्यक्ति भी होते हैं।

यूनियन—ये तीन प्रकार की होती हैं—(१) जिम्मेदारी लेने वाली (Guaranteeing) जैसे बम्बई म, (२) देख-भाल करने वाली (Supervising) जैसे मद्रास तथा बम्बई मे, (३) बैंकिंग, जैसे पजाब मे।

यूनियन पाच या पाच से अधिक समितियो का एक सघ होता है जो पाच से आठ मील के क्षेत्रफल मे काम करता है। इसका प्रबन्ध सदस्य समितियो के प्रतिनिधियो की एक समिति द्वारा होता है। यूनियन प्रारम्भिक सदस्यो तथा केन्द्रीय बैंको के बीच एक श्रृखला का कार्य करती है। १९५५–५६ मे भारत मे देखभाल करने वाली ५८२ यूनियन थी जिनके ३९२५९ सदस्य थे।

केन्द्रीय बैंक (Central Bank)—हमारे देश मे केन्द्रीय बैंकों की बहुत आवश्यकता है क्योकि प्रारम्भिक समितिया इतना धन एकत्र नही कर सकती जितना कि उनको चाहिये। इस कारण उनको अपना काम चलाने के लिये ऋण लेने की आवश्यकता पडती है इन समितियों को व्यापारिक बैंक ऋण नही देते। इसी कारण इन समितियो को ऋण देने के लिये विशेष प्रकार के सहकारी बैंको की आवश्यकता है जो कि रुपया एकत्र करके समितियो को ऋण के रूप मे दे सकें। १९०४ ई० के सहकारी साख समिति ऐक्ट मे इस प्रकार के बैंक बनाने के लिये कोई प्रबन्ध नहीं किया गया था। परन्तु शीघ्र ही सरकार को यह अनुभव हुआ कि सहकारी केन्द्रीय बैंकों का स्थापित करना बहुत ही आवश्यक है। इसी कारण १९१२ ई० के एक्ट मे इन बैंको को स्थापित करने का आयोजन किया गया।

केन्द्रीय बैंक का मुख्य कार्य प्रारम्भिक समितियो को ऋण देना है। यह ऋण या तो ये बैंक सीधे समितियो को दे देते हैं या जहाँ कही जिम्मेदारी लेने

वाली यूनियन हैं उनके द्वारा देते है। कही-कही ये बैंक समितियो की देख-भाल का कार्य भी करते हैं। यह कार्य बहुधा उसी अवस्था मे किया जाता है जबकि ये बैंक किसी प्रारम्भिक समिति के हिस्सेदार हो। ये बैंक बहुधा एक जिले या एक बडे ताल्लुके म कार्य करते हैं।

केन्द्रीय बैंक तीन प्रकार के होते हैं-- पूजी वाले, मिश्रित तथा शुद्ध। पूँजी वाले बैंक मे केवल व्यक्ति ही होते हैं। मिश्रित मे व्यक्ति तथा समितियां और शुद्ध मे केवल समितियां ही होतो हैं। भारतवर्ष की वर्तमान स्थिति मे मिश्रित बैंक ही सबसे उपयुक्त है क्योकि इस प्रकार के बैंक मध्यम श्रेणी के लोगो का धन एकत्र कर सकते हैं और इन लोगो के अनुभव से लाभ उठा सकते हैं और अवसर आने पर ये अपने आप को शुद्ध बैंको मे बदल सकते हैं।

केन्द्रीय बैंक बहुत से वह कार्य भी करते हैं जो व्यापारिक बैंक करते हैं, जैसे बम्बई तथा मद्रास मे ये बैंक लोगो का रुपया जमा के रूप मे रखते हैं, उनके बिलो, चैको तथा हुण्डियो का रुपया एकत्र करते हैं, ड्राफ्ट तथा हुन्डियाँ जारी करते हैं, मूल्यवान वस्तु को सुरक्षा के लिये रखते हैं, लोगो को धरोहर के बदले ऋण देते हैं, आदि-आदि।

१९४०-४१ मे ब्रिटिश भारत में ६०१ बैंक तथा बैंकिंग यूनियन थी। उनके सदस्य ७९८३४ व्यक्ति थे तथा १२१,२६२ समितियाँ थी। उनकी कार्यशील पूजी ३ ६७ करोड (९ प्रतिशत), स्थायी कोष ४ ३७ करोड (१४ प्रतिशत), व्यक्तियो तथा समितियो द्वारा जमा किया हुआ धन १७ ९२ करोड (६० प्रतिशत), प्रान्तीय बैंको से लिया हुआ ऋण ४ ५० करोड (१५ प्रतिशत) और सरकार से लिया हुआ ऋण ४३८ करोड (२ प्रतिशत) था। इस प्रकार उनकी कार्यशील पूजी मे ७६ प्रतिशत ऋण था। इस ऋण मे से ५७ करोड तो व्यक्तियो पर तथा १८ ३१ करोड समितियो पर था। दूसरे शब्दो मे, सैन्ट्रल बैंको द्वारा लिए हुए ऋण का ८५ प्रतिशत उन्होंने ऋण के रूप मे व्यक्तियो तथा समितियो को दिया हुआ था। इस दिये हुये ऋण का बहुत सा धन तो मर चुका था और बहुत से का बहुत दिनो से भुगतान नही हुआ था। इसी कारण इन बैंको की दशा बहुत खराब थी। गत वर्षो मे किसानो की स्थिति सुधर जाने के कारण इन बैंको की स्थिति सुधर गई है। इन बैंको मे डिपोजिट तथा कार्यशील पूजी की भी वृद्धि हुई है। १९५४-५५ मे इनकी सख्या ४८५, कार्यशील पूजी ७३ ६९ करोड तथा दिये गये ऋण ६८ १७ करोड रुपये थे। इनके सदस्यों की सख्या २ ७२ लाख थी तथा इनका द्रव्य कोष ६.१४ करोड रुपये था परन्तु १९५५-५६ में इनकी सख्या घटकर ४७८ रह गई। सख्या मे कमी का कारण यह था कि कुछ राज्यो मे कमजोर बैंको को दूसरो से मिला दिया था। परन्तु ऐसा करने से न तो सदस्यो की सख्या में कमी हुई, न कार्यशील पूजी मे और न दिये गये ऋण मे। १९५५-५६ मे इनकी सदस्यता २,९९५५५ थी जिनमे १४४००६ व्यक्ति तथा १५५५४९ समितियां थी। इनकी

सहकारी आन्दोलन की प्रगति (१९५६–५७)

	कुल समितियाँ	राज्य बैंक	केन्द्रीय बैंक व यूनियन	प्रारम्भिक कृषि साख समितियाँ	प्रारम्भिक कृषि गैर साख समितियाँ	प्रारम्भिक गैर कृषि साख समितियाँ	प्रारम्भिक गैर कृषि गैर साख समितियाँ
संख्या	२४४,७६६	२३	४८१	१६१,८१०	३१६०८	१०१५०	२८५१६
सदस्यों की संख्या	१ ६३,७३,२४६	३३४४०	३,१०,५११	६१,१६,८४६	२७,८७,६११	३२ ३८,७२७	३१,५६,१५३
कार्यशील पूँजी	५६७,६७ लाख रु०	७६५४ लाख रु०	१,१०,२६ लाख रु०	६८३० लाख रु०	N A	N A	N A
प्रारम्भिक समितियों द्वारा दिये गये ऋण	१७३ १६ करोड रु०	१२३ ७१ करोड रु०	१०० ८० करोड रु०	६७ ३३ करोड रु०	N A	८२ ०७ करोड रु०	N A
लाभ	८५८ ३८ करोड रु०	१५८ २६ लाख रु०		१८६,८० लाख रु०	७४ ६८ लाख रु०	१८८,२७ लाख रु०	६५ ८८ लाख रु०

N A = Not Available

कायशील पू जी ९२ ६७ करोड रु० थी जिसमे से १५ १५ करोड अर्थात् १६ ४ प्रतिशत अपना धन, ५५ ७१ करोड रु० अर्थात् ६० १ प्रतिशत डिपोजिट था। इन्होने ७९ ८३ करोड के ऋण दिये जिनमे से ७० ४० करोड समितियो तथा बैको को तथा ९ ४४ करोड रु० व्यक्तियो को दिये। १९५६–५७ मे इनकी सख्या और भी घट गई। अब इन बैको की सख्या केवल ४५१ हो गई तथा उनके सदस्यो की सँख्या ३,१०,५५५ हो गई। इनकी कार्य शील पू जी बढकर ११० २६ करोड रु० हो गई। इस वर्ष मे इन्होने १०० ८० करोड रु० के ऋण दिये। इनमे से जून १९५७ ई० के अन्त तक व्यक्तियो को ३ ८६ करोड रु० देने थे तथा बैको और समितियो को ६८ ०४ करोड रु०। ऋण चुकाने की अवधि तो पार हो गये ऋणो का प्रतिशत व्यक्तियो के लिये २१ ३ तथा बैको तथा समितियो के लिये १२ ५ था। इन बैको ने १९५६–५७ के अन्त मे २९ ०५ करोड रुपये सरकारी तथा दूसरी धरोहर मे लगा रखे थे।

केन्द्रीय बैक न केवल साख वाले ही होते हैं वरन् गैर साख वाले भी होते थे। उनकी सख्या तथा सदस्यता नीचे दी गई है।

केन्द्रीय गैर-साख समितिया

समितियो के प्रकार	सख्या	सदस्यता	
		व्यक्ति	समितियाँ
बिक्री यूनियन तथा सस्थाये	२३३६	१९,६६,६७२	४०,८३४
थोकस्टोर तथा पूर्ति यूनियन	१९६	२८,५८३	१८,८१२
औद्योगिक यूनियन	११२	११,९१४	४६५७
गृह समितियाँ	२	—	१४०
दुग्ध यूनियन	६९	९७२०	१३०८
अन्य	२३२	३१९८९	८२७३

केन्द्रीय बैको ने कुछ गैरस रकारी साख सम्बन्धी काय, जैसे अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन को सहायता, उपभोक्ताओ के लिये उचित मूल्य पर आवश्यक वस्तुओ का प्रबन्ध आदि किया है। परन्तु सभी स्थानो पर इनकी प्रगति समान रूप से नही हुई है। मद्रास, बम्बई तथा पजाब आदि मे इन बैको ने खूब प्रगति की है। परन्तु बङ्गाल मे उन्होने कोई विशेष प्रगति नहीं की और बिहार म तो इनकी स्थिति बहुत शोचनीय है।

राज्य सहकारी बैक (State co operative Banks)—राज्य सहकारी बैक भारतीय सहकारी आन्दोलन का एक प्रमुख अङ्ग है। मैक्लेगन समिति ने उनकी स्थापना पर बहुत जोर दिया था और तब से प्राय सभी राज्यो मे ये बैक स्थापित हो चुके हैं। ये बैक केन्द्रीय बैको तथा कही कही समितियो को भी ऋण देते हैं। यदि ये बैक स्थापित न होते तो केन्द्रीय बैको को कठिनाई का सामना करना

पड़ता क्योंकि व्यापारिक बैंक उनको ऋण देना नही चाहते। परन्तु व्यापारिक बैंक राज्य सहकारी बैंको को बिना किसी हिचक के ऋण दे देते हैं। इस प्रकार ये बैंक भारतीय मुद्रा बाजार तथा सहकारी समितियो के बीच मे सम्बन्ध स्थापित करते है। आवश्यकता पड़ने पर ये बैंक रिजर्व बैंक के कृषि साख विभाग से भी ऋण ले सकते हैं। इन बैंको के सदस्य या तो केन्द्रीय बैंक होते है या व्यक्ति होते हैं। १९४०-४१ मे इन बैंको की सख्या ८ थी उनके सदस्य ४५३७ व्यक्ति थे। तथा १८,८३८ समितिया थी, उनकी कार्यशील पूजी १३.७९ करोड थी। परन्तु १९५६-५७ मे इनकी सख्या २३ थी। इनके सदस्य ३३४४० थे तथा उन्होंने १२३.७१ करोड रुपये का ऋण दिया था। उस वर्ष उनकी कार्यशील पूजी ७९.५४ करोड रुपये थी। इनमे केवल ८.७९ करोड अपना धन था तथा डिपोजिट ३८.३९ करोड रुपये थे।

Q 43 Discuss the steps taken in recent years to reorganise rural credit co-operation in Uttar Pradesh,

प्रश्न २३—उत्तर प्रदेश मे पिछले कुछ वर्षों मे ग्रामीण साख सहकारिता को पुन. संगठित करने के लिये क्या किया गया है ?

१९४६ ई० तक उत्तर प्रदेश मे सहकारी आन्दोलन केवल साख आन्दोलन था। परन्तु १९४७ ई० से इसमे हर प्रकार से उन्नति करने की बात सोची गयी। इसके फलस्वरूप यह प्रयत्न किया गया कि सहकारी आन्दोलन को प्रत्येक आर्थिक समस्या को सुलझाने के काम मे लाया जाय। इसी कारण ग्राम समितियो ने बहु-उद्देश्य समितियो का रूप धारण कर लिया और राज्य मे बहुत सी गैर-साख सहकारी समितियां स्थापित हो गई। सहकारी समितियो के आजकल के ढाचे का रूप इस प्रकार है—सबसे नीचे एक ग्राम समिति होती है। उसके ऊपर १५-२० गावो की एक ब्लाक यूनियन होती है। जिला-स्तर पर एक जिला सगठन होता है तथा राज्य-स्तर पर एक राज्य सगठन होता है।

प्रथम पचवर्षीय योजना मे मुख्यत इस बात पर ध्यान दिया गया कि सहकारी समितियो को उन्नत किया जाय। इसी कारण योजना मे बहु उद्देश्य सहकारी समितियो, सहकारी बीज गोदामो, सहकारी खेती-समितियो तथा सहकारी दुग्ध यूनियनो की स्थापना की योजना बनाई गई।

द्वितीय योजनाकाल के लिये जो योजना बनाई गई है वह अखिल भारतीय साख सर्वे रिपोर्ट के सुझावो को ध्यान मे रखकर बनाई गई है। अब राज्य मे बड़ी-बड़ी समितियां बनाई जाती हैं। अब यह प्रयत्न किया जा रहा है कि साख समिति को फसल की बिक्री का कार्य भी सौंपा जाय। द्वितीय योजना काल मे १५०० बड़ी-बड़ी समितियां बनाई जाने वाली हैं जिनमे से १९५६-५७ तक ३०० स्थापित की

जा चुकी हैं। इन समितियों का कार्य-क्षेत्र एक गाँव से बढ़ाकर कई गाँव बना दिया गया है जिससे कि आर्थिक दृष्टि से वे मजबूत रहें। भविष्य में २६ जिलों की ५० मण्डियों के आस पास जो समितियाँ ऋण देने का कार्य करेंगी उनकी एक शर्त यह होगी कि ऋण लेने वाले सदस्य अपनी फसल को बिक्री समिति के द्वारा करायें।

राज्य में ५४००० कृषि साख समितियाँ हैं जिनकी सदस्यता १४ लाख है तथा जिनकी अपनी पूंजी ४ करोड तथा कार्यशील पूंजी ८४६ करोड रुपये है। १९५५-५६ में इन समितियों ने ५ ५८ करोड के ऋण बाटे। ऐसी आशा की जाती है कि योजना के अन्त तक ऋण की मात्रा छ गुनी हो जायगी। ये समितियां अन्तिम ऋण लेने वालो से ८½ प्रतिशत ब्याज लेते हैं। राज्य के ६१ केन्द्रीय सरकारी बैंक समितियो से ६¼ प्रतिशत ब्याज लेते हैं। इन केन्द्रीय बैंको के वर्तमान डिपोजिट व्यक्तियो से २.६३ करोड रुपये तथा समितियों से १ करोड रु० हैं।

रिजर्व बैंक की (Committee of Direction) की सिफारिश के अनुसार उत्तर प्रदेश ने निश्चय किया है कि वह State Agricultural Credit (Relief and Guarantee) Fund तथा State Co-operative Development Fund स्थापित करेगी। इन कोषों के लिये धन वार्षिक बजट मे प्रबन्ध करके तथा विभिन्न सहकारी साख समितियो मे सरकार द्वारा लगाए गये धन पर प्राप्त लाभांश से एकत्र किया जायगा। इस प्रकार इस राज्य मे सहकारी साख आन्दोलन मे बहुत अधिक परिवर्तन हो गया है।

Q 44 In what ways will a multi-purpose society, popularly known 'the village bank, prove more succesful than the common type of rural credit society is improving Indian 'village economy ?

प्रश्न ४४—किस प्रकार एक बहुउद्देश्य समिति जिसको साधारणतया 'गाँव के बैंक' के नाम से जाना जाता है भारतीय ग्राम अर्थ-व्यवस्था को सुधारने में एक साधारण ग्राम साख समिति से अधिक सफल सिद्ध होगी ?

अभी कुछ वर्षो से हमारे देश मे एक चर्चा है कि सहकारी समितियाँ एक उद्देश्य होनी चाहियें अथवा बहुउद्देश्य। ऐसा प्रसङ्ग इसलिये आया क्योंकि हमारे देश मे अभी तक एक उद्देश्य समितियाँ हैं जिनसे किसान की आर्थिक उन्नति मे कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ। इसी कारण लोग अब यह सोचने लगे हैं कि ऐसा क्यों है। इसका उत्तर उन्हें सहज ही मिल सकता है। किसान साख समितियों से ऋण लेकर उसको या तो खेती के काम मे लाता ही नही और यदि लाता भी है

तो जो कुछ वह उत्पन्न करता है उसको गाव के बनिये के हाथ बेचने के कारण कोई लाभ नही उठा सकता। साख समितियो के होते हुये भी आज किसान को गाव के बनिये के यहा बहुत से कामो के लिये जाना पडता है, जैसे वह उससे बीज खरीदता है, उपभोग कार्यों के लिये ऋण लेता है, खेत पर कोई स्थायी उन्नति करनी हो तो उसके लिये उससे ऋण लेता है और उसको अपनी फसल बेचता है। इसी कारण यद्यपि साख समितियां इस देश में पिछले ५५ वर्षों से काम कर रही हैं पर वे किसान की आर्थिक स्थिति मे कोई परिवर्तन न कर सकी। यही कारण है कि इस देश मे अब यह विचारधारा बडे जोरो से घर कर रही है कि सहकारी समितियाँ एक उद्देश्य न होकर बहु-उद्देश्य होनी चाहियें। रिजर्व बैक के कृषि साख विभाग का मत है कि यदि भारत मे सहकारी आन्दोलन को नष्ट-भ्रष्ट होने से बचाना है तो गाव के सहकारी बैक को सब आवश्यकताओ को पूरा करने वाला बनाना चाहिये। १९३९ ई० की एक सभा मे सहकारी समितियो के रजिस्ट्रारो ने एक प्रस्ताव पास किया था जिसमे उन्होंने इस बात की सिफारिश की थी कि देश मे बहु-उद्देश्य सहकारी समितियाँ खोली जानी चाहियें। मद्रास सहकारी समिति १९४० ने भी बहु-उद्देश्य समितियो के मे पक्ष अपनी अनुमति दी थी। इसी प्रकार की राय देश के बहुत से लोग रखते हैं। ससार के कुछ और देश भी जैसे जर्मनी, फिनलैंड, न्यूजीलेंड, स्वीडन आदि भी बहु-उद्देश्य समितियो के ही पक्ष मे हैं।

बहु-उद्देश्य समितियो के लाभ

एक उद्देश्य समितियाँ डेनमार्क को छोडकर कही और अधिक फसल नही हुई है। हमारे देश मे भी इस प्रकार की समितियाँ असफल ही सिद्ध हुई है। इसका कारण यह है कि यहाँ पर अभी तक साख समितिया ही चालू की गई है। इन साख समितियो से किसान के जीवन की केवल ऋण की ही आवश्यकता पूरी होती है। शेष आवश्यकताओ को पूरा करने के लिये उसे महाजन के पास ही जाना पडता है। इस कारण यह महाजन के चगुल से नही निकल सकता। इसलिये यदि हम किसान की आर्थिक स्थिति उन्नत करना चाहते हैं तो हमको उसकी सभी आवश्यकताओ की ओर ध्यान देना पडेगा। दूसरे शब्दो मे, हमको उसके ऋण देने के अतिरिक्त बीज, खाद, बैल, हल आदि का भी प्रबन्ध करना पडेगा। जब उसकी फसल तैयार हो जाय तो उसके ठीक समय, ठीक स्थान तथा ठीक मूल्य पर बेचने का भी प्रबन्ध करना पडेगा। उसको उपभोग की वस्तुओं को भी उसे उचित मूल्य पर देना पडेगा। यदि उसके पास खेती से कुछ समय बचता है तो उस समय का सदुपयोग कराने के लिये उसे कुटीर तथा छोटे धन्धो मे भी लगाना पडेगा। इस प्रकार हमको उसके जीवन की हर आवश्यकता की ओर ध्यान देना होगा। ऐसा करने के लिये या तो एक गाव में बहुत सी बहु-उद्देश्य समितियाँ खोली जा सकती हैं या एक बहु-उद्देश्य समिति खोली जा सकती है। हमारे देश मे अभी योग्य प्रबन्ध करने वालो की बहुत कमी है। इसी कारण यह हो सकता है कि गाव मे यदि बहुत सी

एक उद्देश्य समितिया खोली जायें तो उनका प्रबन्ध करने के लिये अच्छे व्यक्ति न मिलें। दूसरे, अभी तक किसान अपनी सभी आवश्कताओ को एक महाजन से पूरी कर लेता था। इसलिये यदि उसे बहुत सी समितियों का सदस्य होना पडा तो वह उसको पसन्द न करेगा। तीसरे, यदि हम यह चाहते हैं कि किसान समिति के लिये हुए ऋण का सद्उपयोग करे तो हमको चाहिये कि हम उसको बीज, खाद, हल, बैल आदि सभी चीजें उचित दामो पर दें और उसकी फसल को भी सहकारी समिति द्वारा ही बेचने का प्रबन्ध करें। १९५६ ई० की सहकारी योजना समिति की भी यही राय है।

यदि किसान के हित के लिये गाव मे एक बहु-उद्देश्य समिति चालू हो जायगी तो किसान उसमे खूब दिलचस्पी लेगा। वह उसकी उन्नति के लिये भी प्रयत्न करेगा। इसके कारण किसानो के सम्बन्ध एक दूसरे से बहुत अच्छे होने की सम्भावना है। बहु उद्देश्य समिति के चलाने के खर्च मे भी बहुत कमी हो जायगी। इस समिति के द्वारा किसानो मे शिक्षा का प्रचार करना भी सहज हो जायगा।

जहाँ बहु-उद्देश्य समितियो से इतना लाभ होने की आशा है वहाँ उनसे कुछ हानि भी हो सकती है, जैसे बहुत से कार्य एक साथ करने से यदि एक कार्य मे भी हानि हो जाय तो उससे सभी कार्यों को धक्का लगेगा। दूसरे यह आशका है कि इतने सब उद्देश्य रखने वाली समिति को चलाने के लिये योग्य व्यक्ति न मिल सकें। तीसरे अपरिमित दायित्व के कारण इन समितियो को ऋण लेने मे कठिनाई होगी और उनके सदस्य भी समिति के उत्थान मे कम रुचि रखेंगे।

परन्तु इन सब बातो के होते हुये भी आज देश मे अधिकतर लोगो की यह राय है कि बहु-उद्देश्य समितियाँ ही चालू करनी चाहियें। ऐसा विचार इसलिये है कि दूसरे देशो मे जहाँ कहीं इस प्रकार की समितिया चालू की गई हैं वहाँ उनसे बहुत लाभ पहुचते हैं।

हमारे देश मे मद्रास, बम्बई तथा उत्तर प्रदेश राज्यो मे इन समितियो को बहुत प्रोत्साहन दिया जा रहा है। १९४७-४८ मे भारतवर्ष मे १८१६२ ऐसी समितियाँ थी। उनके सदस्यों की सख्या ५७७२८६ तथा उनकी कार्यशील पूजी २७९ २८ लाख रुपये थी। इन समितियो की सबसे अधिक प्रगति उत्तर प्रदेश मे हुई है जहाँ पर १९४९ मे २२७८६ ऐसी समितियाँ थी। उनके सदस्यो की सख्या ७ ३ लाख तथा उनकी कार्यशील पूजी २ ८६ करोड रुपय थी सारे देश मे १९४९-५० मे २०,५२५ समितियाँ थीं तथा उनके सदस्यो की सख्या १ ५ करोड थी।

एक बात यहां पर बताने योग्य है और यह है कि अभी तक बहु-उद्देश्य समितियां केवल आवश्यक वस्तुओ के वितरण का ही कार्य करती हैं। इतने कार्य मे कोई अधिक लाभ नही होगा। इस कारण यह आवश्यक है कि इन समितियो को

अपने कार्य क्षेत्र को बढ़ाना चाहिये। यदि वे ऐसा न करेंगी तो किसान की आर्थिक स्थिति मे कोई विशेष उन्नति न होगी।

Q. 45. What are the achievements and defects of the co-operative movement in India? How will you remove the defects?

प्रश्न ४५—भारतवर्ष में सहकारी आन्दोलन के लाभ व दोष क्या हैं? आप उन दोषों को कैसे दूर करेंगे?

सहकारी आन्दोलन के लाभ—

उत्तर—यद्यपि हमारे देश मे सहकारी आन्दोलन ने अभी तक बहुत कम प्रगति की है तो भी इससे निम्नलिखित लाभ हुये हैं—

(१) ब्याज की दर होना—सहकारी समितियो के स्थापित होने के पूर्व गाँव के महाजन किसानो तथा दस्तकारो से मनमाना ब्याज लिया करते थे परन्तु इन समितियो के स्थापित होने से उनके ब्याज की दर बहुत गिर गई है।

(२) लोगों मे मितव्ययिता की आदत का फैलना—इन समितियो के स्थापित होने से शहरो और गावो मे लोगो मे बचत करने की आदत बढ रही है। प्रम प्रकार जो धन पहले उपयोग मे नही आता था वह अब बहुत से उत्पादक कामों मे आता है।

(३) खेती को लाभ—सहकारी समितियो के द्वारा किसानो मे अच्छे बीज, खाद पशु, औजार आदि का प्रचार बढ़ रहा है।

सहकारी समितियो द्वारा गाँवो में सफाई का प्रचार बढ़ता जा रहा है। जो खाद पहले खुले तौर पर गाव मे एकत्र की जाती थी वह अब गड्ढो मे भर कर रखी जाती है। इससे गाँव मे सफाई का स्तर ही ऊँचा नही होता वरन् अच्छी खाद भी तैयार हो जाती है। इसके अतिरिक्त इन समितियो द्वारा पशुओ के रोगो का इलाज भी किया जाता है।

गैर-साख-कृषि समितियो से भी खेती को बहुत लाभ पहुँच रहा है। इस प्रकार की समितियो मे बम्बई की रूई समितियाँ, बङ्गाल की सिंचाई तथा दूध समितिया मध्य प्रदेश की दूध तथा बीज समितियाँ, पजाब की चकबन्दी समितिया उत्तर प्रदेश तथा बिहार की गन्ना समितियाँ, बम्बई की गुड समितिया मुख्य हैं।

(४) शिक्षात्मक लाभ—अच्छी समितियो मे सदस्य बडी दिलचस्पी से काम करते हैं। वे समिति के कार्य मे खूब लगन से भाग लेते हैं। वे ध्यानपूर्वक यह देखते हैं कि सदस्य किस प्रकार ऋण का उपभोग करते हैं। इस प्रकार साधारण सदस्य को अपने धन के प्रयोग तथा सदस्यो के ऊपर नियन्त्रण करने की शिक्षा मिलती है और प्रबन्ध सदस्यो को हिसाब रखने की शिक्षा मिलती है। इस प्रकार इन समितियो को ग्रामीण वित्त व्यवस्था का प्राइमरी स्कूल समझना चाहिये।

(५) नैतिक तथा सामाजिक लाभ—आर्थिक तथा शिक्षात्मक लाभ से भी अधिक इनका नैतिक तथा सामाजिक लाभ है। सहकारी समितियो के कारण गांव के लोगो के झगडे बहुत कुछ समाप्त हो गये हैं तथा उनमे प्रेम बढता जा रहा है। वे अब ये जान गये हैं मिलजुल कर सामान्य लाभ के लिये कैसे कार्य किया जाय। सदस्यो मे प्रेम बढ जाने से उनकी मुकदमेबाजी समाप्त हो रही है। इससे उनकी फिजूल खर्ची, जुआ खेलने, शराब पीने आदि की आदतें समाप्त होती जा रही हैं। इनके स्थान पर उनमे आत्म विश्वास, पुरुषार्थ, उचित व्यवहार, मितव्ययिता, स्वय सहायता तथा आपसी सहायता की आदत बढती जा रही है।

इस प्रकार सहकारी समितियो ने सदस्यो की निर्धनता दूर करने, ब्याज की दर कम करने, चकबन्दी करने, मितव्ययिता बढाने, आवश्यक उपभोग की सामग्री का मूल्य कम करने तथा फिजूलखर्ची कम करने मे बडी सहायता की है।

सहकारी आन्दोलन के दोष
(Defects in the Co-operative Movement)

जिस समय सहकारी साख आन्दोलन इस देश मे चालू किया गया था उस समय इससे बडी आशायें बाधी गई थी। यह आशा की जाती थी कि इसके द्वारा किसानो मे मितव्ययिता की आदत पड जायेगी और वे अपने पैरो पर खडा होना सीख जायेंगे। इसके अतिरिक्त यह भी आशा की जाती थी कि इसके द्वारा किसानो के ऋण की समस्या भी सुलझ जायेगी। पर खेद का विषय है कि पिछले ५५ वर्षों मे इस आन्दोलन से उतना लाभ न हो सका जितनी कि इससे आशा की जाती थी। १९५६-५७ मे केवल २५ प्रतिशत लोग इस आन्दोलन से लाभ उठा रहे थे। इसका कारण यह है कि इस आन्दोलन मे निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं जिनके कारण उसकी अधिक उन्नति न हो सकी।

(१) सरकारी हस्तक्षेप—इस आन्दोलन का पहला दोष यह है कि इसके ऊपर सरकारी नियन्त्रण अभी तक भी इतना अधिक है कि सहकारी समिति के सदस्य समितियो को सरकारी बैंक समझते हैं। यह भावना सहकारिता के लिये बहुत घातक है क्योकि इसके कारण सदस्य समितियो की उन्नति के लिये उतना प्रयत्न नही करते जितना कि उन्हे करना चाहिए। सहकारी समितियो के रजिस्ट्रार को इस देश मे इतनी शक्ति है कि सहकारी समिति के सदस्य स्वय इच्छा से कुछ भी कार्य नही कर सकते। इस कारण उनकी स्वेच्छा से कार्य करने की भावना नष्ट हो जाती है और समितियो की उतनी उन्नति नही होने पाती जितनी कि होनी चाहिये।

सरकारी हस्तक्षेप की निन्दा करते हुए श्री एम डार्लिङ्ग ने अपनी एक हाल ही रिपोर्ट मे कहा है, उच्चतम स्तर पर इसके पक्ष मे/बहुत कुछ कहा जा सकता है परन्तु प्रारम्भिक स्तर पर, जहा तक मितव्ययी तथा साख समिति का सम्बन्ध है, प्रत्येक तजुर्बेकार सहकारी इसको चिन्ता की दृष्टि से देखेगा, क्योकि

इसके कारण केवल स्वतन्त्रता तथा आत्म-विश्वास को क्षति पहुचने की सम्भावना है जो कि आधार पर आन्दोलन की शक्ति के लिये आवश्यक हैं   ।"

यह नही, राष्ट्रीय विकास काउन्सिल की स्टैंडिग कमेटी की छठी बैठक मे प० नेहरू ने भी इस सरकारी हस्तक्षेप की निन्दा करते हुए कहा था, "   मैं सरकारीकरण के सारे विचार से बहुत अधिक परेशान हू। अपन छोट-छोटे कार्य करने वालो को सब ओर बढाने का सारा विचार मूल रूप से खराब, शरारत से भरा हुआ तथा गलत है, और जो चीज मुझे डराती है वह ढङ्ग है जिससे कि यह सब जगह ग्राम पचायतो तथा सहकारी समितियो मे फैलता है।" इसके पश्चात् प० नेहरू ने कहा, "मुझे सरकारी अफसरो से कोई विरोध नही है। यदि हम समाजवाद की ओर अग्रसर होगे तो हमको अधिक सरकारी काय करने वालो की आवश्यकता पडेगी। यह एक भिन्न बात है, परन्तु इसका भी जनसाधारण के सहयोग से सन्तुलन होना चाहिये, लोगो मे अपनी जिम्मेदारी स्वय अपन कन्धो पर लेने की प्रवृत्ति होनी चाहिए।"

(२) साख पर अत्यधिक जोर—इस आन्दोलन का दूसरा दोष यह है कि अभी तक इस आन्दोलन मे केवल किसानो को ऋण देने की ओर ही ध्यान दिया गया है। इसी कारण १९५५–५६ में कुल सहकारी साख समितियो की ७० प्रतिशत साख समितिया थी। किसान ऋण लेकर कभी-कभी उसका दुरुपयोग करता है। वह उसको खेती के काम मे नही लगाता वरन् अपने निजी कामो मे खर्च कर देता है। दूसरे यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि ऋण दे देने से ही किसान के जीवन की सब समस्यायें हल नही हो जाती। जब तक सहकारी समितियाँ अपने हाथ मे किसान के जीवन की सब समस्यायें नही लेगी तब तक उनको इन समितियो से कोई विशेष लाभ नही होगा। इण्डियन कोआपरेटिव रिव्यू के सम्पादक श्री रामदास पतलू ने इसी सम्बन्ध मे कहा था, "हमारी आशाओ के पूर्ण न होने के कारण यह नही हैं कि सहकारी साख आन्दोलन इस कार्य के लिये उपयुक्त नही है वरन् यह है कि हमने सहकारी साख के कार्य को ऐसे कार्यों से नही मिलाया जिनसे कि किसान की आय तथा क्रय शक्ति बढे और इस प्रकार वह इस योग्य हो जाए कि ऋण लेने के बदले कुछ बचा सके।"

(३) सदस्यो की निरक्षरता—इस आन्दोलन का तीसरा दोष यह है कि सहकारी समितियो के सदस्य अशिक्षित होते हैं। वे यह नही जानते कि सहकारिता किसे कहते है और उसका आधारभूत सिद्धान्त क्या है। जब तक कि सदस्य सहकारिता के सिद्धान्तो को ठीक प्रकार से नही समझेंगे तब तक वे इस काय की प्रगति मे कोई विशेष भाग नही ले सकते।

(४) हिसाब की उचित जाच न होना—इस आन्दोलन का चौथा दोष यह है कि सहकारिता साख समितियो के हिसाब की जांच पडताल ठीक प्रकार से नही होती। इसी प्रकार कार्यकर्त्ताओ द्वारा गबन करने की बहुत आशका रहती है। इसी

कारण हिसाव अधूरा भी पडा रहता है। यही कारण है कि समिति की आर्थिक स्थिति का ठीक अनुमान नही लगाया जा सकता। हिसाब की जाँच पडताल ठीक प्रकार न हो सकने के कारण आडिटरो की कमी है।

श्री एम० डार्लिङ्ग ने इस विषय में लिखा है कि दो राज्यो में मैंने आडिट बहुत बुरी तरह से अपूर्ण पाया। राजस्थान मे ७७६ समितियो की दो वर्ष से अधिक से जाँच नही हुई, विहार मे कुछ समितियो की पाच वर्ष से जाँच नही हुई। वार्षिक आडिट के महत्व पर जोर डालने की आवश्यकता नही है, उसका कभी भी किसी ने विरोध नही किया।

(५) अपर्याप्त साधन—इस आन्दोलन का पाचवाँ दोष यह है कि सदस्यो को आवश्यकता से कम धन मिलता है और वह भी समय पर नही मिलता। इसके अतिरिक्त ऋण केवल खेती के कामो के लिय मिलता है। इन्ही सब बातो की वजह से किसान को महाजन के पास जाकर ऋण लेना पडता है। १६५५-५६ की सहकारिता पर दी गई रिजर्व बैंक की रिपोर्ट से पता चलता है कि कृषि साख समितियो की औसत हिस्सा पूजी १०१५ रु० तथा औसत कार्यशील पूजी ४६७६ रु० है तथा इन समितियो द्वारा सदस्यो को दिय गए ऋण का औसत केवल ६० रु० है। इन आकडो से हम स्वय अन्दाजा लगा सकते हैं कि समितिया अपने इन अपर्याप्त साधनो से अपने सदस्यो की कितनी सहायता कर सकती हैं तथा एक सदस्य जिसको साल भर मे केवल ६४ रु० का ऋण मिलता है वह इससे क्या कर सकता है। यह बात ध्यान रखनी चाहिये कि ६४ रु० का ऋण केवल एक औसत मात्र है। इसका अर्थ यह हुआ कि ऋण बहुत ही कम लोगो को मिलता है तथा जिनको भी वह मिलता है वह मात्रा से कम है। यद्यपि दूसरी योजना मे साख की पूर्ति को ४३ करोड रु० से बढा कर २२५ करोड रु० करने की योजना है तो भी यह धन किसानो की आवश्यकता को पूरा करने के लिये अपर्याप्त है।

(६) दोषपूर्ण व्यवस्था—इस आन्दोलन का छठा दोष यह है कि सहकारी समितियो का नियन्त्रण अयोग्य व्यक्तियो के हाथ मे है। इस कारण समिति के अफसर ठीक प्रकार से हिसाब तैयार नही कर सकते और न ही वे इस बात का ध्यान रखते हैं कि कौन-सा ऋण अवधि को पार कर चुका है और कौन-सा कम समय के लिए दिया गया है। यही कारण है कि द्वितीय महायुद्ध से पहले बहुत से राज्यों मे सहकारी समितियों का बहुत-सा ऋण बट्टा खाते हो गया था और बहुत-सा ऋण की अवधि को पार कर गया था। यही कारण था कि इन राज्यो मे बहुत-सी सहकारी समितिया फेल हो गई और जो कुछ बची उनकी अवस्था बहुत खराब थी। यदि द्वितीय महायुद्ध न छिड़ता तो सहकारी आन्दोलन इन राज्यों मे प्राय. समाप्त हो जाता। परन्तु एम० डार्लिंग की रिपोर्ट से पता चलता है कि १६५५-५६ मे बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, हैदराबाद तथा पश्चिमी बगाल आदि राज्यो में सहकारी आन्दोलन की/स्थिति बडी खराब थी। इन राज्यो मे केवल ८ प्रतिशत

समितिया ही A तथा B श्रेणियो मे रखी जा सकती थी। १९५३–५४ मे उडीसा तथा राजस्थान मे भी यही स्थिति थी तथा उत्तर प्रदेश, उडीसा, पश्चिमी बगाल तथा आसाम मे तो ३० प्रतिशत से अधिक समितियाँ D और E श्रेणी मे रखी जा सकती थी। पश्चिमी बगाल मे तो ४३ प्रतिशत D और E श्रेणी की समितियाँ थी। इस प्रकार ११६०० समितियो मे से लगभग ५००० समितियाँ समाप्त होने के लगभग थी।

(७) आर्थिक व्यय—इस आन्दोलन का सातवाँ दोष यह है कि समितियो का खर्च बहुत है। इसी कारण समितियो के पास बहुत कम लाभ बचता है और उनको ऊँचे ब्याज पर ऋण देना पडता है। १९५४–५५ मे ९ बडे राज्यो मे से ५ मे कृषि समितियाँ २५% हानि पर कार्य कर रही थी।

(८) कम कार्यशील पूंजी—आन्दोलन का आठवाँ दोष यह है कि १९५५-५६ मे समितियो के पास कुल कार्यशील पूजी का लगभग ३७ प्रतिशत स्वय की पूजी है। १२ बडे-बडे राज्यो मे सदस्यो मे डिपोजिट कुल कार्यशील पूजी के केवल ६ प्रतिशत थे। इसका कारण यह है कि समिति के सदस्यो मे धन बचाकर रखने की आदत नही होती। इसी कारण उनको बाहर से ऋण लेना पडता है। ऋण पर लिए हुये धन को ऋण के रूप मे देने के कारण समितियो से ऋण लेने से कोई विशेष लाभ नही देखते।

१९५५–५६ की रिजर्व बैंक की रिपोर्ट मे कहा गया है कि ये समितिया सदस्यो मे मितव्ययिता की आदत डालने मे बिल्कुल असफल रही हैं। श्री डार्लिग ने अपनी रिपोर्ट मे कहा है कि "मैंने कही भी डिपोजिट को प्राप्त करने का ढगयुक्त प्रयत्न नही देखा। फिर भी रिजर्व बैंक के कृषि साख विभाग के मुख्य अधिकारी ने कहा है कि मितव्ययिता तथा बचत को प्रोत्साहन देना "कृषि साख समितियो का आधारभूत ध्येय है।" यह साधारणत कहा जाता है कि भारत के किसान इतने निर्धन हैं कि कुछ बचा नही सकते। यह बात बहु-सख्या के लिये ठीक हो सकती है, परन्तु समृद्धिशाली सब क्षेत्रो मे कुछ लोग ऐसे हैं जो कि ऐसा कर सकते हैं और कम से कम इस श्रेणी के लोगो तक पहुच करनी चाहिए। यह भी वास्तव मे ठीक है कि सदस्यो की बचत डिपोजिट तक ही सीमित नही होती। समितियो की स्वय की पूजी को ध्यान मे रखना चाहिये। परन्तु यहाँ भी बाकी धन की ६१ प्रतिशत से घट कर ४९ प्रतिशत तक गिरावट हो गई है।"

(९) अवधि-पार ऋण की अधिकता (Overdues)—भारत मे सहकारी समितियो के कार्य करने के ढग मे यह दोष भी है कि उनके चुकाये जाने वाले ऋणो मे ऐसे ऋणो की मात्रा बहुत अधिक है जो ऋण चुकाने की अवधि को पार कर चुके है। श्री डार्लिग की रिपोर्ट से पता चलता है कि १९५४–५५ मे राज्य ने सहकारी साख समितियो को कुल ऋण का २९ प्रतिशत दिया था परन्तु उसमे से ५.२० करोड अर्थात् ३८ प्रतिशत ऋण अवधि-पार ऋण था। डार्लिग साहब ने आगे कहा है कि

४ वर्षों में इस प्रकार के ऋण का प्रतिशत दुगना हो गया है तथा सारे भारतवर्ष में इस प्रकार के अवधि पार ऋण की मात्रा बढ़ती जा रही है। श्री डार्लिंग ने यह भी बताया है कि १९४९–५० से १९५४–५५ के ५ वर्षों में जहाँ सहकारी समितियों द्वारा दिये गए ऋण ९७ प्रतिशत बढ गये हैं। वहा चुकाये न जाने वाले ऋण की मात्रा भी ९४ प्रतिशत बढ गई है और उसमें अवधि-पार ऋण की मात्रा भी बढती जा रही है।

(१०) प्रति समिति सदस्यों की कम संख्या—भारत मे सहकारी समितियों का आकार (Size) इतना छोटा है कि उनको आर्थिक दृष्टि से लाभ पर नही चलाया जा सकता। १९५५–५६ मे कम से कम छ राज्यों में सदस्यता औसत ३४ से भी कम था तथा आसाम मे यह औसत १९ था। इसके विपरीत आंध्र, बिहार तथा मद्रास का औसत ९० से अधिक था।

द्वितीय योजनाकाल मे जो नई-नई समितियां बनाई जा रही हैं उनमे सदस्यों की संख्या ५०० के लगभग रखने का निश्चय किया गया है। परन्तु श्री डार्लिङ्ग का मत है कि ५०० सदस्य बहुत अधिक हैं। उन्होंने बताया है कि पश्चिमी जर्मनी, फ्रांस, स्वीटजरलैण्ड आदि मे सदस्यों की संख्या १००–२०० से अधिक नही है।

(११) देख-भाल मे दोष (*Defect in supervision*)—श्री डार्लिङ्ग की रिपोर्ट से पता चलता है कि भारत मे रजिस्ट्रार डिप्टी रजिस्ट्रार आदि पदाधिकारी भी सहकारिता की प्रशिक्षा प्राप्त नही करते। ऐसे लोगों के द्वारा जो सहकारिता की भावना से अनभिज्ञ हैं कैसे सहकारिता आन्दोलन की प्रगति हो सकती है।

(१) पदाधिकारियों के जल्दी-जल्दी तबादले—भारत मे सहकारी आन्दोलन की उन्नति मे पदाधिकारियों के जल्दी-जल्दी तबादले भी बाधक हैं। श्री डार्लिङ्ग ने बताया है कि पजाब मे जौलाई १९५१ से ६ रजिस्ट्रार बदले जा चुके हैं। राजस्थान मे २½ वर्षों म ३ रजिस्ट्रार तथा केरल मे ५ वर्षों मे ४ रजिस्ट्रार बदले जा चुके हैं। श्री डार्लिङ्ग ने कहा है कि निरन्तर तबादलों के कारण नीति तथा कार्य मे निरन्तरता नही आ सकती।

दोषों को दूर करने के उपाय

सहकारी आन्दोलन पर हमारा देश तभी सफल हो सकता है जबकि इस आन्दोलन के दोषों को दूर किया जाय। इस समय की मुख्य आवश्यकता यह है कि समितियों के सदस्यों को ठीक प्रकार से सहकारिता की शिक्षा दी जाये और उनको वह सिद्धान्त ठीक प्रकार से बताया जाये जिस पर यह आन्दोलन खड़ा है। यह कार्य सरकार तथा सहकारी विभागों द्वारा हो सकता है। इसमे विश्वविद्यालयों से भी बहुत सहायता ली जा सकती है। यदि समितियों के सदस्य सहकारी आन्दोलन की असली विचारधारा को समझ गये तो फिर वे इन समितियों के उन्नत करने मे अधिकाधिक हाथ बटायेंगे और अपनी आय मे से कुछ न कुछ बचाकर समितियों

की आर्थिक स्थिति का भी उन्नत करेंगे। सदस्यो के समिति की ओर अधिक ध्यान देने के कारण अफसरो को गबन आदि करने का कम साहस होगा।

इनके अतिरिक्त रिजर्व बैंक ने भी इन समितियो को सुधारने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये है।

(१) समितियो को अपने अधिक समय वाले (Long term) ऋणो को ऋण की अवधि-पार (Overdues) किये ऋणो से अलग रखना चाहिये। ऐसा करने से ऋण के चुकाने वालो के विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है।

(२) समितियो को एक मजबूत स्थायी द्रव्य कोष बनाना चाहिये इसके कारण समितियाँ अपने आपको आपत्ति काल मे बचा सकेगी।

(३) समितियो को केवल खेती के लिये ही ऋण देना चाहिये। कृषको को बताना चाहिये कि वे अपनी आय से अधिक खर्च न करे। यह तभी हो सकता है जबकि किसान महाजन से ऋण न ले।

(४) प्रारम्भिक सहकारी साख समितियो को यह प्रयत्न करना चाहिये कि वे किसान की सभी आवश्यकताओ को पूरा करे। दूसरे शब्द मे समितिया बहुउद्देश्य हो। १९४५ ई० की सरकारी योजना समिति का भी यह मत था कि सहकारी साख को सहकारी बिक्री से सम्बन्धित करना चाहिये। बिना इसके किसान की आर्थिक स्थिति ठीक नही हो सकती।

इनके अतिरिक्त श्री डार्लिङ्ग ने अपनी रिपोर्ट मे सहकारी आन्दोलन की स्थिति को सुधारने के लिये कुछ सुझाव दिये है जो निम्नलिखित है—

(१) भविष्य मे इस बात की आवश्यकता है कि साख की मात्रा को बढाते समय सावधानी से काम लिया जाय।

(२) द्वितीय योजनाकाल मे सहकारी आन्दोलन को जिस गति से बढाने की योजना है उसको धीमा किया जाय और उन राज्यो मे जहा वह कमजोर है योजना बिन्दु को प्राप्त करने का समय ५ वर्ष से बढाकर १० वर्ष कर देना चाहिये।

(३) छोटी छोटी समितियो को बडा बनाने का प्रयत्न करना चाहिये।

(४) जिन समितियो के पास अपना कोई प्रशिक्षित सचिव नही है उनके किसी सदस्य को प्रशिक्षा देकर कार्य करने योग्य बनाना चाहिये।

(५) सहकारी समितियो को सदस्यो मे मितव्ययिता की आदत डलवानी चाहिये और उनसे अधिक डिपोजिट प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये।

(६) आडिट की जिम्मेदारी रजिस्ट्रार की होनी चाहिये।

(७) साख को फसलो से सम्बन्धित करना चाहिये।

अन्त मे यह कहना ठीक ही होगा कि हमारे देश मे सहकारिता का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। हमारे देश मे आज जितनी समस्यायें मुह बाये खडी हैं उनका निदान केवल सहकारी समितियो द्वारा ही हो सकता है। इसी कारण यह आवश्यक

है कि हम सहकारी समितियो की अवस्था को शीघ्र ही सुधारें जिससे कि देश की आर्थिक स्थिति सुधरे।

Q· 46. What is the present position of co-operative stores movement in India ? What measures would you suggest to make it more Popular ?

प्रश्न ४६—भारतवर्ष मे सहकारिता स्टोर आन्दोलन की वर्तमान स्थिति क्या है ? आप इसको लोकप्रिय बनाने के लिये क्या सुझाव देंगे ?

उत्तर—सहकारी स्टोर वह होते हैं जिनको उपभोक्ता मिल-जुल कर इसलिये बनाते हैं जिससे कि इसके द्वारा अपने उपभोग मे आने वाली वस्तुयें अधिक मात्रा मे खरीद सके तथा इस प्रकार मध्यवर्ती व्यापारियो के शोषण से बच सकें। यह आन्दोलन सबसे पहले राशडेल (इङ्गलैंड) के २८ जुलाहो ने चलाया था। प्रारम्भ मे केवल मक्खन चीनी, गेहू तथा मोमबत्ती ही बेचना था परन्तु धीरे-धीरे उसने बहुत सी उपभोग मे आने वाली चीजें रखनी आरम्भ कर दी। इस स्टोर को इङ्गलैंड मे इतनी सफलता मिली कि धीरे-धीरे वहाँ बहुत से ऐसे स्टोर खुल गये। इङ्गलैंड मे इसकी लोकप्रियता को देखकर दूसरे देशो मे भी यह आन्दोलन फैल गया।

सहकारी स्टोर आन्दोलन के कुछ मुख्य सिद्धान्त हैं जिनका जान लेना यहाँ आवश्यक है। इस आन्दोलन का पहला सिद्धान्त यह है कि वस्तुयें थोक भावो पर मोल लेकर बाजार भावो पर बेची जाती हैं। इसका दूसरा सिद्धान्त यह है कि वस्तुयें नक्द बेची जाती हैं, उधार नहीं बेची जाती। इसका तीसरा सिद्धान्त यह है कि स्टोर को वर्ष भर जो लाभ होता है वह सदस्यो मे उस अनुपात मे बाँटा जाता है जिस अनुपात मे कि उन्होंने स्टोर से माल खरीदा है। इस प्रकार माल बेचते समय उसका भाव कम न करके वर्ष के अन्त मे एक अच्छी रकम सदस्यो को लाभ के रूप मे बाँट दी जाती है।

भारतवर्ष मे स्टोर आन्दोलन का आरम्भ मद्रास मे हुआ। आज भी यह राज्य इसकी प्रगति की दृष्टि से सबसे आगे है। मद्रास के पश्चात् यह आन्दोलन दूसरे राज्यों मे भी फैला। परन्तु द्वितीय महायुद्ध से पूर्व इसकी कोई विशेष उन्नति नहीं हुई थी।

द्वितीय महायुद्ध के छिड जाने पर परिस्थिति मे कुछ बदल आई। वस्तुओ की कमी के कारण उनका मूल्य दिनों दिन बढने लगा। व्यापारी लोग चोर बाजारी करने लगे। आवश्यक वस्तुयें बाजार से गायब हो गई। इस कारण उपभोक्ताओ को बडी कठिनाई का सामना करना पडा। उनकी कठिनाई को कम करने के लिये सरकार ने मूल्य पर नियन्त्रण किया तथा कुछ समय पश्चात् राशनिंग चालू किया सरकार ने राशनिंग की योजना मे स्टोरो को भी सम्मिलित किया अर्थात् जहा-जहा

स्टोर थे वहा-वहाँ सरकार उनको थोक मूल्यो पर सामान बेचती थी। इस अवसर का लाभ उठाने के लिये प्राय सभी राज्यों मे बहुत से स्टोर चालू किये गये। इस प्रकार युद्धकाल मे इस आन्दोलन ने बडी प्रगति की। परन्तु यह उन्नति सब राज्यो मे समान नही है। १९४७–४८ मे हमारे देश मे इस प्रकार के ५१०० स्टोर थे जिनमे से १७०० मद्रास मे, १००० आसाम मे, ६०० बम्बई मे, ५०० मध्य प्रदेश मे, ४०० ट्रावनकोर मे, ३०० पश्चिमी बङ्गाल मे तथा २००, २०० उत्तर प्रदेश, उडीसा तथा मैसूर म थे।

आन्दोलन की प्रगति मे बाधायें—यद्यपि युद्धकाल मे हमारे देश मे इतने स्टोर खुल गये हैं तो भी ऐसा अनुमान है कि इनम से बहुत से युद्ध के पश्चात् समाप्त हो गये होंगे। यदि हम इसकी धीमी प्रगति के कारण तलाश करें तो निम्नलिखित बातो मे से मिलेंगे—

(१) प्रबन्धकों की योग्यता तथा उनमे ट्रेनिंग की कमी, (२) सदस्यो की आवश्यकताओं के विषय मे जानकारी न होना, (३) उन वस्तुओं को खरीद लेना जिनकी सीमित माग है, (४) सदस्यो का स्टोर के साथ वफादारी न करना, अर्थात् स्टोर से माल न खरीदने पर दूसरे स्थानो मे खरीदना, (५) साख पर व्यापार करने से हानि हो जाना, (६) थोक तथा बिक्री मूल्य मे कम अन्तर होना, (७) ठीक ढङ्ग से माल का हिसाब न रखना तथा बहीखाता ठीक प्रकार न रखना, (८) स्टोर को चलाने का अधिक खर्चा हो जाना, (९) निःशुल्क सेवा पर बहुत अधिक निर्भरता, (१०) मूल्यो पर से नियन्त्रण हट जाना और खुले बाजार मे चीजों का आसानी से मिलना।

हमारे देश मे भी इन्ही मे से अधिकतर कारण हमारे स्टोर आन्दोलन की धीमी प्रगति के लिये जिम्मेदार है।

स्टोर आन्दोलन को लोकप्रिय बनाने के सुझाव—

स्टोर आन्दोलन हमारे देश मे तभी लोकप्रिय हो सकता है जबकि यह सदस्यो की अधिकतम आवश्यकता पूरी करेगा। जो वस्तुयें स्टोर रखें वे अच्छी हों तथा उससे अधिक मूल्य पर न बेची जायें जिस पर कि वे बाजार मे बेची जाती है। यह बात तभी सम्भव हो सकती है जबकि स्टोरो का प्रबन्ध योग्य लोगो के हाथ मे होगा तथा वे समय-समय पर सदस्यो की आवश्यकताओ का अध्ययन करते रहेगे। यदि हो सके तो स्टोर अपने सदस्यो के अतिरिक्त गैर सदस्यो को भी माल बेचे जिससे कि वह स्टोर की उपयोगिता को समझकर भविष्य मे उसके सदस्य बन जायें। स्टोर मे जो प्रबन्ध रखे जाय उनका व्यवहार सदस्यो तथा गैर सदस्यो के प्रति बहुत अच्छा होना चाहिये। स्टोर को अपनी थोक समितियाँ भी बनानी चाहियें। इङ्गलैड मे इस प्रकार की समितिया बनाने से इस आन्दोलन ने बडी प्रगति की है। सहकारी योजना समिति का विचार है कि यह आन्दोलन ग्रामो मे भी फैलना चाहिये। औद्योगिक केन्द्रो मे इस आन्दोलन को लोकप्रिय बनाने के लिय

यह आवश्यक है कि सदस्यो का सदस्यता शुल्क कम रखा जाय तथा मजदूरो का माल उधार वचा जाय तथा जब उनको अपनी मजदूरी मिले तब धन वसूल किया जाय । अपने सदस्यो को स्टोर की उपयोगिता समझाने के लिये स्टोरो को चाहिये कि वे समय-समय पर उनमें लिखित साहित्य बटवायें । उनको यह भी चाहिये कि वे ऐसे नौकर रखे जो योग्य हो । नौकर रखने मे पक्षपात से काम नही लेना चाहिये । इन सब बातो के करने से यह आशा की जा सकती है कि यह आन्दोलन बहुत लोकप्रिय हो जायगा ।

Q 47 Discuss the necessity of land mortgage banks for meeting the long term credit needs of Indian agriculture, and account for the limited progress made by them in India

प्रश्न ४७—भारतीय कृषि की दीर्घकालीन साख की आवश्यकता को पूरी करने के लिये भूमि बन्धक बैंकों की आवश्यकता बतलाइये तथा इन बैंकों की कम उन्नति के कारण लिखिये ।

कृषि साख आवश्यकता तीन प्रकार की होती है—(१) अल्पकालीन, (२) मध्यकालीन तथा (३) दीर्घकालीन । अल्पकालीन आवश्यकताओ मे बीज, खाद, सिंचाई, लगान आदि की आवश्यकता सम्मिलित है । मध्यकालीन आवश्यकताओ मे बैल, कुआ आदि की आवश्यकता है । दीर्घकालीन आवश्यकताओ मे पुराने ऋण को चुकाने, भूमि खरीदने, नए ढङ्ग की मँहगी मशीन खरीदने, खेत के चारो ओर बाडे बनाने, खेत के ऊपर खेती घर बनाने, बडा कुआँ आदि बनाने की आवश्यकतायें सम्मिलित हैं । खेतो की अल्प तथा मध्यकालीन आवश्यकताओ को सहकारी साख समितियाँ अथवा गाँव का महाजन पूरा कर देता है । पर दीर्घकालीन आवश्यकता को पूरी करने के लिये सरकार से थोडा ऋण भूमि उन्नति ऋण कानून (Land Improvement Loans Act) के अन्तर्गत मिल जाता है । इसके अतिरिक्त और कोई संतोषजनक साधन इस देश मे नही है । पर यह साधन भी बहुत ही अपर्याप्त है । इससे थोडे किसानो को ऋण भले ही मिल जाता हो पर देश के बहुत अधिक किसानो को इस साधन से कोई ऋण नहीं मिलता । इस कारण हमारे देश मे ऐसे बैंको की आवश्यकता है जो कि कृषको की दीर्घकालीन आवश्यकता को पूरी कर सकें । इस प्रकार के बैंक भूमि-बन्धक बैंक हो सकते है ।

भूमि बन्धक बैंक भूमि की धरोहर पर ऋण देते हैं । इनके ऋण देने का समय देश-देश मे भिन्न है । हमारे देश मे बैंक प्राय २० वर्ष के लिये ऋण देते हैं पर आस्ट्रेलिया मे ये ६० वर्ष तक के लिये ऋण दे देते हैं । इस प्रकार के बैंक या तो सहकारी या गैर सहकारी या आंशिक सहकारी होते हैं । भारत के अधिकांश बैंक

दूसरे राज्यो मे ये बैंक अपनी कार्यशील पूजी जनता से डिपोजिट के रूप मे अथवा ऋण लेकर एकत्र करते है। १९५६–५७ में भारत मे १६.९५ करोड़ रु० के डिबेन्चरो प्रचलित थे। इसमे से लगभग ५४ प्रतिशत आध्र तथा मद्रास के केन्द्रीय भूमि बन्धक बैंको ने इशयू किये थे। ये बैंक २० वर्ष के लिये ऋण देते है क्योकि इनके डिबेन्चरो की अवधि २० वर्ष ही होती है। इस समय तक इन बैंको ने पुराने ऋण को चुकाने के लिये ऋण दिया है पर हरएक राज्य मे इस बात की आवश्यकता प्रतीत की जा रही है कि खेती की उन्नति के लिय भी ऋण दिया जाना चाहिये। इनके कार्यो की देख-सहकारी समितियों का रजिस्ट्रार करता है।

बैंको की कम उन्नति के कारण

भूमि बन्धक बैंको ने देश मे कुछ अधिक उन्नति नही की, इसके निम्नलिखित कारण है—

(१) भारतवर्ष के ७० प्रतिशत भाग पर जमीदारी पाई जाती थी। रैंयत-वारी राज्यो मे भी किसानो के पास अपनी भूमि नही थी। इसी कारण किसान भूमि को भूमि बन्धक बेंक के पास कैसे बन्धक बना सकता था। यही कारण है कि जमी-दारी प्रान्तो मे इन बैंको की बहुत कम प्रगति हुई है।

(२) भूमि बन्धक बैंको को अपनी कार्यशील पूजी डिबेन्चरो द्वारा एकत्र करनी चाहिये। पर हमारे देश मे लोग डिबेन्चरो मे अपना रुपया लगाते हुये डरते है। डिबेन्चरो से केवल बम्बई, मद्रास, मैसूर आदि मे ही धन एकण हुआ है क्योकि वहा राज्य सरकारो ने इनका मूलधन व ब्याज गारन्टी किया हुआ है।

(३) बहुत से राज्यो मे सरकार ने इन बैंको के डिबेन्चरो का मूलधन व ब्याज अदा करने की जिम्मेदारी भी नही ली है। इसी कारण ऐसे राज्यो मे ये बैंक अधिक कार्यशील पूजी एकत्र नही कर सकते। जहा कही, जैसे मद्रास व बम्बई मे, राज्य सरकारो ने इस प्रकार की जिम्मेदारी ली है वहा पर इन बैंको को बहुत सफलता मिली है।

(४) इन बैंको का कार्य अभी तक केवल पुराना ऋण चुकाना ही है। इस क्षेत्र मे भी उन्होने बहुत अधिक कार्य नही किया। मद्रास राज्य मे जहा इन बैंको को सबसे अधिक सफलता मिली है वहा भी इनका कार्य सिचाई किये गये भाग तक ही सीमित है। दूसरे राज्यो मे तो इन्होने ऋण को अदा करने मे नही के बराबर कार्य किया है।

उन्नति करने के सुझाव

भूमि बन्धक बैंको की इतनी आवश्यकता को देखते हुये यह आवश्यक है कि इन बैंको के कार्य करने के ढङ्ग मे कुछ उन्नति की जाय। भविष्य मे इन बैंको को खेती की उन्नति के लिये ऋण देना चाहिये। इस कार्य मे इनको तभी सफलता मिल सकती है जबकि इन बैंको का सम्बन्ध राज्य कृषि विभागो से हो। ये विभाग इन बैंको

को यह बता सकते हैं कि किसान के लिये कौन सी योजनायें उपयोगी है। यदि किसान को उपयोगी योजनाओ के लिय ऋण दिया जायेगा तो किसान को उससे लाभ होगा और बैंको का रुपया मारा जाने का भय न रहेगा। यदि ऋण समझौता बोर्डों के साथ भी इन बैंको का सम्बन्ध स्थापित हो जाये तो किसानो का पूरा ऋण अदा करने मे बहुत आसानी हो जायगी। यह भी आवश्यक है कि इन बैंको का सम्बन्ध सहकारी समितियो से हो। केवल ऐसे ही लोगो को ऋण दिया जाए जो सहकारी साख समिति के सदस्य हो और जो इन समितियो का ऋण ठीक समय पर अदा करते हो। भूमि बन्धक बैंक से ऋण मिलने के पश्चात् भी ऋणी को बहु-उद्देश्य सहकारी समिति का सदस्य रहना चाहिये ताकि वह वहा से अपनी अल्पकालीन तथा मध्यकालीन आवश्यकताओ के लिये ऋण प्राप्त करता रहे और अपनी फसल को समिति के द्वारा बेच सके। ऐसा करने से किसान किसी प्रकार भी साहूकार से नही लूटा जा सकेगा। जिन राज्यो मे सरकारो ने डिबेन्चरो के मूलधन व ब्याज अदा करने की जिम्मेदारी नही ली वहा पर सरकार को ऐसा अवश्य करना चाहिये। रिजर्व बैंक को भी इन बैंको के डिबेन्चरो को ट्रस्टी धरोहर घोषित कर देना चाहिये। यदि य दोनो बातें हो गई तो हमारे देश मे लोग डिबेन्चरो मे रुपया लगाने मे सकोच न करेंगे। जमीदारी उन्मूलन के पश्चात् इन बैंको को किसानो के भूमि मोल लेने मे सहायता करनी चाहिये। इस भूमि को बैंक अपने पास जमानत के रूप मे रख सकते है। यह हर्ष का विषय है कि सौराष्ट्र का बैंक किसानो को मौरूसी अधिकार प्राप्त करने के लिये धन दे रहा है। इससे किसानो तथा बैंको दोनो को लाभ होगा। इसी प्रकार भूमि बन्धक बैङ्को को ठीक ढङ्ग पर चलाने की आवश्यकता है।

Q 48 How does the Reserve Bank of India help the co-operative movement ?

प्रश्न ४८—रिजर्व बैंक आफ इण्डिया सहकारी आन्दोलन की किस प्रकार सहायता करता है ?

उत्तर—रिजर्व बैंक आफ इण्डिया ने खेती सम्बन्धी कार्यों के लिये एक अलग विभाग चालू किया हुआ है जिसको कृषि साख विभाग (Agricultural Credit Department) कहते है। यह विभाग कृषि साख के सम्बन्ध मे खूब अध्ययन करता रहता है तथा सरकार और सहकारी बैंको को योग्य सलाह देता है। इसने दिसम्बर १९३७ मे एक कानूनी रिपोर्ट छापी थी तथा उसके पश्चात् भी कई बुलिटीन छापे हैं। अब यह एक मासिक बुलिटीन भी छापता है। अपनी कानूनी रिपोर्ट मे रिजर्व बैंक ने यह बात स्पष्ट रूप से बताई थी कि यह खेती को केवल सकट के समय ही आर्थिक सहायता प्रदान कर सकता है क्योंकि इसके पास दूसरे बैंको का द्रव्य कोष

रहता है । इसलिये इसको वह उन कार्यों मे नही लगा सकता जिसमें कि दूसरे शेड्यूल्ड बैंक लगाने को तैयार नही हैं। इस प्रकार यह दैनिक कार्यों के लिये धन देने को तैयार नही है।

(१) यह सरकारी प्रतिभूतियों (Securities) की धरोहर पर अधिक से अधिक ६० दिन के लिये राज्य सहकारी बैंको तथा केन्द्रीय भूमि बन्धक बैंको को जो राज्य सहकारी बैंक घोषित कर दिये गये हो ऋण दे सकता है।

(२) यह भूमि बन्धक बैंको के ऋण-पत्रो (Debentures) के पीछे भी ऋण दे सकता है। परन्तु इस प्रकार के ऋण तभी दिये जा सकते हैं जबकि ऋण पत्र ट्रस्टी धरोहर घोषित कर दिये गए हों।

(३) यह राज्य सरकारी बैंको के खेती सम्बन्धी बिलो को जिनकी अवधि १५ मास से अधिक न हो पुनर्बट्टे (Re discount) पर खरीद सकता है।

अभी पिछले वर्ष रिजर्व बैंक एक्ट मे सशोधन किया गया है जिसके फल-स्वरूप रिजर्व बैंक को ग्रामीण आर्थिक कार्यों के लिये अनेक प्रकार की वित्तीय सहायता देने का अधिकार प्रदान किया गया है। अब रिजर्व बैंक कृषि कार्यो के लिये निम्नलिखित शर्तों के पूरा होने पर मध्यकालीन ऋण दे सकता है—

(१) ऋण का समय १५ मास से कम तथा ५ वर्ष से अधिक नही होना चाहिये।

(२) राज्य सरकारो द्वारा ऋण का मूलधन तथा ब्याज चुकाने की गारन्टी दी जानी चाहिये।

(३) प्रत्येक राज्य सहकारी बैंक अपने साधनो से अधिक ऋण न दे सकेगा।

ऋण ५ करोड रुपये से अधिक नही दिया जायेगा। अभी हाल ही मे रिजर्व बैंक ने राज्य सरकारो तथा सहकारी बैंको को एक गश्ती चिट्ठी भेजी है जिसमे बताया गया है कि मध्यकालीन ऋण किस प्रकार देगा। इस चिट्ठी मे कहा गया है कि यद्यपि रिजर्व बैंक ५ वर्ष तक के लिये ऋण दे सकता है परन्तु वह व्यवहार मे ३ वर्ष तक के ही ऋण देगा जिससे कि रुपये की लौट फेर जल्दी से जल्दी हो सके। इससे अधिक समय का ऋण केवल बहुत आवश्यक हालतो मे दिया जायेगा। यह ऋण भूमि को खेती के योग्य बनाने, खेतो के चारो ओर बाँध बाँधने, खेती की दूसरी प्रकार की उन्नति करने, भूमि को बाग लगाने के लिये तैयार करने, छोटी-छोटी सिंचाई की योजनायें बनाने, पशु, मशीनें तथा अन्य सामान खरीदने, खेतो पर इमारतें बनाने के लिये दिया जायगा।

लघुकालीन ऋण के समान ये ऋण भी केवल १½ प्रतिशत ब्याज की दर से राज्य सरकारी बैंको को दिये जायेंगे। कम ब्याज की दर का लाभ किसानो को पहुचाने के लिये रिजर्व बैंक ने राज्य सरकारो तथा राज्य सहकारी बैंको तथा किसान

के बीच मे कई मध्यवर्ती संस्थाओ के आ जाने के कारण किसानो से ली जाने वाली ब्याज की दर ६½ प्रतिशत से अधिक नही होनी चाहिये।

इस प्रकार हम देखते है कि रिजर्व बैक सहकारी बैको को सलाह के रूप मे तथा रुपये पैसे के रूप मे बडी सहायता कर रहा है। अब से कुछ वर्ष पूर्व तक इसकी सहायता केवल सलाह के रूप मे ही थी। परन्तु लगभग १९४७–४८ से इसने धन के रूप मे भी सहायता देनी आरम्भ कर दी। यह सहायता वह निरन्तर बढाता जा रहा है। १९४८–४९ मे इसने केवल ६७ ७० लाख रुपये का ऋण राज्य सहकारी बैको को दिया था। १९४९–५० मे यह बढाकर २ १४ करोड, १९५०–५१ मे ७ ६१ करोड, १९५२–५३ मे १५ करोड तथा १९५७–५८ मे इस बैक ने राज्य सहकारी बैको को खेती के मौसमी कार्य करने तथा फसल की बिक्री करने सम्बन्धी ४८ २४ करोड रु० के ऋण प्रदान करने की अनुमति दी। १९५७–५८ मे इन बैको से ४० ४७ करोड रु० पावना या जुलाहो की सहकारी समितियो को उत्पादन तथा बिक्री कार्य मे सहायता पहुचाने के लिये रिजर्व बैक ने उनको बैक दर से १½ प्रतिशत कम ब्याज पर २०५ ७८ लाख रु० उधार दिये। सहकारी चीनी समितियो को उनकी कार्यशील पूँजी मे सहायता पहुँचाने के लिये ३ करोड रु० बैक दर पर स्वीकार किये गये। १२ राज्य सहकारी बैको को ७ ७२ करोड रु० के मध्य-कालीन ऋण देने मजूर किये गये। परन्तु इस इस बढते हुये ऋण से हम पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नही है। क्योकि भारतीय कृषि की कुल आवश्यकता ५०० करोड वार्षिक की है। ऐसी स्थिति म यह सहायता समुद्र मे एक बूद के समान है इसलिये इस बात की आवश्यकता है कि रिजर्व बैक को अधिक ऋण देना चाहिये। परन्तु इसके साथ साथ हमे यह भी ध्यान रखना पडगा कि रिजर्व बैक भी कानून से बधा हुआ है। वह केवल उन्ही धरोहरो के पीछे ऋण दे सकता है जो एक्ट के अनुसार उसको मान्य हैं। ऐसी धरोहरो के पैदा करने के लिये राज्य सरकारो को सरकारी गोदामो का निर्माण करना पडेगा। कही कही राज्य सरकारो को ऋण का ब्याज तथा मूलधन गारन्टी करना पडेगा। ऐसा सब कुछ करने के रिजर्व बैंक कृषि की अधिक सहायता कर सकेगा।

अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वे

१९५१ ई० में रिजर्व बैंक ने ग्रामीण साख सर्वे किया जिसमे देश के ७५ जिलो मे से ६०० गाँव लिये गये। इस समिति के अध्यक्ष श्री गोरवाला थे। इस समिति की रिपोर्ट २० दिसम्बर १९५४ को छपी।

इस समिति ने देखा कि किसानो को दिए गए कुल ऋण का ३ ३ प्रतिशत सरकार द्वारा तथा ३ १ प्रतिशत सहकारी समितियो द्वारा दिया जाता है। लगभग ७० प्रतिशत सहायता अब भी गाँव के महाजन द्वारा की जाती है। सहकारी समितियो को केन्द्रीय व राज्य सरकारो से बहुत सहायता मिलती है।

इस समिति का मत है कि सरकार को सहकारी समितियो को भिन्न भिन्न

अवसरो पर सहयोग देना चाहिये। सरकार को चाहिये कि वह राज्य सरकारी बैंको व भूमि बन्धक बैंको की पूजी का ५१ प्रतिशत स्वय लगाये। इस प्रकार राज्य सरकारो के द्वारा केन्द्रीय सहकारी बैंको व बडी बडी प्रारम्भिक समितियो को भी सहायता प्रदान की जानी चाहिय। इस कार्य के लिये रिजर्व बैंको को राज्य सरकारो की सहायता एक राष्ट्रीय कृषि साख कोष मे से जिसमे कि प्रारम्भ मे रिजर्व बैंक ५ करोड रु० जमा करे तथा इसके पश्चात् इतना ही धन प्रति वर्ष जमा करे, करनी चाहिय। इस कोष मे से राज्य सहकारी बैंको को मध्यकालीन तथा भूमि बन्धक बैंको को दीर्घकालीन ऋण देने चाहियें।

समिति न यह यह भी सुझाव दिया है कि फसल की बिक्री तथा उसको एकत्र करने के लिय भी सरकारी सस्थाओ को सहयोग देना चाहिये।

समिति का सबसे महत्वपूर्ण सुझाव एक राज्य बैंक की स्थापना है जो कि इम्पीरियल तथा अन्य किसी बैंको को मिलाकर बनाया जाय। इस बैंक की शाखायें सब जिलो के केन्द्र स्थानों तथा छोट छोटे केन्द्रो मे होगी। यह बैंक सहकारी समितियो को साख की तथा उनके धन को हस्तान्तर करन की सुविधा प्रदान करेगा। इस बैंक की पूजी इस प्रकार बढानी चाहिए जिससे कि भारत सरकार व रिजर्व बैंक का उसमे ५१ प्रतिशत भाग हो।

सरकार ने इस समिति के सुझावो को मानकर द्वितीय योजनाकाल मे सहकारी साख को मजबूत बनाने के लिये उसमे एक बडा भाग लेने का निश्चय का[illegible] कि भ लगान क लिये कुटीर उद्योग को वहुन आवश्यकता ह। किसी देश के लिये बडे उद्योगो का जो महत्व है उससे कोई भी इन्कार नही कर सकता। पर वर्तमान स्थिति मे हमारे देश का उद्धार बडे उद्योगो से नही हो सकता। क्योंकि व कम लोगो को रोजगार दे सकते हैं और बडे उद्योगो को चलाने के लिये हमारे पास इस समय पर्याप्त मात्रा मे साधन भी नही हैं। इस कारण कुछ समय तक हमको कुटीर उद्योगो पर ही निर्भर रहना पडेगा। बैंकिंग कमेटी, कृषि कमीशन, बम्बई किया जायेगा। भविष्य मे समितियां आने वाली फसल का जमानत पर ऋण दे सकेंगी। इसके बदले ऋण लेने वाले को अपनी फसल सहकारी बिक्री समितियो को बेचनी पडगी। इस योजना मे १८०० बिक्री समितियां बनाने की योजना है। इन बिक्री समितियो की सदस्य १२००० बडी बडी साख समितियां होगी जो कि सदस्यो मे कृषि सम्बन्धी सामान का बटवारा करेंगी तथा उनकी फसल को एकत्र करेंगी। इस हेतु ६५७० गोदाम बनाने की योजना है जो कि साख तथा बिक्री समितियो के आधीन होंगे। इन गोदामो की रसीद के पीछे किसानो को ऋण प्राप्त करने की सुविधा भी दी जायेगी।

लोक सभा मे Central Ware housieg Corporation स्थापित करने के लिये एक बिल भी पेश किया गया है जिसके द्वारा एक Central Co-operation Development and Ware housing Board स्थापित किया जायेगा जो सहकारी समितियो द्वारा उत्पत्ति बढाने, उसको बेचने, उसको गोदाम मे रखने, उसके बाहर भेजने आदि का कार्य करेगा। इस बीच राज्यो को भी Ware housing Corporation स्थापित करने का अधिकार दिया गया।

Q 39 Account for the decline of cottage industries in India during the second half of the nineteenth century?

प्रश्न ४६—१६ वीं शताब्दी के दूसरे आधे भाग मे भारतीय कुटीर उद्योग का पतन क्यो हुआ ?

१८ वीं शताब्दी के अर्धपूर्व मे भारतवर्ष अपने उद्योगो के लिये सारे ससार मे प्रसिद्ध था। हमारे देश मे तैयार किया हुआ माल दूर-दूर के देशो को जाता था। वह माल बहुत ही सुन्दर होता था। कहते हैं कि रोम व यूनान की राजकुमारियाँ बडे गर्व से भारतीय कपडा पहनती थी। भारत केवल सूती कपडे के लिये ही प्रसिद्ध न था वरन् वह ऊनी तथा रेशमी कपडे के लिये भी प्रसिद्ध था। काश्मीर के शाल दुशाले प्रसिद्ध थे। यही नही, भारतवर्ष मे हाथी दान का काम, लकडी पर खुदाई का काम तथा लोहे का काम भी खूब होता था। यह सामान अरब और सन्तुष्ट नही है। क्योकि भारतीय कृषि की कुल आवश्यकता ५०० करोड वार्षिक की है। ऐसी स्थिति मे यह सहायता समुद्र मे एक बूद के समान है इसलिये इस बात की आवश्यकता है कि रिजर्व बैंक को अधिक ऋण देना चाहिये। परन्तु इसके साथ साथ हमे यह भी ध्यान रखना पडगा कि रिजर्व बैंक भी कानून से बधा हुआ है। वह केवल उन्ही धरोहरो के पीछे ऋण दे सकता है जो एक्ट के अनुसार उसको मान्य है। ऐसी धरोहरो के पैदा करन के लिये राज्य सरकारो को सरकारी गोदामो का निर्माण

परन्तु बहुत सी बातो के कारण धीरे-धीरे हमारे उद्योग-धन्धे नष्ट हो गये। इनके नष्ट होने मे नीचे लिखी बातो का प्रभाव भी पडा—

(१) देशी राजाओं के दरबारो का समाप्त होना—जब तक इस देश मे मुगल बादशाह तथा नवाब आदि रहे तब तक वे बहुत सी फैशन की चीजे माँगते रहे। पर अग्रेजो के आने के पश्चात् एक-एक करके सब बादशाह तथा नवाब समाप्त हो गये। इसी कारण फैशन की चीजो की माग जो बादशाह तथा उनके दरबारी किया करते थे वह समाप्त हो गई और इसी के साथ सब दस्तकारिया भी नष्ट हो गई।

(२) विदेशी प्रभाव—भारतवर्ष मे अग्रेजी राज्य स्थापित हो जाने के पश्चात् देश मे शान्ति हो गई। इसके कारण हथियार बनाने के उद्योग प्राय समाप्त हो गये। इसी कारण कुछ और उद्योगो का भी पतन हुआ। भारत मे रहने वाले अग्रेजी अफसर भारत की चीजो का प्रयोग न करके अपने देश की ही चीजों को

Q. 50. State the inportance of cottage industries in Indian economy. What measures would would you suggest to improve the organisation of cottage-industries in our country ? How is the Government helping them ?

प्रश्न ४६—भारतीय अर्थ-व्यवस्था मे कुटीर उद्योगो का महत्व बताइये। हमारे देश मे उद्योगों के संगठन को उन्नत करने के लिये आप क्या सुझाव देंगे ? सरकार उनकी किस प्रकार सहायता कर रही है ?

कुटीर उद्योग क्या होते हैं ? कुटीर उद्योग वे होते है जो कि दस्तकार लोग अपने घरो मे अपने आप तथा अपने बाल बच्चों की सहायता से चलाते हैं। इन उद्योगो मे दस्तकार लोग अपनी ही पू जी लगाते है। परन्तु कभी कभी वे कारखानेदारो की पू जी से भी कार्य करते हैं। जहाँ कही सम्भव होता है वे बिजली की शक्ति से भी काम करते हैं।

इन उद्योगो का महत्व—कुटीर उद्योग देश की आर्थिक स्थिति पर बहुत बडा प्रभाव डालने वाले है। हमारे देश के लोग गरीब हैं और उनका जीवन स्तर बहुत नीचा है। सिचाई वाले क्षेत्रो को छोडकर और शेष स्थानो के लोग वर्ष मे कई महीने बेकार भी रहते हैं। बहुत से लोग ऐसे भी हैं जिनके पास वर्ष भर कोई काम करने को नही होता। घरो की स्त्रिया भी बहुधा बेकार ही रहती है। इन सब लोगो को काम मे लगाने के लिये कुटीर उद्योग की बहुत आवश्यकता है। किसी देश के लिय बडे उद्योगो का जो महत्व है उससे कोई भी इन्कार नही कर सकता। पर वर्तमान स्थिति मे हमारे देश का उद्धार बडे उद्योगो से नही हो सकता। क्योकि वे कम लोगो को रोजगार दे सकते हैं और बडे उद्योगो को चलाने के लिय हमारे पास इस समय पर्याप्त मात्रा मे साधन भी नही हैं। इस कारण कुछ समय तक हमको कुटीर-उद्योगो पर ही निर्भर रहना पडेगा। बैंकिंग कमेटी, कृषि कमीशन, बम्बई योजना, सभी ने इस बात पर ओर दिया है कि भारतवर्ष की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये कुटीर उद्योगो का बहुत महत्व है। दूसरे देशो मे जैसे जापान, जर्मनी, रूस, चीन, स्विटजरलैंड आदि ने कुटीर उद्योगो द्वारा ही बहुत उन्नति की है। इसलिये यह आशा है कि भविष्य मे हमारे देश को इन उद्योगो से बहुत लाभ होगा।

यदि हमारे देश मे कुटीर उद्योग उन्नत हो गये तो इससे किसानो को बहुत लाभ होगा। पहला लाभ तो उनको यह होगा कि उनका बेकार समय काम मे आ जायेगा। दूसरा लाभ यह होगा कि उनकी आय मे वृद्धि हो जाने से उनका जीवन स्तर ऊँचा हो जायेगा। तीसरा लाभ यह होगा कि खेती पर से जनसख्या का दबाव कम हो जाने के कारण खेतो का क्षेत्र बडा हो जायेगा। खेती मे उन्नत औजार काम में लाये जा सकेंगे। इस प्रकार खेती की भी उन्नति होगी। खेती की उन्नति में दस्तकार, व्यापारियो, रेलो आदि सभी को लाभ होगा।

कुटीर उद्योगो द्वारा हमारे देश की बेकारी की समस्या भी हल हो सकती है। आजकल हमारे देश मे लाखो मनुष्य बेकार पडे है। उनको काम देने मे कुटीर उद्योगो से ही सबसे अधिक सहायता मिल सकती है।

बडे उद्योगो की अपेक्षा कुटीर उद्योगो मे हमारे देश को यह भी लाभ होगा कि इनके द्वारा देश मे धन का वितरण समान रूप से हो जायेगा। परन्तु बडे उद्योगो से धन का केन्द्रीयकरण होता है आजकल हमारे देश मे धन के समान वितरण की बहुत आवश्यकता है क्योकि इस देश मे या तो वे लोग रहते हैं जिन्हे दिन मे भोजन भी नही मिलता या वे हैं जो धन मे पडे रहते हैं।

चीन और रूस देशो द्वारा यह बात पूर्ण रूप से विदित हो गई है कि बाहरी आक्रमण के समय कुटीर उद्योग बहुत लाभदायक सिद्ध होते है। युद्ध के समय शत्रु बडे-बडे उद्योगो मे बम डालकर उनको नष्ट-भ्रष्ट कर सकता है•पर वह कुटीर उद्योगो का कुछ भी नही बिगाड सकता। आक्रमण के समय बडी आसानी से उनको इधर-उधर ले जाया जा सकता है।

कुटीर उद्योगो के उन्नत होने से हमारे देश के सब भागो की आर्थिक उन्नति समान रूप से हो सकेगी। यह सत्य है कि पिछडे क्षेत्रो मे उद्योग चलाने से हम को निकट भविष्य मे कुछ घाटा होगा परन्तु जब तक देश के समस्त क्षेत्रो की उन्नति समान रूप से नही होती तब तक हम पिछडे क्षेत्रो के लोगो की योग्यता तथा शक्ति का ठीक उपयोग नही कर सकते। पिछडे क्षेत्रो की उन्नति केवल कुटीर उद्योगो द्वारा ही सभव है।

आजकल हमारे देश के लिये कुटीर उद्योगो का महत्व इसलिये भी है क्योकि इन उद्योगो को कोई ऐसा कच्चा माल नही चाहिये जिसमे कि विदेशी विनियम खर्च करनी पडे। इस प्रकार इन उद्योगो के द्वारा हम लोगो को रोजगार प्रदान करते हुए भी अपने विदेशी विनिमय के साधनो को बचा सकेंगे।

भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने इन उद्योगो के महत्व के विषय मे कहा है कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिये घरेलू उद्योगो का विशेष महत्व है और इस देश की आर्थिक व्यवस्था मे इनका ऊँचा स्थान होना चाहिये। आगे आपने कहा कि यदि इन उद्योगो को पर्याप्त प्रोत्साहन न दिया गया और ये लुप्त हो गये, तो इससे न केवल बडे पैमाने पर बेरोजगारी फैलेगी बल्कि कला का ह्रास होगा और देहातो मे रहने वाले लोग, जो इस देश की आबादी के ८० प्रतिशत हैं और भी निर्धन हो जायेंगे।

कुटीर उद्योगों की कठिनाइयां तथा दोष—आजकल हमारे कुटीर उद्योगो के सामने बहुत सी कठिनाइयाँ है तथा उनके कार्य करने के ढङ्ग मे बहुत दोष हैं जिनके कारण यह उन्नत नही होने पाते। बिना इन दोषो को दूर किये ये उद्योग कभी उन्नति न कर सकेंगे। ये दोष तथा कमियाँ निम्नलिखित हैं—

(१) इन उद्योगो की पहली कठिनाई यह है कि दस्तकारो को उद्योग के लिये सस्ते दामो पर कच्चा माल नही मिलता। इसलिये उनको कारखानेदारो पर निर्भर रहना पडता है और उन्ही के हाथ अपना पक्का माल बेचना पडता है। जब वे उधार माल लेते हैं तो उनको महगा मिलता है।

(२) दूसरी कठिनाई यह है कि दस्तकारो के पास पूजी की बहुत ही कमी है इस कारण उनको महाजनो तथा दूसरे लोगो से ऋण लेना पडता है। यह ऋण उनको बहुत ऊचे ब्याज पर मिलता है। इस कारण वे सदा ऋणी रहते हैं और सब प्रकार के कष्ट सहन करते हैं।

(३) तीसरी कठिनाई यह है कि दस्तकार प्रशिक्षा प्राप्त किये हुये नहीं हैं। इस देश मे दस्तकारी शिक्षा देने के साधन बहुत ही कम हैं और जो हैं भी वे बहुत महगे हैं। दस्तकारी केन्द्रो मे केवल धनी लोग ही अपने बच्चों को भेज सकते हैं।

(४) चौथी कठिनाई यह है कि इस देश के लोग अपने देश की बनी हुई वस्तुयें नही अपनाते। वे विदेशो की बनी हुई वस्तुयें काम मे लाने मे ही अपना गौरव मानते हैं। इसी कारण उनकी माग कम है।

(५) अभी हाल ही तक सरकार भी इनको कुछ प्रोत्साहन न देती थी। सरकार अपनी आवश्यकतायें जो करोडो रुपये की थी। इङ्गलंड से पूरी करती थी। अभी तक कुछ अशो मे यह नीति चली आ रही है। द्वितीय महायुद्ध मे यह बात सिद्ध हो गई है कि यदि सरकार चाहे तो कुटीर उद्योग बहुत उन्नति कर सकते है।

इन कठिनाइयो के अतिरिक्त दस्तकारी के कार्य करने मे बहुत से दोष हैं—

(१) दस्तकार लोग असगठित हैं। इस कारण वे अपने आपको दूसरो के शोषण से नही बचा सकते। यदि वे सगठित होते तो वे अपने हित की बहुत सी बातें सोच सकते थे तथा अपनी उन्नति भी कर सकते थे।

(२) दस्तकार लोग थोडा सामान खरीदते हैं तथा थोडा ही बेचते हैं। इसी कारण उनको बेचते समय तथा खरीदते समय घाटा होता है।

(३) दस्तकार लोग बहुधा रूढिवादी हैं। वे अभी तक पुराने औजारो से ही काम करते चले आ रहे हैं और नये औजार काम मे लाना पसन्द नही करते।

(४) कुटीर उद्योगो का सामान बेचने के लिये भी इस देश मे कोई अच्छा साधन नही है। दस्तकार गाँव के महाजन के हाथ या किसी कारखाने वाले को ही सस्ते दामो पर माल बेचते हैं।

कठिनाइयों तथा दोषो को दूर करने के उपाय—जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कुटीर उद्योग देश की उन्नति के लिये आवश्यक है। इसलिये उनको उन्नत करना हमारा कर्तव्य है। ये लोग निम्नलिखित ढङ्गो से उन्नत हो सकते हैं—

(१) दस्तकारो को चाहिये कि वे अपनी सहकारी समितिया बनायें। समितिया अपने सदस्यो के लिये आवश्यक मात्रा मे कच्चा माल खरीदें तथा पक्का माल बेचें। इन समितियो को यह भी चाहिये कि वे अपने सदस्यो के लिये शिक्षा का

प्रबन्ध करें। भारतीय केन्द्रीय बैंकिंग जाच कमेटी ने इस बात पर जोर दिया था कि दस्तकारो की सहायता के लिये सहकारी समितिया बनाई जायें।

यहा यह बात बताने योग्य है कि हमारे देश मे इस प्रकार की सहकारी समितिया पाई जाती है। इनमे से जुलाहो की सहकारी समितिया सबसे महत्वपूर्ण है। इस प्रकार की समितिया मद्रास और बम्बई मे अधिक पाई जाती है। १९४७-४८ में मद्रास मे ६५६ ऐसी समितिया थी। उन समितियो की कार्यशील पूजी १०७ लाख रुपये थी। इसी वर्ष बम्बई मे २११ ऐसी समितिया थी जिनकी कार्यशील पूजी ३२.५६ लाख थी। उत्तर प्रदेश मे भी ५५० प्रारम्भिक तथा ३८ केन्द्रीय समितिया इसी वर्ष मे थी। उनके ७८ ७७२ सदस्य थे तथा उनमे से प्रारम्भिक समितियो की कार्यशील पूजी १९ लाख रुपये थी तथा उन्होने उस वर्ष ८० लाख रुपये का माल बेचा। भारत के २८,८०,००० करघो मे से १९५७ ई० तक ११,२२,५३५ सहकारी आन्दोलन से लाभ उठा रहे थे। ३१ दिसम्बर १९५७ ई० तक भारत सरकार ने विभिन्न राज्यो को ९३,०९,०६५ रु० इसलिये दिये जिससे कि वे जुलाहो की सहकारी समितिया बनाने का प्रयत्न करें।

(२) दस्तकारो को चाहिये कि वे अच्छे औजारो को काम मे लाये। बिहार मे उन्नत औजारो का प्रयोग दिखाने के लिये निर्देशक नियुक्त किये गये है। कुटीर उद्योग गृह द्वारा बहुत प्रकार के प्रयोग किये जाते है। यह गृह जुलाहो को औजार, रग आदि भी देता है और जुलाहो को नये-नये नमूने भी बताता है। मध्य प्रदेश में भी जुलाओ को नये-नये प्रकार के औजार दिये जा रहे है। यह अति आवश्यक है कि इस प्रकार का कार्य और राज्यो से भी किया जाय तथा कपडा बनाने के अतिरिक्त और प्रकार के उद्योगो के लिये भी उन्नत औजार प्रदान किये जाये।

(३) दस्तकारो के लिये कम ब्याज पर ऋण का प्रबन्ध भी होना चाहिये। हमारे देश मे अभी तक ऋण लेने का साधन केवल गाव का महाजन है। कही-कही सहकारी समितिया भी ऋण देती हैं। पर उनकी सख्या बहुत कम है।

व्यापारिक बैंक दस्तकारो को रुपया उधार नही देते। थोडी आर्थिक सहायता सरकार के औद्योगिक विभाग (Department of Industries) से भी दी जाती है। इस प्रकार ऋण लेने का साधन केवल गाव का महाजन है। पर यह बहुत ऊची दर पर ऋण देता है। भारतीय केन्द्रीय बैकिंग जाच समिति ने बताया था कि इस देश म वर्तमान से अधिक सहकारी ऋण समितिया बनाई जानी चाहियें। औद्योगिक आयोग ने सुझाव दिया था कि उद्योगो के निर्देशक (Director of Industries) को छोटे ऋण देने चाहिये। उसने यह भी सुझाव दिया कि दस्तकारो को उधार-क्रय रीति (Hire Purchase System) पर औजार दिये जाये। परन्तु ऋण देने का सबसे अच्छा ढङ्ग सहकारी समितिया है। अभी कुछ दिनो से सरकार तथा रिजर्व बैंक इन उद्योगो को बडी सहायता प्रदान कर रहे है जिससे कि दस्तकार को महाजन आदि से ऋण न लेना पडे।

(४) यह भी आवश्यक है कि दस्तकारो द्वारा तैयार किया हुआ माल उचित रीति से बेचा जाय। अभी तक इस देश मे सिवाय थोडे स्थानो को छोडकर सामान बेचने का कोई उचित साधन नही है। यदि लखनऊ के उत्तर प्रदेश आर्ट तथा क्रेफ्ट इम्पीरियल जैसी सस्थाये इस देश में स्थापित हो जायें तो बहुत लाभ हो सरकार को चाहिये कि वह विदेशो मे भारतीय कुटीर उद्योग के सामान का प्रचार करे। हर्ष का विषय है कि वर्तमान सरकार इस ओर ध्यान दे रही है। सरकार ने देश में चारो ओर चलने फिरने वाली नुमायश भेजी है तथा बहुत से राज्यो मे दस्तकारी सप्ताह भी मनाये जा चुके हैं। दिल्ली मे कुटीर उद्योगो का अजायबघर बनाने की योजना है। १२ अप्रैल १९५८ ई० की एक सूचना के अनुसार भारत सरकार Indian Handicrafts Development Corporation (Private) Limited स्थापित किया है। इसकी अधिकृत पूंजी १ करोड रुपये है। यह कारपोरेशन कुटीर उद्योगो की उत्पत्ति को इस प्रकार चलायेगी जिससे कि विदेशी माग को शीघ्र ही पूरा किया जा सके। इस कारपोरेशन का मुख्य कार्य हम-उद्योगो के माल को विदेशो मे निर्यात के लिये प्रोत्साहन देना होगा।

इस सब प्रयत्न के फलस्वरूप हमारा बहुत सा कपडा तथा अन्य सामान अमेरिका आदि देशो मे बिक रहा है। पश्चिमी जर्मनी, अफ्रीका आदि देशो मे निर्यात करने का प्रयत्न जारी है। भारतीय कुटीर उद्योगो का माल प्रेग, लन्दन, पेरिस, नेराबी आदि स्थानो मे होने वाली अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियो मे दिखाया गया है। १९५६-५७ मे सोवियत रूस तथा जेकोस्लोवेकिया से भारतीय हाथ के उद्योगो के बहुत से आर्डर प्राप्त है।

(५) दस्तकारी की शिक्षा का प्रबन्ध करना भी बहुत आवश्यक है। यह शिक्षा सस्ते दामो पर होनी चाहिये। बम्बई राज्य मे इस ओर ध्यान दिया जा रहा है, पर अभी तक जो कार्य हुआ है वह महासागर मे एक बिन्दु के समान है। इस ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। हमारे देश मे अब सरकार का ध्यान इस ओर जाने लगा है। अभी हाल ही मे उत्तर प्रदेश के शिक्षा मन्त्री ने घोषणा की थी कि भविष्य मे उत्तर प्रदेश के स्कूलो मे बच्चो को हाथ से चीजे बनाना सिखाई जायेगी। वर्धा शिक्षा प्रणाली मे भी इसी प्रकार की शिक्षा पर जोर दिया जाता है आजकल इस देश मे शिक्षा लेने वालो की कमी नही है। कमी है शिक्षा के केन्द्रो की। कुटीर उद्योगों को टैक्नीकल सहायता प्रदान करने का कार्य केन्द्रीय सरकार ने अपने ऊपर लिया है। बम्बई, कलकत्ता देहली तथा मद्रास मे चार क्षेत्रीय सस्थाये तथा त्रिवेन्द्रम मे एक-एक शाखा पहले से ही कार्य करने लगी है। टैक्नीकल मामलो मे सहयोग देने के लिये विदेशो से विशेषज्ञ बुलाये गये है कांग्रेस द्वारा प्रकाशित 'स्वतन्त्रता का दसवाँ वर्ष' नामक पुस्तक के ९८ पृष्ठ पर लिखा है कि ट्रेनिङ्ग के प्रोग्राम पर काफी जोर डाला जा रहा है। दस्तकारो को तालीम देने के लिये विभिन्न ग्राम उद्योगो के लिये बहुत से ट्रेनिंग केन्द्र खोले गये हैं।

(६) सरकार को भी यह चाहिये कि वह इस देश के दस्तकारो से अपनी आवश्यकता पूरी करने का प्रयत्न करे। यदि सरकार ऐसा करने लगे तो कुटीर उद्योगो को बहुत लाभ हो।

(१) कुटीर उद्योगो के लिये कुछ क्षेत्र निश्चित किये जा रहे हैं जिसमे कि उन क्षेत्रो मे उनके साथ बडे पैमाने के उद्योगो की कोई प्रतियोगिता न हो।

(२) कुटीर उद्योग से लाभ के लिये उसी प्रकार के बडे पैमाने के उद्योग पर उपकर (Cess) लगाया जा रहा है।

(३) जहाँ तक हो सके बडे पैमाने के उद्योग को उन्नत न किया जाय।

सरकारी सहायता

कुटीर उद्योगो की व्यवस्था करने का कार्य मुख्यत राज्य सरकारो पर है। इस कार्य मे सहायता करने के लिये सरकार ने ये सस्थायें स्थापित की हैं। अखिल भारतीय खादी बोर्ड, कुटीर उद्योग बोर्ड, कोयर बोर्ड तथा केन्द्रीय रेशम बोर्ड।

कुटीर उद्योगो को सरकार तथा बैंक दोनो ही सहायता देते हैं। हाल ही मे सहायता को प्रभावी बनाने के लिये कुछ कदम उठाये गये है। १९५७–५८ मे ३ ३ करोड के ऋण तथा १ १ करोड रु० की सहायता राज्य सरकारो को कुटीर उद्योगो की सहायता करने के लिये दिये गये है। सरकार ने ७२ औद्योगिक स्टेट स्थापित करने के लिये मजूरी दी है। इन स्टेटो का उद्देश्य यह है कि छोटे उद्योगो को नगरो से हटा कर नये-नये स्थानो पर स्थापित किया जाये। इनको फैक्ट्री के बराबर स्थान दिया जायगा। इन स्टेटो मे विभिन्न उद्योगो को कुशल कार्य करने के लिये कुछ सामान्य सुविधायें प्रदान की जायेंगी। जैसे ये भूमि का विकास करेंगी, छोटे औद्योगिक केन्द्रो के लिये आवश्यक कार्य केन्द्रो की इमारतो को बनायेंगी, बिजली, पानी, गैस, भाप, दबावयुक्त वायु और अन्य सुविधाओ का प्रबन्ध करेंगी और सामुदायिक सेवाओ की व्यवस्था करेंगी। सितम्बर १९५८ तक १७ ऐसी स्टेटे तैयार हो चुकी थी। इन स्टेटो के बनाने की कुल लागत राज्यो सरकारो को केन्द्रीय सरकार ऋण के रूप मे देगी। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे सामुदायिक उन्नति ब्लाको मे जिन १६ स्टेटो के बनाने की सिफारिश की गई है उनमे से २ बनाई जा रही है। योजना मे इन स्टेटो को बनाने की लागत १० करोड से उठा कर १५ करोड कर दी गई है।

कुटीर उद्योगो को टेक्निकल सहायता प्रदान करने के लिये केन्द्रीय सरकार के औद्योगिक विस्तार सेवा (Industrial Extension Service) का प्रोग्राम चालू किया है। चार क्षेत्रीय सस्थायें बम्बई, नई दिल्ली तथा मद्रास मे, १२ बडी-बडी सस्थाये, पाँच शाखा सस्थायें तथा ६२ विस्तार केन्द्र भी कार्य कर रहे है। दिसम्बर १९५८ मे इस सेवा कार्य का पुनर्सगठन किया गया था जिससे कि प्रत्येक राज्य मे एक-एक सस्था स्थापित की जा सके। Ford Foundation के अन्तर्गत विदेशो से

इन उद्योगो को सहायता करने के लिये विशेषज्ञ बुलाये जाते है तथा यहाँ के आदमी विदेशो मे प्रशिक्षा लेने के लिये विदेशो मे भेजे जाते है।

फरवरी १९५५ ई० मे एक राष्ट्रीय लघु उद्योग कारपोरेशन की स्थापना की गई है जो कि सरकार से माल स्पलाई करने के लिये आर्डर लिया करेगा। इस आर्डर की स्पलाई वह छोटी-छोटी इकाइयो को ठेका देकर पूरी करेगा। अभी तक ३१६० छोटी इकाइयो के ऐसे समझौते हो चुके हैं। १९५५–५६ मे केन्द्रीय सरकार ने कुटीर उद्योगो के ३ ४ करोड़ रु० का माल खरीदा। कारपोरेशन ने छोटी-छोटी इकाइयो के लिये मशीने खरीदने के लिये उधार-क्रम (Hire Purchase) की एक योजना चालू की गई है। इस योजना के अन्तर्गत १ ४३ लाख रु० की मशीन खरीदी जा चुकी है। इस कारपोरेशन का कार्य चलाने के लिये केन्द्रीय सरकार ने अभी तक १'२० करोड रु० के ऋण व सहायता प्रदान की है।

सामूहिक विकास क्षत्रो तथा राष्ट्रीय विस्तार सेवा क्षेत्रो मे भी कुटीर उद्योगो को उन्नत करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इस प्रकार का प्रोग्राम २६ क्षेत्रो मे चल रहा है।

अखिल भारतीय दस्तकारी बोर्ड जो कि १९५२ मे स्थापित हुआ था इस बात का प्रयत्न कर रहा है कि देश तथा विदेशो म कुटीर उद्योगो के उत्पादन तथा बिक्री की उन्नति हो। भारतीय दस्तकारी विकास कारपोरेशन निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये स्थापित किया गया है। इस कारपोरेशन ने चलती-फिरती नुमायशो को देश मे इधर-उधर भेजा है तथा विभिन्न राज्या मे 'दस्तकारी सप्ताह' बहुधा मनाये जाते हे। आजकल हाथ से बने हुये सामान का मूल्य लगभग १०० रु० वार्षिक होगा। इस से लगभग ७ करोड रु० का माल विदेशो को निर्यात किया गया।

प्रथम पचवर्षीय योजना मे केन्द्रीय सरकार ने विभिन्न बोर्डों के द्वारा निम्न-लिखित सहायता प्रदान की—

प्रथम पच वर्षीय योजना मे कुटीर उद्योगो पर किया गया खर्च।

करोड रु० मे

	१९५१–५६
हथकर्घा	१२ २
खादी	१२ ३
ग्राम उद्योग	२ ९
छोटे पैमाने के उद्योग	४ ४
दस्तकारी	० ८
रेशम उद्योग	० ७
नारियल उद्योग	० ३
योग	३३ ६

द्वितीय पन्च वर्षीय योजना मे २०० करोड रु० रखे गये हैं जो इस प्रकार खर्च किये जायेंगे—

उद्योग का नाम	करोड रु० मे
हथ कर्घा	
रुई कातना	५६ ०
रेशम कातना	१ ५
ऊन कातना	२ ०
योग	५९ ५
खादी	
ऊन कातना व बुनना	१ ९
विकेन्द्रित सूत्र कातना तथा खादी	१४ ८
योग	१६७
ग्राम उद्योग	
ढेकी से चावल निकालना	५ ०
वेजीटेबिल तेल (घानी)	६ ७
चमडा रगना व जूता बनाना (ग्राम)	५ ०
गुड तथा खडसारी	७ ०
कुटीर दियासलाई	१ १
अन्य ग्राम उद्योग	१४ ०
योग	३८ ८
दस्तकारी	९ ०
छोटे-पैमाने के उद्योग	५५ ०
अन्य उद्योग	
रेशम	५ ०
नारियल कातना व बुनना	१ ०
सामान्य योजनाय (कार्य सचालन, रिसर्च)	१५ ०
योग	२०० ०

ग्राम उद्योगो पर योजना के पहले दो वर्षों मे ५९ करोड रु० खर्च हुआ।

इसके अतिरिक्त लघु उद्योगो को सरलता से और समुचित अर्थ प्राप्त हो सके, इसके लिये इस दिशा मे वित्तीय सहायता प्रदान करने वाली सभी सस्थाओ के परस्पर सहयोग से एक कार्य-क्रम बनाया गया। अप्रैल १९५६ मे स्टेट बैंक आफ इ डिया ने रिजर्व बैंक, राज्यो के उद्योग विभागो राज्यवित्त नियमो तथा सहकारी बैंको के सहयोग से एक प्रायोगिक योजना आरम्भ की। उस समय यह केवल ९ स्थानो मे स्थापित की गई थी परन्तु अब यह ५० से अधिक नगरो पर काम कर रही है। इस योजना के अनुसार उद्योग को एक सस्था से ही ऋण लेना चाहिये।

१

अम्बर चर्खा—द्वितीय योजना काल मे कातने के लिये अम्बर चर्खे पर जोर दिया गया है। इसमे चार ताक होते हैं। इस कारण १९५६–५७ के लिये ७५००० अम्बर चर्खे चालू करने की स्वीकृति दी गई। दिसम्बर १९५६ तक ३७१७५ ऐसे चर्खे बनाये गये तथा उन से २,१४,७११ पौंड सूत काता गया तथा ५,८३,८८४ वर्ग गज कपडा बनाया गया। १९५७–५८ मे इस चर्खे से १११ ५ लाख वर्ग गज कपडा बनाया गया। १९५६–५७ मे अम्बर चर्खे से ५७२७० लोगो को तथा १९५७–५८ मे १,१०,१५३ लोगो को रोजगार मिला।

तीसरी योजना—१९५८ के अन्तिम भाग मे श्री लाल बहादुर शास्त्री ने कहा था कि "तीसरी योजना मे लघु उद्योगो ··· पर बल देना ही होगा।" हाल ही मे शास्त्री ने कहा है कि "सरकार तीसरी योजना की अवधि मे लघु उद्योगो की स्थापना के लिये ५ अरब से लेकर ६ अरब रुपये तक की रकम निर्धारित करना चाहती है।"

खार्वे समिति रिपोर्ट—यह समिति जून १९५५ मे नियुक्त की गई थी। इस समिति को निम्नलिखित बातो को ध्यान मे रखकर एक योजना तैयार करनी थी—

(१) वे चीजें, जिनकी सर्वसाधारण मे माग हो, द्वितीय योजना काल मे अधिकतर कुटीर उद्योगो द्वारा बनाई जायें।

(२) इन उद्योगो द्वारा रोजगार निरन्तर बढता रहे।

(३) इन उद्योगो का उत्पादन व बिक्री सहकारी ढङ्ग पर हो।

इस रिपोर्ट की मोटी-मोटी बातो को मानकर द्वितीय योजना मे उनको सम्मिलित कर लिया गया है।

इस समिति द्वारा दिये गये सुझावो का पहला उद्देश्य यह है कि उत्पादन के नये साधनों को ग्रहण करने के कारण पू जी व श्रम मे जो बेरोजगारी फैलनी है उसको ठीक तथा योजनाबद्ध ढङ्ग से दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। इसका दूसरा उद्देश्य यह है कि जो मजदूर बेरोजगार है या जिनको पूरे समय काम नही मिलता उनको अधिक से अधिक रोजगार उन उद्योगो मे मिल जाये जिनको उन्होंने अपने घर मे रह कर सीखा है या जिनके चलाने के लिये उनके पास पर्याप्त मात्रा मे समान है।

कुटीर व छोटे पैमाने के उद्योगो की उन्नति सहकारी ढङ्ग को अपनाने से ही हो सकती है। इन उद्योगो को कुछ समय तक अचल व चल पू जी राज्यों को देनी पडेगी, राज्य वित्त कारपोरेशनों को इन उद्योगो की दीर्घकालीन आवश्यकताओ के लिये ऋण देना पडेगा। चालू आवश्यकताओ के लिये सहकारी केन्द्रीय वित्त सस्थाओ द्वारा ऋण दिये जायेंगे और यह प्रयत्न किया जायगा कि इन ऋणो को उसी प्रकार ..या जाये जिस प्रकार कि फसलों को ऋण दिया जाता है। वे ग्राम उद्योग जो सहकारी ढङ्ग पर चल रहे हैं उनको ऋण देने की रिजर्व बेंक पर ही जिम्मेदारी होगी जो कि उस पर कृषि साख देने की है।

खार्वे समिति ने सुझाव दिया है कि अखिल भारतीय ६ बोर्डों के कार्य का एकीकरण करने तथा केन्द्र द्वारा बनाई हुई योजनाओं को जिला, ताल्लुका व ग्रामो तक पहुचाने के लिये एक अलग मन्त्रालय स्थापित किया जाये। कुछ लोगो का सुझाव है कि बडे व छोटे उद्योगो मे एकीकरण स्थापित करने के लिये केवल एक ही मन्त्रालय होना चाहिये। आजकल खार्वे समिति के सुझावो के साथ-साथ एक अलग मन्त्रालय स्थापित करने के प्रश्न पर भी विचार हो रहा है।

Q. 51. What are the causes of Industrial backwardness of India ? How would India benefit by the industrial development ?

प्रश्न ५१—भारत के औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े हुये होने के क्या कारण हैं ? भारत को औद्योगिक उन्नति से क्या लाभ हैं ?

औद्योगिक दृष्टि से पिछड़े होने का अर्थ—भारतवर्ष मे बड़े पैमाने के उद्योग १९ वी शताब्दी के मध्य के पश्चात् से चलने आरम्भ हुये हैं। उस दिन से हमारे देश मे निरन्तर उद्योगो की उन्नति हुई है जिसके फलस्वरूप आज भारतवर्ष ससार के सब देशो मे औद्योगिक विकास की दृष्टि से आठवाँ नम्बर लिये हुए है। फिर भी हमे यह बात कहनी पड़ेगी कि हमारा देश औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। ऐसा हम निम्नलिखित बातो के कारण कहते है—

(१) हमारे देश मे १९५१ की जनगणना के अनुसार लगभग ७० प्रतिशत लोग खेती पर लगे हुये हैं और केवल ११ प्रतिशत खानो व उद्योग-धन्धो मे लगे हुए है। इस प्रकार हमारी राष्ट्रीय आय की लगभग ५० प्रतिशत आय खेती तथा सहायक उद्योगो से प्राप्त होती है और केवल १६ प्रतिशत आय खानो, कुटीर उद्योगो से प्राप्त होती है। इस बात से देश का औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ होना प्रत्यक्ष है।

(२) हमारे देश मे सब प्रकार के उद्योग-धन्धे नही है। यहा पर केवल वही उद्योग है जिनमे लाभ अधिक होने की सम्भावना है जैसे सूती कपड़े, चीनी आदि के उद्योग, शेष उद्योग, जिनमे आधारभूत उद्योग सम्मिलित हैं, इस देश मे प्राय नही हैं। आज भी हमको मशीनो के पुर्जो, भारी रासायनिक पदार्थों आदि के लिये विदेशो के ऊपर निर्भर रहना पड़ता है।

(३) देश के विस्तार व प्राकृतिक साधनो को देखते हुये अभी तक इस देश मे उद्योग-धन्धो की बहुत कम उन्नति हुई है।

(४) आज भी हमारे देश मे टेक्नीकल और रासायनिक विशेषज्ञो, इन्जीनियरो आदि की बड़ी कमी है। ये हमको बड़े-बड़े वेतन देकर विदेशो से बुलाने पड़ते हैं। इसका कारण यह है कि इस प्रकार के लोगों को तैयार करने के लिये हमारे देश मे उचित प्रशिक्षा (Training) का प्रबन्ध नही है।

औद्योगिक दृष्टि से पिछडे होने के कारण—

हमारे देश के औद्योगिक दृष्टि से पिछडे हुए होने के निम्नलिखित कारण हैं—

(१) सरकार का उद्योगों की ओर सौतेली-मा वाला व्यवहार—जिस समय से हमारे देश मे उद्योग-धन्धो की उन्नति हुई है उस समय से पहले से ही यहाँ पर विदेशी शासन था। इस शासन को देश की औद्योगिक उन्नति मे कोई दिलचस्पी न थी। इसका सदा यह प्रयत्न रहा कि यह देश पक्के माल का आयात कर्त्ता तथा कच्चे माल का निर्यातकर्त्ता बन जाए। इस कारण सरकार ने कभी भी उद्योगो की उन्नति की ओर ध्यान न दिया। प्रथम महायुद्ध तक के देश अबाध व्यापार (Free Trade) की निति पर था जिसके फलस्वरुप सब प्रकार का पक्का माल सस्ते दामो पर इस देश मे आता था और उसी के कारण यहाँ के उद्योग-धन्धे पनपने नही पाते थे। यही नही सरकार अपनी आवश्यकता के लिए जो करोडो रुपए का माल खरीदती थी वह सब इङ्गलैंड से आता था। यदि वह माल भारत वर्ष से खरीदा जाता तो इस देश के बहुत से उद्योग-धन्धे पनप जाते। इसके अतिरिक्त सरकार ने इस देश मे टक्नीकल-प्रशिक्षा का कोई प्रबन्ध नही किया जिसके कारण हमारे देश मे कारखानो आदि को चलाने के लिये योग्य इन्जीनियर आदि उत्पन्न न हो सके। इस देश मे सबसे पहले प्रथम महायुद्ध मे सरकार ने यह बात अनुभव की कि इस देश मे उद्योग धन्धो की उन्नति होने से सरकार को बहुत लाभ हो सकता है। इस कारण युद्ध समाप्त होने पर सरकार ने अबाध व्यापार की नीति को छोडकर सरक्षण की नीति को अपनाया। पर क्योकि सरक्षण की नीति भी उदार न थी इस कारण यहाँ पर उद्योग-धन्धो की बहुत अधिक प्रगति न हो सकी परन्तु फिर भी पहल से अधिक थी।

(१) पूजी की कमी—अब से कुछ वर्ष पूर्व तक भारतीय पूजी को शर्मीली कहा जाता था। इसका कारण यह था कि पूजीपति लाभ की अनिश्चितता के कारण उद्योग धन्धो मे अपनी पूजी लगाने को तैयार न थे। देश के पूजीपतियो के आगे न बढने के कारण विदेशियो ने इस देश मे कई प्रकार के कारखाने चलाए। आज भी अधिकतर जूट मिलो मे विदेशी पूजी लगी हुई है। सूती कपडे का उद्योग भी, जिसमे आज पूर्ण रूप से भारतीय पूँजी लगी हुई है, विदेशियो द्वारा ही इस देश मे चालू किया गया। इस प्रकार हमारे देस मे विदेशी पूजी का अनुमान ८०० से १२०० करोड रु० तक किया गया है। आजकल भारतीय पूजी के औद्योगिक क्षेत्र मे आ जाने पर भी हमारे देश की पूँजी की कमी पूरी नहीं हुई है। विदेशी सहायता न मिलने के कारण हमारी पचवर्षीय योजना के पूरा होने मे कठिनाई पडी है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पूजी की कमी हमारे देश की औद्योगिक प्रगति मे बडी बाधा है।

५ (३) सस्ती शक्ति की कमी—भारत मे शक्ति के साधनो मे कोयला ही अभी तक मुख्य है क्योकि पैट्रोल इस देश मे निकलता नही और बिजली शक्ति

अभी हाल ही मे प्राप्त की गई है और वह देश की आवश्यकता को देखते हुए बहुत ही कम है। रही कोयले की बात, वह भी इस देश मे अधिक नही निकाला जाता। यहाँ पर घटिया प्रकार का कोयला पाया जाता है और इसका भी देश के सब भागो मे वितरण नहीं है। सब कोयला छोटा नागपुर के प्लेटो मे मे केन्द्रित है। इस स्थान से दूर-दूर के स्थानो तक इसको सस्ते दामो पर भी नही पहुचाया जा सकता क्योंकि हमारे देश मे रेल का भाडा बहुत अधिक है। यही कारण है कि कारखानो का शक्ति के अभाव मे चलना कठिन है।

(४) **कुशल श्रम की कमी**—उद्योग धन्धो को चलाने मे जहाँ एक ओर साधारण मजदूरो की आवश्यकता पडती है। वहाँ दूसरी ओर कुशल मजदूरो की भी आवश्यकता पडती है। पर यद्यपि इस देश मे रोजगार की तालाश मे फिरने वाले लोगो की कमी नही है परन्तु उनमें से बहुत कम ऐसे हैं जो कुशल हैं। इस कमी के कारण उद्योग धन्धो को चलाने मे बडी कठिनाई उत्पन्न होती है।

(५) **योग्य व्यवस्थापकों की कमी**—हमारे देश मे योग्य व्यवस्थापको की भी बडी कमी है। इस देश मे इस प्रकार के लोगो को तैयार करने के लिये प्रशिक्षा का कोई प्रबन्ध नही है। अभी हाल ही में हमारे देश के लोग विदेशो मे जाकर इस प्रकार की प्रशिक्षा ग्रहण करते हैं। पर इस प्रकार कितने लोग प्रशिक्षा प्राप्त कर सकते हैं और वे किस प्रकार सारे देश की आवश्यकता पूर्ति कर सकते हैं। यही कारण है कि हमको अपने कारखानो मे बड-बड़े पदो पर विदेशी व्यवस्थापको को रखना पडता है और उनको बड-बडे वेतन देने पडते हैं। योग्य व्यवस्थापको की कमी के कारण भी हमारे देश के औद्योगिक विकास मे बडी बाधा पडी है।

(६) **कच्चे माल की कमी**—हमारे देश मे कच्चे माल की भी कमी पाई जाती है। आज भी हमको अपना सूती मिलो के लिए लम्बे रेशे वाली रुई, जूट मिल के लिए जूट आदि विदेशो से मगाना पडता है और उसके कारण हमारे सामान का प्रति इकाई उत्पादन व्यय बढ जाता है और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों मे हमारी प्रतियोगी शक्ति कम हो जाती है। यही नही, यदि हम जूट के सामान के लिए विदेशो से कच्चा माल मगाने मे असफल हो जाते हैं तो हमको अपनी मिलें भी बन्द करनी पडती हैं।

(७) **रेल भाडे की नीति**—हमारे देश मे रेल भाडे की नीति भी हमारी औद्योगिक उन्नति मे बाधक रही है। यहाँ पर रेलो का भाडा बहुत अधिक है। इसके अतिरिक्त यदि कच्चा माल बन्दरगाहों को भेजा जाता है तो उस पर भाडा कम है परन्तु यदि यही माल देश के एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र तक भेजा जाता है तो उस पर अधिक भाडा लिया जाता है। इस नीति के कारण हमारे देश मे बन्दरगाहो पर ही बहुत से उद्योग केन्द्रित हो गये हैं और देश के भीतर के केन्द्रो मे उद्योग-धन्धे उत्पन्न न हो सके।

औद्योगिक उन्नति के लाभ—यदि हमारे देश की औद्योगिक उन्नति होती है तो उससे निम्नलिखित लाभ होने की आशा है—

(१) संतुलित अर्थ-व्यवस्था—यह बात हम पहले ही बता चुके हैं कि हमारे देश के लगभग ७० प्रतिशत लोग खेती पर लगे हुए है। यह हमारे देश के लिये दुर्भाग्य की बात है। यदि किसी वर्ष मानसून फेल हो जाता है तो देश के ऊपर बडा सकट आ जाता है। ऐसी स्थिति मे यदि देश मे बडे-बडे उद्योग धन्धो की उन्नति हो जाये तो देश के बहुत से लोग खेती से हटकर उद्योग-धन्धो मे लग जायेगे। इस प्रकार भूमि पर से जनसख्या का दबाव कम हो जायेगा। इससे खेती की अवस्था ठीक हो जायेगी। देश को इससे यह लाभ होगा कि खेती की अनिश्चितता के कारण जो कष्ट उठाना पडता है वह कष्ट कम हो जायगा।

(२) राष्ट्रीय आय मे वृद्धि—उद्योग धन्धो के उन्नत होने पर देश की राष्ट्रीय आय बहुत बढ जायेगी। राष्ट्रीय आय बढ जाने का कारण जनसाधारण का जीवन-स्तर ऊचा हो जायेगा। जीवन-स्तर ऊ चा होने पर लोगो की कार्यक्षमता बढ जायेगी। कार्य क्षमता बढ जाने पर देश मे अधिक उत्पत्ति होगी। इस प्रकार देश को बडा लाभ होगा।

(३) कर देने की योग्यता मे वृद्धि—राष्ट्रीय आय मे वृद्धि होने पर देश के लोगो की कर देने की योग्यता बढ जायेगी। इसके कारण सरकार की आय भी बढ जायेगी। आय बढ जाने पर सरकार की बहुत सी योजनायें जो अब धन की कमी के कारण पूरी नही हो पाती वे भी पूरी हो जायेगी।

(४) बेरोजगारी की समस्या का सुलझना—उद्योग धन्धो के उन्नत होने के कारण हमारे देश के हजारो लोग जो आज बेरोजगार फिर रहे हैं उनको रोजगार मिल जायेगा। इस प्रकार सरकारी नौकरी पर निर्भरता बहुत कुछ कम हो जायेगी।

(५) खेती की उन्नति होना—उद्योग धन्धो की उन्नति के होने से खेती को लाभ होगा। यह लाभ इसलिये ही नही होगा कि खेती पर से जनसख्या का दबाव कम हो जायगा वरन् इसलिये भी होगा कि खेती सम्बन्धी औजार भी उन्नत हो जायेंगे और इससे खेती की उन्नति होगी।

(६) देश की रक्षा की दृष्टि से लाभ— उद्योग धन्धो की उन्नति के कारण देश शक्तिशाली हो जायेगा क्योंकि देश मे ही युद्ध सम्बन्धी सामग्री तैयार होने लगेगी। आजकल के युग मे जबकि सारे ससार मे हथियार बनाने की दौड लगी हुई है यह बात बहुत आवश्यक है क्योंकि कमजोरी एक पाप है तथा यह शक्तिशाली को आक्रमण करने का प्रोत्साहन देती है। इसलिये यदि हम चाहते हैं कि हम ससार मे सुख से रहे तो हमको युद्ध सामग्री तैयार करनी पडेगी। इसके लिये कारखानो की आवश्यकता है।

(७) लोगो मे मितव्यता की आदत का पडना—देश मे उद्योग धन्धो की उन्नति होने से पूंजी की माग बढ जायेगी। इसके फलस्वरूप बैंको आदि की उन्नति

होगी। बैंक के अधिकाधिक खुल जाने के कारण लोगो मे रुपया बचाने की आदत पड जायेगी।

(८) **सभ्यता का विकास**—उद्योग धन्धो की उन्नति के कारण देश मे सभ्यता का विकास होगा क्योकि उद्योग धन्धो के कारण नगरो का विकास होता है और नगर सभ्यता के केन्द्र होते है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि हमको औद्योगीकरण से लाभ अवश्य होगा। यहाँ यह बात बतानी आवश्यक है कि गाँधी जी औद्योगीकरण के पक्ष मे नही थे। वे इस देश मे कुटीर उद्योगो की उन्नति चाहते थे। हम देश की वर्तमान स्थिति ने कुटीर उद्योगो के महत्व को मानते हुए यह कह सकते है कि बडे-बडे उद्योग भी चलाने बहुत आवश्यक हैं क्योकि इस औद्योगिक युग मे केवल कुटीर उद्योगो पर निर्भर रहना हमारे लिये हितकर न होगा। हमारे प्रधान मन्त्री श्री नेहरु भी देश के औद्योगीकरण के पक्ष मे हैं।

Q 52 Describe the existing system of industrial finance India and make suggestion for its development in the future

प्रश्न ५२—भारत की वर्तमान औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था का वर्णन कीजिये और भविष्य मे इसकी उन्नति के लिये सुझाव दीजिये।

बडे-बडे उद्योगो की द्रव्य सम्बन्धी आवश्यकता दो प्रकार की होती है। पहली, भारी पदार्थो को प्राप्त करने सम्बन्धी आवश्यकता—इसमे भूमि, मशीन, इमारत, फर्नीचर आदि खरीदने के लिये धन की आवश्यकता होती है। दूसरी, दैनिक कार्यो को चलाने सम्बन्धी आवश्यकता—इसमे कच्चा माल, कोयला आदि खरीदने व मजदूरो को मजदूरी देने की आवश्यकता आती है। इनमे से दूसरी प्रकार की आवश्यकता साधारणतया व्यापारिक बैंको द्वारा पूरी हो जाती है परन्तु पहली प्रकार की आवश्यकता की पूर्ति के लिये विशेष प्रकार की सस्थाओ, जिनको औद्योगिक बैंक कहते हैं, की आवश्यकता पडती है। इस प्रकार की आवश्यकता पूर्ति के लिये प्राय सभी देशो मे ऐसी सस्थायें पाई जाती हैं। इस प्रकार की सस्थाओ के कुछ उदाहरण फ्रांस मे बैंक डी पेरिस, अमरीका मे इश्यू हाउसेज, जर्मनी मे ग्रोस बैंकन, इङ्गलैण्ड मे ब्रिटिश ट्रेड कार्पोरेशन आदि हैं। भारतवर्ष मे १९४८ ई० से औद्योगिक अर्थ प्रमडल (Industrial Finance Corporation) की स्थापना इसी उद्देश्य से की गई थी।

भारतवर्ष मे वर्तमान औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था—

भारतवर्ष मे उद्योगो को अग्रलिखित ढग से आर्थिक सहायता प्राप्त होती है—

(१) **हिस्सो तथा ऋण पत्रों से**—बडे-बडे उद्योग अपनी पूञ्जी को हिस्से तथा ऋण पत्र बेचकर प्राप्त करते हैं। इनमे से हिस्सो द्वारा अधिकतर पूञ्जी प्राप्त की

जाती है और ऋण पत्रो द्वारा बहुत कम। इसका कारण यह है कि हमारे देश मे लोगो को अधिक समय तक के लिये अपना रुपया लगाने मे डर लगता है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर बैंक इनमे अपना धन लगाने को तैयार नही हैं। यहाँ पर ऋण पत्रो के हस्तान्तरित करने पर बहुत भारी स्टाम्प कर लगता है। अन्त मे यह बात भी है कि इस देश मे ऐसी कोई सगठित सस्था या सघ नही है जो कि ऋण पत्रो को उठाने का कार्य करे। यदि हमारे देश मे पूजी ऋण पत्रो द्वारा प्राप्त हो जाया करती तो उद्योगो को अपनी अचल सम्पत्ति सम्बन्धी आवश्यकता का पूरा करने मे कोई कठिनाई उपस्थित न होती। परन्तु ऋण पत्रो से पर्याप्त मात्रा म धन न मिल सकने के कारण हमारे देश मे एक विशेष प्रकार की पद्धति का जन्म हुआ जिसको मैनेजिंग एजेन्सी कहते है।

मैनेजिंग एजेन्ट—ये एक व्यक्ति, फर्म अथवा कम्पनी हो सकते हैं। इनके साधन बहुत अधिक होते हैं। इन साधनो के फलस्वरूप ही उन्होने भारत की बहुत सी कम्पनियों को चलाने मे सहायता दी और समय समय पर उनकी और भी सहायता करते रहते हैं। इस प्रकार उनके निम्नलिखित कार्य हैं—

(अ) वे उद्योगो को चलाते हैं।

(आ) वे औद्योगिक कम्पनियो के हिस्से बेचने म सहायता करते हैं और यदि वे आवश्यकता से कम बिकते हैं तो उनको स्वय खरीद लेते हैं।

(इ) वे उद्योगो की दैनिक आवश्यकता की पूर्ति या तो स्वय कर देते हैं या उसको प्राप्त कराते हैं।

यद्यपि मैनेजिंग एजेन्ट भारत के उद्योगो की इतनी सहायता करते है तो भी हम यह कहे बिना नही रह सकते हैं कि उन दोषो के कारण जो उनम आ गये है वे लाभप्रद के स्थान पर हानिकारक होते जा रहे हैं। इन दोषो के कारण ही १९३६ के सशोधित भारतीय कम्पनीज ऐक्ट म तथा अभी हाल ही मे उनके कार्य के ऊपर बहुत ही पाबन्दियाँ लगा दी गई है।

मैनेजिंग एजेन्सी प्रणाली का उन्मूलन

कम्पनी विधेयक के सम्बन्ध मे नियुक्त सयुक्त प्रवर समिति के सुझाव के अनुसार, जिसकी रिपोर्ट ससद मे उपस्थित की गई थी, भारतीय ससद ने मैनेजिंग एजन्सी प्रणाली के वर्तमान स्वरूप को समाप्त कर देने का निश्चय किया है। इस निश्चय के अनुसार विशिष्ट उद्योगो को छोडकर शेष सभी मे मैनेजिंग एजन्टो को १५ अगस्त १९६० से पदच्युत कर दिया जायेगा। इसके बाद केवल उन्ही व्यक्तियो को मैनेजिंग पद पर नियुक्त किया जायगा जो सरकार की दृष्टि में इसके लिये उपयुक्त और योग्य समझे जायेंगे। स्पष्ट है कि समिति के सुझावो को मान कर ससद ने एक बात साफ कह दी है कि वह मैनेजिंग एजन्सी प्रणाली को समाप्त नही करना चाहती। उसकी उपयोगिता म उसका विश्वास अब भी है। यह भी

निश्चय हुआ है कि किसी एक मैनेजिंग एजेन्ट के जिम्मे १० से अधिक कम्पनियां नहीं होंगी। यह संख्या किस आधार पर निश्चित की गई है, यह स्पष्ट नहीं है। उचित तो यही था कि उद्योगों के वैयक्तिक क्षेत्र में उनकी आवश्यकता को देखकर उनके वर्तमान रूप में कोई सुधार कर दिया जाता।

(३) डिपोजिट—बम्बई तथा अहमदाबाद की सूती कपडे की मिलें बहुत सा धन जान पहचान के लोगों से जमा के रूप में प्राप्त करती हैं। इनके बदले मिल मालिक जमा करने वालों को उसी के हिसाब से लाभांश देते हैं। परन्तु धन प्राप्त करने का यह ढङ्ग सन्तोषजनक नहीं है क्योंकि जमा करने वाला उसको किसी भी समय माँग सकता है। ऐसी स्थिति में कभी कभी आर्थिक सकट की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

(४) व्यापारिक बैंक—व्यापारिक बैंक उद्योग-धन्धों की सहायता खुले दिल से नहीं करते। इस मामले में वे इम्पीरियल बैंक जिसका नाम अब बदल कर स्टेट बैंक हो गया है के पद चिन्हों पर चलते हैं जो कि उद्योगों को बहुत कम सहायता प्रदान करता है। जब ये बैंक उद्योगों की सहायता करते हैं तो वे धरोहर के मूल्य का केवल ७० प्रतिशत ही ऋण के रूप में देते हैं। यह ऋण भी केवल ३–४ महीने के लिये दिया जाता है। अचल सम्पत्ति आदि के खरीदने के लिये बैंक कोई धन उधार नहीं देते। इस प्रकार हमारे देश में अचल सम्पत्ति को खरीदने के लिये उद्योगों को दूसरे स्थानों पर जाना पडता है।

(५) औद्योगिक बैंक—भारतवर्ष में औद्योगिक बैंकों का प्राय अभाव सा है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि ऐसे बैंकों के स्थापित करने का कभी प्रयत्न नहीं हुआ। इस प्रकार के कई प्रयत्न प्रथम महायुद्ध में हुये। इसमें टाटा औद्योगिक बैंक १९१७ में, कलकत्ता औद्योगिक बैंक १९१९ में, भारतीय औद्योगिक बैंक १९२० में लक्ष्मी औद्योगिक बैंक १९२३ में स्थापित किये गये। परन्तु ये बैंक सट्टेबाजी तथा औद्योगिक बैंकिंग के सिद्धान्तों को ठीक प्रकार न अपनाने के कारण अपने कार्य में सफल न हो सके। आजकल हमारे देश में कोई बडा औद्योगिक बैंक नहीं है। इस कमी के कारण उद्योगों को अचल सम्पत्ति प्राप्त करने के लिये किसी स्थान से धन नहीं मिलता।

(६) औद्योगिक वित्त निगम—उद्योगों के लिये हमारे देश में दीर्घकालीन अर्थ व्यवस्था न होने की बात सबसे असह्य थी। इस कमी को पूरा करने के लिये भारत सरकार ने १९४८ में एक औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना की। इसका कार्य १ जुलाई १९४८ से चालू हो गया है। इसकी पूंजी १० करोड है। इसके अतिरिक्त इसको ऋण पत्रों को जारी करने का भी अधिकार है। इस प्रमण्डल के निम्नलिखित कार्य हैं—

(अ) औद्योगिक संस्थाओं के द्वारा उधार दिये हुये उन दीर्घकालीन ऋणों की गारन्टी करना जो अधिक से २५ वर्ष की अवधि के लिये पूँजी बाजार में प्राप्त किये गये हैं।

(आ) औद्योगिक सस्थाओ द्वारा निर्मित किये हुये स्टाको, हिस्सो, ऋण पत्रो आदि का अभिगोपन (Underwrite) करना।

(इ) अभिगोपन किये हुये हिस्सो, ऋण-पत्रो आदि को यदि जनता ने तुरन्त न खरीदा हो तो इन्हे इनकी प्राप्ति से अधिक से अधिक ७ वष के अन्दर रख कर वेच देना।

(ई) औद्योगिक सस्थाओ को इस प्रकार के ऋण देना अथवा उनके ऋण-पत्रो को खरीदना जिनका भुगतान २५ वष के अन्दर होने वाला है।

(उ) अन्य उन सारे कार्यो को करना जो कि उपर्युक्त कामो से सम्बन्धित हैं तथा प्रमण्डल को अपने अधिकारो तथा उत्तरदायित्वो को भली भाति पूरा करने के लिये आवश्यक है।

जैसा ऊपर बताया गया है कि इस वित्त निगम को काय करते हुए लगभग ११ वर्ष हो गये है। इस बीच मे इसने माच १६५८ ई० तक ५७ ४२ करोड के ऋण मन्जूर किये जिसमे से ३२ ०३ करोड के ऋण वास्तव मे बाट दिये गये। इन पर ६ प्रतिशत ब्याज लिया जाता है। इस निगम ने टेक्सटाइल, रासायनिक विद्युत, शीशे, चीनी, सीमेट आदि के उद्योगो को आर्थिक सहायता दी है। इस निगम के कार्यालय कलकत्ता, बम्बई, मद्रास तथा कानपुर म हैं। इसके अतिरिक्त भारत मे राष्ट्रीय औद्योगिक विकास निगम तथा औद्योगिक साख तथा वित्त निगम भी स्थापित किये गये हैं। इनमे से पहला सरकारी पूँजी तथा दूसरा निजी पूँजी द्वारा स्थापित किया जायगा। पहला निगम १ करोड पूजी से चालू किया गया है। यह सरकारी योजनाओ को सहायता प्रदान करेगा। दूसरे निगम की पूजी ५ करोड है। इसमे से ३½ करोड भारतीय द्वारा तथा १½ करोड विदेशियो द्वारा लगाई जायगी। इस दूसरे निगम की द्वितीय वार्षिक बैठक मे इसके सभापति डाक्टर रामास्वामी मुदालियर ने कहा था कि हम केवल ऋण देने का काय नही करते वरन् हमने बहुत से हिस्सो का अभिगोपन (Underwriting) ही नही किया वरन् बहुत सी कम्पनियो की हिस्सा पूजी भी खरीदी है। १६५७ ई० के अन्त तक निगम ने ११ ६५ करोड रुपये की आर्थिक सहायता प्रदान की। इनमे से ५ ४४ करोड रु० ऋणो के रूप मे तथा ६ २१ करोड रुपय हिस्सो तथा ऋण-पत्रो के अभिगोपन के रूप मे प्रदान किया गया। इस ऋण से कागज उद्योग, रासायनिक उद्योग, बिजली का सामान बनाने वाले उद्योगो, टेक्सटाइल उद्योगो, चीनी उद्योग, कच्ची धातु उद्योग, चूना तथा सीमेंट के कार्य, शीशा बनाने वाले उद्योगो आदि को लाभ पहुँचा है। १६५७ ई० मे जिन ३५ प्राजेक्टस को इस निगम से लाभ पहुचा उनमे १६ नये थे। परन्तु १६५७ ई० मे मन्जूर किये हुये ऋणो मे से केवल १६ करोड रुपये बाटे गये। अभिगोपन किय गय ऋण मे से केवल २१ करोड रु० मे निगम ने अपना धन लगाया। जहाँ १६५६ मे निगम का लाभ ४३ लाख रु० था वहा १६५७ मे वह बढ कर ५४ लाख रु० हो गया।

केन्द्रीय सरकार ने इस प्रकार के प्रमण्डल स्थापित करने की आज्ञा राज्यो को दे दी है। पश्चिमी बगाल, बिहार, बम्बई, उत्तर प्रदेश, आसाम, हैदराबाद, सौराष्ट्र, तिरुवाकुर, कोचीन आदि १३ राज्यो मे भी ऐसे प्रमण्डल स्थापित करने की घोषणा कर दी गई है।

भारत सरकार ने अभी १९५७ ई० मे निश्चय किया है कि वह मध्यम आकार की औद्योगिक इकाइयो को सहायता के लिये एक पुनर्वित्तीय कारपोरेशन (Re-Finance Corporation) की स्थापना करेगी। इस कारपोरेशन मे भाग लेने के लिये देश के १५ बडे-बडे बैको को नियन्त्रण दिया गया था। यह कारपोरेशन एक पब्लिक लिमिटेड कम्पनी के रूप मे स्थापित किया जायेगा। यह १२.५ करोड की साधारण पूजी (Ordinary Capital) से स्थापित किया जायेगा। यह पूजी आगे चलकर बढाई जा सकती है। इस पूजी मे से ५ करोड रिजर्व बैक, २.५ करोड स्टेट् बैक, २.५ करोड [illegible] तथा २.५ करोड अन्य बैक लेंगे।
ता से हमको .४८ करोड रु० प्राप्त हुई तथा [illegible]
यह [illegible] रु० प्राप्त होने की आशा है। परन्तु भारत के वित्त मन्त्री टी० टी०
समझौ[illegible]चारी ने अभी हाल ही मे अमेरिका मे कहा है कि हमारे विदेशी विनिमय के
करोड[illegible] में २००० मिलियन की डालर की खाई है। कोलम्बो योजना के अन्तर्गत
वर्ष [illegible] देश ने जो भारत की आर्थिक उन्नति की छः वर्षीय योजना दी है उसमे भी [वि]देशी पूजी की आवश्यकता ६० करोड ७० लाख पौण्ड बताई गई है। श्री जी० डी० बिडला की अध्यक्षता मे भारत का जो औद्योगिक प्रतिनिधि मडल सयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा, ब्रिटेन, फ्रास तथा पश्चिमी जर्मनी मे गया था उसका मत है कि उन्नति करने के लिये भारत को कम से कम अगले २५ वर्षों मे बहुत अधिक मात्रा मे विदेशी पूजी की आवश्यकता पडेगी। इस प्रकार हम देख सकते है कि हमारे देश की आर्थिक उन्नति की जो भी योजना बनाई जाती है उसमे विदेशी पूजी की आवश्यकता अनुभव की जाती है।

सन्मार्ग के जन-योजना विशेषाक मे दिये एक लेख मे श्री बी० एम० बिरला [वि]देशी पूजी की आवश्यकता इस प्रकार बताते है, "अभी हमारी राष्ट्रीय आय [१]१२०० करोड रुपये है। इनमे से लगभग २५०० करोड रु० मूल्य के समान कारखानो मे उत्पादित होते हैं। शेष आय मे समानता लाने के लिये भी हमे कारखानो के उत्पादन मे प्रतिशत वृद्धि करनी होगी। प्रतिवर्ष १०,००० करोड रुपये मूल्य के समान उत्पादन के लिये उत्पादक प्रतिष्ठानो मे लगभग २५००० करोड रुपये नियोजित करने पडेंगे। जब हम २५००० करोड रुपये पूजी नियोजन की बात सोचते हैं जिसका ५० प्रतिशत विदेशी विनिमय पर आधारित है तो इसे प्राप्त करने का उपाय क्या है। विश्व मे अमेरिका एक ऐसा देश है जो हमारी सहायता कर सकता है। परन्तु आसानी से यह धन राशि प्राप्त करना सभव नही। इसके लिये अमेरिकी उद्योगपतियों को आकृष्ट करना होगा जिससे वे हमारे देश मे पूजी लगाये। यहाँ [पूजी] लगाना उनके लिये सुरक्षित है। यह उन्हे समझाना है। इसके लिय आवश्यक

सकते। कुछ लोगो का विश्वास है कि हमारे देश मे इतनी पूंजी मौजूद है कि हमको विदेशी पूंजी की बिल्कुल भी आवश्यकता नही पड सकती। उनका यह कहना ठीक प्रतीत नही होता। इसके २ कारण हैं–पहला कारण यह है कि हमारे देश मे आज इतनी समस्यायें सुलझाने के लिये पडी हैं कि हम केवल अपने देश की पूंजी से काम नही चला सकते। देश मे अभी तक जो भी योजनाये बनी है उन सबमे विदेशी पूंजी की आवश्यकता बताई गई। जैसे बम्बई योजना मे विदेशी पूंजी की आवश्यकता ७०० करोड रुपया बताई गई है। प्रथम पचवर्षीय योजना मे कहा गया है कि इस बात के कहने से कोई लाभ न होगा कि यदि, भारतवर्ष इतनी गति से आगे बढना चाहता है जिससे प्रजातन्त्रिक सस्थाओ को बिना कोई क्षति पहुचाये यह देश का अधिकतर जनसख्या के जीवन-स्तर को बहुत जल्दी ही ऊचा उठा दे ता उसको कुछ वर्षों तक दुनिया के उन्नत देशो से सहायता लेनी पडेगी। अभी तक विदेशी पूंजी की सहायता से हमको ४९८ करोड रु० प्राप्त हुई तथा दूसरी योजना मे ८०० करोड रु० प्राप्त होने की आशा है। परन्तु भारत के वित्त मन्त्री टी० टी० कृष्णमाचारी ने अभी हाल ही मे अमेरिका मे कहा है कि हमारे विदेशी विनिमय के साधनो मे २००० मिलियन की डालर की खाई है। कोलम्बो योजना के अन्तर्गत रे देश ने जो भारत की आर्थिक उन्नति की छः वर्षीय योजना दी है उसमे भी विदेशी पूंजी की आवश्यकता ६० करोड ७० लाख पौण्ड बताई गई है। श्री जी० डी० बिडला की अध्यक्षता मे भारत का जो औद्योगिक प्रतिनिधि मडल सयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा, ब्रिटेन, फ्रास तथा पश्चिमी जर्मनी में गया था उसका मत है कि उन्नति करने के लिये भारत को कम से कम अगले २५ वर्षों मे बहुत अधिक मात्रा में विदेशी पूंजी की आवश्यकता पडेगी। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि हमारे देश की आर्थिक उन्नति की जो भी योजना बनाई जाती है उसमे विदेशी पूंजी की आवश्यकता अनुभव की जाती है।

सन्मार्ग के जन-योजना विशेषाक मे दिये एक लेख मे श्री बी० एम० बिरला विदेशी पूंजी की आवश्यकता इस प्रकार बताते है, "अभी हमारी राष्ट्रीय आय १२०० करोड रुपये है। इनमे से लगभग २५०० करोड रु० मूल्य के समान कारखानो मे उत्पादित होते हैं। शेष आय मे समानता लाने के लिये भी हमे कारखानो के उत्पादन मे प्रतिशत वृद्धि करनी होगी। प्रतिवर्ष १०,००० करोड रुपय मूल्य के समान उत्पादन के लिये उत्पादक प्रतिष्ठानो मे लगभग २५००० करोड रुपये नियोजित करने पडेंगे। जब हम २५,००० करोड रुपये पूंजी नियोजन की बात सोचते हैं जिसका ४० प्रतिशत विदेशी विनिमय पर आधारित है तो इसे प्राप्त करने का उपाय क्या है। विश्व मे अमेरिका एक ऐसा देश है जो हमारी सहायता कर सकता है। परन्तु आसानी से यह धन राशि प्राप्त करना सभव नही। इसके लिये अमेरिकी उद्योगपतियो को आकृष्ट करना होगा जिससे वे हमारे देश मे पूंजी लगाये। यहाँ पूंजी लगाना उनके लिये सुरक्षित है। यह उन्हें समझाना है। इसके लिये आवश्यक

वातावरण तैयार करना पडेगा । अगर हम ऐसा नही करते तो हमारे जीवन स्तर मे सुधार सम्भव नही ।"

दूसरे, यदि हम अपने देश के भीतरी साधनो पर दृष्टि डालें तो हमको पता चलेगा कि हमारे देश मे पू जी की बहुत कमी है । ऐसा प्रतीत होता है कि युद्ध काल मे किसानो ने बहुत धन कमाया था परतु यह धन देश की औद्योगिक उन्नति के काम मे नही आ सकता क्योकि पहले तो बहुत सा धन किसान के जीवन स्तर को उठाने के लिये व्यय हो गया और जो कुछ बचा, उससे उन्होने पैतृक ऋण चुका दिया हैं । इस प्रकार उनके पास अधिक धन नही रह गया है । मजदूरो के पास भी इतना धन नही है कि वे देश के उद्योगो की उन्नति के लिये कुछ धन बचा सकें । मध्य श्रेणी के लोगों के पास भी सदा धन की कमी रहती है । पू जीपति अपना बहुत सा धन उद्योगो मे लगा रहे हैं । परन्तु यह धन भारत की वर्तमान आवश्यकता के लिये बहुत कम है । यदि इस देश मे विदेशी पू जी आ जाये तो उससे रोजगार, उत्पत्ति तथा आय सब बढ़ेंगे । भारत मे उपभोग के पश्चात् बहुत कम ऐसा धन बचता है जिसको कि उद्योग धन्धो मे लगाया जा सके । इसके अतिरिक्त भारत मे टेक्नीकल योग्यता तथा पू जी वस्तुओ का अभाव है । इस कारण हमारे देश म विदेशी पू जी की आवश्यकता भारत के लिये कोई नई चीज नही है । यदि हम बहुत से देशो की आर्थिक उन्नति के विषय म जानकारी प्राप्त करे तो हमको पता चलेगा कि उन सबकी उन्नति मे विदेशी पू जी सहायक सिद्ध हुई है ।

कुछ लोग यह भी कहते है कि हमारे देश की आर्थिक उन्नति की योजनायें अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से ऋण लेकर पूरी की जा सकती है । परन्तु यह बात दो बातो की वजह से ठीक मालूम नही पडती । पहली बात तो यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय बैंक के पास इतना धन नही है कि वह हमारी अधिक सहायता कर सके और दूसरी बात यह है कि यह बैंक मुख्यता यूरोपीय देशो की कम सहायता कर सकेगा । तीसरे इस बैंक की ब्याज की दर बहुत ऊ ची है । इन सब बातो के होते हुए भी इस बैंक ने भारत को ४२५ मिलियन डालर की सहायता ऋण के रूप मे प्रदान की है ।

इन सब बातो से यह सिद्ध होता है कि हमारे देश की आर्थिक उन्नति के लिये विदेशी पू जी की बहुत ही आवश्यकता है । इस आवश्यकता को प्रतीत करते हुए भी देश मे बहुत से ऐसे लोग हैं जो विदेशी पू जी का विरोध करते हैं । वे कहते हैं कि विदेशी पू जी के कारण हमारा देश, आर्थिक दृष्टि से विदेशो का दास हो जायेगा । इसी के कारण विदेशी लोग हमारे देश का धन लाभ के रूप में लूट कर ले जायेंगे । इसी के कारण विदेशी लोग हमारे देश के प्राकृतिक साधनो को अपने लाभ के लिये काम मे लायेंगे । यही नही यह भी हो सकता है कि किसी समय विदेशी पू जीपति इतने शक्तिशाली हो जायें कि वे देश की उन्नति की योजनाओ मे बाधा रूप से खडे हो जायें । यहा यह बात बताने योग्य है कि यह सब डर लोगों को इस लिये लग रहा है क्योकि भूतकाल मे अग्रेजी पू जी द्वारा सब बाते हो चुकी है ।

परन्तु यदि हम विचार करे तो यह बात भली भांति समझ मे आ सकती है कि पहले की और अब की स्थिति मे बहुत अन्तर है। पहले हमारा देश अङ्गरेज का दास था। आज हम स्वतन्त्र हैं, इस कारण विदेशी लोग हमारे देश मे मनमानी न कर सकेंगे। दूसरी पिछली बातो को देखकर अब हमारी आखे खुल गई है। इस कारण विदेशी लोग आसानी से हमारा शोषण न कर सकेंगे। इसलिये हम समझते हैं कि हमारे देश को आज विदेशी पूजी के शोषण से नहीं डरना चाहिये। इसके साथ-साथ विदेशी पूजी के शोषण से बचने के साधन भी है। इस पूजी को देश मे आने की आज्ञा देने से पहले हम उसके ऊपर कुछ शर्तें लगा सकते हैं जिससे हम विदेशी पूजी के शोषण से भी बच सके और साथ ही साथ वह पूजी हमारी आर्थिक उन्नति म सहायक भी सिद्ध हो। इस प्रकार की शर्तें निम्नलिखित हो सकती हैं—

(१) विदेशी कम्पनियाँ हमारे देश मे ही चालू की जायें तथा वे इसी देश के कम्पनी ऐक्ट के आधीन काय करें। इससे यह लाभ हो सकता है कुछ समय पश्चात् भारतवासी इसके सब हिस्से खरीद कर कम्पनी के मालिक बन सकते हैं।

(२) कम्पनी म भारतीय तथा विदेशी लोगो के हिस्सो का अनुपात इस प्रकार हो कि भारतवासियो के हाथ म कम्पनी का प्रबन्ध हो। यह हो सकता है कि प्रारम्भ मे बड़े-बड़े पदो पर विदेशी लोग रखे जायें परन्तु अन्त मे भारतवासियों को ही वे पद मिलने चाहियें।

(३) जो विदेशी कम्पनी भारत मे कार्य करें उन पर यह भार हो कि भारतवासियो को शिक्षा दें।

(४) सरकार एक निश्चित समय के पश्चात् जब चाहे उस कम्पनी को क्षति पूर्ति देकर मोल ले ले।

हम समझते हैं कि यदि इस प्रकार की कुछ शर्तें लगा दी जाय तो विदेशी पूजी हानि करने के बदले लाभ करेगी।

देश के स्वतन्त्र हो जाने के पश्चात् भारत सरकार ने १९४८ ई० मे पूजी सम्बन्धी नवीन नीति निर्धारण की। इसके अनुसार जिस उद्योग मे विदेशी पूजी लगाई जायगी उसमे प्रधान रूप से भारतीयो का ही स्वामित्व होगा तथा उस उद्योग के नियन्त्रण तथा प्रबन्ध आदि म भी भारतवासी ही प्रधान होंगे, हा यह हो सकता है कि उस समय तक के लिये जब तक कि भारतवासी बड़े पद ग्रहण करने योग्य हो सरकार यह आज्ञा दे दे कि कम्पनी का नियन्त्रण कुछ समय के लिये विदेशियो के हाथ मे रहेगा। इसके अतिरिक्त सरकार इन उद्योगो को क्षति-पूर्ति देकर ले सकती है। इन उद्योगो पर यह भी भार है कि भारतवासियो को कुछ टैक्नीकल शिक्षा दें।

इन सब शर्तों के होते हुए हम यह आशा नही करते कि विदेशी हमको लूट कर ले जायेंगे। हम तो यही समझते है कि विदेशी पूजी हमारे देश के लिये बहुत

ही आवश्यक है और इस कारण उसको देश की आर्थिक उन्नति व हित मे आने देना चाहिये। भारत सरकार विदेशी पू जी की आवश्यकता को अनुभव करती है। इसकी सम्भावना के लिये भारत के भूतपूर्व वित्त मन्त्री श्री टी० टी० कृष्णमाचारी यूरोप व अमेरिका गये थे और वहाँ जाकर उन्होने देखा कि बहुत से विदेशी लोग भारत मे अपना धन लगाना चाहते है परन्तु कुछ बातो के कारण व अभी ऐसा नही कर रहे हैं।

यहां यह बात बताने योग्य है कि पिछले कुछ वर्षों मे भारत म विदेशी पू जी की आमद बहुत कम हुई है। इसका कारण यह था कि स्वतन्त्रता के पश्चात् विदेशियो को इस बात का पता न था कि भविष्य मे भारत की आर्थिक तथा राजनैतिक उन्नति किस दिशा मे होगी। इसके अतिरिक्त विदेशियो मे यह भी तय था कि भारत के उद्योगो का शीघ्र ही राष्ट्रीयकरण हो जायगा तथा भारत सरकार विदेशियो के साथ भेद-भाव की नीति को अपनायगी। इस कारण प्रथम योजना काल म ६०० करोड रुपये की विदेशी पू जी के स्थान पर केवल १९७ करोड रुपय की पू जी प्राप्त की जा सकी और यह पू जी भी तब प्राप्त हुई जबकि भारत सरकार ने विदेशियों को यह आश्वासन दिया कि वह भारतीय तथा विदेशी पू जी मे कोई भेद भाव न करेगी तथा विदेशियो को अपना लाभ अपने देशो मे भेजने की पूरी सुविधाय दी जायगी तथा यदि उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया जायगा तो उनको मुआवजा देकर प्राप्त किया जायगा। श्री बङ्कर जो भारत मे सयुक्त राष्ट्र अमेरिका के राजदूत है यह बताते हुये कि भारत मे सयुक्त राष्ट्र की पू जी के लिये अच्छा क्षत्र है। उन्होने कहा कि इस पू जी के लिये अच्छा वायुमण्डल निर्माण करने के लिय तीन बातो की आवश्यकता है—(१) अपरिवर्तनशीलता अथवा विदेशी उद्योगो को उखाड कर फैकने से बचत, (२) दोहरे कर से रक्षा तथा (३) कर से छुटकारा। यह आवश्यक है कि भारत सरकार विदेशी पू जी को देश मे आकर्षित करने के लिय आवश्यक वायुमण्डल निर्माण करे।

Q 55 What is the present industrial policy of the Government of India ?

प्रश्न ५५—भारतीय सरकार की वर्तमान औद्योगिक नीति क्या है ?

जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी इस देश मे आई तो उसने यहा के उद्योग धन्धो को बहुत प्रोत्साहन दिया। परन्तु अङ्ग्रेजी लोक सभा मे इस बात की कडी आलोचना हुई। इस कारण ईस्ट इण्डिया कम्पनी को अपनी नीति बदलनी पडी। इसके पश्चात् इसका कार्य भारत के कच्चे माल का निर्यात करना तथा विदेश म बन हुय पक्के माल का आयात करना रह गया। इस प्रकार इसने उद्योग धन्धो के विकास की ओर कुछ भी ध्यान न दिया।

भारत के सम्राट के हाथ मे चले जाने के पश्चात् भी भारतीय सरकार ने इस ओर कुछ काम न किया। उसने हस्तक्षेप न करने की नीति को (Laissez Faire policy) ही अपनाये रखा। इस नीति के फलस्वरूप भारतीय उद्योगो को विदेशो के साथ कडी प्रतियोगिता करनी पडी और भारतीय उद्योग पनप न सके।

प्रथम महायुद्ध मे सरकार की आखें खुली। युद्ध काल मे विदेशो से सामान आना बन्द हो गया। इसी कारण युद्ध के लिये भारतीय उद्योग-धन्धो के विकास की आवश्यकता पडी। १६१६ मे औद्योगिक कमीशन की नियुक्ति हुई। इस कमीशन ने यह सुझाव दिया कि भारतीय उद्योग-धन्धो के विकास मे सरकार को सहयोग प्रदान करना चाहिये। १६१७ मे इण्डियन म्यूनिशन बोर्ड की स्थापना की गई। इस बोर्ड के कार्यों से भारतीय उद्योग-धन्धो के विकास को अच्छी सहायता प्राप्त हुई। भारत मे बहुत से नय उद्योगो की स्थापना की गई। युद्ध के समाप्त होने तक प्राय सभी प्रान्तो मे औद्योगिक विभाग (Department of Industries) खुल गये।

सन् १६१६ के सुधारो से यह बात मान ली गई कि भारतवर्ष को आर्थिक स्वतन्त्रता (Fiscal Autonomy) मिलनी चाहिये। इसीलिये १६२१ मे पहला अर्थ कमीशन (Fiscal Commission) नियुक्त किया गया। इस कमीशन ने भारत के लिये एक विवेकात्मक सरक्षण नीति (Discriminating Protection Policy) का सुझाव, रखा। इसके अनुसार प्रत्येक उद्योग को सरक्षण की सुविधा प्राप्त नही हो सकती थी वरन् ऐसे उद्योगो को ही सकती थी जो सरक्षण चाहता था। यह सरक्षण पूरी जाच के पश्चात् दिया जाता था। सरक्षण केवल उन्ही उद्योगो को दिया जा सकता था जिनका एक घरेलू बाजार हो जिनके लिये देश मे पर्याप्त मात्रा मे कच्चा माल तथा श्रम हो, जो सरक्षण बिना न चल सकते हों तथा जो कुछ समय पश्चात् इतने दृढ हो जायें कि वे बिना सरक्षण के अपने आप चल सकें। य सब बात बडी कडाई के साथ मानी गई। इस नीति के अन्तर्गत कुछ उद्योगो, जैसे लोहा तथा फौलाद, सूती कपडा, चीनी आदि को सरक्षण प्रदान किया गया। इस सरक्षण से इन उद्योगो की उन्नति तो हुई पर इतनी नही जितनी कि उदार अर्थ-नीति से हो सकती थी।

द्वितीय महायुद्ध मे भारतवर्ष मित्रराष्ट्रो के प्रशान्त महासागर के मोर्चे के लिये एक केन्द्र बना। इसके अतिरिक्त भारतीय सरकार को भी बहुत सी युद्ध-सामग्री की आवश्यकता हुई। इसी कारण सरकार ने उद्योगो को उन्नत करने मे बहुत सहायता प्रदान की। सरकार ने यहाँ के युवको को टैक्निकल शिक्षा ग्रहण करने के लिये इङ्गलैड भेजा। १६४० मे सरकार ने यह घोषणा भी की कि यदि आवश्यक हुआ तो युद्ध काल के पश्चात् उन उद्योगो को सरक्षण प्रदान किया जायगा जो युद्ध काल मे उन्नत होगे। सरकार ने १६४१ मे एक ऐसी कमेटी नियुक्त की जो युद्ध समाप्त होने पर देश की आर्थिक स्थिति सुधारने मे सहायक हो। इनके अतिरिक्त भी सरकार ने ऐसे बहुत से कार्य किये जिनसे इस देश के उद्योग उन्नत हो।

ही आवश्यक है और इस कारण उसको देश की आर्थिक उन्नति के हित मे आने देना चाहिये। भारत सरकार विदेशी पू जी की आवश्यकता को अनुभव करती है। इसकी सम्भावना के लिये भारत के भूतपूर्व वित्त मन्त्री श्री टी० टी० कृष्णमाचारी यूरोप व अमेरिका गये थे और वहां जाकर उन्होने देखा कि बहुत से विदेशी लोग भारत मे अपना धन लगाना चाहते है परन्तु कुछ बातो के कारण वे अभी ऐसा नही कर रहे हैं।

यहा यह बात बताने योग्य है कि पिछले कुछ वर्षो मे भारत मे विदेशी पू जी की आमद बहुत कम हुई है। इसका कारण यह था कि स्वतन्त्रता के पश्चात् विदेशियो को इस बात का पता न था कि भविष्य मे भारत की आर्थिक तथा राजनैतिक उन्नति किस दिशा मे होगी। इसके अतिरिक्त विदेशियो मे यह भी तय था कि भारत के उद्योगो का शीघ्र ही राष्ट्रीयकरण हो जायगा तथा भारत सरकार विदेशियो के साथ भेद-भाव की नीति को अपनायेगी। इस कारण प्रथम योजना काल मे ६०० करोड रुपये की विदेशी पू जी के स्थान पर केवल १९७ करोड रुपये की पूंजी प्राप्त की जा सकी और यह पू जी भी तब प्राप्त हुई जबकि भारत सरकार ने विदेशियो को यह आश्वासन दिया कि वह भारतीय तथा विदेशी पू जी मे कोई भेद-भाव न करेगी तथा विदेशियो को अपना लाभ अपने देशो मे भेजने की पूरी सुविधायें दी जायेंगी तथा यदि उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया जायगा तो उनको मुआवजा देकर प्राप्त किया जायगा। श्री बङ्कर जो भारत मे सयुक्त राष्ट्र अमेरिका के राजदूत हैं यह बताते हुये कि भारत मे सयुक्त राष्ट्र की पू जी के लिये अच्छा क्षेत्र है। उन्होने कहा कि इस पू जी के लिये अच्छा वायुमण्डल निर्माण करने के लिये तीन बातो की आवश्यकता है—(१) अपरिवर्तनशीलता अथवा विदेशी उद्योगो को उखाड कर फेंकने से बचत, (२) दोहरे कर से रक्षा तथा (३) कर से छुटकारा। यह आवश्यक है कि भारत सरकार विदेशी पू जी को देश मे आकर्षित करने के लिये आवश्यक वायुमण्डल निर्माण करे।

Q 55 What is the present industrial policy of the Government of India ?

प्रश्न ५५—भारतीय सरकार की वर्तमान औद्योगिक नीति क्या है ?

जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी इस देश मे आई तो उसने यहाँ के उद्योग-धन्धो को बहुत प्रोत्साहन दिया। परन्तु अङ्गरेजी लोक सभा मे इस बात की कडी आलोचना हुई। इस कारण ईस्ट इण्डिया कम्पनी को अपनी नीति बदलनी पडी। इसके पश्चात् इसका कार्य भारत के कच्चे माल का निर्यात करना तथा विदेश मे बने हुये पक्के माल का आयात करना रह गया। इस प्रकार इसने उद्योग-धन्धो के विकास की ओर कुछ भी ध्यान न दिया।

भारत के सम्राट के हाथ मे चले जाने के पश्चात् भी भारतीय सरकार ने इस ओर कुछ ध्यान न किया। उसने हस्तक्षेप न करने की नीति को (Laissez Faire policy) ही अपनाये रखा। इस नीति के फलस्वरूप भारतीय उद्योगो को विदेशो के साथ कडी प्रतियोगिता करनी पडी और भारतीय उद्योग पनप न सके।

प्रथम महायुद्ध मे सरकार की आखें खुली। युद्ध काल मे विदेशो से सामान आना बन्द हो गया। इसी कारण युद्ध के लिये भारतीय उद्योग-धन्धो के विकास की आवश्यकता पडी। १९१६ मे औद्योगिक कमीशन की नियुक्ति हुई। इस कमीशन ने यह सुझाव दिया कि भारतीय उद्योग-धन्धो के विकास मे सरकार को सहयोग प्रदान करना चाहिये। १९१७ मे इण्डियन म्यूनिशन बोर्ड की स्थापना की गई। इस बोर्ड के कार्यों से भारतीय उद्योग-धन्धो के विकास को अच्छी सहायता प्राप्त हुई। भारत मे बहुत से नये उद्योगो की स्थापना की गई। युद्ध के समाप्त होने तक प्राय सभी प्रान्तो मे औद्योगिक विभाग (Department of Industries) खुल गये।

सन् १९१९ के सुधारो से यह बात मान ली गई कि भारतवर्ष को आर्थिक स्वतन्त्रता (Fiscal Autonomy) मिलनी चाहिये। इसीलिये १९२१ मे पहला अर्थ कमीशन (Fiscal Commission) नियुक्त किया गया। इस कमीशन ने भारत के लिये एक विवेकात्मक सरक्षण नीति (Discriminating Protection Policy) का सुझाव, रखा। इसके अनुसार प्रत्येक उद्योग को सरक्षण की सुविधा प्राप्त नही हो सकती थी वरन् ऐसे उद्योगो को हो सकती थी जो सरक्षण चाहता था। यह सरक्षण पूरी जाच के पश्चात् दिया जाता था। सरक्षण केवल उन्ही उद्योगो को दिया जा सकता था जिनका एक घरेलू बाजार हो जिनके लिये देश मे पर्याप्त मात्रा मे कच्चा माल तथा श्रम हो, जो सरक्षण बिना न चल सकते हो तथा जो कुछ समय पश्चात् इतने दृढ हो जायें कि वे बिना सरक्षण के अपने आप चल सकें। य सब बाते बडी कडाई के साथ मानी गई। इस नीति के अन्तर्गत कुछ उद्योगो, जैसे लोहा तथा फौलाद, सूती कपडा, चीनी आदि को सरक्षण प्रदान किया गया। इस सरक्षण से इन उद्योगो की उन्नति तो हुई पर इतनी नही जितनी कि उदार अर्थ-नीति से हो सकती थी।

द्वितीय महायुद्ध मे भारतवर्ष मित्रराष्ट्रो के प्रशान्त महासागर के मोर्चे के लिये एक केन्द्र बना। इसके अतिरिक्त भारतीय सरकार को भी बहुत सी युद्ध-सामग्री की आवश्यकता हुई। इसी कारण सरकार ने उद्योगो को उन्नत करने मे बहुत सहायता प्रदान की। सरकार ने यहाँ के युवको को टैक्निकल शिक्षा ग्रहण करने के लिये इङ्गलैड भेजा। १९४० म सरकार ने यह घोषणा भी की कि यदि आवश्यक हुआ तो युद्ध काल के पश्चात् उन उद्योगो को सरक्षण प्रदान किया जायगा जो युद्ध काल मे उन्नत होगे। सरकार ने १९४१ मे एक ऐसी कमेटी नियुक्त की जो युद्ध समाप्त होने पर देश की आर्थिक स्थिति सुधारने मे सहायक हो। इनके अतिरिक्त भी सरकार ने ऐसे बहुत से कार्य किये जिनसे इस देश के उद्योग उन्नत हो।

१५ अगस्त १६४७ को देश स्वतन्त्र हुआ। ७ अप्रैल, सन् १६४८ को सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा की। इस नीति की मुख्य बातें निम्नलिखित है—

(१) भारतीय उद्योग धन्धो मे काम करने वाले मजदूरो की दशा सुधारने का प्रयत्न करना।

(२) सरकार ने सारे उद्योगो को चार भागो मे विभक्त किया है—

(अ) वे उद्योग जिन पर पूर्णरूप से सरकार का एकाधिकार है जैसे शस्त्रो का निर्माण, रेलवे यातायात तथा अणु-शक्ति की उत्पत्ति तथा नियन्त्रण आदि। इनके अतिरिक्त सरकार किसी भी उस उद्योग को ले सकती है जो राष्ट्रीय हित के लिए आवश्यक है।

(ब) निम्नलिखित उद्योगो को केन्द्रीय अथवा स्थानीय सरकार स्वय चलायेगी। परन्तु यदि आवश्यक होगा तो सरकार पूँजीपतियो से भी सहायता ले सकती है—

(१) कोयला, (२) लोहा और फौलाद, (३) वायुयान, (४) जलयान, टेलीफून, तार तथा बेतार का तार आदि बनाना, (५) मिट्टी का तेल।

सरकार को यह अधिकार होगा कि वह इसमे से कोई भी ले ले। परन्तु इन उद्योगो मे लगी हुई निजी सम्पत्ति को दस वर्ष तक स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य करने का अधिकार होगा। दस वर्ष के पश्चात् सरकार इन उद्योगो को क्षति-पूर्ति देकर ले लेगी।

(स) इनके अतिरिक्त जो उद्योग होगे उनमे गैर सरकारी पूँजी व्यक्तिगत रूप से अथवा सहकारी रूप से लगाई जा सकती है। परन्तु इन उद्योगो को भी सरकार धीरे-धीरे लेगी। सरकार इन उद्योगो मे उस समय भी हस्तक्षेप कर सकती है जबकि उनका काय सुचारु रूप से न चल रहा हो।

(द) इनके अतिरिक्त सरकार यह समझती है कि नीचे लिखे उद्योगो की योजना तथा नियन्त्रण का कार्य भी राष्ट्रीय हित मे सरकार के पास ही रहना चाहिए। ये नीचे लिखे है —

(१) नमक, (२) मोटर तथा ट्रैक्टर, (३) मशीन के पुर्जे, (४) खाद आदि, (५) बिजली-रासायनिक उद्योग, (६) लोहे के अतिरिक्त दूसरी धातु, (७) रबड का उद्योग, (८) शक्ति तथा औद्योगिक मद्यसार (Power and Industrial alcohol) (६) सूती तथा ऊनी कपडे का उद्योग, (१०) सीमेन्ट, (११) चीनी, (१२) कागज तथा अखबारी कागज, (१३) वायु तथा समुद्री यातायात, (१५) धातुए, (१४) रक्षा सम्बन्धी उद्योग।

बडे उद्योगो के अतिरिक्त सरकार ने कुटीर तथा छोटे उद्योगो पर भी बहुत अधिक जोर दिया है। सरकार इन उद्योगो की उन्नति के लिय अधिक से अधिक

प्रयत्न करेगी। इन उद्योगों की उन्नति के लिये सरकार ने कुटीर उद्योग बोर्ड भी स्थापित किया है।

सरकार समझती है कि अधिक से अधिक उत्पत्ति तभी हो सकती है जबकि पूँजी तथा श्रम में मेल जोल हो। इसी कारण सरकार ने यह प्रबन्ध किया है कि मुनाफे का ठीक प्रकार से वितरण हो, मजदूरों को उचित वेतन मिले, पूँजीपतियों को पूँजी पर उचित लाभ मिले।

सरकार श्रम तथा पूँजी के बीच होने वाले झगड़े का निपटारा करने के लिये उचित प्रकार के साधन जुटायेगी। श्रमिकों के घरों को उन्नत करने तथा नये घर बनवाने के लिये सरकार एक हाउसिंग बोर्ड भी स्थापित करेगी। यह बोर्ड दस वर्ष में दस लाख मजदूरों के घर बनायेगा। ये सरकार तथा पूँजीपतियों द्वारा बनाये जायेंगे। मजदूरों का हिस्सा उनसे उचित किराये के रूप में लिया जायगा।

सरकार का विचार है कि उद्योग धन्धों की उन्नति के लिये विदेशी पूँजी राष्ट्रीय हित के काम में लाई जा रही है।

सरकार की अर्थ नीति इस प्रकार की होगी जिससे कि उपभोक्ताओं के ऊपर बिना किसी प्रकार का दबाव डाले विदेशी प्रतियोगिता से बचा सके।

उद्योग (उन्नति तथा नियन्त्रण) विधेयक १९५१ जो १९५३ ई० में संशोधित किया गया—यह विधेयक ८ मई १९५२ ई० से लागू हुआ। इस विधेयक के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार को उन ४५ से अधिक आवश्यक उद्योगों के ऊपर अत्यधिक शक्ति प्रदान की गई है जिनका इस विधेयक की पहली तालिका में उल्लेख है। इस विधेयक की मुख्य धारायें निम्नलिखित हैं—

(१) वे वर्तमान उद्योग जिनका उल्लेख इस ऐक्ट की पहली तालिका में किया गया है सरकार से रजिस्टर्ड होने चाहियें। नई मिलें उस समय तक नहीं चलाई जा सकती जब तक कि उनको चलाने से पहले अनुज्ञा-पत्र (Licence) प्राप्त न हो जाय।

(२) सब मिलों का सरकार द्वारा नियुक्त व्यक्तियों द्वारा किसी समय भी निरीक्षण किया जा सकता है।

(३) केन्द्रीय सरकार किसी भी अनुचित उद्योग का निरीक्षण कर सकती है यदि उसका उत्पादन गिर रहा हो, यदि उसका माल घटिया हो जाय, यदि उसके मूल्य में वृद्धि हो जाय या उसकी व्यवस्था खराब हो जाय। राष्ट्रीय महत्व के साधनों को बचाने के लिये भी सरकार किसी भी उद्योग का निरीक्षण करा सकती है।

(४) निरीक्षण के पश्चात् सरकार उद्योग की उत्पत्ति, वितरण तथा मूल्य सम्बन्धी कोई भी आदेश जारी करा सकती है।

(५) यदि सरकार की आज्ञा का पालन न किया जाय तो सरकार उद्योग का प्रबन्ध लेकर एक विकास सभा (Development Council) अथवा और किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों को अधिक से अधिक ५ वर्षों के लिये दे सकती है।

(६) अपने कार्य को चलाने के लिये सरकार निम्नलिखित सस्थाओ से सलाह लेगी।

(अ)केन्द्रीय सलाहकार सभा—इसमे मालिको, मजदूरो, उपभोक्ताओ, प्रारम्भिक उत्पादको के प्रतिनिधि होगे। इसकी सख्या ३० होगी।

(आ) विकास सभा—प्रत्येक अनुसूचित उद्योग के लिये एक विकास सभा होगी। इसमे सरकार मालिको, यन्त्र विशेषज्ञो, मजदूरो तथा उपभोक्ताओ के प्रतिनिधि नियुक्त करेगी। यह विकास सभा निश्चिन करेगी कि कितनी उत्पत्ति की जाय किस प्रकार ठीक ढङ्ग से वस्तुओ की बिक्री तथा वितरण किया जाय आदि।

(७) सरकार अपना खर्च चलाने के लिये उत्पन्न की हुई वस्तुओ के मूल्य पर(दो आने प्रतिशत के हिसाब से उपकर लगा सकती है।

३० अप्रैल सन् १९५६ ई० को भारत सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति मे फिर से परिवतन किया है। परिवर्तन कई बातो के कारण करना आवश्यक था। पहला यह है भारत ने इस बीच मे अपना विधान देश के ऊपर लागू किया है जिसमे देश के हर नागरिक के अधिकारो की सुरक्षा का वचन दिया गया है। देश मे प्रथम पचवर्षीय योजना पूरी हो चुकी है तथा देश ने समाज के समाजवादी ढाचे को अपनाने का निश्चय किया है।

नई औद्योगिक नीति के अनुसार सरकार अधिक से अधिक उद्योगो को अपने हाथ मे लेगी तथा यातायात के साधनो की उन्नति करेगी। सरकार एक बडे पैमाने पर व्यापार को भी अपने हाथ मे लेगी। इसके साथ-साथ निजी पूजी को भी उन्नति करने का अवसर दिया जायगा।

नई नीति के अनुसार उद्योगो को तीन श्रेणियो मे बाँटा गया है। पहली श्रेणी मे वे उद्योग आते हैं जिनकी उन्नति का पूरा भार सरकार पर होगा। दूसरी श्रणी मे वे उद्योग आत है जिनमे सरकार अधिकाधिक हिस्सा लेगी। परन्तु इस श्रेणी के उद्योगो मे पूजीपति भी सरकार का हाथ बटायेंगे। तीसरी श्रेणी मे शेष उद्योग होगे और उनकी उन्नति का भार निजी पूजी पर होगा।

पहली श्रेणी के उद्योगो मे निम्नलिखित आते है—हथियार तथा गोला बारूद, अणु शक्ति, लोहे तथा फौलाद के उद्योग, बिजली, कोयला, मिट्टी का तेल, लोहा, मैंगनीज, क्रोम, जिप्सम, गन्धक, सोना, हीरा, ताँबा, शीशा, जस्ता, टीन, खोदने के उद्योग, वायु तथा रेल यातायात, जहाज बनाना, टेलीफोन तथा टेलीफोन के तार बनाना तथा बेतार का सामान, बिजली का उत्पन्न करना तथा उसका वितरण करना।

दूसरी श्रेणी के उद्योगो मे निम्नलिखित सम्मिलित है—शेष धातुए, मशीनो के औजार, दवाई, रङ्ग, प्लास्टिक, खाद, रबड, कोयले से कार्बन बनाना, रासायनिक पल्प, सडक तथा समुद्री यातायात।

तीसरी श्रेणी में शेष सब उद्योग आते हैं। परन्तु इन उद्योगों की ये श्रेणियां अविभाजित नहीं हैं। पहली श्रेणी के कुछ उद्योग भी पूंजीपतियों के हाथ में हो सकते हैं। अथवा सरकार इन उद्योगों के लिये बहुत सा सामान पूंजीपतियों से खरीद सकती है।

सरकार अपनी इस नीति में कुटीर उद्योगों की महत्ता को भी स्वीकार करती है। उसका विश्वास है कि इन उद्योगों से बेरोजगारी की समस्या बहुत कुछ सुलझ जायेगी तथा उनके द्वारा धन का समान वितरण हो सकेगा। सरकार इन उद्योगों को बड़े उद्योगों की उत्पत्ति की सीमा निश्चित करके उन पर कर लगा कर इन उद्योगों को अर्थ-साह्य (Subsidy) देकर उन्नत करेगी। इन उद्योगों को बड़े उद्योगों से मुकाबला करने की शक्ति को बढ़ाने के लिये सरकार उनको आधुनिक ढङ्ग से उन्नत करेगी। सरकार इनको टेक्नीकल तथा आर्थिक सहायता भी प्रदान करेगी। इनकी बहुत सी कमियों को सहकारी समितियों के द्वारा दूर किया जायगा।

सरकार का यह प्रयत्न होगा कि देश के सब भागों में उद्योगों की उन्नति हो न कि वे देश के कुछ भागों में केन्द्रीत हो जाये। आशा है कि तृतीय पञ्चवर्षीय योजना में इस ध्येय की पूर्ति की जायगी। सरकार टक्नीकल तथा मैनेजरी की शिक्षा प्रदान करने का भी प्रयत्न करेगी।

इस नीति का भी उद्देश्य होगा कि मजदूरों की काम करने की हालत सुधरे, मजदूरों तथा मालिकों में आपस में मेल जोल हो।

केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों की उद्योगों को उन्नत करने की जिम्मेदारी (Industries Development and Regulation Act) में निश्चित कर दी गई है तथा विदेशी पूंजी के विषय में ६ अप्रैल १९४९ ई० को घोषणा कर दी गई।

आलोचनायें—सरकार की औद्योगिक नीति के विरुद्ध निम्नलिखित आलोचनायें की गई हैं।

(१) जिन उद्योगों को सरकार अपने हाथ में लेना चाहती है उनमें पूंजीपति अपनी पूंजी नहीं लगा रहे।

(२) सरकार को अपने ऊपर इस बात का अत्याधिक विश्वास है कि वह उद्योगों का निजी पूंजीपतियों की अपेक्षा अधिक अच्छा प्रबन्ध कर सकती है। परन्तु यह बात नहीं है। देखने में यह आया है कि सरकारी कर्मचारी बहुत बार लापरवाही से काम करते हैं जब तक कि उनमें प्रखर राष्ट्र भक्ति की भावना न हो।

(३) उद्योगों की उन्नति राज्य सरकारों के कार्य क्षेत्र में आती है। परन्तु प्रत्यक राज्य की उद्योगों के सम्बन्ध में अपनी अलग नीति है। इसके कारण औद्योगिक विकास में बड़ी बाधा उपस्थित होती है।

Q. 56. Explain the principles on which the present fiscal policy of government of India is based How far in your opinion, has this policy promoted the development of Indian Industries ?

प्रश्न ५६—भारत सरकार की वर्तमान अर्थ-नीति किन सिद्धान्तो पर आधारित है। आपकी राय मे इस नीति से कहाँ तक भारतीय उद्योगो की उन्नति हुई है ?

उत्तर—सन् १९१९ के सुधारो के पूर्व यह देश अबाध व्यापार की नीति पर था। पर १९१९ के सुधारो मे यह बात स्वीकार कर ली गई कि इस देश को आर्थिक मामलो मे पूर्ण स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। इस नीति के अन्तर्गत १९२१ मे पहला वित्तीय आयोग (Fiscal Commission) नियुक्त किया गया। इस रिपोर्ट मे कमीशन ने भारत के लिये विवेकात्मक अर्थ-नीति (Discriminating Protection Policy) का सुझाव दिया। इस नीति के अनुसार किसी उद्योग को उस समय सरक्षण मिल सकता है जबकि वह निम्नलिखित शर्तों को पूरा करे—

(१) उद्योग के लिये देश मे प्राकृतिक साधन पाये जाते हो। इन प्राकृतिक साधनो मे पर्याप्त मात्रा मे कच्चा माल, सस्ती शक्ति, पर्याप्त श्रम तथा विस्तृत घरेलू बाजार सम्मिलित थे।

(२) उद्योग बिना सरक्षण के न चल सके और यदि चल भी सके तो इतनी गति से नही जितनी गति से उसको राष्ट्रीय हित मे चलना चाहिये।

(३) उद्योग इस प्रकार का होना चाहिये जो अन्त मे बिना सरक्षण के अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता का सामना कर सके।

दोनो विश्व महायुद्ध के बीच मे सरकार ने उसी अर्थ नीति से काम लिया। जहा तक इस नीति के सिद्धान्तो की बात है वहा तो उसमे कुछ अधिक दोष न थे। परन्तु ये सिद्धान्त इतनी कडाई मे माने गय कि उसके कारण इस नीति की कडी आलोचना हुई। दूसरे इस नीति के अन्तर्गत केवल पुराने उद्योगो को सरक्षण मिलने की बात आती ही न थी। इस नीति के अन्तर्गत सरकार ने शीशे के उद्योग को इस लिये सरक्षण नही दिया क्योकि भारत म सोडा एश नही पाया जाता था। इसी प्रकार सरकार ने भारी रासायनिक उद्योग को भी सरक्षण नही दिया यद्यपि यह उद्योग भारत के लिये बहुत आवश्यक था। इस प्रकार इस नीति के अन्तर्गत इस बात का कोई ध्यान न रखा जाता था कि कोई उद्योग राष्ट्रीय हित के लिये आवश्यक है अथवा नही। इङ्गलैण्ड मे कई बडे-बडे उद्योगो के लिय न तो कच्चा माल ही पाया जाता है और न ही उसका विस्तृत घरेलू बाजार है परन्तु फिर भी वे उद्योग अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता मे पीछे नही हैं। इसलिये हम कह सकते है कि यह नीति भारत के लिये अपनानी अनुचित थी।

सरकार को भी अन्त मे इस नीति के अवगुण मानने पडे और इस नीति मे सुधार करने के लिये उसने १९४४ मे एक अन्तरकालीन टैरिफ बोर्ड की नियुक्ति

की। इस बोर्ड ने यह बताया कि सरक्षण उन उद्योगो को मिलना चाहिए जो अच्छी प्रकार से चल रहे है अथवा जिनको ऐसी प्राकृतिक एव आर्थिक सुविधायें प्राप्त हो कि वे अन्त म बिना सरक्षण अथवा सरकारी सहायता के मफलतापूर्वक चल सक अथवा जिनको राष्ट्रीय हित मे सरक्षण देना आवश्यक हो और जिसका भार समाज के ऊपर अधिक न हो। इस प्रकार हम देखते हैं कि सरकार की अर्थ नीति पहले से कुछ उदार हो गई।

१९४७ म टैरिफ बोर्ड का पुनर्स्थापन हुआ और उसको वस्तु मूल्य बोड (Comn odities Price Board) के कुछ कार्य भी सौंप दिये गए। १९४८ मे इस बोर्ड के कार्यो मे कुछ और भी वृद्धि कर दी गई।

सन् १९४९ मे द्वितीय वित्तीय आयोग की नियुक्ति हुई। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट मे बताया कि उद्योगो को सरक्षण देने का कार्य अकेले तय नही हो सक्ता क्योकि इसका सम्बन्ध देश की पूर्ण आर्थिक नीति से है। जब तक देश के लिय एक बडी आर्थिक योजना बने उस समय के लिय आयोग न निम्नलिखित सिद्धान्तो पर सरक्षण देने का सुझाव दिया है—

कमीशन ने सब उद्योगो को तीन भागो मे बाटा है—(१) सुरक्षा तथा सेना सम्बन्धी उद्योग, (२) आधारभूत उद्योग, (३) अन्य उद्योग। आयोग का सुझाव है कि चाहे कितना भी व्यय हो सुरक्षा तथा सैनिक दृष्टि के महत्व के उद्योगा का सरक्षण प्रदान किया जाय। जहा तक आधारभूत उद्योगो के विकास का प्रश्न है इस सम्बन्ध मे 'टैरिफ आर्थोरिटी' सरक्षण के रूप का तथा सरक्षण की शर्तों आदि का निश्चय करेगी। वह समय-समय पर इस बात की जाच करती रहेगी इन शर्तों की कहा तक पूर्ति हो रही है। इन उद्योगो को भी सरक्षण मिलना चाहिये।

अन्य उद्योगो को सरक्षण प्रदान करने के लिये आयोग ने कहा कि 'टैरिफ अथारिटी' यह देखे कि जिस उद्योग को सरक्षण दिया जाने वाला है उस उद्योग को कौन-कौन सी आर्थिक सुविधाये प्राप्त है। उसके उत्पादन की वास्तविक लागत क्या होती है या होने की सम्भावना है। 'आर्थोरिटी' यह देखे कि क्या उद्योग ऐसी स्थिति मे है जो थोड समय मे बिना सरक्षण के या सरक्षण सहित अपना उचित विकास कर लेगा तथा आत्म निर्भर हो जायगा, या वह ऐसा उद्योग है जिसे राष्ट्र के हित की दृष्टि से सरक्षण या अन्य सरकारी सहकारी सहायता प्रदान करना आवश्यक है।

उपरोक्त बातो के अतिरिक्त आयोग ने निम्नलिखित सुझाव और पेश किय हैं—

(१) आयोग ने कहा कि सरक्षण प्रदान करन के लिये इस बात का होना आवश्यक कि अमुक उद्योग को अपने निकटवर्ती प्रदेश मे कच्चा माल मिलेगा या नही, आवश्यक नही होना चाहिये। यदि उद्योग को अन्य सुविधाये जैसे श्रम, घरेलू बाजार आदि प्राप्त हैं परन्तु उसे कच्चा माल प्राप्त करने की सुविधा नही है तो उद्योग को सरक्षण प्रदान करने मे कोई आपत्ति न होनी चाहिये।

(२) किसी उद्योग को सरक्षण प्रदान करते समय अच्छे विदेशी बाजारो या बिक्री के क्षेत्रो का भी ध्यान रखना चाहिये।

(३) सरक्षण प्रदान करने की यह शर्त नही होनी चाहिये कि कोई उद्योग देश की सारी मॉंग पूरी कर।

(४) देश के वे उद्योग जो सरक्षण वाले उद्योगो के उत्पादन म सहायता कर रहे हैं, उन्हे भी एक प्रकार के क्षति पूरक सरक्षण (Compensatory Protection) की आवश्यकता होगी।

(५) नवीन उद्योगो के लिय जिनमे काफी मात्रा मे पू जी लगती है और जिनके लिये कुशल श्रम की आवश्यकता होती है, उनको सरक्षण प्रदान करना काफी आवश्यक है।

(६) राष्ट्रीय हितो की पूर्ति के लिये कृषि उत्पादन की कुछ वस्तुओ को सरक्षण प्रदान किया जा सकता है किन्तु ऐसा सरक्षण प्रदान करत समय यह ध्यान रखा जाना चाहिय कि जितनी कम वस्तुओ को सरक्षण प्रदान किया जाय उतना ही अच्छा है। इस सरक्षण का समय भी बहुत ही कम होना चाहिए और पाच वर्ष स अधिक नही होना चाहिये। सरक्षण के साथ-साथ कृषि की उन्नति की ओर ध्यान देना चाहिये।

(७) जहा तक हो सरक्षण वाले उद्योगो पर उत्पादन-कर नही लगाना चाहिए। ऐसा तभी किया जाये जबकि सरकार को बहुत ही अधिक धन की आवश्यकता हो।

जिन उद्योगो को सरक्षण दिया जायेगा उनके ऊपर भी कुछ जिम्मेदारियाँ होगी जो निम्नलिखित होगी—

(१) मूल्य पर नियन्त्रण करना, (२) उत्पत्ति को बढाते रहना, (३) वस्तु के गुण को ठीक रखना (४) उत्पत्ति के नये-नये साधनो का उपयोग करना आदि।

टैरिफ आथैरिटी का कर्तव्य होगा कि वह सरक्षित उद्योग के साथ सम्बन्ध रखे और समय पर उनकी बाबत एक रिपोर्ट सरकार को देती रहे।

कमीशन ने यह सुझाव भी दिया कि एक स्थायी टैरिफ कमीशन की स्थापना की जाय। यह लोक सभा द्वारा स्थापित किया जाये। इसमे प्रधान सहित पाच सदस्य होने चाहियें। इस कमीशन का यह कार्य होगा कि वह इस बात की जाच करे कि सरक्षण किस उद्योग को दिया जाये।

स्थायी टैरिफ कमीशन को स्थापित करने के लिये एक बिल लोकसभा मे पेश किया गया था जो कि पास हो चुका है। इस कमीशन का वही कार्य होगा जो इसके लिये वित्तीय कमीशन ने बताया था।

इस प्रकार द्वितीय कमीशन के सुझावो का मान लेने से भारतीय अर्थ-नीति म एक बहुत बडी बदल हो गई है। अर्थ कमीशन के सुझाव के अनुसार सरक्षण केवल विदेशी प्रतियोगिता से बचने के लिय ही नही लगाना चाहिये। वरन् देश के

प्राकृतिक साधनो का पूरा-पूरा उपयोग करने के लिये भी लगाना चाहिये। इस प्रकार भविष्य मे सरक्षण हमारे देश के लिये राष्ट्रीय हित का एक साधन बन जायेगा।

सरक्षण और भारतीय उद्योग—यद्यपि हमारे देश के उद्योगो को अभी तक विवेकात्मक सरक्षण ही प्रदान किया गया था तो भी इस देश के उद्योगो ने बहुत उन्नति की। जिन उद्योगो को सरक्षण प्रदान किया गया उन्होने (जूट तथा लोहे के अतिरिक्त) मदी के समय भी खूब उन्नति की। १९२२ तथा १९२९ के बीच फौलाद के सामान की उत्पत्ति आठ गुनी, सूती कपडे की ढाई गुनी, दियासलाई की ३८%, कागज की १८% और चीनी की उत्पत्ति २४,००० से ९६१,००० टन बढ गई। इन सब उद्योगो की इतनी अधिक उन्नति उस समय हुई जबकि उनको विवेकात्मक सरक्षण दिया गया। यदि उनको ठीक प्रकार का सरक्षण दिया जाता तो वह और भी अधिक उन्नति कर जाते। इस बात से यह साफ जाहिर है कि इस देश के उद्योगो को सरक्षण की आवश्यकता है। वर्तमान सरक्षण नीति से हम यह आशा कर सकते हैं कि देश के उद्योगो की बहुत उन्नति होगी।

Q 57 Discuss the desirability or otherwise of nationalising Indian industries at the present moment

प्रश्न ५७—वर्तमान मे भारतीय उद्योगों के राष्ट्रीयकरण की अच्छाई अथवा बुराई के विषय मे लिखिये।

उद्योगो के राष्ट्रीयकरण का अर्थ उस स्थिति से होता है जबकि उद्योगो का स्वामित्व तथा उनकी व्यवस्था सरकार के हाथ मे होती है। भारतीय उद्योगो के राष्ट्रीयकरण की समस्या द्वितीय महायुद्ध के समाप्त होने पर सामने आई। उद्योगो के राष्ट्रीयकरण के विषय मे योजना आयोग ने विचार किया। भारत सरकार ने भी उद्योगो के विषय मे अपनी पहली नीति ७ अप्रैल १९४८ ई० को घोषित की तथा दूसरी नीति ३० अप्रैल १९५६ को। इन दोनो मे बताया गया कि भारत के लिये मिश्रित अर्थ-व्यवस्था (Mixed Economy) सबसे उपयुक्त है। श्री गुलजारीलाल नन्दा ने इस विषय मे कहा है, 'यदि किसी विशेष उद्योग के राष्ट्रीयकरण से अच्छा फल प्राप्त होता है तथा वह सबको अच्छा सतोष प्रदान करता है, तो उसको ठीक ढङ्ग से चलाने मे कोई बाधा नही। यदि एक निजी उद्योग कुछ कारणो से ठीक प्रकार से कार्य करता है और अधिक सतोष प्रदान करता है, तो अवश्य ही उसको रहने दिया जायगा।' १९ जून १९५२ ई० को श्री के० सी रेडी ने जो उस समय उत्पादन मन्त्री थे, कहा था, 'यदि मुझे वर्तमान निजी इस्पात उद्योग के राष्ट्रीयकरण करने तथा उसके बदले एक सरकारी इस्पात उद्योग चालू करने के बीच छाट करने के लिए कहा जाय तो मै नि सकोच वतमान उद्योगो के राष्ट्रीयकरण मे साधनो को

नष्ट करने की अपेक्षा नये उद्योग को चालू करने के पक्ष मे राय दूगा।' ७ जनवरी १९५६ ई० मे श्री नेहरु ने Standing Committee of the National Development Council के सामने कहा, 'मैं राष्ट्रीयकरण मे विश्वास नही करता क्योकि जब राष्ट्रीयकरण किया जाता है तो मावजा देना पडता है। मैं कोई लाभ इस बात मे नही देखता कि हम मावजा देने मे अपने साधनो को नष्ट करें जब तक कि कोई चीज हमारे रास्ते मे न आये और हमको इसे बदलना पडे... जहा तक मिलो का सम्बन्ध है मैं एक नई मिल खडी करूगा और निजी मिल के साथ प्रतियोगिता करूगा। ८ जौलाई १९५९ ई० को श्री नहरु ने फेडरेशन आफ इंडिया चेम्बर आफ कामर्स की समिति के सम्मुख कहा कि सरकार की यह भी नीति है कि यद्यपि साधारणत आधार भूत उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र मे पडेंगे परन्तु वे वर्तमान उद्योगो का राष्ट्रीयकरण केवल राष्ट्रीयकरण के लिये नही करेंगे। निजी उद्योगो मे भी तब तक बड़े पैमाने की इकाइयो को चालू करने की आज्ञा देने का प्रश्न नहीं उठता जब तक कि वे हमारी आर्थिक व्यवस्था के हित मे कार्य करते हैं। इन उदाहरणो से सरकार की उद्योग के प्रति नीति का पता चलता है।

इससे पूर्व कि हम यह कहे कि भारतीय सरकार की मिश्रित अर्थ-व्यवस्था कहा तक भारत के लिये उपयुक्त है हमे यह देखना चाहिये कि यदि उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया जाय तो उससे क्या लाभ अथवा हानि हो सकती है।

राष्ट्रीयकरण के लाभ—

(१) राष्ट्रीयकरण करने से प्रतियोगिता समाप्त हो जाती है और उसके कारण विज्ञापन आदि करने का खर्च समाप्त हो जाता है।

(२) राष्ट्रीयकरण से उपभोक्ताओ को बडा लाभ होता है। उसका कारण यह है कि सरकार के सामने लाभ का उद्देश्य न होने के कारण वस्तु का मूल्य कम होता है। उपभोक्ताओ को निजी पूजी के शोषण से बचाने के लिये प्राय सभी देशो मे उन उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया जाता है जो राष्ट्र के लोगो के लिये वस्तुत आवश्यक है जैसे, गैस, बिजली, कोयले आदि के उद्योग।

(३) राष्ट्रीयकरण से मजदूरो को बडा लाभ होता है। सरकार सारे देश के लोगो के हित की बात सोचती है। इसलिये जो मजदूर सरकारी कारखानो मे काम करते हैं उनको अच्छी मजदूरी मिलती है, उनसे कम घण्टे काम लिया जाता है, उनके लिये मिलों मे बहुत प्रकार की सुविधाये प्रदान की जाती है आदि-आदि।

(४) राष्ट्रीयकरण करने से उद्योगो को जो लाभ प्राप्त होता है वह समाज के सब लोगो के हित के लिये खर्च किया जाता है। इससे लोगो का जीवन स्तर ऊंचा होता है।

(५) कुछ ऐसे उद्योग भी होते हैं जिनके ऊपर सारे राष्ट्र का जीवन निर्भर होता है। ऐसे उद्योग को निजी पूजी को सौप कर देश को एक अनिश्चित स्थिति मे डालना है क्योकि यदि किसी समय इन उद्योगो मे लाभ कम हो जाये तो निजी

पू जीपति उत्पत्ति करना छोड देंगे अथवा उत्पादन कम कर देंगे। इसके विपरीत यदि ऐसे उद्योग सरकार के हाथ मे होते हैं तो वे चलते ही रहते हैं, चाहे उनमे लाभ हो अथवा हानि। ऐसे उद्योगों मे लोहे व इस्पात का उद्योग, शस्त्र आदि बनाने के उद्योग, रेलवे उद्योग, कोयले का उद्योग, वायुयान, जलयान उद्योग, टेलीफून व टेलीग्राम उद्योग आदि सम्मिलित होते हैं।

(६) राष्ट्रीयकरण कुछ ऐसे उद्योगो के लिये भी आवश्यक हो जाता है जो बिल्कुल नये होते हैं और इस कारण उनमे निजी पू जी नही लगाई जाती क्योंकि उनका लाभ अनिश्चित होता है।

(७) कभी कभी उद्योगो का राष्ट्रीयकरण उस समय भी किया जाता है जबकि देश के किसी पिछडे हुए भाग मे निजी पू जी न लगाई जा रही हो। ऐसे भाग मे सरकार अपनी पू जी से उद्योग चलाकर उस भाग को उन्नत बना देती है।

(८) १२ अक्तूबर १९५१ ई० को राष्ट्रीयकरण के विषय मे लोक सभा मे भाषण करते हुए श्री गुलजारीलाल नन्दा, योजना मन्त्री ने कहा था कि यह सम्भव है कि राष्ट्रीयकरण किये गये उद्योग मे मजदूरो, जिनके लाभ के लिये राष्ट्रीयकरण किया गया है, की स्थिति मजदूरी के दृष्टिकोण से खराब हो जाय। इसी प्रकार यह सम्भव है कि किसी दूसरे उद्योग मे उपभोक्ताओ को जिनके लाभ के लिये उस उद्योग का राष्ट्रीयकरण किया गया है, अधिक मूल्य देना पडा। इसके अतिरिक्त सरकार को किसी दूसरे राष्ट्रीयकरण किये हुए उद्योग से लाभ न हो। राष्ट्रीयकरण कुछ उद्देश्यो की प्राप्ति के लिये किया जाता है और यदि उन उद्देश्यो की प्राप्ति हो जाय तो सरकार को उनको प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये। इंगलैंड तक मे राष्ट्रीयकरण किये गये उद्योगो मे मजदूरो को सतोष नहीं मिल रहा है। इसलिये भारत के लोगो को चाहिये कि वे कार्य करें और स्थिति मे सुधार करने का प्रयत्न करें।

राष्ट्रीयकरण की हानिया—

(१) जहा राष्ट्रीयकरण से ये सब लाभ हैं वहा उससे निम्नलिखित हानियां भी हैं—

(१) जब किसी देश मे उद्योगो का राष्ट्रीयकरण किया जाता है तब लोगो की स्वय इच्छा से कार्य करने की भावना (Initiative) नष्ट हो जाती है।

(२) उद्योगो के राष्ट्रीयकरण करने से उत्पादन करने मे बहुत कम मितव्ययिता होती है। पू जीपति को अधिकाधिक लाभ कमाने की धुन लगी रहती है। इसलिये वह हर समय उन सब ढङ्गो को सोचता रहता है जिनसे कि वह कम से कम खर्च करके अधिकाधिक लाभ कमा सके। परन्तु राष्ट्रीयकरण किये गये उद्योगो का नियन्त्रण तथा सचालन वैतनिक मैनेजरो द्वारा किया जाता है। ये लोग उद्योगो मे मितव्ययिता करने मे कोई दिलचस्पी नही लेते क्योंकि ऐसा करने से उनको कोई

व्यक्तिगत लाभ नही होता। वे केवल इतना कार्य करते है जिससे कि उनको अयोग्यता का आरोप लगाकर पदच्युत न कर दिया जाय। इस प्रकार उद्योगो मे काम मितव्ययिता होती है।

(३) यद्यपि यह बात सत्य है कि राष्ट्रीयकरण करने से मजदूरो की स्थिति कुछ अच्छी हो जाती है परन्तु ऐसा भी होता है कि मजदूरो की हडताल आदि करने की स्वतन्त्रता नष्ट हो जाती है। सरकार के हाथ मे कानून बनाने की शक्ति होने के कारण, वह मजदूरो के इस अधिकार को छीन लेती है। इस प्रकार राष्ट्रीयकरण के कारण मजदूर सघो की शक्ति बहुत कम हो जाती है।

(४) सरकारी उद्योगो मे भी वही दोष पाये जाते हैं, जो कि सरकारी दफ्तर मे पाये जाते हैं। उद्योगो मे भी पक्षपात, बेईमानी, काम का देर मे होना आदि दोष पाये जाते हैं।

(५) राष्ट्रीयकरण करने से तभी लाभ हो सकता है जबकि देश मे सच्चे और ईमानदार लोग होने हैं। यदि देश मे इस प्रकार के लोगो की कमी होती है तो राष्ट्रीयकरण से लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होती है।

(६) राष्ट्रीयकरण करने से पूञ्जी के एकत्र करने मे बडी बाधा पडती है।

यदि हम राष्ट्रीयकरण के गुण व दोषों को ध्यान मे रखकर यह विचार करें कि उद्योगो का राष्ट्रीयकरण भारत के लिये लाभप्रद है या नही तो हम कह सकते हैं कि वर्तमान मे भारत के लिये मिश्रित अर्थ-व्यवस्था (Mixed Economy) की नीति सबसे अच्छी है। इसके कई कारण हैं—

(१) भारत सरकार के पास इस समय इतनी पूञ्जी नही है कि वह सब अथवा अधिकतर उद्योगो को अपने हाथ मे ले सके। इसका सबूत यह है कि सरकार को पचवर्षीय योजना के चलाने मे पूञ्जी की कमी के कारण बडी कठिनाई पडी थी। इसलिये सरकार के लिये सबसे अच्छा रास्ता यह है कि वह उन उद्योगो मे जिनमे कि निजी पूञ्जी पर्याप्त मात्रा मे लग रही है निजी पूञ्जी को लगने दे। जिन उद्योगो मे निजी पूञ्जी नही लग रही है उनको सरकार चलाये। इनके अतिरिक्त सरकार उन उद्योगो को जो राष्ट्रीय हित के लिये आवश्यक है स्वय चलाये। ऐसे उद्योगो मे आधारभूत उद्योग जैसे लोहे और इस्पात का उद्योग, भारी रासायनिक उद्योग आदि हैं, रक्षा की दृष्टि से आवश्यक उद्योग जैसे अणु-शक्ति, गोला बारूद, हथियार आदि बनाने के उद्योग तथा लोक-हित उद्योग जैसे बिजली, गैसें, रेलवे, कोयला आदि उद्योग सम्मिलित हैं। उनमे निजी पूञ्जी को पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिये।

यह एक अच्छी बात है कि भारत सरकार ने उद्योगो के सम्बन्ध मे यही नीति अपनाई है।

(२) सरकार के पास इस समय ऐसे योग्य व्यक्तियों की कमी है जो उद्योगो का कार्य सचालन कर सकें।

(३) भारतवर्ष में जो भी योग्य व्यक्ति है वे कार्य संचालन करते समय बहुत प्रकार की बुराइयों में फँस जाते हैं। इसके उदाहरण हमको महालेखा निरीक्षक (Auditor General) की रिपोर्टों से मिल सकते हैं। सरकार द्वारा आजकल पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत जो बड़े-बड़े कार्य किये जा रहे है उनमें करोड़ों रुपये के गबन की बातें पढ़ने को मिलती हैं। इसके अतिरिक्त उनमें कार्य की प्रगति बहुत धीमी है। इसलिये हम कह सकते हैं कि जब तक देश में सच्चे और ईमानदार लोगों की कमी है उस समय तक राष्ट्रीयकरण लाभप्रद न होगा।

(४) हमारे देश के सैकड़ों वर्ष तक गुलाम बने रहने के कारण लोगों को अपनी योग्यता दिखाने का कभी अवसर प्राप्त नहीं हुआ। देश के स्वतन्त्र होने पर उनको यह अवसर मिला है। यदि उद्योगों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया तो लोगों को फिर गुलामों के समान सरकार की आज्ञानुसार कार्य करना पड़ेगा। इससे देश को बड़ी हानि होगी।

इन्हीं सब बातों के कारण हम भारत की वर्तमान स्थिति में सब उद्योगों के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में नहीं हैं। हम देश के लिये एक मिश्रित अर्थ-व्यवस्था के पक्ष में हैं।

Q 58 Discuss the desirability of nationalizing insurance in India in the next five years

प्रश्न ५८—भारत में अगले पाँच वर्षों में बीमे के राष्ट्रीयकरण की उपयुक्तता की विवेचना कीजिये।

१९ जनवरी १९५६ ई० को राष्ट्रपति के एक विशेष आदेश द्वारा जीवन बीमे के कार्य का राष्ट्रीयकरण किया गया जिसका प्रभाव १४९ भारतीय तथा १६ अभारतीय कम्पनियों पर पड़ा। इन कम्पनियों को सरकार उचित मुआवजा देगी।

भारत में प्रथम पंचवर्षीय योजना के चालू होने पर यह आवश्यक हो गया कि भारत का सारा आर्थिक ढाँचा इस प्रकार स्थापित किया जाय जिससे कि वह देश की उन्नति की योजनाओं में सहायक हो सके। इस दृष्टि से इम्पीरियल बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया। जीवन बीमे के कार्य का राष्ट्रीयकरण उस ओर दूसरा पग है। इसके द्वारा देश के लोगों की बचत राष्ट्रीय उन्नति की योजनाओं में सहायक हो सकेगी।

भारतवर्ष में आजकल ५० लाख बीमे की पालिसी है जिससे ५५ करोड़ वार्षिक प्रीमियम मिलता है। जीवन बीमा कम्पनियों की सम्पत्ति ३८० करोड़ रुपये है जिससे उनको १२ करोड़ रु० वार्षिक की आय प्राप्त होती है। परन्तु अभी

भारत मे जीवन बीमा कार्य बढाने के लिये इतनी गुन्जायश है कि उनकी सम्पत्ति ८००० करोड रुपये तक बढ सकती है। इस प्रकार जीवन बीमे का राष्ट्रीयकरण करके सरकार देश के लोगो की बहुत सी बचत राष्ट्र हित के कार्यो मे लगा सकेगी।

जब भारत मे जीवन बीमे का राष्ट्रीयकरण किया गया तब साधारण जनता इसका बडा स्वागत किया। प० नेहरू ने अपने एक भाषण मे इसको एक बडा पग तथा एक अच्छा निर्णय बताया क्योकि यह न केवल पचवर्षीय योजना क लिये अच्छा है वरन् समाज के समाजवादी ढाचे के उद्देश्य की प्राप्ति के लिये भी महत्व-पूर्ण है। साधारण जनता ने इसका स्वागत इसलिये किया क्योकि इसके कारण उनका रुपया सुरक्षित रहेगा। यदि सरकार एसा न करती तो भोली भाली जनता को लोगो की बदनियती का शिकार होना पडता। इसक विपरीत बहुत सी बीमा कम्पनियो के चेयरमैनो ने इसका विरोध किया और कहा कि बीमे का कार्य कवल निजी हाथो मे रहकर बढ सकता है। क्योकि वहा प्रतियोगिता क कारण हरएक कम्पनी अपने कार्य को बढाने का प्रयत्न करती है।

बीमे मे राष्ट्रीयकरण के पक्ष व विपक्ष में तर्क—

राष्ट्रीयकरण क विपक्ष मे लोगो का कहना है कि इस देश तथा विदेशो मे लोगो का अनुभव है कि राष्ट्रीयकरण क द्वारा उसमे काय कुशलता तथा लचकीलापन प्राप्त नही होता जो निजी हाथो मे हो जाता है। यही कारण है कि उन देशो मे जहा इस प्रकार क प्रश्न उठे लोगो ने इसक विपक्ष में अपने मत दिये। उनका यह भी कहना है कि राष्ट्रीयकरण क द्वारा बीमे के उच्चतम आदर्श को प्राप्त नही किया जा सकता।

इस तर्क का खण्डन करते हुए भारत के भूतपूर्व वित्तीय मन्त्री श्री देशमुख ने कहा था कि दूसरे देशो क आधार पर मैं कह सकता हू कि जहा कही भी पूरे दिल से प्रयत्न किया गया है सफलता कवल उन्ही हालतो मे मिली है जबकि पूरे तौर पर प्रयत्न किया गया। मुझे कोई कारण समझ मे नही आता कि राष्ट्रीयकरण किया गया व्यापार क्यो ठीक प्रकार नही चल सकता। उन्होने आगे कहा कि कुछ लोगो को यह विश्वास सा हो गया है कि सरकार द्वारा चलाये गए सब कार्य खराबी के साथ चलाये जाते हैं तथा ऐसे लोग निजी कार्य कुशलता की बडी डीग मारते हैं। भारत मे ही बीमे के कार्य क विषय मे, यह अनुभव है कि बीमे क व्यापार मे जहाँ कोई भी इकाई फेल नही होनी चाहिए पिछले १० वर्षो मे लगभग २५ बीमा कम्पनिया फेल हो गई तथा दूसरी २५ ने अपने साधनो का ऐसा दुरुपयोग किया कि उनका कार्य दूसरी कम्पनियो को हस्तातरित करना पडा। कुछ हालतो मे बीमा कम्पनियो ने अपने साधनो को गलत स्थानो पर लगाया। भारत बीमा कम्पनिया इसके उदाहरण हैं।

राष्ट्रीयकरण के द्वारा यह बात सम्भव हो सकगी कि देश मे वे कम्पनिया जो आजकल अच्छी प्रकार काय नही कर रही है उनको आपस मे मिलाकर अथवा

और किसी ढग से सुचारु रूप से चलाया जा सकेगा। इसके द्वारा यह भी सम्भव सकेगा कि जीवन बीमे का कार्य जो आजकल केवल शहरो तथा नगरो तक ही सीमित है उसको बढा कर गावो तक ले जाया जा सकेगा और इस प्रकार गावो के लोगो की बचत को भी देश के हित के कार्यो मे लगाया जा सकेगा।

राष्ट्रीयकरण के कारण द्वितीय पचवर्षीय योजना के अर्थ-प्रबन्धन (Financing) मे भी सहायता मिलेगी। यह बात ऊपर भी बताई जा चुकी है।

इसके द्वारा जैसा प० नेहरू व श्री देशमुख ने कहा है, "समाजवादी ढाचे को जिसको प्राप्त करने का देश ने १९५४ मे निश्चय किया है, प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

इस प्रकार बीमे के राष्ट्रीयकरण को देश के लिये हितकर ही करना उचित होगा।

यहाँ यह बात बतानी अनुचित न होगी कि जीवन बीमा कम्पनियो का राष्ट्रीयकरण करने के पश्चात् भारत सरकार ने १ जौलाई १९५६ ई० को एक जीवन बीमा कारपोरेशन स्थापित की जिसने सब जीवन बीमा कम्पनियो की लेनदारी व देनदारी अपने ऊपर ले ली है। केवल डाकखाना जीवन बीमा फण्ड का कार्य इसने नही लिया है। भविष्य मे कोई भी बीमा कम्पनी जीवन बीमे का कार्य भारत मे न कर सकेगी।

कारपोरेशन की प्रारम्भिक पूँजी ५ करोड रु० होगी जो कि केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रदान की जायेगी। इसके कार्य की देख-रेख १५ सदस्यो का एक बोड करेगा। सभापति इन्ही मे से एक होगा। साधारण निरीक्षण का कार्य एक कार्यकारिणी समिति को सौंपा जायेगा जिसके ५ सदस्य होगे। धन का विनियोग करने के लिये एक विनियोग समिति स्थापित की जा सकती है जिसमें ७ सदस्यों से अधिक नही होंगे। इन ७ मे से ३ कारपोरेशन मे से लिये जायेंगे तथा शेष वे होंगे जो कि आर्थिक मामलो मे तजुर्बा रखने वाले होगे।

इस प्रकार जीवन बीमा कारपोरेशन स्थापित करके भारत सरकार ने १९ जनवरी १९५६ से पूर्व की सब पालिसियो की पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है।

Q 59 Trace the growth and development of iron and steel industry in India and discuss the present problems of the industry

प्रश्न ५९–भारतवर्ष के लोहे और फौलाद के उद्योगो का विकास तथा उन्नति के बारे मे लिखिए तथा इस उद्योग को वर्तमान समस्याओं का वर्णन कीजिये।

उत्तर–लोहे और फौलाद का उद्योग सभी उद्योगो का आधार स्तम्भ है। आधुनिक युग मे यह उद्योग न केवल खेती व यातायात के लिये ही आवश्यक है वरन् सब

प्रकार के उद्योगो जिनमे इजीनियरिंग व रक्षा सम्बधी उद्योग भी हैं के लिये आवश्यक है। भारतवर्ष का यह एक बहुत पुराना उद्योग है। देहली के पास का लोहे का स्तम्भ १५०० वर्ष पुराना बताया जाता है। यह स्तम्भ इस बात का प्रमाण है कि अतीत मे भारतवासियो ने लोहे और फौलाद के उद्योगो मे निपुणता प्राप्त कर ली थी। भारतवर्ष के कारखाने मे बनी हुई लोहे और फौलाद की चीजो की माग दूर दूर के देश करते थे। पर धीरे-धीरे इस उद्योग का पतन हो गया। समय-समय पर उसकी उन्नति का प्रयत्न किया गया पर निष्फल हुआ।

भारत मे आधुनिक ढङ्ग के अनुसार लोहे और फौलाद का उद्योग अभी ५० वर्षो से चालू हुआ है। इससे पूर्व कुछ यूरोप के लोगो ने इस उद्योग को चालू करने का प्रयत्न किया पर उनको कोई सफलता न मिली। प्रारम्भ मे किये गए इस प्रकार के प्रयत्नो मे से एक प्रयत्न बारकर का लोहे का कारखाना था। १८८९ मे इस कारखाने को कलकत्ते की मारटिन कम्पनी ने ले लिया। इसके पश्चात् इसको फिर ठीक-ठीक ढङ्ग पर चालू किया गया है। कुछ समय पश्चात् इसको इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी मे मिला दिया गया है।

परन्तु इस उद्योग को आधुनिक प्रणाली पर चलाने का श्रेय टाटा को है। उसने १९०७ में साची स्थान पर टाटा कम्पनी की नीव डाली। प्रारम्भ की सब कठिनाइयो का सामना करते हुये कारखाना दिनो दिन उन्नति करता गया। सन् १९१४–१८ के महायुद्ध मे इस कम्पनी की बहुत उन्नति हुई। १९१७ मे इसको बढाने की एक योजना तैयार की गई जो १९२४ मे बनकर तैयार हुई। टाटा के कारखाने की उन्नति को देखकर दूसरे लोगो को भी दूसरे कारखाने खोलने का साहस हुआ। १९०८ ई० मे हीरापुर मे इण्डियन आयरन एड स्टील कम्पनी बनाई गई। इसके पश्चात् १९२३ मे भद्रावती मे मैसूर स्टेट आयरन वर्क्स चालू किया गया। सन् १९३७ मे बङ्गाल स्टील कार्पोरेशन की स्थापना हुई। इनके अतिरिक्त बङ्गाल के आस पास कुछ और छोटे-छोटे लोहे के कारखाने है। १९५४ ई० की एक गणना के अनुसार भारत मे १२६ लोहे व इस्पात के कारखाने हैं। इनमे ३५.९ करोड रु० की अचल पूजी तथा ३४ ३ करोड रु० की चल पूजी लगी हुई है तथा इसमे ८५६३४ आदमी लगे हुए हैं।

सरक्षण (Protection)

जैसा ऊपर बताया गया है कि लोहे और फौलाद के उद्योग ने प्रथम महायुद्ध में खूब उन्नति की। युद्ध समाप्त होने पर इस उद्योग को विदेशो से काफी कडी प्रतियोगिता करनी पडी। इसलिये उद्योग ने सरकार से सरक्षण के लिये प्रार्थना की। टैरिफ बोर्ड जाच-पडताल के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यदि इस उद्योग को सरक्षण प्रदान कर दिया गया तो थोडे ही समय मे कम लागत पर भारत अपनी आवश्यकता के लिये फौलाद उत्पन्न कर सकेगा। इस कारण १९२४ मे इस उद्योग को केवल तीन वर्ष के लिये अधिक आयात कर (Import Duties) तथा

निर्यात वृत्ति (Bounties) के रूप में संरक्षण मिला। इसके पश्चात् इस संरक्षण को सात वर्ष के लिये और बढ़ा दिया गया। सन् १९३३ में संरक्षण की अवधि फिर ७ वर्ष के लिये बढ़ा दी गई। संरक्षण के लिये सबसे अन्तिम जाँच १९४७ ई० में हुई जिसमें इस उद्योग ने संरक्षण जारी रखने के लिये कोई जोर नहीं दिया। इसी कारण टैरिफ बोर्ड ने संरक्षण हटाने का सुझाव रखा। इस प्रकार २३ वर्ष के संरक्षण के पश्चात् अब यह उद्योग अपने पैरों पर खड़ा हो गया। संरक्षण से इस उद्योग की बहुत प्रगति हुई। इस शताब्दी के प्रारम्भ में इस देश में ३५००० टन गला हुआ लोहा (Pig iron) तैयार होता था पर अगस्त १९५७ में इसकी उत्पत्ति बढ़कर १७ ८९ लाख टन हो गई। इसके अतिरिक्त हमारे देश में आजकल बहुत सा इस्पात भी उत्पन्न होता है। १९५७ में तैयार फौलाद की उत्पत्ति १३४६ ४ हजार टन थी। १९५८ में टाटा के कारखाने में हड़ताल होने के कारण फौलाद की उत्पत्ति घटकर १२ ९५ लाख टन रह गई।

द्वितीय महायुद्ध से प्रगति

द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने से विदेशों से फौलाद का आयात बन्द हो गया। इसी बीच सरकार तथा रेलों द्वारा फौलाद की माग बढ़ गई। इस माग को पूरा करने के लिये देश में ही फौलाद की उत्पत्ति बढ़ने लगी। टाटा कम्पनी ने १९३१ ई० में जमशेदपुर में एक ह्वील टायर तथा ऐक्सेल मशीन लगाई। इसके पश्चात् फौलाद की उत्पत्ति दिनों-दिन बढ़ती चली गई।

युद्ध के पश्चात् की स्थिति

युद्ध के पश्चात् इस उद्योग को बड़े सकट का सामना करना पड़ा। इस सकट के आन्तरिक तथा बाह्य दोनों प्रकार के कारण थे। आन्तरिक कारणों में श्रम की उत्पादन-शक्ति का कम होना, वेतन में वृद्धि, मशीनों का पुराना तथा घिसा हुआ होना, मशीनों के पुनर्स्थापन की कठिनाई, पूजी की कमी, कच्चे माल की कठिनाई थे। बाह्य कारणों में मुद्रा-स्फीति, देश की राजनीतिक अव्यवस्था तथा देश का विभाजन, युद्ध सम्बन्धी माग का समाप्त हो जाना तथा सरकार की असतोषजनक औद्योगिक नीति थे। इनके अतिरिक्त सरकार की मूल्य नियन्त्रण सम्बन्धी नीति भी असन्तोषजनक थी।

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत उद्योगों की स्थिति—

प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत सरकार ने लोहे व फौलाद के उद्योगों को बढ़ाने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली। इसलिये सरकार का विचार था कि वह ३१ मार्च १९५६ तक ३० करोड रुपये सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector) में खर्च करेगी तथा ४३ करोड रुपये निजी उद्योगपतियों को उद्योग के बढ़ाने के लिये देगी। निजी उद्योगों में सरकार ने १०-१० करोड रु० के बिना ब्याज के ऋण टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी तथा इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी को दिये हैं।

इसके अतिरिक्त १९५६ ई० में सरकार ने विश्व बैंक से मिलने वाले ऋण की भी गारन्टी की है। इसके कारण उस बैंक से टाटा कम्पनी को ७५ मिलियन डालर का ऋण तथा इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी जो २० मिलियन डालर का ऋण मिला है। टाटा का विस्तार कार्य १९५९ ई० तक तथा इण्डिया आयरन एण्ड स्टील कम्पनी का विस्तार कार्य फरवरी १९५८ में पूरा हो चुका है। विस्तार के कार्य के फलस्वरूप टाटा कम्पनी की उत्पत्ति ८ लाख टन तैयार फौलाद से बढकर १५ लाख टन तथा इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी की ३,००,००० टन से बढकर ८,००,००० टन वार्षिक हो जायेगी। इसके अतिरिक्त दक्षिणी भारत में कोयमबटूर में १५,००० टन वार्षिक उत्पत्ति का एक छोटा कारखाना बनाने की भी आज्ञा दी गई है। इसके अतिरिक्त मैसूर आयरन तथा स्टील वर्क्स में १९६०–६१ तक १००,००० टन फौलाद उत्पत्ति बढाने की योजना है।

सार्वजनिक क्षेत्र में तीन स्टील प्लान्ट्स लगाये जाये जा रहे हैं जिनमें से प्रत्येक की वार्षिक उत्पादन-शक्ति १० लाख टन होगी। ये कारखाने रूरकेला, भिलाई तथा दुर्गापुर में स्थित होंगे। रूरकेला तथा भिलाई के कारखानों में क्रमश ३,४ जनवरी १९५९ से उत्पादन का कार्य शुरू होगया तथा दुर्गापुर के कारखाने से १९५९ ई० में ऐसी आशा है कि रूरकेला तथा दुर्गापुर के कारखाने पूर्ण रूप से १९६१ तक तक तैयार हो जायेंगे तथा भिलाई का १९६० तक रूरकेला प्लान्ट ७२०,००० टन स्टील, भिलाई प्लान्ट ७,७०००० टन स्टील तथा ३,००,००० टन गला हुआ लोहा तथा दुर्गापुर प्लान्ट ७९०,००० टन स्टील तथा ३,५०,००० गला हुआ लोहा उत्पन्न करेगा। इनमें रूरकेला के कारखाने की लागत १७० करोड रु०, भिलाई की १३१ करोड रु० तथा दुर्गापुर की १३८ करोड रु० होगी।

इस प्रकार योजना के अन्तिम वर्ष में भारत में सार्वजनिक क्षेत्र में लगभग २ मिलियन टन तैयार फौलाद तथा निजी क्षेत्र में ४ ३ मिलियन टन फौलाद तैयार हो सकेगा। इस सब कार्य के फलस्वरूप न केवल फौलाद का आयात बन्द हो जायगा वरन् भारत लगभग ५० करोड रु० वार्षिक का फौलाद विदेशों को भेज सकेगा।

वर्तमान स्थिति—१९५५ ई० में भारत में १२६ रजिस्टर्ड फैक्टरी थीं। उनमें से ११५ के आकडे प्राप्त हो पाये। इनमें ४०८८ लाख रु० अचल पूंजी (Fixed capital) तथा ३७०३ लाख रु० कार्यशील पूंजी लगी हुई थी इनमें ७३ हजार मजदूर काम करते थे। मजदूरों के अतिरिक्त और भी १६ हजार आदमी काम करते थे। मजदूरों को १२८९ लाख रु० मजदूरी दी गई तथा दूसरे लोगों को ४७६ लाख रु० वेतन के रूप में दिये गये।

उद्योग की समस्यायें—

(१) **वित्त**—इस उद्योग को नई मशीनें लगाने तथा पुरानी मशीनों को ठीक करने के लिये बहुत से धन की आवश्यकता है जो कि अभी हमारी शक्ति के बाहर की बात है।

(२) श्रम—उद्योग के सामने दूसरी समस्या श्रम की है। श्रमिक कार्य कम करना चाहते हैं परन्तु वे ऊँची मजदूरी प्राप्त करना चाहते हैं। इसके कारण टाटा के कारखाने मे प्रति टन मजदूरी का खर्च जो १९३९–४० मे केवल २७ रुपये प्रति टन था वह बढकर आजकल १०१ रुपये प्रति टन हो गया है। इसके विपरीत इस्पात की प्रति मजदूरी उत्पत्ति ३९९ टन से घटकर केवल २२८ टन ही रह गई।

(३) सरकारी नीति—सरकार की इस उद्योग के प्रति कोई सतोषजनक नीति नही है। सरकार निजी पूजी को अधिक प्रोत्साहन नही देना चाहती। यह उसकी ओर शका की दृष्टि से देखती है। इस कारण उद्योगपति अपना धन लगाते हुये डरते हैं।

उन्नति के सुझाव—

उद्योग को उन्नत करने के लिये प्रथम पचवर्षीय योजना मे निम्नलिखित सुझाव दिये गये हैं—

(१) उद्योग को बढाया जाय तथा उसका नवीनीकरण किया जाय।

(२) वैज्ञानिक तथा अच्छे ढङ्गो द्वारा इस बात का प्रयत्न किया जाय कि मकान आदि बनाने मे फौलाद का प्रयोग कम से कम हो।

(३) उद्योग के लिय अधिक से अधिक धन का प्रबन्ध किया जाय जिसमे इनकी उन्नति मे बाधा न पड़े।

Q 60 Trace the growth and development of cotton industsy in India mentioning its special problems

प्रश्न ३०—भारतवर्ष मे सूती कपडे के उद्योग का विकास तथा उन्नति उसकी मुख्य समस्याओ को बताते हुये लिखिये।

भारतवर्ष सूती कपडा बनाने के लिय सदा ही प्रसिद्ध रहा है। पुराने समय मे कपडा हाथ से बनाया जाता था। परन्तु १९वी शताब्दी के प्रारम्भ से ही इस देश म कपडे का उद्योग चलाने का प्रयत्न आरम्भ हो गया। १८१८ मे कलकत्ते मे एक सूती कपडे की मिल चालू की गई। पर कलकत्ता सूती कपडे के उद्योग के लिय उपयुक्त स्थान न था। इस कारण सूती कपडे की मिल १८५४ मे चालू हुई। प्रारम्भ मे बम्बई म सूती कपडे का उद्योग इसलिये केन्द्रित नही हुआ कि वहाँ पर उसके लिये प्राकृतिक साधन थे, वरन् इसलिये हुआ कि वहाँ पर पूजी की माना अधिक थी, यातायात के साधन उपलब्ध थे और चीन बम्बई से धागा मगाता था। १८७७ ई० से यह उद्योग देश के भीतरी भागो मे फैलना शुरू हुआ। प्रथम महायुद्ध मे इस उद्योग को बहुत प्रोत्साहन मिला क्योंकि लडाई मे बाहर से सामान आना बन्द हो गया और सरकार ने भी बहुत सा माल खरीदा। परन्तु यह उद्योग

बिना कठिनाई के युद्ध के पश्चात् ६ वर्ष तक चलता रहा। इसी बीच मे जापान तथा अमेरिका से बहुत प्रतियोगिता हुई जिससे भारतवर्ष के उद्योग को बहुत बडी हानि हुई।

सरक्षण

इस उद्योग को सरक्षण देने के प्रश्न पर टैरिफ बोर्ड ने १९२७ मे विचार किया। बोर्ड ने वह सब कारण बताये जिनके द्वारा यह उद्योग पतन की ओर जाने लगा था और उन सब बातो को दूर करने के उपाय भी बताये। सरक्षण के विषय मे बोर्ड ने नीचे लिखे सुझाव दिये—

(१) आयात कर (Import duty) ११ प्रतिशत से बढाकर १५ प्रतिशत कर दिया जाये। (२) बढिया सूत कातने पर निर्यात वृत्ति (Bounties) दी जाये। (३) उद्योग सम्बन्धी मशीन तथा पुर्जो पर आयात कर न लिया जाय। पर इन सब बातो से भारत की जनता को सतुष्टि न हुई। इसलिये इसका कडा विरोध किया गया। इस कारण सरकार ने सूती धागे पर मूल्य के अनुसार (Advelorem) ५ प्रतिशत अथवा १$\frac{1}{2}$ आना प्रति पौंड—इन दोनो म से जो भी अधिक हो—सरक्षण कर (Protective Duties) लगाया। पर इससे भी भारतवासियो की सतुष्टि न हुई। इसलिये १९२९ म श्री० जे० एस० हार्डी को इस बात की जाच करने के लिये नियुक्त किया कि भारतीय कपडे के उद्योग को विदेशी प्रतियोगिता से कहा तक हानि पहुच रही है। श्री हार्डी की रिपार्ट के छपने पश्चात् सूती कपडा उद्योग सरक्षण कर ऐक्ट (Cotton Textile Industy Protection Act) अप्रैल १९३० मे पास किया गया। इस ऐक्ट के द्वारा जापान से आने वाले माल पर बहुत अधिक सरक्षण कर लगाया गया। यह ऐक्ट मार्च १९३३ तक के लिये पास किया गया था। १९३१ के दो और ऐक्टो द्वारा इस उद्योग को और भी सरक्षण मिला। इसके फलस्वरूप अङ्गरेजी सादे सफेद कपडे पर आयात कर मूल्यानुसार २५ प्रतिशत अथवा ४$\frac{3}{8}$ आने प्रति पौंड, इन दोनो मे जो अधिक हो, लगाया गया और इङ्गलैंड के अतिरिक्त और देशो से आने वाले कपडे पर मूल्यानुसार ३१$\frac{1}{4}$ प्रतिशत अथवा ४$\frac{3}{8}$ आने प्रति पौंड इन दोनो मे जो अधिक हो, कर लगाया गया। इस कपडे के अतिरिक्त और सब कपडे पर २५ प्रतिशत (इङ्गलैंड से आने वाले पर) तथा ३१$\frac{1}{4}$ प्रतिशत (गैर अग्रेजी कपडे पर) कर लगाया गया।

इसी बीच १९३२ मे जापानी मुद्रा का मूल्य बहुत ही अधिक गिर गया। इस कारण जापानी माल के साथ और भी अधिक प्रतियोगिता हो गई। इस स्थिति का सामना करने के लिये सरकार ने पहले आयात कर ३१$\frac{1}{4}$ प्रतिशत के स्थान पर ५० प्रतिशत तथा इसके पश्चात् ७५ प्रतिशत (मूल्यानुसार) अथवा ६$\frac{3}{4}$ आन प्रति पौण्ड कर दिया। इस पर जापान ने कडा विरोध किया। उसने निश्चय किया कि वह भारतवर्ष से कपास न खरीदेगा। भारतवर्ष को इससे बहुत हानि हुई। इस कारण १९३४ मे भारतीय-जापान समझौता हुआ। तभी एक समझौता इङ्गलैंड से

भी हुआ। इन दोनो समझौतो को ध्यान मे रखते हुए १९३४ मे भारतीय चुगी (कपडा सरक्षण) सशोधन ऐक्ट (Indian Tariff Textile Protection Amendment Act) पास किया गया। इस ऐक्ट के अनुसार इङ्गलैंड को छोडकर और देशो से आने वाले माल पर मूल्यानुसार ५० प्रतिशत (परन्तु कम के कम ५¼ आने प्रति पौण्ड) चुङ्गी लगाई गई। कुछ समय पश्चात् इस ऐक्ट की अवधि ३१ मार्च १९३९ तक बढा दी गई। १९३९ मे इङ्गलैंड के साथ एक नया समझौता हुआ जिसके अनुसार अङ्गरेजी माल पर चुङ्गी और भी घटा दी गई है। चुङ्गी छप हुय माल पर १७½ प्रतिशत (मूल्यानुसार) तथा और सब माल पर १५ प्रतिशत (मूल्यानुसार) हो गई। इस समझौते के अनुसार यदि किसी वर्ष म भारत इङ्गलैंड से ३५ करोड गज कपडे से कम खरीदता तो चुङ्गी २½% कम हो जाती और यदि ५० करोड गज अधिक खरीदता तो चुङ्गी बढ जाती। इसके बदले मे इङ्गलैंड ने भारतवर्ष से १९३९ मे ५ लाख गट्ठ, १९४० मे ५½ लाख गट्ठे तथा और आगे के वर्षों म ६ लाख गट्ठे कपास खरीदने का वचन दिया। ७½ लाख गट्ठो से अधिक खरीदने पर इङ्गलैंड को कुछ और लाभ हो जाना था। इस देश मे इस समझौते की कडी आलोचना हुई क्योंकि इससे इङ्गलैंड को ही अधिक लाभ था, भारत को अधिक लाभ न था।

द्वितीय महायुद्ध मे उद्योग की स्थिति

द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने से पहले इस उद्योग की अवस्था बहुत शोचनीय थी। पर युद्ध के बीच मे इसकी स्थिति बहुत अच्छी हो गई है क्योंकि विदेशी प्रतियोगिता प्राय समाप्त हो गई। सरकार की कपडे की माँग भी बहुत बढ गई। इसके अतिरिक्त अफ्रीका, फारस, लङ्का, मलाया, आस्ट्रेलिया आदि से भी कपडे की माग खूब हुई। इस कारण कपडे के दाम बहुत बढ गय और सरकार को कपडे पर नियन्त्रण करना पडा। सरकार ने सस्ते कपड की अपनी दूकानें भी खोली पर इससे कोई विशेष लाभ न हुआ। इस कारण सरकार को उस योजना को छोडना पडा।

युद्ध के पश्चात् उद्योग की स्थिति

युद्ध के समाप्त होने पर १९४६ मे सरकार ने एक अन्तर्कालीन योजना घोषित की जिसके अनुसार भारतीय मिलो को हर वर्ष ६५० करोड गज कपडा तैयार करना था। १९४७ मे इस उद्योग पर से सरक्षण भी हटा दिया गया। १९४७ मे देश का विभाजन हुआ जिसके कारण इस उद्योग को बहुत हानि हुई क्योंकि भारतीय मिलें लम्बे धागे वाली अधिकतर कपास सिंध से लिया करती थी। विभाजन के पश्चात् पाकिस्तान ने राजनीतिक कारणो से वह कपास देनी बन्द कर दी। इसलिये भारतीय सरकार ने मिस्र तथा अमेरिका से कपास खरीदनी शुरू कर दी। अब यह देश इन्ही देशो मे लम्बे धागे वाली कपास खरीदता है।

वर्तमान स्थिति

आजकल खेती के पश्चात् यही उद्योग देश के सबसे अधिक लोगो को रोजगार देता है। १९५८ ई० के प्रारम्भ मे इस देश मे ४७० रजिस्टर्ड फैक्टरी थी। इन आकडो से पता चलता है कि इस उद्योग मे १२० करोड रुपये की चल व अचल पूजी लगी हुई थी। इसमे लगभग ९ मजदूर लगे हुए थे।

१९५३ ई० मे इस उद्योग ने उत्पादन का सबसे बडा रिकार्ड कायम किया। इस वर्ष कुल ४९० ५ करोड गज कपडा तैयार हुआ जबकि पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत केवल ४७० करोड गज कपडे का लक्ष्य रखा गया था। १९५४ मे उत्पादन बढ कर ५०० करोड गज, १९५५ म ५०९ करोड गज तथा १९५६ मे ५३० ६ करोड गज, १९५७ मे ५३१ ७४ करोड गज तथा १९५८ मे ४९२ ७० करोड गज कपडा तैयार हुआ।

उद्योग की वर्तमान समस्याये

आजकल इस उद्योग के सामने बहुत सी समस्यायें हैं जिनके कारण उत्पत्ति के ऊपर बहुत प्रभाव पडा। प्रथम तो यह कि महायुद्ध मे अधिक समय तक काम करने के कारण मशीनें बहुत घिस गई है। जब तक घिसी हुई मशीनो को बदला न जायगा तब तक उत्पत्ति अधिक न बढ सकेगी। दूसरे विदेशो मे मशीनो के भाव ऊँचे हो रहे है। इस कारण बाहर से मगाई हुई मशीन बहुत महगी पडती हैं। रुपये के अवमूल्यन के पश्चात् से दाम और भी अधिक हो गये है। तीसरे श्रमिको की मजदूरी कम नही हुई। पर वे पहले से कम उत्पत्ति करते है। इस समय सूती माल के दाम बढ गये। चौथे कपास के दाम भी बहुत ऊँचे हैं। इस कारण कपडे के दाम भी ऊँचे रहते हैं। पाँचवे मिलो को कभी-कभी कपास न मिलने के कारण भारी सकट का सामना करना पडता है। छठे सरकार की निर्यात की नीति अनिश्चित रही है। इस अनिश्चितता के कारण मिलो को भारी सकट का सामना करना पडता है। सातवे माल को इधर-उधर ले जाने के लिये रेल की सुविधा भी कम मिलती है। इस कारण मिलो के पास कभी-कभी बहुत सा माल जमा हो जाता है। आठवें फरवरी १९५२ की मन्दी मे तो इस उद्योग की स्थिति बहुत ही खराब हो गई। प्राय सभी राज्य सरकारो ने अपना निश्चित कोटा लेने से इन्कार कर दिया। इस कारण बहुत सी मिलें बन्द हो गई। यद्यपि हाल ही मे उत्पत्ति बढ रही है परन्तु मन्दी के कारण इस उद्योग की स्थिति बहुत खराब है। नवें युद्धकाल मे प्राप्त हुये बाजारो मे अब जापान आदि देशो से प्रतियोगिता बढ रही है। दसवें नवीनीकरण के प्रश्न पर मिलो व मजदूरो के झगडे खडे हो रहे हैं।

उन्नति के सुझाव—

उद्योग को उन्नत करने के लिये राष्ट्रीय योजना कमीशन ने अग्र लिखित सुझाव दिये है—

एण्ड इन्डस्ट्री द्वारा सचालित एक सभा के सामने श्री मुरारजी देसाई भूतपूर्व कामर्स तथा इन्डस्ट्री मन्त्री ने कहा कि ऐसी स्थिति मे जबकि वे अत्यधिक उत्पत्ति तथा स्टाक के जमा होने की शिकायत कर रहे हैं तब मिल द्वारा बने हुये कपडे के ध्येय बिन्दु को १४०० मिलियन गज से बढा देना बेसूद है ।

अभिनवीकरण व नवीनीकरण के विषय मे अपने विचार प्रकट करते हुये उन्होंने कहा कि इस कार्य मे अभी देर लगेगी क्योकि जो मजदूर इस कार्य के द्वारा हटाये जायेंगे उनको किसी दूसरे उद्योग मे लगाना आवश्यक है ।

उपर्युक्त बात से सरकार का इस उद्योग के प्रति जो रुख है उसका पता चलता है ।

Textile Inquiry Committee की रिपोर्ट —

इस समिति की रिपोर्ट जौलाई १९५८ म पेश की गई है । इस समिति का कहना है कि सरकार जिन मिलो को अपने अधिकार मे ले उसके लिये उसको एक स्वतन्त्र कारपोरेशन स्थापित करना चाहिये जिसके पास पर्याप्त मात्रा म पूंजी हो ।

समिति ने दो महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं । पहला यह कि अभिनवीकरण (Rationalization) के प्रश्नो पर विचार करने के लिये एक अभिनवीकरण उप समिति का निर्माण किया जाय । दूसरा सुझाव है कि टेक्सटाइल कमिश्नर को सलाह देने के लिये एक सलाहकार समिति का निर्माण किया जाय जिसके सदस्य सभी हितो के आदमी हो ।

समिति ने यह भी सुझाव दिया है कि सभी स्थानो पर समान अथवा स्टेन्डर्ड कोस्टिग पद्धति चालू की जाय ।

समिति का सुझाव है कि Cotten Textile Export Promotion Council को अधिक धन प्रदान करना चाहिये जिससे कि वह विदेशो मे अपने दफ्तर खोल सके तथा विदेशी माग का ठीक अनुमान लगा सके ।

माँग से अधिक उत्पत्ति को कम करने के लिये समिति ने सुझाव दिया है कि मिलो को तीन पाली मे काम करने दिया जाय तथा अधिक उत्पत्ति पर रिबेट न दिया जाय ।

समिति ने यह सुझाव भी दिया है कि बैंको को सूती उद्योग को अधिक आर्थिक सहायता प्रदान करनी चाहिय ।

समिति का मत है कि उत्पादन कर मे वर्ष के बीच मे कोई परिवर्तन न किया जाय ।

बिक्री कर के स्थान पर उत्पादन कर लगाने के कारण राज्यो को चाहिये कि वे कोई अतिरिक्त कर न लगायें ।

१९५५ ई० से सरकार इस उद्योग का सर्वे कर रही है जिससे कि इस उद्योग के आधुनिक सामान व मशीनो की आवश्यकता का पता लग सके । राष्ट्रीय औद्योगिक

विकास कारपोरेशन (National Industrial Development Corporation) इस उद्योग की सहायता इसी सूचना के आधार पर कर रही हैं। इस कारपोरेशन ने १९५८ तक ३७१ करोड़ रु० के ऋणों की मंजूरी दी।

Q 61 Review briefly the growth of present position of Indian coal industry

प्रश्न ६१—भारतवर्ष के कोयले के उद्योग की उन्नति और वर्तमान स्थिति के विषय में लिखिये।

कोयला भारतवर्ष की शक्ति के साधनों में सबसे मुख्य है। भारतवर्ष में कोयले का उद्योग देश के दूसरे उद्योग धन्धों की कोयले की माग के कारण नहीं हुआ वरन् रेलों की कोयले की माग के कारण हुआ। जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी को अंग्रेजी कोयले से सस्ते कोयले की आवश्यकता प्रतीत हुई तो उसने बहुत सी अंग्रेजी कम्पनियों द्वारा कोयले की खानों को खोदना आरम्भ किया। इसके पूर्व कोयला खोदने के लिये किये गये प्रयत्न निष्फल रहे। इस प्रकार का पहला प्रयत्न १७७४ ई० में, दूसरा १८१४ में हुआ। १८६८ के लगभग भारतवर्ष में कोयले की उत्पत्ति केवल ५० ,००० टन थी। धीरे-धीरे उत्पत्ति बढ़ती रही। १९०० में कोयले की वार्षिक उत्पत्ति ६१,००,००० टन हो गई। इस समय तक कोयले की माँग देश के भीतरी भागों तक सीमित न रह गई थी। भारत का कोयला कुछ दूसरे देशों जैसे लंका, मलाया तथा पूर्वी द्वीप समूह आदि को भी जाने लगा। इसी कारण कोयले की उत्पत्ति बढ़ती रही और प्रथम महायुद्ध के पूर्व कोयले की वार्षिक उत्पत्ति १ करोड़ ४७ लाख टन तक पहुच गई। महायुद्ध में कोयला बाहर से आना बन्द हो गया। इस कारण इस उद्योग की खूब उन्नति हुई। इसके फलस्वरूप १९२० में कोयले की वार्षिक उत्पत्ति १ करोड़ ८० लाख टन के लगभग हो गई। परन्तु रेलगाड़ी तथा मजदूरों की कमी के कारण यह उद्योग बहुत अधिक उन्नति न कर सका। युद्ध समाप्त होने पर बहुत सी नई खानें खोदी गई। पर इस समय भारतीय कोयले की खानों को अफ्रीका से आये हुये कोयले के साथ प्रतियोगिता करनी पड़ी। देश के भीतर की कोयले की माग देशी कोयले से ही पूरी हो जाये। इस कारण सरकार ने कोयले के निर्यात पर पाबन्दी लगा दी। इससे कोयले की उत्पत्ति पर बहुत प्रभाव पड़ा। पर धीरे-धीरे यह कठिनाई भी दूर हो गई और अब अफ्रीका के कोयले की माग बहुत ही कम हो गई है।

१९२७ से १९३० के बीच में इस उद्योग की बहुत उन्नति हुई और भारतवर्ष ने खोये हुये बहुत से बाजारों को फिर प्राप्त कर लिया। इसी बीच कोयले की उत्पत्ति बढ़ती रही और १९३० में २,३८०४८ टन हो गई। इसके पश्चात् मन्दी

के कारण कोयले का मूल्य गिर गया और बहुत सी मिलें बन्द होने के कारण देश की कोयले की माग भी घट गई। इसी कारण इस समय बहुत सी खाने बन्द हो गई। परन्तु १६३४ ई० से इस उद्योग ने फिर उन्नति करनी प्रारम्भ की और इसकी उत्पत्ति २,३०,१६,६६५ टन हो गई। १६३६ के पश्चात् देश मे उद्योग धन्धो की प्रगति शुरू हुई। इसलिये देश के भीतर कोयले की माँग बहुत बढ गई। इसके पश्चात् विदेशो मे भी भारतवर्ष से कोयला भेजा जाने लगा।

द्वितीय महायुद्ध में उद्योग की प्रगति

युद्ध के प्रारम्भ होने पर कुछ समय तक इस उद्योग ने बहुत उन्नति की। परन्तु आगे चलकर उत्पत्ति घटने लगी। क्योकि कोयले को इधर-उधर ले जाने के लिये न तो रेले ही मिलती थी और न जहाज ही। उस समय मजदूरो की भी बहुत कमी हो गई। कोयले की उत्पत्ति बढाने के लिये सरकार को बहुत से काम करने पडे जैसे मजदूरो को बुलाना, उत्पत्ति बोनस का देना, अधिक लाभ कर मे छूट करना तथा अधिक घिसाई (Deprecation) मजूर करना आदि। इस कारण उत्पत्ति फिर बढी और १६४६ मे २ करोड ६० लाख टन पहुच गई।

दिसम्बर १६४५ मे सरकार ने एक समिति नियुक्त की जो इस बात की जाच करे कि पिछले २० वर्षो मे इस सम्बन्ध मे जो तीन समितियाँ नियुक्त हो चुकी है उनके सुझाव क्या है तथा उन पर कहाँ तक कार्य किया गया है तथा इस सम्बन्ध मे और क्या करना आवश्यक है। इस समिति ने यह सुझाव दिया कि केन्द्रीय सरकार को एक राष्ट्रीय कोयला आयोग नियुक्त करना चाहिये जो कोयले के उद्योग सम्बन्धी सभी बातो की ओर ध्यान दे।

योजना आयोग के सुझावो के अनुसार भारत सरकार ने १६५२ ई० मे कोयले की खान का सरक्षण तथा सुरक्षा एक्ट पास किया। इसके अनुसार सरकार को कोयले की खानो की रक्षा तथा कोयले के उचित उपभोग के विषय मे शक्ति दी गई है। इसके अतिरिक्त सरकार को यह भी शक्ति दी गई है कि वह कोयले पर उपकर लगाये तथा न्यगार कोयले (Cooking coal) पर अधिक उपकर लगाये तथा उसको एकत्र करे। एक कोयला बोर्ड की स्थापना भी की गई है। १ जुलाई सन् १६५३ ई० से कोयले के क्षेत्रीय बटवारे (Regional Distribution) की योजना भी बनाई गई है। अभी हाल ही मे एक उच्च शक्ति समिति 'भारत की कोयला काउन्सिल' की स्थापना की गई। इस समिति का कार्य यह होगा कि वह कोयले सम्बन्धी उन्नति की योजना तथा कोयले को बचाकर रखने तथा उसके उपयोग सम्बन्धी बातो पर विचार करे। साधनो का ब्यौरा, आवश्यकताओ व उपयोग उत्पादन तथा तैयारी तथा यातायात सम्बन्धी बातो के अध्ययन के लिये ४ समितियाँ बनाई गई है।

छोटी-छोटी कोयले की खानो को मिलाने की समस्या का अध्ययन करने के लिये श्री बलवन्तराय महता की अध्यक्षता मे एक समिति नियुक्त की गई थी। इसकी

रिपोर्ट नवम्बर १९५६ मे प्राप्त हुई। इस समिति ने सुझाव दिया है कि वे खान जिनकी मासिक उत्पत्ति १०,००० टन तथा जिनका क्षेत्र १०० एकड से कम है उनको मिलाकर बडी समितियाँ बनाई जायें। इसमे यह भी सुझाव दिया है कि कोयले की खानो का एकीकरण आयोग (Collieries Amalgamation Commission) स्थापित किया जाय तथा खानो को मिलाने सम्बन्धी एक कानून पास किया जाए। सरकार इन सुझावो पर बडे ध्यानपूर्वक विचार कर रही है। भारत मे १९५७ ई० मे लगभग ४ ३५ करोड टन कोयले की उत्पत्ति हुई तथा १९५८ मे ४ ५२ करोड टन उत्पन्न होने की आशा है। अक्तूबर १९५६ मे भारत सरकार का सार्वजनिक क्षेत्र मे उत्पन्न होने वाले कोयले को उत्पन्न करने तथा उसका बटवारा करने के लिये कम्पनीज एक्ट के अन्तर्गत राष्ट्रीय कोयला विकास कारपोरेशन (प्राइवेट) लिमिटेड (National Coal Development Corporation (Private) Ltd) स्थापित की है। सार्वजनिक क्षेत्र मे कोयले का उत्पादन शुरू हो गया है और इस साधन से ७ लाख टन कोयला उत्पन्न हुआ। आध्र प्रदेश मे सिंगरेनी नाम की कोयले की खान का उत्पादन १९५८ म २१ २ लाख टन हो गया।

इसके अतिरिक्त बहुत सी नई खानो मे उत्पादन कार्य आरम्भ हो गया है। रूरकेला तथा भिलाई के इस्पात के कारखानो को कोकिंग कोल देने के लिय एक कोयला धोने का कारखाना १९५८ मे एक जापानी फर्म की सहायता से स्थापित किया गया है। इसकी लागत २ ३८ करोड रु० है तथा इसकी शक्ति २२ लाख टन कच्चे कोयले की है। दुर्गापुर के लोहे के कारखाने को कोकिंग कोल प्रदान करने के लिये पश्चिमी बङ्गाल सरकार ने पश्चिमी जर्मन फर्म की सहायता से दुर्गापुर कोक ओवन प्लान्ट लगाया है। इसकी लागत ७ ५ करोड रु० है तथा इसकी शक्ति प्रति दिन १००० टन बढिया प्रकार के सख्त कोयले की है। यह मार्च १९५९ म चालू किया गया है।

क्योंकि दक्षिणी भारत मे कोयले की कमी है इस कारण वहु उद्देश्य दक्षिणी अर्काट लिगनाइट प्रोजेक्ट को सबसे ऊची प्राथमिकता दी जा रही है। इसकी लागत ६८ ८ करोड रु० होगी तथा द्वितीय पचवर्षीय योजना मे इस पर ५२ करोड रु० खर्च होगा।

सरक्षण का प्रश्न

कोयले के उद्योग ने सरकार से यह प्रार्थना की कि उसको सरक्षण प्रदान किया जाए। इस कारण सरकार ने १९२४ मे भारतीय कोयला कमेटी की नियुक्ति की। इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट मे बताया कि भारतीय कोयला अच्छी प्रकार का नहीं है इस कारण विदेशियो को उससे बहुत असतोष रहता है। यदि इस कोयले को ठीक प्रकार से खोदा जाये तथा उसको छाँटकर बाहर भेजा जाय तो उससे बहुत लाभ हो सकता है और भारत के खोये हुये बाजार फिर उसको प्राप्त हो सकते है। इस कमेटी ने यह सुझाव दिया कि एक भारतीय कोयला ग्रेडिंग बोर्ड की नियुक्ति की

जाए जो कोयले को खानो की अलग अलग तहो को छाटकर कोयले को बाहर भेजने की अनुमति दे। इस बोर्ड की नियुक्ति १६२५ मे की गई और जिस कोयले को विदेशो मे भेजने की अनुमति कोयला बोर्ड दे देता है उसको रेल का किराया तथा जहाज का किराया कम देना पड़ता है। कोयला बोर्ड की देख-रेख मे जो कोयला भेजा जाता है वह बहुत अच्छा होता है और इस कारण भारतीय कोयले की विदेशो मे माँग बढ गई।

विशेष समस्याये

(१) कोयला उद्योग के सामने सबसे महत्वपूर्ण समस्या उनको ढोने की है। इस कारण न तो यह उद्योग अपने वास्तविक बाजारो को ही प्राप्त कर सकता है और न ही उपभोक्ताओं को सस्त मूल्य पर कोयला दे सकता है।

(२) भारतवर्ष मे कोयले के मूल्य मे साठ या सत्तर प्रतिशत मजदूरी के दाम है। पहले मजदूरो को बहुत कम वेतन मिलता था परन्तु महायुद्ध मे मजदूरो का वेतन बहुत बढ गया। उनको कम मूल्य पर अनाज मिलता है, कुछ बोनस भी मिल जाता है तथा और बहुत से आराम के साधन उनके लिये एकत्र कर दिये गये हैं। अखिल भारतीय आधार पर नियुक्त किय गय ट्रिबुनल की सिफारिश के अनुसार कोयले का मूल्य १५ रु० प्रति टन बढ गया है। पर खेद का विषय है कि उन्होंने अपनी कोयला खोदने की शक्ति का नही बढाया। १६३८ और १६४७ के बीच मजदूरो की संख्या पहले से ६० या ७० प्रतिशत बढ गई पर उत्पत्ति केवल ७ ही प्रतिशत बढी। इसके अतिरिक्त कोयले का मूल्य १६४७ मे निर्धारित किया गया था। तब से मजदूरी २०० प्रतिशत तथा कल पुर्जो का दाम ५० प्रतिशत बढ गया है। इसके अलावा खानों पर अन्य भी जिम्मेदारिया लाद दी गई है। अनुमान किया जाता है कि कोयले का उत्पादन व्यय ५० प्रतिशत बढ गया किन्तु कोयले के मूल्यो मे ३१ प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसी कारण यह आवश्यकता है कि मजदूरो की अपनी कार्य-कुशलता बढानी चाहिये।

(३) उत्पादन व्यय के अनुसार मूल्य मे वृद्धि न होने के कारण कोयला उद्योग का मुनाफा इतना कम हो गया कि अधिकाश कम्पनियो के लिये लाभाश कायम रखना कठिन हो गया है। अत अपने साधनो के विकास के लिये पूंजी प्राप्त करना उसके लिये असभव सा हो गया है। ऐसा अनुमान है कि कोयले के शेयरो मे रुपया लगाने से वास्तविक आय २ प्रतिशत से अधिक नही बैठता तो फिर इस उद्योग मे धन कौन लगायगा।

(४) भारतवर्ष मे कोयले के उद्योग पर बडा भारी सरकारी नियन्त्रण है। यह न केवल उसके मूल्य तथा बटवारे पर ही है वरन् दूसरे ढङ्ग से भी है। उदाहरण के लिये सरकार ने Coal Mines Conservation and Safety Rutes को लागू किया है जिनके कारण सरकार के खान खोदने के ढङ्ग, धोने के स्थानो की स्थापना करने आदि पर कडा नियन्त्रण है।

(५) भारतवर्ष मे वैज्ञानिक ढङ्ग से कोयला नही खोदा जाता। बहुत सा कोयला खोदने मे नष्ट हो जाता है। इसी कारण इस बात की आवश्यक्ता है कि कोयले को ठीक प्रकार से खोदा जावे ताकि खोदने मे कोयला कम से कम नष्ट हो।

आजकल कोयला खोदने मे बहुत से नये साधनो का उपयोग किया जा रहा है। उनमे से उत्पत्ति के बहुत कुछ बढ जाने की आशा है। यदि कोयले के इधर-उधर ले जाने का कोई सस्ता ढङ्ग निकल आये तो विदेशो मे हमारा कोयला बहुत मात्रा मे जा सकता है क्योकि ऐसा कहते है कि खान के मुह पर भारतीय कोयला सबसे सस्ता होता है।

योजना आयोग के सुझाव

योजना आयोग ने इस उद्योग को उन्नत करने के लिय निम्नलिखित सुझाव दिय है—

(१) कोयले के भण्डार का अनुमान लगाया जाए तथा उसका एक नक्शा तयार किया जाए।

(२) बिहार और बगाल की कोयले की खानो के आस-पास जो रेल आदि के साधन हैं उनके विषय मे आँकडे एकत्र किय जाये।

(३) कोयले के भण्डार की भौतिक तथा रासायनिक जाँच की जाये तथा उसका फिर से वैज्ञानिक ढग से वर्गीकरण किया जाये।

(४) कोयले की यातायात का अभिनवीकरण (Rationalisation) किया जाए जिससे कि उसकी उत्पत्ति तथा वितरण का अभिनवीकरण किया जा सके।

(५) ईधन अन्वेषणशाला को कोयले के विषय मे अन्वेषण (Research) करना चाहिये।

द्वितीय पचवर्षीय योजना तथा कोयले के उद्योग—जबकि प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तिम वर्ष १९५५–५६ के लिये कोयले के उत्पादन का बिन्दु ३७ मिलियन टन रखा गया था, द्वितीय योजना के अन्तिम वर्ष १९६०–६१ के लिय यह ६० मिलियन रखा गया है। इसमे से १७ मिलियन टन अतिरिक्त कोयला सार्वजनिक क्षेत्र तथा २० मिलियन टन निजी क्षेत्र के लिये रखा गया है। सार्वजनिक क्षेत्र की उत्पत्ति के लिये योजना मे ४० करोड रुपय का प्रबन्ध किया गया है परन्तु आवश्यक्ता ६० करोड रुपये की है। शेष रुपये को इधर-उधर से बटवारा करके प्राप्त किया जायगा।

ो रगो व प्लास्टिक मे काम मे लाओगे, अपने पौधो पर छिड़कोगे, अपने पशुओ को लाओगे।

(५) करों की अधिकता—भारतवर्ष मे चीनी पर उत्पादन कर केन्द्रीय कार लगाती है तथा गन्ने पर उपकर (cess) राज्य सरकारें लगाती हैं। १९५८- के बजट के अनुमान के अनुसार भारत सरकार को ४४·१८ करोड रुपये प्राप्त की आशा है। चीनी पर उत्पादन-कर बढने से १२.१८ करोड रुपये आय प्राप्त होने का अनुमान है। राज्य सरकारें गन्ने पर जो उप-कर लेती हैं मे केवल उत्तर प्रदेश व बिहार मे १९५५-५६ मे ३५० लाख व १५६०६ व रुपये की आय प्राप्त हुई। यद्यपि यह उपकर गन्ने को उन्नत करने के लिए ाया जाता है तो भी इसमे से बहुत सा धन दूसरे कामो मे लगा दिया जाता है १९५५-५६ मे उत्तर प्रदेश मे केवल ४७.९० लाख रुपये इस कार्य के लिये खर्च गये।

(६) सरकारी नियन्त्रण—केन्द्रीय सरकार न केवल चीनी का ही मूल्य ित करती है वरन् वह गन्ने का मूल्य भी निश्चित करती है। इस कारण ी के उत्पादकों को बहुत कम लाभ होता है।

उन्नति के सुझाव

चीनी उद्योग को सुधारने के लिये योजना आयोग ने निम्नलिखित सुझाव हैं—

(१) नई मिलो के स्थापित करने की अपेक्षा पुरानी मिलो को उनकी अधिक-शक्ति तक चलाना चाहिये।

(२) जो मिलें गन्ने की पूर्ति के स्थानो से दूर बसी हैं उनको अपनी स्थिति ानी चाहिये जिससे कि भाड़े का खर्च कम हो जाये।

(३) वर्तमान उत्पत्ति के ढङ्ग का सावधानी से सरक्षण किया जाय।

(४) राज्य सरकारो द्वारा एकत्र किये गन्ने के उपकर को गन्ने के अनुसधान र्च किया जाय।

(५) उद्योग को मशीनो को प्राप्त करने की सुविधा दी जाय जिसमे कि वे ी हुई व पुरानी मशीनो के बदले उनको लगा सकें।

(६) सरकार को समय-समय पर चीनी की उत्पत्ति पर नियन्त्रण, गुण व े के मूल्यो का उतार-चढाव आदि पर विचार करना चाहिये जिससे कि चीनी व के उद्योग की उचित प्रकार की उन्नति हो सके।

(७) यह आवश्यक है कि किसान के गन्ने का मूल्य केवल गन्ने के वजन के ार न दिया जाय वरन् गन्ने मे चीनी की मात्रा के अनुसार दिया जाय। ऐसा पर किसान गन्ने के गुण को सुधारने का प्रयत्न करेगा।

अभी हाल ही मे उत्तर प्रदेश से चीनी के ६४ उत्पादकों मे से ३० उत्पादको

को उद्योग के नवीनीकरण (Modernization) की योजनाये तैयार करनी है। इसका उद्देश्य उद्योग की व्यवस्था सुधारना है।

द्वितीय योजना के लिये चीनी के उत्पादन का ध्येय २२ ५ लाख रुपये रखा गया है। इस ध्येय को प्राप्त करने के लिये ३७ नई मिलो को लाइसेस दिया गया है तथा ४० मिलो को अपनी उत्पादन शक्ति बढाने की आज्ञा दी गई है। इस उद्योग की कुछ कठिनाइयो को दूर करने के लिये मिल क्षेत्रो मे यातायात की सुविधाएं बढाने का प्रयत्न किया जा रहा है तथा गन्ने की सिंचाई करने के लिये नल, कुएं खोदे जा रहे हैं।

चीनी उद्योग की उन्नति सभा के सुझाव के अनुसार भारत सरकार ने पाँच आदमियो का एक प्रतिनिधि मण्डल आस्ट्रेलिया तथा इन्डोनेशिया भेजा था। जिसने अपनी रिपोर्ट भारत सरकार को मार्च १९५६ मे पेश की। इस रिपोर्ट मे चीनी के उद्योग को उन्नत करने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये है।

(१) चीनी के मूल्य पर कन्ट्रोल न लगाया जाय क्योकि भारत तथा आस्ट्रेलिया का अनुभव है कि इसके कारण उद्योग के विकास में बाधा पडती है।

(२) चीनी व गुड की बिक्री के लिये कोई केन्द्रीय बिक्री सभा नियुक्त न की जाय।

(३) चीनी के मूल्य तथा बटवारे पर जो नियन्त्रण है तथा सरकार जो २५% चीनी को नियन्त्रित मूल्य पर बेचने का अधिकार रखती है तथा सरकार जो चीनी को विदेशो से मगाकर उसको निश्चित मूल्य पर बेचती है उस नीति को वर्तमान मे कायम रखा जाय।

(४) सरकार को हर वर्ष गुड की न्यूनतम कीमत निश्चित करनी चाहिये जिससे कि गुड व चीनी के मूल्य तथा सम्पत्ति मे समतोल (Balance) स्थापित हो सके। सरकार को हर मौसम के शुरू मे यह घोषित करना चाहिये कि यदि गुड का मूल्य बाजार मे निश्चित मूल्य से कम होगा तो वह उसको स्वय खरीदेगी। सरकार को गुड खरीदने के लिये गुड के मुख्य उत्पादन क्षेत्रों मे सहकारी समितियाँ स्थापित करनी चाहियें।

(५) गन्ने का मूल्य निश्चित करने के लिय सरकार को स्थायी सलाहकार समिति नियुक्त करनी चाहिये जिसमे गन्ना उगाने वालो तथा मिलो के बराबर बराबर प्रतिनिधि हो तथा जिसका सभापति एक जज हो।

(६) गन्ना उगाने वालो को गन्ने का मूल्य उसके गुण के अनुसार देना चाहिये।

(७) गन्ने की प्रति एकड उपज को बढाने के लिये मण्डल ने निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

गन्ने का उन्नत बीज बोना तथा गन्ने की बीमारियो से बचना, आस्ट्रेलिया, जावा आदि से बढिया प्रकार के गन्ने का आयात करना तथा उसको भारत मे उत्पन्न

१९१४ ई० के महायुद्ध से पहले विदेशी कागज की प्रतियोगिता के कारण गगज के उद्योग की अवस्था बडी खराब हो गई। उस समय तक देश में केवल ९ मिलें थी। १९२५ ई० मे इस उद्योग को सरक्षण देने के विषय मे टैरिफ बोर्ड ने विचार किया। जॉच के पश्चात् उसने केवल बॉस से तैयार होने वाले कागज को ही सरक्षण देने की सिफारिश की। सरकार ने इस सिफारिश को मान लिया और त वर्ष के लिये सरक्षण दिया। १९३१ ई० मे सरक्षण की अवधि १९३९ ई० तक ा दी गई।

द्वितीय महायुद्ध मे विदेशो से कागज आना बन्द हो गया परन्तु कागज की ा बढ गई। अत भारतीय मिलो ने पूरी शक्ति लगाकर उत्पादन कार्य किया के फलस्वरूप कागज की उत्पत्ति जो १९३८-३९ ई० मे ५९,१९२ टन थी वह १९४४ मे १०३८८४ टन हो गई। इस बीच कागज की मिलो की सख्या ९ से बढकर १५ हो गई।

विभाजन के फलस्वरूप बङ्गाल मे मिलो के सामने एक बडी कठिनाई आ ड़ी हुई क्योंकि इन मिलो मे कच्चा माल अर्थात् घास और बास पूर्वी बङ्गाल के गलो मे से आता था परन्तु पाकिस्तान बन जाने के कारण इन चीजो का मिलना द हो गया। परन्तु कुछ समय पश्चात् जब ये सब चीजें देश के दूसरे भागो से गई गई तब कागज का उत्पादन बढने लगा।

युद्ध काल मे दूसरे उद्योगो के समान इस उद्योग को भी सरक्षण दिया गया। १९४६ ई० तक चलता रहा। १९४६ ई० मे सरक्षण की अवधि को एक वर्ष के रे बढाया दिया गया। १९४७ ई० मे टैरिफ बोर्ड ने इस उद्योग की जाच करके ाया कि इसको आयात-कर लगाकर सरक्षण देने की कोई आवश्यकता नही है। ार ने टैरिफ बोर्ड की इस सिफारिश को मानकर १ अप्रैल १९४७ ई० से गज और लुग्दी के आयात पर से सरक्षण हटा लिया।

वर्तमान स्थिति

प्रथम पचवर्षीय योजना के आरम्भ में इस देश म १७ कागज की मिलें थी। छले चार सालो म भारत में कागज का उत्पादन लगभग ५० हजार टन बढ गया ।। १९५० मे कागज का उत्पादन १,०८,८१२ टन था पर १९५५ मे बढकर १८९ हजार टन, १९५६ मे १९३ ४ हजार टन तथा १९५७ मे २१०१ हजार हो गया।

वर्तमान कारखानो की विस्तार योजनाओ और नये कारखानो की स्थापना लस्वरूप, इस उद्योग की उत्पादन-क्षमता ३५२० हजार टन से अधिक हो गी। देश को प्रति वर्ष लगभग २ लाख टन कागज की जरूरत होती है। केवल ही उद्योगो और उपभोक्ताओ के लिये विशेष प्रकार का कागज बाहर से मगाना गा।

इस समय कागज उद्योग म २८००० व्यक्ति काम करत हैं जिनम से

२१०० शिल्पिक कर्मचारी है १९६०–६१ तक कर्मचारियो की सख्या ५४,००० तक पहुच जायेगी, जिनमे ७ हजार शिल्पिक होगे । इस उद्योग मे इस समय २१·६२ करोड रुपया लगा हुआ है । नई योजनाओ के अन्तर्गत १४·३ करोड रुपया और लगने की आशा है । इसका अर्थ यह हुआ कि २ २ करोड रुपये की लागत और लगा देने पर यह उद्योग १९६०–६१ तक ३,७०,००० टन कागज के उत्पादन की क्षमता प्राप्त कर लेगा और इस प्रकार अभिष्ट लक्ष्य प्राप्त हो जायगा ।

पिछले पाच सालो मे कागज की प्रति व्यक्ति खपत ५० प्रतिशत बढ गई । देश मे साक्षरता के प्रचार और रहन-सहन के स्तर मे सुधार के कारण खपत तेजी से बढती जा रही है खाद्य और कृषि सगठन के एक कागज विशेषज्ञ का कहना है कि १९६१–६२ तक खपत ४,८१००० टन तक पहुच सकेगी ।

इस समय २१ कारखाने कागज बना रहे हैं । इनमे से ७ दक्षिण भारत मे, ६ बम्बई और मध्य प्रदेश मे, २ पजाब और मध्य प्रदेश मे तथा ६ पश्चिम बङ्गाल, बिहार और उडीसा मे हैं । बास, सबाई घास, खोई, चिथडे, रद्दी कागज, तरह तरह के रेशे आदि चीजे, जो इस उद्योग मे कच्ची सामग्री के रूप मे इस्तेमाल की जाती हैं देश मे मौजूद है ।

विशेष समस्याये

कागज के उद्योग के सामने निम्नलिखित समस्यायें है—

(१) कागज की मिलें आदर्श आकार (Optimum size) की नही हैं। इसलिये इस प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता है । कम से कम ८ हजार टन प्रतिवर्ष कागज की उत्पादन करने वाली मिल आर्थिक इकाई समझी जाती है। इसलिये छोटी मिलो को स्तर पर लाना चाहिये ।

(२) देश मे अखबार व छपाई का कागज उत्पन्न नही होता । परन्तु इसको बास से बनाया जा सकता है । भविष्य मे इसको बनाने का प्रयत्न करना चाहिये । अखबार का कागज बनाने का पहला कारखाना जनवरी १९५५ मे चालू किया गया इसकी निर्मित शक्ति ३०,००० टन है जबकि माँग ७०,००० टन वार्षिक है ।

(३) देश मे इस समय लगभग २ लाख टन कागज की आवश्यकता है यदि कागज बनाने मे बाँस का उपयोग करे तो हमको विदेशो से कागज मगाने की आवश्यकता न रहेगी ।

प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत कागज का उद्योग—

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत १८० हजार टन कागज, २० हजार टन अखबारी कागज तथा ७५ हजार टन कार्ड बोर्ड के उत्पादन का निश्चय किया गया था । इस योजना मे कागज तथा दफ्ती के उद्योग की उन्नति के लिये ५३५ लाख रुपये की व्यवस्था की गई थी । यह हर्ष की बात है कि प्रथम योजना मे निश्चित बिन्दु को लगभग प्राप्त कर लिया गया ।

कागज की उत्पत्ति मे वृद्धि बहुत कम अतिरिक्त पूँजी लगाकर प्राप्त की गई है क्योंकि इस उद्योग ने अपने लाभ को हिस्सेदारो मे न बाँटकर उद्योग मे ही लगा दिया।

योजना कमीशन ने इस उद्योग को बढाने के लिये दो सुझाव दिये थे। पहला, विकास सभा की स्थापना तथा दूसरा कच्चे माल की जाँच करना जिससे कि नई व पुरानी मिलो की उन्नति हो सके। सरकार ने विकास सभा स्थापित न करके १९५५ मे एक पेपर पैनल की स्थापना की घोषणा की है। कच्चे माल की जाँच के लिये भी सरकार ने एक (Adhoc Committee) नियुक्त की है।

द्वितीय योजना के ध्येय बिन्दु—

इस योजना मे उद्योग की उत्पादन क्षमता ५,५०,००० टन तथा उत्पत्ति ३,५०,००० टन रखने का ध्येय रखा गया है।

विशेष समस्याओ मे पहली समस्या यातायात की है जिसके सुलझने की आशा द्वितीय योजनाकाल मे भी नही है क्योंकि रेलवे मन्त्री ने कहा है कि लोहे इस्पात तथा कुछ सीमा तक कोयले व सीमेट के उद्योग को छोडकर रेले दूसरे उद्योगो की आवश्यकता पूरी न कर सकेंगी।

दूसरी समस्या उत्पत्ति कर का लगाना है। इसके कारण कागज का मूल्य बढ जाता है तथा कागज के उपभोग तथा उसकी उत्पत्ति दोनो पर ही उसका प्रभाव पडता है।

Q 65 Trace the growth and development of the Indian cement industry mentioning its special problems

प्रश्न ६५—भारतीय सीमेंट के उद्योग के विकास तथा उन्नति के विषय मे उसकी मुख्य समस्याओ को बताते हुए लिखिए।

हमारे देश के लिए सीमेंट की बडी आवश्यकता है क्योंकि यह मकानो, पुलो बाँधो, शहतीरो आदि के बनाने के काम मे आता है। हमारे देश मे मकानो का अभाव है। नई-नई सिचाई व बिजली की योजनाये चल रही हैं। ट्यूब वेल बनाये जा रहे है। इन सबको सीमेंट बिना नही बनाया जा सकता।

प्रथम महायुद्ध से पूर्व हमारे देश मे सीमेंट उद्योग का कोई महत्वपूर्ण स्थान न था। १९१४ से पहले भारतवर्ष प्रतिवर्ष एक लाख टन सीमेण्ट विदेशो से मगाया करता था। परन्तु १९१८ ई० के पश्चात् सीमेण्ट की माँग बढती चली गई और अब वह माँग बहुत अधिक बढ गई है।

भारतवर्ष मे सबसे पहली सीमेण्ट फैक्टरी मद्रास मे चालू की गई परन्तु पर्याप्त मात्रा मे सीमेण्ट की उत्पत्ति १९१२ ई० से हुई जबकि पोरबन्दर (काठियावाड) मध्य प्रदेश, राजपूताना आदि मे सीमेण्ट की फैक्टरियाँ स्थापित की गई। प्रथम

महायुद्ध मे सीमेण्ट की माँग बढ जाने के कारण इस उद्योग ने बडी प्रगति की। युद्ध समाप्त होने पर सीमेण्ट की माग बनी रही जिसके फलस्वरूप देश मे बहुत सी सीमेण्ट की फैक्टरियाँ चालू हुई। १९२३ ई० तक पुरानी तीन फैक्टरियो की उत्पत्ति दुगनी हो गई तथा छ नई फैक्टरियाँ खोली गई। इसके फलस्वरूप सीमेण्ट की उत्पत्ति जो १९१४ ई० मे केवल ९४५ टन थी बढकर २,३६,७४६ टन हो गई। सीमेण्ट की उत्पत्ति बढ जाने के कारण इसका आयात बहुत घट गया।

१९२४ ई० मे इस उद्योग ने सरक्षण की माँग की परन्तु टैरिफ बोर्ड ने इसको सरक्षण न देने की सिफारिश की। बोर्ड का मत था कि उद्योग को विदेशी प्रतियोगिता से हानि नही हो रही है, वरन् आपसी प्रतियोगिता तथा अत्यधिक उत्पत्ति के कारण ऐसा हो रहा है। बोर्ड ने बन्दरगाह वाले नगरो मे बिकने वाले सीमेण्ट के लिये उनके कारखानो को नकद द्रव्य के रूप मे सहायता देने की सिफारिश की परन्तु सरकार ने उसे नही माना। बोर्ड ने यह भी सुझाव दिया कि सीमेण्ट के उत्पादकों में आपस मे मेल व सहयोग होना चाहिए।

१९२७ मे भारतीय सीमेण्ट उत्पादको की एक सभा बनाई गई जिसका कार्य सीमेण्ट के विक्रय मूल्य पर नियन्त्रण करना था। इस सभा ने सीमेण्ट फैक्टरियो से ५ आने प्रति टन की दर से एक कर एकत्र किया जिससे जनता मे देशी सीमेण्ट के उपभोग के लिए प्रचार किया जाय। १९३० ई० मे सीमेण्ट मार्केटिंग कम्पनी की स्थापना की गई। इसका कार्य प्रत्येक फैक्टरी का उत्पादन निश्चित करना था। परन्तु इस कम्पनी की स्थापना से कोई विशेष लाभ न हुआ। १९३२ मे एसोशियेटेड सीमेण्ट कम्पनी का निर्माण किया गया जिसका उद्देश्य आन्तरिक तथा बाह्य प्रतियोगिता से सीमेण्ट फैक्टरियो को बचाना था। परन्तु १९३६ मे डालमिया सीमेण्ट कम्पनी के स्थापित होने पर प्रतियोगिता बहुत बढ गई और इस उद्योग को बडी हानि हुई। परन्तु १९४० ई० मे डालमिया तथा एसोशियेटेड कम्पनियो मे समझौता हो गया।

द्वितीय महायुद्ध मे सीमेण्ट की माँग न केवल देश मे ही बढ गई वरन् विदेशो से भी इसकी माँग होने लगी। इस कारण सरकार ने इसके ऊपर नियन्त्रण किया और कुल उत्पत्ति का लगभग ८०% अपने हाथ मे ले लिया। इस कारण जनता को बडा कष्ट हुआ। सीमेण्ट की कमी के कारण उसका मूल्य भी बेहद बढ गया।

युद्धकाल मे सीमेण्ट की सबसे अधिक उत्पत्ति १९४३-४४ ई० मे हुई जबकि २२ लाख टन सीमेण्ट उत्पन्न किया गया। उसके पश्चात् मजदूरी के झगडो, कोयला न मिलने, यातायात की कठिनाइयो आदि बातो के कारण इसकी उत्पत्ति कम होती चली गई। १९४६–४७ मे इसकी उत्पत्ति घटकर केवल १० लाख टन रह गई।

विभाजन के पूर्व भारत मे सीमेण्ट के २५ कारखाने थे जिनमे २८ लाख टन सीमेण्ट तैयार करने की शक्ति थी। विभाजन के कारण ६ कारखाने पाकिस्तान मे

चले गये और हमारी उत्पादन शक्ति घटकर २१ लाख टन रह गई। इसके अतिरिक्त विभाजन के कारण हमारे देश में जिप्सम (जो सीमण्ट बनाने के काम आता है) की कमी हो गई। इससे सीमेण्ट बनाने में कठिनाई होने लगी। परन्तु अब हमारे देश के सौराष्ट्र तथा राजपूताने के प्रदेशों मे जिप्सम की उत्पत्ति बढ़ने की आशा है जिसके फलस्वरूप हमारी कठिनाई दूर हो जायगी।

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत हमारे देश मे १९५५-५६ तक २७ फैक्टरिया होने की आशा थी। इनकी उत्पादन शक्ति ५३०६ लाख टन तथा वास्तविक उत्पत्ति ४८० लाख टन होनी थी। उस समय ३ लाख टन सीमेण्ट का निर्यात भी किया जाने वाला था।

आजकल हमारे देश मे सीमेण्ट का उत्पादन निरन्तर बढ़ रहा है। जहाँ देश के विभाजन के बाद सीमेण्ट उद्योग की सामर्थ्य २१ १५ लाख टन थी वहाँ १९५७ तक यह ६५ ३४ लाख टन तक पहुँच गई है। १९५४ मे सीमेण्ट का उत्पादन ४३ ९८ लाख टन के लगभग था। परन्तु १९५८ मे सीमेण्ट की उत्पत्ति ६० ६ लाख टन पहुच गई है।

१९५५ मे हमारे देश में २५ रजिस्टर्ड फैक्टरिया थी, परन्तु १९५८ मे उनकी सख्या ३१ हो गई उनमे से २४ मे ३३ लाख रु० की चल व अचल पूजी लगी हुई थी। उस समय इस उद्योग मे २० हजार लोगो से भी अधिक काम करते थे।

द्वितीय योजना के लिये सीमेन्ट की उत्पत्ति का ध्येय बिन्दु १ करोड टन रह रखा गया है।

विशेष समस्याय

(१) मांग की कमी—द्वितीय विश्व युद्ध के प्रारम्भ से ही देश मे सीमेट का उत्पादन मांग से कम चल रहा था। परन्तु गतवर्ष सीमेट उद्योग के सामने एक नयी समस्या खडी हो गई क्योकि सीमेन्ट की माग उत्पादन से कम पड गई तथा कारखानो के पास ज्यादा मात्रा मे माल जमा हो गया है। इसके कई कारण थे। एक तो इस्पात की कमी से विकास योजनाओं की प्रगति धीमी पड गई। पहले सरकार सम्पूर्ण उत्पादन का ८० प्रतिशत लिया करती थी परन्तु गतवर्ष उसकी माग ४० से ४५ प्रतिशत रह गई।

(२) पूंजी की कमी—अनुमान किया गया है कि सीमेन्ट की उत्पादन क्षमता प्राय १०० लाख टन वृद्धि के लिय १०० करोड रुपये की पूञ्जी की आवश्यकता होगी क्योकि लागत व्यय बढता जा रहा है। योजना आयोग ने इसके लिये ८१ करोड रुपये पूञ्जी की ही व्यवस्था की है। वर्तमान स्थिति मे उद्योग के लिये इतनी पूंजी प्राप्त करना कठिन होगा क्योकि न तो वह आन्तरिक साधनो से इतनी ज्यादा बचत कर सकता है और न शेयर पूजी जारी करके।

(३) विदेशी विनिमय की कमी—विदेशिक विनिमय की समस्या भी कम जटिल नही है। वास्तव मे योजना आयोग ने योजना की प्रगति की समीक्षा करते

हुए यह विचार व्यक्त किया था कि, उद्योग की उत्पादन क्षमता ८६ लाख टन बढ़ाने के लिये विदेशिक विनिमय उपलब्ध हो सकेगा।

(४) यातायात की कठिनाई—सीमेण्ट उद्योग के विकास के लिये यातायात की भी विशेष आवश्यकता है। रेलवे मत्रालय ने १९६०–६१ तक ९० लाख टन सीमेण्ट के यातायात की योजना बनायी है। अत इससे ज्यादा उत्पादन में वृद्धि होने पर यातायत की कठिनाई भी उत्पन्न हो सकती है।

Q. 66 Heavy, small and other industries all need to be developed at the same time in the present economic conditions of India Do you agree ? Give reasons for your answer How can the small-Scale industries hold their own against large-scale industries ?

प्रश्न ६६—भारी, छोटे तथा दूसरे उद्योग—सबको भारत की वर्तमान आर्थिक स्थिति मे एक साथ उन्नत होने की आवश्यक्ता है। क्या आप इस बात से सहमत हैं ? अपने उत्तर के कारण दीजिये। छोटे पैमाने के उद्योग बड़े पैमाने के उद्योगो का किस प्रकार सामना कर सकते हैं ?

इस प्रश्न का उत्तर देने से पूर्व हमको भारत की वर्तमान आर्थिक स्थिति से परिचय कर लेना आवश्यक है। भारतवर्ष औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ कहा जा सक्ता है। इस देश मे आधारभूत उद्योगो का तो पता ही नही है दूसरे प्रकार के उद्योग भी बहुत कम पाय जाते हैं। कुटीर उद्योग, जिनके लिये भारतवर्ष भूतकाल मे ससार मे प्रसिद्ध था, वे भी आजकल पिछडी हुई दशा मे कहे जा सकते हैं और तो और कृषि उद्योग भी जिसके ऊपर भारत की ७० प्रतिशत जनता निर्भर है बहुत बुरी हालत मे है। ऐसी स्थिति मे यह बात आवश्यक ही जान पड़ती है कि हमारे देश मे भारी, छोटे तथा कुटीर उद्योग सब एक साथ उन्नत किये जायें।

कई बार हमारे देश मे इस बात पर तर्क-वितर्क होता है कि देश मे कुटीर उद्योग उन्नत किये जायें अथवा बड़े पैमाने के उद्योग। महात्मा गाँधी तथा उनके विचार से सहमत लोगो का मत है कि देश मे केवल कुटीर उद्योगो की ही उन्नति हो क्योकि इससे देश के अधिकतर लोगो को रोजगार मिलेगा तथा देश म धन का समान वितरण हो जायेगा। इसके विपरीत कुछ लोगो का मत है कि जब ससार के दूसरे देश औद्योगिक दृष्टि से दोनो दिन उन्नति करते जा रहे है तब हमको कुटीर उद्योगो के ऊपर ध्यान न देकर केवल बड़े पैमाने के उद्योगो पर ही ध्यान देना चाहिए। परन्तु ये दोनो ही विचारधारायें गलत है। सत्य बात यह है कि हमको सब प्रकार के उद्योग-धन्धो पर ध्यान देना चाहिये और यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो बड़े के उद्योगो तथा कुटीर उद्योगो म इस प्रकार के वाद-विवाद

होने की कोई गुंजायश नहीं है क्योंकि दोनों के क्षेत्र अलग-अलग निश्चित किये जा सकते हैं। इस विषय पर अपने एक भाषण में डा० राजेन्द्र प्रसाद ने अप्रैल १९५४ ई० में कहा था कि ग्रामोद्योगों तथा विपुल पूंजी और भारी मशीनों से बड़े पैमाने पर चलाए जाने वाले उद्योगों में परस्पर विरोध नहीं होना चाहिए। इन दोनों प्रकार के उद्योगों की प्रणाली अलग-अलग है। दोनों अपनी-अपनी जगह महत्वपूर्ण हैं और यदि उनके कार्य क्षेत्र अलग कर दिये जायें तो दोनों देश के लिये हितकर हो सकते हैं। इसलिये यह सोचना भूल है कि इस औद्योगीकरण के युग में ग्राम उद्योगों का कोई स्थान नहीं अथवा इनके बारे में सोचना आधुनिक विचारधारा के प्रतिकूल है। आज के युग में यह कोई नहीं चाहेगा कि रेल की पटरियाँ अथवा समुद्री या हवाई जहाज किसी लुहार के घर में बनाये जायें। यह न तो सम्भव है और न विचारणीय। यह मानना ही होगा कि इनसे यदि हम बचना भी चाहें तो बच नहीं सकते। इस प्रकार की चीजें हमें बड़े कारखानों में ही बनानी पड़ेंगी पर बहुत सी ऐसी चीजें हैं और उनके भी कुछ ऐसे अंश और पुर्जे हो सकते हैं जो घरों में बनाये जा सकते हैं। पर कुछ ऐसी चीजें हैं जो बिना कठिनाई के घरेलू तौर पर बन सकती हैं और वे जीवन की अत्यन्त आवश्यक वस्तुओं में से हैं। इस प्रकार की वस्तुओं का उत्पादन यदि घरेलू उद्योगों से कराया जाय तो सबका लाभ होगा। एक ओर बेरोजगारी का मसला बहुत हद तक हल हो सकेगा और दूसरी ओर जो कल पुर्जों के लिए विदेशों का मुँह देखना पड़ता है वह भी बच सकेगा इसलिए हमारी पचवर्षीय योजना में इन दोनों प्रकार के उद्योगों को स्थान दिया गया है। जहाँ कोयला, कागज, सीमेंट आदि बड़े उद्योगों में उत्पादन की वृद्धि पर जोर दिया गया है, वहाँ देहात के घरेलू उद्योगों को दृढ़ करने और जहाँ वे लुप्त हो गये हैं इन्हें फिर से चलाने की सलाह दी गई है।

उन्होंने आगे कहा कि मेरी राय में हमारे देश की सम्पन्नता के दो अंग हैं और ये एक दूसरे के पूरक हैं। भारत में ही नहीं विदेशों में भी लोगों का ऐसा ही मत है। ऐसे देशों में भी जो औद्योगीकरण की दृष्टि से काफी उन्नत हैं, ग्राम उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाता है। इंगलैंड, संयुक्त राष्ट्र अमरीका, जापान आदि के उदाहरण हमारे सामने हैं।

ऊपर के कथन से यह बात स्पष्ट रूप से समझ में आ सकती है कि आज देश को न केवल कुटीर उद्योगों की ही आवश्यकता है वरन् बड़े पैमाने के उद्योग की भी। संसार में जीवित रहने तथा उन्नति करने के लिये हमारे देश में कई प्रकार के उद्योगों की आवश्यकता है और उन सबका उन्नत करना आवश्यक है। उदाहरण के लिये देश की रक्षा के लिये हवाई व समुद्री जहाजों के उद्योगों, बम, अणु बम व परमाणु बमों के उद्योग, देश की यातायात की समस्या को हल करने के लिये रेल के इंजिन व गाड़ियाँ, मोटरकार आदि के उद्योग, देश में मशीनें बनाने के लिये जिससे कि हमको मशीनों के लिये विदेशों का मुँह न ताकना

पड़े, बडे-बडे आधारभूत उद्योग, देश मे लोगो के जीवन-स्तर को उठाने के लिये कुटीर व उपभोग से सम्बन्धित उद्योग, बडे व छोटे उद्योगो को कच्चा माल व शक्ति प्रदान करने के लिये खेती, खनिज पदार्थ व बिजली उत्पन्न करने वाले उद्योगो का उन्नत करना परम आवश्यक है। हम इनमे से किसी प्रकार के उद्योग को नही छोड सकते। यही कारण है कि हमारी पचवर्षीय योजनाओ मे इन सब बातो को ध्यान में रखकर सब प्रकार के उद्योगो की उन्नति पर जोर दिया गया है। जहाँ प्रथम पंचवर्षीय योजना मे खाद्य समस्या को सुलझाने के लिये कृषि उद्योग को प्रोत्साहन दिया गया था वहाँ द्वितीय योजना मे देश को औद्योगिक दृष्टि से आत्म-निर्भर बनाने के लिए बडे पैमाने तथा दूसरे प्रका. के उद्योगो की उन्नति पर जोर दिया गया है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि देश मे कुटीर भारी, तथा दूसरे प्रकार के उद्योगो को एक साथ उन्नत करने की आवश्यकता है।

छोटे पैमाने के उद्योग बडे पैमाने के उद्योगों का किस प्रकार सामना कर सकते हैं—छोटे-बडे पैमाने के उद्योगो का महत्व बताते समय हम लिख आये हैं कि वास्तव मे देखा जाय तो छोटे पैमाने तथा बडे पैमाने के उद्योगो मे कोई प्रतियोगिता नही है। यह प्रतियोगिता इसलिये होती है कि एक ही चीज को जब बडे व छोटे दोनो पैमानो पर उत्पन्न की जाती है तो सामना करने का प्रश्न आकर खडा हो जाता है। परन्तु यदि दोनों प्रकार के उद्योगो के कार्य-क्षेत्र निश्चित कर दिये जायें तो मुकाबला करने का प्रश्न ही नही रहता। योजना कमीशन ने इस प्रतियोगिता को समाप्त करने के तीन ढग बताये हैं—

(१) उत्पादन के क्षेत्रो को बाँट देना अथवा निश्चित कर देना,

(२) जहाँ तक हो सके बडे पैमाने के उद्योगो को न चलाया जाय,

(३) बडे पैमाने के उद्योग पर उप-कर लगाना जिससे कि उसी प्रकार के छोटे पैमाने के उद्योग को लाभ पहुँचे। परन्तु यह ध्यान रखना चाहिये कि बडे पैमाने के उद्योगो की वृद्धि पर रोक लगाते समय उस वस्तु की कुल मांग को जान लेना चाहिये और यह देखना चाहिये कि छोटे पैमाने के उद्योग इस मांग को कहाँ तक पूरा कर सकते हैं। छोटे पैमाने के उद्योग के साथ के लिये उप-कर लगाते समय भी इसी बात का ध्यान रखना चाहिये।

इन सब बातो के अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि छोटे पैमाने के उद्योग अपनी स्थिति को सुधारें। वे अपने उत्पादन के ढग को उन्नत करें। अपनी वस्तुओं को ठीक ढग से बेचें, अपने लिये नये-नये यन्त्र प्राप्त करने का प्रयत्न करें आदि। ये सब काम तब ही सकते हैं जबकि छोटे-छोटे दस्तकार अपने आपको सहकारी समितियो मे सगठित करें।

---o---

Q. 67. Survey briefly the development of Trade Union Movement in India What are the main obstacles to their growth? Discuss their effects on Indian labour Problem

प्रश्न ६७—भारतवर्ष के मजदूर संघ आन्दोलन के विकास का संक्षेप मे विवरण दीजिये। उसके उन्नति के मार्ग मे क्या मुख्य बाधायें हैं? उसके भारतीय श्रम समस्या पर प्रभाव के विषय में बताइये।

मजदूर सघो का जन्म उन सब कठिनाइयो के कारण हुआ जो कि मजदूरों को बडे कारखानो मे अपना श्रम बेचने पर सहन करनी पडी। भारतवर्ष मे भी जब बडे बडे कारखाने चालू होने लगे तब मजदूरो को उसी प्रकार की समस्याओ का सामना करना पडा जिनका उनको औद्योगिक क्रांति के पश्चात् इगलैंड मे करना पडा था। इस कारण इस देश मे मजदूर सघो का स्थापित होना भी स्वाभाविक था।

भारतवर्ष मे सबसे पहला मजदूर सघ १८७५ ई० मे सोराब जी रुस्तम बगाली के प्रयत्न के फलस्वरूप चालू हुआ। परन्तु प्रथम महायुद्ध तक मजदूर सघ आन्दोलन को कोई विशेष सफलता न मिली। उस समय तक मजदूर सघो का कार्य केवल हडताल कराना ही था। पाश्चात्य देशो के मजदूर सघो के समान इस देश के मजदूर सघो की कार्य-क्षमता बढाने तथा उनको किसी प्रकार की सहायता देने का कोई प्रयत्न न किया था। परन्तु प्रथम महायुद्ध के कारण मजदूरो मे बडी जागृति पैदा हो गई। उनका जीवन-स्तर बहुत बढ गया परन्तु जब मजदूरी उसके अनुसार न बढी तब उन्होने मजदूर सघो की स्थापना करके बहुत सी हडतालें की। इसके अतिरिक्त युद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सघ (International Labour Organization) की स्थापना हुई जिसमे प्रत्येक देश के मजदूरो को अपने प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया गया। इस कारण यह आवश्यक हो गया कि मजदूर अपने आपको मजदूर सघो मे सगठित करें तथा सब मजदूर सघ अपना एक अखिल भारतीय सघ बनायें। इन सब बातो के कारण इस देश में प्रथम महायुद्ध के उपरान्त मजदूर सघो का निर्माण स्थायी रूप से हो गया।

भारतवर्ष में इस प्रकार के स्थायी मजदूर सघो का सूत्रपात २७ अप्रैल, १९१८ ई० को श्री बी० पी० वादिया द्वारा बकिंघम और कर्नाटक टैक्सटाइल मिल, मद्रास के मजदूरो के मजदूर सघ से हुआ। १९१९ ई० मे मद्रास मे ४ मजदूर सघ

हो गये। उनके सदस्य २०,००० मजदूर थे। मद्रास से यह आन्दोलन भारत के दूसरे प्रान्तो मे फैला। १९२० ई० मे अखिल भारतीय मजदूर सघ (All India Trade Union Congress) की स्थापना हुई। यह विभिन्न स्थानो पर अपनी सभाये करती रही। इस कारण मजदूरो को नये-नये सघ बनाने के लिये प्रोत्साहन मिला। इस प्रकार बम्बई केन्द्रीय बोर्ड, बङ्गाल मजदूर सघ तथा अखिल भारतीय रेलवे सघ १९२२ ई० मे स्थापित हुए। इसके कुछ समय पश्चात् तार व डाकखाने का एक सघ बना।

मजदूर सघो का स्थापित होना भारतवर्ष के पूँजीपतियो के लिये एक असह्य बात थी। इसी कारण उन्होने इसका कड़ा विरोध किया। १९२० ई० मे बकिङ्घम की मिलो के मुकदमे के सम्बन्ध मे हाईकोर्ट ने मद्रास श्रम सघ के विरुद्ध एक आज्ञा निकाली जिसमे श्रम सघ के नेताओ से यह कहा गया कि वे हड़ताल करने के लिये मजदूरों को न भड़कावें। इसके अतिरिक्त मजदूर सघ के नेताओ को पकड़ लिया गया तथा उन पर ७००० पौंड का जुर्माना लगाया गया। इससे मजदूर संघो को बहुत हानि पहुँची। इस बात को देखकर मजदूर सघ के नेता श्री एम० एन० जोशी ने पांच वर्ष के निरन्तर प्रयत्न के पश्चात् १९२६ मे भारतीय मजदूर सघ कानून पास कराया। इस कानून के अनुसार कोई भी सात या सात से अधिक मजदूर मिलकर अपना सघ बना सकते थे या रजिस्ट्री करा सकते थे। पर रजिस्ट्री के लिए यह आवश्यक था कि सघ मे कम से कम ५० प्रतिशत लोग मजदूर हो। इन सघो के दो कोष होते थे, एक साधारण दूसरा राजनीतिक। कानून मे यह दिया हुआ था कि कोषो का धन कैसे खर्च किया जायगा। मजदूर सघ कानून का १९४८ मे सशोधन किया गया। इस सशोधित कानून मे श्रम न्यायालय की आज्ञानुसार उद्योगपतियो द्वारा मजदूर सघो की मान्यता की व्यवस्था की गई है। परन्तु इस पर अभी कार्य करना आरम्भ नही हुआ है।

१९२८-२९ तक मजदूर सघो मे साम्यवादियो का बोलबाला रहा परन्तु १९२९ मे अखिल भारतीय मजदूर सघ कांग्रेस के दसवें अधिवेशन मे जो नागपुर मे हुआ, श्री एम० एन० जोशी की अध्यक्षता मे अखिल भारतीय मजदूर सघ फेडरेशन का निर्माण हुआ। १९३१ मे इन दलो मे और भी फूट हो गई। परन्तु इसी बीच मे इन भिन्न भिन्न दलो के आपस मे मिलाने का प्रयत्न बराबर जारी रहा। इस प्रयत्न का कोई विशेष परिणाम १९३८ तक न निकला। १९३८ के अधिवेशन मे भारतीय मजदूर सघ कांग्रेस तथा भारतीय मजदूर सघ फेडरेशन ने मिलने का निश्चय किया। द्वितीय महायुद्ध मे इनमे मतभेद हो गया। इस समय मजदूर सघ कांग्रेस ने सरकार को युद्ध मे सहायता न देने का निश्चय किया। परन्तु एम० एन० राय के नेतृत्व मे स्थापित हुये मजदूर सघ फेडरेशन ने सरकार की सहायता करने का निश्चय किया। उसने अपनी एक अलग सभा (Indian Federation Labour) बना ली। सरकार ने इस सभा की आर्थिक सहायता भी की। राष्ट्रीय नेता पकड़े गये और अखिल भारतीय श्रम सघ कांग्रेस फिर साम्यवादियो के हाथ में पहुँच

रजिस्टर्ड मजदूर संघ व उनकी सदस्यता

	केन्द्रीय मजदूर संघ			राज्य मजदूर संघ		
	१९५४–५५	१९५५–५६	१९५६–५७	१९५४–५५	१९५५–५६	१९५६–५७
रजिस्टर पर मजदूर संघो की संख्या	१४४	१७४	१७३	६५०४	१९२१	८१९०
सूचना देने वाले संघो की संख्या	१०५	१०५	१०२	३००८	३९०१	४२९७
सूचना देने वाले संघो की सदस्यता	१,७५,५०८	२,१२,८४८	१,८७,२९५	१९,९४,९४२	२०,११,८८४	२१,८६,४६७

अखिल भारतीय संस्थाओ की सदस्यता

	सम्बन्धित मजदूर संघो की संख्या				सदस्यता			
	१९५४	१९५५	१९५६	१९५७	१९५४	१९५५	१९५६	१९५७
भारतीय राष्ट्रीय मजदूर संघ सभा	६०६	६०४	६१७	६७२	८,८८,२९१	९,३०,९६८	९,७१,७४०	९,३४,३८५
हिन्द मजदूर सभा	३३१	१५७	११९	१३८	४,९२,३६२	२,११,३१५	२,०३,७९८	२,३३,९९०
अखिल भारतीय मजदूर संघ सभा	९२५	४८१	५५८	×	×	३,०६,९६३	४,२२,८५१	×
संयुक्त मजदूर संघ सभा	१६९	२२८	२३७	×	×	१,६५,२४२	१,५९,१०९	×
कुल योग	२०३१	१४७०	१५३१	×	×	१६,४४,४८२	१७,५७,४९८	×

× आंकड़े उपलब्ध नहीं।

गई। युद्ध समाप्त होने पर जब भारत के हाथ में राज्य सत्ता आई तब कांग्रेस ने मजदूरों पर से साम्यवादियों का प्रभाव समाप्त करने के लिये १९४६ ई० में भारतीय राष्ट्रीय श्रम संघ सभा (Indian National Trade Union Congress) बनाई। समाजवादियों ने भी अपनी एक अलग सभा १९४८ ई० में बनाई जिसको हिन्द मजदूर सभा कहते हैं। प्रो० के० टी० शाह ने संयुक्त श्रम संघ सभा (United Trade Union Congress) बना ली। इस प्रकार भारत के सब मजदूर संघों को उनकी राजनीतिक विचारधारा के अनुसार निम्नलिखित चार भागों में बाँट सकते हैं। १९५४ ई० में इनकी स्थिति इस प्रकार थी—

उपर्युक्त अखिल भारतीय संस्थाओं में से भारतीय राष्ट्रीय मजदूर संघ सभा कांग्रेस की, हिन्द मजदूर सभा समाजवादियों की, अखिल भारतीय मजदूर संघ सभा साम्यवाद की विचारधारा से प्रभावित है।

बाधायें—यद्यपि भारतवर्ष में मजदूर संघ आन्दोलन निरन्तर प्रगति कर रहा है तो भी हम यह कह सकते हैं कि उसके मार्ग में अभी तक बहुत सी कठिनाइयाँ हैं। जिनके कारण इसकी उन्नति मजदूरों की संख्या को देखते हुये बहुत ही कम हुई। ये बाधायें निम्नलिखित हैं—

(१) भारतीय मजदूर अभी तक अशिक्षित हैं। इस कारण वह अपने अधिकार तथा कर्त्त०यों को नहीं समझते।

(२) मजदूर औद्योगिक केन्द्रों में स्थायी रूप से नहीं रहते। वे फसल कटने तथा बोने के समय गाँवों में चले जाते हैं। जब वे खाली रहते हैं तब वे कारखानों में नौकरी करने चले आते हैं। उनके अस्थायी रूप से रहने का दूसरा कारण और भी है और वह यह कि औद्योगिक क्षेत्र में मकानों की बहुत कमी है। इसी कारण मजदूर लोगों को मकान नहीं मिलते और उनकी इच्छा रहते हुये भी वे स्थायी रूप से औद्योगिक क्षेत्रों में नहीं रह सकते। अस्थायी रूप से रहने के कारण मजदूर लोग मजदूर संघों की उन्नति में कोई दिलचस्पी नहीं लेते।

(३) भाषा, धर्म, जाति अथवा सामाजिक रीति-रिवाज में भिन्नता होने के कारण मजदूरों में आपस में एक आत्मीयता नहीं होने पाती।

(४) मजदूर निर्धन हैं। इसी कारण वे मजदूर संघ का चन्दा नहीं दे सकते और उससे अलग रहने का प्रयत्न करते हैं।

(५) मजदूर लोग मजदूर संघों के अनुशासन का पालन न कर सकने के कारण उनसे अलग रहते हैं।

(६) मजदूर अशिक्षित हैं इसी कारण उनको अपने से बाहर के नेताओं पर निर्भर रहना पड़ता है। ये नेता मजदूरों का अपने स्वार्थ के लिए शोषण करते हैं।

(७) मजदूर प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों में अधिक विश्वास नहीं रखते। इस प्रकार के विश्वास न होने के कारण मजदूर संघों की अधिक उन्नति होनी कठिन है।

(८) कारखाने वाले भी मजदूर संघों के विरुद्ध रहते हैं। वे मजदूर संघों को नहीं मानते और उनसे बातें करने के लिये तैयार नहीं होते।

(९) हमारे देश मे मजदूरो को कारखानो मे बहुत अधिक समय तक काम करना पडता है। इतना काम करने के पश्चात् न तो उनके पास इतना समय ही रहता और न ही उनमे इतनी शक्ति ही रहती कि वे मजदूर सघो मे जा सकें।

(१०) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सस्था की चौथी एशिया की क्षेत्रीय बैठक की समिति ने यह बात स्वीकार की है कि एशिया के मजदूर सघो की एक कमजोरी यह है कि यहाँ पर राजनीतिक तथा अन्य विचारधाराओ के कारण बहुत से मजदूर सघ पाये जाते हैं।

उपचार—उपर्युक्त कठिनाइयो के कारण हमारे देश मे मजदूर सघ आन्दोलन अधिक उन्नति न कर सका। इसलिये यह आवश्यक है कि बाधाओं को दूर किया जाय। ऐसा करने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं—

(१) मजदूर सघो के नेता स्वय मजदूर बनें क्योंकि ऐसे नेता ही मजदूरो के दृष्टिकोण को समझकर उनकी भलाई के लिये कार्य कर सकते हैं।

(२) सरकार को चाहिये कि वह मजदूरो के लिये पर्याप्त सख्या मे मकान बनायें जिससे कि मजदूर स्थायी रूप से औद्योगिक केन्द्रो मे रह सकें।

(३) मिल मालिको को चाहिये कि वे मजदूर सघो को मान्यता दें। ऐसा करने मे उनको लाभ होगा क्योंकि फिर वे मजदूरो के साथ अपने झगडो को आपस मे सुलझा सकेंगे। इससे उनके और मजदूरो के सम्बन्ध आपस मे अच्छे हो जायेंगे।

(४) मजदूर सघो को चाहिये कि वे मजदूरो मे शिक्षा का प्रचार करें ताकि मजदूर अपने कर्तव्यो का पालन ठीक प्रकार से कर सकें तथा उनको ज्ञात हो जाय कि मजदूर सघ का सदस्य होने से उनको क्या लाभ होगा।

(५) मजदूर सघो की अधिकता को दूर करने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सस्था की एशिया की चौथी क्षेत्रीय बैठक ने सुझाव दिया है कि सरकारी देख रेख में एक गोपनीय मतदान होना चाहिए कि कौन मजदूर सघ मजदूरो का प्रतिनिधित्व करता है तथा उसी मजदूर सघ को बातचीत करने का अधिकार दिया जाय। मजदूर सघो के धन को सच करने मे (Check off) पद्धति को धारण करना जिससे कि मजदूर सघो की वित्तीय स्वतन्त्रता बनी रहे मजदूर सघो का सरकारी रजिस्ट्रेशन करना तथा मजदूर सघो तथा मिल मालिको के कोषो की देखभाल तथा आडिट करना। सामूहिक सौदे के समझौतों को कानून द्वारा लागू करना आदि दूसरे सुझाव थे।

श्री जोसफ डी० कीनन (Joseph D Keenan) ने जो कि एक प्रसिद्ध अमरीकन मजदूर सघ नेता है भारत मे प्रजातान्त्रिक मजदूर सघ आन्दोलन को शक्तिशाली बनाने के लिये निम्नलिखित तीन सुझाव दिये हैं—(१) मजदूर सघ उद्योग तथा दस्तकारी के आधार पर निर्माण किये जाने चाहियें। (२) उनका राजनीतिक दलो से कोई सम्बन्ध नही होना चाहिए। (३) अनिवार्य न्याय को जिसके कारण कि मजदूर सघ आन्दोलन को बहुत क्षति पहुँचती है समाप्त कर देना चाहिये।

मजदूर संघों और भारतीय श्रम समस्या—यद्यपि हमारे देश के मजदूर सघ आन्दोलन के सामने बहुत सी बाधायें हैं तब भी हम यह कह सकते हैं कि खानो तथा चाय के बागो को छोडकर इस आन्दोलन ने अच्छी सफलता प्राप्त की है। इस आन्दोलन के द्वारा हमारे देश के मजदूरो का जीवन-स्तर ऊँचा उठा है। इन सघो के द्वारा मजदूर मिल मालिको से बहुत सी सुविधायें प्राप्त करने में सफल हुए हैं। यद्यपि कहीं-कहीं मजदूरो को भारी हानि भी उठानी पड़ी है। पर यह बात ठीक है कि इस समय तक मजदूर सघो का कार्य केवल मिल मालिको के सामने मजदूरो के कष्टो को रखना तथा आवश्यकता पडने पर मजदूरो के लिये लडना रहा है। उन्होने इस समय तक मजदूरो की कार्य-क्षमता बढाने तथा उनके जीवन को सुखी बनाने के लिये बहुत ही कम काम किया है। धन की कमी के कारण वे पाश्चात्य देशों के मजदूर सघो के समान न तो बीमारी के समय, न बेरोजगारी के समय और न बुढापे मे मजदूरो की कोई सहायता कर सकते हैं। कुछ मजदूर सघ अपनी कठिनाइयो को जनता के सामने रखने के लिए अखबार भी निकालते हैं। पर वे शायद ही मजदूरो की अवस्था सुधारने के लिये कभी कोई नई योजना बनाते हो। अहमदाबाद टेक्सटाइल मजदूर सघ मजदूरो के हित की दृष्टि से अच्छा कार्य कर रहा है।

इन सब बातो के होते हुए भी हम यह कह सकते हैं कि हमारे देश मे मजदूर सघ आन्दोलन का भविष्य उज्ज्वल है। अभी तक हमारे देश मे मजदूर सघ आन्दोलन बहुत ही थोडे मजदूरो तक पहुँचा है इसी कारण हम यह आशा करते हैं कि कुछ प्रयत्न करके बहुत से मजदूरो को मजदूर सघो का सदस्य बनाया जा सकता है। आजकल सरकार की श्रम के प्रति जो नीति है उससे हम यह आशा करते हैं कि मजदूर सघ आन्दोलन शीघ्र प्रगति करेगा।

Q. 68 Give a historical retrospect of the Indian Factory Legislation

प्रश्न ६८—भारतीय फैक्टरी एक्ट का सक्षिप्त ऐतिहासिक सिहावलोकन कीजिये।

बडे-बडे उद्योग धन्धो के इस देश मे स्थापित हो जाने के पश्चात् भी इस देश मे बहुत समय तक कोई फैक्टरी एक्ट नही बना। इसके फलस्वरूप मिल मालिक मजदूरो से मनमाना काम लेते थे। उन्हे बहुत समय तक परिश्रम करना पडता था। स्त्रियो तथा बालकों की दशा बहुत बुरी थी। इन्हीं सब बातो को देखकर सरकार ने समय समय पर फैक्टरी एक्ट पास किए। पर यह बात ध्यान रखने योग्य है कि प्रारम्भ से सरकार ने इसलिये फैक्टरी एक्ट पास नही किया क्योंकि वह मजदूरो की दशा सुधारना चाहती थी वरन् इसलिये किया कि लकाशायर के मिल मालिक यह चाहते थे कि उनके समान भारतीय मिलो पर भी फैक्टरी कानून लागू होने चाहियें

र रहो हैं। इनमे Y M. C A ' बम्बई सामाजिक सेवा लीग, भारत की सेवा समिति, सेवा सदन समिति आदि मुख्य हैं।

श्रम हितकारी कोष—१९४६ ई० मे, बहुत से श्रम हितकारी कोषों का र्माण किया गया जिनका उद्देश्य मजदूरो के लाभ के लिये कार्य करना है। आज स देश मे २०० से ऊपर ऐसे कोष हैं जिनसे १९५४-५५ मे १,५६,००० मजदूरो का लाभ पहुँच रहा था।

श्रम हितकारी केन्द्र—बहुत सी राज्य सरकारें श्रम हितकारी केन्द्र चला रही । १ नवम्बर १९५६ को उनकी सख्या इस प्रकार थी—बम्बई मे ५४, उत्तर-प्रदेश मे २, पश्चिमी बगाल मे २६, सौराष्ट्र मे २१, राजस्थान मे १२, पजाब मे ७, ड़ीसा में ६, मध्यभारत मे ५, बिहार मे ४, मध्यप्रदेश मे ३, ट्रावनकोर कोचीन मे मैसूर मे २, त्रिपुरा मे २, हैदराबाद मे १, दिल्ली मे १।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश में मजदूरो के लाभ के लिये बहुत म हितकारी कार्य किया जा रहा है। इस कार्य के द्वारा मजदूरो का जीवन कुछ सुखी हुआ है। पर अभी तक जो कार्य किया गया है वह आवश्यकता से बहुत कम । यदि हम यह चाहते हैं कि हमारी मिलें अधिक सामान उत्पन्न करें तो हमको श्रम हितकारी कार्य मजदूरो के जीवन को सुखी बनाने के लिये करना पड़ेगा। इस र्य मे रुपया जरूर खर्च होता है। परन्तु जितना धन खर्च किया जाता है उससे अधिक लाभ उत्पन्न हो जाता है। प्रारम्भ मे जब राबर्ट ओविन ने अपनी मिल मे इस प्रकार का कार्य चालू किया तो दूसरे मिल मालिकों ने उसका मजाक उड़ाया क्योंकि उनका विश्वास था कि उससे बड़ी हानि होगी परन्तु ओविन का विश्वास था कि जितने ही मजदूर खुश व कार्य-कुशल होगे उतना ही मिल को लाभ होगा और हुआ भी ऐसा ही। इसलिये हमारे देश के मिल मालिकों को भी अपने लाभ के हित मे अधिकाधिक श्रम हितकारी कार्य करना चाहिये।

Q. 70. Explain the necessity and importance of Social insurance from the point of view of Indian Industrial labour. Review briefly the policy of the government of India in this connection, indicating the steps taken by it.

प्रश्न ७०—भारतीय औद्योगिक श्रम की दृष्टि से सामाजिक बीमे की आवश्यकता तथा महत्व बताइये। इस सम्बन्ध मे सरकार की नीति, इसके द्वारा किये गये कार्य को बताते हुये लिखिये।

सामाजिक बीमे का विचार सबसे पहले १८८१ ई० में जर्मनी के विलियम प्रथम के मस्तिष्क मे उत्पन्न हुआ। परन्तु हाल ही में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम सस्था के

मातृत्व लाभ, मजदूर क्षतिपूर्ति, रोग, बुढापे, बेरोजगारी आदि का बीमा प्रस्तावो के कारण इसका बडा प्रचार हुआ। इस प्रकार के प्रस्तावो को ससार के बहुत से देशो ने माना है।

सामाजिक बीमे का अर्थ—सामाजिक बीमा वह सहकारी प्रयत्न है जिसके द्वारा बीमा कराने वाले व्यक्ति को आवश्यक रूप (Compulsory basis) से बेरोजगारी, बीमारी तथा इस प्रकार के दूसरे अवसरो पर पर्याप्त मात्रा मे सहायता प्रदान की जाती है जिससे कि वह एक न्यूनतम प्रकार का जीवन-स्तर कायम रख सके। यह सहायता एक ऐसे कोष से प्रदान की जाती है जो मजदूरो, मालिको तथा राज्यों द्वारा दिये गये धन से निर्माण किया जाता है। सहायता बीमा कराने वाले को इसलिये प्रदान की जाती है कि इसको पाने का उसका अधिकार होता है।

भारतीय श्रम के लिये सामाजिक बीमे की आवश्यकता तथा महत्व—

भारतवर्ष में मजदूरो को बहुत कम मजदूरी मिलती है। परन्तु उनकी वास्तविक मजदूरी और भी कम है क्योंकि वे कम मात्रा मे खरीदते हैं जिसके कारण मूल्यों के कम होने पर भी उनको उसका लाभ प्राप्त नही होता। इस प्रकार उनको अपनी आय का ८० प्रतिशत खाने तथा ईंधन पर खर्च करना पडता है, ४ से १० प्रतिशत तक वे शराब पर खर्च करते हैं और शेष को सिनेमा, त्योहारो, विवाहो पर खर्च करते हैं। इस प्रकार उनके पास बीमारी, बेरोजगारी मृत्यु आदि अवसरों के लिये कुछ नही बचता। इस कारण ऐसे अवसरो पर उनको ऋण लेना पडता है। परन्तु ऋण लेने की एक सीमा होती है। इसके अतिरिक्त ऋण का भार स्थायी होता है। ऋण लेने से मजदूर और भी निर्धन होता है। इस कारण इस बात की आवश्यकता है कि मजदूरो के लिये एक ऐसा ढग निकाला जाय जिससे कि वे बिना ऋण लिये एक न्यूनतम जीवन-स्तर बिता सकें। यह ढग सामाजिक बीमा है।

भारतवर्ष मे सामाजिक बीमे की आजकल बडी आवश्यकता है और यह *आवश्यकता बहुत समय तक कायम रहगी। इसका कारण यह है कि आज हमारा देश* इस स्थिति में नही है कि वह देश के सारे लोगो के लिये सहायता प्रदान कर सके।

सामाजिक बीमे की आवश्यकता केवल इसलिये नही है कि इसके द्वारा मजदूर की आय कायम रहती है वरन् इसलिये भी है कि इसके कारण मजदूर की कार्य-क्षमता कम नहीं होती। इसके अतिरिक्त यह कार्य-क्षमता का ह्रास नही होने देता। अन्त में इसके कारण मजदूर अपने आपको उस समय कायम रखता है जबकि उसके पास कोई कार्य करने के लिये नही होता।

भारत में सामाजिक बीमे की वर्तमान दशा—

एक पूर्ण सामाजिक बीमे की योजना के निम्नलिखित अग होते हैं—

(अ) बीमारी, (२) मातृत्व, (३) औद्योगिक दुर्घटनायें, (४) गैर औद्योगिक घटनायें, (५) रोग ग्रस्त अवस्था (Invalidity), (६) बेरोजगारी, (७) बुढापे की पेंशन, (८) मृतक के बच्चे तथा विधवा स्त्री की सहायता।

यदि हम इस कसौटी पर भारत को कसें तो हम कहेंगे कि यह देश सामाजिक बीमे की दृष्टि से सबसे पिछड़ा हुआ है। इसका कारण यह है कि इस देश ने अभी इस ओर पैर बढ़ाना आरम्भ किया है। भूतकाल में समय-समय पर इस बात पर विचार किया गया है परन्तु उसका अभी कोई फल नहीं निकला। १९२८-२९ की बम्बई हड़ताल जाँच समिति, १९३१ के शाही श्रम आयोग, १९३८ ई० की कानपुर श्रम जाँच समिति, १९४० की बिहार जाँच समिति तथा बम्बई टैक्सटाइल श्रम जाँच समिति ने सामाजिक बीमे के विषय में कुछ बातें कहीं परन्तु उनका व्यावहारिक दृष्टि से कोई लाभ न हुआ। इन समितियों ने केवल बीमारी के बीमे का ही जिक्र किया है और किसी-किसी ने बुढ़ापे की पेंशन तथा बेरोजगारी के बीमे की ओर भी संकेत किया है। इनके अतिरिक्त उन्होंने दूसरी प्रकार की कठिनाइयों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। परन्तु सरकार ने उनकी इस एक रोग वाले बीमे की सिफारिश को भी नहीं माना क्योंकि वह इसको चलाकर अपना खर्च नहीं बढ़ाना चाहती थी।

भारतवर्ष में मजदूरों के लिये इस दृष्टि से किए गए काम को हम दो भागों में बाँट सकते हैं—(१) वैधानिक, (२) लोक-हितकारी।

(१) वैधानिक (Statutory)—इसमें दो प्रकार के लाभ सम्मिलित किए जा सकते हैं—(१) श्रमिक क्षतिपूर्ति विधेयक १९२३ के अन्तर्गत दिया गया धन जो कि औद्योगिक दुर्घटनाओं के कारण दिया जाता है। (२) मातृत्व लाभ (Maternity Benefit) जो कि कुछ ही राज्यों में दिया जाता है। इनके अतिरिक्त युद्धकाल में पास किये गये १९४१ ई० तथा १९४३ ई० के दो विधेयकों के अन्तर्गत उन मजदूरों को जो लड़ाई में जख्मी हो जाते थे औषधि आदि लाभ प्रदान किया जाता था तथा श्रमिक क्षतिपूर्ति विधेयक के अन्तर्गत प्राप्त होने वाले लाभ भी दिया जाता था।

(२) लोकहितकारी (Welfare)—कहीं कहीं राज्य सरकारों तथा नगरपालिकाओं ने अस्पताल आदि खुलवा रक्खे हैं परन्तु उनसे बहुत कम मजदूरों को लाभ पहुँच पाता है। इसलिये अब प्रायः सभी मिलों ने चिकित्सालय खोले हुये हैं, जिनमें कि मजदूरों को बीमारी के समय औषधि मिल सकती है।

इसके अतिरिक्त कहीं-कहीं मजदूर संघ भी औषधि लाभ पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं। उनमें से टैक्सटाइल लेबर एसोसियेशन ऑफ अहमदाबाद एक अस्पताल चला रही है। परन्तु ऐसे बहुत कम उदाहरण दिये जा सकते हैं क्यों कि मजदूर संघों के पास धन की कमी है।

कहीं-कहीं कुछ कारखानों में बुढ़ापे की पेंशन, प्राविडेण्ड फण्ड तथा उपहार (Gratuity) भी दिये जाते हैं। सरकार ने पेंशन के ढंग को अपनाया है। कुछ मिलों तथा रेलों में प्राविडेण्ड फण्ड दिया जाता है। उपहार (Gratuity) का रिवाज बहुत कम है। यह उन लोगों को दिया जाता है जो दीर्घकाल तक नौकरी कर चुके हों। उपहार रेलों तथा बम्बई व बिहार राज्यों की कुछ मिलों द्वारा ही

दिया जाता है। परन्तु उपहार पाने वाले व्यक्ति बहुत ही कम होते हैं। इनके अतिरिक्त हमारे देश मे सामाजिक बीमे की ओर और कोई कार्य नही किया जाता है।

सरकार की सामाजिक बीमे की ओर नीति—१९४३ ई० से पूर्व भारत सरकार ने सामाजिक बीमे की योजना को चलाने के लिये कोई कार्य नही किया परन्तु तब से परिस्थिति में कुछ बदल आई है। १९४३ ई० मे सरकार ने श्री बी० पी० आदारकर को विशेष अफसर (Special officer) के रूप मे नियुक्त किया और उनसे भारतवर्ष के लिये बीमारी के बीम की एक योजना तैयार करने के लिये कहा। उन्होने अपनी रिपोर्ट १५ मास के पश्चात् दी। उनकी योजना के अन्तर्गत १२ लाख मजदूर आते थे और योजना का खर्च २½ करोड रुपये था। इस योजना मे मिल मालिक की प्रत्येक मजदूर के लिये १ रु० ४ आ० तथा प्रत्येक मजदूर को १२ आ० देने की योजना थी। यदि सरकार इस योजना मे भाग लेना चाहे तो चन्दा देने की योजना इस प्रकार थी–सरकार ८ आ०, मालिक १४ आ० तथा मजदूर १० आने।

इसके पश्चात् भारत सरकार के श्रम विभाग ने १९४४ ई० मे एक श्रम जाँच समिति नियुक्त की जिससे निम्नलिखित बातो पर खोज करने को कहा गया—

(अ) दूसरी बातो के अतिरिक्त भारत मे औद्योगिक श्रमिको की मजदूरी, रोजगार, मकान, सामाजिक अवस्था आदि के विषय मे आँकडे एकत्र करना।

(आ) निम्नलिखित बातो की जाँच करके उस पर रिपोर्ट देना—

(१) वे खतरे जिनसे जोखिम (Insecurity) होती है, (२) मजदूरो को उन खतरो का सामना करने की आवश्यकता, (३) इन खतरो का मुकाबला करने के सबसे उत्तम ढग, (४) घरो तथा कारखानो की अवस्था।

इस समिति की रिपोर्ट भी पेश की जा चुकी है।

सरकार द्वारा किया गया कार्य—१९४८ ई० मे सरकार ने मजदूरो का राजकीय बीमा विधेयक (Employee's State Insurance Act) पास किया। इसमे सितम्बर १९५१ इ० में सशोधन किया गया। इसका उद्घाटन २१ फरवरी १९५२ ई० को किया गया। यह विधेयक भारत की बारह महीनो काम करने वाली मिलों के २५ लाख मजदूरों पर लागू होगा। परन्तु प्रारम्भ मे इसको दिल्ली व कानपुर, बम्बई और १९ राज्यो के ५१ क्षेत्रो के ११½ लाख मजदूरो पर ही लागू किया गया। शेष मजदूरो पर इसको योजना काल के अन्त तक लागू किया जायेगा।

यह विधेयक उन सब कारखानो पर लागू होता है जो शक्ति का प्रयोग करते है तथा जिनमे २० अथवा अधिक मजदूर काम करते हैं। इस योजना से केवल उन्ही लोगो को लाभ होगा जिनको ४०० रु० से कम वेतन मिलता है।

इस कार्य का सचालन करने के लिये सरकार ने मजदूरों की एक राजकीय बीमा कारपोरेशन चालू की है जिसम केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, मिल मालिक,

मजदूर, डाक्टर तथा लोक सभा के प्रतिनिधि सम्मिलित होते हैं। इस कार्य का सचालन एक स्थायी समिति द्वारा होता है।

कारपोरेशन की धन व्यवस्था मजदूरो व मिल मालिको के चन्दे द्वारा की जायेगी। जिन मजदूरो को १ रुपया प्रतिदिन से कम मजदूरी मिलती है उनसे कोई चन्दा नही लिया जायेगा। जिन क्षेत्रो मे यह योजना लागू की गई है उन क्षेत्रो के मजदूरो मे से उनको जिनको कि १ और १¾ रु० के बीच मे मजदूरी मिलती है, २ आने प्रति सप्ताह देना पडेगा। इससे अधिक मजदूरी पाने वाले लोगो को ४ आने से १¾ रु० तक देना पडेगा। यह चन्दा मजदूरी के २ प्रतिशत के लगभग होगा। कानपुर, दिल्ली आदि के मालिको को—जहां यह योजना चालू हो गई है—कुल मजदूरी के बिल का १¼ प्रतिशत देना होगा। दूसरे स्थानो के मालिकों को कारपोरेशन का खर्च चलाने के लिये अपने मजदूरी बिल का ¾ प्रतिशत तक देना पडेगा। इस प्रकार मजदूरो तथा मालिको से २ करोड रुपये एकत्र होने की आशा है।

स्वास्थ्य सेवाओ का सचालन राज्य सरकारो द्वारा किया जायगा जिनको डाक्टरी खच का ⅓ सहन करना पडेगा। शेष ⅔ कारपोरेशन देगी। केन्द्रीय सरकार पाँच वर्ष तक योजना को चलाने का ⅔ खर्च (लाभ के अतिरिक्त) सहन करेगी।

योजना मे प्रदान किये गये लाभ—इस योजना के अन्तर्गत अग्रलिखित लाभ प्रदान किये जायेंगे।

(१) बीमारी से लाभ (Sickness Benefit)—यदि मजदूर को ऐसा रोग लग जाय कि वह काम पर न जा सके तो उसको एक बीमारी का सर्टिफिकेट देना पडेगा। उसके पश्चात् उसको ३६५ दिनो में अधिक से अधिक ८ सप्ताह तक बीमारी का लाभ प्रदान किया जायगा। बीमारी आरम्भ होने पर दो दिन तक कोई लाभ न दिया जायगा। परन्तु मजदूर एक बार बीमार पडने के १५ दिन के अन्दर ही दूसरी बार बीमार पड जाय तो यह दो दिन की शर्त लागू न होगी। लाभ की दर (यदि छुट्टियो को भी लगाया जाय तो) मजदूरी की ७/१२ पडेगी।

(१) मातृत्व लाभ (Maternity Benefit)—इस प्रकार का लाभ उन स्त्रियों को प्रदान किया जायगा जिनके बच्चा पैदा होने वाला है। लाभ की अधिक से अधिक अवधि १२ सप्ताह होगी जो बच्चा पैदा होने से पहले ६ सप्ताह से अधिक न होगी। शेष ६ सप्ताह बच्चा होने के पश्चात् होगी। इस दशा मे लाभ की दर १२ आने प्रतिदिन अथवा बीमारी लाभ की दर (इन दोनो म जो भी अधिक हो) होगी। इस प्रकार यह लाभ की मजदूरी के ७/१२ के लगभग होगी। १½ रुपए प्रति दिन पाने वाली स्त्रियो का लाभ तो इससे भी अधिक होगा क्योंकि उनको १२ आने प्रति दिन मिलेगा।

(३) अयोग्यता लाभ (Disablement Benefit)—यदि किसी मजदूर को कारखाने मे काम करने के कारण कोई स्थायी अथवा अस्थायी अयोग्यता हो जाय

तो ऐसे मजदूर को अयोग्यता लाभ प्रदान किया जायेगा। यदि अयोग्यता अस्थायी है तो लाभ की दर मजदूरी की ७/१२ होगी। यह लाभ उस समय तक पहुँचाया जायगा जब तक अयोग्यता चलती है। इस प्रकार बीमारी के समान इस दशा मे लाभ पहुँचाने को कोई सीमा नही है। परन्तु अयोग्यता अस्थायी रूप से है तो मजदूर को श्रमिक क्षतिपूर्ति विधेयक १६२३ की तालिका १ में दिए गए ढग से लाभ प्रदान किया जाएगा।

(४) आश्रितों के लाभ (Dependents Benefit)—यदि कारखाने में काम करते-करते किसी मजदूर की मृत्यु हो जाय तो उसके मरने के पश्चात् उसकी विधवा स्त्री तथा उसके बच्चो को सहायता दी जायगी। यह सहायता मजदूर की पूरी मजदूरी के हिसाब से दी जायगी। इसमे से ३/५ तो मजदूर की स्त्री अथवा स्त्रियो को मिलेगी और २/५ उसके लडके लडकियो को। स्त्री को जीवन भर सहायता मिलती रहेगी परन्तु बच्चो को १५ वर्ष की आयु तक। परन्तु यदि बच्चे विद्या प्राप्त कर रहे हो तो उनको १८ वर्ष तक सहायता मिल सकती है।

चन्दे की अवधि—उस मजदूर को जिसको बीमारी अथवा मातृत्व लाभ प्रदान किया जायगा कम से कम २६ सप्ताह तक चन्दा देना चाहिये। इसके १३ सप्ताह बाद तक उसको कोई लाभ प्रदान न किया जायगा। उसके पश्चात् ही मजदूर लाभ प्राप्त कर सकता है। परन्तु अयोग्यता तथा आश्रितो के लाभ के लिये चन्दा देने की इस प्रकार की कोई शर्त नही है। यदि मजदूर पहले दिन आकर ही अयोग्य हो जाय अथवा मर जाय तो उसको भी अयोग्यता लाभ अथवा उसके बच्चो और विधवा स्त्री को आश्रितो का लाभ मिलेगा। कुछ समय से इस बात पर विचार किया जा रहा है कि इस विधेयक के अन्तर्गत मजदूरो के परिवारो को भी चिकित्सा लाभ पहुँचाया जाय। यह बात तय हो चुकी है और अब इस बात को अमल मे लाने की तैयारी हो रही है। अप्रैल १६५७ ई० दिल्ली मे हुई कारपोरेशन की बैठक मे यह प्रस्ताव किया गया है कि मजदूरो के परिवारो को इस प्रकार का लाभ पहुँचाया जाय।

१६५७—५८ में १·७३ करोड रु० बीमारी मे, ५·१७ लाख रु० मातृत्व लाभ, मे २६ ७५ लाख रु० अयोग्यता लाभ में तथा ५ ४४ लाख रु० आश्रित लाभ आदि के रूप मे बाँटे गये तथा आसाम, बिहार, मैसूर, पजाब तथा राजस्थान मे सदस्यो के परिवारो को भी चिकित्सा लाभ प्रदान किया गया।

यह योजना देहली, कलकत्ता शहर तथा हावडा जिला, तथा आँध्र प्रदेश के ६, बम्बई के ४, केरल के ५, मध्य प्रदेश के ५, मद्रास के ५, पजाब के ७, राजस्थान के ६ तथा उत्तर प्रदेश के ४ औद्योगिक केन्द्रो पर लागू है।

मजदूरों का प्राइवेट फण्ड विधेयक (Employees Provident Fund Act)—१६५२ ई० सरकार ने मजदूरो का एक प्राविडेण्ड फण्ड विधेयक भी पास किया है। इस विधेयक के अनुसार मिल मालिकों को ५०० रु० महीना से कम पाने

वाले मजदूर की मूल (Basic) मजदूरी तथा महँगाई भत्ते का ६¼ प्रतिशत चन्दा देना होगा। मजदूर को भी इतना ही चन्दा देना पडेगा परन्तु यदि वह चाहे तो अपने चन्दे को ८⅓ प्रतिशत कर सकता है।

यह विधेयक अभी सीमेंट, सिगरेट, विद्युत यान्त्रिक तथा इञ्जीनियरी, लोहे व फौलाद, कागज और टैक्सटाइल मिलों पर लागू होगा। ३१ जुलाई १९५६ ई० से इसका क्षेत्र बढ़ाकर चीनी, रबड, चाय, छपाई आदि उद्योगों तक फैला दिया गया है। ३१ जुलाई १९५६ ई० से इस योजना को खाने के तेल व चर्बी, चीनी, रबड, बिजली, चाय (आसाम को छोडकर), छपाई आदि १८ नये उद्योगों पर लागू किया गया। इसके पश्चात् एक और विधेयक से इसको बागों, खानों, व्यापारिक तथा अन्य पेशों पर भी लागू करने का निर्णय किया गया है। इस प्रकार सितम्बर १९५८ तक इस योजना के अन्तर्गत ७१८९ फैक्टरी तथा २४.०४ लाख के लगभग मजदूर थे। अब यह सरकार अथवा स्थानीय संस्थाओं के कारखानों पर भी लागू होता है।

श्री वी० के० मेनन की अध्यक्षता में नियुक्त हुई एक समिति ने इस बात का सुझाव दिया है कि नौकरों का राजकीय बीमा एक्ट, नौकरों का प्राविडेण्ट फण्ड एक्ट, कोयले की खानों का प्राविडेण्ट फण्ड एक्ट, आसाम चाय बागान एक्ट आदि का प्रबन्ध एक ही कानूनी संस्था के हाथ में रहना चाहिये।

इस समिति का दूसरा महत्वपूर्ण सुझाव यह है कि मालिकों के ऊपर यह कानूनी जिम्मेदारी हो कि वे नौकरों को ग्रेचविटी दें और मालिकों को चाहिये कि वे पेन्शन तथा ग्रेचविटी योजना में चन्दा देकर इसको अदा करें।

इस समिति का यह भी सुझाव है कि बीमारी का लाभ अधिक से अधिक १३ सप्ताह तक दिया जाय। इसी प्रकार मातृत्व लाभ भी बढ़ाना चाहिये कि वह स्त्री की पूर्ण औसत मजदूरी के बराबर हो जाय तथा इसको कम से कम दर १ रु० प्रतिदिन हो।

समिति ने यह भी कहा है कि प्राविडेन्ट फण्ड योजना को एक कानूनी पेन्शन योजना में बदल देना चाहिये। उचित मात्रा में पेन्शन देने के लिये साधनों का बढ़ाना आवश्यक है। इस दृष्टि से समिति ने सुझाव दिया है कि मजदूरों तथा मालिकों की प्राविडेन्ट फण्ड के चन्दे की दर वर्तमान ६¼ प्रतिशत से बढ़ाकर ८⅓ प्रतिशत कर दी जाय। समिति ने कहा है कि प्राविडेन्ट फण्ड की योजना को पेन्शन योजना में बदलने में अभी कुछ समय लगेगा परन्तु प्राविडेन्ट फण्ड के चन्दे की दर को एक दम बढ़ा देना चाहिये।

समिति ने यह माना है कि मजदूरों को काम पर से हटा देने अथवा काम छोड़ने का स्थायी इलाज यह है कि मजदूरों को बेरोजगारी लाभ दिया जाय, क्योंकि इस प्रकार की योजना को इस समय कार्यान्वित नहीं किया जा सकता इस कारण समिति ने एक कम महँगा सुझाव दिया है। इसके अनुसार मालिकों पर यह जिम्मेदारी

होगी कि वे काम पर से हटाने की क्षतिपूर्ति दें। प्रस्तावित केन्द्रीय कानूनी सस्था पर भी कुछ बेरोजगारी लाभ देने की जिम्मेदारी होगी।

समिति ने कहा है कि दूसरे देशो मे सामाजिक बीमे की योजना का, मालिको का खर्च भारतवर्ष से कहीं अधिक है। समिति ने यह भी कहा है कि उसके सुझावों के कारण मिल मालिको पर बहुत अधिक बोझा नही पडेगा।

समिति के इन सुझावो पर विचार करने के लिये १६ मई १६५८ ई० को श्रम मन्त्रियो की एक सभा नैनीताल मे हुई।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारत सरकार मजदूरो के प्रति अपना कर्तव्य समझने लगी है। उसने अभी काम आरम्भ ही किया है। हम आशा करते हैं कि धीरे धीरे वह सामाजिक बीमे की योजना को लागू कर देगी।

Q 71. What are the factors that affect the efficiency of labour ? How far do you find them operating in India ?

प्रश्न ७१—श्रम की कार्य कुशलता पर किन बातों का प्रभाव पड़ता है ? आप उनको भारत मे कहाँ तक पाते हैं ?

श्रम की कार्य कुशलता का अभिप्राय—श्रम की कार्य-कुशलता का अभिप्राय है श्रमिक की सम्पत्ति उत्पन्न करने की शक्ति। वह श्रम कुशल कहा जाता है जो एक दिऐ हुये समय मे या तो अधिक कार्य करे और अधिक कार्य भी करे और अच्छा भी करे। जब हम कहते हैं कि एक अमेरिका या इगलैंड का श्रमिक भारतीय श्रमिक की अपेक्षा अधिक कुशल है तो उसका यह अभिप्राय है कि वह भारतीय श्रमिक से अधिक तथा अच्छा काय करता है। उदाहरण के लिये १६२७ ई० मे एक भारतीय श्रमिक १२८ टन कोयला प्रति वर्ष खोद सकता था। परन्तु अमेरिका का श्रमिक उसी समय ६७७ टन कोयला खोद सकता था। १६२७ ई० के भारतीय टैरिफ बोर्ड ने भारतीय श्रमिक की कार्य-कुशलता का अनुमान इस प्रकार लगाया था—

देश	एक श्रमिक द्वारा देखे गये तकवे	एक जुलाहे द्वारा देखे गये करघे
सयुक्त राष्ट्र	११२०	६
इगलैंड	५४० से ६००	४ से ६
जापान	२४०	२½
भारत	१८०	२

इस उदाहरण से साफ पता चलता है कि भारतीय श्रमिक की कार्य-कुशलता दूसरे देशो के श्रमिको की कार्य-कुशलता से कम है।

श्रमिक की कार्य-कुशलता पर प्रभाव डालने वाली शक्तियां—

(१) **शारीरिक शक्ति**—कार्य करने के लिए शारीरिक शक्ति का बडा महत्व है। जो श्रमिक जितनी ही शारीरिक शक्ति लिये हुये होगा उतना ही वह अधिक कार्य कर सकेगा। दुर्बल श्रमिक शीघ्र ही थक जाता है और कार्य करने के योग्य नहीं

रहता। औद्योगिक दृष्टि से शारीरिक शक्ति का अनुमान करने के लिये हमको यह देखना चाहिये कि एक श्रमिक एक दिन में कितने घण्टे, एक वर्ष में कितने दिन तथा सारे जीवनकाल में कितने वर्ष कार्य कर सकता है। सभ्य देश की अपेक्षा पिछड़े हुए देशों में शारीरिक शक्ति अधिक होती है।

शारीरिक शक्ति निम्नलिखित बातों पर निर्भर होती है—

(अ) जलवायु—जलवायु का मनुष्य की शारीरिक शक्ति पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। गर्म देशों में मनुष्य की शारीरिक शक्ति कम होती है और वह थोड़े समय काम करके थक जाता है परन्तु ठण्डे देशों में वह बहुत अधिक समय तक कार्य कर सकता है।

(आ) जातीय गुण—मनुष्य की शारीरिक शक्ति बहुत कुछ जातीय गुणों पर भी निर्भर होती है। भारतवर्ष में जाट तथा राजपूत बड़े शक्तिशाली होते हैं। अंग्रेज अर्थशास्त्रियों का कहना है कि अंग्रेजी मजदूर भारतीय मजदूर की अपेक्षा इसलिए कार्यकुशल है क्योंकि उसमें शारीरिक तथा नैतिक कुछ ऐसे गुण होते हैं जो भारतीय श्रमिक में नहीं पाये जाते।

(इ) रहन-सहन का दर्जा—श्रमिक किस प्रकार का भोजन करता है, किस प्रकार के वस्त्र पहनता है तथा किस प्रकार के मकान में रहता है इस बात पर श्रमिक की शारीरिक शक्ति बहुत कुछ निर्भर होती है। जिन श्रमिकों को पर्याप्त मात्रा में भोजन मिलता है, जो पर्याप्त वस्त्र पहनते हैं तथा जो स्वच्छ हवादार मकान में रहते हैं वह शक्तिशाली होते हैं तथा अधिक समय तक कार्य कर सकते हैं। इसके विपरीत जो श्रमिक इस प्रकार की सुविधाओं से वंचित होते हैं वे दुर्बल होते हैं तथा अधिक कार्य नहीं कर सकते।

भारतीय श्रमिकों की शारीरिक शक्ति कम है क्योंकि भारतवर्ष की जलवायु गर्म है जिसमें श्रमिक अधिक समय तक कार्य नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त भारतीय श्रमिक का जीवन स्तर बहुत नीचा है। भारत में अधिकतर लोग ऐसे हैं जिनको न तो पर्याप्त मात्रा में भोजन ही मिलता है और न ही भोजन अच्छे प्रकार का होता है। उसको दूध, सागभाजी आदि नहीं मिलती। भारतवर्ष के एक व्यक्ति को प्रति दिन इतना खाना मिलता है जिससे केवल १८०० क्लोरीज गर्मी मिलती है परन्तु उसको कम से कम इतना मिलना चाहिये जिससे २६०० क्लोरीज गर्मी मिल सके। इसके विपरीत अमेरिका का एक व्यक्ति इतना भोजन करता है जिससे ३२०० क्लोरीज गर्मी उत्पन्न होती है। भोजन की कमी के अतिरिक्त भारत का एक व्यक्ति कुल १६.१ गज कपड़ा पहनता है जबकि अमेरिका का एक व्यक्ति ६४ गज कपड़ा प्रति वर्ष पहनता है। यही नहीं, भारत में श्रमिकों के पास रहने के लिये अच्छे मकान भी नहीं हैं। उनके मकान नीचे होते हैं, उनमें हवा तथा रोशनी भी नहीं जा सकती है। इसके अतिरिक्त एक मकान में बहुत से व्यक्ति रहते हैं। इन सब बातों के कारण भारतीय श्रमिक की शारीरिक शक्ति बहुत कम है।

(२) नैतिक गुण—श्रमिक की कार्य कुशलता उनके नैतिक गुणों पर भी बहुत कुछ निर्भर होती है। एक श्रमिक भले ही शक्ति रखता हो परन्तु यदि वह कार्य न करना चाहे तो वह बहुत कम काल करेगा। इसके विपरीत जो मजदूर सच्चा तथा ईमानदार होता है और अपने कर्तव्य को समझता है वह कमजोर होते हुए भी अधिक काम कर लेता है।

आजकल भारतवर्ष में श्रमिकों की कार्यकुशलता बहुत कुछ इसी कारण से कम है कि वह अपना कर्तव्य समझकर कार्य नहीं करते। वह अपना बहुत सा समय नष्ट कर देते हैं और उसी समय काम करते हैं जब कि उनको कोई देख रहा हो।

(३) मानसिक योग्यता (Intelligence Judgement and Imagination)—कार्यकुशलता शारीरिक शक्ति पर ही निर्भर नहीं होती वरन् वह श्रमिक की बुद्धि के विकास तथा उसकी योग्यता पर भी निर्भर होती है। वाकर (Walker) साहब ने कहा है कि योग्य श्रमिक अयोग्य की अपेक्षा अधिक लाभदायक होता है क्योंकि (अ) उसको काम सीखने में आधा, तिहाई अथवा चौथाई समय लगता है, (आ) उसको किसी काम के देखने वाले की आवश्यकता नहीं पड़ती, (इ) वह सामान को कम बर्बाद करता है, वह मशीन का प्रयोग, चाहे वह कितनी भी पेचीदा हो, शीघ्र ही सीख जाता है।

मानसिक योग्यता प्रकृति की देन होती है। परन्तु उसको शिक्षा द्वारा भी प्राप्त किया जा सकता है। यह शिक्षा साधारण तथा शिल्प (Technical) की होनी चाहिये। साधारण शिक्षा (General Education) से मनुष्य की मानसिक शक्ति का विकास होता है तथा प्रत्येक वस्तु को समझने, देखने, छाँटने व सीखने की योग्यता बढ़ती है। इसके विपरीत शिल्प शिक्षा (Technical Education) से मनुष्य की आँखें तथा उंगलियाँ निपुण हो जाती हैं और वह अधिक तेजी से कार्य करने लगता है।

भारतवर्ष मे दोनो प्रकार की शिक्षा का प्रायः अभाव सा है। भारत मे १६·६ प्रतिशत शिक्षित हैं और इनमें से भी बहुत से केवल बहुत कम पढ़ना लिखना जानते हैं। शिल्प शिक्षा तो कहीं-कहीं दी जाती है और जहाँ कहीं भी यह दी जाती है वह इतनी महँगी है कि साधारण साधनो के मनुष्य का तो यह साहस भी नहीं हो सकता कि वह उसको ग्रहण कर सकें। इसके अतिरिक्त शिल्प शिक्षा केन्द्रों मे विद्यार्थियों का दाखिला भी बड़ी कठिनाई से होता है। इसलिये भारतीय श्रमिक अयोग्य है तो इसमे कोई अचरज नहीं। १९५६–५७ मे सारे भारत मे केवल ३२८३ ऐसी संस्थायें थी।

(४) उन्नति और लाभ की आशा (Hopefulness, freedom and change)—इनके कारण मजदूर अपने कार्य मे दिल लगाकर काम करता है। इसके विपरीत यदि मजदूर को दास के रूप मे रक्खा जाय तथा उस पर अत्याचार

किया जाये तो वह अधिक कार्य न करेगा। इसके अतिरिक्त यदि मजदूर को इस बात की आशा होती है कि उसके काम के अनुसार उन्नति होती जायेगी तो वह खूब कार्य करता है जिससे कि उसकी शीघ्रातिशीघ्र उन्नति हो सके। इसके अतिरिक्त कार्य तथा दोस्तों के बदलने से मनुष्यो को नई बातें सीखने को मिलती हैं और उसमें कार्य करने की नवीन शक्ति आ जाती है। यदि कोई मजदूर एक ही स्थान पर बहुत समय तक रहे तो वह उकता जायेगा और कम कार्य करेगा।

(५) कार्य करने की साधारण परिस्थिति (General working conditions)—जिस प्रकार की परिस्थिति मे मजदूर कार्य करता है उसका भी उसकी कार्य कुशलता पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। जिन मिलो में सफेदी, रोशनी, सफाई, हवा आदि का ठीक प्रबन्ध है वहाँ पर मजदूर अधिक कार्य कर सकता है। वह स्वस्थ्य भी रहता है। परन्तु जिन मिलो में रोशनी आदि का प्रबन्ध नही होता तथा जहाँ मशीनो की अधिक गड़गड़ाहट रहती है वहाँ पर मजदूर बहुत कम काम कर सकता है। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि मजदूरो के लिये ठण्डे पानी का प्रबन्ध हो, उसको आराम करने के लिये स्थान तथा समय दिया जाये। उसके लिये डाक्टर, नर्स खेल कूद, मनोरंजन आदि का प्रबन्ध हो। इन बातों से उसकी कार्य कुशलता बहुत अधिक बढती है।

भारतवर्ष में इस दृष्टि से हालत बहुत खराब है। यहाँ पर कुछ समय पूर्व तक रोशनी, सफाई आदि का कोई विशेष स्थान नही रखा जाता था। रूई तथा जूट धुनने वाली फैक्ट्रियों मे तो कूड़ा करकट हर समय उड़ता रहता था इसलिये भारतीय मजदूर कुशल नही थे।

(६) मशीन, औजार आदि—श्रमिक की कार्य क्षमता पर मशीन व औजार आदि का भी प्रभाव पड़ता है। मशीन जितनी ही अच्छी होगी उसपर उतना ही अधिक कार्य हो सकेगा। यदि मशीन पुरानी व घिसी हुई होती है तो उस पर कार्य कम होता है।

भारतवर्ष के मजदूरो की कार्य-क्षमता इसलिए भी कम है कि यहाँ पर मशीन व औजार अच्छे नही हैं। जो मशीन यूरोप व अमेरिका मे पुरानी समझकर छोड़ दी जाती है उन्हीं से भारतवर्ष में काम लिया जाता है। ऐसी स्थिति मे भारतवर्ष के मजदूरो की कार्य क्षमता कैसे अधिक हो सकती है।

(७) काम के घण्टे व उनका वितरण—काम के घण्टे तथा उनके वितरण का भी कार्य कुशलता पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। यदि काम के घण्टे अधिक होते हैं तथा उनका वितरण ठीक नही होता तो मजदूर की कार्य क्षमता घट जाती है। परन्तु कम कार्य होने तथा उनका ठीक वितरण होने से उसकी कार्य-कुशलता बढ़ जाती है।

यूरोप तथा अमेरिका मे कार्य करने के घण्टे ६ या ७ हैं इसके विपरीत भारतवर्ष मे ८ या ९ हैं। अब से कुछ वर्ष पूर्व भारतवर्ष मे काम करने के घण्टे

१० या ११ थे। पाश्चात्य देशों मे कार्य करने के घण्टे इसलिये घटाये जा रहे हैं क्योंकि अब यह अनुभव किया जा रहा है कि यदि मजदूर से अधिक देर तक काम लिया जायगा तो उसको थकान हो जायेगी और वह कुछ घण्टे काम करने के पश्चात् अधिक काम न कर सकेगा।

(८) मजदूरी—मजदूरी मजदूर के जीवन-स्तर को निश्चित करती है। जिन मजदूरों को इतनी मजदूरी मिलती है कि उससे उनका तथा उनके कुटुम्ब का जीवन निर्वाह ठीक प्रकार से हो सकता है तो इन मजदूरों की कार्य कुशलता अधिक होती है। परन्तु जिन मजदूरों को इतनी कम मजदूरी मिलती है कि उससे उनका गुजारा *ठीक प्रकार नही होता तो उनकी कार्य-कुशलता कम होती है।* मजदूरों मे केवल रुपये पैसे के रूप में मिलने वाली मजदूरी ही सम्मिलित नही की जाती वरन् वह सब सुविधायें जो मजदूर को किसी पेशे में रहकर मिलती हैं, उनको भी मजदूरी मे सम्मिलित किया जाता है। दूसरे शब्दों में मजदूर की वास्तविक मजदूरी उसके जीवन निर्वाह के लिये पर्याप्त होनी चाहिये।

भारतवर्ष मे मजदूरों को बहुत ही कम मजदूरी मिलती है। युद्ध से पहले तो बहुत से मजदूरों को १० या १५ रुपये मासिक ही मजदूरी मिलती थी। ऐसा विचार किया जाता है कि भारतीय मजदूर को प्रायः दूसरे देशो के मजदूरों से कम मजदूरी मिलती है। ऐसी स्थिति मे वह कार्य-कुशल कैसे हो सकता है ?

(९) श्रम व्यवस्था (Organisation of Labour)—श्रम व्यवस्था पर भी कार्य-कुशलता निर्भर होती है। यदि मजदूर को उसकी योग्यतानुसार कार्य दिया जाता है तो वह अधिक कार्य कर सकता है। परन्तु यदि उसको एक गलत स्थान पर लगा दिया जाता है तो वह अधिक कार्य नही कर सकता।

(१०) मजदूर संघ (Trade Unions)—मजदूर संघ मजदूर की सौदा करने की शक्ति को बढाते हैं। वह मजदूरों को शिक्षा आदि भी देते हैं तथा उनकी बीमारी तथा बेरोजगारी मे सहायता करते हैं। इस प्रकार वह उनकी कार्य-कुशलता को बढाते हैं।

भारतवर्ष मे अभी तक मजदूर संघो ने बहुत कम उन्नति की है तथा अभी तक उनका काम हड़तालें कराकर मजदूरों की सहायता करना ही रहा है। इसलिये *मजदूर संघों से भारत के मजदूरों को कोई अधिक लाभ नही पहुँचा है।*

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारतीय मजदूर विशेष परिस्थितियों के कारण कार्य-कुशल नही हैं। यदि भारतीय मजदूर को उसी प्रकार की हालत मे रक्खा जाये जिसमे कि यूरोप और अमेरिका का मजदूर रहता है तो उसकी भी कार्य-कुशलता बढ सकती है।

—०:*:०—

Q. 72. Discuss the causes of Industrial disputes in India. What measures have been taken to promote industrial peace in this country?

प्रश्न ७२—भारत मे औद्योगिक संघर्ष के कारण बताइये । इस देश मे औद्योगिक शान्ति को प्राप्त करने के लिये क्या कार्य किये गये हैं ?

औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् श्रम और पूंजी मे पहले जैसा निकटतम सम्बन्ध नही रहा । इस कारण एक दूसरे के दृष्टिकोण को समझने मे असमर्थ रहा तो फिर उनमे संघर्ष होना स्वाभाविक ही था । इसके फलस्वरूप मजदूर हड़ताल तथा उद्योगपति तालाबन्दी करते हैं । यह सघर्ष दो कारणों से होता है—(१) आर्थिक, (२) अनार्थिक ।

(१) आर्थिक कारण—इन कारणों में निम्नलिखित बातें सम्मिलित हैं—

(अ) कम मजदूरी—युद्ध काल में मजदूरों का जीवन स्तर महँगा हो जाता है जिसके कारण उनका काम पहली मजदूरी से नही चलता । मिल मालिक मजदूरों के बढ़ते हुए खर्च के अनुसार स्वयं इच्छा से मजदूरी नही बढ़ाता । इसलिये मजदूरो को मजदूरी बढ़वाने के लिये संघर्ष करना पड़ता है ।

(आ) कार्य करने के लिये असन्तोषजनक परिस्थिति—कभी-कभी मिल मालिक मजदूरो के लिये सफाई, पीने का पानी, आरामगाह, हवा, रोशनी आदि का प्रबन्ध नही करता । कभी-कभी मजदूर इन सब सुविधाओं को प्राप्त करने के लिये संघर्ष करते हैं ।

(इ) नौकरी की अनिश्चितता—कभी कभी मिल मालिक मजदूरों को किसी समय नौकरी से अलग करने का अधिकार अपने अन्दर सुरक्षित रखता है जिसके फलस्वरूप वह मजदूर को किसी समय भी अलग कर देता है । अभिनवीकरण के समय तो ऐसा हो ही जाता है । इस प्रकार से अलग किये जाने के विरुद्ध मजदूर संघर्ष करते हैं ।

(ई) अधिक काम के घण्टे—पहले मजदूरों से बहुत अधिक घण्टों तक काम लिया जाता था परन्तु अब उनको घटाकर ४८ घण्टे प्रति सप्ताह कर दिया गया है । इसके अतिरिक्त मिल मालिक समय के पश्चात् भी काम लेते रहते हैं जब कभी मजदूरों के काम करने के घण्टे अधिक होते हैं तब मजदूरों व मालिकों में संघर्ष होना स्वाभाविक है ।

(उ) बोनस आदि के कारण—कभी-कभी मिल मालिक अत्यधिक लाभ कमाकर उस सबको स्वयं हजम करने का प्रयत्न करता है । मजदूर जानते हैं कि यह लाभ उनके परिश्रम के कारण ही कमाया गया है । इसलिये वे इस लाभ को प्राप्त करने के लिये संघर्ष करते हैं ।

(२) अनार्थिक कारण—इसमें निम्नलिखित कारण सम्मिलित हैं—

(अ) राजनैतिक—बहुत सी हड़तालें राजनैतिक होती हैं । जब देश में कोई

राजनैतिक क्रान्ति होती है अथवा इसी प्रकार का कोई सघर्ष होता है तो मजदूर उसकी सहानुभूति में काम बन्द कर देते हैं।

(आ) मजदूरों में जागृति उत्पन्न होना—मिल मालिक मजदूरो को बहुत समय तक अनुचित ढग से दबाकर नही रख सकता। कुछ समय पश्चात् उनमे जागृति उत्पन्न होती है। जागृति का उत्पन्न होना देश मे सभ्यता के विकास पर भी निर्भर होता है। चाहे जिस ढग से भी हो जब मजदूरो मे जागृति पैदा हो जाती है तो वे अपने अधिकारो को समझने लगते हैं और उनके लिए संघर्ष करते हैं।

(इ) मजदूर संघ की उन्नति—मजदूर सघो की उन्नति से मजदूरो की सौदा करने की शक्ति बढ़ जाती है और फिर वे अपने अधिकारो के लिये अधिकाधिक सघर्ष करते हैं।

भारतवर्ष मे औद्योगिक सघर्ष—

प्रथम महायुद्ध से पूर्व हमारे देश मे हडतालें बहुत कम होती थीं। परन्तु युद्ध काल में मजदूरो मे बडी जागृति पैदा हो गई तथा उनका जीवन-स्तर बढ गया जिसके कारण युद्ध समाप्त होते-होते इस देश मे बहुत सी हडतालें हुईं। १६२१ मे ३७६ हडतालें हुईं। उसके पश्चात् उनकी सख्या कुछ कम हो गई और १६२४ और १६३६ ई० के बीच उनकी प्रतिवर्ष की औसत सख्या १४७ रही। परन्तु द्वितीय महायुद्ध के कारण स्थिति मे फिर बदल आई और १६३६ ई० में ४०६ हडताले हुईं। उसके पश्चात् भी हडतालो की सख्या बढती रही। यह सख्या १६४० मे ३२२, १६४१ में ३५६, १६४२ में ६६४, १६४३ मे ७१६, १६४४ में ६५८, १६४५ मे ८२०, १६४६ मे १६२६, १६४७ मे १८११ तथा १६४८ मे १२५६ थी। उसके पश्चात् इनकी सख्या कुछ घटने लगी और १६४६ में यह सख्या ६२४, १६५० मे ८१६, १६५१ मे १०६८, १६५२ में ६६० थी। सितम्बर १६५८ तक इनकी सख्या ६७० हो गई।

भारतवर्ष मे औद्योगिक सघर्ष के कारणो को देखने से पता चलता है कि १६२१ और १६२८ ई० के बीच ६७६ हडतालें मजदूरी व बोनस के कारण हुईं तथा ४४५ हडतालें हटाये हुये मजदूरो को फिर से रखवाने के लिये हुई। केवल ७४ हडतालें छुट्टी व काम करने के घण्टो से सम्बन्धित थीं। १६४८ मे जो हडतालें हुईं उनमे से ३८३ मजदूरी से, ११२ बोनस से, ३६३ मजदूरों के फिर से रखवाने से, ११० छुट्टी व काम करने के घण्टों से तथा शेष अन्य कारणो से सम्बन्धित थी। १६५० मे होने वाली हडतालो में से २८·६ प्रतिशत बोनस से, ८·६ प्रतिशत छुट्टी व काम करने के घण्टो से तथा शेष अन्य कारणो से सम्बन्धित थीं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भारतवर्ष में हडतालो के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं—

(१) मजदूरी, भत्ते व बोनस, (२) हटाये गये मजदूर, (३) काम करने के घण्टे व छुट्टी।

भारत मे संघर्ष को सुलझाने के ढग—

औद्योगिक संघर्ष को तीन प्रकार से सुलझाया जा सकता है—(१) मध्यस्थों द्वारा (Through arbitration)—अहमदाबाद मे महात्मा गांधी की मध्यस्थता के कारण बहुत से झगडे सुलझ गये। (२) समझौते द्वारा (Through volantary conciliation)—इस प्रकार के समझौते श्रमिको और मालिको के प्रतिनिधियों के बीच होते हैं। इगलैंड मे ह्विटले समितियां इसी प्रकार से झगडे तय करती हैं। भारत मे भी इस प्रकार प्रयत्न किया जा रहा है। (३) अनिवार्य समझौते द्वारा (Through compulsory settlement)—इस प्रकार के झगडे सरकार द्वारा नियुक्त किये गये न्यायालयो द्वारा तय होते हैं।

भारतवर्ष मे इस प्रकार के झगडो को सुलझाने के लिये १९२९ ई० मे एक एक्ट पास किया। इसके अनुसार जब झगडा करने वाला कोई पक्ष सरकार को झगडा सुलझाने के लिये प्रार्थना-पत्र देता था तो एक जाँच अदालत (Court of Enquiry) तथा समझौता समिति (Board of Conciliation) की नियुक्ति कर दी जाती थी। परन्तु इनकी खोज व निर्णय को मानना किसी भी पक्ष के लिये अनिवार्य न था। इसलिये इस एक्ट से कोई विशेष लाभ न हुआ। इसी कारण १९३८ ई० मे बम्बई मे एक कानून पास किया गया जिसके अनुसार हडताल अथवा तालाबन्दी घोषित करने से पूर्व झगडे की जाँच हो जानी अनिवार्य थी। कुछ राज्यो मे मजदूर व पूँजीपतियो के सम्बन्धों को अच्छा बनाने के लिए समझौता अधिकारी (Conciliation Officer) नियुक्त किये गये। युद्ध काल मे आवश्यक सेवाओ वाले उद्योगो के झगडो को अनिवार्य रूप से सुलझाने का प्रबन्ध किया गया।

युद्ध समाप्त होने पर औद्योगिक झगडो की सख्या बहुत बढ गई। ऐसी दशा मे भारत सरकार ने १९४७ ई० मे औद्योगिक सघर्ष एक्ट पास किया जिसमे पहले १९४९ मे फिर १९५० मे तथा उसके पश्चात् १९५६ मे सशोधन किया गया। १९४७ के एक्ट की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं—

(१) प्रत्येक उद्योग जिसमे १०० अथवा अधिक आदमी काम करते हैं एक श्रम समिति (Works Committee) का निर्माण करेगा जिसमें श्रमिको तथा अधिकारियो के प्रतिनिधि होगे। समिति दोनो के बीच अच्छे सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करेगी।

(२) बहुत से समझौता अधिकारी (Conciliation Officers) नियुक्त किये जायेगे और ये झगडे की जाँच करके उसको निबटाने का प्रयत्न करेंगे।

(३) झगडा प्रारम्भ होने पर सरकार एक समझौता बोर्ड नियुक्त कर सकती है जिसमे कि एक स्वतन्त्र अध्यक्ष तथा प्रत्येक पक्ष के एक या दो प्रतिनिधि होगे।

(४) सरकार झगडे की जांच कराने के लिये एक जाँच अदालत (Court of Enquiry) भी नियुक्त कर सकती है जिसमे स्वतन्त्र व्यक्ति होगे।

(५) अनिवार्य रूप से झगडे का निबटारा कराने के लिये सरकार एक औद्योगिक न्यायालय भी स्थापित कर सकती है जिसमे एक या दो हाईकोर्ट अथवा जिला अदालत के जज होगे।

(६) यदि समझौता बोर्ड अथवा अफसर द्वारा कोई झगडा तय हो जाता है तो वह दोनो पक्षो पर लागू होगा। जांच अदालत की रिपोर्ट मानना किसी भी पक्ष के लिये आवश्यक नही है परन्तु इस रिपोर्ट को सरकार जनता की सूचना के लिये छापेगी। परन्तु औद्योगिक न्यायालय का निर्णय दोनो पक्षो को मानना पडेगा।

(७) निम्नलिखित हडताले अथवा तालेबन्दी अवैध घोषित की गई हैं—

(अ) लोकहित सेवाओ वाले उद्योगो मे यदि छ सप्ताह का नोटिस न दिया गया हो।

(आ) उस समय, जबकि कोई झगडा समझौता बोर्ड अथवा औद्योगिक न्यायालय के सामने पेश हो।

(इ) यदि सरकार ने किसी झगडे को बोर्ड, अदालत अथवा न्यायालय को सौंप रक्खा हो और सरकार ने उस समय तक के लिए हडताल को अवैध घोषित कर दिया हो जब तक कि मामले की जांच हो।

(८) वे लोग जो अवैध हडतालो मे सम्मिलित होगे अथवा ऐसी हडतालो को आर्थिक सहायता प्रदान करेंगे उनको दण्ड दिया जायगा। किसी भी मजदूर को उस समय तक नही हटाया जा सकता जब तक कि मामला समझौता बोर्ड के पास है।

१९५० ई० मे एक एक्ट पास किया गया जिसके अनुसार एक श्रम अपील न्यायालय नियुक्त करने का प्रबन्ध किया गया है। इसमे हाईकोर्ट के जज होगे। इस न्यायालय के सामने औद्योगिक न्यायालयो, जांच दरबारो, मजदूरी बोर्ड के फैसले की अपील होगी। इस न्यायालय का फैसला अन्तिम होगा और दोनो पक्षों पर लागू होगा।

१९५१ ई० मे सरकार ने एक श्रम सम्बन्ध विधेयक, (Labour Relations Act) पास किया जिसमे इस बात पर जोर डाला गया कि झगडे को सुलझाने के लिये आन्तरिक और बाह्य दोनो प्रकार की मशीनरी होनी चाहिये। इसके अनुसार सरकार कई प्रकार के अफसर व न्यायालय स्थापित कर सकती है। इस विधेयक के अनुसार रजिस्ट्री करने वाले कर्मचारी नियुक्त किये जायेंगे जिसके पास मिल मालिक अपनी आज्ञाओं की प्रतिलिपियां भेजेंगे। श्रमिको की बातें सुनने के पश्चात् उन आज्ञाओं मे बदल की जा सकती है।

जब कोई झगडा हो या होने की सम्भावना हो तो कोई भी पक्ष दूसरे को झगडा निबटाने के लिए एक नोटिस दे सकता है। साधारण उद्योगो मे यह झगडा ७ दिन में तथा लोकहित उद्योगो मे १४ दिन मे निबट जाना चाहिये। यदि झगडा न निबटे तो सरकार इसे बोर्ड को अथवा न्यायालय को सौंप सकती है यदि फिर भी

कोई समझौता न हो तो इसकी रिपोर्ट सरकार को दी जायेगी। अपील करने के लिये सबसे ऊँचा न्यायालय अपील न्यायाल (Appellate Tribunal) है। परन्तु सरकार इस न्यायालय के निर्णय को भी बदल सकती है।

नियम विरुद्ध हडताल करने या ताला बन्द करने के लिये भडकाना एक अपराध बना दिया गया है। जो मजदूर नियम विरुद्ध हडतालो मे भाग लेंगे उनको हडताल के समय अपनी मजदूरी, छुट्टी, बोनस आदि नहीं मिलेंगे। नियम विरुद्ध मिल बन्द करने वाले मालिक को सामान्य मजदूरी के दुगुने तक देने के लिये कहा जा सकता है।

यदि कोई श्रम-सघ समझौते की शर्तों को न मानेगा तो उसकी मान्यता (Recognition) रोकी जा सकती है। स्थायी मजदूर को काम पर से हटाने से पूर्व उसको अपने व्यवहार का स्पष्टीकरण करने का अवसर दिया जायेगा। फालतू मजदूरो को हटाने के लिये भी एक महीने के नोटिस की आवश्यकता है।

इस विधेयक मे मजदूरो का झगडा करने का अधिकार स्वीकार किया गया है परन्तु वे उस समय हडताल न कर सकेंगे जबकि कोई मामला विचाराधीन हो। धीरे-धीरे काम करने की नीति, सहानुभूति की हडताल, तथा लोकहित व्यवसायो में हडताल नियम के विरुद्ध घोषित कर दी गई है। यदि हडताल नियम के विरुद्ध न हो तो मजदूरो को औसत मजदूरी का ½ मिलेगा।

आपसी समझौता करने के प्रोत्साहन देने के लिये अधिकृत सौदा करने वाले एजेण्ट (Certified bargaining agents) की व्यवस्था की गई। आपसी समझौता न होने होने पर मध्यस्थ निर्माण (Arbitration) स्वीकार करना पडेगा। नियम को भग करने वाले को दण्ड दिया जायेगा।

उचित कारणो से छटनी (Retrenchment) करने पर मजदूरो को प्रति एक वर्ष नौकरी के पीछे आधे महीने की मजदूरी उपहार के रूप मे देनी पडेगी। मजदूरी मे भत्ता भी सम्मिलित होगा।

औद्योगिक सघर्ष सशोधित एक्ट १९५६ के अनुसार अब तीन प्रकार के ट्रेबूनल नियुक्त किये जायेंगे। श्रम अदालत, औद्योगिक ट्रेबूनल तथा राष्ट्रीय ट्रेबूनल। श्रम दरबार का कार्य छोटे-छोटे मामलो को सुलझाना होगा। औद्योगिक ट्रेबूनल का कार्य मजदूरी तथा भत्ते, कार्य करने के घण्टे, छुट्टी तथा बन्दी तथा बोनस आदि महत्वपूर्ण मामलो को सुलझाना होगा। राष्ट्रीय ट्रेबूनल को केन्द्रीय सरकार उन झगडो को सुलझाने के लिये नियुक्त करेगी। जो राष्ट्रीय महत्व के हैं तथा जो एक से अधिक राज्यो पर प्रभाव डालते हैं।

त्रिगुट सम्मेलन (Tripartite Conference)—

देश मे एक अच्छा वातावरण पैदा करने के लिये सरकार ने यह सोचा कि यदि श्रमिक अधिकारी तथा सरकार के प्रतिनिधि समय-समय पर एकत्र होकर उद्योगो से सम्बन्धित समस्याओ पर विचार करते रहें और उन्हे हल करने का

प्रयत्न करें तो उससे उद्योगो की समुचित उन्नति होगी। इस भावना को लेकर सरकार ने दिसम्बर १६४७ ई० मे एक ऐसे सम्मेलन का आयोजन किया जिसमे सर्व सम्मति से एक प्रस्ताव पास किया गया जिसको औद्योगिक विराम सन्धि (Industrial Truce) कहते हैं। इस सन्धि मे कहा गया है कि देश की वर्तमान परिस्थिति के लिये औद्योगिक उत्पादन अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु यह श्रमिको तथा मिल मालिको के सहयोग बिना नही हो सकता। यह सहयोग तभी प्राप्त हो सकता है जबकि मजदूर व मालिक एक दूसरे के महत्व को समझेंगे तथा मिल-जुलकर अपनी समस्याओं को हल करेंगे। भारत सरकार ने यह प्रस्ताव स्वीकार करके अप्रैल १६४८ से इसे अपनी नीति का एक प्रमुख अंग बना लिया है।

भारत में आजकल त्रिगुट सम्मेलन भारतीय श्रम कान्फ्रेंस, स्टैंडिंग श्रम समिति तथा बहुत सी औद्योगिक तथा सलाह देने वाली समितियाँ हैं।

इसके फलस्वरूप बहुत से झगडे आपस मे तय हो गये हैं। १६५५ ई० मे अहमदाबाद टैक्सटाइल उद्योग में बोनस के मामले पर हुये एक झगडे को इसी प्रकार तय किया गया। यह भी निर्णय किया गया कि भविष्य मे भी सब झगडे आपसी बातचीत से तय किये जायेंगे। यदि ऐसे झगडा तय न हो तभी उसको मध्यस्थ द्वारा तय किया जायगा। बम्बई टैक्सटाइल उद्योग मे भी बोनस के मामले को इसी प्रकार सुलझाया गया है। इसके अतिरिक्त इस बात का भी प्रयत्न किया जा रहा है कि उन कारणो का पता लगाया जाय जिनके कारण झगडे होते हैं तथा उन सब मामलो पर झगड़ो को दूर करने का प्रयत्न किया जाय।

बागान, सूती टैक्सटाइल, कोयला, सीमेंट, चमडा, निर्माण आदि उद्योगो मे त्रिगुट समितियाँ हैं जिनका कार्य सलाह देने का है। परन्तु इनके द्वारा औद्योगिक शान्ति प्राप्त करने मे बडी सहायता मिली है। हाल ही मे पास किये गये बहुत से श्रम सम्बन्धी कानून इन समितियो के द्वारा विचारे जा चुके हैं। औद्योगिक समितियो के अच्छे कार्य से प्रभावित होकर ही सरकार दूसरे उद्योगो मे भी इसी प्रकार की समितियाँ स्थापित करने की बात सोच रही है। राज्य सरकारो ने भी इसी प्रकार की बहुत सी समितियाँ स्थापित की हैं।

आपसी सलाह मशवरे को प्रोत्साहन देने के लिये उन सब कारखानो मे जिनमे १०० अथवा अधिक मजदूर काम करते हैं वर्क्स समितियाँ बनानी पडती हैं। १६५० में इनकी सख्या लगभग ११०० थी। परन्तु १६५६ में उनकी सख्या लगभग दुगुनी थी। इनके अतिरिक्त उत्पादक समितियाँ, दुर्घटना रोकने वाली समितियाँ भी बहुत से उद्योगो में पाई जाती हैं।

इनके अतिरिक्त द्वि-गुट आधार पर भी कुछ समितियाँ स्थापित की गई हैं। १६५६–५७ मे ६४ ऐसी समितियाँ थीं जो कार्य-कुशलता को बढाने, बर्बादी के दूर करने, मशीनों तथा औजारो का उचित उपयोग करने आदि महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार करती हैं। इनसे बहुत से अच्छे परामर्श आये हैं।

पंचवर्षीय योजना तथा औद्योगिक शान्ति—

पंचवर्षीय योजना में यह बात मानी गई है कि श्रम व पूँजी के अच्छे सम्बन्धों के बिना आर्थिक उन्नति नहीं हो सकती। अतः यह आवश्यक है कि उत्पादन कार्य में मजदूर के महत्व को माना जाय। ऐसा कर के लिये मालिक व मजदूर में हर स्तर (Level) पर घनिष्ट सम्बन्ध हो।

मजदूर के संगठन करने के अधिकार को भी मान्यता दी गई है। इस कारण मजदूर संघों का स्वागत किया गया है। जहाँ तक हो झगड़े आपस में ही सुलझाने का प्रयत्न किया जाय परन्तु झगड़ा सुलझाने पर सरकार भी हस्तक्षेप कर सकती है।

संघर्ष से बचने के लिये यह आवश्यक है कि मजदूर व मालिकों के अधिकारों व कर्तव्यों के नियम बना दिये जायें। इस हेतु यह आवश्यक है कि मजदूरों को ऐसे आदेश दिये जायें कि वे किस प्रकार अपने झगड़े सुलझा सकते हैं। यह भी आवश्यक है कि उनको उद्योग की स्थिति के विषय में पूर्णरूप से सूचित रक्खा जाय। यदि नियमों में कोई बदल की जाय तो उसकी सूचना भी उनको दे दी जाय। यदि मजदूरों को किसी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता हो तो उनको मालिक को सूचित कर देना चाहिये। यदि कोई भी पक्ष सीधी कार्यवाही करे तो उसको दण्ड दिया जाय।

झगड़ों को सुलझाने के लिये कार्य समितियों (Works committees) के निर्माण के लिये भी कहा गया है। ये हर मिल में होंगी। उद्योग की सारी मिलों के झगड़ों को सुलझाने के लिये सामूहिक समितियाँ (Joint Committees) होंगी।

यदि कोई झगड़ा समझौते से तय न होगा तो वह मध्यस्थ के द्वारा तय कराया जायगा। यदि कोई झगड़ा सारे भारतवर्ष से सम्बन्धित हो तो उसको सुलझाने के लिये एक केन्द्रीय न्यायालय (Central Tirbunal) की स्थापना करनी चाहिये।

इस प्रकार इस बात की आवश्यकता है कि श्रम व उद्योगपतियों के झगड़ों को पूर्ण रूप से समाप्त न किया जा सके तो उनको कम जरूर कर दिया जाय। औद्योगिक दृष्टि से उन्नत देशों में मजदूरों के संगठन इतने शक्तिशाली हैं कि वे मिल मालिकों से बराबरी के आधार पर बात-चीत करते हैं। इस कारण उनमे मुकदमेबाजी व अनिवार्य समझौते बहुत कम होते हैं। परन्तु भारतवर्ष में इस प्रकार की बात नहीं है। इसी कारण इस बात की आवश्यकता है कि जहाँ तक हो सके अनिवार्य समझौते की नौबत न आये वरन् मजदूर व मिल मालिक अपने झगड़े स्वयं तय करें। ऐसा करने से मजदूर संघों की शक्ति बढ़ेगी तथा मिल मालिक उत्पत्ति की दृष्टि से हानि न उठा सकेंगे।

भारत मे यातायात के साधन

यातायात के साधनों का महत्व—यातायात के साधनो में रेलो, सडकों, जल तथा हवा वाले साधनो को सम्मिलित किया जाता है। इन साधनो की उन्नति ने ससार की कायापलट ही कर दी है। जब से ये उन्नत हुये हैं तब से ससार का एक देश दूसरे देश के निकट आ गया है। इसका प्रभाव यह हुआ कि ससार मे सभ्यता का विकास हुआ, उद्योग धन्धो, कृषि तथा व्यापार की उन्नति हुई। वास्तव मे यदि इन साधनो की उन्नति न होती तो ससार मे व्यापार तथा उद्योग धन्धो की इतनी उन्नति न हो पाती। यह बात इन साधनो का महत्व बताने मे पर्याप्त मालूम पडती है। अब हम भारत के यातायात के साधनों के सम्बन्ध मे विचार करेंगे।

रेल यातायात

Q. 73 Give a connected account of the railway development in India.

प्रश्न ७२—भारतवर्ष मे रेलों के विकास का क्रमबद्ध इतिहास दीजिए।

भारतवर्ष मे रेल बनाने का प्रस्ताव सबसे पहले १८४४ मे किया गया। इसी कारण कलकत्ता तथा बम्बई के पास दो छोटी रेलें बनाने का ठेका दिया गया। परन्तु इस देश मे रेलो की स्थापना ठीक प्रकार से १८५३ के पश्चात् हुई जबकि लार्ड डलहौजी ने कोर्ट ऑफ डाइरेक्टर्स को लिखा कि 'भारत मे अंग्रेजी राज्य के प्रसार के लिये यह आवश्यक है कि यहाँ रेलो की स्थापना की जाय'। डाइरेक्टर्स ने डलहौजी के इस सुझाव को स्वीकार कर लिया। इसी कारण १८५४ तथा १८६० के बीच आठ कम्पनियो को पुरानी गारन्टी के अनुसार रेलें बनाने का काम दिया गया। सरकार और कम्पनियो के बीच जो शर्तें तय हुई वे इस प्रकार थी—(१) बिना पैसा लिये भूमि दी जाय, (२) ५ प्रतिशत ब्याज की गारटी, (३) इसके साथ यह तय किया कि कम्पनियो के बीच अपने अत्याधिक लाभ (जो पिछले न दिये हुये गारन्टी ब्याज को काटकर बचे) का आधा भाग सरकार को दे, शेष आधा भाग हिस्सेदारो मे बाँटे, (४) सरकार ने रेलवे कर्मचारियो की नियुक्ति के अतिरिक्त कुछ विशेष मामलो मे देख-भाल करने की शक्ति अपने हाथ मे रक्खी (५) सरकार ने अपने हाथ मे यह अधिकार ले लिया कि वह २५ अथवा ५० वर्ष पश्चात् रेलो को ब्याज सहित मोल ले ले।

रेल बनाने का यह ढग अच्छा सिद्ध नही हुआ। इस ढग मे कम्पनियो को सावधानी से काम करने की कोई आवश्यकता न थी क्योंकि उनको तो गारन्टी

किया हुआ सूद मिलता था। इसका परिणाम यह हुआ कि सरकार को इन कम्पनियों को बहुत भारी धन की मात्रा ब्याज के रूप मे देनी पडी। सन् १८६६ मे सरकार ने रेल बनाने के इस ढग का विरोध किया।

१८६६ तथा १८७६ के बीच मे सरकार ने रेलें बनाने का कार्य स्वय अपने हाथ मे ले लिया। जहाँ तक व्यय का सम्बन्ध था वहाँ तक तो सरकार को रेलें बनाने मे लाभ था पर सरकार के सामने सबसे बडी कठिनाई पूँजी की थी। इस समय सरकार अफ़गानो के साथ लडाई लड रही थी तथा देश में भीषण अकाल पड रहे थे, तथा रुपये का मूल्य, चाँदी का मूल्य गिरने के कारण लगातार गिर रहा था। इसके अतिरिक्त १८८० के अकाल कमीशन ने यह सुझाव दिया कि सरकार को चाहिये कि वह ५००० मील लम्बी रेलें बनायें तथा उसने यह भी बताया कि देश अकाल से उस समय तक सुरक्षित नही रह सकता जब तक कि २०,००० मील लम्बी रेल न बनें। यह कार्य सरकार की शक्ति के बाहर था। इसी कारण सरकार ने फिर कम्पनियों को रेलें बनाने का ठेका दिया। इस बार कम्पनियो से जो रेलें बनाने का समझौता किया गया उसकी शर्तें पहले से कुछ ढीली थीं। यह शर्तें निम्नलिखित थी—

(१) इस बार रेलें प्रारम्भ से भारत मन्त्री की सम्पत्ति घोषित कर दी गई। भारत मन्त्री को यह अधिकार था कि वह २५ वर्ष पश्चात् अथवा उसके पश्चात् हर दस वर्ष के पीछे रेलो को उनमे प्रारम्भ में लगी हुई पूँजी देकर मोल ले लें।

(२) रेलो पर लगी हुई पूँजी पर ३½ प्रतिशत ब्याज गारन्टी किया गया।

(३) इस बार सरकार ने अतिरिक्त लाभ (Surplus Profit) मे से ¾ भाग लेने की घोषणा की।

इस प्रकार सरकार ने कम्पनियों को पहले से कम सुविधायें दी। जब पुरानी कम्पनियों के ठेके की अवधि समाप्त हो गई तब सरकार ने उनको अपने हाथ मे ले लिया। इसी प्रकार जब नई कम्पनियो के ठेको की अवधि समाप्त हुई तब सरकार ने उनको दी जाने वाली बहुत सी सुविधाएँ वापिस ले ली।

इस बीच ब्रांच लाइन कम्पनियाँ बनाई गई और रियासतों को भी इस बात का नियन्त्रण दिया गया कि वे अपनी रियासतो मे ब्रांच लाइनें बनायें।

यद्यपि १६०० ई० तक मुख्य रेलवे लाइनें पूरी हो चुकी थीं परन्तु अभी अन्य छोटी ब्रांच लाइनों की बडी आवश्यकता थी। १६०५ मे एक रेलवे बोर्ड बनाया गया जिसमे एक अध्यक्ष तथा दो सदस्य थे। १६०८ मे मैके समिति ने इस बात पर जोर दिया कि सरकार को रेलो के लिए प्रतिवर्ष १,३५,००,००० रुपये खर्च करने चाहियें। यद्यपि सरकार ने इस सुझाव को पूरे तौर पर नहीं माना तो भी सरकार रेलों के ऊपर पहले से अधिक खर्च करने लगी, इस प्रकार रेलें बढने लगी। वे १६०१ में १४७५२ मील से बढकर १६१४ मे ३४,६५६ मील हो गईं। सन् १६०० तथा १६१४ के बीच मे रेलो ने सबसे पहले लाभ कमाया।

युद्धकाल मे हमारे देश की रेलो के ऊपर बहुत जोर पड़ा। इस बीच विदेशो से इन्जन आदि न मँगाये जा सके। इस कारण रेलो के निर्माण की नई योजनाओ को स्थगित करना पड़ा। नई लाइनो की स्थापना की बात तो दूर रही, बहुत सी पुरानी लाइनो को भी चालू न रक्खा जा सका। यहाँ के रेलवे कर्मचारियो को विदेशो को भेज दिया गया। बहुत से पुल इतने खराब हो गये कि उन पर गाडियो का चलना खतरे से खाली न था। इस प्रकार रेलो की व्यवस्था मे बडी गडबडी हुई। सन् १९२१ मे एक्वर्थ समिति (Acworth Committee) नियुक्त की गई। इस समिति ने यह सुझाव पेश किया कि सरकार को रेलो को अपने अधिकार मे ले लेना चाहिए तथा रेलवे बजट को साधारण बजट से अलग दे देना चाहिए। सरकार ने इन दोनो बातो को मान लिया। उसने एक के पश्चात् दूसरी लाइनों को अपने हाथ में लेना शुरू किया। इस प्रकार उसने प्राय सभी रेलो को अपने अधिकार मे ले लिया। सन् १९२४ से रेलवे बजट अलग पेश किया जाने लगा।

सन् १९२९–३० तक रेलें लाभ कमाती रही। परन्तु उसके पश्चात् जो मदी (Depression) आई उसमे रेलो को बहुत हानि हुई। इसी बीच सरकार ने रेलो की स्थिति को सुधारने के लिये दो समितियाँ नियुक्त की—(१) पोप समिति तथा (२) वेजवुड समिति। इन समितिया ने रेलो की आर्थिक स्थिति को सुधारने तथा उनको ठीक प्रकार से चालू रखने के लिए बहुत सुझाव दिये।

सन् १९३९–४५ के युद्ध के आरम्भ मे रेलो की स्थिति बहुत अच्छी थी। पर जैसे-जैसे युद्ध का दबाव पडा वैसे वैसे ऐसा प्रतीत होने लगा कि रलें युद्ध की मांग को पूरा न कर सकेंगी। जापान के युद्ध मे आने के पश्चात् समुद्री तटो का व्यापार असम्भव हो गया और तब यातायात का सारा भार जिसमे मुख्यत कोयले को ढोना था, रेलो पर पड गया। इस प्रकार जनता के लिये रेल के डिब्बो का अभाव बढ गया।

युद्धकाल में रेलवे के अधिक कुशल शिल्पियो को अस्त्र शस्त्र बनाने के काम मे लगा दिया गया। १९४२ मे युद्ध यातायात समिति (War Transport Board) का निर्माण किया गया। इसमे रलवे विभाग भी सम्मिलित था। इस वर्ष भयानक बाढ, तूफान तथा क्राति के कारण कई रेलवे लाइनें टूट गई। इसी समय केन्द्र मे केन्द्रीय यातायात सघ (Central Transport Organisation) तथा प्रान्तो मे प्रादेशिक यातायात बोर्ड (Provincial & Regional Transport Boards) की स्थापना की गई। इन समितियो का कार्य यातायात के अन्य साधनो का सगठन कर रेलो के यातायात सम्बन्धी भार को कम करना था। इसी समय प्राथमिकता की पद्धति (Priority System) का भी श्रीगणेश किया गया। अनावश्यक यातायात को बन्द कर दिया गया। सस्ते किराये आदि की जो भी सुविधायें थी उनको हटा लिया गया। मुसाफिर गाडियो मे कमी कर दी गई। इससे मुसाफिरो की कठिनाई

और भी बढ गई। परन्तु जहाँ रेलो पर इतना भार पड़ा वहाँ रेलो की आर्थिक स्थिति बहुत सुधर गई। रेलो ने इस समय न केवल युद्ध के पूर्व के घाट को ही पूरा कर लिया वरन् उन्होने बहुत सा लाभ भी कमा लिया।

१९४७ में देश का विभाजन हुआ। इसके कारण बहुत से कर्मचारी जो मुसलमान थे पाकिस्तान चले गये। इसी वजह से रेलवे कर्मचारियो की बहुत कमी हो गई और रेलो को बहुत हानि उठानी पड़ी। परन्तु धीरे धीरे ये कठिनाइयाँ भी दूर हो गईं। सन् १९४६ तक रेलो की स्थिति कुछ सुधर गई। गाडियो के डिब्बो की बनावट मे परिवर्तन किया गया। मुसाफिरो के आराम के लिये प्रयत्न किया गया। गाडियो की प्राथमिकता पद्धति को समाप्त कर दिया गया।

१९५० मे जब सरकार के हाथ में सब रेलें आ गईं तब सरकार ने कुछ छोटी, हल्की गाडियो को छोडकर समस्त रेलो को सात बड़ वृत्तो (Zones) में बाँटा जिससे कि रेलवे प्रबन्ध मे कुशलता की वृद्धि के साथ ही साथ आर्थिक लाभ भी हो।

ये वृत्त निम्नलिखित हैं —

प्रथम वृत्त (First Zone) उत्तरी रेलवे—इसका १४ अप्रैल १९५२ को निर्माण किया गया। इस वृत्त म उत्तरी भाग की रेल हैं जिसमे ई० पी० रेलवे, ई० आई० रेलवे का पश्चिमी विभाग (लखनऊ, कानपुर, देहली व लखनऊ), बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे का आगरा से कानपुर वाला भाग तथा छपरा के पश्चिमी भाग मे अवध तिरहुत रेलवे सम्मिलित हैं। इसकी लम्बाई ६३६८ ४० मील है।

द्वितीय वृत्त (Second Zone) पश्चिमी रेलवे—इसका ५ नवम्बर १९५१ को निर्माण किया गया। इस वृत्त मे बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे के कानपुर से आगरे वाले भाग को छोडकर शष भाग तथा सौराष्ट्र, बीकानेर, जयपुर, राजस्थान व कच्छ राज्यो की रेलें सम्मिलित हैं। इसकी लम्बाई ६०५७ ६१ मील है।

तृतीय वृत्त (Third Zone) केन्द्रीय रेलवे—इसका ५ नवम्बर १९५१ को निर्माण किया गया। इस रेलवे म बी० बी० एण्ड सी० आई रेलवे का बडा गेज वाला भाग, जी० आई० पी० रेलवे का अधिकाश भाग सिंधिया, तथा धौलपुर राज्यो की रेलें सम्मिलित हैं। इसकी लम्बाई ५३३० ५२ मील है।

चतुर्थ वृत्त (Fourth Zone) दक्षिण रेलवे—यह १४ अप्रैल १९५१ को निर्माण किया गया। इसमे दक्षिणी भारत की बडी-छोटी लाइनें, एम० एण्ड० एस० एम० रेलवे का अधिकाश भाग तथा मैसूर राज्य रेलवे का सम्पूर्ण भाग सम्मिलित है। इसकी लम्बाई ६१५६ ३६ मील है।

पचम वृत्त (Fifth Zone) उत्तरी पूर्वी रेलवे—यह १४ अप्रैल १९५२ ई० को निर्माण किया गया। इस रेलवे में लखनऊ, कानपुर के पूर्व का भाग, बगाल व बिहार का कोयले का क्षेत्र जिसमे बी० एन० रेलवे है। हावडा से सहारनपुर का भाग, छपरा से पूर्व की अवध तिरहुत रेलवे तथा आसाम रेल्वे सम्मिलित हैं। इसकी रेलवे लाइन की लम्बाई ३०६३ ५२ मील है।

षष्टम वृत्त (Sixth Zone) **पूर्वी रेलवे**—इसमें तीन उत्तर डिवीजन को छोड़कर सारी ईस्ट इण्डिया रेलवे है। इसका १ अगस्त १९५५ को निर्माण किया गया तथा इसकी कुल लम्बाई २३२४·६८ मील है।

सप्तम वृत्त (Seventh Zone) **दक्षिणी-पूर्वी**—यह भी १ अगस्त १९५५ को निर्माण किया गया। इसमे बगाल, नागपुर रेलवे आती है इसकी कुल लम्बाई ३४१९·४८ मील है।

अष्टम वृत्त (Eighth Zone) **उत्तरी पूर्वी सीमा रेलवे**—इसका निर्माण १५ जनवरी १९५८ से हुआ। इसकी लम्बाई केवल १७३८ मील है। इसका निर्माण रक्षा, व्यवस्था तथा कार्य मे बचत आदि कई बातो के कारण किया गया है।

रेलों के पुनर्वर्गीकरण के लाभ—

रेलो के पुनर्वर्गीकरण से निम्नलिखित लाभ होने की आशा है—

(१) हर एक वृत्त मे किराया भाडा समान हो जायेगा।

(२) रेलो की व्यवस्था करने का खर्च कम हो जायेगा क्योकि एक स्थान पर एक से अधिक कर्मचारी रखने की आवश्यकता न रहेगी।

(३) जकशनो आदि पर एक ही अधिकारी का नियन्त्रण रहेगा।

(४) कार्य क्षमता मे वृद्धि होगी क्योकि साधनो तथा शक्ति का अधिक से अधिक उपयोग हो सकेगा। रेलो का समय ठीक हो जायेगा। सुरक्षा सम्बन्धी बातो को शीघ्रातिशीघ्र काम मे लाया जा सकेगा और क्षतिपूर्ति की माँगो का निबटारा जल्दी हो सकेगा।

रेलो के पुनर्वर्गीकरण का कार्य अभी हाल ही मे सयुक्त राज्य (U. K) मे भी किया गया है और वहाँ इससे बहुत लाभ हुआ है। भारत मे भी इसका कोई विशेष विरोध नही है।

पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत रेलें—

देश की प्रथम पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत रेलो के लिये ४०० करोड रुपये रक्खे गये है जिनमे २२० करोड रुपये की रकम स्वय रेलो से प्राप्त होनी थी। इस काल मे रेलो का वास्तविक खर्च ४०० करोड से बढकर ४२३ ७३ करोड हुआ। इस योजनाकाल मे ४३० मील लम्बी खराब रेल की लाइन को दुबारा ठीक किया गया। ३८० मील लम्बी नई रेल की लाइन बनाई गई तथा ४६ मील लम्बी छोटे गेज की रेल मीटर गेज मे बदली गई। योजनाकाल के अन्त मे ४५३ मील नई रेल की लाइन बन रही थी, ५२ मील को चौडे गेज में बदलने की योजना थी तथा २००० मील लम्बी रेल की लाइन का सर्वे चल रहा था।

इस काल मे हमारे देश मे रेल के डिब्बे व इजन भी बनाये गये। भारत ने अब यह निश्चय किया है कि वह रेल के डिब्बे विदेशो से नही मँगायेगा। जब चितरजन व टाटा के कारखाने मे पूरे वेग से काम होने लगेगा तब भारत विदेशो से रेल के इजन भी नही मँगायेगा। चितरजन मे दिसम्बर १९५८ तक ७६० बड़ी

लाइन के इञ्जन तथा टाटा के कारखाने मे दिसम्बर १९५८ तक मीटर गेज के ३७१ इ जन बनाये गये। इसके अतिरिक्त देश मे रेल के डिब्बे बनाने का काम भी बडी जोर से चल रहा है। अब सिवाय बिजली के डिब्बो के कोई आयात रेल के डिब्बो की नही की जाती।

दूसरी योजना काल की उन्नति—

यह आशा की जाती है कि दूसरी योजनाकाल मे १८० मिलियन टन अधिक माल तथा १६५० लाख अधिक यात्रियो द्वारा रेल की मांग की जायगी। इस मांग को पूरा करने के लिये ११२५ करोड रुपये का प्रबन्ध किया जाना चाहिये। इसमे से ४२५ करोड रुपये विदेशी विनिमय के रूप मे चाहियें। यह हर्ष का विषय है कि विश्व बैंक ने भारत को ६० मिलियन डालर का रेलवे ऋण देना स्वीकार कर लिया है। इस काल मे निम्नलिखित कार्य किया जायगा—

१६०७ मील के रास्ते मे दुहरी रेलवे लाइन बिछाना, २६५ मील मीटर गेज की लाइन को बडे गेज की बनाना, ८२६ मील लम्बी लाइन को बिजली से चलने वाली बनाना ८४२ मील लम्बी नई लाइन बनाना, ८००० मील लम्बे पुराने रास्ते को नया बनाना, २२५८ इंजिन, १,०७,२४७ गाडियाँ तथा ११,३६४ रेल के डिब्बे बनाना।

वर्तमान स्थिति—आजकल भारत मे १०,००० इंजिन, २५०,००० रेल के डिब्बे तथा २०,००० रेलगाडियाँ १३८२ मिलियन यात्रियों तथा १२४ मिलियन टन सामान प्रति वर्ष ढोती हैं। चौडे गेज तथा मध्यम गेज पर प्रति दिन ४४२१ यात्री गाडियाँ तथा २५४६ मील गाडियाँ चलती हैं। देश में इस समय लगभग ३५००० मील रेल का रास्ता है। इसके होते हुए भी भविष्य मे यह आशा की जाती है कि यात्री गाडियो व माल गाडियो की माँग बहुत बढ जायगी। ऐसा अनुमान है कि १९६०–६१ ई० मे रेलो को १८० मिलियन टन माल ढोना पडेगा। आजकल भी रेलो की कमी बुरी तरह से है जिसके कारण रेलो मे बहुत भीड रहती है तथा माल का बुकिंग करने मे बडी कठिनाई उठानी पडती है। रेलो की बढती हुई मांग को पूरा करने के लिये निम्नलिखित पग उठाये गये हैं—

(१) रेलो की लाइनो को बढाना तथा रेलवे यार्ड की शक्ति मे वृद्धि करना।

(२) वर्कशापो को उन्नत करना तथा उनकी शक्ति को बढाना जिससे कि खराब स्टॉक को जल्दी से जल्दी ठीक किया जा सके।

(३) रेल के डिब्बो को जल्दी से प्रदान करने का प्रयत्न करना। इसको प्राप्त करने के लिये रेल के डिब्बो को प्रारम्भ, बीच तथा अन्तिम स्थानो पर कम से कम समय रोका जाता है।

(४) जहाँ कहीं भी सम्भव है वहाँ भारी भारी इंजिनो को चलाना जिससे कि अधिक लम्बी व भारी गाडियाँ चलाई जा सकें।

(५) ऐसी संस्थाओं का निर्माण करना जो यह देखती हैं कि रेल के डिब्बों को कहाँ देर लगती है तथा उन स्थानों पर उस देरी मे कमी कराना ।

(६) अधिक इजिन, रेल गाडियाँ तथा रेल के डिब्बो को चलाना ।

इसके अतिरिक्त सरकार यह प्रयत्न कर रही है कि यात्रियो को यात्रा करने में अधिक सुविधा प्राप्त हो । इस दृष्टि से सरकार ने तीसरे दर्जे के यात्रियो को सुविधायें देने के लिये १९५०–५१ मे २ ७३ करोड रु०, १९५१–५२ मे २ ४४ करोड रु०, १९५२–५३ मे २ ३३ करोड रु०, १९५३–५४ में २ ४७ करोड रु०, १९५४–५५ में ३ ०३ करोड रु०, १९५५–५६ में ३ ०५ करोड रु० खर्च किये। सरकार ने यात्रियो के लिये रिटायरिंग रूम, वेटिंग रूम आदि बनवाये हैं। प्लेटफार्मों को चौडा किया है। प्लेटफार्मों पर बैठने की बेंच तथा बिजली के पखे लगवाये हैं। पाखाने व गुसलखाने बनवाये हैं। बहुत सी तीसरे दर्जे की जनता गाडियाँ चालू की हैं। कुछ एयरकन्डीशन्ड गाडियाँ भी चालू की हैं। तीसरे दर्जे के यात्रियो को यह सुविधा दी गई है कि वे पहले ही अपनी सीट रिजर्व करा लें। तीसरे दर्जे के यात्रियों को भी सोने की सुविधा प्रदान की जाती है।

परन्तु इतना सब होते हुये भी अभी तक बडी भीड रहती है। रेलवे मन्त्री ने अपना १९५८–५९ का रेल बजट पेश करते समय कहा था कि भीड की समस्या अभी तक नहीं सुधरी है। इसका कारण धन की कमी, रेल के बनाने की सीमित शक्ति तथा रेल की लाइनो की सीमित शक्ति है। रेल मन्त्री का अनुमान है कि कठिनाइयाँ भविष्य मे भी ऐसी ही रहेंगी जैसी कि वे वर्तमान मे हैं।

Q 74 Give the advantages and disadvantages of Railway Transport in India

प्रश्न ७४––भारत मे रेल यातायात के लाभ व हानियाँ बताइए ।

रेल यातायात के लाभ—भारत मे रेलो से निम्नलिखित लाभ हुये हैं—

(१) रेलो के द्वारा गाँवो की पृथकता समाप्त हो गई है। इस प्रकार सारे देश मे राष्ट्रीय एकता का निर्माण हो गया ।

(२) रेलें उन स्थानों का माल जहाँ वह सस्ता होता है उन स्थानों पर ले जाती हैं जहाँ वह महँगा होता है। इस प्रकार सारे देश में मूल्य स्तर समान हो जाता है।

(३) रेलों के द्वारा श्रम मे गति शीलता आ गई जिसके कारण औद्योगिक केन्द्रों में श्रम की कमी दूर हो गई है।

(४) रेलो के द्वारा बडे बडे उद्योगो का माल दूर दूर के गाँवो में पहुँच जाता है और कृषि की फसलें दूर दूर के शहरो तक पहुँच जाती हैं। इस प्रकार उद्योगो तथा कृषि दोनो को ही रेलो से लाभ पहुँचा है।

(५) हमारे देश मे जब से रेलो का निर्माण हुआ है तब से अकाल का भय

बहुत अधिक ज्यादा है। दीर्घकाल में यह इतनी सस्ती व इतनी तेज न हो जितनी कि रेल यातायात परन्तु इसको अधिक तेज़ी से व बहुत कम खर्च करके चालू किया जा सकता है। यह उन स्थानो पर भी पहुँच सकती है जहाँ कि रेल यातायात के पहुँचने की कभी कोई आशा नही। यह हो सकता है कि इतनी तेज व इतनी दूर तक जाने वाली न हो जितनी कि हवाई यातायात परन्तु यह बहुत से सामान के लिये एक निरन्तर चलने वाला सस्ता साधन है। आगे चलकर उन्होने कहा कि सडक का महत्व न केवल आसाम के लिये ही है वरन् वह सारे उत्तरी भारत के लिये है। देश की सुरक्षा की दृष्टि से यह बात आवश्यक है कि इस सारे भाग मे सडको का जाल बिछा हुआ हो जिससे कि आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाया जा सके।

श्री एस० के० पाटिल, केन्द्रीय यातायात तथा सवादवाहन मन्त्री ने बगाल नेशनल चेम्बर ऑफ कामर्स तथा इडस्ट्री के सामने अपना भाषण देते हुए कहा था कि सडक यातायात का महत्व बढता जा रहा है। प्रत्येक चीज को रेल द्वारा नही ले जाया जा सकता। सडक गाँव के लिये तो आने जाने का सबसे उत्तम साधन बना रहेगा। उन्होने आगे कहा कि किसी को भी सडक को गौण श्रेणी के महत्व की नही समझनी चाहिये। यदि रेलें १००० करोड की पूँजी से केन्द्रीय राजकोष को ४० करोड रुपये देती है तो सडकें लगभग १५०० करोड की पूँजी से उससे दुगुना लगभग ६५ करोड रुपये करो के रूप मे प्रदान करती हैं। रोजगार प्रदान करने मे भी सडकें रेलो से आगे हैं।

वर्तमान स्थिति—भारतवर्ष मे जितने भी यातायात के साधन हैं उनमे सडक यातायात की दशा सबसे खराब है। भारत मे पक्की सडकें तो कम हैं ही, कच्ची सडको का भी प्राय अभाव है। यदि हम भारत की सडक यातायात की तुलना दूसरे देशो से कर तो हमको पता लगेगा कि हमारी स्थिति खराब है (नीचे दी हुई तालिका इसका प्रमाण है)*

आ देश	सडक की लम्बाई	प्रति १ हजार वर्गमील पर सडक की लम्बाई (मीलो मे)	प्रति १ लाख मनुष्यो पर सडक की लम्बाई (मीलो मे)
स्ट्रेलिया	५००५	१६८	६६२
र्मा	१०·५	४०	६२
नाडा	५२३४	१६०	४३६८
भारत	२४६०	२०१	७३
टली	१७०५	१४६७	३७६
पान	५६७५	३९८८	७२८
लैंड	१८३६	२०७०	३८१
(स युक्त राष्ट्र मरीका	२०४५३	१००६	२११४

* Table taken from Eastern Economist-Annual Number

2—P. 1064

इन आंकडो के देखने से पता चलता है कि सडको की दृष्टि से हमारी स्थिति ब्रह्मा को छोडकर सबसे खराब है। हमारे देश मे सडको की कमी ही नही है वरन् जो सडकें हैं उनकी हालत भी वडी खराब है क्योकि उनकी मरम्मत का कोई उचित प्रबन्ध नही है। भारतवर्ष की सडकें केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारो, नगरपालिकाओ तथा जिला बोर्डों के आधीन हैं। इनमे से कोई भी उनकी उन्नति की परवाह नहीं करता। हमारे देश मे सडको पर तभी खर्च किया जाता है जबकि सरकार के बजट मे बचत होती है। हमारे देश मे नागपुर योजना को सडको की भविष्य की उन्नति के लिये माना गया था। इस योजना मे सडको पर खर्च करने के लिये ३७२ करोड रुपये रक्खे गये थे। इनमे से ६६ ५ करोड रुपये राष्ट्रीय सडको के लिये और शेष ३०५ ५ करोड रुपये दूसरी सडको के लिये रक्खे गये थे। ये आंकडे युद्ध पूर्व से ५० प्रतिशत अधिक मूल्य स्तर के आधार पर रक्खे गये थे। उस समय से यदि मूल-स्तर दुगुना भी माना जाय तो कुल खर्च ७४४ करोड रुपया हो जाना चाहिये था। इनमे से १३३ करोड राष्ट्रीय सडको पर तथा शष ६११ करोड रुपया शेष सडको पर खर्च होना चाहिये था। पर खेद का विषय है कि प्रथम पचवर्षीय योजना मे सडको की उन्नति के लिये केवल ९३ करोड रुपये रक्खे गये थे तथा द्वितीय योजना के लिये २२१ करोड रुपये रक्खे गये हैं।

नागपुर योजना में सारे भारत के लिये ३,३१००० मील लम्बी सडको का ध्येय रक्खा गया था जो इस प्रकार था—

राष्ट्रीय सडक	१६६,००
राष्ट्रीय ट्रेलस	४,१५०
प्रान्तीय सडक	५३,६५०
जिला व गाँव की सडकें	२,५६ ३००
	३,३१०००

इसमे १,२३,००० मील लम्बी सडकें पक्की तथा २,०८,००० मील लम्बी सडकें कच्ची बनाने की योजना थी।

परन्तु प्रथम योजना के अन्त मे (३१ मार्च १९५६ ई० को) भारत में कुल सडको की लम्बाई ३,२०,००० मील थी जिनमे १,२२,००० मील पक्की तथा १,९८ ००० मील कच्ची थीं। यद्यपि प्रथम योजना के अन्त मे सडकों की कुल लम्बाई नागपुर योजना से कम है तो भी इसको सतोषजनक कहा जा सकता है।

द्वितीय योजना के ध्येय बिन्दु—इस योजना मे वे राष्ट्रीय सडक पूरी की जायेंगी जिन पर प्रथम योजना म कार्य शुरू किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त ६०० नई सडकें, ७२ बडे पुल बनाये जायगे तथा १००० मील लम्बी सडक की मरम्मत की जायेगी तथा ३७५० मील लम्बी सडक को चौडा किया जायेगा। दूसरी सडको में से ११५० मील लम्बी सडकें बनाई जायेंगी तथा ५०० मील की सडको को उन्नत किया जायेगा। राज्य १८००० मील लम्बी सडकें बनायेंगे जिनपर १९२

करोड रुपये खर्च होने की आशा है। राष्ट्रीय विकास तथा सामूहिक विकास योजना के द्वारा गाँवो मे बहुत सी सडकें बन सकेंगी। इस प्रकार दूसरी योजना के अन्त तक नागपुर योजना में निश्चित बिन्दु को प्राप्त कर लिया जायेगा। इस योजना में सामान ढोने का कार्य निजी पूँजी वाले लोग करेंगे। यह भी प्रयत्न किया जायगा कि एक से अधिक राज्यो मे कार्य करने वाले मोटरो को दो बार कर न देना पडे। यात्री तथा सामान यातायात को उन्नत करने का प्रयत्न किया जायेगा।

यदि हम मोटर गाडियो की दृष्टि से अपनी सडक यातायात का अनुमान लगायें तो भी हम देखते हैं कि हमारी स्थिति बडी खराब है। हमारे देश में प्रति १००० मील लम्बी सडक के पीछे केवल ८२६ मोटर गाडियाँ हैं जबकि इगलैंड मे १८७४, सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे १२ १४६ तथा फ्रास मे ३७१७ गाडियाँ हैं। हमारे देश मे प्रति १२७० व्यक्तियो के पीछे एक मोटरगाडी है जब कि सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे ३ के पीछे आस्ट्रेलिया मे ५ के पीछे, इगलैंड मे १५ के पीछे और फ्रास मे ११ के पीछे है।*

उपयुक्त सडक की लम्बाई व मोटर गाडियो की सख्या को देखकर हम कह सकते हैं कि हमारे देश मे सडक यातायात की स्थिति बडी खराब है।

सडकों की खराब अवस्था के कारण—हमारे देश मे सडकें इसलिये खराब हैं कि उनकी ओर लोगों का ध्यान नही गया है क्योंकि सडको के सम्बन्ध मे नागपुर की इन्जीनियरों की सभा, योजना आयोग तथा दूसरी इसी प्रकार की सस्थाओ ने खूब ध्यान दिया है परन्तु इसके दूसरे कारण हैं। इसका प्रथम कारण तो धन की कमी है। हम पहले भी सकेत कर चुके हैं कि हमारे देश मे सडको के बनाने का भार केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारो, नगरपालिकाओ तथा जिला बोर्डों के ऊपर है। इनमें से केन्द्रीय सरकार तो केवल राष्ट्रीय महत्व की सडकों को ही बनाती है परन्तु इस प्रकार की सडकें बहुत कम हैं। शेष सडकें राज्य सरकारें तथा स्थानीय सस्थायें बनाती हैं। परन्तु राज्य सरकारो की आय के स्रोत तो ऐसे हैं जिनसे उन्नति के साथ-साथ आय नही बढती परन्तु उनके व्यय के मद ऐसे है जिन पर खर्च बढता रहता है। ऐसी स्थिति मे उनके पास सडक बनाने के लिये बहुत कम धन बचता है जिसको वे सडको पर लगाती हैं। स्थानीय सस्थाओं की आय तो पहले ही इतनी कम है कि वे सडको पर रुपया लगाने की बात सोच ही नहीं सकती। हमारे देश में रेलो के समान सडको को सार्वजनिक ऋण द्वारा भी नही बनाया गया है। यही कारण है कि हमारे देश मे सडकें न बनाई जा सकीं।

सडक यातायात की उन्नति मे दूसरी बाधा मोटर गाडियो का बहुत अधिक कर भार है। यह अनुमान लगाया गया है जबकि सयुक्त राष्ट्र अमेरिका की एक मोटर गाडी का कर भार केवल ५०० रु० है भारतवर्ष में यह कर भार २०७० रु०

*The above figures have been taken from Commerce of 6th Feb. 1954-P, 189

है। फ्रांस मे यह भार ८०० रु०, नार्वे मे १००० रु०, इगलैंड मे १३०० रु०, पश्चिमी जर्मनी मे १२०० रु० है। इतने कर भार के कारण मोटर यातायात की उन्नति नही होती। भारत का ही ऐसा अनुभव है कि जिन राज्यो मे मोटर कर कम है वहाँ सबसे अधिक मोटरो की सख्या बढी है परन्तु जहाँ उनपर कर भार अधिक है वहाँ उनकी सख्या बहुत कम बढी है।

सडक यातायात की उन्नति मे तीसरी बाधा सरकार की अनुज्ञा-पत्र देने की बाधा है। भारत मे १९३९ में मोटर गाडी एक्ट पास होने पर मोटरो के ऊपर बहुत सी पाबन्दियाँ लगा दी गई हैं जिनके फलस्वरूप मोटर यातायात की उन्नति मे बाधा पडती हैं।

सडक यातायात की उन्नति मे चौथी बाधा उसके राष्ट्रीयकरण का डर है। इस समय आसाम, पश्चिमी बगाल, बिहार, उडीसा, मद्रास, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, मध्य भारत, हिमाँचल प्रदेश, पजाब, दिल्ली, मनीपुर, बिलासपुर, राजस्थान, बम्बई, कच्छ, सौराष्ट्र, हैदराबाद, मैसूर, ट्रावनकोर और कोचीन मे सीमित मात्रा मे सरकार द्वारा यात्रियो व माल ढोने के लिये मोटरें चलाई जाती हैं।

उन्नति के सुझाव—*भारतीय वाणिज्य तथा उद्योग मण्डल* (**Federation of Indian Chamber of commerce and Industry**) ने सडको को उन्नत करने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

(१) केन्द्र और राज्यो मे *एक सडक उन्नति सस्था (Road development* Corporation) की स्थापना की जाय।

(२) सडक के लिये अधिक धन का प्रबन्ध किया जाय।

(३) *रेलो तथा बडी सडको को मिलाने वाली सडको को प्राथमिकता* दी जाय।

(४) मोटरो पर कर कम लगाये जायें।

(५) निजी मोटर यातायात को प्रोत्साहन दिया जाय।

श्री पी० एल० वर्मा, अध्यक्ष भारतीय सडक काग्रेस ने २१वी बैठक के सामने अपने भाषण मे सडक की भविष्य की उन्नति के विषय मे बहुत से महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। उन्होने कहा कि यद्यपि रेलो ने यातायात की समस्या को सुलझाने की ओर अपना ध्यान दिया है परन्तु जब हम यह देखते हैं कि ससार के उन्नत देशों में आतरिक यातायात की तीन चौथाई आवश्यकता सडको से पूरी होती है तब हम को चाहिये कि हम अपनी जन सख्या के भविष्य के क्षेत्रीय बँटवारे को देखें तथा उसी के अनुसार सडको को उन्नत करें। यदि हम सडको को ऐसे स्थानो पर उन्नत करेंगे जहाँ से कि *अन्त मे उनको उखाडना पडेगा तो यह एक अनुचित बात होगी।* औद्योगिक केन्द्रों की आवश्यकता कृषि क्षेत्रो से भिन्न होगी। इस कारण इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है।

हमारे देश में *सडको के बनाने* व उनके लिये भूमि प्राप्त करने के लिये धन की बहुत कमी है। पजाब मे चकबन्दी का कार्य करते समय जो भूमि प्राप्त की गई

है उसमे से कुछ भूमि सड़को के लिये रखकर शेष को किसानो मे बाँटा गया है। यदि यही कार्य दूसरे राज्यो मे भी किया जाय तो उससे भूमि को प्राप्त करने की समस्या बहुत कुछ सुलझ सकती है।

श्री वर्मा ने आगे कहा कि श्रमदान योजना से गाँव की सडकें उन्नत हो सकती हैं परन्तु यह सब कार्य योजना के साथ किया जाना चाहिये अन्यथा सब श्रम बेकार हो जायेगा।

सडक की समस्या न केवल गाँवो के लिये है वरन् वह शहरों के लिये भी है। शहरों के पास से जाने वाली राष्ट्रीय सड़को को भी स्थानीय संस्थाओं की जिम्मेदारी समझा जाता है। इसी कारण उनकी हालत भी खराब है। शहरो के अन्दर की सडको की हालत भी बहुत खराब है क्योंकि स्थानीय संस्थाओं के पास धन की कमी है। इस कारण कर के ढाँचे को बदलने की आवश्यकता है।

श्री वर्मा ने न केवल कर ढाँचे को बदलने का सुझाव दिया है वरन् सडक के अर्थ-प्रबन्धक को बदलने की सलाह भी दी है। उन्होने कहा है कि नागपुर योजना के ध्येय के अनुसार उन्नत क्षेत्रो में कोई भी गाँव पक्की सडक से ५ मील दूर तथा अवनत क्षेत्र मे २० मील मे दूर नही रहना चाहिये। इसके लिये पक्की सड़को की लम्बाई १,२३,००० मील निश्चित की गई थी। अब यदि हम उन्नत क्षेत्र में प्रत्येक गाँव को पक्की सड़क के ३ मील के व्यास मे तथा अर्द्ध-उन्नत व जगली क्षेत्र में ८ मील के व्यास मे तथा अवनत क्षेत्र मे २० मील के व्यास मे लाना चाहते हैं तो हम को पक्की सड़को की लम्बाई ३२,०००० मील चाहिये। इसकी तथा कच्ची सड़को की कीमत ४००० करोड रु० के लगभग होगी। परन्तु दूसरी योजना मे सडको की उन्नति के लिये केवल २२१ करोड़ रु० रखे गये हैं। इस गति से इस ध्येय बिन्दु को प्राप्त करने मे ७५ वर्ष लगेंगे। इतना प्राप्त होने पर भी उस समय हमारे देश मे सडक की लम्बाई केवल ०·५ मील प्रति वर्ग मील होगी जबकि यह लम्बाई ब्रिटेन मे १·९६ मील तथा फ्रास में २·४ मील है। इसी कारण सडको पर अधिक धन खर्च करने की आवश्यकता है। इस धन को प्राप्त करने के लिये हम सड़क बनाने के बांड चालू कर सकते हैं। इनकी गारन्टी राज्य सरकार ले सकती है तथा ये कुछ निश्चित समय पश्चात् चुकाये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त सड़क के प्रयोग के कर को सड़क के बनाने पर खर्च करना चाहिये।

इसके अतिरिक्त भविष्य की उन्नति के लिये सही आँकड़ो का एकत्र करना भी आवश्यक है। इस कार्य के लिये केन्द्र व राज्यों मे अपनी-अपनी सगठनता होनी चाहिये।

इसके अतिरिक्त देश मे इजीनियरो की भी कमी है। इसके लिये इस बात की आवश्यकता है कि इंजीनियरिंग कालिज से कुछ लड़के लेकर उनको इस कार्य की शिक्षा दी जाय।

श्री वर्मा ने यह भी बताया कि सड़को को बनाने का कार्य भी उचित ढंग

से नही किया जाता। इस कारण उनके बनाने में देर लगती है। इसी कारण इस बात की आवश्यकता है कि सडक बनाने के लिये पूरे वर्ष की धन की मजूरी पहले ही प्राप्त करली जाय तथा अगले वर्ष का टेक्नीकल तथा आर्थिक प्रोग्राम अपने हाथ मे हो और तीसरे वर्ष के लिये योजना बनाई जा रही हो। ऐसा करने से सडक बनाने का कार्य निरन्तर बिना रुकावट के चलता रहेगा।

इसके अतिरिक्त श्री वर्मा ने सडक इजीनियरो को सलाह दी कि उनको सडक पर ऐसा वातावरण तैयार करना चाहिये कि यात्रा करने वाले को अपनी यात्रा जीवन भर याद रहे।

उन्होने यह भी बताया कि सडक की उन्नति के लिये यह भी आवश्यक है कि सडक सम्बन्धी अनुसन्धान किया जाय तथा दूसरे देशो की खोज का लाभ उठाया जाय।

अभी ३ जून १९५८ ई० की एक सूचना के अनुसार रेलवे बोर्ड ने निश्चय किया है कि वह चालू वर्ष २ ५ करोड रुपया सडक यातायात पर खर्च करेगा। यह रुपया आध्र मे ५० लाख, बम्बई मे ५४ लाख, बिहार व मध्य प्रदेश मे से प्रत्येक मे ४० लाख, मैसूर मे ३५ लाख, पजाब मे ५ लाख, हिमांचल प्रदेश मे ४ लाख तथा उडीसा मे १ लाख रुपया खर्च होगा। इस धन के खर्च करने मे देश का अधिकतम हित सामने रक्खा जायेगा।

मिनो मसानी समिति (Minoo Masani Road Transport Re-organiza tion Committee)—इस समिति ने अपनी रिपोर्ट अप्रैल १९५९ मे पेश की। इस समिति ने रेलो की इस मांग को ठुकराया है कि उनके लाभ को बचाने के लिये सडको पर पाबन्दी लगाई जाय। इसके विपरीत समिति ने सुझाव दिया है कि सडक पर चलने वाली गाडियो को उदार दिल से लाइसस दिया जाय तथा उनके रास्ते मे से लम्बे रास्ते तथा एक राज्य से दूसरे राज्य मे जाने पर जो पाबन्दी है उसको दूर कर दिया जाय। इस समिति का सुझाव है कि उपभोक्ता के हित को सर्वोपरि रक्खा जाय। इस कारण रेलो तथा सडको के बीच स्वतन्त्र तथा खुली प्रतियोगिता होनी चाहिये जिससे कि लोगो को प्राथमिक तथा तेज सेवा प्राप्त हो सके। समिति ने यह भी कहा है, कि रेल सडक सहयोग के नाम पर रेलो को लाभ पहुँचाने के लिये सडको को हानि पहुँचाई गई है। ऐसा भविष्य मे नहीं किया जाना चाहिये। समिति का यह भी सुझाव है कि लाइसेंस देने वाला अधिकारी या तो कमिश्नर हो या जिलाधीश। समिति का यह भी सुझाव है कि लाइसेंस पूरे राज्य के लिये होना चाहिये न कि किसी विशेष रास्ते के लिये।

Q. 78. Discuss the merits of Government roadways as against private motor companies in the carrying of passengers and goods. Give reasons for your preference.

प्रश्न ७८—यात्रियों तथा सामान के ले जाने मे सरकारी रोडवेज के प्राइवेट मोटर कम्पनियों की अपेक्षा क्या लाभ हैं ? अपनी मान्यता का कारण दीजिये।

भारतवर्ष में अभी हाल ही तक सडक के ऊपर प्राइवेट मोटर कम्पनियों का पूर्ण अधिकार था। पर अभी कुछ वर्षों से राज्य सरकारें इस कार्य को अपने हाथ मे ले रही हैं। उत्तर प्रदेश में बहुत से स्थानो पर सरकारी रोडवेज चलनी आरम्भ हो गई हैं। बम्बई में भी यह कार्य प्रारम्भ हो गया है। पजाब में भी यह काम आरम्भ हो गया है। इसके फलस्वरूप लगभग २५ प्रतिशत यात्री-सम्बन्धी यातायात सरकार के हाथ मे आ गई है, शेष ७५ प्रतिशत यात्री सम्बन्धी तथा पूरी की पूरी माल यातायात अब भी निजी लोगों के हाथो मे है। सरकारी रोडवेज कम्पनियो से निम्नलिखित लाभ हैं :—

(१) सरकारी रोडवेज समय का बडा ध्यान रखती हैं। वे ठीक समय पर चलती हैं तथा निश्चित समय के लिये स्टेशनो पर ठहरती हैं पर प्राइवेट मोटर समय का अधिक ध्यान नही रखती। वे उस समय तक नही चलती जब तक कि उनमें पूरी सवारी नही हो जाती। मार्ग के स्टेशनो पर भी वे बहुत समय तक ठहरती है। इस प्रकार यात्री को बहुत सा समय नष्ट करना पड़ता है।

(२) सरकारी रोडवेज यात्रियो की निश्चित सख्या ले जाती हैं। इस कारण उनमे यात्रियो को कुछ कष्ट नही होता। पर प्राइवेट मोटर अधिक से अधिक यात्रियो को ले जाने का प्रयत्न करती हैं। वे यात्रियो की सुविधा का तनिक भी ध्यान नही रखतीं। इस कारण यात्रियो को बडा कष्ट होता है।

(३) सरकारी रोडवेज का किराया निश्चित होता है, वे उससे अधिक नही लेती। यद्यपि सरकार द्वारा प्राइवेट मोटरों का किराया भी निश्चित होता है तो भी बहुत बार वे उससे अधिक लेती हैं और बीच के एक स्थान से दूसरे स्थान तक का किराया वे अपनी इच्छानुसार ही लेती हैं।

(४) सरकारी रोडवेज की सीट बहुत अच्छी बनी होती हैं। उन पर बैठने पर यात्री को बहुत आराम मिलता है पर प्राइवेट मोटरो की सीट अच्छी बनी हुई नही होती। इस कारण उन पर यात्री को अधिक आराम नही मिलता।

(५) सरकारी रोडवेज की मशीन बहुत अच्छी होती है। यह समय-समय पर ठीक भी होती रहती है। इसी कारण यह प्राइवेट मोटरो की अपेक्षा अधिक वेग से चलती हैं।

(६) सरकारी रोडवेज किसी मनुष्य के साथ भी रियायत नही करती। पर प्राइवेट मोटर पुलिस के आदमियो से बहुत डरती है। वह उनसे बिना किराया लिये ही उनको सबसे अच्छा स्थान देती है। ऐसा करने में कभी-कभी यात्रियो को भारी कष्ट सहन करना पडता है।

(७) सरकारी रोडवेज एडवास बुकिंग की सुविधा भी प्रदान करती है जो कि प्राइवेट मोटर नही करतीं।

(८) मोटरो के स्टेशनो पर रोडवेज यात्रियो के लिये पानी, चाय, आदि की सुविधा प्रदान करती हैं जो कि प्राइवेट मोटर नहीं करती।

इसी प्रकार सामान के एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने मे सरकारी मोटर निश्चित दर से किराया चार्ज करती है तथा सामान को ठीक समय पर पहुँचा देती हैं तथा बिना किसी को रियायत किये सामान को उसके नम्बर पर ले जाती हैं। परन्तु यह बात ध्यान रहे कि सरकारी मोटरें अभी तथा निकट भविष्य मे इस कार्य को नही करेंगी।

पर जहाँ सरकारी रोडवेज के यह गुण है वहाँ उनके निम्न दोष भी हैं—

(१) प्राइवेट मोटर वाले रोडवेज की अपेक्षा यात्रियो के साथ बहुत अच्छा व्यवहार करते हैं।

(२) प्रतियोगिता के कारण उनका किराया घट जाता है। इसका लाभ यात्रियो को मिलता है। परन्तु रोडवेज का किराया इस प्रकार नहीं घट सकता। यह किराया साधारणतया प्राइवेट बसो से अधिक होता है।

(३) प्राइवेट मोटरो पर बहुत सा सामान बिना किसी किराये के यात्री ले जा सकता है। परन्तु रोडवेज मे थोडे सामान का किराया भी लिया जाता है।

(४) सामान ले जाने मे तो प्राइवेट मोटरो से बहुत सी सुविधायें मिलती हैं, वैसे उनके द्वारा किसी समय भी सामान ले जाया जा सकता है, उनको सामान के गोदाम के पास लाया जा सकता है तथा प्राइवेट मोटर वाला सामान को बहुत सावधानी से ले जा सकता है। कभी-कभी वे सरकारी मोटरो से भी कम किराया लेती हैं।

(५) प्राइवेट मोटरो के कर्मचारियो का व्यवहार यात्रियो के प्रति उससे अच्छा होता है जितना कि रोडवेज के कर्मचारियो का होता है।

(६) रोडवेज के बस स्टैंड पर यात्रियो को बहुत देर तक इन्तजार देखनी पड़ती है।

(७) रोडवेज का किराया प्राइवेट बसो से बहुधा अधिक होता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि रोडवेज यात्रियो को ले जाने के लिये उपयुक्त है और प्राइवेट बस सामान के लिये। योजना आयोग ने एक विशेष स्टुडी ग्रुप के द्वारा सडक यातायात की उन्नति की जाँच कराई थी। आयोग ने सुझाव दिया है कि दूसरी योजना काल मे माल यातायात का राष्ट्रीयकरण नही करना चाहिए वरन् निजी गाडी चलाने वालो को प्रतियोगी इकाई बनाने मे सहायता करनी चाहिये। यात्री यातायात के विषय मे आयोग सुझाव दिया है कि राष्ट्रीयकरण का कार्य ठीक योजना के साथ चलाना चाहिये और जहाँ सरकार इस भार को अपने ऊपर लेने को तैयार नही है वहाँ निजी चलाने वालो को उदारतापूर्वक लाइसेंस देने चाहियें।

रेल-सड़क प्रति-स्पर्धा (Rail-Road Competition)

Q. 79. Give the essentials of road rail controversy. Offer suggestions for the solution of this rivalry.

प्रश्न ७६—सड़क-रेल संघर्ष की विशेषतायें दीजिये। इस प्रतिद्विन्द्विता को सुलझाने के लिये सुझाव दीजिये।

सडक तथा रेल की प्रतियोगिता भारतवर्ष तक ही सीमित नही है वरन् यह संसार के प्राय: सभी देशो मे पाई जाती है। अमेरिका के समान भारतवर्ष मे सडक तथा रेल प्रतियोगिता ५०, ६० मील तक ही होती है। परन्तु इङ्गलैंड, जर्मनी, फ्रास तथा इटली जहाँ अधिक फासले नही पाये जाते वहाँ पर इस प्रतियोगिता ने बडा उग्र रूप धारण किया हुआ है। इस देश मे सडको तथा रेलों की प्रतियोगिता इसलिये हो गई है क्योकि सडकें रेलो के समानान्तर चलती हैं। यदि यह बात न होती तो हमारे देश मे यह समस्या शायद न खडी होती।

बहुत समय तक इस देश मे रेलो के साथ किसी दूसरे प्रकार के यातायात के साधन की प्रतियोगिता न थी। पर हाल ही मे मोटरो का जोर बढ रहा है। इसी कारण रेलो के साथ उनकी प्रतियोगिता हो गई है। इसके कारण रेलो तथा मोटरो ने अपने किराये बहुत कम कर दिये और दोनो को आर्थिक हानि हुई।

रेलो का कहना है कि उनको मोटरो के कारण बहुत हानि हो रही है क्योकि मोटरो को रेलो की अपेक्षा बहुत सी सुविधायें प्राप्त हैं। रेलो को अपने खर्च पर रास्ते का प्रवन्ध करना पडता है परन्तु मोटरो को सडक बनाने पर बहुत ही कम व्यय करना पडता है। रेलो को बहुत सा धन स्टेशन बनाने, रेलवे साइडिंग बनाने तथा एक बडा कर्मचारी वर्ग रखने के लिए खर्च करना पडता है परन्तु मोटरों को इन सब बातों पर कुछ भी व्यय नही करना पडता। इन बातो के कारण रेलें यह चाहती हैं कि उनको मोटरो की अपेक्षा कुछ अधिक सुविधायें मिलें जिससे वे मोटरो के साथ ठीक प्रकार से प्रतियोगिता कर सकें। परन्तु रेलो की दलील गलत है। यह अनुमान लगाया गया है कि रेलो द्वारा एक टन सामान ले जाने का खर्च ११'१ पाई प्रति मील है जबकि एक पब्लिक मोटर पर एक टन सामान का कर का खर्च २३ से २४ पाई प्रति मील पडता है।

परन्तु हमें यह सोचना है कि इन बातो मे क्या सार है। यदि हम ध्यानपूर्वक विचार करें तो हमको पता चलेगा कि रेल तथा मोटर की प्रतियोगिता निर्मूल है। किसी देश के लिये दोनो ही प्रकार के यातायात के साधनो का महत्व है। रेल लम्बी यात्रा के लिये उपयोगी है। और मोटर छोटी यात्रा के लिये। हमारे देश मे जहाँ बाढ़ आदि आती रहती हैं सडको के, बनाने मे बहुत अधिक व्यय करना पडता है। इसके होते हुए भी सडको पर कम व्यय करना पडता है। क्योंकि मोटरो के लिये स्टेशनो तथा साइडिंग आदि की आवश्यकता नही है। बहुत से स्थानो, जैसे खेतो तथा किसानो के मकानो तक रेल नही पहुँच सकती। ऐसे स्थानो पर मोटरो से ही

काम लेना पड़ेगा। कृषि कमीशन के मतानुसार हमारे देश मे मोटरें रेलो के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। रेलें भारतवर्ष के गाँव तक नही पहुँची हुई हैं। गाँव मे से यात्री तथा सामान एकत्रित करके मोटर गाड़ियाँ रेलो तक पहुँच सकती हैं। यदि मोटर गाड़ियाँ वह काम न करें तो या तो रेलो को स्वय यह काम करना पड़ेगा या इनको उस सामान तथा यात्रियो से हाथ धोना पड़ेगा। इस प्रकार इस देश में रेलो तथा मोटरो मे प्रतियोगिता होने के बदले वे दोनो एक दूसरे के सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

इसके अतिरिक्त इस समय रेलें देश की यातायात की बढ़ती हुई माँग को पूरा करने मे असमर्थ हैं। द्वितीय पचवर्षीय योजना मे रेलो की उन्नति के लिए १६८० करोड़ रु० की योजना बनाई गई थी परन्तु योजना मे उसके लिये केवल ११२५ करोड़ रुपए का प्रबन्ध किया गया है। इस कमी के कारण जैसा कि रेलवे मन्त्री ने स्वीकार किया है, रेलें पेसिंजर ट्रैफिक की ३० प्रतिशत माँग के स्थान पर १५ प्रतिशत माँग व गुड्स ट्रैफिक की ६०·८ मिलियन टन की माँग के स्थान पर केवल ४२ मिलियन टन पूरा कर सकेंगी। शेष माँग को पूरा करने के लिए यातायात के दूसरे साधनों को उन्नत करने की आवश्यकता है। देश के जल यातायात को उन्नत करने मे बहुत समय लगेगा। यद्यपि देश मे ९६ लाख बैलगाड़ियाँ हैं तो भी उनसे देश के यातायात की समस्या नहीं सुलझ सकती क्योंकि वे एक घटे मे एक मील से अधिक नही चलती। इस कारण उनके द्वारा दूर तक सस्ते मूल्य पर सामान नही ले जाया जा सकता। हवाई जहाज से सामान ढोने का खर्च बहुत पड़ता है। इसी कारण देश मे मोटर यातायात को उन्नत करने की आवश्यकता है।

इसके अतिरिक्त यह बात भी बताने योग्य है कि हमारे देश मे आज मोटरो तथा रेलो पर इतनी पूँजी लगी हुई है कि यदि हम उनमे से एक को भी समाप्त करें तो भी देश को बड़ी हानि होगी। इसके साथ ही साथ यह बात भी ध्यान रखनी चाहिए कि हमारे देश म इसके क्षेत्रफल को देखते हुए रेलो तथा मोटरो की बहुत कम उन्नति हुई है। अभी हमारे देश मे दोनो ही प्रकार के यातायात के साधनो को उन्नत करने के लिए बहुत अवसर हैं। हमे चाहिए कि भविष्य मे हम रेलों तथा सड़कों को इस प्रकार बनायें कि इन दोनो मे प्रतियोगिता होने के बदले वे एक दूसरे के सहायक बन सकें। श्री एस० के० पाटिल केन्द्रीय यातायात मन्त्री ने अभी हाल ही मे कहा है कि अगले २५ वर्षों मे रेल तथा सड़क यातायात में प्रतियोगिता का कोई खतरा नही है।

हमारे देश मे रेलो तथा मोटरों मे मन्दी के समय बड़ी प्रतियोगिता हुई। इस प्रतियोगिता का सामना करने के लिये वेजवुड कमेटी ने बहुत से सुझाव दिये। उसने बताया कि रेलों को अपना किराया नही घटाना चाहिये। इसके बदले उनको यह प्रयत्न करना चाहिये कि वे यात्रियो तथा सामान को अधिक तेजी से ले जायें तथा उनको अधिक सुविधा दें। रेलो ने इस प्रकार कार्य किया परन्तु उनको इससे कोई अधिक लाभ न हुआ। इस कारण रेल तथा मोटरो मे सहयोग की नीति पर

जोर दिया गया। १९३२-३३ की मिचल-किर्कनेस रिपोर्ट ने इस बात का सुझाव दिया कि रेलों तथा मोटरो मे ठीक प्रकार की प्रतियोगिता प्राप्त करने के लिये मोटरो पर नियन्त्रण रखने की आवश्यकता है। इस रिपोर्ट मे यह भी बताया गया कि इस दृष्टि से प्रान्तो मे एक केन्द्रीय यातायात परामर्श बोर्ड बनाया जाय तथा कमिश्नरियो मे कमिश्नरी बनाई जाय। मिचल किर्कनेस कमेटी के आदेशानुसार १९३३ मे एक रेल सडक कान्फ्रेंस हुई। इस कान्फ्रेंस ने बताया कि यातायात को प्रतियोगिता को दूर करने के लिये यातायात के सब साधनो मे सहयोग हो। ऐसा करने के लिये उसने यह बताया कि रेलो को मोटर चलाने की आज्ञा मिलनी चाहिए। १९३५ मे एक यातायात परामर्श कौंसिल भी बनाई गई। इसका कार्य यह था कि सडको की इस प्रकार की नीति बनाये जिससे कि भिन्न भिन्न प्रकार के यातायात के साधनों मे सहयोग हो सके। १९३० मे एक अलग यातायात विभाग खुलने के पश्चात् इस प्रकार कार्य बहुत ही सरल हो गया। १९३७ मे वेजुवुड कमेटी ने बताया कि रेलो तथा सडकों पर ठीक प्रकार का नियन्त्रण न होने के कारण दोनो ही प्रकार के यातायात के साधनो को बडी हानि हो रही है। इसी के कारण उसने दोनो प्रकार के साधनो पर कडा नियन्त्रण करने का सुझाव दिया। वेजवुड कमेटी ने इस बात पर जोर दिया कि रेलो को अपनी मोटर गाडियाँ चलानी चाहियें।

१९३९ मे मोटरगाडी एक्ट पास किया गया जिसके अनुसार मोटरो के ऊपर बहुत सी पाबन्दियाँ हो गई। १९४५ मे सरकार ने रेलो, मोटरो तथा प्रांतीय सरकारो की लिमिटेड कम्पनी बनाने का सुझाव पेश किया। परन्तु इसमे रेलें पूंजी का अधिक भाग लेना चाहती थी। मोटर वालो ने इसका विरोध किया। इस कारण वह स्कीम तब न चल सकी। परन्तु १९५० ई० मे रोड ट्रांसपोर्ट एक्ट पास किया गया जिसके फलस्वरूप रेल, मोटर वाले तथा राज्य सरकारें तीनो मिलकर सडक यातायात का कार्य करेंगी।

दूसरी योजना के लिए योजना आयोग ने सुझाव दिया है कि वर्तमान सडक यातायात को राज्य सरकारो द्वारा लिये जाने का कार्य ठीक ढङ्ग से होना चाहिए और राज्य स्वय सडक यातायात को चलाने का इरादा नही रखता वहाँ निजी चलाने वालो को उदार दिल से अनुज्ञापत्र देने चाहियें। सरकारी सडक यातायात का नियन्त्रण ऐसे कार्पोरेशन के द्वारा किया जाना चाहिए जिनमें रेलो, निजी चलाने वालो के तथा सरकार के प्रतिनिधि हो। इस योजना मे सामान ले जाने का कार्य निजी चलाने वालो के द्वारा किया जायगा तथा इसका राष्ट्रीयकरण इस योजना में नहीं विचारा गया है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि रेलो व सडकों के सहयोग से ही देश की वास्तविक उन्नति हो सकती है। भारत सरकार द्वारा नियुक्त (Study Group on Transport) ने इस बात के ऊपर जोर दिया है कि देश में न केवल रेलो की ही

उन्नति होनी चाहिये वरन् दूसरे प्रकार के यातायात के साधन भी उन्नत होने चाहियें। इस ग्रुप की रिपोर्ट में कहा गया है, "हम महसूस करते हैं कि वर्तमान बढ़ती अर्थ-व्यवस्था में दूसरे प्रकार के यातायात के साधनों को उन्नत होने का अवसर देना चाहिए। हम इससे भी आगे जायेंगे और कहेंगे कि प्रतियोगिता के कारण रेलों को अच्छी प्रकार कार्य करने का स्वस्थ प्रोत्साहन मिलेगा। इसलिये हम समझते हैं कि रेलों को स्वयं किसी कदम को जो उनके बोझे को, कम करता हो स्वागत करना चाहिए।" अगस्त १९५६ में अन्तर्राष्ट्रीय बैंक के टैक्नीकल मिशन ने सिफारिश की है कि देश की यातायात समस्या को रेल, सड़क, तटीय जहाजरानी तथा आन्तरिक जलमार्ग उन्नत करके सुलझाना चाहिये।

Q 80—Give the present position of inland water transport in India Envisage its future prospects

प्रश्न ८०—भारत में आन्तरिक जल यातायात की वर्तमान स्थिति बताइये। इसके भविष्य के विषय में आपका क्या विचार है ?
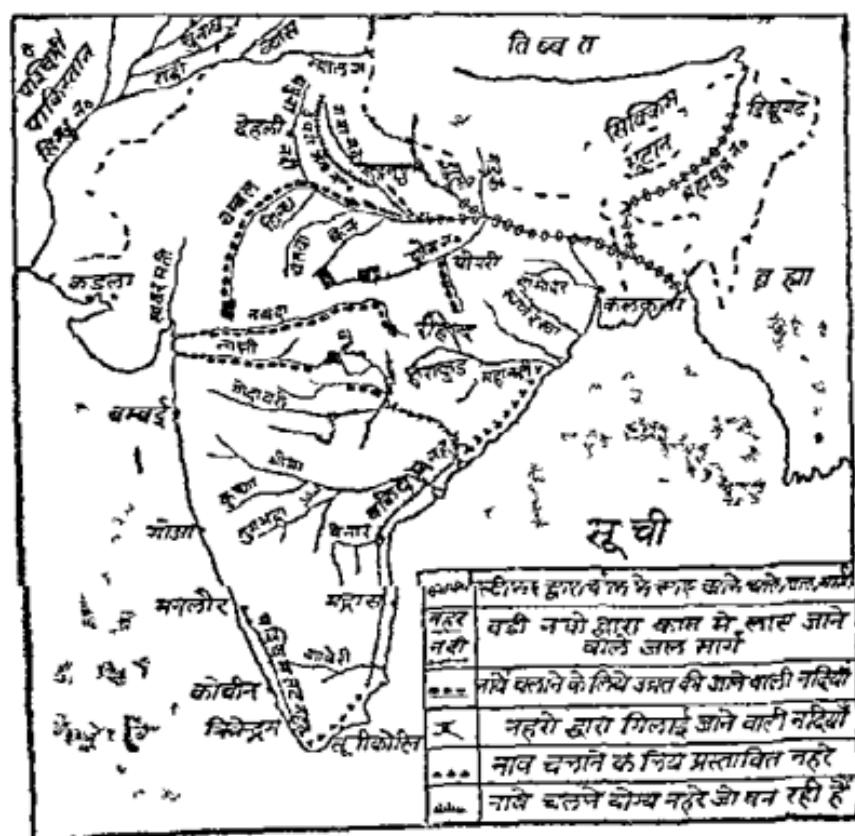
भारतवर्ष मे बहुत सी बडी नदियाँ हैं। उत्तर मे गंगा, सतलज, ब्रह्मपुत्र तथा उनकी सहायक नदियाँ हैं जो हिमालय पहाड से निकलने के कारण सदा बहती रहती हैं। दक्षिण मे महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि हैं। परन्तु इनका पानी गर्मी के दिनो मे सूख जाता है, ये नदियाँ भारत के लिये बहुत महत्वपूर्ण हैं। ये यहाँ की भूमि को उपजाऊ बनाती हैं। सिंचाई के लिये पानी देती हैं तथा यातायात का एक महत्वपूर्ण साधन रही हैं। इतना होते हुए भी नदियो की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है।

रेलों के बनने से पूर्व नदियाँ यातायात का महत्वपूर्ण साधन थीं। यमुना नदी मे मुगलकाल मे आगरा तक नावें चलती थीं। उधर सतलज मे लुधियाना तक नावें चलती थीं। परन्तु मिट्टी के अधिक जमा हो जाने के कारण उनमे आजकल नावें नही चलाई जाती। १८५६ तक गोदावरी आदि नदियो मे समुद्र से देश के भीतर ४०० मील तक नावें चलती थी।

परन्तु रेलो के आ जाने पर भारत की जल यातायात पीछे पड गई। सरकार ने इसकी उन्नति की ओर जरा भी ध्यान न दिया और अपनी सारी शक्ति रेलो के बनाने में खर्च कर दी। फल जो होना चाहिए था वही हुआ। भीतरी जल यातायात का देश की अर्थ-व्यवस्था में कोई भी स्थान न रहा।

परन्तु देश के स्वतन्त्र होने के पश्चात् हमारा यह कर्तव्य है कि हम अपने इस अवनत जल यातायात को फिर उन्नत करें। इससे देश को बहुत लाभ होगा। इसका कारण यह है कि यह सबसे सस्ता यातायात का साधन है। इस कारण भारी-भारी सामान को दूर तक ले जाने के लिये यह सबसे उपयुक्त साधन है। इसके उन्नत होने पर खेती तथा उद्योग दोनो को ही लाभ होगा। खेती को यह लाभ होगा कि खेती के औजार कम कीमत पर दूर-दूर तक ले जाये जा सकेंगे। इसके अतिरिक्त खेती की उपज को भी मण्डियों तक ले जाने का खर्च बहुत घट जायगा। पशुओं को खिलाने के लिये वनो की घास को दूर-दूर के स्थानो तक केवल इसी साधन से भेजा जा सकता है। इसके साथ-साथ भारत मे कृषि के लिए यह एक बडी समस्या है कि गोबर की खाद को ईंधन के रूप मे जलाया जाता है जिसके कारण उपज कम मिलती है। यदि जल यातायात उन्नत हो जाए तो वनो की सस्ती लकडी किसान के पास तक पहुँचाई जा सकेगी जिसके फलस्वरूप वह खाद को न जलायेगा।

खेती के अतिरिक्त उद्योग धन्धों के लिये भी इस यातायात के साधन का बडा महत्व है। इसके द्वारा भारी कच्चा माल औद्योगिक केन्द्रों तक कम मूल्य पर पहुँच सकेगा तथा पक्का माल औद्योगिक केन्द्रो से उपभोग केन्द्रो तक बहुत सस्ता पहुँचाया जा सकेगा। इस प्रकार इन साधनो के उन्नत होने से खेती व उद्योगों दोनो को ही लाभ होगा।

बहुधा आन्तरिक जल यातायात की उन्नति का विरोध इसलिए किया जाता है कि इसके कारण रेलो तथा सडको से अनावश्यक प्रतियोगिता बढ़ेगी। परन्तु

ऐसा सोचना गलत है क्योंकि संसार के अन्य बड़े-बड़े देशो जैसे संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, रूस, फ्रास, जर्मनी, वेल्जियम, हालैंड आदि मे जल मार्ग की उन्नति यातायात के दूसरे साधनो के साथ हुई है। इन देशो मे बडी-बडी नदियो को नहरो से मिला दिया गया है जिसके कारण जल मार्ग से एक बन्दरगाह से दूसरे बन्दरगाह तक जाया जा सकता है। सयुक्त राष्ट्र में सेन्टलारेन्स नदी व बडी झीलो व मिसीसिपी मिसोरी को नहरो से मिलाकर उत्तर में सेन्टलारेंस की खाडी से दक्षिण मे मैक्सिको की खाडी तक जल मार्ग से सामान ले जाया जा सकता है। इसी प्रकार रूस मे कृष्ण सागर, श्वेत सागर, वाल्टिक सागर तथा केस्पियन सागर को नहरो द्वारा मिलाकर इसी प्रकार के अन्तर्देशीय जलमार्ग प्रदान किये गये हैं। भारत मे भी इस प्रकार के अन्तर्देशीय जल मार्ग की सम्भावना है। जेम्स रेनल ने १७९२ ई० मे कहा था कि नर्बदा व सोन को आपस मे मिलाने से इस प्रकार का अन्तर्देशीय मार्ग प्रदान किया जा सकता है। यह हर्ष का विषय है कि भारत सरकार इस प्रकार की सम्भावना पर विचार कर रही है।

भारत मे इस समय २०,००० मील लम्बे जल मार्ग हैं जिनमें ८००० मील नदियो के तथा शेष १२००० मील लम्बे नहरो के हैं। इनमे नदियो मे ३००० मील तक नावें चलती हैं। इस ३००० मील मे से २००० मील केवल पश्चिमी बगाल व आसाम मे है। नहरो मे से उनके उन्नत करने पर ३००० मील मे स्टीमर तथा ६००० मील मे नावें चल सकती हैं। आजकल सरकार द्वारा सचालित चेनलो में २५० मिलियन टन मील प्रति वर्ष सामान ले जाया जाता है जो कि रेलो द्वारा ले जाये जाने वाले सामान का केवल १ प्रतिशत है।

भारत में आजकल यह अनुभव किया जा रहा है कि देश के जल यातायात को उन्नत किया जाय। गगा, ब्रह्मपुत्र तथा उनकी सहायक नदियों पर जल यातायात को उन्नत करने तथा उनमें सामजस्य स्थापित करने के लिये १९५० ई० में गगा, ब्रह्मपुत्र जल यातायात बोर्ड स्थापित किया गया। यह केन्द्र तथा राज्य सरकारो के सामूहिक प्रयत्न द्वारा स्थापित किया गया है। केन्द्रीय सरकार इस प्रकार के बोर्ड आँध्र, मद्रस, केरल आदि मे स्थापित करने का प्रस्ताव रखेगा।

भारत में आजकल १५५७ मील लम्बी नदियो में मशीन से चलने वाले स्टीमर चलते हैं तथा ३१८७ मील में बडी-बडी नावें चलती हैं। देश में जल यातायात तभी उन्नत हो सकती है जबकि या तो नदियों को गहरा किया जाय, या उनमें पानी के बहाव पर नियन्त्रण किया जाय, या ऐसी नावें बनाई जायें जो कि कम गहरे पानी मे चल सकें। नदियो को गहरा करने में बहुत पूंजी की आवश्यकता है। इसी कारण इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि ऐसी नावें बनाई जायें जो कि कम गहरे पानी में चल सकें। गगा-ब्रह्मपुत्र के क्षेत्र में जो विकास कार्य चल रहा है मुख्य-मुख्य जल मार्गों की मिट्टी साफ करना, नावें चलाने के लिये सहायता करना

तथा मुख्य मुख्य स्थानो पर बन्दरगाह बनाना है। योजना मे बकिंघम नहर को उन्नत करना तथा उसको मद्रास के बन्दरगाह से मिलाना तथा पश्चिमी समुद्रतट की नहरो को उन्नत करना रक्खा गया है। योजना मे आन्तरिक जल यातायात को उन्नत करने के लिये केवल ३ करोड रुपया रक्खा गया है। इसमे से ११५ लाख तो बकिंघम नहर को उन्नत करने के लिये तथा ४३ लाख पश्चिमी समुद्रतट की नहरों को उन्नत करने के लिये रक्खा है। शेष धन तथा राज्य सरकारो का चन्दा शेष दूसरे भागो की उन्नति के लिये काम में लाया जायगा।

इसके अतिरिक्त और भी बहुत सी योजनायें हैं। इनमे कलकत्ता-कोचीन योजना मे बहुत सी नहरें हैं, जैसे मिदनापुर तथा उडीसा की तटीय नहरें, गोदावरी तथा कृष्णा डेल्टे की नहरें, बकिंघम नहर तथा वेदारनपुर नहर। इनमे से मिदनापुर तटीय नहर बहुत से स्थानो पर खराब हो गई हैं। यदि इन नहरो को मिला दिया जाय तो कलकत्ता से कावेरी तक एक जल मार्ग हो जायेगा। उधर कावेरी के ऊपरी भाग से एक नहर निकालकर कोचीन के बन्दरगाह को मिलाया जा सकता है, परन्तु योजना मे कावेरी के दक्षिण मे एक नहर बनाये जाने का प्रबन्ध किया गया है।

गगा को ब्रह्मपुत्र से भारतीय राज्य सीमा मे होकर एक नहर से मिलाने की योजना भी है। इन नहर के बन जाने से आसाम का सामान भारत मे आ सकेगा। इनके अतिरिक्त और भी योजनाएं हैं जैसे नर्वदा को जोहिला से जो कि सोन की सहायक नदी से मिलाना, नर्वदा की सहायक नदी, बीरू को सोन की सहायक नदी कटनी से मिलाना, बीयरमा केन को सहायक को नर्वदा से मिलाना, नर्वदा की सहायक नदी ,करम को चम्बल से मिलाना, नर्वदा को गोदावरी की सहायक नदी वेनगगा से मिलाना, महानदी की सहायक नदी हस्दू को रिहाड से जो कि सोन की सहायक नदी है, मिलाना, वर्धा, गोदावरी की सहायक नदी को ताप्ती से मिलाना आदि। यदि ऊपरी तथा निचली गगा की नहरो को ठीक कर दिया जाय तो नावे हरिद्वार तक चल सकती हैं। इन सब योजनाओ के पूरा होने पर बगाल की खाडी के बन्दरगाह अरब सागर के बन्दरगाहो से आन्तरिक जल मार्गों से मिल जायेंगे। ऐसा होने पर हमारी यातायात की समस्या बहुत कुछ सुलझ जायगी।

जहाजी यातायात (Shipping Transport)

Q 81 How do you account for the backward condition of Indian shipping ? What attempts have been made to improve it ? Give your own suggestions

प्रश्न ८१—भारत मे जहाजी यातायात के पिछड़े होने के क्या कारण हैं ? इसको उन्नत करने के लिये क्या प्रयत्न किये हैं ? अपने सुझाव दीजिये।

१९वीं शताब्दी के आरम्भ तक भारतवर्ष जहाजरानी के लिये प्रसिद्ध था। भारतवर्ष मे उस समय ऐसे जहाज बनते थे जो इङ्गलैंड तक जाते थे। परन्तु जब से लोहे के भाप की शक्ति से चलने वाले जहाज बनने लगे तब से इस देश के लकडी के जहाजो को बडा आघात पहुँचा। इससे साथ ही साथ अंग्रेजी जहाजी कानूनो से भी इस देश की जहाजरानी को बडी क्षति पहुँची। इन कानूनो द्वारा भारतीय जहाजो का इंगलिश चैनल मे जाना वर्जित कर दिया गया था। जैसे जैसे अंग्रेजो का भारतवर्ष पर प्रभुत्व स्थापित होता गया वैसे ही वैसे उन्होने इस देश के जहाजी यातायात को नष्ट कर दिया। इस प्रकार द्वितीय महायुद्ध के आरम्भ होने के समय भारतवर्ष के समुद्री किनारे के व्यापार मे से २५ प्रतिशत तथा दूसरे देशो के व्यापार मे से ४ प्रतिशत भाग था।

भारत के समुद्री यातायात पर एक अंग्रेजी जहाजी मण्डल का नियन्त्रण है। यह मण्डल दो प्रकार से भारतीय जहाजो को हानि पहुँचाता है—(१) किराये की लडाई (Freight War) तथा (२) विलम्बित छूट पद्धति (Deferred Rebate System)।

(१) किराये की लडाई—जब कभी कोई नई भारतीय जहाज कम्पनी चालू की जाती है तभी यह मण्डल अपने जहाजो का किराया इतना कम कर देता है कि नई कम्पनी को मुकाबले मे टिकना असम्भव हो जाता है और अन्त मे वह कम्पनी फेल हो जाती है। भारतीय जहाजी कम्पनी के नष्ट हो जाने के पश्चात् मण्डल फिर किराया बढा देता है। इस प्रकार पिछले सौ वर्षों में सैकडों जहाजी कम्पनियाँ फेल हो गई और भारतवर्ष को करोडो रुपये की हानि हुई। इसके एक दो उदाहरण देने आवश्यक हैं। एक बार टाटा कम्पनी ने भारतवष से चीन को धागा ले जाने के लिये एक जहाज चलाया तब मण्डल ने किराये की दर १६ रुपये टन से घटाकर १½ रुपया कर दी। १९२१ मे मण्डल ने सिन्धिया कम्पनी के विरुद्ध चावल ले जाने की दर को १८ रुपये से घटाकर ६ आने कर दी। १९३४ मे चावल ले जाने का किराया १४ रुपये से घटाकर आठ आने प्रति टन कर दिया।

(२) विलम्बित छूट पद्धति—इसके अनुसार अंग्रेजी जहाजी कम्पनियाँ यह घोषित करती हैं कि यदि सौदागर अपना माल ४ या ६ महीने तक मण्डल के जहाजो

पर ले जाता रहेगा तो उसको कुल किराये का जो उसने दिया है एक भाग (लगभग १० प्रतिशत) छूट के रूप में मिलेगा। परन्तु यह छूट उसको उस समय मिलेगी जब वह अपना माल अगले ४ या ६ महीने तक मण्डल के जहाजो पर ले जाता रहेगा। इस प्रकार की पद्धति को विलम्बित बट्टा पद्धति कहते हैं। इसके द्वारा सौदागर लोग अपना माल मण्डल के जहाजो पर लादते हैं। इस कारण देशी जहाजो को जो छूट नही दे सकते बडी हानि पहुँचती है।

इसके अतिरिक्त बन्दरगाह वाले भी जहाजी कम्पनियो के साथ बडा बुरा व्यवहार करते आये हैं। कई बार वे विदेशी जहाजों को उस स्थान पर खडे होने की आज्ञा दे देते थे जहाँ पर भारतीय जहाजो को खडा होना था। इस प्रकार वह सामान जो, भारतीय जहाजो पर लादा जाता वह विदेशी, जहाजो पर लद जाता था और इस प्रकार भारतीय जहाजो को बडी हानि होती थी।

यही नही, भारतीय सरकार की नीति भी हमारी, जहाजी यातायात की उन्नति के मार्ग मे बाधा के रूप मे खडी हुई थी। सरकार कभी भी भारतीय जहाजो पर कोई सामान न तो विदेशो को ले जाती थी और न लाती थी। उसने समुद्र तटीय व्यापार के लिये भी जो कि सभी देशो मे उस देश का एकाधिकार होता है, विदेशी जहाजो को खुली छुट्टी दे रक्खी थी। इस प्रकार १९४४-४५ में भारतीय जहाजो का समुद्रतटीय जहाजों में केवल २५ प्रतिशत भाग था।

इन सब बातो के कारण हमारे देश मे जहाजी यातायात की उन्नति न हो सकी।

जहाजी यातायात को उन्नत करने के प्रयत्न—१९२३ की फरवरी मे "इण्डियन मरकेन्टाइल तथा मैरिन कमेटी" नियुक्त की गई। इस समिति का उद्देश्य यह जाँच करना था कि भारतीय जहाज चलाने तथा जहाज बनाने के काम में किन-किन उपायो से उन्नति हो सकती है। इस समिति ने समुद्रतटीय व्यापार को भारतीय जहाजों के लिये सुरक्षित रखने का सुझाव रखा। परन्तु सरकार ने इस सुझाव की ओर कोई ध्यान न दिया। इसके पश्चात् १९२८ में असेम्बली के सितम्बर के अधिवेशन में श्री हाजी ने तटीय यातायात को भारतीय जहाजो के लिये सुरक्षित रखने के हेतु एक बिल उपस्थित किया। परन्तु उसको स्वीकार नही किया गया। १९२९ में श्री हाजी ने विलम्बित छूट के अन्त के लिये प्रस्ताव रखा। परन्तु वह भी स्वीकार न हुआ। १९३७ में सर अब्दुल हालिम गजनवी ने समुद्री यातायात को सुधारने के लिये एक बिल पेश किया परन्तु उसको भी सरकार ने न माना। १९३९ मे श्री पी० एन० सप्रू ने एक बिल पेश किया जिसमें सरकार से प्रार्थना की गई थी कि वह तटीय व्यापार को भारतीय जहाजों के लिये सुरक्षित करदे। परन्तु सरकार ने सदा की तरह इस बात को भी न माना।

युद्धकाल मे सरकार को भारत की जहाज सम्बन्धी नीति की कमी प्रतीत हुई। इस कारण उसने १९४५ मे पुनिनर्माण नीति उपसमिति (Reconstruction

Policy Sub-committee) नियुक्त की जिसने १९४७ मे अपनी रिपोर्ट दी। इस रिपोर्ट में समिति ने यह सुझाव दिया कि भारतीय जहाजी समस्या के लिये सरकार को एक दृढ राष्ट्रीय नीति बनानी चाहिए। इस समिति ने इस बात पर जोर दिया कि भारत को अपने तटीय व्यापार को शत प्रतिशत, बर्मा तथा लङ्का के साथ होने वाले व्यापार का ७५ प्रतिशत तथा अन्य देशो के साथ होने वाले व्यापार का ५० प्रतिशत अपनाना चाहिये। सरकार ने इस सुझाव को मान लिया।

सरकार की जहाज सम्बन्धी नीति की घोषणा होने के पश्चात् भारतीय जहाजी व्यापार की खूब उन्नति हुई। इस प्रकार द्वितीय महायुद्ध के समाप्त होने पर इस देश मे ११ कम्पनियाँ थी जिनके पास ६३ जहाज थे। ये जहाज १३१,७४८ टन के थे। १९४९ के अन्त मे इस देश मे १६ कम्पनियाँ थी जिनके पास ३४३००० टन के जहाज थे। इनमे से १६२५०० टन के २२ जहाज विदेशी व्यापार मे लगे हुये थे। इसके अतिरिक्त १,८०५०० टन के ७५ जहाज तटीय व्यापार मे लगे हुये थे। १९५१ के अन्त मे भारतवर्ष के जहाज ३९१००० टन के थे। आजकल भारतीय जहाजो के हाथ मे सारा तटीय व्यापार तथा भारत, बर्मा, लका, व्यापार का ४० प्रतिशत व्यापार है। युद्ध से पहले भारतवर्ष का कोई भी जहाज विदेशी व्यापार मे नही लगा हुआ था पर आजकल भारतीय जहाजी कम्पनियाँ सामान तथा यात्रियो को ले जाने के लिये मलाया, जापान, इगलैंड तथा योरुप महाद्वीप तक जाती हैं तथा केवल सामान को ले जाने, लाने के लिये इगलैंड, सयुक्तराष्ट्र अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया तक जाती हैं। १९४७-५० के बीच भारतवर्ष म जहाजो की वृद्धि हुई। इनमे से ३६,१९५ टन के आठ जहाज भारतवर्ष के ही बने हुये हैं। १९५१ से ५६ तक के लिये सरकार ने अपनी योजना बनाई। इस योजना के अनुसार भारत के जहाजो मे ६ लाख टन के जहाजो की वृद्धि होनी थी। इनमें से ३९५,००० टन के जहाज तटीय व्यापार मे तथा २९३,००० टन के जहाज विदेशी व्यापार मे लगगे। प्रथम योजना के अन्त तक भारत मे ५,९५,७०७ टन के जहाज थे। प्रथम योजना का ध्येय बिन्दु एक वर्ष पीछे प्राप्त कर लिया गया। मार्च १९५९ तक भारत के पास ६४७८१२ टन के जहाज थे। इस प्रकार दूसरी योजना बिन्दु को प्राप्त करने मे अभी १३०,१८८ टन की कमी है।

१९४७ मे सरकार ने इस बात की घोषणा की थी कि वह दस करोड की पूँजी से तीन जहाजी कार्पोरेशन स्थापित करेगी जिसमें सरकार की पूँजी ५१ प्रतिशत से लेकर ७४ प्रतिशत तक हो सकती है। शष पूंजी पूंजीपतियो की होगी। इन तीनो मे से एक कार्पोरशन १९५० मे स्थापित हो चुकी है। इसकी अधिकृत पूंजी १० करोड रुपये है। इसकी व्यवस्था सरकार ने अगस्त १९५६ से अपने हाथ मे ले ली है। इसके पास ८ जहाजो का बेडा है जो सामान तथा यात्रियो को जापान, आस्ट्रेलिया, सिंगापुर पूर्वी अफ्रीका ले जाता है। दूसरे की रजिस्ट्री जून १९५६ मे की गई। इसकी पूंजी १० करोड रु० है। यह लाल सागर, फारस की खाडी पौलेंड तथा रूस में कार्य करेगी।

दिसम्बर १६५५ के भारत और रूस के बीच हुये व्यापारिक समझौते के फलस्वरूप अब भारत और रूस के बीच का व्यापार बढने के कारण इस कार्पोरेशन ने अपना कार्य-क्षेत्र काले सागर के बन्दरगाहो तक बढा दिया है। भारत और पोलैंड के बीच भी जहाजी सर्विस शुरू हो गई है।

पंचवर्षीय योजना मे जहाजी यातायात का स्थान—

पंचवर्षीय योजना के अन्त तक ६००,००० टन के जहाजो का ध्येय रक्खा गया है। २३·७२ करोड रु० ऋण के रूप मे जहाजी कम्पनियो को जहाज खरीदने के लिए दिये गये हैं। ऐसी आशा की जाती है कि अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से भी कुछ सहायता प्राप्त हो जायगी।

भारत मे अभी तक अच्छे बन्दरगाहो की कमी है। इसलिये वर्तमान पाँच बन्दरगाहो—बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, कोचीन तथा विशाखापट्टम—को उन्नत करने के लिये सरकार १२ करोड रुपये का ऋण देगी। योजना मे कांडला (Kandla) बन्दरगाहो को उन्नत करने के लिये १२·०५ करोड रु० रक्खे गये हैं। यह बन्दरगाह उस माल को प्राप्त करेगा जो पहले करांची जाता था। तेल साफ करने वाली कम्पनियो को बन्दरगाह की सुविधा प्रदान करने के लिये ८ करोड रुपये रक्खे गये हैं।

जहाजी यातायात सम्बन्धी सभी बातो की देखभाल करने तथा सरकार को इन पर परामर्श देने के लिये एक जहाजी बोर्ड (Shipping Board) की स्थापना भी की गई है।

दूसरी योजना मे ६ लाख टन का ध्येय रक्खा गया है। इस योजना के अन्त तक भारतवर्ष का सुदूर सामूहिक व्यापार मे १५ प्रतिशत भाग हो जायगा।

हिन्दुस्तान शिपयार्ड को बढाया जायगा जिससे वह ४ जहाज प्रतिवर्ष बना सकेगा। एक दूसरे जहाज बनाने के कारखाने का प्रारम्भिक कार्य शुरु कर दिया जायेगा। इसकी उत्पादन शक्ति ६०,००० टन होगी जो कि ८०,००० टन तक बढाई जा सकेगी।

जहाँ प्रथम योजना काल मे हमारी जहाजी शक्ति बहुत कम रही वहाँ द्वितीय योजना काल के पहले ही वर्ष मे (१६५६–५७) से उसने बहुत उन्नति की। इस वर्ष मे द्वितीय योजना काल के लिये निश्चित ३७ करोड रु०, सब के सब भारत तथा यूरोप से जहाज खरीदने मे खर्च कर दिये गये। इसके कारण हमारी जहाजी शक्ति मे १८०,००० टन की वृद्धि हो गई। १६५७–५८ मे स्वय वित्तीय आधार (Self financing basis) पर जहाज खरीदे गये। इस योजना के अन्तर्गत अगस्त १६५७ से अगस्त १६५८ तक ४४००० टन के जहाज खरीदे गये। इस योजना के अनुसार जहाजो का मूल्य किस्तों मे चुकाया जायगा। जहाजो से जो लाभ प्राप्त होगा उसी को किस्तो मे दिया जायगा। इसके अतिरिक्त इस वर्ष मे बहुत से वे जहाज प्राप्त हुए जिनके लिए कि पिछले वर्षों मे आर्डर दिये हुये थे।

जहाजी यातायात तथा जहाज बनाने के उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने १९५७–५८ मे एक जहाजी विकास कोष (Shipping Development Fund) भी स्थापित किया। इस कोष को १ करोड की पूँजी से स्थापित किया गया है तथा यह धन भारत की संचित निधि (Consolidated Fund of India) मे से दिया गया है। भविष्य में भी इस निधि मे से आवश्यकतानुसार धन हस्तान्तरित किया जायगा। ऐसी आशा है कि १९६०—६१ तक इस कोष म ९ ५ करोड रु० एकत्र हो जायेंगे। इसके अतिरिक्त ऐसी आशा है कि निजी पूँजी जहाजी यातायात की उन्नति के लिये २० करोड रु० खर्च करेगी। इसके अतिरिक्त सरकार को जापान से जो १० बिलियन मन का ऋण मिला था उसमे से उसने ५ बिलियन मन जापान से जहाज खरीदने के लिये रख छोड़े हैं। इस के अतिरिक्त सरकार जहाजी यातायात को और भी कई प्रकार से लाभ पहुँचा रही है। उसके हाल ही मे एक शिपिंग कार्डिनेशन कमेटी बनाई है जो कि विभिन्न मन्त्रालयो से सूचना लेकर भारत सरकार की आवश्यकता का सब माल भारतीय जहाजो पर विदेशो से मँगायेगी। १९५८ मे एक नया मर्चेन्ट शिपिंग बिल पास किया गया जिसके फलस्वरूप एक नेशनल शिपिंग बोर्ड स्थापित किया जायगा जो कि सरकार को उचित परामर्श देगा। परन्तु सरकार ने अपनी १९४७ वाली नीति को नही बदला अर्थात् तटीय व्यापार केवल उन्ही जहाजो के लिये सुरक्षित रहेगा जिनकी ७५ प्रतिशत पूँजी भारतीयो के हाथ मे होगी।

इस प्रकार तटीय व्यापार को भारतीय जहाजो के लिए सुरक्षित करके सरकार ने इस देश के लोगो की बहुत पुरानी माँग को पूरा कर दिया है। अब सरकार को चाहिए कि रेलो तथा जहाजो के सहयोग की नीति बनाये जिसम कि बिना किसी हानि के तटीय व्यापार रेलो अथवा जहाजो पर सस्ते दामो पर किया जा सके। सरकार को अब यह भी चाहिये कि वह देश के लिए अधिक जहाज खरीदे। जहाँ तक हो उसे प्रयत्न करना चाहिए कि जहाज देश मे ही बन। जहाज बनाने का एक कारखाना देश के लिए अपर्याप्त है। इस देश मे नये बन्दरगाह भी बनाने चाहिएं। प्रथम योजना मे काँधला नामक नया बन्दरगाह बनाया गया है तथा वर्तमान ब दरगाहो का आधुनीकरण किया जायगा। दूसरी योजना मे बडे बन्दरगाहों की शक्ति को ३० प्रतिशत बढ़ाया जायगा तथा बहुत से छोटे बन्दरगाहो को उन्नत किया जायगा। सरकार लाइट हाऊस को भी उन्नत करेगी तथा धीरे-धीरे उनका प्रबन्ध स्वय ले लेगी। जहाजो को विदेशी प्रतियोगिता से किसी न किसी तरह बचाना चाहिये। इस प्रकार भारतीय जल यातायात को अधिकाधिक मजबूत बनाना चाहिये।

—○○—

वायु यातायात (Air Transport)

Q. 82. Give a brief history of Indian Airways. What is their present position ?

प्रश्न ८२—भारतीय वायु यातायात का संक्षिप्त इतिहास दीजिये । उसकी वर्तमान स्थिति क्या है ?

भारतवर्ष मे वायु यातायात दिनो-दिन उन्नति करता जा रहा है । सर्व प्रथम १९११ में भारत के विभिन्न स्थानो में वायुयानो का प्रदर्शन किया गया । प्रथम महायुद्ध के पश्चात् यह पता चल गया कि यूरोप, सुदरपूर्व (Far East) एव आस्ट्रेलिया को मिलाने के लिये भारत मे यातायात की उन्नति करनी आवश्यक है । वास्तव मे वायु यातायात का कार्य युद्ध के पश्चात् ही प्रारम्भ हुआ । इसके पश्चात् ही इस देश मे फ्रास डच सर्विस प्रारम्भ हुई तथा इगलैड और करांची के बीच साप्ताहिक सर्विस चालू की गई । इम्पायर मेल स्कीम चालू होने के पश्चात् इस देश मे वायु यातायात ने खूब उन्नति की । १९३२ मे टाटा वायुमार्ग लिमिटेड (Tata Airways Ltd.) द्वारा इलाहाबाद, कलकत्ता तथा कोलम्बो मे अन्तर्देशीय वायु सेवाओं की स्थापना की गई ।

द्वितीय महायुद्ध मे इस देश में वायु यातायात ने खूब उन्नति की । उस समय देश मे जितनी वायुयान कम्पनियाँ थी वे सब देश की सुरक्षा के कार्य मे लग गई । उस समय बहुत से वायुयान खरीदे गये । नवीन सेवाओ का श्रीगणेश हुआ । मगलौर मे एक वायुयान बनाने का कारखाना खोला गया । देश मे बहुत से हवाई अड्डे बनाये गये । इस प्रकार धीरे-धीरे करके इस देश मे वायु यातायात ने खूब उन्नति कर ली है। इस प्रकार देश के प्राय सभी बडे बडे शहर एक दूसरे से वायु सेवा द्वारा जुडे हुये हैं । आजकल वायुयानो से यात्री ही नही वरन् बहुत सा सामान भी ले जाया जा सकता है । आजकल बडे बडे शहरो की डाक ले जाने का कार्य भी वायुयान के द्वारा ही किया जाता है । इस देश के लोग केवल देश के भीतर ही वायुयान सेवा नही करते वरन् वह विदेशो मे भी यह सेवा करते हैं । १९४८ मे सब से पहले वायु-भारत अन्तर्राष्ट्रीय लिमिटेड (Air-India International) ने बम्बई तथा लन्दन के बीच वायु सेवा चालू की । पूर्व की ओर भारत एयरवेज ने बिना सरकार की सहायता के हांगकांग तथा बैकाक तक सेवा आरम्भ की ।

भारत सरकार भी वायु सेवा की उन्नति के लिये बहुत प्रयत्नशील है । वह हर वर्ष कई करोड रुपया इस कार्य के लिये व्यय करती है । सरकार ने वायुयानो को चलाने की शिक्षा के लिये इस देश मे स्कूल खोल दिए हैं जिनमे बहुत से विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते हैं । ग्राउण्ड इजीनियर्स को शिक्षा देने के लिये प्रबन्ध किया गया है । बहुत सा रुपया उडाकू क्लबो को भी सहायता के रूप मे दिया जाता है । १९५८ मे ३१२ लोगो को विभिन्न प्रकार की शिक्षा दी गई तथा नवम्बर के अन्त मे १७७ लोग शिक्षा ग्रहण कर रहे थे ।

१९५३ ई० मे हमारे देश मे ८ भारतीय वायु-यातायात कम्पनियाँ थी जो २०,००० मील पर सेवा कर रही थी। भारत के प्राय सभी बडे शहर अब वायु-यातायात से जुडे हुये हैं।

यद्यपि भारत मे वायु-यातायात की इतनी उन्नति हो रही थी तो भी बहुत सी वायु कम्पनियाँ नुक्सान उठा रही थी। उनकी सहायता के लिये सरकार ने उनको वायु-यातायात के लिये खरीदे हुये पैट्रोल से प्राप्त चुंगी का $\frac{९}{१६}$ भाग सहायता के रूप मे दिया। उनको डाक ले जाने का काम भी दिया। इसके अतिरिक्त सरकार ने १९५१ ई० मे एक हवाई यातायात जाँच समिति (Air Transport Enquiry Committee) बैठाई। इस समिति ने बताया कि वायु कम्पनियो के घाटे पर चलने का मुख्य कारण यह है कि इनकी सख्या आवश्यकता से अधिक है। इसलिये इस समिति ने वायु यातायात कम्पनियो का पुनर्संगठन करने, इनकी सख्या मे कमी करने और अनुसूचित सचालको की प्रमाणित लागत व वास्तविक आय के अन्तर के बराबर अर्थ सहायता देने की योजना का सुझाव दिया।

वायु यातायात का राष्ट्रीयकरण—

१९५३ ई० मे एयर कार्पोरेशन एक्ट पास किया गया जिसके अनुसार सरकार ने दो एयर कार्पोरेशन स्थापित किये—(१) इण्डियन एयर लाइन कार्पोरेशन और (२) एयर इण्डिया इन्टरनेशनल। इनमे से पहले ने सब देशी लाइनो को अपने अधिकार मे लिया है और दूसरे ने विदेशी लाइनो को। सरकार इन दोनो कार्पोरेशनो के अध्यक्ष व सदस्य नियुक्त करेगी। ये कार्पोरेशन सरकार को अपने कार्य करने का वार्षिक प्रोग्राम देंगी तथा यह भी बतायेंगी कि वर्ष भर मे कितना धन खर्च होने का अनुमान है। सरकार राष्ट्रीय हित मे इन कार्पोरेशनो को कोई भी आज्ञा दे सकती है। इन दोनो कार्पोरेशनो के कार्य मे सम्बन्ध स्थापित करने के लिये सरकार ने एक वायु-यातायात सभा (Air Transport Council) भी स्थापित की है।

सरकार निजी कम्पनियो को ४ ८ करोड रु० क्षतिपूर्ति के रूप मे देगी। इनमे से ४८ लाख रु० नकद मिलेंगे तथा शेष के लिये ३$\frac{१}{२}$ प्रतिशत ब्याज के प्रतिज्ञापत्र (Bonds) लिये जायेंगे जिनका धन पाँच वर्ष पश्चात् चुकाया जायगा। ३० जून १९५२ को कम्पनियो मे काम करने वाले कर्मचारियो को सरकार रख लेगी।

वायु-यातायात के राष्ट्रीयकरण के प्रश्न मे तर्क—

वायु यातायात का राष्ट्रीयकरण निम्नलिखित बातो के कारण उचित कहा जा सकता है—

(१) निजी कम्पनियाँ घाटे पर चल रही थी और शीघ्र ही वे बन्द हो जाती।

(२) देश की रक्षा के हित के लिये सरकार को वायु यातायात को अपने हाथ मे लेना चाहिये था।

(३) वायु-यातायात के नवीनीकरण (Modernisation) के लिये जितने व्यय की आवश्यकता है वह निजी पूंजीपतियों की शक्ति के बाहर की बात थी।

(४) राष्ट्रीयकरण के कारण आन्तरिक प्रतियोगिता समाप्त हो गई और इसके फलस्वरूप खर्च भी कम हो गया।

राष्ट्रीयकरण के विरुद्ध केवल यही बात कही जा सकती है कि सरकारी काम बहुत धीमा चला करता है और उसमे निजी लाभ की आशा न होने के कारण उतना अच्छा काम नही होता जितना कि निजी उद्योग मे होता है। परन्तु हम देखते हैं कि सरकार रेलो को बड़ी अच्छी प्रकार चला रही है और उसको खूब लाभ भी होता है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में निजी उद्योगों की क्षति-पूर्ति देने तथा नये हवाई जहाज खरीदने के लिये ६.५ करोड रु० रक्खे गये थे तथा १०.०७ करोड रुपये नये हवाई अड्डे बनाने तथा पुरानों की मरम्मत करने के लिये रक्खे गये थे। परन्तु योजना काल मे लगभग ८ करोड रु० खर्च किये गये। दूसरी योजना में जो कार्य किये जायेंगे उन पर १८ करोड रु० खर्च होने की आशा है परन्तु योजना मे केवल १२.५ करोड रु० रक्खे गये हैं। प्रथम योजना मे ६ हवाई अड्डे बनवाये गये। दो और शीघ्र ही पूरे होने वाले हैं। दूसरी योजना मे ८ नये अड्डे बनाये जायेंगे। हवाई जहाज की ट्रेनिंग का केन्द्रीकरण करने का भी निश्चय किया गया है। यह इलाहाबाद में होगी। दूसरी योजना मे १० नये ग्लाइडिंग केन्द्र तथा ५ नये उडाकू क्लब स्थापित किये जायेंगे।

राष्ट्रीयकरण के पश्चात् की गई उन्नति—

राष्ट्रीयकरण के पश्चात् भारत मे वायु यातायात ने बहुत उन्नति की जिस के फलस्वरूप आज हमारे देश के प्राय सभी मुख्य-मुख्य नगर हवाई सर्विस से जुडे हुये हैं। देश के भीतर हवाई रास्ते की लम्बाई १६६८५ मील है। विदेशों मे हमारे हवाई जहाज १५ देशों मे काम करते हैं और इस रास्ते की लम्बाई २३,४८३ मील है। भारत ने बहुत से देशो से हवाई यातायात के समझौते भी किये हैं। इन देशो मे सयुक्त राष्ट्र अमेरिका, इराक, जापान, अफगानिस्तान, आस्ट्रेलिया, लका, मिस्र, फ्रास पाकिस्तान, फिलिपाइन, स्वीडन, स्वीट्जरलैंड, सयुक्त राज्य आदि हैं। इनके अतिरिक्त ईरान, नार्वे डेनमार्क, स्वीडन, थाइलैंड ब्रह्मा, नेपाल, इटली, पश्चिमी जर्मनी आदि देशो से भी कार्य करने के अस्थायी प्रबन्ध हैं।

भारतीय हवाई यातायात की उन्नति इस बात से समझी जा सकती है कि जहाँ १६४७ ई० में हवाई यातायात न ६३६२ हजार मील की यात्रा की, २५५ हजार यात्रियों को उडाया, ५६४८ हजार पौंड सामान तथा १४०५ हजार पौंड डाक को ले गई वहाँ १६५८ मे इसने २४०८६ हजार मील तय किये, ६८३ हजार यात्री उडाये तथा

६८,४६४ हजार पौंड सामान व १३,१८० हजार पौंड डाक को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने का प्रयत्न किया।

राष्ट्रीयकरण के पश्चात् वायु सर्विस ने कई प्रकार से उन्नति की है। सर्विस अब पहले से अच्छी हो गई है। बहुत से जहाज जो खराब हो गये थे उनकी मुरम्मत हो गई है। बुकिंग के दफ्तरों को फिर से ठीक किया गया है। यात्रियों को काश्मीर जाने की सुविधा दी जाती है। डाक को रात में ले जाने का प्रबन्ध किया गया है।

Q 83—Give the development of India's foreign trade after the middle of the 19th century. What, in your opinion, is going to be nature and direction of India's foreign trade in the immediate future ?

प्रश्न ८३—१९वीं शताब्दी के मध्य के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार की उन्नति बताइये। आपकी राय में निकट भविष्य मे भारत के विदेशी व्यापार की रूप-रेखा क्या होने वाली है ?

प्राचीन काल में भारतवर्ष के व्यापारिक सम्बन्ध मिश्र, रोम, अरब, फारस, चीन तथा प्रशान्त महासागर के अन्य द्वीपो के साथ थे। भारत से बढिया सूती कपडे तथा अन्य बहुमूल्य सामग्रियाँ, सुन्दर बर्तन, इत्र आदि निर्यात किया जाता था। इसके बदले भारत मे विदेशो से घोडे, शराब, मोती आदि आते थे। मुसलमानो के समय बहुत सी फैशन की चीजें विदेशो को भेजी जाती थी तथा सोना, ताँबा, राग, बहुमूल्य पत्थर आदि बाहर से आते थे। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समय मे भी इस देश से बढिया सामान विदेशों को भेजा जाता था। परन्तु इगलैंड की औद्योगिक क्रांति के पश्चात् भारतवर्ष के विदेशी व्यापार की रूप-रेखा बदल गई। इसके पश्चात् भारतवर्ष से कच्चा माल विदेशो को भेजा जाने लगा तथा विदेशों का पक्का माल इस देश मे आने लगा।

१८६९ मे स्वेज नहर खुली। इसके पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार ने बहुत उन्नति की। १८६४-६५ मे भारत का वार्षिक निर्यात ५६ करोड रुपये था। १९२८-२९ में यह बढकर ३५३·३१ करोड रुपये हो गया। इसी बीच मे भारत का आयात ३१ करोड रुपये से बढकर २५१ करोड हो गया। इस बीच मे भारत के निर्यात में खाद्य सामग्री, चाय, कपास, जूट, तेल निकालने के बीज, खालें आदि सम्मिलित थे। इसके विपरीत आयात मे सूती कपडा, मशीन, रेल का सामान, रग आदि सम्मिलित थे। इस बीच में भारतवर्ष अबाध व्यापार (Free Trade) की नीति पर चल रहा था।

१९वीं शताब्दी के अन्त मे इस देश के व्यापारिक सम्बन्ध जापान तथा जर्मनी से भी बढने लगे। इन देशो ने अपने व्यापार को आर्थिक सहायता पहुँचाने के लिये इस देश में बैंको की शाखाएँ भी खोलीं।

२०वीं शताब्दी के आरम्भ में इस देश का विदेशी व्यापार बडी तेजी से बढा क्योंकि उस समय इस देश मे रुपये की दर स्थायी रही तथा देश मे अकाल

जैसी कोई आपत्ति नही आई। युद्ध काल मे इस देश का आयात तथा निर्यात दोनों कम हो गये।

आयात तथा निर्यात मे कमी होने के बहुत से कारण थे। उनमे जहाजो के मिलने की कठिनाई, विदेशी विनिमय मिलने की कठिनाई, शत्रु देशो से व्यापार का बन्द हो जाना, व्यापार पर बहुत सी पाबन्दियाँ आदि का होना मुख्य कारण थे।

युद्ध के पश्चात् व्यापार पर से युद्ध काल की बहुत सी पाबन्दियो को हटा लिया गया। यूरोप के देश अपने उद्योगो का पुनर्निर्माण कर रहे थे। इस कारण उनको भारत से बहुत सा सामान खरीदने की आवश्यकता हुई। पर उनके पास क्रय शक्ति की कमी होने के कारण वे अधिक माल न खरीद सके। इधर भारत सरकार ने रुपये की दर २ शिलिंग (स्वर्ण) कर दी। इस कारण भारत के लोगो को यूरोप से माल खरीदने मे बहुत प्रोत्साहन मिला। उन्होने बहुत सा माल खरीदने के लिए आर्डर दिये। इस कारण १९२०–२१ मे भारत का व्यापारिक सतुलन (Balance of Trade) ८० करोड रु० से उसके विरुद्ध हो गया। १९२९–२३ तक यूरोप की मुद्रा स्थायी हो गई। इस कारण यूरोप के देशों ने बहुत सा माल भारतवर्ष से खरीदा और इस प्रकार व्यापारिक सन्तुलन फिर ७० करोड रुपये से भारतवर्ष के पक्ष मे हो गया।

१९२९ के पश्चात् ससार मे मदी का युग आ गया। इस कारण भारतवर्ष के कच्चे माल के दाम बहुत तेजी से गिरने लगे। इसके फलस्वरूप भारतवर्ष को १९३०–३८ के बीच ३८२ करोड रुपये का सोना बाहर भेजना पडा। १९३४ के पश्चात् मूल्य धीरे-धीरे बढने लगे। इसी बीच बहुत से देशो ने अपनी मुद्राओ का मूल्य कम कर दिया। इस प्रकार उन्होने विदेशी व्यापार को बढाने का प्रयत्न किया। मन्दी काल तथा उसके पश्चात् प्राय सभी देशो ने व्यापारिक समझौतो (Trade Agreements) द्वारा अपने व्यापार को बढाने का प्रयत्न किया। भारत ने इस प्रकार के व्यापारिक समझौते इगलैड तथा जापान से किये। इस प्रकार भारत का व्यापारिक सन्तुलन जो १९३२–३३ मे ३ करोड रह गया था, बढकर १९३६–३७ मे ७८ करोड रुपये हो गया।

द्वितीय महायुद्ध का प्रभाव— १९३९ ई० मे द्वितीय महायुद्ध छिड गया जिसके फलस्वरूप व्यापार पर सरकार को नियन्त्रण करना पडा। युद्धकाल मे भारत ने युद्ध क्षेत्रो मे खाद्य आदि अनेक प्रकार की चीजे भेजी। इसके अतिरिक्त एशिया के उन देशो को तैयार माल भी भेजना पडा जो युद्ध से पहले जापान तथा जर्मनी से माल खरीदा करते थे। इसी कारण भारत से ईरान, ईराक, मिश्र आदि देशों को चीनी बहुत अधिक भेजी गई। भारत का व्यापार सयुक्त राष्ट्र अमरीका, आस्ट्रेलिया, कनाडा, मिस्र आदि देशो से बढने लगा। इस प्रकार भारत से अत्यधिक निर्यात किये गये तथा आयात बहुत घट गये। इस प्रकार भारत का निर्यात जो १९३८ मे १६८·५ करोड रुपया था वह बढकर १९४१ मे २४,० करोड रुपया

हो गया। उसके पश्चात् निर्यात मे कुछ कमी आ गई और वह १९४३ मे १९९६·३१ करोड रुपया रह गया परन्तु इसके पश्चात् १९४५ ई० मे वह फिर बढकर २३६·२ करोड रुपया हो गया। इसके फलस्वरूप हमारा व्यापारिक आधिक्य (Balance of Trade) जो १९३८ ई० में केवल १५·१ करोड रुपये था वह बढकर १९४४ मे ५३·१ करोड रुपये हो गया।'

युद्ध के फलस्वरूप हमारी आयात और निर्यात की जाने वाली वस्तुओ मे भी परिवर्तन हो गया। युद्ध के पूर्व तक हमारे देश से अधिकतर कच्चा माल व खाद्य सामग्री बाहर को भेजे जाते थे तथा पक्का माल बाहर से मँगाया जाता था। परन्तु युद्ध के फलस्वरूप निर्यात मे कच्चे माल का अनुपात घटने लगा। इसके विपरीत हमारे देश मे अधिक मात्रा मे पक्का माल बाहर को भेजा जाने लगा तथा कम मात्रा में पक्का माल बाहर से आने लगा।

युद्ध का एक प्रभाव और भी व्यापार पर पडा। युद्ध से पूर्व तक हमारे देश का बहुत सा व्यापार जर्मनी व जापान से होता था। परन्तु युद्ध मे इन देशों को शत्रु घोषित करने के कारण इनसे हमारे व्यापारिक सम्बन्ध साम्राज्य के देशो तथा सयुक्त राष्ट्र अमरीका से बढने लगे।

विभाजन का प्रभाव—युद्ध के पश्चात् १९४७ ई० मे देश का विभाजन हो गया। विभाजन के फलस्वरूप हमारे विदेशी व्यापार की रूप-रेखा ही बदल गई। पाकिस्तान बनने से पूर्व भारतवर्ष जूट, रुई, तेल निकालने के बीज आदि पर्याप्त मात्रा में विदेशो में भेजा करता था परन्तु पाकिस्तान बनने पर इन वस्तुओ का उगाने वाला अधिकतर क्षेत्र पाकिस्तान के अधिकार मे चला गया और भारत को इन चीजों का आयात पाकिस्तान तथा अन्य देशो से करना पडा। इस कारण भारत का विपरीत व्यापारिक आधिक्य जो १९४६-४७ मे १४ ८ करोड व १९४७-४८ मे ३७·१ करोड़ था वह बढकर १९४८-४९ मे २१९·२ करोड रुपये हो गया।

भारत ने इस स्थिति पर काबू पाने के लिए एकदम कदम उठाया। पहले जहाँ निर्यात पर कन्ट्रोल था वहाँ सरकार ने निर्यात को प्रोत्साहन देने की नीति अपनाई। आयात को कम किया गया। इसके साथ-साथ आवश्यक कच्चे माल की उत्पत्ति बढाने का प्रयत्न किया गया।

बहुत से देशो से व्यापारिक समझौते किये गये। इन देशों में स्वीट्ज़रलैंड, हगरी, पोलैंड, फिनलैंड, मिश्र, ईराक, अफगानिस्तान, आस्ट्रेलिया, ब्रह्मा, पश्चिमी जर्मनी, आस्ट्रिया, इण्डोनेशिया तथा जापान सम्मिलित थे। इन समझौतो के कारण भारत को अखबारी कागज, पूँजी वस्तुयें तथा दूसरा और आवश्यक सामान प्राप्त हो गया। इन सब बातों के कारण भारत का विपरीत आधिक्य घटकर १९४९-५० मे १३२·७ करोड हो गया।

रुपये के अवमूल्यन का प्रभाव—१७ दिसम्बर १९४९ ई० मे इगलैंड मे पौंड स्टर्लिङ्ग का अवमूल्यन कर दिया। भारत ने भी इगलैंड का अनुकरण किया और

१६ सितम्बर १६४६ को रुपये का अवमूल्यन कर दिया। हमारा रुपया जो पहले ३०·५ सेन्ट के बराबर था वह २१ सेन्ट के बराबर कर दिया गया। रुपये का अवमूल्यन करते समय भारत को यह आशा थी कि पाकिस्तान भी अपने रुपये का अवमूल्यन करेगा परन्तु पाकिस्तान ने ऐसा न किया। इसके फलस्वरूप पाकिस्तान के साथ व्यापार करने मे कठिनाई बढने लगी। लगभग एक वर्ष तक भारत का पाकिस्तान से व्यापार बन्द रहा। परन्तु इसके पश्चात् जब कोरिया युद्ध छिड गया और हमको अमरीका आदि से सामान मँगाने मे कठिनाई पडने लगी तब फिर पाकिस्तान से हमारा व्यापार चालू हुआ।

रुपये के अवमूल्यन से हमको यह आशा थी कि हमारे व्यापारिक आधिक्य की स्थिति मे बहुत कुछ सुधार हो जायगा और विशेषत हमारा व्यापार अमरीका से बढ जायगा और हुआ भी ऐसे ही क्योकि अक्तूबर १६४६ व नवम्बर १६५० मे भारत की निर्यात ६११·३ करोड़ रुपये थी जो कि १६४८–४६ से २७·४५ प्रतिशत अधिक थी।

इसी प्रकार डालर क्षेत्र को हमारी निर्यात ११४·७ करोड रुपये से बढकर १५०·८ करोड रुपये हो गई। दूसरे दुर्लभ मुद्रा क्षेत्रो को भी हमारी निर्यात २३ प्रतिशत बढ गई। अवमूल्यन के पश्चात् के १४ महीनो भारत की निर्यात सुलभ मुद्रा क्षेत्रो को ४६०·४७ करोड रुपये हो गई जो कि इसके पहले वर्ष के उन्ही महीनो की निर्यात से २६ प्रतिशत अधिक थी। इसके फलस्वरूप हमारा विपरीत व्यापारिक आधिक्य जो अवमूल्यन से पूर्व २३२ करोड था वह अवमूल्यन के पश्चात् घटकर केवल ५·४ करोड़ रुपये रह गया।

विभाजन के पश्चात् सबसे पहले १६५०–५१ ई० में हमारा व्यापारिक आधिक्य ४० २७ करोड रुपये से हमारे पक्ष मे था। इसके पश्चात् के ३ वर्षों मे हमारा व्यापार कुछ घट गया परन्तु १६५४ के पश्चात् यह फिर बढा। जबकि १६५७–५८ में हमारे व्यापार का कुल मूल्य १५६४·६२ करोड रुपये था। १६५४–५५ ई० मे वह १२४६·८० करोड तथा १६५३–५४ मे वह ११०२ ५५ करोड़ रुपया था।

१६५१–५२ से हमारे व्यापारिक आधिक्य की स्थिति इस प्रकार थी:—

	करोड रुपये मे
१६५१–५२	२१०·१४
१६५२–५३	६२·५१
१६५३–५४	४१·३१
१६५४–५५	६२·७२
१६५५–५६	६५·४०
१६५६–५७	२१६·६३
१६५७–५८	२८६·७६

इस काल मे हमारे देश से गल्ले का आयात गिरा तथा औद्योगिक कच्चे माल का बढ़ा। इससे आन्तरिक उत्पत्ति बढने लगी। देश मे उत्पन्न होने वाली चीजो के आयात पर कडाई कर दी गई तथा आवश्यक वस्तुओं के आयात पर से कडाई कम कर दी गई।

इस बीच में हमारे देश के निर्यात बढ़े। निर्यात की जाने वाली वस्तुओं मे सुतली, जूट का सामान, चाय तथा रुई का सामान आदि थे। हाल ही मे वनस्पति तेल, कपास तथा शीलाख के निर्यात बढ रहे हैं।

व्यापारिक नीति—१६५५–५६ ई० मे भारत की आयात नीति उन्नतिशील परन्तु नियमित उदारता की रही है। इस नीति का उद्देश्य देश की आर्थिक उन्नति के लिये आवश्यक चीजो का आयात करना था। डालर क्षेत्र से आने वाली वस्तुओं के आयात को कुछ बढ़ा दिया गया। विदेशी विनिमय को बचाने के लिये कुछ चीजें जिनका उत्पादन देश मे बढ़ रहा था, का आयात कम कर दिया गया। निर्यात को बढ़ावा देने के लिये (Export Promotion Councils) स्थापित की गईं। कुछ चीजो जैसे कपास, जूट का सामान, मूंगफली का तेल व खली, क्रोम धातु आदि पर या तो निर्यात कर को कम कर दिया गया या उसको समाप्त कर दिया गया। ऊन, छोटे रेशे की कपास, मूंगफली व उसका तेल और चाय के लिये कुछ अतिरिक्त कोटे प्रदान किये गये।

१६५६ ई० में बहुत अधिक आयात होने व निर्यात में कमी होने के कारण देश के विदेशी विनिमय के साधन बहुत कम हो गये जिसके कारण १६५७ ई० के पहले ६ महीनो मे साधारणत कम आवश्यक चीजों के आयात को बहुत कम कर दिया गया है तथा उदारता से लाइसेंस देने व नये आदमियो को लाइसेंस देने भी बन्द कर दिये गये हैं। इस प्रकार ५०६ चीजो के आयात कोटे को कम कर दिया गया। इन चीजो मे फल, मसाले, शराब, सुपारी, सिग्रेट, तैल, साबुन, ऊनी सामान, सूती व रेशमी सामान, साइकिल आदि सम्मिलित हैं। वे चीजें जो देश मे उत्पन्न होती हैं उनकी आयात में कटौती की गई है। सुलभ मुद्रा तथा दुर्लभ मुद्रा क्षेत्रो का भेदभाव कम कर दिया गया और आयात कर्त्ताओ को यह छूट दी गई कि वे अपने कोटे का कम से कम ५० प्रतिशत दुर्लभ मुद्रा क्षेत्रो से खरीद लें। निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये Export Promotion Scheme मे कुछ नई चीजें सम्मिलित की गईं।

१६५७ के अगले ६ माह क नीति मे भी उदारता से लाइसेंस न देने की नीति को कायम रक्खा गया है तथा १५० चीजो को आयात को बिल्कुल बन्द कर दिया गया है। इनमे हजामत बनाने के ब्लेड, तम्बाकू का सामान, ऊनी कपडा, घड़ियाँ, साइकिल, फाउन्टेनपेन, क्रोकरी, कांच का सामान, कटलरी इत्र, साबुन, तेल, बाजे, शराब आदि सम्मिलित हैं। दूध का भोजन, मसाले, सुपारी आदि बहुत कम मात्रा मे आ सकेंगे। इसके विपरीत उत्पादन को प्रोत्साहन देने के लिये आवश्यक कच्चे माल का आयात बढाया जायगा तथा मशीनों के हिस्से भी उदारता से आयात

किये जायेंगे। परन्तु कोटे यहाँ भी बहुत कम कर दिये गये हैं। यह सब विदेशी विनिमय को बचाने के लिये किया गया है।

मार्च १६५८ ई० में अगले ६ महीनो के लिये जो नीति घोषित की गई है उसमे से उस कच्चे माल के आयात को प्रोत्साहन दिया जायगा जो कि हमारे उद्योगों के लिये आवश्यक है। इसके अतिरिक्त शेष चीजों के आयात को और भी कम कर दिया गया है क्योंकि ये चीजें भारत मे ही बनने लगी हैं। कच्चे माल के अतिरिक्त खेती के ट्रैक्टर तथा छापने की मशीनें भी आयात की जायेंगी। पाकिस्तान से आने वाले फल, दूध, मछली आदि के आयात को बहुत बडी सीमा तक कम कर दिया है। ब्लेड, घडियाँ आदि बिल्कुल भी नही मँगाई जाएगी।

अक्टूबर १६५८ से मार्च १६५६ तक के ६ महीनो के लिये यह निश्चित किया गया कि निर्यात करने वाली टेक्सटाइल मिलो को उन की विदेशी विनिमय की आय के एक निश्चित प्रतिशत तक रग तथा कैमीक्ल आयात करने की आज्ञा दी जाय। उन को कुछ शर्तों के अन्तर्गत आधुनिक मशीनें आयात करने की भी आज्ञा दी जायगी।

कुछ चीजें जैसे बाल बियरिंग, बिजली के मोटर, स्टार्टर जो देश में ही पैदा होते हैं उन के कोटे घटा दिया गये। टेक्सटाइल रग तथा कैमीकल के कोटो को भी घटा दिया गया। काफूर का कोटा समाप्त कर दिया गया तथा सुपारी और लौंग का कोटा कम कर दिया गया। परन्तु कुछ औजारो, कैमीक्ल आदि के कोटे बढा दिये गये। कुछ चीजो जैसे लपेटने का कागज, बनावटी रेशम का धागा आदि के छोटे छोटे कोटे दिये गये तथा बच्चो के दूध, घडियां, फोटोग्राफ के सामान, एक्स-रे, फिल्म आदि के कोटे मे उदारता की गई।

निर्यात को प्रोत्साहन—निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये सरकार ने सूती कपडे, रेशम तथा रेयन कपडे, प्लास्टिक, इजीनियरिंग का सामान काजू तथा मिर्च, तम्बाकू तथा चमडे आदि के लिये (Export promotion Council) स्थापित की। ये सब कौंसिल निर्यात को प्रोत्साहन देने मे प्रयत्नशील हैं। उन्होने विदेशो में भारतीय सामान के लिये बाजार ढूँढने का प्रयत्न किय है तथा यह बात जानने का प्रयत्न किया है कि भारतीय सामान का निर्यात बढाने के लिये क्या काम करना चाहिये।

निर्यात को प्रोत्साहन देने तथा उसको विभिन्न दिशाओ मे फैलाने के लिये विदेशी व्यापार बोर्ड का फिर से गठन किया गया है। इस बोर्ड के सर्वोच्च अधिकारी विदेशी व्यापार के डाइरेक्टर जनरल होंगे। डाइरेक्टर जनरल को उसके काम मे सहायता देने के लिये एक (Directorate of Export promotion) स्थापित किया गया है। इसका कार्य यह होगा कि यह उद्योग तथा निर्यात करने वालो के साथ सम्बन्ध स्थापित करे तथा उनकी कठिनाई को जानकर उनको हल करने का प्रयत्न करे। बम्बई में एक (Liasion Unit) स्थापित की गई है जो एक विशेष अधिकारी

के नीचे होगी। इसका कार्य जहाजी कम्पनियो से सम्बन्ध स्थापित करके निर्यात करने वालो की कठिनाइयों को दूर करना होगा। इसके अतिरिक्त बम्बई, कलकत्ता तथा बम्बई के बन्दरगाहो पर निर्यात प्रोत्साहन सलाहकार समितियाँ भी स्थापित की हैं। इन समितियो मे तजुर्बेकार व्यापारी होते हैं। इन समितियो का कार्य यह होगा कि वे अपने-अपने क्षेत्रो मे यह खोज करें कि वे और कौन सी चीजें हैं जिनके निर्यात को प्रोत्साहन दिया जा सकता है।

निर्यात साख गारन्टी समिति की रिपोर्ट में दिये गये सुझाव के अनुसार सरकार ने सितम्बर १९५७ ई० मे एक Export Risks Insurance Corporation स्थापित की है जो कि उन खतरो का बीमा करेगी जिनका बीमा साधारणत बीमा कम्पनियाँ नही करती। २८ फरवरी १९५८ ई० तक इस कार्पोरेशन ने १३२६४ लाख की ६८ पालिसी जारी की हैं।

इन सब के अतिरिक्त सरकार निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये बहुत सी चीजो के निर्यात पर स कन्ट्रोल ढीला करती जा रही है। १९५७ ई० मे बहुत सी चीजो के निर्यात पर से कन्ट्रोल हटा लिया गया है। इसके अतिरिक्त चीनी, चावल की भूसी, ताँबे की चादरें, सूखी मिर्चें आदि जो पहले बाहर नही भेजी जा सकती थी उन को अब कोटे के अनुसार निर्यात किया जा सकता है। परन्तु कुछ आवश्यक वस्तुओ का जिनमे चावल, ज्वार, दालें, गेहूँ का सामान आदि सम्मिलित हैं, निर्यात नही किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त घरेलू माँग को पूरा करने के लिये मूगफली तिल आदि तेलो का भी निर्यात वर्जित कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त निर्यात पर लगाये जाने वाले करो मे भी परिवर्तन कर दिया गया है। इसके फलस्वरूप अब यह कहा जा सकता है कि आयात कर अथवा उत्पादन-कर के कारण निर्यात करने मे कोई बाधा खडी नही होती। अब यह प्रयत्न किया जा रहा है कि व्यापारियो को वह सब कच्चा माल मिले जो कि निर्यात करने वाले उद्योग को चलाने में सहायता देता है।

इसके अतिरिक्त निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये भारत अब विदेशो में होने वाली प्रदर्शनियो मे अधिकाधिक भाग लेता जा रहा है। इस प्रकार भारत ने सयुक्त राष्ट्र अमेरिका, पोलैंड, जापान, सीरिया आदि देशो मे होने वाली प्रदर्शनियो मे भाग लिया तथा पेकिंग (चीन) और खारतूम (सूडान) मे तो केवल भारतीय प्रदर्शनियाँ ही की गईं। इनसे भारतीय सामान विदेशो मे प्रसिद्ध होता जा रहा है।

इसके अतिरिक्त बहुत से व्यापारिक समझौते भी किये गये तथा जिन देशो के समझौते समाप्त हो गये थे उनको फिर से चालू किया गया। इस प्रकार भारत ने २४ देशो से व्यापारिक समझौते किये। इन देशो मे अफगानिस्तान, आस्ट्रेलिया, बलगारिया, ब्रह्मा, लका, चीली, चीन, मिस्र, पाकिस्तान, पश्चिमी जर्मनी, इटली, इराक, नार्वे, पोलैंड, रूस आदि देश सम्मिलित हैं।

इसके अतिरिक्त हमारे देश के बहुत से व्यापारिक डेलिगेशन विदेशो में गये।

इसमे पश्चिमी जर्मनी, पाकिस्तान मुख्य हैं । इसके अतिरिक्त डेनमार्क, स्वीडन, फिनलैंड, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, पश्चिमी जर्मनी, आस्ट्रेलिया, अफगानिस्तान, बर्मा, लका आदि के ट्रेड डेलिगेशन हमारे देश मे आये और व्यापार की सम्भावना के विषय मे बातचीत की ।

इस प्रकार हमारे देश मे निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये बडा प्रयत्न किया जा रहा है । १ जुलाई १९५८ ई० की एक सूचना के अनुसार वाणिज्य तथा व्यापार मन्त्रालय नई-नई चीजो के निर्यात को प्रोत्साहन देने का प्रयत्न कर रहा है । इनमे से कृषि पदार्थों का निर्यात मुख्य है । इन पदार्थों मे चीनी, तेल निकालने के बीज तथा तेल आदि मुख्य हैं । कुछ ऐसी चीजें हैं जिनका निर्यात अभी कम है परन्तु उसको बढाया जा सकता है । इन चीजो मे चमड़ा व खालें, सीरा, जूते, मछली, माँस, फल व तरकारी तथा अल्कोहल आदि का निर्यात अभी तक कम है परन्तु उसको बढाया जा रहा है । इसके अतिरिक्त बिजली के पखे, बिजली की मोटर, सीने की मशीन, आदि अधिक सख्या मे भेजी जा रही हैं और उनका निर्यात और भी बढाया जा रहा है । इसके अतिरिक्त टेक्सटाइल, चाय तथा जूट के लिये भी नये-नये बाजार खोजे जा रहे हैं ।

व्यापारिक आधिक्य—

१९५१–५२ तथा १९५५–५६ के बीच हमारी व्यापारिक आधिक्य की स्थिति निम्नलिखित थी.—

करोड़ रुपये में

	१९५१–५२	१९५२–५३	१९५३–५४	१९५४–५५	१९५५–५६
आयात	९४३·१३	६६९·८८	५७१·९३	६५६·२६	७०४·८१
निर्यात	७३२·९९	५७७·३७	५३०·६२	५९३ ५४	६०९·४१
आधिक्य	–२१०·१४	–९२·५१	–४१·३१	–६२·७२	–९५·४०

१९५७ ई० मे हमारा विदेशी व्यापार १९५६ ई० की अपेक्षा २० प्रतिशत बढ गया क्योकि हमारे देश मे पूँजी-वस्तुओं तथा कच्चे माल का आयात बहुत बढ गया । १९५६–५७ में हमारी आयात ८३२ ४५ करोड रु० तथा निर्यात ६१२·५२ करोड रु० तक पहुँच गये । इस प्रकार विपक्षी व्यापारिक आधिक्य २१९·९३ करोड़ रु० हो गया । १९५७–५८ मे हमारे आयात ९२७·१९ करोड रु० तथा निर्यात ६३७·४३ करोड रु० थे तथा विपक्षी व्यापारिक आधिक्य २८९·७६ करोड़ रु० था ।

व्यापारि ढांचा—१९५७ ई० में हमारा व्यापारिक ढाँचा निम्नलिखित ढग पर था—

आयात—लोहे व फौलाद का सामान, मशीनें, यातायात का सामान, पेट्रोल तथा अन्य चिकनाई, कपास कुछ Non-ferrous धातु, रासायनिक पदार्थ, फल तथा तरकारी, खाने का सामान, रगने का सामान व रग, कागज तथा कागज बनाने का सामान, ऊन, जूट तथा अन्य सामान ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि १९५७ मे हमारी आयात मे मशीनें, यातायात का सामान तथा कच्चा माल अधिक था। यह सामान द्वितीय पचवर्षीय योजना के बिन्दुओ को पूरा करने के लिए आवश्यक था।

निर्यात—जूट का सामान, चाय, सूती कपडा, मैंगनीज धातु, कच्चा लोहा, चमडा व चमडे का समान, कपास व रद्दी रूई, वनस्पति तेल, तम्बाकू, मसाले, काजू, अभ्रक, लाख व गोंद, खालें, कहवा, नारियल की रस्सियाँ व अन्य सामान।

यद्यपि भारत में आयात की अपेक्षा निर्यात बहुत कम बढे परन्तु फिर भी पिछले वर्षों की अपेक्षा निर्यात कुछ अवश्य बढे हैं। इससे भविष्य मे आशा बढी है। कोरिया के युद्ध के पश्चात् हमारे निर्यात लगभग सामान्य से रहे हैं परन्तु १९५७ ई० मे वे काफी बढ हैं। १९५७ के पहले १० महीनो मे चीनी का निर्यात १२ करोड, मैंगनीज का १० करोड, सूती कपडे का ९ करोड जूट की रस्सियो का ७ करोड बढ गया है परन्तु इसके विपरीत, चाय, कपास तथा वनस्पति तेल आदि की निर्यात पहले की अपेक्षा घट गई है।

व्यापार की दशा—

यद्यपि हमारा अधिकतर व्यापार अब भी सयुक्त राज्य (U K) से होता है तो भी सयुक्त राष्ट्र अमेरिका, पश्चिमी जर्मनी आदि से व्यापार बढता जा रहा है। जहाँ सयुक्त राज्य से १९५६ मे हमने २०८ करोड रु० का सामान आयात किया वहाँ १९५७ मे २३८ ५० करोड रुपये का सामान मँगाया। इसके विपरीत उसी काल मे हमारे नियात १८७ करोड रु० से घटकर १६० करोड रुपये रह गये। इसके विपरीत इसी काल में सयुक्त राष्ट्र अमेरिका को हमारे निर्यात ८९ ८० करोड रुपये से बढ़कर १३१ ३९ करोड रु० हो गये। तथा आयात ६४·२१ करोड़ रु० से बढकर १७० ३२ करोड रु० हो गये। इसी बीच पश्चिमी जर्मनी से हमारे आयात ८१·८२ करोड रु० से बढकर १२२ ८२ करोड रु० हो गये तथा निर्यात १५ करोड़ से बढकर १६ करोड रु० हो गये। रूस को जहाँ १९५१ ई० मे हमने केवल २ ४७ करोड रु० का माल भेजा वहाँ १९५७ ई० मे १७ ४८ करोड रुपये का सामान भेजा गया। इसी बीच रूस से हमारी आयात १४ ९१ करोड रु० से बढकर २२ ६८ करोड रु० हो गये। इसके अतिरिक्त चीन, जेकोसलेवेकिया, पोलैंड, रूमानिया, युगोसलेविया आदि के साथ हमारा व्यापार बढता जा रहा है।

दूसरी योजना मे विदेशी व्यापार—

यह सब अनुमान १९५५ के पहले ९ महीनों के मूल्यो पर आधारित हैं। इस तालिका के देखने से पता चलता है कि योजनाकाल मे हमारे निर्यात बहुत कम बढने वाले हैं। इसका कारण यह है कि १९५५ मे हमारे देश से तेल व कपास का निर्यात अधिक था जो कि योजनाकाल मे कम बढेगा।

दूसरी योजना मे हमारे देश के व्यापार की स्थिति निम्नलिखित ढग से होने की आशा है—

निर्यात

	१९५५	१९६०-६१	योजना का वार्षिक औसत	पच वर्षीय योग
चाय	११२	१३३	१२७	६३५
जूट का सामान	१२६	११८	१२२	६१०
सूती सामान	६३	८४	७५	३७५
तेल	३९	२४	२२	११०
तम्बाकू	११	१७	१५	७५
खालें व चमड़ा	२७	२८	२८	१४०
कपास	३५	२२	२२	११०
कच्ची धातु व बेकार लोहा व स्पात	२०	२७	२३	११५
कोयला	४	३	५	२५
रासायनिक द्रवाइयाँ	४	५	५	२५
बिजली, लोहे के भाग व मशीनें	४	४	४	२०
अन्य	१५१	१५१	१४५	७२५
	५९६	६१५	५९३	२९६५

उपर्युक्त तालिका के देखने से पता चलता है कि भारत के निर्यात मे चाय, जूट का सामान व रूई का सामान मुख्य हैं जिनका मूल्य कुल का आधा है। हमारे देश की मुख्य निर्यात वस्तुओ को भविष्य मे बडी प्रतियोगिता का सामना करना पडेगा। इसके कारण हमारे निर्यात कम होगे। भारत के निर्यात तभी बढने की आशा है जबकि उद्योगों की उन्नति के कारण हमारे देश से बहुत सा सामान विदेशो को भेजा जायेगा।

आयात

इस प्रकार हम देखते है कि निकट भविष्य में हमारे देश मे विदेशो से मशीनें, गाडियाँ, लोहे व इस्पात का सामान आदि मँगाये जायेगे। योजनाकाल की कुल आयात मे से १५०० करोड रुपये की मशीने व गाडियाँ मँगाई जायेंगी। ४२५ करोड रुपये का यातायात का सामान आयेगा जिसमे से २९० करोड का सामान रेलो के लिये होगा। २८० करोड रुपये का सामान उद्योगो के लिये मँगाया जायेगा। इसमें से १८० करोड रुपये का इस्पात प्लान्ट होगा। १७० करोड का सामान सिंचाई व शक्ति की योजनाओ के लिये होगा तथा १६५ करोड रुपये का सामान सरकारी कामो

योजनाकाल के आयात का ढांचा निम्नलिखित होने की आशा है—

आयात

	१६५५	१६६०-५१	योजना का वार्षिक औसत	५ वर्ष का योग
मशीनें व गाड़ियां	१५६	२५०	३००	१५००
लोहा व इस्पात	५०	६०	८६	४३०
अन्य धातुएं	२५	४०	४४	२२०
गल्ला, दालें व आटा	३५	४०	४८	२४०
चीनी	२०	७	७	३५
तेल	६३	६०	८२	४१०
रासायनिक, दवाइयां	३४	३३	३२	१६०
रंग	१८	१५	१७	८५
कागज आदि	१४	१०	११	५५
कटलरी, बिजली का सामान	३६	२६	२६	१४५
कपास	५४	५४	५४	२७०
जूट	१७	१८	१८	६०
अन्य	१३०	१४०	१४०	७००
	६५५	७८६	८६८	४३४०

के लिये मँगाया जायेगा। निजी क्षेत्र की मशीनों व गाड़ियों की आवश्यकता का अनुमान ४५० करोड़ रुपये है।

स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन

मई १६५६ में सरकार ने स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन की स्थापना की। इसकी स्वीकृत पूंजी १ करोड़ रुपये है। इसका उद्देश्य व्यापार को प्रोत्साहन देना है। जब से यह कार्पोरेशन बनी है तब से यह इस बात का प्रयत्न कर रही है कि इस्पात, सीमेंट, औद्योगिक सामान आदि विदेशों से मँगाया जाये। इसका प्रयत्न है कि स्टर्लिंग रिजर्व पर कम से कम प्रभाव पड़े। कार्पोरेशन ने कम कीमत पर सीमेंट, सोडा, कास्टिक सोडा, रेशम, खाद, जिप्सम खरीदा है। इस कार्पोरेशन ने विदेशों को धातुएं, जूते, हाथ का बना सामान भेजने का प्रयत्न किया है। यह सामान रूस, पोलैंड तथा जेकोसलेवेकिया को भेजा गया। जूट का सामान व सन वाटनाम को भेजा गया तथा नमक इन्डोनेशिया को। इसके अतिरिक्त अभ्रक का तेल रूस को, रद्दी, रुई तथा सीप हगरी को तथा चीनी वाटनाम को भेजी गई। इसी प्रकार चीन से कास्टिक सोडा व सोडा ऐश व रूस से मशीनें मँगाई गई। १ जौलाई १६५७ ई० से कच्चा लोहा भी इसी कार्पोरेशन द्वारा निर्यात करने का निश्चय किया गया है। इसके फलस्वरूप इस कार्पोरेशन ने जापान को ७ २ मिलियन टन कच्चा लोहा बेचने का एक दीर्घकालीन समझौता किया है। इसी प्रकार के समझौते पोलैंड व जेकोसलेवेकिया से किये गये हैं।

कार्पोरेशन ने यह प्रयत्न किया है कि आवश्यक पदार्थों की आयात को भारतीय निर्यात से सम्बन्धित किया जाये। इस प्रकार के प्रबन्ध संयुक्त राज्य (U. K.), वाटनाम, रूस, हंगरी, रूमानिया, जेकोसलेवेकिया तथा मिस्र से किये गये हैं। इसके कारण हमारे निर्यात को प्रोत्साहन मिलता है। इसके अतिरिक्त कार्पोरेशन विदेशी प्रदर्शनियों में भी भाग ले रही है। पहले वर्ष में कार्पोरेशन को ३२६३००० रुपये का लाभ हुआ।

Q. 84. Briefly describe the Indian Currency System between 1925-38.

प्रश्न ८४—१६२५ से ३८ तक भारतीय मुद्रा प्रणाली का वर्णन कीजिये।

२५ अगस्त १६२५ ई० को भारत सरकार ने हिल्टन यग कमीशन को नियुक्त किया। इस कमीशन को स्वर्ण विनिमय मान की अच्छी प्रकार जाँच करके भारत के लिये एक उपयुक्त मुद्रा प्रणाली के लिये सुझाव देना था। इसके अतिरिक्त इस कमीशन को यह भी बताना था कि भारतीय मुद्रा पद्धति तथा भारतीय बैंकिंग मे किस प्रकार सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता था। इस कमीशन ने स्थान-स्थान पर घूमकर तथा बहुत से लोगों से बातचीत करके निम्नलिखित तीन प्रकार के सुझाव दिए—

(१) भारत के लिये एक उपयुक्त मुद्रा प्रणाली।

(२) विनिमय-दर।

(३) एक केन्द्रीय बैंक की स्थापना।

भारत के लिये उपयुक्त मुद्रा प्रणाली—

इस कमीशन ने स्वर्ण विनिमय मान की अच्छी प्रकार जाँच करके बताया कि भारतवर्ष मे इस मान के कार्य करने के ढग मे निम्नलिखित दोष पाये जाते थे—

(१) यह मुद्रा पद्धति सरल न थी। (२) इसके कार्य करने की विधि इतनी पेचीदा थी कि पढे-लिखे लोगों की समझ मे भी न आती थी। (३) इसको सचालन करने मे बहुत अधिक सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता थी। (४) इस पद्धति मे कहने के लिये रुपये तथा सोने मे सम्बन्ध था पर व्यवहार मे ऐसा न था। (५) इसमे दो स्थानो पर स्वर्णकोष रखना पडता था—इगलैंड मे स्वर्णकोष रखना तथा भारतवर्ष मे कागजी द्रव्य कोष रखना। (६) यह लोचदार न थी क्योंकि भारतवर्ष मे मुद्रा का कम या अधिक होना भारत मन्त्री की इच्छा पर निर्भर था। (७) इस मान का ठीक प्रकार से चलना चाँदी के मूल्य पर निर्भर था। जब तक चाँदी के दाम ४३ पैस प्रति औंस से कम रहे, यह कार्य करता रहा पर जब चाँदी के दाम उससे ऊपर चले गये तो वह न चल सका। (८) जिस उद्देश्य के लिये स्वर्णकोष रक्खा गया था वह उसके लिए खर्च न किया गया वरन् उसको दूसरे कामो के लिये भी खर्च कर दिया गया, जैसे रेलो के बनाने के लिये। (६) इस मान के द्वारा लन्दन

के मुद्रा बाजार को ही लाभ पहुंचता था। भारत के मुद्रा बाजार को इससे कोई लाभ न था। (१०) इस मुद्रा पद्धति में जनता का विश्वास न था।

इन सब बातो के कारण इस कमीशन ने स्वर्ण विनिमय मान को ग्रहण न करने की सलाह दी।

इसके पश्चात् कमीशन ने स्वर्ण मुद्रा मान की जाँच की परन्तु इसको ग्रहण करने के लिए भी कमीशन ने राय न दी क्योंकि इसको चलाने मे बहुत सोने की आवश्यकता थी और इसको ग्रहण करने से देश मे अधिक साख का बढना सम्भव न था।

कमीशन ने बताया कि भारतवर्ष के लिए स्वर्ण धातु मान सबसे श्रेष्ठ होगा क्योंकि यह मान बहुत ही सरल था, स्वय सचालित था और इसके अन्तर्गत विनिमय दरों का स्थायी रखना सम्भव था। कमीशन ने सलाह दी कि सावरेन आदि सोने के सिक्के वैधानिक ग्राह्य न रहें परन्तु चांदी के रुपये और कागज के नोट ही कानूनी ग्राह्य रहें और उनके बदले एक निश्चित मात्रा मे अर्थात् ४०० औंस (१०६५ तोले) शुद्ध सोना खरीदने तथा बेचने का उत्तरदायित्व सरकार पर रक्खा जाय।

विनिमय दर—कमीशन ने यह सलाह दी कि रुपये की विनिमय दर १ शि० ६ पैंस होनी चाहिये क्योंकि इसी के अनुसार वस्तुओ के मूल्य, मजदूरो की मजदूरियाँ, व्यापारियो के लेन-देन, किसानो का लगान और सरकारी ठेके निश्चित हुए हैं और इसमे परिवर्तन करने से किसानो को आर्थिक सकट होगा। इसके विपरीत १ शि० ४ पैंस दर भारत के लिए बिल्कुल उपयुक्त न होगी क्योंकि यह अस्वाभाविक दर है, इसका नियन्त्रण करना विशेषकर ऐसे समय मे कठिन होगा जबकि व्यापारिक सन्तुलन भारतवर्ष के प्रतिकूल हो। इस दर के अनुसार मूल्य-स्तर तथा मजदूरियो का सामजस्य न होगा। इसके कारण भारत सरकार को भी आर्थिक सकट का सामना करना पडेगा। बजट मे सन्तुलन न होने से भारतवर्ष की विदेशो मे साख गिर जायेगी और इसलिए भारतवर्ष को विदेशो से ऋण लेने मे भी कठिनाई का सामना करना पडेगा।

परन्तु सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास ने जो इस कमीशन के सदस्य थे इस दर की बडी कडी आलोचना की। उन्होने बतलाया कि १ शि० ६ पैं० दर भारत के लिये बिल्कुल अनुपयुक्त है क्योंकि वह दर अस्वाभाविक है और सरकार के बहुत अधिक हस्तक्षेप के पश्चात् यह स्थापित हुई है। उन्होंने यह भी सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि इस दर पर न तो वस्तुओ के मूल्य का, न मजदूरो की मजदूरी का, और न व्यापारियो के लेन देन का सामजस्य हुआ है। इसके कारण मजदूरो और पूंजीपतियो के सघर्ष और भी अधिक बढने की सम्भावना है। इसके कारण विदेशो से आयात को प्रोत्साहन मिलेगा। इसलिये भारतीय उद्योगो को बडा घाटा उठाना पडेगा। इस दर के कारण ऋणियो का ऋण भार और भी बढ जायेगा। इसके विपरीत सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास ने बताया कि १ शि० ४ पैंस एक स्वाभाविक

दर है क्योंकि यह पिछले २० वर्षों से भारतवर्ष में चालू है। इसके कारण सरकार को भी कोई विशेष आर्थिक संकट का सामना न करना पड़ेगा क्योंकि जितनी हानि उसको स्टर्लिङ्ग भेजने में होगी उससे अधिक लाभ उसको दूसरे साधनों से हो जायेगा। १ शि० ६ पैं० के कारण भारतीय उत्पादकों को बड़ी हानि होगी क्योंकि उनको अपने सामान को बेचकर कम रुपये मिलेंगे। १ शि० ४ पैं० के कारण उन लोगों को कोई कठिनाई न होगी जिन्होंने १९१७ से पहले सौदे किये थे और इस प्रकार के सौदे भारतीय किसानों ने किये थे जिनके हित का ध्यान भारतीय सरकार को अवश्य रखना चाहिए। किसी भी देश ने युद्ध से पहले की विनिमय दर से ऊँची दर रखना ठीक नहीं समझा है इसलिये भारत को भी अपनी विनिमय दर न बढ़ाना चाहिए। यह सब कहने के पश्चात् सर पुरुषोत्तमदास ने कहा कि यदि १ शि० ६ पैं० की दर को ग्रहण किया गया तो अगले कुछ वर्षों में भारतीय आर्थिक ढाँचे में इतनी उथल पुथल हो जायेगी जिसका अनुमान लगाना बहुत कठिन है परन्तु जिसका फल भारत के लिये बहुत ही भयानक होगा।

केन्द्रीय बैंक—

कमीशन की तीसरी सिफारिश यह थी कि भारतीय मुद्रा बाजार का नियन्त्रण करने के लिये केन्द्रीय बैंक की स्थापना की जाये। इस बैंक को रुपये की विनिमय दर को ठीक रखने का भार सौंप देना चाहिए तथा इसको नोट छापने का भी अधिकार देना चाहिए। यह बैंक हिस्सेदारों का बैंक होना चाहिये।

कमीशन की रिपोर्ट पर सरकार का कार्य

भारत सरकार ने विरोध के होते हुये भी बहुमत की इन तीनों सिफारिशों को मान लिया। इनको कार्य रूप में लाने के लिये सरकार ने जनवरी १९२७ में स्वर्णमान तथा रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया बिल पेश किया। इस बिल को एक प्रवर समिति (Select Committee) को जाँच करने के लिए सौंप दिया गया। इस बिल पर कमेटी में बड़ा मतभेद था। यह मतभेद बैंक के हिस्सेदारों का बैंक होने पर था। इस कमेटी का बहुमत यह भी चाहता था कि बैंक के गवर्नर तथा उप-गवर्नर भारतीय हों। इस कमेटी ने यह भी सुझाव दिया कि सोने की मोहरें बनानी चाहियें। सरकार तथा विरोधी दल में मतभेद होने के कारण यह बिल रद्दी टोकरी में डाल दिया गया। इस प्रकार न तो रिजर्व बैंक ही स्थापित हो सका और न स्वर्ण धातुमान ही ग्रहण किया गया।

सरकार ने रुपये के विनिमय की दर १ शि० ६ पैं० मान ली और उसको कार्यान्वित करने के लिये १९२७ में मुद्रा एक्ट बनाया गया। जिसके अनुसार रुपये की विनिमय दर १ शि० ६ पैं० हो गई और सरकार के लिये कम से कम ४० तोले वाली सोने की छड़ें २१ रुपये ३ आ० १० पा० प्रति तोला पर मोल लेना तथा कम से कम १०६५ तोले (४०० औंस) सोना या स्टर्लिङ्ग १ शि० ५$\frac{49}{64}$ पैं० प्रति

रुपये की दर पर बेचना अनिवार्य हो गया। परन्तु इस एक्ट द्वारा भारत में स्वर्ण धातुमान स्थापित न हो सका क्योंकि सरकार ने नोटो के बदले कभी भी सोना न दिया वरन् स्टर्लिंग ही दिया। इस प्रकार इस समय भारतवर्ष मे स्वर्ण धातुमान के स्थान पर स्टर्लिंग विनिमय मान स्थापित हो गया।

१९२७ के पश्चात् जब यह एक्ट पास किया गया तब भारतवर्ष के आयात तथा निर्यात मे खूब वृद्धि हुई। परन्तु यह वृद्धि नई विनिमय दर के ग्रहण करने के कारण न थी वरन् इसलिये थी कि सारे ससार मे व्यापार की स्थिति कुछ सुधर गई थी। परन्तु यह स्थिति बहुत थोडे समय तक रही क्योंकि १९२९ में बहुत अधिक मन्दी (Depression) आ गई। इसके कारण सभी प्रकार के सामान के दाम गिर गये और किसानो, मजदूरो तथा उद्योगपतियो को बहुत घाटा उठाना पड़ा। १९३० के असहयोग आन्दोलन के कारण भी व्यापार तथा उद्योगो को बडी हानि हुई और भारतवर्ष की बहुत सी पूंजी विदेशो को जाने लगी।

सरकार ने स्थिति पर काबू पाने के लिये द्रव्य को घटाया। बहुत अधिक मात्रा मे ट्रेजरी बिल बेचे गये। १ करोड ४० लाख पौंड के रिवर्स काउन्सिल भी बेचे गये तथा १३८½ करोड रुपये चलन मे से कम कर दिये गये। इसके कारण रुपये की बहुत कमी हो गई और वस्तुओ के भाव और भी अधिक गिर गये। व्यापारियों ने इस नीति का बडा विरोध किया।

२१ सितम्बर १९३१ को इगलैंड ने स्वर्ण मान का त्याग कर दिया। इसलिये भारतवर्ष को यह सोचना पडा कि रुपये को स्टर्लिंग से सम्बन्धित करे अथवा न करे। भारतीयो ने इस सम्बन्ध का विरोध किया परन्तु उनकी एक न सुनी गई और रुपये को स्टर्लिंग से १ शि० ६ पैं० पर सम्बन्धित कर दिया गया। सरकार ने कहा कि स्टर्लिंग से सम्बन्ध स्थापित होने से रुपये की विनिमय दर में बहुत कुछ स्थिरता आ जायेगी। ऐसे सम्बन्ध से भारतवर्ष का अपना स्टर्लिंग ऋण तथा घरेलू व्यय चुकाने मे बहुत सुविधा हो जायगी। इसके अतिरिक्त जब तक भारत ऋणी है तब तक रुपये को अकेला नही छोडा जा सकता। भारतवर्ष का अधिकतर व्यापार इगलैंड तथा ब्रिटिश साम्राज्य के देशो से है। इस सम्बन्ध द्वारा कम से कम इस व्यापार में स्थायित्व आ जायेगा।

परन्तु भारतवासियो ने इस नवीन मुद्रा पद्धति की बहुत कडी आलोचना की। उन्होने कहा कि इस प्रकार के सम्बन्ध के कारण इगलैंड के मूल्य स्तर के परिवर्तन भारतवर्ष के मूल्य-स्तर पर भी प्रभाव डालेंगे। इस विनिमय दर के कारण इगलैंड के निर्यात कर्त्ताओ को दूसरे स्वर्ण मान देशो के निर्यात कर्त्ताओ की अपेक्षा लाभ होगा। इसके कारण देश का स्वर्ण कोष अत्याधिक निर्यात के कारण बहुत कम हो जायेगा। वास्तव में ये आलोचनायें बहुत सीमा तक उचित भी थी।

इसके पश्चात् हमारे देश के व्यापार को बहुत बडा आघात पहुँचा और १९३१ से १९३७ तक भारतवर्ष से ३८२ करोड़ रुपये का सोना विदेशो को चला गया।

१९३५ मे रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना हुई। बैंक को नोट छापने का एकाधिकार दिया गया। यह सहकारी बैंक तथा दूसरे बैको का बैंक भी बन गया। इन कार्यों के अतिरिक्त इसके ऊपर यह भार था कि वह भारतीय विनिमय दर को १ शि० ६ ३/१६ पें० प्रति रुपया पर स्टलिंग खरीद कर तथा १ शि० ५ ४९/६४ पें० पर उसको बेचकर १ शि० ६ पें० पर स्थिर रक्खे। इस बैंक के स्थापित होने पर स्वर्णमान कोष तथा कागजी मुद्रा कोष को मिला दिया गया। इस बैंक के स्थापित होने से यह लाभ हुआ कि मुद्रा साख का नियन्त्रण एक ही सस्था के हाथ मे आ गया। इससे पूर्व देश की साख इम्पीरियल बैंक के हाथ मे थी तथा नोट छापने का अधिकार भारत सरकार के हाथ मे था, इसलिये भारत की मुद्रा पद्धति मे लचीलापन नही था।

भारत से इतना अधिक सोने का निर्यात होने के कारण भारतवर्ष के लोगों ने यह माँग की कि भारतीय रुपये का अवमूल्यन (Devaluation) होना चाहिये। हमारे देश के लोगो ने कहा कि जबकि डालर तथा फ्रैंक मूल्य मे गिरा दिये हैं, तब रुपये का मूल्य भी गिरा देना चाहिए नही तो भारतवर्ष को इन देशों की अपेक्षा व्यापार करने मे हानि होगी।

परन्तु इसके विरोध में कुछ लोगो ने कहा कि रुपये का अवमूल्यन करने से सयुक्त राज्य (United Kingdom), सयुक्त राष्ट्र (United States) तथा फ्रास के बीच हुआ मुद्रा समझौता भग हो जायेगा और ससार की मुद्राओं मे स्थिरता आने की आशा बहुत कम रह जायेगी। इसके अतिरिक्त रुपये को स्टलिंग से सम्बन्धित करने के कारण रुपये का मूल्य सोने के रूप मे पहले ही ४० प्रतिशत गिरा हुआ है। रुपये के अवमूल्यन के कारण सर ओटो निम्यर अवार्ड को कार्यान्वित करने मे बडी कठिनाई आयेगी। इन सब बातों के अतिरिक्त रुपये के अवमूल्यन की कोई आवश्यकता दिखाई नहीं पडती क्योंकि ऐसा कोई चिन्ह नही है, अर्थात् न घाटे का बजट है, न ऊँची ब्याज की दर है, न स्वर्ण कोष मे सोना ही कम हुआ है, न व्यापारिक सन्तुलन ही प्रतिकूल है और न मुद्रा सकुचन ही है, जिससे यह कहा जा सके कि रुपये का मूल्य आवश्यकता से अधिक है।

परन्तु अप्रैल से अगस्त १९३८ तक भारत मे इस बात की माँग बडे जोरो से की गई कि रुपये का अवमूल्यन किया जाय क्योंकि उस समय रिजर्व बैंक स्टलिंग को नीची दर पर खरीद रहा था तथा देश के व्यापारिक सन्तुलन में भी बहुत कमी आ गई थी। इण्डियन नेशनल कांग्रेस की कार्यकारिणी ने इस प्रश्न को अपने हाथ में ले लिया और बहुत सी प्रान्तीय सरकारो ने केन्द्रीय सरकार को लिखा कि रुपये की विनिमय दर में बदल कर दी जाये परन्तु केन्द्रीय सरकार ने ६ जून १९३८ को एक विज्ञापन द्वारा यह बताया कि रुपये स्टलिंग की वर्तमान विनिमय दर को कायम

रखने के लिये भारतवर्ष के हित में है और रिजर्व बैंक के पास इस दर को कायम रखने के लिये पर्याप्त मात्रा में सोना तथा स्टर्लिंग है।

———

Q 58 Review the course of events in India's Currency and Exchange between 1939-45.

प्रश्न ८५—१९३९-४५ के बीच भारतीय मुद्रा और विनिमय में जो हुई घटनायें हुई उनका उल्लेख कीजिये।

३ सितैम्बर १९३९ को यूरोप में द्वितीय महायुद्ध छिडा। यद्यपि भारतवर्ष युद्धस्थल से बहुत दूर था तो भी भारतवर्ष में युद्ध की तैयारियाँ शुरू हो गईं क्योंकि इगलैंड युद्ध में सम्मिलित था। युद्ध की घोषणा होने के पश्चात् भारत की मुद्रा विनिमय पर बहुत प्रभाव पडा।

युद्ध के कारण भारत में बहुत अधिक मात्रा में नोट छापे गये। इसके कारण इस देश में मुद्रा स्फीति हो गई। १९३८-३९ में हमारे देश में ८२·३६ करोड रुपये के नोट थे। ये नोट बढकर २६ अप्रैल १९४६ को १२३१ ७३ करोड रुपये के हो गये। इतने अधिक नोट छपने के कारण देश में सभी वस्तुओ के मूल्य बढ गये क्योंकि नोट तो बडे वेग से छपते रहे परन्तु उत्पादन पहले की अपेक्षा बहुत ही कम बढा। कलकत्ता सूचक अक के अनुसार मार्च १९४५ ई० में थोक मूल्य ३१० के बराबर थे। केन्द्रीय सरकार के आर्थिक सलाहकार के सूचक अक के अनुसार भी १९४४-४५ में औसत थोक मूल्य २४४ के लगभग रहे। यदि इस बीच मे चोर बाजार के मूल्यो के अनुसार सूचक अक बनाये जाते तो मूल्य इनसे भी अधिक ऊँचे निकलते।

इतने अधिक नोटो का छापना इसलिये सम्भव हुआ कि रिजर्व बैंक के सुरक्षित कोष (Assets) मे भारी परिवर्तन किये गये। युद्धकाल में अधिकतर नोट स्टर्लिंग सिक्योरिटीज के पीछे छापे गये। युद्ध से पहले ये सिक्योरिटीज ६६ ९ करोड रुपये की थी परन्तु २६ अप्रैल १९४६ को ये ११२५ ३२ करोड रुपये की हो गई। यही नही, रुपये सिक्योरिटीज की मात्रा भी सुरक्षित कोष में बहुत बढ गई। युद्ध से पहले इस प्रकार की सिक्योरिटीज कुल छपे हुए नोटो की ¼ अथवा ५० करोड रुपये इन दोनों में जो भी अधिक हो, से अधिक नही हो सकती थी। परन्तु ११ फरवरी १९४१ की एक आज्ञा से इसमें बदल कर दी गई और रिजर्व बैंक को यह स्वतन्त्रता दी गई कि वह किसी भी सीमा तक इन सिक्योरिटीज के पीछे नोट छाप सकता था। इसके कारण इनकी मात्रा ३७ करोड रुपये से बढकर ४ जनवरी १९४६ को ५८ करोड रुपये हो गई। परन्तु इसी बीच सोना ४४४ करोड रुपये का ही रहा।

सरकार ने पुराने चांदी के सिक्के भी चलन में निकाल लिये और उनके थान पर नये प्रामाणिक तथा सांकेतिक सिक्के और नोट जारी किये और यह आज्ञा दी कि कोई भी सिक्कों को आवश्यकता से अधिक न रक्खे। जनता की सिक्कों की मांग को पूरा करने के लिये सरकार ने १६४० मे एक रुपये के नोट जारी किये। १६४० मे फ्रांस कि हार जाने के पश्चात् लोगो का विश्वास सरकार मे बहुत कम हो गया, इसलिये उन्होने नोटो को रुपये मे बदलना शुरू किया और डाकखाने तथा बैंकों से भी अपने रुपये निकालने शुरू किये। इसके कारण रिजर्व बैंक के पास रुपयों की बडी कमी हो गई। इसलिये २५ जून १६४० को सरकार ने यह घोषित किया कि रिजर्व बैंक के ऊपर नोटों के बदले रुपये के सिक्के देने का कोई भार नहीं है। यह भी घोषित किया गया कि कोई भी मनुष्य अपनी आवश्यकता से अधिक रुपए के सिक्के न रक्खे। उसी समय एक रुपये के नोट जारी किये गये। १६४० के जाडो मे रेजगारी की बडी कमी हो गई और इस कमी को सरकार ने नये सांकेतिक सिक्के जारी करके पूरा किया। १६४३ मे दो रुपये का नोट भी चालू किया गया। सरकार ने युद्ध काल मे जो सिक्के जारी किये उनमे चाँदी की मात्रा को घटा दिया। कुछ सिक्कों के वजन मे भी कमी कर दी गई, जैसे पैसे का वजन ७५ ग्रेन से घटा कर ३० ग्रेन कर दिया गया। १६४३ मे एक नये आधे आने का सिक्का भी जारी किया गया।

युद्ध का प्रभाव भारतीय राजस्व पर भी पडा। इसके कारण नये-नये कर लगाये गए तथा भिन्न-भिन्न प्रकार के युद्ध ऋण लिए गये। परन्तु जब इन साधनों से सरकार की आवश्यकता पूरी न हुई तो उसने रिजर्व बैंक द्वारा स्टर्लिंग सिक्योरिटीज के आधार पर कागजी नोट छपवाये। युद्ध व्यय के बढने के कारण बजट का घाटा भी बढता चला गया। इस घाटे को पूरा करने के लिए ही नोट छापे गये। युद्धकाल मे भारतवर्ष ने इगलैंड तथा दूसरे देशों को इतना माल बेचा कि उससे भारत ने प्राय सब स्टर्लिंग ऋण चुका दिया और अन्त मे इगलैंड भारतवर्ष का ऋणी हो गया।

युद्ध काल मे रिजर्व बैंक की देख-रेख मे एक विनिमय नियन्त्रण विभाग (Exchange Control Department) भी खोला गया। इस विभाग के द्वारा विदेशी विनिमय, स्वर्ण तथा स्वर्ण सिक्योरिटीज के खरीदने-बेचने पर पाबन्दी लगा दी गई। भारतवर्ष मे केवल कुछ गिने चुने लोगो को ही विदेशी विनिमय, स्वर्ण तथा स्वर्ण सिक्योरिटीज मे व्यापार करने का अधिकार दिया गया। विदेशी विनिमय को लोक युद्ध से पहले के ऋणो को चुकाने के लिए अथवा यात्रा करने के लिए अथवा अपने निजी कामो के लिए रिजर्व बैंक की अनुमति से ले सकते थे। यदि किसी मनुष्य को स्टर्लिंग क्षेत्र के बाहर कुछ धन भेजना होता था तो भेजने वाले व्यक्ति को एक फार्म भरना पडता था जिसमे इस धन को भेजने के कारण दिए जाते थे। हर एक उस व्यक्ति को जिसको विदेशी विनिमय मे व्यापार करने का

बन गया। इस कारण यह आवश्यक हो गया कि भारतवर्ष स्टर्लिंग से अपना सम्बन्ध विच्छेद करे। इस कारण ८ अप्रैल १९४७ को श्री लियाकतअली ने (जो उस समय वित्त मन्त्री थे) एक बिल पेश किया जिसके द्वारा रिजर्व बैंक को यह आज्ञा दी गई कि वह स्टर्लिंग के अतिरिक्त और दूसरी मुद्राओं को भी खरीद सकता है। इस प्रकार रुपया एक स्वतन्त्र मुद्रा के रूप मे अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के साथ ४ १४५१४ ग्रेन शुद्ध सोने की दर से सम्बन्धित कर दिया गया। इस प्रकार भारत में अन्तर्राष्ट्रीय मान स्थापित हो गया। परन्तु इस सम्बन्ध के स्थापित होते हुये भी हमारा रुपया सब देशो की मुद्राओं मे स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं बदला जा सकता क्योंकि अन्तर्वर्ती समय (Transitional period) के लिए कोष ने भारतवर्ष को विदेशी विनिमय पर नियंत्रण करने की आज्ञा दी हुई है। भारतवर्ष अब भी विदेशी विनिमय पर नियन्त्रण करता है। इसलिये हमारा रुपया स्वतन्त्रतापूर्वक किसी भी मुद्रा मे नहीं बदला जा सकता।

१५ अगस्त १९४७ को देश का विभाजन हुआ। इस विभाजन के फलस्वरूप भारतीय मुद्रा पद्धति मे कुछ परिवर्तन करने आवश्यक थे। ३० सितम्बर १९४८ तक रिजर्व बैंक को भारत और पाकिस्तान की मुद्रा पद्धति का नियन्त्रण करने के लिये नियुक्त किया गया। इस समय रिजर्व बैंक ने पाकिस्तान सरकार के नोट व सिक्के जारी किये जो पाकिस्तान मे ही चल सकते थे। जब स्टेट बैंक ऑफ पाकिस्तान की स्थापना हुई तो उसने पाकिस्तान के नोटो का भार अपने ऊपर लिया। इसलिये रिजर्व बैंक को स्टेट बैंक ऑफ पाकिस्तान को १५२ करोड़ रुपये की सम्पत्ति देनी पडी। पाकिस्तान के सिक्कों के निकलने के एक वर्ष पश्चात् भी भारतीय रुपया तथा अन्य छोटे सिक्के पाकिस्तान में कानूनी ग्राह्य कर दिये गये। इन सिक्को को रिजर्व बैंक को लौटा दिया गया। मार्च १९४९ तक रिजर्व बैंक को इनके बदले ८२ करोड रुपये का सोना, सोने के बने सिक्के, स्टर्लिंग सिक्योरिटीज आदि देने पडे। इस प्रकार भारत मे नोट चलन से कम हो गये।

भारत और पाकिस्तान के बीच एक समझौता हुआ जिसमे भारतीय तथा पाकिस्तानी रुपये की विनिमय दर भी तय हुई। इस समझौते के अनुसार रिजर्व बैंक ने पाकिस्तान के १०० रुपये, भारत के ९९ ३१/३२ रुपयो के बदले मोल लेने तथा १०० १/३२ रुपयो के बदले बेचने की घोषणा की। परन्तु जब भारत ने अपने रुपये का अवमूल्यन किया और पाकिस्तान ने न किया तब इस विनिमय दर में बदल होनी स्वाभाविक ही थी। पहले तो बहुत समय तक भारत को यह आशा रही कि पाकिस्तान भी भारत के समान अपने रुपये का अवमूल्यन करेगा। परन्तु जब पाकिस्तान ने ऐसा न किया और भारत को पाकिस्तान के साथ व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने की आवश्यकता हुई तब भारत ने पाकिस्तान की दर को स्वीकार कर लिया। इसके कुछ ही समय पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने भी पाकिस्तान की दर को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार अब भारत के १४४ रुपये पाकिस्तान के १०० रुपए के

बराबर हो गये। परन्तु ३१ जौलाई १९५५ को पाकिस्तान ने अपने रुपये का अवमूल्यन भारत के समान ही कर दिया है। अब पाकिस्तान का एक रुपया १ शि० ६ पें० स्टर्लिंग तथा १ डालर ४·७६१९० पाकिस्तानी रुपये के बराबर है।

१७ सितम्बर १९४९ को इगलैंड ने स्टर्लिंग का अवमूल्यन किया। उसके साथ-साथ और बहुत से देशो ने भी अपनी-अपनी मुद्राओ का अवमूल्यन किया। भारत ने भी १९ सितम्बर को रुपये का बाह्य मूल्य सोने तथा डालर के रूप मे ३०·५ प्रतिशत घटा दिया। इस प्रकार रुपया जो पहले ३०·२ सेन्ट्स के बराबर था अवमूल्यन के पश्चात् २१ सेन्ट्स के बराबर रह गया।

रुपये के अवमूल्यन से भारत को यह आशा थी कि भारतवर्ष को विदेशी व्यापार में और विशेषतया अमेरिका के साथ व्यापार करने मे बहुत लाभ होगा। इससे भारतवर्ष को लाभ तो अवश्य हुआ परन्तु इतना नही जितनी कि आशा थी। अवमूल्यन से भारत को बहुत अधिक कठिनाइयो का सामना करना पडा क्योकि जो खाद्य सामग्री अथवा मशीनें सयुक्तराष्ट्र से भारत आई उनके दाम ४४ प्रतिशत बढ़ गये। इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा अन्तर्राष्ट्रीय बैंक से जो ऋण भारत ने लिया उसका भार भारत के ऊपर और अधिक बढ गया। पाकिस्तान के साथ व्यापार लगभग एक वर्ष तक बन्द रहा। भारतवर्ष जो पाकिस्तान से जूट तथा रूई मोल लेता था, उसको बडी कठिनाई का सामना करना पडा। अवमूल्यन से भारत मे वस्तुओ के मूल्य बहुत अधिक बढ गये और उपभोक्ताओ को बडे सकट का सामना करना पडा। इन्ही सब बातो के कारण भारतवर्ष मे इस बात की माँग है कि रुपये का पुनर्मूल्यन होना चाहिये। परन्तु भारत सरकार अभी तक यह बात मानने को तैयार नही है कि अवमूल्यन से भारतवर्ष को हानि हुई है। इसलिये वह रुपये का पुनर्मूल्यन करने को तैयार नही है।

पचवर्षीय योजना का मुद्रा तथा करेन्सी पर प्रभाव—

मुद्रा तथा करेन्सी पर योजना का प्रभाव जानने के लिये हमको योजनाकाल को दो भागो मे बाँटना पडेगा। पहला काल १९५१–५३ का है जिसमे द्रव्य की पूर्ति २१४ करोड रुपये घट गई जिसमे से कि अधिकतर १९५१–५२ मे घटी। इसके पश्चात् अगले तीन वर्षो मे द्रव्य की पूर्ति ४२० करोड रुपये बढ गई। इस प्रकार कुल योजनाकाल मे २०६ करोड रुपये की द्रव्य पूर्ति बढी। इसके अतिरिक्त इस बीच बैंक द्रव्य मे भी १३७ करोड रुपये की वृद्धि हुई।

पहले दो वर्षो मे द्रव्य की कमी का कारण हमारे विदेशी विनिमय के साधनो मे कमी होना था। इस काल में रिजर्व बैंक के विदेशी विनिमय के साधन १९० करोड रु० तक घट गये। पिछले तीन वर्षो मे मुद्रा बढने के दो कारण थे—(१) बजट मे घाटा तथा (२) बैंको द्वारा निजी उद्योगो तथा व्यापार के लिये साख निर्माण करना। इस बीच मे विदेशी विनिमय के साधनो मे भी २२ करोड रुपये

की वृद्धि हुई। इसके कारण भी नोटों मे कुछ वृद्धि हुई। परन्तु आजकल तो विदेशी विनिमय के साधन निरन्तर कम होते जा रहे हैं परन्तु नोटो की पूर्ति निरन्तर बढती जा रही है। ये नोट अधिकतर रुपया प्रति-भूतियो को रिजर्व मे रखकर छापे जाते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आजकल भारतवर्ष का रुपया प्रामाणिक सिक्का है। यह १८० ग्रेन का है। द्वितीय महायुद्ध के पहले यह ११/१२ शुद्ध चाँदी का था परन्तु महायुद्ध मे यह ५/१२ शुद्ध रह गया। १९४७ की अप्रैल से रुपया गिलट का बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार एक रुपये का नोट भी छापती है जो हर दृष्टि से एक रुपये के सिक्के के बराबर है। छोटे-छोटे सौदो को तय करने के लिये सांकेतिक सिक्के हैं जिनमे चवन्नी, दुवन्नी, इकन्नी, अधन्ना, पैसा तथा पाई हैं। इनके अतिरिक्त अठन्नी का सिक्का भी है। इन सबको भारत सरकार बनाती है। भारतवर्ष मे रुपया यद्यपि प्रामाणिक सिक्का है तो भी न तो इसकी स्वतन्त्र मुद्रा ढलाई है और न इसका टकसाली मूल्य इसके वास्तविक मूल्य के बराबर है। इसी लिये इसको सांकेतिक प्रमाण कहते हैं। अगस्त १९५५ ई० मे भारत सरकार ने दशमलव प्रणाली को स्वीकार करके रुपए को १०० भागो मे बाँटकर दशमलव प्रणाली का सूत्रपात किया। ये सिक्के एक अप्रैल सन् १९५७ ई० से चालू किये गये हैं।

परन्तु प्रारम्भ मे ३ वर्ष तक नये और पुराने दोनो प्रकार के सिक्के चलेंगे। धीरे-धीरे पुराने सिक्के निकाल लिये जायेंगे और अन्त मे नये सिक्के चलन मे रह जायेंगे।

नई दशमलव प्रणाली के अनुसार एक रुपये मे १०० नये पैसे हैं। नई प्रणाली मे १ पैसा, २ पैसे, ५ पैसे, १० पैसे, २५ पैसे, ५० पैसे, तथा १०० पैसे के सिक्के होंगे। नया सिक्का कांसे या कसकुट का बना होगा। २, ५ और १० नये पैसो के सिक्के तीन चौथाई ताँबे तथा एक चौथाई निकल से मिली धातु से बनाये जायेंगे। २५, ५०, १०० नये पैसो के सिक्के वर्तमान चवन्नी, अठन्नी, रुपये की भाँति निकल के बने होंगे।

रुपये के विदेशी मूल्य को भारतवर्ष अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को दी हुई विनिमय दर के अनुसार नियन्त्रित करता है। रिजर्व बैंक केवल कुछ अधिकृत लोगों को विदेशी विनिमय बेच सकता है और वह भी दो लाख से कम नहीं। १९४७ ई० से हमारा रुपया स्टर्लिंग के अतिरिक्त और दूसरी मुद्राओं से सम्बन्धित हो गया है। इस प्रकार भारत के वर्तमान मान को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा नियन्त्रित मान कह सकते हैं।

Q 87. What are sterling balance ? How have they been accumulated and utilized ?

प्रश्न ८७—पौंड पावने से क्या अभिप्राय है ? यह कैसे एकत्र हुआ तथा उसका किस प्रकार उपयोग किया गया ?

पौंड पावने वह धन है जो भारतवर्ष ने स्टर्लिंग सिक्योरिटीज में लगाया हुआ है। आजकल यह रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया के आधीन है और रिजर्व बैंक ने उसके पीछे नोट छाप रक्खे हैं। भारतवर्ष ने सदा ही स्टर्लिंग को अपने रिजर्व मे रक्खा है। भारत के अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष का सदस्य होने से पूर्व रिजर्व बैंक जितने रुपये के नोट छापता था उसका ⅖ भाग सोने के सिक्के अथवा स्टर्लिंग सिक्योरिटीज के रूप मे रखता था। रिजर्व बैंक एक्ट की एक धारा के अनुसार स्टर्लिंग इतनी ही अच्छी मानी गई थी जितना कि सोना। इसीलिये जब द्वितीय महायुद्ध छिड़ा और सरकार को रुपये की आवश्यकता हुई तो उसने स्टर्लिंग सिक्योरिटीज के पीछे नोट छापने के लिये सरकार को बाध्य किया। इस प्रकार स्टर्लिंग सिक्योरिटीज रिजर्व बैंक के पास एकत्र हो गई।

उसके एकत्रित होने के कारण—पौंड पावने की युद्ध काल मे आश्चर्यजनक वृद्धि हुई। इसके कई कारण थे—(१) ब्रिटेन ने युद्ध काल मे भारतवर्ष से बहुत सा माल खरीदा। इस माल के बदले उसने भारत को रुपये नही दिये, न ही सोना दिया वरन् इगलैंड की सरकार ने अपने प्रमाण-पत्र दिये जो भिन्न अवधियो के थे। (२) भारत ने मित्र-राष्ट्रो की जनता तथा सेनाओ के लिये भी बहुत अधिक माल भेजा जिसके फलस्वरूप भारत का व्यापारिक सतुलन इन देशो के साथ भी पक्ष मे रहा। (३) युद्ध काल मे ब्रिटिश भारत मे रहने वाले समस्त व्यक्तियो को डालर तथा अन्य दुर्लभ मुद्राओ के रूप मे जो धन मिलता था वह भी ब्रिटिश साम्राज्य के 'डालर पूल' के लिये अनिवार्य रूप से ले लिया गया। (४) अमरीका को निर्यात तथा अमरीका की सेना पर भारत मे होने वाले व्यय के बदले मे भारत को जो डालर प्राप्त हुये वे भी 'डालर पूल' मे जमा कर दिये गये। इस प्रकार भारतवर्ष को जो इगलैड अथवा विदेशो से पाना था उन सब के बदले स्टर्लिंग सिक्योरिटीज दी गई। भारत सरकार इनको रिजर्व बैंक को देती रही और रिजर्व बैंक उनको रिजर्व मे रखकर नोट छापता रहा।

पौंड पावने का उपयोग—युद्ध समाप्त होने पर इस देश में इस बात की बडी चर्चा हुई कि पौंड पावने का उपयोग किस प्रकार किया जाय। भारत के भिन्न-भिन्न लोगों ने भिन्न भिन्न सुझाव रक्खे। किसी ने कहा कि इनके बदले इगलैंड से मशीनें मँगाई जायें। किसी ने कहा कि इनको अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के पास धरोहर के रूप में रखकर कोष से ऋण लिया जाय। इसके विपरीत इगलैंड मे कुछ ऐसे लोग थे जो इनको युद्ध ऋण बताकर बहुत कम कर देना चाहते थे।

इस प्रकार की खीचातानी मे अगस्त १६४७ मे भारत इगलैंड के बीच एक अन्तर्कालीन समझौता (Interim agreement) हुआ। यह समझौता केवल छ मास के लिये था। जनवरी १६४८ मे इस समझौने की अवधि फिर छः मास के लिये बढा दी गई। इन दो समझोतो से ८३० लाख पौंड पावने भारत को फिर मिले, इनमे से केवल ३० लाख पौंड काम में लाये जा सकते थे। इनके पश्चात् जून १६४८ में होने वाले समझौते के अनुसार ३० जून १६५१ तक के समय मे भारत को उसके गत वर्षों के बचे हुये १०७ करोड रुपये के अतिरिक्त १०६ करोड रुपये अपनी इच्छा के अनुसार खर्च करने की स्वतन्त्रता दी गई। उसी समय भारत सरकार ने पौंड पावने मे से ब्रिटिश सरकार को करीब ३५७ करोड रुपया युद्ध सामग्री के खरीदने तथा ब्रिटिश अफसरो की पेंशनें चुकाने के लिये दे दिये। जुलाई १६४६ मे एक नया समझौता हुआ जिसमे भारत को यह अधिकार दिया गया कि जून १६५१ तक १०६ करोड रुपये के वदले १३३ करोड रुपये तक खर्च कर सकेगा। इसी समझौने मे यह भी निश्चय किया गया कि भारत १६४८-४६ के लिये लगभग १०८ करोड रुपय खच कर सकेगा। फरवरी १६५२ मे इस सम्बन्ध मे सबसे आखरी समझौता हुआ। यह समझौता ३० जून १६५७ तक के लिये किया गया है। इस समझौते के अनुसार ब्रिटेन १ जौलाई १६५१ ई० से लेकर छ वर्ष तक प्रतिवष ३½ करोड पौंड स्टर्लिग सम्पत्ति भारत को देगा। अक्टूबर १६५१ ई० के एक दूसरे समझौते के अनुसार भारत को यह अधिकार दिया गया है कि वह ३१ करोड पौंड सकट के समय इगलैंड की आज्ञा से खच कर सकता है।

इस सम्बन्ध म यह बात बताने योग्य है कि पौंड पावने को भारत ने बडी कठिनाई से एकत्रित किया था। युद्ध के समाप्त होने पर यह आशा की गई कि इनको विदेशों से मशीनें आदि मँगाने के लिये काम मे लाया जायेगा अथवा इनके द्वारा अग्रेजी व्यापारी कम्पनियों को खरीदा जायेगा। पर खेद है कि वे प्राय. सबके सब विदेशो से अन्न मँगाने मे समाप्त हो गये और हम जैसे के तैसे ही रह गये।

——:o:——

Q 88. What do you understand by the Devaluation of Rupee ? How has it affected the economy of India ? Are you in favour of the revaluation of Indian rupee ?

प्रश्न ८८—रुपए के अवमूल्यन से क्या अभिप्राय है ? इससे भारतीय रुपये पर क्या प्रभाव पडा ? क्या आप भारतीय रुपए के पुनर्मूल्यन के पक्ष मे है ?

रुपये के अवमूल्यन का अभिप्राय है रुपये की विनिमय दर को कम कर देना। अवमूल्यन से पूर्व हमारा रुपया ३०·२२५ सेंट के बराबर था पर अब रुपया २१ सेंट के बराबर रह गया। इस प्रकार हमारे रुपये का मूल्य ३०·५ प्रतिशत कम कर दिया गया।

भारत से पहले ब्रिटेन ने पौंड स्टर्लिंग का अवमूल्यन किया। ब्रिटेन के साथ ही साथ ब्रिटिश साम्राज्य के बहुत से देशो ने भी अपनी-अपनी मुद्राओ का अवमूल्यन किया। ऐसा होने पर भारतवर्ष ने भी रुपए का अवमूल्यन किया। यदि भारत ऐसा न करता तो उसको अवमूल्यन करने वाले देशो की अपेक्षा दुर्लभ मुद्रा वाले देशो से व्यापार करने मे हानि होती। यही बात सोचकर भारत ने रुपए का अवमूल्यन किया। परन्तु जैसा कि भारत सोचता था उसके पडौसी देश पाकिस्तान ने अपने रुपये का अवमूल्यन नही किया।

अवमूल्यन पर भारतीय रुपये का प्रभाव—रुपये के अवमूल्यन का भारतीय द्रव्य पर निम्नलिखित प्रभाव पडा—

(१) डालर क्षेत्रो मे भेजे जाने वाले माल के निर्यात को प्रोत्साहन मिला क्योकि अवमूल्यन के पश्चात् हमारा माल पहले से सस्ता हो गया।

(२) इसके विपरीत डालर देशों से आने वाला माल हमको महँगा पडने लगा और क्योकि आज हमारा देश बहुत सा अन्न तथा मशीनें डालर देशो से मँगाता है। इस कारण हमे बहुत घाटा हो रहा है।

(३) पाकिस्तान जिसने कि अपने रुपये का अवमूल्यन नही किया, उसके साथ व्यापार करने मे हमको बहुत घाटा रहा। पाकिस्तान से आने वाला जूट, रूई तथा अन्य चीजें हमारे लिये पहले से ४४ प्रतिशत महँगी हो गई। इससे हमारे जूट तथा रूई के उद्योग को बहुत भारी धक्का लगा। पहले भारत यह चाहता था कि पाकिस्तान को भी परिस्थिति से विवश होकर अपने रुपए का अवमूल्यन करना पडेगा। इसी कारण भारत ने पाकिस्तान से बहुत समय तक व्यापारिक सम्बन्ध न रक्खे। इतना सब होते हुए भी पाकिस्तान ने ऐसा न किया। अन्त मे भारत को पाकिस्तान की पुरानी ही विनिमय दर माननी पडी और पुन पाकिस्तान से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने पडे। इस व्यापार मे भारत को हानि हुई। भारत को पाकिस्तान से कुछ रुपया लेना था। अवमूल्यन के कारण भारत को पहले से ४४ प्रतिशत रुपये कम मिलते। परन्तु हाल ही मे पाकिस्तान ने भी अपने रुपये का अवमूल्यन कर दिया है।

(४) अवमूल्यन के कारण भारतवर्ष को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से लिये हुये ऋण पर ४४ प्रतिशत रुपये अधिक देने पडेंगे, तथा उस ऋण पर लगे हुये ब्याज को भी पहले से अधिक देना पडेगा।

(५) भारतवर्ष को पौंड पावने के उस भाग का जो उसको डालर के रूप मे मिलेगा ४४ प्रतिशत कम मिलेगा।

(६) अमरीका तथा डालर देशो मे भारतीय राजदूतो का खर्च ४४ प्रतिशत बढ़ गया।

(७) अवमूल्यन से हमारी शोधनाधिक्य (Balance of payments) के सन्तुलन होने मे भी कोई विशेष लाभ न हुआ। हमारी शोधनाधिक्य की समस्या

कुछ समय तक तो सुधरी परन्तु इसके पश्चात् जब हमारी खाद्य समस्या गम्भीर होती गई तब यह समस्या पहले से भी गम्भीर हो गई।

अवमूल्यन का प्रभाव देश पर यह हुआ कि उसके कारण बहुत सी चीजो का मूल्य बहुत बढ गया और देश के उपभोक्ताओ को भारी कठिनाई का सामना करना पडा।

रुपये का पुनर्मूल्यन—इस प्रकार हम देखते हैं कि रुपये के अवमूल्यन से हमको विशेष लाभ नही हुआ। यह बात तो ठीक है कि इस कारण हमारे निर्यात मे कुछ वृद्धि हुई पर इस दर के द्वारा देश को जो हानि हुई वह लाभ से कही अधिक है। इस कारण देश के अन्दर प्राय सभी चीजो का मूल्य बढ गया जिससे उपभोक्ताओ को बडी हानि हुई। पाकिस्तान तथा दूसरे दुर्लभ मुद्रा वाले देशो से व्यापार करने मे हानि हुई। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से लिया हुआ ऋण रुपये के रूप मे बढ गया और इसी प्रकार से कई तरफ हानि हुई। इसी कारण देश के कुछ लोग जिनमे डा० जोन मेथाई, भूतपूर्व वित्त मन्त्री भी सम्मिलित हैं, यह कहते हैं कि रुपये का पुनर्मूल्यन होना चाहिये जिससे कि यह सब हानि दूर सके। डा० मेथाई ने पुनर्मूल्यन के निम्नलिखित लाभ बताये हैं—

(१) इससे हमे विदेशो से मँगाये हुये गल्ले के कम दाम देने पडेंगे।

(२) इससे हमें व्यापार मे थोडा सा लाभ होगा।

(३) इसके कारण हमारी शोधनाधिक्य की स्थिति किसी-प्रकार भी खराब न होगी।

(४) यद्यपि चुँगी आदि से कम आय होगी तो भी यह कमी खर्च में भी कमी होने से पूरी हो जायेगी।

डा० मेथाई का कहना है कि जो लोग यह कहते हैं कि आजकल की ससार मे होने वाली गडबड के कारण कोई ऐसा कार्य न करना चाहिये, उनको यह समझना चाहिये कि गडबड के कारण हमे पुनर्मूल्यन के प्रश्न को खटाई मे नही डालना चाहिये वरन् इसी कारण हमे शीघ्र कदम उठाना चाहिये। इसके साथ ही साथ डा० मेथाई का कहना है कि अभी हाल ही मे शान्ति की कोई आशा दिखाई नही पडती। इस कारण हमें चाहिये कि हम इस बात की बाट न देखें कि दूसरे देश क्या करते हैं क्योकि जो वे करेंगे वह हमारे लिये किसी प्रकार भी उपयोगी न होगा वरन् हम अपनी परिस्थिति को देखते हुये जो कदम उठायगे वही हमारे लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

अभी हाल ही मे इस देश मे इस बात की बडी चर्चा थी कि रुपये का फिर से अवमूल्यन किया जाय। परन्तु सरकार इस बात के पक्ष मे नही है। उसका कहना है कि रुपय की स्थिति बहुत मजबूत है और यह हो सकता है कि कुछ दिनो मे यह दुर्लभ मुद्रा हो जाय। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के मैनेजिंग डाइरेक्टर श्री जेकबसन ने १५ फरवरी १९५८ ई० को बम्बई मे कहा कि वर्तमान भुगतान

आधिक्य की समस्या को सुलझाने का ठीक ढंग यह नही है कि रुपये का अवमूल्यन किया जाय। उन्होने प्रेस कान्फ्रेन्स मे कहा, "आपको मामले की जड़ मे जाना चाहिये। आप को साख समस्या तथा अन्तर्राष्ट्रीय खर्च के प्रश्न को सुलझाना चाहिये बजाय इसके कि आप विनिमय दर के आर्जी पहलू को छुएँ।" उन्होंने आगे कहा "कि मैं अवमूल्यन को दूर करना चाहूँगा। यदि कोष एक बार अवमूल्यन का सहारा लेगे तो जब दूसरी बार इसी प्रकार की कठिनाइयाँ आयेंगी तो लोग दूसरे अवमूल्यन की आशा करेंगे और आप एक अवमूल्यन से दूसरे पर जायेंगे और लोगों का मुद्रा पर से विश्वास उठ जायगा।"

O. 89. What are the causes of the Foreign Exchange crisis in India ? How can it be solved ?

प्रश्न ८९—भारत मे विदेशी विनिमय संकट के क्या कारण हैं ? यह कैसे दूर किया जा सकता है ?

संकट का अनुमान—सयुक्त राष्ट्र अमेरिका मे अपना तीन सप्ताह का दौरा समाप्त करने के पश्चात् श्री बी० के० नेहरू भारतीय वित्त सचिव ने प्रेस रिपोर्टरो से कहा कि भारतीय भुगतानाधिक्य कमी १० मिलियन डालर प्रति सप्ताह की गति से चल रही है और यदि देश ने वर्तमान अर्थ-व्यवस्था तथा पच-वर्षीय योजना को कायम रक्खा तो इसके रिजर्व इस वर्ष के अन्त तक समाप्त हो जायेंगे। इस कारण १९५८ के समाप्त होने के पूर्व कुछ भुगतानाधिक्य सहायता की बडी आवश्यकता है। श्री नेहरू ने बताया कि वर्तमान मे भारत के रिजर्व ४३० मिलियन डालर (लगभग २ ५० मिलियन रुपये) हैं। भारत के सामने अब या तो यह छाँट है कि वह कही से ऋण ले या वह आयात को काटकर अपनी अर्थ-व्यवस्था को भूखो मार दे।

भारतवर्ष की विदेशी विनिमय की स्थिति १९५८-५९ मे कुछ अच्छी रही क्योंकि इस वर्ष हमने अपने विदेशी विनिमय के साधनो मे से केवल ४७ करोड़ रु० ही खर्च किये जबकि १९५७-५८ मे २६० करोड रु० तथा १९५६-५७ मे २२१ करोड़ रु० खर्च किये गये। परन्तु १९५९-६० मे एक बडी खाई होने की आशा है तथा भविष्य मे और भी अधिक होने की आशा है।

सकट का कारण—वर्तमान सकट का कारण जानने के लिये हमको लघुकालीन व दीर्घकालीन दोनो प्रकार के कारणो को देखना पडेगा। लघुकालीन कारणों मे हमारे हाल ही मे किये गये बहुत अधिक आयात हैं। हमारे देश ने हाल मे इतने अधिक आयात व इतने कम निर्यात किये कि उसके कारण हमारा सकट बढता चला गया। अगले दो वर्षों मे हमको बहुत सी आयात का धन चुकाना है। यहाँ तक कि अप्रैल १९५९ से पहले हमको लगभग ३०० करोड़ रु०

का भुगतान करना पडेगा। इस कमी को विदेशी ऋणो द्वारा पूरा नहीं किया जा सकता क्योकि वे कुछ विशिष्ट कार्यों के लिये दिये गये हैं। आजकल हमारे विदेशी विनिमय के साधन इतने कम हो गये हैं कि हम उनको और कम करने का साहस नही कर सकते।

भारत ने पिछले दो वर्षों मे १२५ करोड रुपये प्रति वर्ष गल्ला विदेशो से खरीदा। परन्तु योजना मे धारणा की गई थी कि हम केवल ४८ करोड़ प्रति वर्ष गल्ला खरीदेंगे। इसके अतिरिक्त पिछले दो वर्षों मे उत्पादन को बढाने के लिये भारत ने बहुत सा कच्चा माल विदेशो से खरीदा। इसके अतिरिक्त हमारे देश मे मशीनों का आयात भी बहुत बढ गया है। इन तीनो प्रकार की आयात का भुगतान करने के लिये भारत ने निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये बहुत से प्रयत्न किये। उदाहरण के लिये भारत ने बहुत सी Export Promotion Councils स्थापित की, विदेशी बाजारो को ढूंढने का प्रयत्न किया गया, आयात कर मे परिवर्तन किया गया आदि। परन्तु इसके होते हुये भी हमारे निर्यात बहुत अधिक न हो सके। इसका कारण यह है कि भारत को कच्चा माल निर्यात करने में कुछ साधारण कठिनाइयो का सामना करना पडता है तथा कुछ घरेलू कठिनाइयाँ भी हैं। घरेलू कठिनाइयो मे घरेलू बाजारों मे निर्यात की जाने वाली वस्तुओ के मूल्य का अधिक होना, उनकी देश मे अधिक मांग होना आदि हैं। उदाहरण के लिये भारत विदेशों को चीनी व खाने का तेल भेज सकता है परन्तु चीनी का मूल्य देश मे ही इतना है कि व्यापारी उसको निर्यात करना नही चाहते। इसके अतिरिक्त खाने के तेल की देश मे इतनी कमी थी कि पिछले वर्षों मे उसके निर्यात पर पूरी पाबन्दी थी। निर्यात को प्रोत्साहन देने के लिये देश के लोगों से यह भी नही कहा जा सकता कि वे अपने जीवन स्तर को घटायें क्योकि भारतवासियों का जीवन स्तर पहले ही बहुत नीचा है। इस प्रकार भारत से निर्यात का अवसर कम है। इसी कारण निकट भविष्य में हमारे देश मे विदेशी विनिमय का सकट रहने वाला है। हाँ, यदि हमको कुछ विदेशी सहायता मिल गई तो भले ही यह सकट कुछ समय के लिये टल जाय, सदा के लिये नही टल सकता।

परन्तु यह बात ध्यान रखनी आवश्यक है कि विदेशी विनिमय का सकट केवल लघुकालीन ही नहीं है वरन् वह दीर्घकालीन भी है। भविष्य में जब तक भारत अपनी उन्नति की योजनायें बनाता रहेगा तब तक उसको विदेशो से मशीनों आदि का आयात करना पडेगा। इस सब आयात का भुगतान करना देश की नीति से सम्भव नही है। इसी कारण दीर्घकाल में भी सकट होने की आशा है। श्री पी० एस० लोकनाथन ने अपने एक लेख मे कहा है कि भारतीय विदेशी विनिमय सकट के विषय मे आश्चर्यजनक बात यह नहीं है कि इसने इतनी शीघ्र इतना भयानक रूप धारण कर लिया वरन् यह है कि यह इतनी देर मे आया।

१९५१ ई० में जब प्रथम पचवर्षीय योजना बनाई गई थी तब यह अनुमान

लगाया था कि भारत के विदेशी विनिमय के साधनो मे से २९० करोड रुपये निकालने पड़ेंगे। परन्तु प्रथम योजनाकाल मे चालू विपरीत व्यापारी आधिक्य इतना कम था कि केवल १२१ करोड रुपये ही निकालने पडे। इस प्रकार हमारे विदेशी विनिमय का रिजर्व ७५९ करोड रुपये रह गया था। प्रथम योजनाकाल मे कम विपरीत व्यापारिक आधिक्य होने का कारण यह था कि मानसून के अच्छा होने के कारण फसल अच्छी हो गई। इस कारण हमको विदेशो से गल्ला व कच्चा सामान मँगाने की कम आवश्यकता पडी। इसके अतिरिक्त प्रथम योजनाकाल मे न तो लोहे व फौलाद तथा अन्य भारी उद्योगो की स्थापना की गई और न गैर-जरूरी चीजो का आयात किया गया। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रथम योजना काल मे उतना खर्च नही किया गया जितना कि सोचा गया था। इसके अतिरिक्त हमको अमेरिका से गेहूँ का ऋण मिला व कालम्बो योजना देशो से भी बहुत सी सहायता मिली। इन सब बातो के कारण उस काल मे हमारे चालू व्यापारिक आधिक्य की खाई कम हो गई थी। इस कारण हमको भविष्य भी उज्ज्वल दिखाई पड़ने लगा।

दूसरी योजना मे अनुमान लगाया गया था कि योजना के प्रथम वर्ष मे २०० करोड रुपये के, दूसरे वर्ष मे ९०० करोड रुपये तथा तीसरे वर्ष मे १००० करोड रुपये के आयात किये जायगे तथा उस काल के पश्चात् के दो वर्षों में ८०० करोड रुपए प्रति वर्ष के आयात किये जायेंगे। इस प्रकार योजनाकाल का योग ४३४० करोड रुपये रक्खा गया था। इसके विपरीत निर्यात से ६०० करोड रु० प्रति वर्ष प्राप्त करने का अनुमान था। इस प्रकार ५ वर्षों का योग ३००० करोड रु० था। यह भी अनुमान लगाया था कि इस बीच २२५ करोड रु० के अतिरिक्त विनियोजन (Investments) किये जायेंगे। इस प्रकार विदेशी विनिमय मे ११०० करोड रु० की कमी का अनुमान था।

परन्तु योजनाकाल मे किये गये अनुमान ठीक सिद्ध न हुये क्योकि १९५६-५७ में ७०० करोड की अपेक्षा १०७७ करोड रुपये के आयात किये गये १९५७-५८ मे ९०० करोड की अपेक्षा ११७५ करोड रुपये के आयात किये गये। इसके विपरीत इन दो वर्षों के निर्यात क्रमश ६३७ करोड रुपए और ५७५ करोड रुपये थे। इस प्रकार देश म विदेशी विनिमय के साधनो में एक बडी खाई खड़ी हो गई। इस प्रकार योजना के पहले दो वर्षों म रिजर्व बैंक में से ७७९ करोड रु० की विदेशी विनिमय खर्च हो गई। अप्रैल १९५८ के प्रारम्भ मे रिजर्व बैंक के विदेशी विनिमय के साधन ४७९ करोड रु० थे। परन्तु जून १९५८ ई० के अन्त तक लगभग २१८ करोड रु० के तथा जौलाई १९५८ के तीसरे सप्ताह तक लगभग २०० करोड रु० के साधन थे। आजकल हम बडी भयानक परिस्थिति मे हैं और यदि इसी गति से हमारे विदेशी विनिमय के साधन कम होते रहे तो १९५८ ई० के अन्त तक वे प्राय समाप्त हो जायगे।

परन्तु जहाँ हमारे सामने यह निराशाजनक स्थिति है वहाँ कुछ आशाजनक बातें भी दिखाई पडती हैं। अभी विदेशो मे विशेषत अमेरिका, इगलैंड आदि मे यह बात अनुभव की जा रही है कि भारत को अधिकाधिक सहायता दी जाय। इसके फलस्वरूप पिछले तीन वर्षों मे हमको ४३८ करोड रुपये की विदेशी सहायता प्राप्त हो गई है और आशा है कि अगले दो वर्षों मे हमको ६०० करोड रु० की सहायता प्राप्त हो जाय। परन्तु फिर भी लगभग ४०० करोड रु० की आवश्यकता पडेगी।

परन्तु योजना के भार के अतिरिक्त अगले कुछ वर्षो मे हमारे ऊपर विदेशी ऋण को चुकाने का भार पडने वाला है। यह ऋण इस प्रकार चुकाया जायगा। १९५८-५९ में २३ करोड रु०, १९५९-६० मे ३५ करोड रु०, १९६०-६१ मे ६१ करोड रु०, १९६१-६२ मे १२३ करोड रु०, १९६२-६३ में १०७ करोड रु०, १९६३-६४ मे ४८ करोड रु० तथा १९६४ ६५ मे ३५ करोड रु०। इसके अतिरिक्त तीसरी योजना काल मे भी विदेशी विनिमय की बहुत आवश्यकता पडेगी क्योंकि इस योजना मे भी भारी उद्योगो के ऊपर ही अधिक जोर दिया जायगा। इस कारण ऐसी आशा है कि अगले कुछ वर्षों मे हमारी विदेशी विनिमय के साधनो की आवश्यकता ६०० करोड रु० प्रति वर्ष होगी परन्तु इन साधनो को न तो हम अपने आयात कम करके और न अपने निर्यात बढाकर पूरे कर सकते हैं। इस कारण हमको विदेशी सहायता पर निर्भर रहना पडेगा।

कुछ सुझाव—वैसे तो भविष्य मे हमको विदेशी विनिमय के सकट रहने की आशा है तो भी हम स्थिति का मुकाबला करने के लिये कुछ सुझाव दे सकते हैं —

(१) चीनी, तेल, सूती कपडे आदि के निर्यात को प्रोत्साहन दिया जाय।

(२) आयात को कम किया जाय। इसके लिये हमको जहाँ तक सम्भव हो अपने उपभोग को कम करना चाहिये। परन्तु उद्योगों मे काम आने वाले कच्चे माल के आयात को कम नही करना चाहिय।

(३) कृषि की उन्नति की जाय और इस प्रकार कृषि पदार्थों का आयात कम कर दिया जाय।

(४) विदेशी पूँजी के विषय मे एक ऐसी नीति रक्खी जाय जिससे कि वह अधिकाधिक मात्रा मे देश मे लगाई जा सके। श्री पी० सी० जैन का सुझाव है कि जहाँ तक हो विदेशी निजी पूँजी को देश मे आने का प्रोत्साहन दिया जाय। यह तब आ सकती है जबकि वह अपने आप को सुरक्षित समझे।

(५) निर्यात की जाने वाली वस्तुओ के उद्योगो को प्रोत्साहन दिया जाय। यह तभी हो सकता है जब कि हमारी लागत विदेशो से कम हो। लागत को कम करने के लिये सरकार को चाहिए कि वह निर्यात करने वाले उद्योगो पर कोई कर न लगाये। मजदूरो की मजदूरी अगले कुछ वर्षों में न बढे परन्तु मजदूर अपनी पूरी शक्ति लगा कर कार्य करें।

(६) कम अवधि वाले ऋणो को दीर्घ अवधि वाले ऋणों मे बदला जाय।

(७) तीसरी योजना को दो भागो मे बांटा जाय। एक भाग को प्राप्त होने वाली विदेशी सहायता से सम्बन्धित रक्खा जाय तथा दूसरे भाग को उससे सम्बन्धित न किया जाय। दूसरे भाग मे केवल वही कार्यक्रम रक्खे जायें जो विदेशी सहायता प्राप्त न होने पर किये जा सकें। परन्तु यदि वह प्राप्त न हो तो उससे पहले भाग की योजनाओ को कोई हानि न हो।

(८) देश मे इस प्रकार का प्रचार किया जाय कि लोग अपना छुपा हुआ सोना जिसका अनुमान ३००० करोड रु० सोना व २००० करोड़ रु० चांदी है, देश के हित के लिये दे सकें।

इन सब बातो के करने से शायद विदेशी विनिमय का संकट कुछ कम हो सकता है।

इसमे निम्नलिखित प्रकार के बैंक सम्मिलित हैं—

(१) देशी बैंक व महाजन, (२) सहकारी साख समितियाँ, (३) भूमि बंधक बैंक, (४) औद्योगिक बैंक, (५) व्यापारिक बैंक, (६) विनिमय बैंक, (७) स्टेट बैंक, (८) रिजर्व बैंक।

इनमे से पहले चार बैंको के विषय मे उनके यथास्थान पर लिखा जा चुका है। इस कारण हम शेष चार बैंको का ही इस अध्याय में वर्णन करेंगे।

Q. 90 What business do Indian Joint Stock Banks transact? What are their difficulties and defects? Give suggestions for their improvement. Why have they not been nationalized?

प्रश्न ९०—भारतीय व्यापारिक बैंक क्या कार्य करते है? उनकी क्या कठिनाइयाँ तथा दोष हैं? उनको उन्नत करने के सुझाव दीजिए। उनका राष्ट्रीयकरण क्यों नहीं किया गया?

भारतीय व्यापारिक बैंक भारत के व्यापार तथा उद्योग धन्धो के लिये बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। वे अपने हिस्से बेचकर जनता से धन एकत्र करते हैं। इसके अतिरिक्त इन बैंको का मुख्य कार्य जनता से स्थायी, चालू, बचत तथा गोलक खातो के लिए जमाय आकर्षित करना है। इन जमाओ पर ये बैंक ब्याज भी देते हैं परन्तु चालू खाते पर ब्याज की दर स्थायी खाते की अपेक्षा बहुत ही कम होती है।

जनता से लिये हुए धन को यह बेकार नहीं पडा रहने देते। उसको यह भिन्न-भिन्न प्रकार से लगा देते हैं। परन्तु धन लगाते समय वे इस बात का ध्यान रखते हैं कि उनको अधिक से अधिक आय हो परन्तु यह बात भी ध्यान रखते हैं कि उनका रुपया मारे जाने का भय न हो। इस प्रकार अपने कुल धन का २० प्रतिशत नक्द कोष, सोने तथा अन्य प्रथम श्रेणी के सिक्योरिटीज मे रखते हैं। इसके अतिरिक्त अपनी माँग जमाओ का ५ प्रतिशत तथा अपनी समावधि जमाओ का २ प्रतिशत ये *रिजर्व बैंक के पास रखते हैं। शेष को ये ऋण-पत्रो, भिन्न-भिन्न प्रकार के ऋणो* आदि मे लगा देते हैं। ऋण के बदले जो धरोहर ये लेते हैं वह ऐसी होती है जो बाजार मे बिना कठिनाई के शीघ्रतातिशीघ्र बिक जाये। ये बैंक थोडे समय के लिए ही ऋण देते हैं। य अधिकतर व्यापारी लोगो को ही ऋण देते हैं। उद्योग-पतियो को जो ऋण दिया जाता है वह भी उनकी दैनिक आवश्यकताओ की पूर्ति करने के लिए थोडे समय के लिए ही दिया जाता है।

इन कार्यों के अतिरिक्त वे और भी बहुत से कार्य करते हैं, जैसे एक स्थान से दूसरे स्थान को रुपया भेजना, अपने ग्राहकों को अर्थ सम्बन्धी सलाह देना, उनके लिये हिस्से तथा सरकारी ऋण-पत्र बेचना तथा खरीदना आदि।

भारतीय व्यापारिक बैंको की कठिनाइयाँ

व्यापारिक बैंको से भारतवर्ष को काफी लाभ हुआ परन्तु कुछ कठिनाइयो के कारण ये अधिक उन्नति न कर सके। ये कठिनाइयाँ निम्नलिखित हैं—

(१) इन बैंको को न तो केन्द्रीय सरकार की ओर से ही कोई सहयोग तथा प्रोत्साहन मिलता है और न प्रान्तीय, रियासती तथा स्थानीय सरकारो ने ही अपना लेन-देन इनसे रक्खा है।

(२) विदेशी विनिमय बैंको का कार्य बन्दरगाहो तक ही सीमित न रहा वरन् उनकी शाखायें देश के भीतर भी खुल गई जिससे इन बैंको के साथ भारतीय बैंको की प्रतियोगिता बढ गई।

(३) भारत का अधिकतर व्यापार विदेशियो के हाथ मे रहने के कारण भारतीय व्यापारिक बैंको को अधिक कार्य नही मिलता क्योकि विदेशी लोग विदेशी बैंको से अपना सम्बन्ध रखते हैं।

(४) विदेशियो के अतिरिक्त वे भारतवासी भी जिनपर विदेशियो का प्रभाव है भारतीय व्यापारिक बैंको से अपना सम्बन्ध नही रखते।

(५) भारतीय बैंको को राज्य बैंको से भी बडी प्रतियोगिता करनी पडी जिसके कारण इनको बडी हानि होती है।

(६) भारतवर्ष मे अचल सम्पत्ति के कुछ ऐसे नियम बने हुए हैं जिनके कारण व्यापारिक बैंक उनमे अपना रुपया नही लगा सकते। इसके कारण साख बढाने मे बडी कठिनाई आती है।

(७) उनके पास कार्यशील पूँजी की भी कमी रहती है। इसलिए उनको जनता की जमाओ को आकर्षित करने के लिये अधिक ब्याज देना पडता है और इसलिए उनको हानि होती है।

व्यापारिक बैंको के कार्य के दोष

(१) इस देश मे अभी तक व्यापारिक बिलो का विकास न होने के कारण साख सृजन मे बडी बाधा पडती है। बिलो का विकास नकद साख (*Cash credit*) तथा अधिकार-पत्रो (Documents of title) के अभाव के कारण न हो सका।

(२) हमारे देश मे व्यक्तिगत साख (Personal credit) के रिवाज बहुत कम हैं। इसके कई कारण हैं, जैसे भारत में इगलैंड की साइड्स (Seyd's) तथा सयुक्त राष्ट्र की डन्स (Dun's) और ब्रेडस्ट्रीट (Bradstreet) जैसे व्यापारियो की आर्थिक स्थिति की सूचना देने वाली सस्थाओ का अभाव, इम्पीरियल बैंक और भारत

कम्पनीज एक्टस मे सुरक्षित तथा असुरक्षित ऋणो को अलग-अलग दिखाने की पद्धति और व्यक्तिगत धरोहर पर दिये हुये ऋण को असुरक्षित ऋण मानना।

(३) व्यापारिक बैंक अपना अधिकतर कार्य अंग्रेजी भाषा में करते हैं जिसको जन साधारण नही समझता।

(४) इनका सचालन व्यय बहुत अधिक होता है क्योंकि यह राज्य बैंक जैसा बढिया फर्नीचर तथा दूसरा सामान रखते हैं।

(५) बहुत से बैंको के डाइरेक्टर अयोग्य होते हैं जिसके कारण जनता का उनपर विश्वास नही होता।

(६) ये बैंक कई बार दूसरे बैंको से प्रतियोगिता की भावना से अपने लाभ का एक बड़ा भाग लाभाश के रूप मे बाँट देते हैं।

(७) इन बैंकों मे आपस में बिल्कुल सहयोग नही है और वे एक दूसरे से ईर्ष्या रखते हैं।

(८) इस देश मे अभी तक निवासी गृहो की उन्नति नहीं हुई है।

दोषो को दूर करने के सुझाव

(१) सरकार को चाहिये कि वह व्यापारिक बैंको के साथ भी उसी प्रकार की नर्म नीति का व्यवहार करे जिस प्रकार कि वह सहकारी बैंको के साथ करती है।

(२) बैंको की प्रतियोगिता को कम करने के लिये केन्द्रीय बैंकिंग जाँच कमेटी तथा विदेशी विशेषज्ञों ने यह सुझाव दिया था कि इस देश मे एक अखिल भारतीय बैंक सघ होना चाहिये जो कि प्रतियोगिता को कम करने का प्रयत्न करे।

(३) केन्द्रीय जाँच कमेटी ने यह सुझाव भी दिया कि रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया को चाहिये कि वह व्यापारिक बैंको द्वारा उन स्थानो पर खोली हुई, जहाँ पर बैंक नही हैं, शाखाओ को पाँच वर्ष तक आर्थिक सहायता दे तथा उनका रुपया एक स्थान से दूसरे स्थान को सस्ती दर पर हस्तान्तरित करे तथा उनके बिलो को पुनर्बट्टे की सुविधा दे तथा नकद साख के स्थान पर बिलो को उन्नत करे।

(४) भारत के अचल सम्पत्ति के नियमो मे परिवर्तन हो जिसस बैंक अपना धन उनमे भी लगा सकें।

(५) बैंको को चाहिये कि वे व्यक्तिगत साख पर उधार दें और ग्राहकों की आर्थिक स्थिति की जाँच करने के लिये अखिल भारतीय बैंक सघ की स्थापना की जाये।

(६) बैंकों को चाहिये कि वे अपने ग्राहकों को स्थानीय भाषा के प्रयोग करने की स्वतन्त्रता दें।

(७) बैंकों को यह भी चाहिये कि वे विनिमय बैंकों के समान कार्य-कुशल हों तथा देशी बैंकों के समान सादे हों।

(८) यह भी आवश्यक है कि बैंको के कार्य करने का समय भारतीय परिस्थिति के अनुसार हो।

(६) जनता मे इस बात का प्रचार किया जाये कि वह भारतीय बैंको को अपनाये।

इन बैंकों का राष्ट्रीयकरण क्यों नहीं किया गया

१९५६ ई० के मानसून अधिवेशन मे लोक सभा मे एक कांग्रेसी सदस्य ने एक बिल पेश किया था जिसम कि व्यापारिक बैंको के राष्ट्रीयकरण की मांग की गई थी। परन्तु यह बिल पास न हो सका।

जो लोग राष्ट्रीयकरण के पक्ष मे हैं उनका कहना है कि इन बैंको की अपार धन-राशि निजी हाथो मे होने के कारण देश की विकास योजनाओ मे लाभदायक ढग से नही लगाई जाती। दूसरी बात वे यह कहते हैं कि इन बैंको को होने वाला ३० करोड रु० वार्षिक का लाभ फिर से उन्नति के काम मे लगाया जा सकता है यदि ये बैंक सरकार के हाथ मे हो।

परन्तु इसके विरुद्ध सरकार का कहना है कि रिजर्व बैंक का इन बैंको पर इतना नियन्त्रण है कि वे अपने साधनो को अनुचित ढग से खर्च नही कर सकते। बैंकिग कम्पनीज (संशोधित) एक्ट के अन्तर्गत इस नियन्त्रण को और भी कडा कर दिया गया है। पहले रिजर्व बैंक प्रत्येक बैंक की जाँच तीन वर्ष मे एक बार कर सकता था परन्तु आजकल वह दो वर्ष में कर सकता है तथा भविष्य म वह प्रतिवर्ष कर सकेगा।

सरकार का यह भी कहना है कि जीवन बीमा कम्पनियो के समान वर्तमान बैंक अपने साधनो का दुरुपयोग नही कर सकेंगे।

इस समय राष्ट्रीयकरण का विचार स्थगित करने का कारण यह भी है कि ऐसा करने से सरकार के सामने जीवन बीमे के समान कर्मचारियो तथा व्यवस्था की समस्या आकर खडी हो जायगी। आजकल इन बैंको के ३७५० आफिस हैं तथा भविष्य मे और अधिक खुलने की आशा है। सरकार का मत है कि इन सबको अपने हाथ मे लेने से राष्ट्र की शक्ति की बर्बादी होगी।

इस के अतिरिक्त आजकल व्यापारिक बैंको के कुल साधनो का ⅓ राज्य बैंक के हाथ मे है तथा भविष्य मे जब इस के साथ पहली रियासतो के कुछ बैंक मिला दिये जायेंगे तब इसके साधन और भी बढ जायगे।

इन सबके अतिरिक्त एक राजनीतिक कारण भी है कि इन बैंको का राष्ट्रीयकरण करने से विनिमय बैंको का भी राष्ट्रीयकरण करना होगा परन्तु ऐसा करना आजकल की परिस्थिति मे उचित नही है। इन सब बातो के कारण सरकार इन बैंको का राष्ट्रीयकरण करना नही चाहती।

———

Q. 91. Describe the business transacted by the Exchange Banks in India. What criticisms have been levelled against them ?

प्रश्न ९१—भारत मे विनिमय बैंक क्या करते हैं ? उनके विरुद्ध क्या आलोचनायें की गई हैं ?

भारत के विदेशी व्यापार पर विनिमय बैंकों का एकाधिकार है, ये बैंक सबके सब विदेशी हैं और उनके प्रधान कार्यालय विदेशो मे हैं। भारत के विदेशी बैंक व्यापार को ही आर्थिक सहायता नही पहुँचाते वरन् भारत के आन्तरिक व्यापार को भी आर्थिक सहायता पहुँचाते हैं। १९५१ के अन्त तक भारत मे विदेशी बैंको की सख्या २० थी जिनमे से एक ने कार्य करना छोड दिया, एक को बैंकिग का कार्य न करने के लिये कह दिया गया। शेप मे से ५ पाकिस्तानी, ७ अग्रेजी (जिनकी भारत मे ४९ शाखाये हैं), २ सयुक्त राष्ट्र के (जिनकी भारत मे ३ शाखायें हैं), २ हालैंड के (जिनकी भारत मे ४ शाखायें हैं), १ चीन का तथा १ फ्रास का (जिसकी भारत मे दो शाखायें हैं)—इस प्रकार कुल १८ बैंक हैं। ये बैंक अधिकतर बम्बई, कलकत्ते, मद्रास तथा कोचीन के बन्दरगाहो पर स्थित हैं। भारत की बैंकिंग प्रणाली मे विदेशी बैंको का क्या स्थान है इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि १९५१ ई० में इनमे जनता की जमा १७५ करोड रुपये थी, जो कि कुल बैंकों मे जमा किये हुये धन की १८ प्रतिशत थी तथा इनका लाभ २.१९ करोड रुपये था जो कि कुल भारतीय बैंको द्वारा कमाये हुये लाभ का लगभग ५० प्रतिशत था।

भारत के बैंकों ने अभी कुछ ही समय से विदेशी व्यापार की ओर ध्यान दिया है। इन बैंकों का कार्य अभी तक दक्षिणी-पूर्वी, एशिया, सुदूर पूर्व,पाकिस्तान, लका, ब्रह्मा थाईलैण्ड तथा जापान तक ही सीमित है।

विनिमय बैंकों के कार्य—

विदेशी बैंको के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं—

(१) आयात-निर्यात को आर्थिक सहायता देना।

(२) सोने-चाँदी का विक्रय करना।

(३) विदेशी विनिमय बिलो का क्रय विक्रय करना।

(४) विदेशो को रुपया भेजने की सुविधा प्रदान करना।

(५) आन्तरिक व्यापार को आर्थिक सहायता पहुँचाना।

(६) अन्य साधारण बैंकिंग कार्य करना।

(१) आयात निर्यात को आर्थिक सहायता प्रदान करना, विनिमय बैंकों का मुख्य कार्य है। जब कोई भारतवासी विदेशो से माल का आयात करता है तो दो प्रकार के बिल लिखे जाते हैं—(१) भारतीय आयात-कर्त्ता पर ६० दिन का देखन हार बिल (60 day's sight D. P Bill), (२) लन्दन के शाखा कार्यालय पर लिखा हुआ बिल। पहली दशा मे विनिमय बैंक आयातकर्त्ता से बिलो का धन एकत्र

करता है। दूसरी दशा में लन्दन का निर्यात-कर्त्ता लन्दन के साख कार्यालय पर जिसके साथ कि भारतीय आयात कर्त्ता पहले ही साख का प्रबन्ध कर लेता है, एक बिल लिखता है। जिसको कि यह स्वीकार कर लेता है। इस बिल को लन्दन का निर्यात-कर्त्ता यदि चाहे तो लन्दन के मुद्रा बाजार मे बट्टे पर बेचकर धन प्राप्त कर सकता है। लन्दन स्थित बैंक उस बिल तथा उसके साथ लगे हुये बहुत से अधिकार पत्र जैसे जहाजी रसीद, समुद्री बीमे की रसीद, बीजक आदि भारत मे स्थित अपनी शाखा के पास भेज देता है। भारत स्थित शाखा भारतीय आयात-कर्ताओं से अवधि समाप्त होने से पहिले ही रुपये वसूल करके लन्दन भेज देती है। इनमें से पहली दशा मे बिल के लिखने की तिथि से रुपये के लन्दन पहुँचने तक व्यापारी को ६% ब्याज देना पडता है। परन्तु दूसरी दशा मे बिल कम ब्याज पर लन्दन के मुद्रा बाजार मे बट्टे पर बेच दिया जाता है। इस प्रकार दूसरी दशा में व्यापारी को लाभ होता है।

जब भारत के व्यापारी माल का निर्यात करते हैं तब वे ६० दिन के देखनहार स्वीकार किये जाने वाले अथवा भुगतान किये जाने वाले बिल लिखते हैं। इस प्रकार बिलों को विनिमय बैंक सदा ही मोल ले लेता है। विनिमय बैंक इन बिलों को लन्दन भेज देता है जहाँ पर उनको लन्दन का बैंक अथवा साख गृह स्वीकार कर लेता है और वह लन्दन के मुद्रा बाजार मे बट्टे पर बिक जाते है। इस प्रकार लन्दन के बैंको को भारतवर्ष मे दिये गये धन के बदले लन्दन के मुद्रा बाजार में स्टर्लिंग मिल जाती है। यदि निर्यातकर्त्ता अथवा बिल के बट्टे पर मोल लेने वाला बैंक चाहे तो बिल की अवधि समाप्त होने तक बाट देख सकता है और उसके बाद लन्दन के आयातकर्त्ता से उसका धन प्राप्त कर सकता है।

(१) इस प्रकार हम देखते हैं भारत का अधिकतर विदेशी व्यापार स्टर्लिंग बिलो द्वारा किया जाता है और जब भारतवासी माल को आयात करते हैं तो उनके ऊपर ६० दिन के देखनहार भुगतान किये जाने वाले बिल लिखे जाते हैं परन्तु जब वे माल का निर्यात करते हैं तब उनको विदेशी आयात-कर्त्ता पर ६० दिन के स्वीकार किये जाने वाले बिल लिखने पडते हैं। इससे यह भी पता चलता है कि चाहे माल का आयात हो अथवा निर्यात दोनो दशाओ मे लन्दन के मुद्रा बाजार मे बिल बिकते हैं और भारत के मुद्रा बाजार को किसी दशा मे कोई लाभ नही पहुँचता।

(२) आयात-निर्यात को आर्थिक सहायता पहुँचाने के अतिरिक्त वे सोना-चाँदी भी खरीदते बेचते हैं। परन्तु द्वितीय महायुद्ध मे जब से सोने के क्रय-विक्रय करने का कार्य रिजर्व बैंक को दिया गया है तब से इनका यह कार्य सीमित हो गया है।

(३) विदेशी व्यापार के सम्बन्ध मे लिखे गये बिलो का क्रय-विक्रय करना भी इन बैंको का एक कार्य है। जब इन बैंको के पास इस प्रकार के बिलो की संख्या बहुत अधिक हो जाती है तब ये उनको रिजर्व बैंक को बेच देते है।

(४) विदेशी विनिमय बैंक बैंक ड्राफ्ट, विदेशी विनिमय बिलों तथा तार द्वारा विदेशों मे धन भेजने का भी प्रबन्ध करता है।

(५) विदेशी विनिमय बैंक भारत के आन्तरिक व्यापारिक केन्द्रोंसे बन्दरगाहों तक तथा बन्दरगाहो से आन्तरिक व्यापारी केन्द्रों तक भी व्यापार को आर्थिक सहायता प्रदान करते हैं।

(६) इन सब कामो के अतिरिक्त विदेशी विनिमय बैंक जनता से जमा के रूप मे ऋण लेते हैं, व्यापारियो को ऋण देते हैं, आडत का कार्य करते हैं तथा एक स्थान से दूसरे स्थान तक रुपया भेजते हैं।

विनिमय बैंकों के विरुद्ध की गई आलोचनायें—

भारत में विदेशी विनिमय बैंको की बडी बडी आलोचना की गई है क्योंकि ये भारतीय तथा विदशी व्यापारियों मे भेदभाव करते हैं। इनके भेदभाव के उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

(१) भारतीय आयात कर्ताओ को भुगतान करने वाले बिलो (D. P. Bills) पर तथा विदेशी आयात कर्ताओ को स्वीकार करने वाले बिलो (D. A. Bills) पर व्यापार करना पडता है।

(२) परिमाणिक साख पत्र (Confirmed letter of credit) प्राप्त करने के लिये उत्तम श्रेणी के भारतीय व्यापारी गृहो को भी आयात किये हुये माल के कुल मूल्य का १०-१५ प्रतिशत विनिमय बैंको के पास जमा करना पडता है जबकि इस प्रकार की जमा विदेशी लोगो को नही करनी पडती है।

(३) विनिमय बैंक भारत के बडे व्यापारियो के विषय में भी विदेशी व्यापारियो को अच्छी सूचना नही देते जबकि निम्न श्रेणी के विदेशी व्यापारियो के विषय में अच्छी सूचना देते हैं।

(४) भारतीय व्यापारियो को यह नही बताया जाता कि विनिमय बैंक सघ (Exchange Banks Association) किन नियमों के अनुसार कार्य करता है। उनको सघो के नियमो मे जो समय-समय पर परिवर्तन होते रहते हैं उनकी सूचना भी नही दी जाती।

(५) जबकि किसी भारतीय आयात कर्ता का ड्राफ्ट विनिमय बैंक के द्वारा आता है तो उसकी सूचना भेज दी जाती है कि वह आकर उस ड्राफ्ट का निरीक्षण ले। परन्तु विदेशी व्यापारी को उसके कार्यालय पर ही वह ड्राफ्ट भेज दिया जाता है।

(६) ये बैंक यद्यपि भारतवर्ष से प्रतिवर्ष इतना लाभ कमाते हैं तो भी वे भारत के लोगो को ऊँचे पदो पर नियुक्त नही करते।

इन भेदभावो के अतिरिक्त विनिमय बैंको के विरुद्ध कुछ और आलोचनायें भी की जाती हैं जो निम्नलिखित हैं—

(१) १९४९ के बैंकिंग एक्ट से पूर्व इन बैंको पर भारत का कोई बैंकिंग कानून लागू न था।

(२) इन बैंको ने भारतवासियो की जमा राशि के आधार पर भारतीय विदेशी व्यापार की आर्थिक व्यवस्था करने का एकाधिकार प्राप्त कर लिया। इस घन राशि का लाभ अधिकतर विदेशी मुद्रा बाजारो को हुआ, भारतीय मुद्रा बाजार को न हुआ।

(३) इन बैंको ने भारतीय मुद्रा-बाजार को दो भागो मे विभाजित कर दिया है। एक देशी द्रव्य बाजार जिसमे भारतीय बैंक, भारतीय दलाल तथा भारतीय बीमा कम्पनियाँ कार्य करती हैं तथा दूसरा विदेशी द्रव्य बाजार जिसमे विदेशी विनिमय बैंक, विदेशी दलाल तथा विदेशी बीमा कम्पनियाँ कार्य करती हैं। इन दोनो मे गला काटने वाली प्रतियोगिता रहती है और इसमे भारतीय मुद्रा बाजार को हानि होती है क्योकि उनके साधन सीमित हैं।

(४) इन बैंको ने भारत की राजनीतिक तथा आर्थिक उन्नति मे अनेकों बार रोड़े अटकाये।

(५) अभी तक ये बैंक भारत मे आय कर भी नही देते थे।

(६) ये बैंक अपने भारतीय तथा विदेशी व्यापार की सूचना अलग-अलग नहीं छापते जिससे उनके व्यापार के विषय मे कोई पता नहीं चल सकता।

इन सब दोषो को दूर करने के लिये भारतीय बैंकिंग जाँच कमेटी ने निम्नलिखित सुझाव दिये—

विदेशी बैंको को भारत मे कार्य करने के लिये एक अनुज्ञापत्र (Licence) लेना चाहिये ताकि उनके कार्य के ऊपर नियन्त्रण किया जा सके। इस आज्ञा पत्र की शर्तों मे निम्नलिखित बात हो सकती हैं—

(१) केवल उन बैंकों को ही भारत मे जमा आकर्षित करने की आज्ञा दी जाए जिनकी शेयर पूँजी रुपये मे हो।

(२) विदेशी बैंको को देश के अतिरिक्त भागो मे शाखायें खोलने की आज्ञा न दी जाए।

(३) विदेशी बैंको को किसी भी भारतीय बैंक मे नियन्त्रण करने वाले हाथ को प्राप्त करने का अवसर न दिया जाये।

(४) उनको ट्रस्टी कार्य करने की आज्ञा न हो।

(५) उनको बाध्य किया जाय कि वे कुछ ऊपर के लोगो को छोडकर शेष कर्मचारी भारत के ही रक्खे।

(६) वे भारत मे आय कर दे।

(७) उनको अपने कार्य की रिपोर्ट देनी चाहिये।

(८) उनको एकाधिकार प्राप्त करने के लिये रिंग, पूल आदि न बनाने दिये जाये।

(९) इन बैंको के कर्मचारी भारतीय हित के विरुद्ध कोई कार्य न करें।

इस कमेटी ने यह सुझाव दिया कि एक भारतीय विनिमय बैंक की स्थापना की जाय। रिजर्व बैंक के स्थापित होने पर यह कार्य इम्पीरियल बैंक को करने की

आज्ञा दी जाय । इसके अतिरिक्त एक नया विनिमय बैंक स्थापित किया जाय, जिस की शेयर पूँजी ३ करोड रुपये हो । इसके अतिरिक्त एक नया विनिमय बैंक स्थापित किया जा सकता है जिसका नियन्त्रण भारतवासियो तथा विदेशियो के हाथ मे हो । धीरे-धीरे इस पर से विदेशियो को हटा दिया जाए और भारतवासियो को उनके स्थान पर रख दिया जाए ।

यद्यपि विनिमय बैंको के विरुद्ध भारतवासी इतनी आलोचनायें करते हैं तो भी हम उनको एकदम नही हटा सकते क्योंकि अभी तक भारतवर्ष मे कोई इतना बडा बैंक नही है जो इस कार्य को कर सके । इस कारण हमको इन बैंको को उस समय तक रखना पडेगा जब तक कि हमारा अपना बैंक न हो । इसी बीच मे हम उनके कार्य पर नियन्त्रण कर सकते हैं जिससे कि वे भारतवर्ष के विरुद्ध कोई कार्य न कर सकें ।

Q 92 What changes were brought about by the Imperial Bank Amendment Act in the Constitution and function of the Imperial Bank Why was it not converted into a central Bank then and why has it been changed into a State Bank now ?

प्रश्न ९२ - इम्पीरियल बैंक संशोधित एक्ट द्वारा इम्पीरियल बैंक के विधान तथा कार्य मे क्या परिवर्तन किये गये ? इसको तब एक केन्द्रीय बैंक के रूप मे क्यों नहीं बदला गया तथा उसको अब एक स्टेट बैंक क्यों बनाया गया है ?

इम्पीरियल बैंक की स्थापन इम्पीरियल बैंक ऑफ इण्डिया एक्ट १९२१ के अन्तगत की गई । यह बैंक बम्बई, बगाल तथा मद्रास के प्रेसीडेन्सी बैंको का एकीकरण करके स्थापित किया गया है । इसकी अधिकृत पूँजी ११$\frac{1}{4}$ करोड रुपये थी । यह ५०० रुपये के २,२५००० हिस्सों मे विभाजित थी । इस पूँजी का आधा भाग तो प्राप्त किया जा चुका था और शेष को रक्षित दायित्व (Reserve liability) के रूप मे रक्खा हुआ था ।

बैंक का प्रबन्ध—सन् १९३४ के इम्पीरियल बैंक संशोधित एक्ट से पूर्व इम्पीरियल बैंक का प्रबन्ध एक केन्द्रीय बोर्ड द्वारा होता था । इस बोर्ड के १६ गवनर थे जिनमे से १० की नियुक्ति केन्द्रीय सरकार द्वारा होती थी । इसके अतिरिक्त सरकार को बैंक का हिसाब जांचने के लिये आडीटर नियुक्त करने तथा आदेश देने का भी अधिकार था ।

परन्तु १९३४ के संशोधित एक्ट के पास होने पर बैंक के ऊपर सरकारी हस्तक्षेप बहुत कम हो गया । अब केन्द्रीय सरकार १६ मे से केवल २ सदस्य ही नियुक्त कर सकती थी । इसके अतिरिक्त एक सरकारी अफसर भी जिसको मत देने का अधिकार न था, बोर्ड की बैठको मे भाग ले सकता था परन्तु ग्राम जाँच कमेटी

१९५१ ने सरकार से सिफारिश की कि इस बैंक के ऊपर फिर कड़ा सरकारी नियंत्रण किया जावे।

बैंक के कार्य—१९२१ के एक्ट के अनुसार इम्पीरियल बैंक केन्द्रीय बैंक के कुछ कार्य करता था जो निम्नलिखित हैं—

(१) सरकारी बैंक के कार्य – रिजर्व बैंक की स्थापना से पहले इम्पीरियल बैंक सरकारी बैंक का कार्य करता था। सरकार अपना धन बैंक मे बिना ब्याज के रखती थी। इसके बदले बैंक सरकार के ऋण, आय व्यय आदि का हिसाब रखता था और सरकार से कोई कमीशन न लेता था। सरकारी बैंक होने के कारण इस बैंक पर बड़ा कड़ा सरकारी नियन्त्रण था।

(२) बैंकों के बैंक का कार्य—देश में कोई केन्द्रीय बैंक न होने के कारण व्यापारिक बैंक इम्पीरियल बैंक की ओर देखते थे। वे इस बैंक के पास अपना धन सुरक्षा के लिये रखते थे और आवश्यकता पड़ने पर उससे रुपया उधार भी लेते थे। इस बैंक के हाथ मे निकासी गृहो का प्रबन्ध भी था।

१९२१ ई० के एक्ट के अनुसार इस बैंक पर यह भार था कि वह प्रथम पाँच वर्षो मे १०० शाखायें स्थापित करे।

केन्द्रीय बैंक के इन कार्यों के अतिरिक्त इम्पीरियल बैंक एक साधारण बैंक का कार्य भी करता था। वह जनता से जमायें लेता था और ट्रस्टी, सरकारी तथा अन्य प्रकार की उत्तम श्रेणी की धरोहरो, ऋण-पत्रो, माल तथा माल के अधिकार पत्रो की जमानत पर छ मास के लिये ऋण दे सकता था। यह जनता के बिलो तथा अन्य प्रकार के पत्रो को लिख सकता था तथा उन्हे बट्टे पर मोल ले सकता था। इसके अतिरिक्त वह सोने चाँदी का क्रय-विक्रय भी कर सकता था। परन्तु इस बैंक के कार्य के ऊपर कुछ रुकावट भी थी जैसे यह बैंक देश के बाहर न तो जमायें ही ले सकता था और न ऋण ही ले सकता था। इसको विदेशी विनिमय का कार्य करने का भी अधिकार न था।

१९३४ के संशोधन एक्ट के अनुसार इम्पीरियल बैंक न तो सरकारी बैंक ही रहा और न वह दूसरे बैंको के लिये ही बैंक का कार्य करता था। परन्तु क्योंकि यह बैंक रिजर्व बैंक का एजेन्ट था और जहाँ रिजर्व बैंक की शाखायें नही थी वहाँ सरकारी कोष भी रखता था, इस कारण इस बैंक के कार्य पर कुछ सरकारी हस्तक्षेप था और उसको कुछ कार्य करने की आज्ञा नही थी, जैसे यह न तो अचल सम्पत्ति पर ऋण दे सकता था और न ही अपने हिस्सो की जमानत पर ऋण दे सकता था। यह बैंक किसी एक ऋण लेने वाले को एक निश्चित मात्रा से अधिक ऋण नही दे सकता था।

इन पाबन्दियो को छोडकर बैंक और सब मामलो मे स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य कर सकता था। इसको अब विदेशी विनिमय के प्राप्त करने का अधिकार मिल गया। यह अब विदेशो से ऋण ले सकता था तथा विदेशो मे अपनी शाखायें खोल

सकता था। इसके ऋण देने की अवधि को भी ६ मास से बढ़ाकर ९ मास कर दिया गया। यह बैंक अब रिजर्व बैंक के हिस्सों तथा नगरपालिकाओं के ऋण पत्रों पर भी ऋण दे सकता था। इसके अतिरिक्त यह व्यापारिक माल की जमानत पर ऋण दे सकता था।

बैंक को केन्द्रीय बैंक न बनाने के कारण—

जिस समय रिजर्व बैंक की स्थापना की गई उस समय कुछ लोगों ने कहा कि इम्पीरियल बैंक को ही केन्द्रीय बैंक क्यों न बना दिया जाय। परन्तु ऐसा न करने के बहुत से कारण थे जो नीचे दिये हैं—

(१) केन्द्रीय बैंक को एक विशाल राष्ट्रीय दृष्टिकोण रखना चाहिये जिसकी आशा इम्पीरियल बैंक से न थी क्योंकि हिल्टन यंग कमीशन को बहुत से बैंकों ने बताया कि इम्पीरियल बैंक उनकी सहायता नहीं करता।

(२) भारतीय बैंकों ने इम्पीरियल बैंक को सदा ही अपना प्रतिपक्षी समझा है। केन्द्रीय बैंक बनाने के पश्चात् भी ये बैंक इम्पीरियल बैंक को दूसरी दृष्टि से नहीं देख सकते।

(३) इम्पीरियल बैंक को केन्द्रीय बैंक बनाने पर इसकी बहुत सी शाखाओं को बन्द करना पड़ता है। ऐसा करने से देश के व्यापार तथा उद्योग-धन्धों को बड़ा धक्का लगता।

(४) इस बैंक के अधिकतर हिस्सेदार विदेशी थे जो भारतीय हितों के लिये कार्य नहीं कर सकते थे।

(५) इस बैंक का उद्देश्य लाभ कमाना है परन्तु केन्द्रीय बैंक इस दृष्टिकोण से कार्य नहीं कर सकता।

(६) बहुत से विद्वानों का कहना था कि जब फ्रांस का बैंक केन्द्रीय तथा व्यापारिक बैंक का कार्य कर सकता है तब इम्पीरियल बैंक क्यों नहीं कर सकता। परन्तु सब देशों में परिस्थिति एक सी नहीं होती। यदि इस बैंक को केन्द्रीय बैंक के कार्य भी सौंप दिये जाते तो यह इतना शक्तिशाली हो जाता कि दूसरे बैंक इसके सामने न ठहर सकते थे।

(७) अन्त में यदि इस बैंक को केन्द्रीय बैंक में बदल दिया जाता और इसके लाभांश को कानून द्वारा सीमित कर दिया जाता तो इसके हिस्सेदार कभी पसन्द नहीं करते।

इन सब बातों के कारण इम्पीरियल बैंक को एक केन्द्रीय बैंक में नहीं बदला गया।

स्टेट बैंक—१९४८ ई० में जिस समय रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया था उसी समय केन्द्रीय धारा सभा के सदस्य श्री बी० दास ने माँग की थी कि इम्पीरियल बैंक को सरकार अपने हाथ में ले ले परन्तु उस सरकार ने उस बात को टाल दिया। १९५१ ई० में रिजर्व बैंक ने एक निर्देशन समिति जिसको

गोरवाला समिति भी कहते है, नियुक्त की। इस समिति पर देश भर में ग्रामीण साख सम्बन्धी जाँच का कार्य भार सौंपा गया। जाँच के बाद इस समिति ने जो रिपोर्ट पेश की, उसमे बताया गया है कि इस समय ग्रामीण ऋण की आवश्यकता पूरी करने के जो साधन उपलब्ध हैं उनकी मात्रा अपर्याप्त है। इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि भारत मे ग्रामीणो की कुल आवश्यकता का लगभग ९३ प्रतिशत ऋण तो महाजनो व जमीदारो द्वारा दिया जाता है और शेष ७ प्रतिशत सरकार सहकारी समितियो तथा व्यापारिक बैंको द्वारा। यही कारण है कि ग्रामीण ऋण महँगा तथा अनुत्पादक है। इस कारण इस समिति ने एक स्टेट बैंक बनाने का सुझाव दिया जो भारत के भिन्न भिन्न ग्रामो, कस्बो व जिलो में अपनी शाखायें खोलेगा। यह बैंक निम्नलिखित १० बैंको को विलीन करके बनाया गया है—

(१) इम्पीरियल बैंक, (२) सौराष्ट्र राज्य बैंक, (३) पटियाला बैंक, (४) बीकानेर बैंक, (५) जयपुर बैंक, (६) राजस्थान बैंक, (७) बड़ौदा बैंक, (८) इन्दौर बैंक, (९) मैसूर बैंक, (१०) त्रावनकोर बैंक।

इस बैंक की पूँजी को बढाकर २० करोड रुपये कर दिया गया है। इसमे से भारत सरकार व रिजर्व बैंक का भाग ५२ प्रतिशत होगा।

इस बैंक की स्थापना की घोषणा २० दिसम्बर १९५४ ई० को की गई तथा इसने १ जौलाई १९५५ से कार्य करना आरम्भ कर दिया है।

इस बैंक का मुख्य उद्देश्य समस्त देश मे फैली शाखाओं की एक सक्रिय मशीनरी बनाना है जिससे पूँजी जमा करने तथा ग्रामीण बैंकिंग की सुविधाये बढाई जायें।

यदि यह बैंक अपने इस उद्देश्य म सफल हो गया तो भारतवर्ष की कृषि को बहुत लाभ होगा क्योकि किसानो को कम ब्याज पर ऋण मिल सकेगा और वे महाजनो आदि के शोषण से बच जायेगे।

इस बैंक का मुख्य उद्देश्य समस्त गाँवो मे अधिकाधिक साख की सुविधाये प्रदान करना है। इस ध्येय को प्राप्त करने के लिये इस बैंक पर यह जिम्मेदारी है कि वह ५ वर्ष मे अथवा थोडे-अधिक मे सारे देश मे ४०० शाखायें खोलेगा। प्रारम्भ मे १०० शाखायें खोलने की योजना बनाई गई है। १ जौलाई १९५५ से ३१ दिसम्बर १९५६ तक इस बैंक ने ६६ शाखाय खोली। इनमे से ४६ शाखायें १९५६ मे खोली गई। इनके अतिरिक्त ५० तथा ३२ शाखाओ की लिस्ट सरकार ने और स्वीकार करली है। शाखाओ के खोलने मे सबसे बडी बाधा यह है कि उनके लिये उचित स्थान नही मिलता।

इसके अतिरिक्त यह बैंक व्यापार तथा उद्योग धन्धो की भी बडी सहायता कर रहा है। दिसम्बर १९५६ तक इसने निजी क्षेत्र को १०० करोड रु० के ऋण दिए। इस प्रकार इस बैंक के राष्ट्रीयकरण से निजी क्षेत्र को कोई हानि नहीं पहुँची है।

यह बैंक विदेशी विनिमय कार्य को भी बढा रहा है। इस क्षेत्र में भी इस बैंक ने बडी सफलता प्राप्त की है परन्तु इस कार्य को करने के लिये प्रशिक्षित लोगों की कमी एक बडी बाधा है।

इसके अतिरिक्त यह बैंक कृषि को भी साख प्रदान करने का प्रयत्न कर रहा है। परन्तु अभी तक इस कार्य मे बहुत कम सफलता प्राप्त हुई है। यह बैंक सहकारी बैंको को साधारण दर से २ प्रतिशत कम दर पर ऋण देता है। केन्द्रीय तथा राज्य बैंको का धन एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने का कोई खर्च उससे नही लिया जाता। यह बैंक इस बात का भी प्रयत्न कर रहा है कि खेती को दीर्घकालीन ऋण दिये जाये। इस हेतु यह बैंक भूमि बन्धक बैंको के ऋण-पत्र मोल लेता है तथा उनको बाजार मे बेचने मे सहायता करता है।

कुटीर उद्योगो की सहायता के लिये बैंक ने एक पायलेट योजना रखी है जिस पर बम्बई, बगाल तथा मद्रास में कार्य होगा। इस योजना के अनुसार एक साधारण प्रार्थना-पत्र ईश्यू किया जाता है जिस पर ऋण लेने वाला अपनी कुल साख की आवश्यकता को बयान करता है। इसके पश्चात् प्रार्थना पत्र की जाँच करके यह निश्चित किया जाता है कि किसको ऋण दिया जाय तथा इस ऋण को राज्य सरकार दे अथवा राज्य अर्थ-प्रमण्डल दे अथवा यह स्वय दे। यद्यपि बैंक ऋण देने मे रूढिवादी है परन्तु कुटीर उद्योगो के सम्बन्ध मे यह थोडी उदारता से काम लेगा। कुछ दशाओ में इन उद्योगो मे लगे हुए लोगो को बिना धरोहर के ऋण दिये जा सकते है।

Q. 93. Describe carefully the working of the Reserve Bank of India.

प्रश्न ९३—रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की कार्य पद्धति को ध्यानपूर्वक बताइये।

रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना की सिफारिश सबसे पहले हिल्टन यग कमीशन ने १९२५ मे की थी। इस सिफारिश को सरकार ने मान लिया परन्तु कुछ मतभेदो के कारण रिजर्व बैंक बिल पास न हो सका। अन्त में यह बिल १९३४ मे पास हुआ और रिजर्व बैंक ने १ अप्रैल १९३५ से कार्य करना आरम्भ कर दिया। इस बैंक को निम्नलिखित कार्य करने पडते है—

(१) *नोट छापना*—रिजर्व बैंक एक्ट की धारा २२ के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को नोट छापने का एकाधिकार दिया गया है। नोट छापने का कार्य रिजर्व बैंक का ईश्यू विभाग करता है। पहले रिजर्व बैंक को छापे हुये नोटो के पीछे ४० प्रतिशत सोना, सोने के सिक्को अथवा विदेशी धरोहरो के रूप मे रखना पडता था। इसमें से कम से कम ४० करोड रुपये का सोना अवश्य होना चाहिये था और इस ४० करोड रुपये के सोने का काम कम से कम $\frac{१७}{२०}$ भाग भारत मे होना चाहिये था। १९४६ से पूर्व जब भारतवर्ष के रुपये का सम्बन्ध स्टर्लिंग से विच्छेद नही हुआ

था तब तक विदेशी धरोहरो के स्थान पर रिजर्व बैंक को नोटो के पीछे स्टर्लिंग धरोहरे रखनी पडती थी। शेष ६० प्रतिशत को रुपये के सिक्को, फुटकर रेजगारी, रुपयो की धरोहरो तथा देशी बिल आदि के रूप मे रखा जाता था। २० जौलाई १९५६ ई० को पास किये गये रिजर्व बैंक एक्ट सशोधित बिल के द्वारा रिजर्व बैंक की कुछ धाराओ में सशोधन किया गया है। यह सशोधन इसलिये आवश्यक हुआ क्योकि हमारी द्वितीय पचवर्षीय योजना मे १२०० करोड रुपये के हीनार्थ अर्थ-प्रबन्धन का अनुमान है तथा योजना के कारण यह भी आवश्यक हो गया कि रिजर्व बैंक का दूसरे बैंको पर कडा नियन्त्रण हो। इन्ही दो बातो को ध्यान मे रखकर रिजर्व बैंक एक्ट मे सशोधन किए गये हैं। इनमे से नोट छापने के पीछे रिजर्व बैंक जो धरोहर रखता है उससे सम्बिन्धित निम्नलिखित सशोधन किये गए हैं—

(१) धारा ३३ (२) के एक सशोधन के अनुसार पहले रिजर्व बैंक को कम से कम ४०० रुपये की विदेशी धरोहरें तथा ११५ करोड रुपये का सोना ईश्यू विभाग मे रखना पडता था। परन्तु अब बैंक इस सीमा को २०० करोड रुपये तक कर सकता है। इसमे ११५ करोड रुपये का सोना होना चाहिये।

यह भी ज्ञात हुआ है कि रिजर्व बैंक को एक विदेशी विनिमय गारन्टी कोष निर्माण करने का अधिकार दिया जायेगा जिसके फलस्वरूप यह बैंक अनुसूचित बैंकों की उस गारन्टी का अभिगोपन (Under Writing) कर सकेगा जो कि उन्होने विदेशी बैंको अथवा व्यापारियो को भावी भुगतान के आधार पर मशीनो का आयात करने के लिये दी है।

(२) धारा ३३ (४) को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के द्वारा माने गये सोने के मूल्य के अनुसार सोने का मूल्य बदलने के लिए सशोधित किया गया है। अभी तक रिजर्व बैंक मे रखे गय सोने का मूल्य २१ रुपए ३ आने १० पाई प्रति तोला था परन्तु अब उसका मूल्य ६२ रुपए ८ आने प्रति तोला अथवा ३५ डालर प्रति औंस कर दिया गया। ऐसा करने से सोना जो पहले रिजर्व में केवल ४० ०१ करोड रुपए का था वह बढकर ११८ ०२ करोड रुपए का हो जायेगा।

(३) धारा ३७ मे किए गए सशोधन से अब यदि रिजर्व बैंक के पास किसी समय आवश्यकता से कम विदेशी विनिमय होगी तो उसको उस कमी पर अब सरकार को कोई कर नही देना पडेगा।

इस प्रकार अब भारत मे अनुपातिक नोट पद्धति के स्थान पर न्यूनतम कोष पद्धति (Minimum Reserve Method) हो गई है। इस पद्धति के आने से अब आवश्यतानुसार नोटो को बढाया जा सकेगा। इसके अतिरिक्त अब विदेशी विनिमय को रिजर्व के रूप मे बेकार बन्द करके नही रखना पडेगा वरन् उसको अब देश की विदेशी विनिमय की माँग को पूरा करने के काम मे लाया जा सकेगा। देश मे ६ अगस्त १९५६ तक लगभग १७०० करोड रुपये के नोट थे जिनके पीछे १६३ ०१ करोड रुपये की विदेशी विनिमय थी।

(२) बैंकों का बैंक होना—रिजर्व बैंक देश के दूसरे बैंकों का नियन्त्रण, पथ प्रदर्शन तथा संगठन भी करता है। हमारे देश में दो प्रकार के बैंक हैं-(१) अनुसूचित बैंक (Scheduled), जिनका नाम रिजर्व बैंक एक्ट के दूसरे परिशिष्ट में दिया हुआ है तथा (२) गैर-अनुसूचित बैंक (Non-Scheduled), जिनका नाम इस परिशिष्ट मे नही दिया हुआ है। इनम स अनुसूचित बैंक की पूंजी तथा संचित कोष कम से कम ५ लाख रुपये का होना चाहिए। जिन बैंको की पूजी तथा संचित कोष ५ लाख रुपये से कम है वे रिजर्व बैंक के सदस्य नही बन सकते। सदस्य बैंकों के लिये यह अनिवार्य है कि वह अपनी चालू जमा (Demand liabilities) का कम से कम ५ प्रतिशत तथा स्थाई जमा (Time liabilities) का कम से कम २ प्रतिशत रिजर्व बैंक के पास रक्खे। रिजर्व बैंक एक्ट के एक संशोधन के अनुसार (जो जौलाई १९५६ ई० मे किया गया) रिजर्व बैंक को यह अधिकार दिया गया है कि वह अनुसूचित बैंको द्वारा रक्खे गये रिजर्व को चालू जमाओ के केस में ५ प्रतिशत से २० प्रतिशत के बीच मे बढा घटा सके तथा स्थायी जमाओं के केस मे २ प्रतिशत से ८ प्रतिशत के बीच मे बढा घटा सके। इस प्रकार की पद्धति संयुक्त राष्ट्र अमरीका मे पाई जाती है। इसके अतिरिक्त आस्ट्रेलिया के समान रिजर्व बैंक को अधिकार दिया गया है कि वह एक निश्चित तिथि के पश्चात् इन बैंकों को अपनी अतिरिक्त जमाओ का १०० प्रतिशत रिजर्व के रूप म रखने के लिये मज्बूर करे। रिजर्व बैंक को यह शक्ति इसलिए दी गई है जिससे कि उसका देश के साख ढांचे पर अधिकाधिक नियन्त्रण हो सके क्योंकि दूसरी योजना काल के लिए और बातो के अतिरिक्त मुद्रा स्फीति को रोकना बहुत आवश्यक है जो कि इस प्रकार के नियन्त्रण से बहुत कुछ रोकी जा सकती है क्योंकि बैंको द्वारा दिए गये ऋण मुद्रा स्फीति को बढाने मे बहुत कुछ सहायक होते हैं।

परन्तु राज्य सहकारी बैंको को अपनी मांग जमा का २½ प्रतिशत तथा अपनी स्थाई जमा का १ प्रतिशत ही रखना पडता है। बैंको को यह धन-राशि इसलिये रखनी पड़ती है जिससे कि रिजर्व बैंक का उन पर नियन्त्रण रहे। यदि कोई बैंक इस धन-राशि को रिजर्व बैंक के पास ही नहीं रखता तो उसको जुर्माने का ब्याज देना पडता है। सदस्य बैंको के लिये यह भी अनिवार्य है कि वे हर सप्ताह अपने दो जिम्मेदार कर्मचारियो के हस्ताक्षर करा कर एक साप्ताहिक विवरण (Weekly return) रिजर्व बैंक तथा केन्द्रीय सरकार को भेजें जिसम निम्नलिखित बातें हैं—

(१) भारत मे चालू तथा स्थायी जमायें, (२) भारत मे रक्खे हुए नोट, (३) रुपए के सिक्के तथा रेजगारी के रूप मे रक्खा हुआ धन, (४) भारत मे दिये गये ऋण तथा बट्टा किये गये बिलों का ब्यौरा, (५) रिजर्व बैंक के पास रक्खा हुआ धन।

इसके बदले रिजर्व बैंक इन बैंको को पुनर्बट्टे की सुविधा देता है तथा उसके

घन को एक स्थान से दूसरे स्थान पर सस्ती दर पर भेज देता है। रिजर्व बैंक को यह अधिकार दिया गया है कि वह वास्तविक व्यापारिक बिलों को जो ९० दिन से अधिक न हो तथा जिनपर दो या दो से अधिक अच्छे हस्ताक्षर हो, जिनमे से एक सदस्य बैंक के होने चाहियें, पुनर्बट्टे पर मोल ले सकता है। वह खेती सम्बन्धी बिलों को भी जिनकी अवधि १५ मास हो पुनर्बट्टे पर मोल ले सकता है। इसके अतिरिक्त अभी हाल में ही उसको १५ से अधिक तथा ५ वर्ष से कम के मध्यकालीन ऋण देने का भी अधिकार दिया गया है। जोलाई १९५६ मे रिजर्व बैंक एक्ट मे किये गये सशोधन से रिजर्व बैंक को नव निर्मित राष्ट्रीय कृषि साख (दीर्घकालीन कार्य) कोष मे से राज्य सहकारी बैंको को खेती तथा उससे सम्बन्धित कार्यों के लिये ऋण देने का अधिकार दिया गया है। इसके अतिरिक्त वह सरकारी ट्रस्ट, घरोहरो तथा सोने के पीछे भी ऋण दे सकता है।

(३) सरकारी बैंक होना—रिजर्व बैंक एक्ट की २०वी धारा के अनुसार रिजर्व बैंक पर यह भार है कि वह केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों का घन ले तथा उस घन का भुगतान सरकार के ऋण दाताओ को कर दे यह बैंक उनके धन को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भी ले जाता है। जब सरकार को जनता से ऋण लेना होता है अथवा ऋण चुकाना होता है अथवा उस ऋण पर ब्याज देना पडता है तब यह सब कार्य रिजर्व बैंक ही करता है। सरकार अपने सब धन को रिजर्व बैंक मे बिना ब्याज के रखती है। यदि सरकार को थोडे समय के लिये रुपए की आवश्यकता होती है तो वह रिजर्व बैंक से काम चलाऊ ऋण (Ways and means Advances) प्राप्त कर सकती है। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक राज्य सरकारो तथा विशेष कर केन्द्रीय सरकार को समय समय पर देश की आर्थिक समस्याओ, मुद्रा नीति, बैंकिग प्रगति तथा विनियोग नीति पर अपनी सम्मति भी देता रहता है।

(४) विदेशी विनिमय का नियन्त्रण करना—१९४६ ई० से पूर्व रिजर्व बैंक के ऊपर यह भार था कि वह १ शिलिग ५ ४१/६४ पैंस पर स्टलिग बेच कर तथा १ शिलिग ६ ३/१६ पैस पर उसको मोल लेकर रुपये की विनिमय दर १ शिलिग ६ पैंस पर स्थिर रक्खे।

परन्तु विदेशी विनिमय नियन्त्रण कानून १९४७ के अनुसार रिजर्व बैंक यह क्रय विक्रय केवल कुछ ही अधिकृत व्यक्तियों के साथ कर सकता है और वह भी केवल बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, देहली के कार्यालयो द्वारा। यह क्रय-विक्रय उन दरो पर किया जाता है जो केन्द्रीय सरकार अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोई की शर्तों को ध्यान मे रखकर निश्चित कर देती है। अब रिजर्व बैंक प्राय सभी देशो की विनिमय के क्रय विक्रय का कार्य करता है।

(५) अन्य कार्य—इन कार्यों के अतिरिक्त रिजर्व बैंक कुछ और भी कार्य करता है, जैसे धारा ५८ के अन्तर्गत यह देश के निकासी गृहो का नियन्त्रण करता है। यद्यपि रिजर्व बैंक ने अभी तक निकासी गृहो पर नियन्त्रण करने के लिये कोई

नियम नहीं बनाये हैं तो भी वह बम्बई, कलकत्ता, देहली तथा मद्रास, बंगलौर तथा नागपुर के निकासी गृहों का प्रबन्ध करता है।

इस बैंक को अपने ईश्यू तथा बैंकिंग विभागों का एक साप्ताहिक विवरण देना पड़ता है जो सरकारी गजट में छापता है। यह बैंक हर सप्ताह अपने सदस्य बैंकों के कार्य का एक सामूहिक विवरण भी छापता है।

रिजर्व बैंक के निषिद्ध कार्य—रिजर्व बैंक एक्ट की धारा १५ के अनुसार बैंक के लिए निम्नलिखित कार्य निषेध कर दिये गये—

(१) यह बैंक किसी व्यापारिक तथा व्यवसायिक कार्य को स्वयं नहीं कर सकता और न यह निजी व्यापार या उद्योग ही खोल सकता है और न किसी व्यापार या उद्योग में भाग ले सकता है और न उसे आर्थिक सहायता ही प्रदान कर सकता है।

(२) यह अचल सम्पत्ति को रहन रखकर उस पर ऋण नहीं दे सकता और न अचल सम्पत्ति को अपने निजी काम के अतिरिक्त खरीद ही सकता है।

(३) यह बैंक अपने या और किसी बैंक अथवा कम्पनी के हिस्से नहीं खरीद सकता और न इस प्रकार के हिस्सों की जमानत पर ऋण ही दे सकता है।

(४) यह बैंक ऐसे बिलों को न तो लिख ही सकता है और न स्वीकार ही कर सकता है जिनका भुगतान माँगने पर न हो अर्थात् जो मुद्दती हो।

(५) यह अपनी जमाओं का ब्याज नहीं दे सकता।

(६) यह बैंक अरक्षित ऋण (Unsecured loans and Advances) नहीं दे सकता।

रिजर्व बैंक और कृषि साख व्यवस्था—भारतवर्ष एक कृषि प्रधान देश है। इस देश में खेती की अवस्था बहुत ही शोचनीय है। इस कारण यह आवश्यक था कि रिजर्व बैंक खेती के लिये सस्ते ऋण दे तथा समय समय पर खेती सम्बन्धी आर्थिक समस्याओं पर सलाह दे। इस दृष्टि से रिजर्व बैंक के अन्तर्गत एक कृषि साख विभाग खोला गया। इस विभाग का कार्य कृषि साख की उचित व्यवस्था करना, कृषि साख सम्बन्धी समस्याओं को हल करना, समय-समय पर केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, राज्य सहकारी बैंकों तथा अन्य कृषि समस्याओं को मन्त्रणा देना, उनका मार्ग दर्शन करना तथा सहकारी आन्दोलन को सगठित करना है।

रिजर्व बैंक को कृषि सम्बन्धी निम्नलिखित सुविधाएं देने का अधिकार है—

(१) यह सहकारी धरोहर की जमानत पर अधिक से अधिक ९० दिन के लिए राज्य सहकारी बैंकों तथा केन्द्रीय भूमि बन्धक बैंकों को जो राज्य सहकारी बैंक घोषित कर दिये गये हैं, ऋण दे सकता है।

(२) यह बैंक भूमि बन्धक बैंकों के ऋण-पत्रों के आधार पर भी ऋण दे सकता है। परन्तु ऐसे ऋण तभी दिये जा सकते हैं जब कि ऋण-पत्र ट्रस्टी धरोहर घोषित कर दिये गये हैं।

(३) यह राज्य सहकारी बैंकों के खेती सम्बन्धी बिलों को भी जिनकी अवधि १५ मास से अधिक न हो, पुनर्बट्टे पर मोल ले सकता है।

(४) अभी हाल ही में इसको १५ मास से ५ वर्ष तक के मध्यकालीन ऋण देने का भी अधिकार दिया गया है।

(५) रिजर्व बैंक संशोधन अधिनियम के अनुसार दो कोष स्थापित किये जायेंगे, (१) राष्ट्रीय कृषि साख (दीर्घकालीन) कोष और (२) राष्ट्रीय कृषि साख (स्थायित्व) कोष। राष्ट्रीय कृषि साख (दीर्घकालीन) कोष की सहायता से रिजर्व बैंक राज्य सरकारों को दीर्घकालीन ऋण देगा, जो इन ऋणों को उद्योग सहकारी साख संस्थाओं की पूंजी सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने में करेंगी। इसके लिये आवश्यक होगा कि जिस सहकारी संस्था को सहायता दी जाय वह केवल ग्रामीण साख से सम्बन्धित हो। जहाँ तक राष्ट्रीय कृषि साख (स्थायित्व) कोष का सम्बन्ध है, इसका उपयोग रिजर्व बैंक राज्य सहकारी बैंकों की सहायता के लिये करेगा। राज्य सहकारी बैंकों को यह सहायता प्राकृतिक संकटों जैसे, अकाल, बाढ आदि के समय और अल्पकालीन ऋण सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने के लिये दी जायेगी। यह उपाय बहुत ही महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि ऐसी स्थिति में कुछ या अधिकांश ऋण की वापसी स्थगित हो सकेगी। इस सम्बन्ध में खटकने वाली बात यह अवश्य है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर किसान इतना मजबूर हो सकता है कि बिल्कुल अदायगी न कर सके।

उपर्युक्त दोनों कोषों में पहला कोष अर्थात् राष्ट्रीय कृषि साख (दीर्घकालीन) कोष ३ फरवरी १९५६ ई० से चालू हो गया है। प्रारम्भ में इस कोष में १० करोड रुपये रक्खे गये हैं। ३० जून १९५६ ई० से पांच वर्ष तक इस कोष में ५ करोड रु० प्रत्येक वर्ष हस्तान्तरित किये जायेंगे। इसीलिये जौलाई १९५८ ई० में इस कोष में २० करोड रु० थे। इस कोष में से पहला ८ लाख रु० का ऋण मद्रास सरकार को बडी-बडी सहकारी साख समितियों की पूंजी में चन्दे के रूप में देने के लिए दिया गया है। दूसरा कोष भी स्थापित हो गया है। इसमें जौलाई १९५८ ई० में २ करोड रु० थे।

परन्तु यह बात बताने योग्य है कि आरम्भ से अब तक रि र्व बैंक ने खेती की आर्थिक सहायता बहुत ही कम की है। १९४७-४८ से पूर्व इसने प्रांतीय सहकारी बैंकों को बहुत कम ऋण दिये थे और अब भी ऋण की मात्रा ५० करोड रुपये से अधिक नहीं है। इस प्रकार रिजर्व बैंक के स्थापित होने पर कृषि साख समस्या उतनी ही जटिल है जितनी कि वह पहले थी।

रिजर्व बैंक और स्वदेशी बैंक—धारा ५५ (२) के अन्तर्गत रिजर्व बैंक के ऊपर यह जिम्मेदारी थी कि वह स्थापित होने के तीन वर्ष के अन्दर एक रिपोर्ट सरकार को दे जिसमें वह यह सुझाव दे कि ब्रिटिश भारत में बैंकिंग के कार्य में लगे हुए व्यक्ति तथा संस्थाओं को आर्थिक लाभ पहुँचाने के लिये किस प्रकार का कानून उचित होगा।

इस दृष्टि से रिजर्व बैंक ने १९३७ मे दो बार इस बात का प्रयत्न किया कि वह देशी बैंको को अपना सदस्य बनायें। परन्तु क्योंकि सदस्यता की शर्ते स्वदेशी बैंको को मान्य न थी इस कारण वह बैंक रिजर्व बैंक के सदस्य न बन सके।

रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण—१ जनवरी १९४६ से रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया। इसलिए सरकार ने बैंक के सब हिस्सो को खरीद लिया है। सरकार हिस्सेदारो को प्रति १०० रुपये के हिस्से पर ११८·१० रुपये के हिसाब से देगी। यह धन कुछ तो धन के रूप मे दिया जायेगा और कुछ रकमो के रूप मे दिया जायेगा। भविष्य में बैंक का प्रबन्ध एक केन्द्रीय बोर्ड को सौंप दिया गया है। इस बोर्ड में एक गवर्नर, दो उप-गवर्नर, १० डायरेक्टर और एक सरकारी अफसर होंगे जिनकी नियुक्ति सरकार करेगी। गवर्नर केवल चार साल कार्य करेंगे। स्थानीय बोर्ड में अब ८ के बदले केवल ५ ही सदस्य होंगे और इनकी नियुक्ति भी सरकार ही करेगी।

बैंकिंग कम्पनीज एक्ट १९४९ और रिजर्व बैंक—

१९४९ के बैंकिंग कम्पनीज एक्ट के अन्तर्गत रिजर्व बैंक को सारे भारतवर्ष के बैंको के ऊपर नियन्त्रण करने की शक्ति दी गई है। रिजर्व बैंक, अब बैंको की ऋण देने की नीति को निर्धारित कर सकता है तथा यह भी तय कर सकता है कि किस कार्य के लिये ऋण दिया जाये तथा ऋण पर क्या ब्याज लिया जाये। रिजर्व बैंक स्वय या सरकार के आदेशानुसार बैंको के हिसाब की पुस्तको का निरीक्षण कर सकता है। यदि बैंक अपनी शाखायें खोलना चाहे तो उनको ऐसा करने के लिये रिजर्व बैंक की आज्ञा लेनी पडेगी। बैंको को समय-समय पर अपने कार्य का तथा अपनी सम्पत्ति का ब्यौरा रिजर्व बैंक को देना पडेगा। रिजर्व बैंक को बैंको के एकीकरण तथा उनके स्वय इच्छा से कार्य बन्द करने के सम्बन्ध मे भी कुछ शक्ति दी गई।

रिजर्व बैंक के कार्य पर दृष्टि—

रिजर्व बैंक ने इस देश मे १ अप्रैल १९३५ ई० से कार्य करना आरम्भ किया। इस बैंक की स्थापना से भारतीय बैंकिंग पद्धति कुछ सीमा तक सुदृढ, सुव्यवस्थित तथा सुसगठित हो सकी है। इस बैंक की स्थापना के पश्चात् भारतीय मुद्रा बाजार मे ब्याज की दर कुछ सीमा तक गिरी है और भारतीय मुद्रा बाजार मे द्रव्य की जो कमी रहती थी वह भी दूर हो गई है। इस बैंक ने प्रारम्भ से ही सस्ती मुद्रा नीति (Cheap Money policy) को अपनाकर भारतीय व्यापार, उद्योग धन्धो तथा कृषि की बढती हुई रुपये की मांग की पूर्ति करने मे बहुत सफलता प्राप्त की है। इसने भारत सरकार की सकट काल मे बहुत सहायता की है। इसने रुपये की विनिमय दर को भी स्थिर रक्खा है। परन्तु इतना होते हुए भी रिजर्व बैंक की स्थापना से भारत के मुद्रा बाजार को अधिक लाभ न हुआ।

इस बैंक की स्थापना से भारतवर्ष के विभिन्न मुद्रा बाजारो में जो ब्याज की

दरो मे विषमता पाई जाती थी वह आज भी पाई जाती है। अप्रैल १६५८ में भी जब कि रिजर्व बैंक की बैंक दर केवल ४ प्रतिशत थी, कलकत्ते और बम्बई से द्रव्य बाजारो की हुण्डी ब्याज दर, बिल ब्याज दर तथा अन्य साधारण ब्याज दरें ४ प्रतिशत से १२ प्रतिशत तक घटती बढती हैं। यह बैंक अभी तक भारतवर्ष मे एक विस्तृत बिल बाजार कायम न कर सका क्योंकि इस प्रकार के बिलो का भारतवर्ष में अभाव है। परन्तु जनवरी १६५२ ई० से इस बैंक ने भारत मे बिल बाजार निर्माण करना आरम्भ कर दिया है। इस कारण ६ अगस्त १६५६ को सरकार के अतिरिक्त अन्य दिये गये ७० करोड के ऋण मे से ५० लाख रु० के ऋण बिलो के पीछे दिये गये थे। यह बैंक भारतवर्ष की विभिन्न साख सस्थाओ (जैसे स्वदेशी बैंक, सहकारी साख समिति तथा और दूसरे बैंक) मे सहयोग स्थापित करने मे भी सफल न हो सका। खेती की आर्थिक सहायता न करने के कारण यह बैंक खेती की उन्नति में भी सहायक न हो सका। युद्ध काल मे यह बैंक देश मे होने वाले मुद्रा प्रसार को भी न रोक सका। इसके कारण देश मे मूल्य स्तर बहुत ऊँचा हो गया और लोगों को कठिनाइयो का सामना करना पडा। इस बैंक की सबसे बडी कमी यह रही है कि इसका देश की साख के ऊपर पूर्ण रूप से नियन्त्रण नहीं है। इसका कारण यह है कि देशी बैंक तथा महाजन जो देश के लगभग तीन चौथाई से अधिक व्यापार को आर्थिक सहायता प्रदान करते हैं उनके ऊपर इस बैंक का कोई प्रभाव नही है। इस कारण बैंक दर के कम या अधिक करने का भारतीय मुद्रा बाजार पर कोई प्रभाव नही पडता है।

परन्तु अभी हाल मे रिजर्व बैंक ने यह प्रयत्न किया कि मुद्रा प्रसार को कुछ कम किया जाये तथा इस देश के मुद्रा बाजार में लचीलापन आये। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये नवम्बर १६५१ मे बैंक दर ३ प्रतिशत से ३½ प्रतिशत कर दी गई। इसके साथ साथ रिजर्व बैंक ने सरकारी धरोहरों पर रुपया देना बन्द कर दिया। साथ-साथ रिजर्व बैंक ने मुद्दती बिलो पर भी जिनके साथ माँग वाले रुक्के लगे हुये हो ऋण देना आरम्भ कर दिया। यह इस देश मे बिल बाजार को उन्नत करने के लिये किया गया है। इस प्रकार के बिलो के पीछे अब यह बैंक बहुत रुपया उधार दे रहा है। इसके साथ-साथ बैंकिंग कम्पनीज एक्ट १६४६ ने जो शक्ति बैंकों के ऊपर नियन्त्रण करने की रिजर्व बैंक को दी है उसके कारण अब धीरे धीरे रिजर्व बैंक का प्रभाव देश के मुद्रा, बाजार पर पडने लगा है। जौलाई १६५६ के सशोधन के कारण इस बैंक का देश के मुद्रा बाजार पर और भी बडा नियन्त्रण हो जायेगा। आशा है निकट भविष्य मे यह बैंक देश की साख पर नियन्त्रण करने मे बहुत हद तक सफल हो जायेगा। श्री सी० एच० भाभा ने जो कि भारतीय बैंक सभा के अध्यक्ष हैं इस बात की सिफारिश की है कि रिजर्व बैंक को सरकार प्रभाव से मुक्त किया जाय।

—०✻०—

Q. 94 Point out the main defects of the present banking organisation of India. Indicate further lines of improvement.

प्रश्न ६४—भारत को वर्तमान बैंकिंग व्यवस्था के मुख्य दोष बताइये । उन्नति करने के साधन भी बताइये ।

भारतवर्ष मे अभी तक बैंकिंग की बहुत कम उन्नति हुई है । इस कारण इस देश के उद्योग-धन्धे तथा व्यापार भी कम उन्नत हो सके हैं । भारत की वर्तमान बैंकिंग व्यवस्था मे निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं—

(१) भारतवर्ष मे देश के क्षेत्रफल तथा प्राकृतिक साधनो को देखते हुये बैंकिंग की बहुत कम उन्नति हुई है । जबकि ब्रिटेन मे हर ७ वर्गमील और ३४२४ मनुष्यों के पीछे एक व्यापारिक बैंक है, भारत मे यह १७७५ वर्गमील तथा ७५००० मनुष्यो के पीछे है । इस देश मे बैंक कुछ नगरो तथा बडे-बडे कस्बो तक ही सीमित हैं । गाँव में बैंको का नाम भी नहीं है । इस कारण हमारे गाँव के रुपये का कोई उपयोग नही हो सकता । उसको लोग गाडकर रख देते हैं ।

(२) इस देश का मुद्रा बाजार कई भागों मे बँटा हुआ है जिनमे आपस मे कोई सम्बन्ध नही है । भिन्न-भिन्न प्रकार के बैंक भिन्न-भिन्न क्षेत्रो मे कार्य करते हैं और एक दूसरे से कोई सम्बन्ध नही रखते । व्यापारिक बैंक इम्पीरियल बैंक (राज्य बैंक) से ईर्ष्या रखते हैं । विदेशी विनिमय बैंकों का इस देश मे एक विशेष स्थान है । यह बैंक परिस्थिति का लाभ उठाकर भारतीय बैंको को बहुत हानि पहुँचाते रहे हैं । सहकारी बैंको तथा व्यापारिक बैंकों का आपस मे कोई सम्बन्ध नही । इन सब बातो से भी अधिक विशेष बात यह है कि हमारे देश के देशी बैंको तथा महाजनो का सम्बन्ध देश के दूसरे बैंको से नही है और देशी बैंको मे भी आपस मे बडा मतभेद पाया जाता है जैसे बम्बई में इनके गुजराती, मुलतानी तथा मारवाडी बाजार हैं जिनका एक दूसरे से बहुत कम सम्बन्ध है ।

(३) इस देश के बैंको मे आपस मे कोई सम्बन्ध न होने का परिणाम यह है कि इस देश में सभी स्थानो पर ब्याज की एक सी दर नहीं है । केन्द्रीय बैंकिंग जाँच कमेटी ने बताया कि यदि माँग वाले ऋण की ब्याज की दर $\frac{3}{4}$% हो, हुण्डी की दर तीन प्रतिशत हो, बैंक की दर ४ प्रतिशत हो, बम्बई बाजार मे छोटे-छोटे व्यापारियों के बिलों की दर ६$\frac{3}{4}$ प्रतिशत हो तथा कलकत्ते बाजार में छोटे छोटे व्यापारियों के बिलो की दर १० प्रतिशत हो तो यह इस बात का द्योतक है कि देश के एक मुद्रा बाजार से दूसरे मुद्रा बाजार मे रुपया नही आता-जाता । मुद्रा बाजार की जो स्थिति १६३० में थी उसमे अभी तक कोई विशेष परिवर्तन नही हुआ है क्योंकि अप्रैल १६५८ मे कलकत्ते और बम्बई मे माँग ऋण की दर ३ प्रतिशत से ३$\frac{1}{2}$ प्रतिशत तक तथा ३$\frac{1}{4}$ प्रतिशत से ४$\frac{1}{2}$ प्रतिशत तक, बैंक की दर ४ से ४$\frac{1}{2}$ प्रतिशत, इम्पीरियल बैंक की हुण्डी की दर ४$\frac{1}{2}$ प्रतिशत, बम्बई बाजार मे छोटे छोटे व्यापा-

रियो के ब्याज की दर ६$\frac{३}{४}$ से १०$\frac{१}{२}$ प्रतिशत तथा कलकत्ते बाजार में बिलो की यह दर १२ प्रतिशत तथा मद्रास मे १२$\frac{५}{३२}$ प्रतिशत थी।

(४) हमारे देश के द्रव्य बाजार की एक बडी कमी यह है कि इसमे उद्योग धन्धों तथा व्यापार की माँग की पूर्ति करने के लिये द्रव्य और साख नही है। इस धन की कमी के मुख्य कारण जनता में रुपये को दबाकर रखने की आदत का होना भारतीय जनता की अत्यन्त गरीबी, उसकी अज्ञानता तथा अशिक्षा है। धन की कमी फसल के समय तो बहुत ही अधिक हो जाती है। इसके विपरीत, बरसात में जब कम व्यापार होता है रुपए की इतनी कमी नही रहती। यही कारण है कि मन्दे तथा अधिक व्यापार के समय की ब्याज की दरो मे बहुत अन्तर रहता है। जैसे १९२४ मे ऊँची दर ९ प्रतिशत तथा नीची दर ४ प्रतिशत थी। १९२८ मे ऊँची दर ७ प्रतिशत तथा नीची दर ५ प्रतिशत थी तथा १९२९ में ऊँची दर ८ प्रतिशत तथा नीची दर ५ प्रतिशत थी।

(५) हमारे देश के द्रव्य बाजार का एक दोष यह भी है कि इसमे बिल बाजार का अभाव है। इस अभाव के बहुत से कारण हैं जैसे—(१) भारत मे बैंक सरकारी धरोहरो तथा अन्य श्रेष्ठ प्रकार की धरोहरो मे अपना रुपया लगाना अधिक पसन्द करते हैं। (२) भारतवर्ष में इगलैंड के से वित्तीय गृहो (Finance houses) के समान सस्थायें नही हैं जो अपने ग्राहको के लिये बिलो को स्वीकार कर सकें। (३) बहुत से बिल व हुण्डियाँ ऐसी होती हैं जिनका यह पता लगाना बहुत ही कठिन है कि वे व्यवसाय के लिये लिखी गई हैं या केवल उधार लेने के उद्देश्य से क्योकि वहाँ पर प्रमाणित भण्डारो तथा गोदामो के अभाव के कारण माल के अधिकार पत्र नही लगाये जाते। (४) यहाँ पर समावधि बिलों तथा मुद्दती हुण्डियो पर स्टाम्प-कर बहुत अधिक हैं। (५) हमारे देश में नकद साख का बहुत रिवाज है। (६) भारतवर्ष मे जिस प्रकार के बिल पाये जाते हैं उनको रिजर्व बैंक पुनर्बट्टे पर नही खरीदता। इसलिये दूसरे बैंक भी उन बिलो का बट्टा नहीं करते। (७) भारत के विदेशी व्यापार के सम्बन्ध मे जो बिल लिखे जाते हैं वे सब स्टर्लिङ्ग मे होते हैं इसलिये उनसे भारत के मुद्रा बाजार को कोई लाभ नही पहुँच सकता।

(६) हमारे देश में साख बैंकिंग की बहुत कम उन्नति हुई है। यदि यहाँ पर साख बैंकिंग उन्नत हो जाय तो गाँवो को भी बैंकिंग से लाभ पहुँच सकता है।

(७) हमारे देश मे निकासी गृहो की भी बहुत कम उन्नति हुई। इस कारण बैंकों को अपने द्रव्य कोष में अधिक रुपया रखना पडता है और वे कम साख सृजन कर सकते हैं।

दोषों को दूर करने के उपाय—

भारतीय बैंकिंग के इन दोषो को दूर करने के लिय रिजर्व बैंक को बहुत कार्य करना पडेगा। रिजर्व बैंक एक्ट के अतिरिक्त बैंकिंग कम्पनीज एक्ट ने रिजर्व बैंक

को बहुत शक्ति प्रदान की है जिसके आधार पर वह बैंको को ठीक प्रकार से उन्नत कर सकता है। इसके साथ साथ इसको ऐसे कार्य भी करने पड़ेंगे जो बैंको की शक्ति के बाहर हैं परन्तु इसकी शक्ति के अन्दर हैं, जैसे इसको इस बात का प्रयत्न करना पड़ेगा कि इस देश मे बिल बाजार उन्नत हो। यह तभी हो सकता है जब कि सरकार बिलो का स्टाम्प कर कम करे तथा रिजर्व बैंक बिलो को पुनर्बट्टे पर खरीदना आरम्भ कर दे। अभी पिछले एक वर्ष से रिजर्व बैंक ने बिल बाजार बनाने के लिये कुछ प्रयत्न आरम्भ किया है। आशा है कि शीघ्र ही हमारे देश मे एक अच्छा बिल बाजार निर्माण हो जायगा।

रिजर्व बैंक को यह भी प्रयत्न करना पड़ेगा कि गांवो मे बैंकिंग की उन्नति हो। इसके लिये केन्द्रीय बैंकिंग जांच कमेटी का यह सुझाव है कि रिजर्व बैंक की व्यापारिक बैंको द्वारा उन स्थानो पर खुली हुई (जहां पर बैंक नही हैं) शाखाओ को पांच वर्ष तक आर्थिक सहायता देनी चाहिये, उपयुक्त ही मालूम पड़ती है।

रिजर्व बैंक को यह भी प्रयत्न करना चाहिये कि वह देशी बैंकों तथा महाजनो से अपना सम्बन्ध स्थापित करे। बिना इस प्रकार के सम्बन्ध के रिजर्व बैंक का साख पर पूर्णरूप से नियन्त्रण नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त रिजर्व बैंक को यह भी प्रयत्न करना चाहिये कि एक प्रकार के बैंको का दूसरे प्रकार के बैंक से सम्बन्ध स्थापित हो जिससे कि उनका फालतू रुपया एक दूसरे के काम आ सके। ऐसा होने से भिन्न-भिन्न स्थानो पर ब्याज की दर समान हो जायगी।

हमारे देश म सरकारी गोदाम भी बनने चाहियें ताकि उनमे सामान रख कर अधिकार पत्र प्राप्त किये जा सकें। इस प्रकार के अधिकार-पत्रो के होने पर रिजर्व बैंक को बिलो का पुनबट्टा करने मे कोई आपत्ति न होगी। दूसरी पचवर्षीय योजना मे इस प्रकार के बहुत से गोदाम बनाने की योजना है।

रिजर्व बैंक को चाहिये कि वह इस देश मे निकासी-गृह उन्नत करने का प्रयत्न करे।

अभी हाल ही मे नियुक्त साख समिति ने सुझाव दिया है कि बैंकों की आपसी प्रतियोगिता को काम करने के लिये एक अखिल भारतीय बैंक सघ स्थापित होना चाहिये जिसका काय बैंको के हितों की रक्षा करना तथा सामान्य हित की बाता पर विचार विनिमय करना हो।

Q. 95. Describe briefly the principal provisions of the Banking Companies Act 1949.

प्रश्न ९५—बैंकिंग कम्पनीज एक्ट १९४९ की मुख्य मुख्य बातें संक्षेप मे बताइये।

यद्यपि रिजर्व बैंक ने सन् १९३९ मे भारतीय बैंकिंग व्यवस्था को सुदृढ बनाने के लिए भारत सरकार के सामने एक बैंकिंग बिल रक्खा था परन्तु भारत सरकार के लडाई के कार्य में व्यस्त होने के कारण वह बिल पास न किया गया। हाँ सरकार ने समय-समय पर भारतीय कम्पनीज एक्ट मे सशोधन करके बैंको के ऊपर नियन्त्रण करने का प्रयत्न किया। इन सब सशोधनो तथा कानूनो का एकीकरण करके बैंकिंग कम्पनीज एक्ट १९४९ में बनाया गया। यह एक्ट १६ मार्च १९४९ से लागू हुआ।

इस एक्ट की धारा ३ के अनुसार यह एक्ट सहकारी बैंको को छोडकर सब बैंकिंग कम्पनियो पर लागू होता है। अब कोई भी सस्था उस समय तक बैंकिंग व्यवसाय नही कर सकती जब तक कि वह अपने नाम के आगे बैंक, बैंकिंग अथवा बैंकर शब्द प्रयोग न करे। इस एक्ट के अनुसार बैंकिंग का अर्थ है जनता से उधार देने या विनियोग के लिए ऐसी धन-राशि जमा के रूप मे लेना जो माँग पर या अन्य भाँति देय है तथा बैंक ड्राफ्ट, आदेश के द्वारा या अन्य प्रकार से निकाली जा सकती है।

इस एक्ट की धारा २२ के अनुसार कोई भी बैंक उस समय तक कार्य नही कर सकता जब तक कि वह रिजर्व बैंक से अनुज्ञा-पत्र (Licence) प्राप्त न कर ले। यह एक्ट पुराने तथा नये दोनों प्रकार के बैंकों पर लागू होता है। पुराने बैंको के लिये एक्ट लागू होने के ६ मास के अन्दर अन्दर इस प्रकार का अनुज्ञा-पत्र प्राप्त कर लेना चाहिए। नये बैंको को आरम्भ से ही इस अनुज्ञा-पत्र को प्राप्त करना आवश्यक है।

इस एक्ट की धारा ११ के अनुसार जो बैंक केवल एक ही स्थान पर अपना कार्यालय रक्खे उसको कम से कम ५० हजार रुपये की पूँजी तथा सचित कोष रखना पडेगा। यदि किसी बैंक का कार्य एक से अधिक राज्यो मे हो तो उसे ५ लाख रुपये की पूँजी तथा सचित कोष रखना आवश्यक है। जो बैंक कलकत्ते तथा बम्बई मे कार्य करते हैं उनकी पूँजी तथा सचित कोष में कम से कम १० लाख रुपये होने चाहियें। विदेशी कम्पनियो की पूँजी तथा सचित कोष मे कम से कम १५ लाख रुपए होने चाहियें और यदि ये बैंक कलकत्ता तथा बम्बई में भी कार्य करते हों तो इनकी पूँजी तथा सचित कोष २० लाख रुपए होना चाहिए।

इस एक्ट की धारा १२ के अनुसार किसी भी बैंक की प्रार्थित पूँजी (Subscribed capital) उसकी अधिकृत पूँजी (Authorised capital) की आधी से कम नही होगी तथा उसकी प्राप्त पूँजी उसकी प्रार्थित पूँजी की आधी से कम न

होगी। प्रत्येक बैंक अपनी पूंजी को साधारण हिस्सो के रूप मे प्राप्त कर सकता है। १ जौलाई १९४४ से पूर्व बेचे गये पूर्वाधिकारी हिस्सो के रूप मे भी पूंजी प्राप्त की जा सकती है।

इस एक्ट की धारा १० मे बैंक के प्रबन्ध के बारे मे दिया गया है। अब किसी बैंक का प्रबन्ध, प्रबन्धकर्ता (Managing Agents) द्वारा नही किया जा सकता। बैंको के प्रबन्ध के लिए ऐसे व्यक्ति भी नियुक्त नही किये जा सकते जो दिवालिया हो चुके हों। किसी भी प्रबन्धकर्ता को कम्पनी के लाभ मे से वेतन के रूप मे नही दिया जा सकता। ऐसे व्यक्ति भी कम्पनी के सचालक नियुक्त नही किये जा सकते जो अन्य कम्पनी के सचालक हो अथवा जो अन्य प्रकार के व्यवसाय मे लगे हुए हो अथवा जिसने कम्पनी का प्रबन्ध करने के लिये कम्पनी से पांच वर्ष से अधिक के लिये समझौता कर लिया हो।

इस एक्ट की धारा २४ के अनुसार इस एक्ट के लागू होने के दो वर्ष पश्चात् प्रत्येक बैंक को अपनी कुल मुद्दती तथा मांग जमाओ का प्रतिदिन २० प्रतिशत नकद रुपया, सोना तथा अन्य प्रकार की अनुमोदित धरोहरें भारत मे रखनी पडेंगी। इसका विवरण प्रति मास रिजर्व बैंक को भेजना पडेगा। धारा २५ के अनुसार प्रत्येक बैंक को हर तीसरे महीने के अन्तिम दिन अपनी मुद्दती तथा मांग देनदारियों की कम से कम ७५ प्रतिशत मूल्य की सम्पत्ति भारत के विभिन्न राज्यो मे रखनी पडेगी और इसका विवरण रिजर्व बैंक को भेजना पडेगा।

सदस्य बैंको के समान गैर सदस्य बैंको के लिये भी यह आवश्यक हो गया है कि वे अपनी मांग जमा का ५ प्रतिशत और मुद्दती जमा का २ प्रतिशत रिजर्व बैंक के पास अथवा अपने पास प्रतिक्षण रक्खें तथा प्रत्येक मास के अन्तिम शुक्रवार को इस आशय का एक विवरण रिजर्व बैंक को भी भेजें। परन्तु रिजर्व बैंक अब उसको मांग जमा के केस मे ५ से २० प्रतिशत के बीच मे तथा समावधि जमाओ के केस मे २ से ८ प्रतिशत के बीच घटा-बढा सकता है। इसके अतिरिक्त एक निश्चित तिथि के पश्चात् वह इन बैंको को अपनी जमाओ का १०० प्रतिशत रखने के लिये मजबूर कर सकता है।

धारा १७ के अनुसार प्रत्येक बैंक के लिये यह आवश्यक है कि वह लाभांश वितरण करने से पूर्व लाभ का कम से कम २० प्रतिशत भाग प्रतिवर्ष सचित कोष मे तब तक हस्तान्तर करता रहे जब तक कि वह कोष प्राप्त पूंजी के बराबर न हो जाये।

इस एक्ट की धारा १९ के अनुसार कोई भी बैंक कुछ निश्चित उद्देश्यो की पूर्ति के लिये और वह भी रिजर्व बैंक की अनुमति से, सहायक प्रमण्डल (Subsidiary Company) की स्थापना कर सकेगा अन्यथा नही। अब बैंक अपने ही हिस्सो की जमानत पर ऋण न दे सकेगा तथा अपने किसी संचालक को अरक्षित ऋण न

दे सकेगा। बैंक अब किसी ऐसी दूसरी कम्पनी या बैंक को ऋण न दे सकेगा जिसमे बैंक का कोई भी संचालक साझेदार हो।

इस एक्ट ने रिजर्व बैंक को देश की बैंकिंग व्यवस्था का नियन्त्रण तथा संगठन करने के उद्देश्य से निम्नलिखित अधिकार दिये हैं—

हरएक नये अथवा पुराने बैंक को अपना कार्य करने के लिये रिजर्व बैंक से एक अनुज्ञा-पत्र प्राप्त करना पड़ेगा। कोई भी बैंक बिना रिजर्व बैंक की आज्ञा के किसी स्थान पर अपनी शाखायें नही खोल सकेगा। रिजर्व बैंक अपनी इच्छा से अथवा केन्द्रीय सरकार के आदेशानुसार किसी भी बैंक का हिसाब तथा अन्य विवरण का किसी भी समय निरीक्षण कर सकता है। यदि निरीक्षण करने पर किसी बैंक का कार्य ठीक न पाया जाय तो रिजर्व बैंक केन्द्रीय सरकार के आदेशानुसार उस बैंक को भविष्य मे जमायें लेने से रोक सकता है तथा उसे अपना कार्य बन्द करने की भी लिखित आज्ञा दे सकता है। प्रत्येक बैंक के लिये यह आवश्यक है कि वह रिजर्व बैंक के पास अपनी मांग देनदारी का ५ प्रतिशत (अब ५ से २० प्रतिशत के बीच) तथा अपनी मुद्दती देनदारी का २ प्रतिशत (अब २ से ८ प्रतिशत के बीच) रक्खे तथा महीने के अन्त मे इस सम्बन्ध मे एक रिपोर्ट रिजर्व बैंक को भेजे। रिजर्व बैंक को अधिकार है कि जनहित के लिये देश के समस्त बैंको को अथवा किसी एक बैंक को यह आदेश दे कि वह प्रमुख उद्देश्यों के लिये ही ऋण दे और वह भी रिजर्व बैंक द्वारा निश्चित की हुई दर पर। इन सबके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि प्रत्येक बैंक रिजर्व बैंक के पास निम्नलिखित सूचनायें भेजे—

(१) प्रति मास एक ऐसा विवरण जिसमे उन समस्त अरक्षित ऋणो का वर्णन हो जो उस बैंक ने ऐसी कम्पनियो को दिये जिसमे वह बैंक अथवा उसका संचालक अथवा प्रबन्ध-कर्त्ता प्रत्यभविता (Guarantor) के रूप मे कार्य करते हो।

(२) प्रत्येक मास एक ऐसा विवरण जिसमे उस सम्पत्ति का विवरण हो जो प्रत्येक बैंक को अपनी मुद्दती तथा मांग जमाओ के मूल्य का २० प्रतिशत नकद रुपये तथा सोना आदि के रूप मे रखना आवश्यक है।

(३) हर तीसरे महीने एक ऐसा विवरण जिसमे यह दिखाया गया हो कि बैंक ने अपनी कुल देनदारी का ७५ प्रतिशत भारत सम्पत्ति के रूप में रक्खा है।

(४) प्रतिवर्ष के अन्त में प्रत्येक बैंक को उन जमाओं का एक विवरण भेजना पड़ेगा जिनमे से पिछले दस वर्षों मे कोई रुपया निकाला नही गया है।

(५) प्रत्येक बैंक को अपना वार्षिक चिट्ठा तथा अन्य खाते आडीटर की रिपोर्ट सहित भेजने पड़ेंगे।

(६) इनके अतिरिक्त यदि रिजर्व बैंक किसी बैंक को कोई सूचना भेजने के लिये आज्ञा देता है तो वह सूचना उसको भेजनी पड़ेगी।

रिजर्व बैंक की स्वीकृति बिना कोई भी बैंक किसी प्रकार का एकीकरण, पुनर्गठन तथा अन्य प्रकार की योजनायें नहीं कर सकता।

यदि किसी बैंक का अदालत द्वारा निस्तारण (Liquidation) कर दिया गया हो और रिजर्व बैंक उस बैंक का राजकीय निस्तारक (Official Liquidator) नियुक्त किये जाने की प्रार्थना करे तो वह इस कार्य के लिये नियुक्त किया जायेगा। रिजर्व बैंक किसी भी बैंकिंग कम्पनी को किसी भी प्रकार की सलाह दे सकता है। वह बैंकों का एकीकरण करवाने मे मध्यस्थ बनकर सहायता कर सकता है। यह बैंक किसी भी बैंक को ऋण देकर सहायता कर सकता है। यह किसी भी बैंक का निरीक्षण करके उस बैंक को अपने सचालकों की उस निरीक्षण रिपोर्ट पर विचार करने के लिये बैठक बुलाने तथा उस रिपोर्ट में दिये गये सुझावों का पालन करने का आदेश दे सकता है। यह बैंक किसी भी बैंक को बन्द करने के लिये अदालत से प्रार्थना कर सकता है। यह बैंक केन्द्रीय सरकार को प्रतिवर्ष भारतीय बैंकिंग की प्रगति के सम्बन्ध मे रिपोर्ट देगा और इस रिपोर्ट मे भारतीय बैंकिंग को सुदृढ बनाने के सुझाव भी देगा। इस प्रकार यह एक्ट देश की बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ बनाने मे बहुत सहायक होगा।

Q 96 —Classify the main sources of income and heads of expenditure of the Central and State Governments. How is the Five Year's Plan being financed ?

प्रश्न ९६—केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के आय तथा व्यय की मुख्य मदों का वर्णन कीजिये। पंचवर्षीय योजना के लिये धन कैसे खर्च किया जाता है ?

उत्तर—२६ जनवरी १९५० को भारत मे गणराज्य स्थापित होने के पश्चात् राज्य के अधिकार, उत्तरदायित्व तथा कार्य आदि संघ (Union) तथा राज्यो (States) मे विभाजित कर दिये गये। जिस सिद्धान्त पर संघ और राज्य मे कार्यो का विभाजन हुआ है लगभग उसी प्रकार उसमे आय व्यय के मदो का विभाजन हुआ है। ऐसे कर जिनका सम्बन्ध सारे देश से है उनको संघ सरकार को दिया गया है तथा जिनका सम्बन्ध किसी विशेष स्थान से है वे स्थानीय सरकार को दिये गये हैं। इसी सिद्धान्त पर संघ राज्यो तथा स्थानीय सरकारो मे व्यय के मदो का विभाजन किया गया है।

संघ सरकार की आय व्यय के मुख्य मद—संघ सरकार की आय के मुख्य मद निम्नलिखित हैं—(१) सीमा शुल्क, (२) उत्पादन शुल्क, (३) कार्पोरेशन कर, (४) आय कर (कार्पोरेशन कर को छोड कर), (५) सम्पत्ति शुल्क, (Estate own) (६) पूंजी कर (Wealth Tax), (७) रेल के किराये पर कर, (८) व्यय कर, (९) उपहार कर (Gift Tax), (१०) अफीम, (११) ब्याज, (१२) नागरिक प्रशासन, (१३) मुद्रा और टकसाल, (१४) नागरिक निर्माण कार्य, (१५) आय के अन्य साधन, (१६) डाक और तार की वास्तविक आय जो जनरल रिवेन्यूज को प्राप्त हुई, (१७) रेलवे से आय जो जनरल रिवेन्यूज को प्राप्त हुई, (१८) असाधारण मद, (१९) राज्यो को दिया जाने वाला आय कर भाग जो आय मे से घटाया जाता है।

संघ सरकार के मुख्य व्यय के मद निम्नलिखित हैं—(१) राजस्व से सीधी माँगें, (२) सिंचाई, (३) ऋण पर ब्याज आदि, (४) नागरिक प्रशासन, (५) मुद्रा और टकसाल, (६) नागरिक निर्माण कार्य, (७) पेंशन, (८) शरणार्थियो पर व्यय, (९) खाद्य पदार्थों पर व्यय, (१०) अन्य व्यय, (११) राज्य को सहायता, (१२) असाधारण मदे, (१३) रक्षा व्यय, (१४) विभाजन के पूर्व की अदायगी।

(१) सीमा शुल्क (Customs)—यह वह कर है जो विदेशो से आने वाले तथा विदेशो को जाने वाले माल पर लगाया जाता है। यह कर या तो मूल्य

(Ad Velorem) या परिमाणानुसार (Specific) लगाया जाता है। यह कर या तो राज्य की आय बढाने के लिये लगाया जाता है या देश के उद्योग-धन्धो को विदेशी प्रतियोगिता से बचाने के लिये लगाया जाता है। पहले जब हमारा देश अबाध व्यापार की नीति पर था तब इस मद से बहुत कम आय प्राप्त होती थी पर जब से हमारे देश ने उद्योगो को सरक्षण देने की नीति अपनाई है तब से इस मद से काफी आय बढ गई है।

(२) उत्पादन शुल्क (Union Excise)—यह कर देश के अन्दर उत्पन्न होने वाली कुछ चीजो पर लगाया जाता है। इसीलिये इसको उत्पादन कर कहते हैं। हमारे देश मे आजकल यह कर तम्बाकू, मिट्टी का तेल, वनस्पति घी, दियासलाई, चाय, कपडा, चीनी, टायर, ट्यूब, कहवे आदि पर लगाया जाता है। ये कर आय प्राप्त करने तथा कभी-कभी कुछ चीजों का उपभोग बन्द करने के लिये लगाये जाते हैं।

(३) आय कर (Income Tax)—यह कर आय के ऊपर लगाया जाता है। इस कर की दर समय-समय पर बढती रहती है। हमारे देश में यह कर स्लैब पद्धति (Slab system) के अनुसार लगाया जाता है। इसमे ३००० रुपये तक की आय के ऊपर कोई कर नही लगाया जाता। इसके ऊपर वाली आय के ऊपर कर लगना आरम्भ होता है। नीची आमदनी पर कर की दर नीची है। जैसे-जैसे आय बढती जाती है वैसे ही वैसे कर की दर बढती जाती है। इस प्रकार यदि ३००० से ५००० रुपये की आय पर ३ प्रतिशत कर लगता है तो १५००० रुपये पर १४ प्रतिशत लगता है। १५००० रुपये से २०,००० रु० तक की आय पर कर की दर १८ प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त ७५०० की आय के ऊपर ५ प्रतिशत के हिसाब से एक अतिरिक्त कर (Surcharge) भी लगने लगता है। २०,००० रु० की आय से ऊपर सुपर टैक्स लगना शुरू हो जाता है। ऐसा करते-करते कर की दर अर्जित आय के केस ७७ प्रतिशत तथा अनर्जित आय के केस मे ८४ प्रतिशत तक पहुँच जाती है। इस प्रकार हमारी कर पद्धति वर्द्धमान कही जा सकती है। १९५७-५८ से जहाँ कर लगाने की न्यूनतम सीमा ४२०० रु० से घटाकर ३००० रु० की गई है वहाँ बच्चो की छूट भी दी जाती है जो कि प्रति बच्चा ३०० रु० है। परन्तु छूट ६०० से अधिक नही दी जा सकती।

आय कर केन्द्रीय सरकार द्वारा लगाया तथा वसूल किया जाता है। परन्तु इसका कुछ भाग राज्यो को भी दिया जाता है। प्रथम वित्तीय आयोग की सिफारिश के अनुसार कुल आय कर का ५५ प्रतिशत राज्यो को बाँटा जाता है। इसमे से ८० प्रतिशत तो जनसख्या के हिसाब से तथा २० प्रतिशत कर के एकत्र करने के स्थान के हिसाब से बाँटा जाता था। परन्तु दूसरे वित्तीय आयोग ने सिफारिश की है कि कुल एकत्र किये गए धन का ६० प्रतिशत राज्यो मे बाँटा जाय जिसमे से ९०% जनसख्या की दृष्टि से तथा १० प्रतिशत उसके एकत्र करने के स्थान की दृष्टि से बाँटा जाय।

भारत सरकार का बजट

(लाख रुपये में)

आय के मद	बजट १९५८-५९	संशोधित १९५८-५९	बजट १९५९-६०	व्यय के मद	बजट १९५८-५९	संशोधित १९५८-५९	बजट १९५९-६०
सीमा शुल्क	१७०००	१९६००	१३०,००+ २७७*	राजस्व पर सीधी माँगें	९४०५	९९९३	१०१६५
यूनियन उत्पादन कर	३०४७६	३०११५	३०७००+ १८०८*	सिंचाई	१३	१६	१६
कार्पोरेशन कर	५५५०	५६००	५८७५	ऋण पर ब्याज	४०००	४२०६	५७८८
आय कर	१६१५०	१६२५०	१६६२५	नागरिक प्रशासन	२००४४	१९७७२	२२२७३
सम्पत्ति शुल्क (Estate Duty)	२५०	२५०	२८५	मुद्रा व टकसाल	८५०	९१४	९८३
				नागरिक निर्माण			
पूंजी कर (Wealth Tax)	१२५०	१०००	१०५०+ २५०*	विविध सार्वजनिक उन्नति	१८७१	१८३२	१९३५
रेल भाड़े पर कर	९२२	११००	११००	पेंशन	९४०	९५१	९१३
व्यय पर कर Expenditure Tax)	३००	१००	१००	विविध—			
उपहार कर	२००	१२०	१२०	शरणार्थियों पर व्यय	२०४८	२४७५	१९६९

अफीम	२८७	३३१	३९३	अन्य व्यय	५०३३	५७८१	७१३०
ब्याज	६६०	८३६	१०७५	राज्यो को अनुदान	४७०३	४६९५	४९०२
नागरिक प्रशासन	४४२४	४५६३	३५८०	असाधारण मद	२८४०	१५२१	३५२६
मुद्रा व टकसाल	३६६२	३४७६	५५६०	रक्षा-व्यय (वास्तविक)	२७८१४	२६६८७	२४२६८
नागरिक निर्माण कार्य	२८७	२९७	३००	कुल व्यय	७९६०१	७८८१५	८३९१८
आय के अन्य साधन	३१९३	२९२१	४१९३	घाटा (—)	—२८०२	—५९९५	—५८३२
डाक और तार	२३४	५३८	४२०				
रेल	७०४	६४०	५५८				
घटाओ—राज्यो का आय कर का भाग	—७६९७	—७५८०	—७८९२				
„—„ सम्पत्ति शुल्क	—२१८	—२३८	—२७१				
„—„ रेल भाडे	—११५	—१०८९	—१०८६				
	७६७९९	७२८२०	७५७५१+ २३३५*				
बजट प्रस्तावो का प्रभाव							

(४) कार्पोरेशन कर—यह कर कम्पनियों की आय पर सुपर टैक्स के रूप में लगाया जाता है और अधिक से अधिक दर पर लगाया जाता है। इसमें आय का कोई भी भाग कर मुक्त (Tax Free) नही होता।

(५) सम्पत्ति शुल्क (Estate Duty)—यह भारत के लिये एक नया कर है। यह अक्तूबर १९५३ से लागू किया गया है। इस कर के अनुसार किसी व्यक्ति के मर जाने के पश्चात् उसकी सम्पत्ति का कुछ भाग सरकार ले लेगी। यह ५०,००० रु० की सम्पित्तियों से ऊपर लगेगा। इस कर को केन्द्रीय सरकार लगायेगी परन्तु इसका अधिकतर भाग राज्यों मे बाँटा जाता है। यह कर ५०,००० रु० तक नहीं लगता (अगले ५०,००० रु० पर ६ प्रतिशत, उससे अगले ५०,००० रु० पर ८ प्रतिशत, उससे अगले ५०,००० रु० पर १० प्रतिशत, उससे अगले १,००,००० रु० पर १२ प्रतिशत, इस प्रकार कर की दर बढ़ती जाती है। अन्त में ५० लाख रु० से अधिक की सम्पत्ति पर कर की दर ४० प्रतिशत हो जाती है।

पूँजी कर (Wealth Tax)—यह एक नया कर है। यह कर व्यक्तियो सामूहिक परिवारो तथा कम्पनियों द्वारा दिया जायगा। परन्तु जिन व्यक्तियो की सम्पत्ति दो या दो लाख से कम होगी उनको यह कर नही देना पडेगा। इसी प्रकार सामूहिक परिवारो को ४ लाख रु० तक की छूट दी गई है। कम्पनियों को ५ लाख रु० तक की वास्तविक पूँजी पर कोई कर नही देना पडेगा। इसके पश्चात् यह कर निम्नलिखित ढग से लिया जायेगा:—

व्यक्तियों से—

दो लाख से ऊपर अगली दस लाख की वास्तविक पूँजी पर	½%
उसके पश्चात् अगली १० लाख की वास्तविक पूँजी पर	१%
उसके पश्चात् शेष वास्तविक पूँजी पर	१½%

सामूहिक परिवारों से—

पहले ४ लाख की वास्तविक पूँजी पर	कुछ नही
उसके पश्चात् ६ लाख की वास्तविक पूँजी पर	½%
उसके पश्चात् की १० लाख की वास्तविक पूँजी पर	१%
उसके पश्चात् शेष वास्तविक पूँजी पर	१½%

कम्पनियों से—

पहले पाँच लाख की वास्तविक पूँजी पर	कुछ नहीं
उसके पश्चात् शेष वास्तविक पूँजी पर	½%

इस कर से निम्नलिखित सम्पति मुक्त होंगी—कृषि सम्पत्ति, धार्मिक अथवा दान देने वाले ट्रस्टों की सम्पत्ति, कलात्मक कार्य, पुरानी चीजें जो बेचने के लिये न हों (Archaeological Collections), बीमा पालिसी तथा स्वीकृत प्रोविडेंट फड मे एकत्र धन, २५००० तक व्यक्ति का फर्नीचर, कार, गहने आदि, वे किताबें जो बेचने के लिये न हों।

व्यय कर (Expenditure Tax)—यह एक ऐसा नया कर है जो अभी तक संसार के दूसरे देशों में लगा हुआ नहीं है। इस कर का उद्देश्य यह है कि व्यक्ति अपने धन को दिखावे के लिये खर्च न करे और उसको धन बचाने में प्रोत्साहन मिले। प्रारम्भ में यह कर उन व्यक्तियों तथा सामूहिक परिवारों पर लगाया जायगा जिन की आय, आय-कर के लिये ६०,००० रु० से कम नहीं है। यह कर कुछ खर्च से अधिक जो कि परिवार के साइज पर निर्भर होगा, हर प्रकार के खर्च पर लगाया जायगा। यदि व्यक्ति तथा उसकी पत्नी का खर्च २४००० रु० तक होगा तो उनको कोई कर न देना पड़ेगा। उसके पश्चात् प्रत्येक बच्चे के लिये ५००० रु० की छूट दी जावेगी। इस कर की दर स्लैब पद्धति पर आधारित होगी। ऊँचे-ऊँचे खर्चों पर कर की दर बढ़ती जायगी। यह कर १९५८--५९ से लागू किया गया।

उपयुक्त दोनों करों का उद्देश्य कर पद्धति में समानता लाना तथा कर से बचने वालों को हर प्रकार से पकड़ना है क्योंकि यदि वे आय-कर नहीं देते तो उस धन को या तो वे किसी व्यापार में लगायेंगे या उसको खर्च करेंगे। व्यापार में लगाने पर उनको पूंजी कर देना पड़ेगा तथा खर्च करने में उनको व्यय-कर देना पड़ेगा। इस प्रकार कर से बचने वाले कर से बचने का अधिक प्रयत्न न करेंगे।

(६) अफीम—अफीम की खेती करना, बनाना तथा बेचना यह राज्य का एकमात्र अधिकार (Monopoly) बहुत पुराने समय से रहा है। पहले हमारे देश से बहुत सी अफीम चीन को जाती थी। उस समय इस मद से बहुत सी आय प्राप्त होती थी। पर अब चीन को अफीम जानी बन्द हो गई है। अब अफीम से १९५६-५७ में केवल २२४ लाख रुपये वसूल हुए और १९५७-५८ में २५० लाख रुपये वसूल होने की आशा है।

(७) ब्याज—यह ब्याज केन्द्रीय सरकार उस ऋण पर प्राप्त करती है जो वह राज्य सरकारों तथा दूसरे देशों को देती है।

(८) नागरिक प्रशासन—यह आय केन्द्रीय 'सरकार राज्य' के लोगों को न्याय आदि देने के सम्बन्ध में प्राप्त करती है।

(९) मुद्रा और टकसाल—रिजर्व बैंक को नोट छापने तथा सरकार को धातु के सिक्के बनाने से जो लाभ होता है वह इस मद के अन्तर्गत आता है।

(१०) नागरिक निर्माण—यह आय सड़कों, इमारतों तथा केन्द्र द्वारा नियन्त्रित नहरों द्वारा प्राप्त होती है।

(११) डाक और तार—डाक और तार पर केन्द्रीय सरकार का एकाधिकार है और उससे प्राप्त आय उसी को मिलती है।

(१२) रेलें—रेलो पर भी केन्द्रीय सरकार का एकाधिकार है। अपने सब खर्च काट कर आय का कुछ भाग रेले जनरल रिवेन्यूज मे हस्तान्तरित करती हैं।

(१३) नमक—भारत के स्वतन्त्र होने के पूर्व हमारे देश मे नमक से लगभग ८ करोड रुपये की आय प्राप्त होती थी। अब नमक पर कोई कर नहीं है। कांग्रेस-सरकार ने सत्ता हाथ मे आते ही सब से पहले इस कर को हटाया, क्योंकि १९३१ में गांधी जी ने अपना आन्दोलन नमक का कानून तोडकर ही चलाया था। बात यह है कि नमक जीवन की प्रमुख आवश्यकता है और इसका भार सबसे अधिक गरीबो पर पडता है। इसी कारण इस कर को हटाया गया है। परन्तु अब बहुत से लोग आय प्राप्ति के हित मे इसको फिर से लगाने की बात का समर्थन करते हैं।

केन्द्रीय व्यय के मद—

(१) राजस्व से सीधी मांगें—केन्द्रीय सरकार को भिन्न भिन्न करो के वसूल करने मे जो खर्च करना पडता है वह इस मद मे आता है।

(२) सिंचाई—केन्द्रीय सरकार को बडी-बडी सिंचाई की योजनाओ जैसे दामोदर घाटी की योजना, हीरा कुड की योजना आदि, पर जो रुपया खर्च करना पडता है वह इस मद मे आता है।

(३) ऋण पर ब्याज—केन्द्रीय सरकार को बहुत से कामो के लिये देश तथा विदेशो से जो ऋण लेना पडता है वह उस ऋण पर जो ब्याज देती है वह इस मद मे आता है।

(४) नागरिक शासन—सरकार को बहुत से बडे-बडे अफसर शासन प्रबन्ध करने के लिये रखने पडते हैं, ससद के सदस्यो का वेतन तथा भत्ता देना पडता है। राजदूतो का खर्च उठाना पडता है। यह आजकल बहुत अधिक है। युद्ध के पहले इस मद पर ८ करोड रुपया खर्च किया जाता था। १९५३--५४ मे यह खर्च बढ कर ६८·५७ करोड हो गया है। १९५४--५५ मे यह खर्च ९३·९३ करोड रुपया हो गया तथा १९५५--५६ मे यह १०५·४१ करोड, तथा १९५६--५७ मे १२३·६४ करोड, १९५७--५८ मे १६८ करोड रु०, १९५८-५९ मे १९८ करोड तथा १९५९-६० मे २२३ करोड होने की आशा है।

इस खर्च की बाबत भारत में सदा ही असन्तोष रहा है। लोगों का कहना था कि आई० ए० एस० के लोगो को सरकार बडे वेतन देती है जो अनुचित है। अपनी सरकार के स्थापित होने पर आशा थी कि इस मद पर कम खर्च होने लगेगा। पर ऐसा नहीं हुआ। खच पहले से कई गुना हो गया है क्योंकि सरकार ने अफसरो का वेतन तो कम किया नही उल्टा बढा दिया है। साथ साथ उसने नये नये विभाग खोलकर नये-नये दूतावास स्थापित करके खर्च को बढा दिया है। यह अनुचित है। इस खर्च को कम करना आवश्यक है।

(५) मुद्रा और टकसाल—सरकार का सिक्का बनाने तथा रिजर्व बैंक का नोट बनाने में जो धन व्यय होता है वह इस मद मे आता है।

(६) नागरिक निर्माण कार्य—इसमे वह खर्च सम्मिलित हैं जो केन्द्रीय सरकार सडको, इमारतों आदि के ऊपर करती हैं।

(७) पेन्शन—इसमे नौकरी से रिटायर्ड होने वाले लोगो की पेन्शन सम्मिलित हैं।

(८) शरणार्थियों पर व्यय—पाकिस्तान बन जाने पर जो लोग भारतवर्ष मे आये उन पर केन्द्रीय सरकार को बहुत सा धन खर्च करना पडा। यद्यपि देश का विभाजन हुये लगभग १२ वर्ष हो गये हैं तो भी १९५६-५७ मे इस मद पर २१·८६ करोड रुपये, १९५७-५८ मे १२·५० करोड रुपये, १९५८-५९ मे लगभग २५ करोड रु० तथा १९५९-६० मे लगभग २० करोड रु० खर्च होने का अनुमान है।

(९) खाद्य पदार्थों पर व्यय—इस देश मे खाद्य पदार्थों की कमी हो जाने पर सरकार को बहुत सा अन्न विदेशो से ऊँचे मूल्य पर खरीदना पडा। पर इसलिये कि उससे जनता का जीवन-स्तर महँगा न हो जाये सरकार ने उसको नीचे भाव पर बेचा। इस प्रकार जो घाटा हुआ वह सरकार ने स्वय ही उठाया। सरकार ने इस खर्च को कई वर्ष तक किया पर अब इसके लिये कोई प्रबन्ध नही किया जाता।

(१०) राज्यों की सहायता—सरकार समय-समय पर राज्यो को बहुत से कामो के लिये जैसे कुएँ बनवाने के लिये अथवा अकाल पीडितो की सहायता करने के लिये बहुत सा धन सहायता के रूप मे देती रही है, वही इस मद मे आता है।

(११) रक्षा व्यय—रक्षा के ऊपर भी हमारे देश मे बहुत अधिक धन खर्च होता रहता है। इस खर्च के ऊपर भी भारतवासियों मे सदा ही असन्तोष रहा है। युद्ध से पहले यह व्यय ४६ करोड रुपये के लगभग था पर युद्ध मे यह कई सौ करोड रुपए हो गया। युद्ध समाप्त होने पर यह आशा की जाती थी कि इस मद पर कम व्यय होने लगेगा। पर अब भी सरकार इसके लिये एक बडी सेना रखती है क्योकि उसे विदेशी हमले का बहुत भय रहता है। १९५६-५७ मे इस मद पर २०२·९५ करोड रुपए खर्च हुए, १९५७-५८ मे इस मद पर २५६·७२ करोड रुपये, १९५८-५९ में २६६·८७ करोड रु० तथा १९५९-६० मे २४२·६८ करोड रुपये खर्च होने की आशा है।

यद्यपि स्वतन्त्रता से पूर्व हम इस व्यय के विरुद्ध बहुत सी बातें कहते थे परन्तु आजकल की परिस्थिति मे जबकि हमको अपने लिये भूमि, जल तथा वायु सेना का प्रबन्ध करना है, युद्ध का सामान बनाना है, नौजवानों को सैनिक शिक्षा देनी है, पाकिस्तान जैसे शत्रु का सामना करना है, यह खर्च बढना स्वाभाविक ही है।

राज्य सरकारो की आय और व्यय के भेद

राज्य सरकारो के जिम्मे वे मद हैं जिन पर सारे राष्ट्र का जीवन निर्भर रहता है, जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, सिंचाई आदि। परन्तु इनके पास जो आय के मद हैं इनसे कम आमदनी होती है और जो होती भी है वह आवश्यकता के साथ नही बढती। इस कारण राज्य सरकारो को अपनी आय बढाने के लिये नये कर

उत्तर प्रदेश सरकार का बजट
(लाख रु० में)

आय के मद	बजट अनुमान १९५८–५९	संशोधित बजट १९५८–५९	बजट अनुमान १९५९–६०	व्यय के मद	बजट अनुमान १९५८–५९	संशोधित बजट १९५८–५९	बजट १९५९–६०
यूनियन उत्पादन कर	११४५·२३	१२२१·६९	१२१४·०४	आय पर सीधी माँगें	१११८·३२	१०९८·४०	१२३६·७३
क.पोरेशन कर के अतिरिक्त अन्य आयो पर कर	१३२७·२३	१३०७·०९	१३६६·२२	सिचाई	५०५·४५	४११·४६	५४५·१६
				ऋण सेवायें	८७४·५९	८२३·३७	१३२९·९३
सम्पत्ति शुल्क	३६·६२	३६·६२	३६·६२	नागरिक प्रशासन	५९८५·०२	५९१८·१९	६२४७·७६
रेलों के किराये पर कर	१८४·७९	२०४·३०	२०४·३०	नागरिक निर्माण कार्य	५७९·४८	४११·९०	५४०·९७
मालगुजारी	२११२·५९	१८५१·४९	२११७·०३	बिजली	३०८·८९	३२०·०९	१०१·७५
राज्य आबकारी कर	५०४·४०	५३१·२३	५४१·७३	विविध	९५३·२४	१००७·८३	१२६०·१८
स्टाम्प	२९०·००	३१५·००	३५५·००	असाधारण मद	९५१·५५	८७७·३७	८८४·८२
जंगल	४८२·३३	५१५·४५	५२१·२१				

रजिस्ट्री	५३·१०	७१·०५	६५·३९			
गाड़ियों पर कर	१३८·००	१७०·००	२०६·००			
बिक्री कर	—	—	६६५·००			
आय कर व शुल्क	११०३·१९	१५२६·८४	८०७·५३			
सिंचाई (वास्तविक सहित)	२४१·५०	२३९·७२	२७४·७३			
ऋण सेवायें	७३·१६	८५·०२	३३३·८१			
नागरिक प्रशासन	१११९·०१	११६४·८४	१८९९·४८			
नागरिक निर्माण कार्य	२५६·७३	१६७·३९	२०३·३२			
बिजली	१०७·८४	८२·५३	—			
विविध राज्यों को केन्द्र का अनुदान सामुदायिक विकास योजना आदि	३७० २२ ००·२७ ३९१·९७	३१७·११ ००·१३ २४४·५९	३०१·३५ ००·२३ ३१८·५६			
असाधारण मद	२८२·८४	३७९·३४	५२९·२३			
योग	१०८३३·९२	११३१·५४	११९६०·७७	११२७६·२३	११०६८·३३	१२१४७·३४

लगाने पडते हैं। पर नये करो से कम और अनिश्चित आय होने के कारण उनको सदा ही केन्द्र की सहायता पर निर्भर रहना पडता है और यदि सहायता नही मिलती तो बडी कठिनाई का सामना करना पडता है। प्रायः सब राज्य सरकारो के आय व्यय के मद एक से हैं पर कुछ राज्यो मे दूसरो से एक दो कम या अधिक होते हैं। यह बात बताने के पश्चात् हम उत्तर प्रदेश के आय-व्यय के मदो की बात लिखेंगे।

आय के मद—(१) यूनियन उत्पादन कर, (२) कार्पोरेशन कर के अतिरिक्त अन्य आय कर, (३) सम्पत्ति शुल्क, (४) रेलो के किराये पर कर, (५) मालगुजारी, (६) आबकारी, (७) स्टाम्प, (८) जगल, (९) रजिस्ट्री, (१०) मोटर कर, (११) मनोरजन, बिक्री तथा आय कर, (१२) सिंचाई, (१३) सूद, (१४) नागरिक निर्माण कार्य, (१५) नागरिक शासन, इनमे न्याय, जेल पुलिस, शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, कृषि और सहकारिता, उद्योग धन्धे आदि सम्मिलित हैं, (१६) विविध, (१७) केन्द्रीय सरकार से सहायता, (१८) स्टेशनरी और छपाई, असाधारण प्राप्ति।

व्यय की मदें—(१) कर प्राप्ति का व्यय, (२) सिंचाई, (३) सूद, (४) नागरिक शासन, न्याय, जेल, पुलिस, शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, कृषि, सहकारिता, उद्योग-धन्धे आदि सम्मिलित हैं, (५) नागरिक निर्माण कार्य, (६) बिजली की योजनायें (७) विविध अकाल निर्माण पेन्शन, स्टेशनरी, प्रिंटिंग, (८) राशनिंग व नियन्त्रण योजनायें, असाधारण मद।

आय के मदों का विवरण—

मालगुजारी— यह राज्य सरकारो की आय का एक मुख्य मद है। १९४०-४१ मे उस मद से कुल आय का लगभग ५५ प्रतिशत प्राप्त हुआ। परन्तु घटते-घटते आजकल यह कुल का लगभग २० प्रतिशत रह गया है। १९३९—४० मे इस मद से ६.०५ करोड रुपया प्राप्त हुआ और १९५५—५६ मे लगभग २१ करोड। इस मद की आय बन्दोबस्त के समय ही जो ३०—४० वर्ष मे बदला जाता है, बदली जा सकती है।

आय कर मे एक अच्छी कर पद्धति के कई गुण पाये जाते हैं। जैसे, यह निश्चित है क्योकि बन्दोबस्त ३०-४० वर्ष मे एक बार बदला जाता है। यह सुविधा-जनक है। क्योकि यह फसल कटने के पीछे वसूल की जाती है। इसके वसूल करने का खर्च भी अधिक नही है। परन्तु इसका सबसे बडा दोष यह है कि यह बेलोच है। इसकी आय ३०—४० वर्ष से पहले बढाई नही जा सकती। इसके अतिरिक्त इस कर के वसूल करते समय यह ध्यान नही रक्खा जाता कि भूमि पर कौनसी फसल उत्पन्न की गई है तथा किसान की आर्थिक स्थिति क्या है।

कृषि आय कर—उत्तर प्रदेश मे कृषि आय कर १९४८—४९ से लगाया गया है। यह कर ३००० रु० की आय तक नही लगाया जाता। इसके ऊपर यह स्लैब पद्धति पर लगाया जाता है। यह कर उन्ही किसानो पर लगाया जाता है जिनकी भूमि ५० एकड से अधिक है। इस स्रोत से अभी तक कोई विशेष आय नही होती।

आबकारी—राज्य सरकारों का अफीम, शराब तथा अन्य मादक चीजो के उत्पादन पर एकाधिकार है। उत्पादको से कर और बेचने वालो से लाइसेन्स फीस ली जाती है। परन्तु जब से कांग्रेस सरकार आई है तब से उन्होंने मद्य-निषेध करना आरम्भ कर दिया है। इसी कारण इस मद की आमदनी घट रही है। बम्बई तथा मद्रास मे जहां पूरे तौर पर मद्य-निषेध हो गया है इस मद्य की आय प्राय समाप्त हो गई है।

मद्य निषेध की नीति (Policy of Prohibition)—आजकल बहुत से राज्यो ने मद्य निषेध की नीति को अपनाया है। परन्तु इस नीति की बहुत से आदमी बडी आलोचना करते हैं। उनका कहना है कि इसके कारण राज्यो की आय घट जायेगी परन्तु मद्य पीने वालो को कोई लाभ न होगा क्योकि वे छिपे-छिपे पीते रहेगे। उनको रोकने के लिये सरकार को पुलिस रखनी पडेगी जिसके कारण राज्यो का खर्च और बढ जायगा।

परन्तु इस नीति से बहुत लाभ हुआ है तथा आगे होने की आशा है। अखिल भारतीय कांग्रेस द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'स्वतन्त्रता का दसवां वर्ष' नामक पुस्तक म यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि आलोचक चाहे जो कुछ भी कहे परन्तु यह बात अवश्य है कि पीने वाले भी अब पहले से कम पीते है, इससे गरीब आदमियो को विशेषत. लाभ हुआ है क्योकि वे अब कम शराब पीते हैं। इनसे इन परिवारो मे पहले से अधिक प्रसन्नता पाई जाती है तथा बच्चो को शराब पीने की आदत कम पडेगी। शराब के कम पीने के कारण विलासिता भी अवश्य कम हो जायेगी। इस प्रकार इस समय चाहे राज्यों को थोडी हानि हो जाय परन्तु आगे चल कर सारे देश को इससे लाभ होगा।

स्टाम्प, जगल, मोटर कर, तथा रजिस्ट्री—सरकार को इन सब मदो से भी बहुत सी आय प्राप्त होती है। स्टाम्प मे रसीदो पर कर लगाये गये टिकट तथा कोर्ट फीस सम्मिलित है। जगलों से लकडी बेचकर तथा पशुओ को चराने पर आय प्राप्त होती है। मोटर कर में, मोटर चलाने के लाइसेन्स की फीस होती है। सिंचाई मे नहरो तथा ट्यूब वैल की आय आती है। रजिस्ट्री में मकानो तथा जमीनो को बेचते समय जो रजिस्ट्री करानी पडती है उसकी आय है।

नागरिक शासन—इसम न्यायालयो, जेल, पुलिस, शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, कृषि, सहकारिता तथा उद्योग धन्धो से जो आय प्राप्त होती है वह सम्मिलित है।

मनोरञ्जन कर—यह सिनेमा, थ्यटर, घुडदौड आदि के टिकटो पर लगता है।

बिक्री कर—यह युद्ध के पश्चात् लगाया गया है। आजकल यह राज्य सरकारो की आय का एक मुख्य स्रोत है। यह कर विलासिता तथा आराम देने वाली वस्तुओ पर लगाया जाता है। जीवन सम्बन्धी आवश्यकताओं पर यह प्राय. नहीं लगाया जाता है। आजकल कपडा आदि चीजो पर केन्द्र बिक्री पर लगाकर राज्यो मे बांट देता है।

बिक्री कर के दोष

बिक्री कर मे निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं —

(१) यह एक प्रतिगामी कर है और इसका भार छोटी छोटी आय वाले व्यक्तियों पर पडता है।

(२) इस कर में लोगों की कर देने की योग्यता का विचार नहीं किया जाता।

(३) इसमे अर्जित व अनार्जित आय मे कोई भेद नही किया जाता।

(४) यह कर सेवाओ तथा लोकोपयोगी सेवाओं पर नही लगाया जाता। यदि यह उन पर भी लगाया जाता तो उसका अधिक भार अमीर लोगो पर पडता क्योंकि इन चीजो का उपभोग अधिकतर वही करते हैं। परन्तु कर प्रणाली जाँच आयोग ने इसका खडन प्रशासन की कठिनाइयो के कारण किया है।

(५) बहुत सी दशाओ मे दोहरा कर लग सकता है। जैसे ईधन पर लगाया गया कर एक बार तो ईधन खरीदते समय देना पडता है और दूसरे उस समय देना पडता है जब कि कोई वह वस्तु जिसके तैयार करने मे वह ईधन काम मे आता है। यदि समस्त बिक्री पर कर लगाया जाता है तो एक ही वस्तु पर कई बार कर लग जाता है।

(६) इस कर की व्यवस्था करनी बडी कठिन है क्योंकि यह कर खरीदार से वसूल किया जाता है। दूकानदार को हर खरीदार का हिसाब रखना पडता है।

(७) इस कर को एकत्र करने का खर्च बहुत अधिक होता है।

(८) इस कर से बचने में दूकानदार बहुधा सफल हो जाते हैं।

(९) कभी-कभी इसका बडा बुरा प्रभाव पडता है। जैसे यदि यह कर मोटर के तेल पर लगाया जाता है तो इससे मोटर यातायात में बडी बाधा आती है।

इन सब दोषो के होते हुये भी यह कर कई बातो के कारण लगाया जाता है.—

(१) इस कर से पर्याप्त आय प्राप्त होती है। (२) इसकी व्यवस्था करने मे सरकार को कोई विशेष कठिनाई नही होती। (३) इस कर का भार खरीदार को अधिक महसूस नही होता क्योंकि वह कर को मूल्य का एक अग समझता है। (४) सरकार के बढ़ते हुये खर्च के कारण बहुत से देशो में इसको लगाया जाता है।

आय कर—यह कर केन्द्रीय सरकार द्वारा लगाया जाता है। उसका कुछ भाग केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारो को वित्तीय आयोग के निर्णय के अनुसार देती है।

व्यय के मद

कर प्राप्ति व्यय—यह व्यय भिन्न-भिन्न करों को प्राप्त करने के लिये करना पडता है।

सिंचाई—सरकार को नहरे, कुएँ, तालाब आदि बनवाने मे जो खर्च करना पडता है वह इस मद मे आता है।

सूद—यह सूद राज्य सरकारो की जनता तथा केन्द्रीय सरकार से लिये हुये ऋण पर देना पडता है।

नागरिक प्रशासन—इस मद मे पुलिस, जेल, न्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि सहकारिता आदि का खर्च आता है। राज्य सरकारों को देश मे शान्ति रखने के लिए पुलिस तथा जेलो का प्रबन्ध करना पड़ता है। लोगो के झगडो का फैसला करने के लिए न्यायालय खोलने पडते हैं। इन मदो पर सरकार को बहुत धन व्यय करना पड़ता है। इनके साथ इस मद के अन्तर्गत गवर्नर, मन्त्रियो तथा धारा सभा का भी खर्च आता है।

इस मद के अन्तर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य चिकित्सा, कृषि सहकारिता, आदि भी आते हैं। इन सब के ऊपर राष्ट्र के लोगों का जीवन निर्भर होता है। अंग्रजो के शासन काल मे इस मद पर बहुत कम व्यय होता था। परन्तु जब से अपनी सरकार बनी है तब से वह इन मदो पर अधिकाधिक खर्च करती जा रही है। पर अभी तक इन मदो पर व्यय आवश्यकता से बहुत कम है। इसका कारण यह है कि राज्य सरकारो के पास जो आय के मद हैं उनसे आय आवश्यकता के अनुसार नही बढ़ती। इसी कारण इस बात की आवश्यकता है कि वह नये नये आमदनी के मद खोजें या केन्द्रीय सरकार उनको ऐसे आमदनी के मद सौंपे जो आवश्यक्तानुसार बढ सकें।

पञ्चवर्षीय योजना की अर्थ-व्यवस्था

प्रथम पचवर्षीय योजना पर कुल २३३१ करोड रु० खर्च होने की आशा थी। परन्तु वास्तव मे इस पर १९४७ करोड रुपये खर्च हो सके। प्रारम्भ के कुछ वर्षों मे खर्च की गति बडी धीमी थी परन्तु धीरे-धीरे इसको बढाया गया। जैसे १९५१-५२ मे यह खर्च २५९ करोड था तथा १९५२-५३, १९५३-५४, १९५४-५५ तथा १९५५-५६ मे यह खर्च क्रमशः २७३ करोड रु०, ३४० करोड रु०, ४७५ करोड रु० तथा ६०० करोड रु० था। इस सब धन को विदेशी सहायता, सार्वजनिक ऋण, अल्प आय वालो को बचत करने का प्रोत्साहन देकर तथा हीनार्थ प्रबन्धन (Deficit Financing) से पूरा किया गया। इसमे से २३५ करोड रुपये अल्प बचत से, २०४ करोड रु० विदेशी सहायता से, ४०० करोड रु० हीनार्थ प्रबन्धन के रूप मे, १४० रु० करोड पौंड पावने मे से और शेष करो तथा अन्य ढगो से प्राप्त किया गया।

दूसरी योजना मे सार्वजनिक क्षेत्र मे ४८०० करोड रु० खर्च होने की आशा है। इसमे से २४०० करोड रु० तो करो, ऋणो तथा अन्य आयो से प्राप्त किये जायेंगे। ८०० करोड रु० की सहायता विदेशों से मिलने की आशा की गई है परन्तु अभी हाल ही की वित्तीय मन्त्री की विदेश यात्रा से यह साफ पता चलता है कि इतनी विदेशी सहायता प्राप्त न हो सकेगी। इस कारण आजकल यह प्रयत्न किया जा रहा है कि विदेशी विनिमय की अधिकाधिक बचत की जाय। २०० करोड़ रु०

पौंड पावने से लिए जायेगे और १२०० करोड़ रु० के नोट छाप कर अर्थात् हीनार्थ प्रबन्धन से प्राप्त किये जायगे। फिर भी ४०० करोड़ रु० की कमी रह जायगी जो कि अन्य राष्ट्रीय साधनों से पूरी की जायगी।

Q. 97. What are the existing financial relations between the States and the Central Government in India ? Are State revenues adequate to meet their needs ? Suggest some remidies

प्रश्न ९७—भारत मे वर्तमान केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों मे किस प्रकार के आर्थिक सम्बन्ध हैं ? क्या राज्यों की आय आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए पर्याप्त है ? इसको सुधारने के उपाय बताइये।

उत्तर—भारतवर्ष मे १९१९ के मॉण्टफोर्ड सुधारो से पहले प्रान्तो को अपनी आर्थिक आवश्यकतायें पूरी करने के लिये केन्द्र के ऊपर निर्भर रहना पड़ता था। प्रान्तीय सरकारें कोई भी योजना उस समय तक कार्यान्वित नही कर सकती थी जब तक कि वह केन्द्रीय सरकार से मजूर न हो जाय। १९१९ के सुधारो के पश्चात् प्रान्तो को आर्थिक दृष्टि से कुछ स्वतन्त्रता मिली। उनको आय तथा व्यय के कुछ विषय मिल गये। परन्तु आय के साधनो मे खेती की मालगुजारी, वन, स्टाम्प आदि सम्मिलित थे जिनसे आय अस्थायी सी रहती थी। इसके विपरीत व्यय के विषयों मे खेती, उद्योग धन्धे, शिक्षा, सड़कें आदि सम्मिलित थे जिन पर बहुत धन व्यय करने की आवश्यकता पड़ती थी। इस कारण प्रान्तीय सरकारे कोई विशेष कार्य न कर सकीं।

१९३५ के भारत सरकार एक्ट के अनुसार प्रान्तो को स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई। अब वे जनता की चुनी हुई धारा सभाओं द्वारा कर लगा सकते थे तथा अपनी इच्छानुसार उनको खच कर सकते थे। इस एक्ट के अनुसार केन्द्र तथा प्रान्तों मे आय के साधन साफ तौर पर बँट गये। कुछ विषय तो ऐसे थे जो केन्द्र को मिल गये। उनमे आयात निर्यात कर, सिक्के बनाने का लाभ, नमक आदि सम्मिलित थे। कुछ मद प्रान्तो को दे दिये गये। उनमे मालगुजारी की आय पर कर, मादक वस्तुओं पर उत्पत्ति कर, वन, बिक्री कर, मनोरजन कर आदि सम्मिलित थे। आय-कर प्रान्तो तथा केन्द्र दोनो मे बँटता था।

इतना करने के साथ साथ यह बात भी विचारी गई कि इस प्रकार के प्रबन्ध के कारण कुछ प्रान्तो को भारी घाटे का सामना करना पड़ेगा। इस कारण सर ओटो नीमियर को इस बात की खोज करने के लिये नियुक्त किया गया कि वह कोई ऐसा ढग बतायें जिससे प्रान्तीय सरकारों को कार्य करने मे कठिनाई न उठानी पड़े। ओटो नीमियर ने अग्रलिखित सुझाव दिये—

(१) बगाल, बिहार, आसाम आदि को जो केन्द्रीय सरकार का १६३६ के पहले का ऋण देना था उसको माफ कर दिया जाये।

(२) जूट उगाने वाले प्रान्तो को जूट कर का ६२½ प्रतिशत दिया जावे।

(३) प्रान्तो को उपर्युक्त सहायता के अतिरिक्त कुछ सहायता रुपये मे भी दी जाय जिससे कि बजट का घाटा पूरा हो सके। यह सहायता इस प्रकार थी—बगाल को ७५ लाख रुपए, बिहार को २५ लाख रुपए, उडीसा को ५० लाख रुपए, मध्य प्रदेश को १५ लाख रुपए, आसाम को ४५ लाख रुपए तथा उत्तर प्रदेश को २५ लाख रुपए।

(४) इस प्रकार की अस्थाई सहायता देने के अतिरिक्त प्रान्तीय सरकारो को स्थाई सहायता देने का सुझाव भी दिया गया। यह सहायता आय-कर (Income Tax) का ५० प्रतिशत होनी चाहिए। ओटो नीमियर ने भिन्न प्रान्तो मे इस धन को बाँटने का निम्नलिखित ढङ्ग बताया—मद्रास को १५ प्रतिशत, बम्बई को २० प्रतिशत, बगाल को २० प्रतिशत, उत्तर प्रदेश को १५ प्रतिशत, सीमा प्रान्त को १ प्रतिशत तथा सिन्ध मे से प्रत्येक को २ प्रतिशत।

केन्द्रीय सरकार को आर्थिक सकट से बचने के लिए यह सुझाव भी दिया गया कि केन्द्र को प्रान्तीय सरकारो के हिस्से को उस समय तक उनको नहीं देना चाहिए जब तक कि केन्द्र की आय कर का भाग तथा केन्द्र को रेलों से होने वाली आमदनी दोनो मिलाकर १३ करोड रुपए से अधिक न हो जायें। यह कार्य केन्द्र को ५ वर्ष तक करना चाहिए। अगले ५ वर्ष मे केन्द्र को थोडा-थोडा करके प्रान्तो का भाग लौटाना चाहिए।

प्रान्तो को स्वशासन देने के पूर्व यह आशा की जाती थी कि प्रान्तो को प्रारम्भ मे आय-कर मे से कुछ भी न मिलेगा। पर रेलो की आय बढ जाने के कारण प्रान्तों को आय-कर का अपना भाग पहले ही वर्ष मे मिल गया। इधर कुछ ही समय पश्चात् युद्ध छिड गया। इस कारण केन्द्रीय सरकार को कानून मे बदल करनी पडी जिससे कि वह १६३६-४०, १६४०-४१ तथा १६४१-४२ मे प्रान्तीय सरकारो के आय-कर के भाग मे से प्रतिवर्ष ४½ करोड रुपए रख सके। यही बात अगले तीन वर्षों मे भी चली। १६४५-४६ मे केन्द्र ने ३¾ करोड तथा १६४७-४८ मे ३ करोड रुपए रक्खे।

देश के विभाजन के कारण सिन्ध तथा उत्तरी-पश्चिमी सीमा प्रान्त हमारे देश से निकल गए तथा पजाब व बगाल का विभाजन हो गया। इस कारण प्रान्तो मे आय-कर बाँटने की व्यवस्था मे परिवर्तन करना आवश्यक हो गया। नई योजना १६४८ मे घोषित की गई और इससे १६४७-४८ तथा १६४८-४६ मे काम लिया गया। इस योजना के अनुसार आय-कर निम्नलिखित ढग से बाँटा गया—

बम्बई २१ प्रतिशत, पश्चिमी बगाल १२ प्रतिशत, मद्रास १८ प्रतिशत, सयुक्त प्रान्त १६ प्रतिशत, बिहार १३ प्रतिशत, पूर्वी पजाब ५ प्रतिशत, मध्य प्रदेश तथा बरार ६ प्रतिशत, आसाम तथा उडीसा मे से प्रत्येक को ३ प्रतिशत।

इस योजना के अनुसार जूट उगाने वाले प्रान्तो को जूट निर्यात कर का भाग ६२½ प्रतिशत से घटा कर २० प्रतिशत किया गया। केवल आसाम व उडीसा को आर्थिक सहायता प्रदान की गई।

१६४८ की योजना से प्रान्तों मे बडा असन्तोष था। इस कारण श्री देशमुख को इस पर विचार करने के लिए नियुक्त किया गया। देशमुख ने जो निर्णय दिया उसको १६५०-५१ तथा ५१-५२ मे लागू किया गया। इस निर्णय के अनुसार राज्यो का आय-कर का भाग इस प्रकार बदल दिया गया—

बम्बई २१ प्रतिशत, उत्तर प्रदेश १८ प्रतिशत, मद्रास १७·५ प्रतिशत, पश्चिमी बगाल १३·५ प्रतिशत, बिहार १२ ५ प्रतिशत, मध्य प्रदेश ६ प्रतिशत, पूर्वी पजाब ५ ५ प्रतिशत, आसाम व उडीसा मे से प्रत्येक ३ प्रतिशत।

जूट उगाने वाले प्रान्तो को कुछ समय तक आर्थिक सहायता देने का भी प्रबन्ध किया गया। यह पश्चिमी बगाल के लिए ११५ लाख रुपए, आसाम के लिए ५ लाख रुपए थी।

१६५१ मे प्रथम वित्त आयोग नियुक्त किया गया। इस आयोग के अनुसार राज्यो को आय-कर का ५० के स्थान पर ५५ प्रतिशत भाग मिलने लगा। इस धन का बँटवारा राज्यो मे जनसख्या तथा आय के स्रोत के अनुसार किया गया—जनसख्या के अनुसार ⅘ तथा आय के स्रोत के अनुसार ⅕। इसके अतिरिक्त राज्यो को तम्बाकू, दियासलाई, वनस्पति घी द्वारा प्राप्त किये गये उत्पादन कर का ४० प्रतिशत जनसख्या के हिसाब से बांटा गया। जूट उगाने वाले राज्यो को जूट निर्यात कर मे से निम्नलिखित ढग से सहायता दी गई—

पश्चिमी बगाल १५० लाख रुपए, आसाम ७५ लाख रुपए, बिहार ७५ लाख रुपए, उडीसा १५ लाख रुपए।

इसके अतिरिक्त कुछ पिछडे हुए राज्यो को शिक्षा आदि का प्रसार करने के लिए सहायक अनुदान दिए गए।

आय-कर का बँटवारा निम्नलिखित ढग से किया गया—

बम्बई १७ ५ प्रतिशत, उत्तर प्रदेश १५ ७५ प्रतिशत, मद्रास १५ २५ प्रतिशत, पश्चिमी बगाल ११ २५ प्रतिशत, बिहार ६·७५ प्रतिशत, मध्य प्रदेश ५·२५ प्रतिशत, हैदराबाद ४ ५० प्रतिशत, उडीसा ३·५ प्रतिशत, राजस्थान ३ ५ प्रतिशत, पजाब ३·२५ प्रतिशत, ट्रावनकोर कोचीन २·५ प्रतिशत, आसाम २ ५ प्रतिशत, मैसूर २·२५ प्रतिशत, मध्य भारत १·७५ प्रतिशत, सौराष्ट्र १ प्रतिशत, पेप्सू ०·७५ प्रतिशत।

इस आयोग की सिफारिशो की निम्नलिखित आलोचनायें की गई हैं—

(१) आय-कर को आय के स्रोत के अनुसार बाँटना चाहिए।

(२) उत्पादन कर को उपयोग के अनुसार न बांट कर आय के स्रोत के अनुसार बांटना चाहिये।

(३) सहायक अनुदानो के कारण राज्यो को केन्द्र पर निर्भर रहना पड़ेगा और यह बात सघानीय सिद्धान्त के विरुद्ध है।

(४) वास्तविक सघीय शासन मे आय के ऐसे मद जिनका केन्द्र तथा राज्यो मे बँटवारा होता है कम से कम होने चाहिये परन्तु उनको बढा दिया गया है।

नवम्बर १६५७ ई० मे द्वितीय वित्त आयोग की रिपोर्ट प्राप्त हुई है। यह रिपोर्ट सरकार ने मान ली है और उस पर शीघ्र ही कार्य किया जायगा।

इस आयोग ने सिफारिश की है कि आय-कर का ६० प्रतिशत राज्यों मे बांटा जाय। राज्यो मे बँटवारे का आधार जनसख्या तथा कर के एकत्र करने का स्थान होगा। कुल बांटे जाने वाले कर का ६० प्रतिशत जनसख्या के आधार पर बांटा जायगा तथा शेष १० प्रतिशत कर के एकत्र करने के आधार पर।

इसके अतिरिक्त राज्यो को यूनियन उत्पादन कर मे से भी कुछ भाग दिया जायगा। प्रथम वित्तीय आयोग ने दियासलाई, वनस्पति घी, तम्बाकू से प्राप्त होने वाली वास्तविक आय का ४० प्रतिशत राज्यो मे जनसख्या के आधार पर बांटने की सिफारिश की थी। परन्तु द्वितीय आयोग ने उपर्युक्त तीन चीजो की वास्तविक आय के अतिरिक्त कहवे, चाय, चीनी, कागज, वनस्पति गैर-जरूरी तेल से प्राप्त होने वाली वास्तविक आय को भी बांटने की सिफारिश की है। परन्तु इन सब चीजो से प्राप्त होने वाली आय का केवल २५ प्रतिशत जनसख्या के आधार पर बांटने की सिफारिश की गई है।

सहायक अनुदान के विषय मे आयोग ने सिफारिश की है कि यह पश्चिमी बगाल, आसाम, बिहार तथा उडीसा मे उतनी ही मात्रा मे दिये जायें जितने कि वे प्रथम वित्तीय आयोग की सिफारिश के अनुसार दिए जाते थे। परन्तु अभी हाल ही में बिहार का कुछ भाग बगाल को मिल जाने के कारण बिहार के सहायक अनुदान को २'६६ लाख घटाकर उतने ही अधिक सहायक अनुदान को पश्चिमी बगाल को दिया जाय। ये अनुदान १६६० ई० तक दिये जायेंगे।

इनके अतिरिक्त निक्षेपण (Devolution) की योजना के अनुसार प्रथम वित्तीय आयोग ने कुछ निश्चित सहायता राज्यो को देने की सिफारिश की थी। यह सिफारिश सरकार ने मान ली थी। इसके अतिरिक्त यह भी सिफारिश की गई थी कि बिहार, हैदराबाद, मध्य भारत, मध्य प्रदेश, उडीसा, पेप्सू, पजाब तथा राजस्थान में प्रारम्भिक शिक्षा के प्रसार के लिये १६५६-५७ तक ६ करोड रु० की सहायता दी जाय। द्वितीय आयोग ने इस प्रकार की कोई सिफारिश नहीं की है। परन्तु इसने १४ राज्यों में से ११ राज्यो को पर्याप्त सहायता देने की सिफारिश की है।

आयोग की इन तीनो सिफारिशो को हम एक तालिका के रूप मे इस प्रकार रख सकते हैं।

राज्यो का नाम	आय कर का भाग ६ प्रतिशत	यूनियन उत्पादन कर का भाग २५ प्रतिशत	विधान की धारा २७३ के अन्तर्गत सहायक अनुदान (लाख रुपये)
आन्ध्र प्रदेश	८·१२	६ ३८	—
आसाम	२ ४४	३ ४६	७५·००
बिहार	६ ६४	१० ५७	७२ ३१
बम्बई	१५ ९७	१२·१७	—
केरल	३ ६४	३ ८४	—
मध्य प्रदेश	६ ७२	७ ४६	—
मद्रास	८ ४०	७ ५६	—
मैसूर	५ १४	६ ५२	—
उडीसा	३·७३	४ ४६	१५ ००
पजाब	४·२४	४ ५६	—
राजस्थान	४ ०६	४·७१	—
उत्तर प्रदेश	१६·३६	१५·६४	—
पश्चिमी बगाल	१०·०८	७ ५६	१५२ ६६
जम्मू काश्मीर	१ १३	१ ७५	—

सम्पत्ति कर (Estate Duty) के विषय मे आयोग ने सिफारिश की है कि ३१ मार्च १९५७ तक उसी योजना से काम लिया जाय जो कि पहले से चल रही है। उसके पश्चात् कुल कर मे से १ प्रतिशत केन्द्र के लिये बचाकर शेष को राज्यो मे बाँटा जाय। बाँटते समय कुल आय को चल व अचल सम्पति की आय अलग-अलग करनी चाहिये। इसमे से अचल सम्पत्ति की आय उसकी स्थिति के आधार पर बाँटी जाय तथा चल सम्पत्ति की आय जनसख्या के आधार पर बाँटी जाय।

रेल भाडे पर कर की कुल वास्तविक आय मे से ¾ प्रतिशत केन्द्र के लिए बचा कर शेष को प्रत्येक राज्य मे स्थित रेल की लम्बाई के आधार पर बाँटा जाय।

आयोग ने इस बात की भी जाँच की कि राज्यो को बिक्री कर से, चाहे वह किसी भी रूप में लगाया जाय, मिल के बने कपडे चीनी तथा तम्बाकू से ३२ करोड रुपए की आय प्राप्त होती है। क्योंकि अब केन्द्र इन सब चीजो पर से बिक्री कर समाप्त करके उत्पादन कर लगाने वाला है इस कारण आयोग ने सिफारिश की है कि पहले राज्यो को इन तीनो चीजो की वास्तविक आय मे से वह धन दिया जाय जिसको उनको बिक्री-कर समाप्त करने से हानि होगी। यह धन देने के पश्चात् जो

इन तीनो सिफारियो को निम्नलिखित तालिका में दिखाया गया है'—

राज्यों का नाम	विधान की धारा २७५ (१) के अनुसार दिये गये सहायक अनुदान (लाख रुपए मे)	सम्पत्ति कर का भाग ९९%**	रेल भाड़े पर कर का भाग ९९.७५%
आन्ध्र प्रदेश	४००	८.७६	८.८६
आसाम	४०५*	२.५३	२.७१
बिहार	३८०*	१०.८६	६.३६
बम्बई	—	१३.५२	१६.२८
केरल	१७५	३.७६	१.८१
मध्य प्रदेश	३००	७.३०	८.३१
मद्रास	—	८.४०	६.४६
मैसूर	६००	५.४३	४.४५
उड़ीसा	३३५*	४.१०	१.७८
पजाब	२२५	४.५२	८.११
राजस्थान	२५०	४.४७	६.७७
उत्तर प्रदेश	—	१७.७१	१८.७६
पश्चिमी बगाल	३८५*	७.३७	६.३१
जम्मू काश्मीर	३००	१.२४	—

* १९६०—६१ तथा १९६१—६२ मे आसाम को ४५० लाख, बिहार को ४२५ लाख, उड़ीसा को ३५० लाख तथा पश्चिमी बगाल को ४७५ लाख रुपये मिलेगा।

** अचल सम्पत्ति के अतिरिक्त दूसरी सम्पत्तियो के लिए यह लागू होता है।

कुछ धन बचे उसको अशत जनसंख्या के आधार पर और अशत इन चीजों के उपभोग के आधार पर बाँटा जाय। इन दोनो बातो को ध्यान मे रखकर आयोग ने बचे हुए धन को बांटने का ढग भी बताया है। आयोग ने सिफारिश की है कि इन तीनो चीजों से प्राप्त आय में से १ प्रतिशत केन्द्र रखले। १$\frac{1}{2}$ प्रतिशत जम्मू व काश्मीर को दिया जाय और शेष को राज्यो मे बाँटा जाय। आयोग ने इस सम्बन्ध मे जो सिफारिश की है उसको अग्रांकित तालिका मे दिया गया है।

आयोग ने राज्यो के ऋण के विषय में भी विचार किया है। आयोग ने सिफारिश की है कि बिना ब्याज के ऋण मे कोई हेर-फेर न किया जाय। शरणार्थियो को दिये गये ऋण के विषय मे आयोग ने कहा है कि १ अप्रैल १९५७ से राज्य सरकारें केन्द्र को केवल वही धन दें जो कि शरणार्थियो से मूलधन तथा ब्याज के रूप मे प्राप्त हो। इसके अतिरिक्त पिछला शेष भी उनको चुकाना होगा। इसके

राज्य का नाम	आय जो कि तीनो चीजों पर बिक्री कर समाप्त करने के कारण राज्यो को देने का आश्वासन दिया गया है	शेष का बँटवारा ९७ ७५%
आन्ध्र प्रदेश	२३५ लाख रुपये	७·८१
आसाम	८५ ,,	२·७३
बिहार	१३०	१०·०४
बम्बई	९६०	१७·५२
केरल	९५	३·१५
मध्य प्रदेश	१५५	७·१६
मद्रास	२८५	७·७४
मैसूर	१००	५·१३
उड़ीसा	८५	३·२०
पजाब	१७५	५·७१
राजस्थान	९०	४·३२
उत्तर प्रदेश	५७५	१७·१८
पश्चिमी बगाल	२८०	८·३१
जम्मू व काश्मीर	—	वास्तविक आय का १$\frac{3}{4}$%

अतिरिक्त ऋण को जिस पर ब्याज की दर ३ या ३ से अधिक है, दो ऋणो म बदला जाय और उस पर ३ प्रतिशत ब्याज लिया जाय। इनमे से एक ऋण वह होगा जो उन ऋणो से मिला कर बनेगा जिनके चुकाने की अवधि २० वर्ष या उससे कम है। यह ऋण १५ वर्ष में चुकाया जाय। शेष ऋणो को ३० वर्ष में चुकाया जाय। आयोग ने उस ऋण के लिए भी जिस पर ब्याज की दर ३ प्रतिशत से कम है इसी प्रकार दो ऋणो मे बदलने की सिफारिश की है। इन पर ब्याज की दर २$\frac{1}{2}$ प्रतिशत होगी।

आयोग का कहना है कि १९५६–५७ तक के पिछले पाँच वर्षों मे केन्द्र ने राज्यो को ९३ करोड रुपये प्रतिवर्ष के हिसाब से दिया है। उनकी सिफारिशों के फलस्वरूप राज्यो को १४० करोड रु० प्रतिवर्ष मिलेंगे। यह इसलिए किया गया है कि राज्यो को पचवर्षीय योजना के लिये अधिक धन की आवश्यकता है। आयोग का विश्वास है कि उनकी इन सिफारिशो के कारण राज्यो को अपने बजट के सन्तुलन मे सहायता प्राप्त होगी।

आलोचनायें—यद्यपि आयोग ने इस बात का प्रयत्न किया है कि थोडी सावधानी से राज्य अपने बजट का सतुलन कर सकें तो भी आयोग की सिफारिशो के विरुद्ध कुछ आलोचनायें की जाती हैं। आलोचना करने वाले, राज्य बगाल व दम्बई हैं

क्योंकि कल कारखानों के स्थित होने व इन राज्यों में बन्दरगाह स्थित होने के कारण सबसे अधिक आय-कर इन राज्यो मे ही एकत्र होता है। इन राज्यो का कहना है कि आय-कर का बँटवारा जनसंख्या के आधार पर न करके उसके एकत्र करने के स्थान के अनुसार किया जाना चाहिए। ऐसा न करने के कारण बम्बई, बंगाल, मद्रास राज्यो को हानि व उत्तर प्रदेश, बिहार तथा मध्य प्रदेश राज्यो को लाभ होगा।

बंगाल व बिहार का यह कहना है कि जूट निर्यात कर के स्थान पर उसको जो सहायक अनुदान मिलेगा वह १९६० ई० मे समाप्त हो जायगा। यह अनुचित है। इसको स्थायी रूप से दिया जाना चाहिए।

पश्चिमी बंगाल का यह भी कहना है कि उनको केन्द्र से जो सहायता मिलने वाली है उसमें चालू बजट के घाटे को पूरा करने की ओर ही ध्यान दिया गया है। यह अनुचित है क्योंकि इस राज्य को बहुत सा ऋण जमींदारी को समाप्त करने के कारण भी देना शेष है। आयोग को इसका भी ध्यान रखना चाहिए था।

पश्चिमी बंगाल का यह भी कहना है कि विधान की धारा २७५ के अन्तर्गत दिये जाने वाले सहायक अनुदान मे शरणार्थियो के आने के कारण जो कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं उनका कोई ध्यान नही रक्खा गया। इस राज्य को १९६०-६१ व १९६१-६२ मे ३२५ मिलियन रुपये के बदले ४७·५ मिलियन रुपये मिलने चाहियें।

पश्चिमी बंगाल तथा अन्य राज्यो का यह भी कहना है कि कुल यूनियन उत्पादन कर को ५० प्रतिशत राज्यो मे बाँटा जाना चाहिये। कुछ राज्यो का यह भी कहना है कि वह उत्पादन-कर जो कि केन्द्र तथा राज्यो मे बाँटा जायगा उसको जनसंख्या के आधार पर बाँटना अनुचित है।

नये विधान में केन्द्रो तथा राज्यो मे आय व्यय के मदो को उसी प्रकार विभाजित किया गया है कि जिस प्रकार कि १९३५ के भारत एक्ट में। हां केन्द्रीय सरकार ने अब कहीं-कहीं अपनी कर लगाने की शक्ति को अधिक बढा दिया है। जूट निर्यात कर अब केन्द्र को ही मिलेगा। जूट उगाने वाले राज्यो को केवल आर्थिक सहायता मिलेगी। राज्य पहले के समान ऋण ले सकते हैं।

भारत सरकार ने कमीशन की सब सिफारिशो को मान लिया है तथा उसके लिए आवश्यक कार्यवाही भी की जा चुकी है। परन्तु सरकार ने कमीशन की राज्यों के ऋण सम्बन्धी सिफारिशो को नहीं माना है क्योंकि ऐसा करने से भारत सरकार राज्य को योजना अथवा उसके बाहर के ऋण न दे सकेगी। सरकार ने कमीशन की इस सिफारिश को भी नहीं माना है कि सब प्रकार के ऋणो के लिये ब्याज की दर समान हो।

राज्यों की आय का प्रश्न—१९३५ के भारत सरकार एक्ट तथा नये विधान के अनुसार राज्यो को जो आय के मद दिए गये हैं उनमे मालगुजारी, मादक पदार्थों पर कर, जंगलात, स्टाम्प, रजिस्ट्री, बिक्री कर, कृषि आय-कर, मनोरंजन कर आदि

सम्मिलित हैं। इनमे मालगुजारी से राज्यो को सबसे अधिक आय प्राप्त होती है। पर मालगुजारी उन राज्यो में जहां पर स्थायी बन्दोबस्त है, बिल्कुल नही बढाई जा सकती। उन राज्यो मे भी जहां अस्थायी बन्दोबस्त है यह आय ३०-४० वर्ष पीछे बढ़ाई जा सकती है। दूसरे करो तथा मदो से बहुत कम आमदनी होती है। कुछ वर्षों से सभी राज्यो मे बिक्री कर लगाया गया है। उनसे राज्यो की आय कुछ बढी तो है पर वह बहुत अधिक नही बढी। इस प्रकार हम देखते हैं कि राज्यो के पास *आय के जो मद हैं उनसे आवश्यकतानुसार आय बढने की सम्भावना नही है।*

इसके विपरीत राज्यो को व्यय के जो मद सौंपे गए हैं उनमें प्रायः सभी ऐसे हैं जिन पर किसी राष्ट्र का जीवन निर्भर रहता है जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग धन्धे, सहकारिता आदि। इन सभी दिशाओ मे हमारा देश ससार के सभी देशों से पीछे है। इन सबकी उन्नति करने के लिये सैकडो करोड रुपये की आवश्यकता है। यही नही, राज्य सरकारो ने जमीदारी उन्मूलन तथा मद्य निषेध का कार्य भी अपने ऊपर लिया है। जिन पर बहुत धन व्यय होगा। पर जैसा हम ऊपर देख चुके हैं, राज्य सरकारो के पास इन सब चीजो पर खर्च करने को बहुत कम धन है। इसी कारण हमे यह आशा नही दिखाई पडती कि निकट भविष्य में राज्य सरकारें देश के लोगो का अधिक उत्थान कर सकेंगी। हमारे विचार में राज्यों की आय बढाने के लिए निम्नलिखित बातें करनी चाहियें।

(१) राज्य सरकारो को यह अधिकार मिलना चाहिए कि वे आय-कर पर १० व १५ प्रतिशत सरचार्ज लगा सकें।

(२) राज्यों को कृषि आय-कर लगाना चाहिए।

(३) राज्यो को *अपनी मोटरें तथा उद्योग-धन्धे चलाने चाहियें जिससे कि* उनकी आय बढ जाय।

भारत का सार्वजनिक ऋण

Q. 98. What is the nature and extent of India's public debt as it stands at present ?

प्रश्न ९८—बताइये कि आजकल भारत का सार्वजनिक ऋण कितना तथा कैसा है ?

उत्तर—*द्वितीय महायुद्ध के प्रारम्भ होने पर इस देश के सार्वजनिक ऋण* का बहुत बडा भाग उत्पादक (Productive) था। यह ऋण रेलो, डाकखानें-तार, नहरो आदि मे लगा हुआ था। इस ऋण का कुछ भाग स्टर्लिङ्ग मे तथा कुछ रुपये मे था। १९३७-३९ मे यह ऋण इस प्रकार था—७३६·६४ करोड अथवा ६१·१२ प्रतिशत रुपए में तथा ४६६·१२ करोड अथवा ३८.८ प्रतिशत स्टर्लिङ्ग मे। इस ऋण मे से ७८·४ प्रतिशत उत्पादक तथा केवल १९.२ प्रतिशत अनुत्पादक था तथा शेष प्रतिभूतियों के रूप मे लगा हुआ था।

द्वितीय महायुद्ध में सरकार का खर्च बहुत बढ़ गया। यह खर्च सरकार ने कर, ऋण तथा मुद्रा-स्फीति द्वारा चलाया। युद्ध काल में सरकार ने छ वर्ष के डिफेंस बौंड्स, दसवर्षीय डिफेन्स सेविंग सर्टिफिकेट तथा बिना ब्याज के बौंड चलाये। इसके अतिरिक्त तमाम सरकारी नौकरों के लिये डिफेन्स सेविंग बैंक एकाउन्ट की भी स्थापना की गई। इस प्रकार रुपये ऋण में वृद्धि होती चली गई। मार्च १९४६ में यह बढ़कर १९३६ ९५ करोड रुपये हो गया।

इसके विपरीत स्टर्लिङ्ग ऋण मे दिनो दिन कमी होती चली गई। युद्ध के बीच भारत का व्यापारिक सतुलन उसके पक्ष मे रहा। इसके अतिरिक्त भारत ने इगलैंड, अमेरिका आदि देशो को भी बहुत सा माल भेजा। इन सबके बदले भारत को स्टर्लिङ्ग दिया गया। ऐसा करने के कारण स्टर्लिङ्ग की मात्रा दिनोदिन बढ़ती चली गई। यहाँ तक कि १९४६ में १३३ लाख पौंड की स्टर्लिङ्ग भारत के पक्ष मे हो गई। इसी बीच सरकार ने स्टर्लिङ्ग ऋण को बहुत से समझौतो द्वारा कम किया। ऐसा करते-करते युद्धकाल का प्राय सभी स्टर्लिङ्ग ऋण चुका दिया गया। जो थोड़ा ऋण बचा वह कुछ बातो के कारण नहीं चुकाया जा सका। १९५५-५६ मे यह ऋण केवल २३·२८ करोड था तथा १९५६-५७ के बजट का अनुमान २२·२६ करोड रु० था। १९५८-५९ क सशोधित बजट के अनुसार यह ऋण ३० ७६ करोड रुपये था परन्तु १९५९ ६० के बजटके अनुसार इसकी मात्रा ७१ ४४करोड रु० होगी।

सार्वजनिक ऋण की वर्तमान स्थिति

भारतवर्ष के सावजनिक ऋण की वतमान स्थिति इस प्रकार है—

रुपया ऋण—मार्च १९३९ ई० मे यह ऋण ७०९ ९६ करोड रुपये था। मार्च १९४६ मे यह बढ़कर १९३६ ९५ करोड रु० हो गया। युद्ध के पश्चात् भी बहुत सी बातों के कारण इस मे उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है यहाँ तक कि ३१ मार्च १९५९ तक यह ४५९३ करोड रु० हो गया।

अल्पकाल ऋण (Floating Debt)—हमारे देश मे युद्ध काल मे बहुत सा धन राजकोष विपत्रो (Treasury Bills) से भी एकत्र किया गया। १९३९ से १९४३ तक ये निरन्तर बढते रहे। १९३९ में यह ऋण ४५ ३० करोड करोड रु० था जो कि कुल ऋण का ६ ५ प्रतिशत था परन्तु १९४३ मे यह २६४ ७० रु० हो गया जो कि कुल का २१ ९ प्रतिशत था। २० दिसम्बर १९४६ ई० से राजकोष विपत्रो का जानता का बचना बन्द कर दिया गया पर तु ९ सितम्बर १९५२ स उनको फिर बेचना आरम्भ कर दिया गया है। १९५८ ई० मे राजकोष विपत्र २६५ १२ करोड रु० के थे।

राजकोष विपत्रो के अतिरिक्त अल्पकाल ऋण मार्गोपाय अग्रिम (Ways and Means Advances) के द्वारा भी लिया जाता है। यह ऋण रिजर्व बैंक से दिन प्रतिदिन होने वाले व्यय के लिये लिया जाता है। इसकी अवधि ३ मास से ६ मास तक होती है।

अल्प बचतें—सरकार ने युद्ध काल मे कुछ साधनो वाले लोगो से ऋण लेने के लिये कई योजनायें चलाई। उसने १६४० ई० में दस वर्षीय डिफेंस सेविंग सर्टिफिकेट जारी किये। १६४१ ई० में पोस्ट आफिस डिफेन्स सेविंग बैंक योजना चालू की गई। १६४३ ई० में १२ वर्षीय नेशनल सेविंग सर्टिफिकेट योजना चालू की गई। अभी हाल ही में सरकार ने १० वर्षीय योजना सर्टिफिकेट तथा ऋण जारी किये हैं। १६५५-५६ में इस प्रकार का ऋण ५०५ ७० करोड रुपये था परन्तु १६५८ ५६ में वह बढ़ कर ६६५ २२ करोड रु० हो गया।

इसके अतिरिक्त अन्य ऋण की मात्रा १६५८-५६ मे ४२२·३७ करोड रुपये थी इस ऋण मे प्राविडेन्ट फ ड डाक बीमा, आदि सम्मिलित हैं।

विदेशी ऋण—इनके अतिरिक्त १६५८ मे हमारा विदेशी ऋण २११ ०२ करोड रु० था इस मे हमारा डालर ऋण १५६·८५ करोड रुपये था। भविष्य में डालर ऋण के बढ़ने की और भी सभावना है क्योंकि पचवर्षीय योजना के लिये हम बहुत सी मशीनें तथा अन्य सामान अमेरिका से मँगा रहे हैं।

इस प्रकार १६५८-५६ में भारत सरकार का यह ऋण जिस पर उसको ब्याज देना था, ४६६४ करोड रुपये था इसमें से ४५६३ करोड आन्तरिक था शेष रुपया बाह्य था।

भारतवर्ष में आजकल पचवर्षीय योजना के चलने के कारण बहुत धन की आवश्यकता है। इसलिये आजकल सरकार को बहुत सा ऋण लेना पड रहा है। इस कारण भविष्य मे हमारे ऋण का कर बढने वाला है। परन्तु इससे भय की कोई बात नही है क्योंकि हमारा अधिकतर ऋण उत्पादक कार्यों के लिए है और ऐसा ऋण कभी भी चिन्ता का विषय नही होता।

स्थानीय सस्थाओ की आय व व्यय के मद

Q 99　Discuss the main sources of income and expenditure of the Municipal and District Boards in India　How would you increase their revenue resources without increasing the burden on the overtaxed sections of the urban and rural population ?

प्रश्न ६६—भारत मे नगरपालिकाओं तथा जिला बोर्डों की आय व व्यय के मुख्य मद बताइये। आप नगर व ग्राम की करों से लदी जनता का भार बिना उनकी आय बढ़ाये कैसे बढ़ायेंगे ?

उत्तर—हमारे देश मे नगरपालिकाओं की आय के निम्नलिखित मद हैं—

(१) सम्पत्ति कर (Taxes on Property)—नगरपालिकायें मकानों तथा भूमि की स्थिति पर कर लगाती हैं। युद्ध से पूर्व इस मद से बम्बई में कुल आय का ८२ प्रतिशत, मद्रास मे ४७ प्रतिशत, आसाम में ७८ प्रतिशत तथा बिहार उडीसा मे ७७ प्रतिशत प्राप्त होता था।

(२) व्यापार, पेशे, कार्यों आदि पर कर (Taxes on Trades, Professions Callings etc)—यह कर प्राय सभी जगह लगाया जाता है परन्तु मद्रास, मध्य प्रदेश तथा बंगाल के अतिरिक्त यह कहीं भी महत्वपूर्ण नहीं है।

(३) व्यक्तियों पर कर अथवा हैसियत कर (Taxes on Persons or Haisyat Tax)—यह कर व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति तथा सम्पत्ति अथवा हैसियत पर लगाया जाता है। यह कर लगाते समय व्यक्ति की आय तथा उसके सामाजिक स्तर को ध्यान मे रक्खा जाता है।

(४) मल वाहन, रोशनी तथा अग्नि कर (Conservancy, lighting and fire Taxes)—वास्तव मे इसको कर न कहकर दर (Rate) कहना चाहिये क्योंकि यह कर नगरपालिका अपनी सेवा के बदले लोगो से वसूल करती है। इसलिये यह निश्चित करना बडा कठिन है कि नगरपालिका ने किस व्यक्ति की कितनी सेवा की है इसलिये यह कर व्यक्ति की सम्पत्ति के वार्षिक मूल्य के अनुसार लगाया जाता है।

(५) चुङ्गी, सीमा कर तथा मार्ग शुल्क (Octroi, Terminal Tax and Toll Tax)—यह भारतवर्ष की नगरपालिकाओ का सबसे महत्वपूर्ण कर है। यह बहुत पुराने समय से चलता चला आ रहा है। जब नगरपालिकाओं की सीमा में बाहर से कोई खाने पीने अथवा दूसरे उपभोग की वस्तु लाई जाती है, तो उस पर मूल्य के अनुसार अथवा सवारी के अनुसार कर लिया जाता है। इसी को चुंगी सीमा कर अथवा मार्ग शुल्क कहते हैं।

इस कर के विरुद्ध लोग बडी बडी आलोचनायें करते हैं। उनका कहना है कि व्यापार मे यह बडी बाधा उपस्थित करता है। चुगी की वापसी के कारण बहुत व्यभिचार फैलता है। इसके अतिरिक्त इस कर का भार गरीबो पर अधिक पडता है। सर जोसिया स्टाम्प ने चुंगी के विषय मे कहा है—'मेरे विचार मे सैद्धान्तिक दृष्टि से तथा अनुभव के आधार पर कोई भी देश उन्नतिशील नही हो सकता जो कि किसी भी प्रकार चुंगी पर निर्भर रहता है जिसमें सभी अवगुण हैं।

(६) व्यापारिक कार्यो से आय (Income from Commercial undertakings)—बहुत सी नगरपालिकायें अपने क्षेत्र मे लोगो को पानी, बिजली गैस आदि प्रदान करती हैं तथा बहुत से स्थानो पर वे अपनी दूकानें कसाईखाने आदि बनवा देती हैं। इन सबसे उनको आय प्राप्त होती हैं।

(७) सहायक अनुदान (Grant in aid)—नगरपालिकाओ को राज्य सरकारों से भी कई प्रकार की सहायता प्राप्त होती है जैसे शिक्षा, चिकित्सा, सहायता, यातायात के साधनो की उन्नति के लिये सहायता। यह सहायता आवर्ती अनुदान (Recurring grant) तथा सम वरद्ध अनुमान (Block Grant) के रूप में दी जाती है।

(८) विविध कर (Miscellaneous Taxes)—इन सब के अतिरिक्त नगर-

पालिकायें बाजार कर, पशुओं की रजिस्ट्री का कर, नौकर कर, घोड़ी, इक्का, बाइसिकलों आदि पर कर लगाकर भी आय प्राप्त करती हैं।

नगरपालिकाओं के व्यय के मद

नगरपालिकायें निम्नलिखित कामों पर धन खर्च करती हैं—

(१) मल वाहन (Conservancy)—नगर की सड़कों की सफाई करना, कूड़ा-करकट नगर के बाहर फिकवाना, नालियों की सफाई कराना, पाखाना नगर के बाहर पहुँचाना आदि नगरपालिकाओं के ये मुख्य कार्य हैं और इन बातों पर ही उनका सबसे अधिक धन खर्च होता है।

(२) स्वास्थ्य सेवायें (Health Services)—इसके पश्चात् नगरपालिकाओं की स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवायें भी महत्वपूर्ण हैं, नगरपालिकायें नगर में हस्पतालों का प्रबन्ध करती हैं, बच्चों के चेचक के टीके लगवाती हैं। बरसात से पहले तथा उसके बीच कुओं में लाल दवायें डालकर उनकी सफाई कराती हैं। इसके अतिरिक्त वे एक-एक स्वास्थ्य अफसर भी रखती हैं जो देखता है कि नगर में कोई चीज ऐसी न बिके जिससे रोग फैलने का भय रहता है। इस प्रकार वे रोग को रोकने के लिये पूरा प्रयत्न करती हैं।

(३) शिक्षा (Education)—हमारे देश में नगरपालिकाओं के ऊपर यह भार है कि वे प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य तथा निःशुल्क दें। प्रारम्भिक शिक्षा के अतिरिक्त कुछ नगरपालिकायें माध्यम शिक्षा का भी प्रबन्ध करती हैं।

(४) विविध व्यय (Miscellaneous Expenditure)—इन कामों के अतिरिक्त नगरपालिकायें अपने क्षेत्र में सड़कें, इमारतें, कसाईखाने व खेलने के मैदान आदि भी बनवाती हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि नगरपालिकाओं के जिम्मे बहुत सी आवश्यक सेवायें हैं जिन पर बहुत सा धन खर्च करने की आवश्यकता है। परन्तु हमारी नगरपालिकाओं की प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष की औसत आय कुछ ही रुपये है। इतनी कम आय से वे अधिक कार्य नहीं कर सकतीं। इसलिये इस बात की आवश्यकता है कि उनको आय के ऐसे साधन सौंपे जायें जिससे कि आय बढ़ जाये और वे अधिक कार्य करने लगें।

जिला बोर्डों की आय और व्यय

आय—

जिला बोर्डों की आय निम्नलिखित साधनों से प्राप्त होती है—

(१) भूमि पर उपकर (Land cess)—जिला बोर्डों की आय का मुख्य साधन भूमि पर उपकर है। इसके द्वारा उनकी ६७ से ६६ प्रतिशत तक आय प्राप्त होती है। इस कर को मालगुजारी के साथ वसूल किया जाता है। इस कर को जमींदारों से वसूल किया जाता है। परन्तु कुछ राज्यों में जमींदार इसको किसानों से वसूल कर लेते हैं।

(२) सम्पत्ति तथा परिस्थिति कर (Tax Property and circumstances) इस कर को हैसियत कर भी कहते हैं। यह कर मनुष्य की कुल आय पर लगाया जाता है। परन्तु १९३५ ई० के विधान के अनुसार सिवाय उन जिला बोर्डों को जो इस कर को प्रान्तीय स्वशासन के पहले ही लगा रहे थे, कर लगाने का अधिकार नहीं है। यह कर उन लोगो से लिया जाता है जो गांवो मे रहते हैं। इस कर मे छोटी आय वाले आदमी कर से मुक्त रहते हैं। इस कर की दर ४ पाई प्रति रुपये से अधिक नहीं हो सकती।

(३) मार्ग शुल्क-(Tolls)—जिला बोर्ड अपने क्षेत्र मे पडने वाली नदियो के घाटो का ठेका देकर मार्ग शुल्क वसूल करते हैं।

(४) कांजी हौस (Cattle Pounds)—कांजी हौस मे आवारा फिरने वाले पशुओ को बन्द कर दिया जाता है और उनका मालिक पशुओ को कर देकर छुडा सकता है। इस प्रकार जिला बोर्डों को कुछ आय प्राप्त हो जाती है।

(५) शुल्क (Fees)—जिला बोर्ड गाँवो मे प्रारम्भिक शिक्षा देने के लिये स्कूल भी खोलते हैं इन स्कूलो मे बच्चो से फीस ली जाती है।

(६) किराया (Rent)—जिला बोर्डों की कुछ आय सराय के किराये से भी वसूल हो जाती है। इनको किराये की आय दूसरी प्रकार की इमारतों से भी होती है।

(७) मेले (Fairs)—जिन जिला बोर्डों के क्षेत्रो मे मेले लगते हैं उनको उन मेलो से भी आय प्राप्त होती है। मेरठ जिले मे गढमुक्तेश्वर पर गगा स्नान का मेला तथा मेरठ नगर मे नौचन्दी का मेला प्रमुख हैं जिन से जिला बोर्डों को आय प्राप्त होती है।

सहायक अनुदान (Grants-in-aid)—जिला बोर्डों को राज्य सरकारो से भी बहुत सी आय सहायक अनुदान के रूप मे प्राप्त होती है। १९३९-४२ मे उत्तर प्रदेश मे यह आय कुल की ४० प्रतिशत थी।

व्यय—

शिक्षा—जिला बोर्डों का सबसे अधिक धन शिक्षा पर खर्च होता है। यह केवल प्रारम्भिक शिक्षा ही देते हैं। शिक्षा के लिये इनको राज्य सरकार से भी सहायता मिलती है।

(२) सडकों तथा इमारतों पर खर्च—इस मद पर इनका लगभग ३ प्रतिशत धन खर्च होता है। परन्तु यह धन बहुत कम है। वास्तव मे इनके अधिकार मे इतना बड़ा क्षेत्र होता है कि वे उसमे अपने थोडे से साधनों से सडकें आदि बनवा ही नहीं सकते।

(३) हस्पताल तथा सफाई—जिला बोर्ड स्थान-स्थान पर हस्पताल रखते हैं जिनमे गाँव के लोगों को मुफ्त दवा दी जाती है इसके अतिरिक्त ये गाँवों मे चेचक के टीके भी लगवाते हैं।

(४) **विविध व्यय**—इन सबके अतिरिक्त उनको अपने कर्मचारियो, पशुओं के हस्तालो, मेलो, नुमाइशों आदि पर भी बहुत सा धन खर्च करना पड़ता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जिला बोर्डों की आय तो बहुत कम है परन्तु उनके अधिकार मे व्यय के जो मद हैं उन पर बहुत धन खर्च करने की आवश्यकता है। उनकी प्रति व्यक्ति वार्षिक आय का औसत केवल ८ आने ही है। इतनी कम आय से ये कैसे अधिक कार्य कर सकते हैं। इसलिये इस बात की आवश्यकता है कि उनको आय के कुछ नये साधन दिये जायें जिससे कि वे अपना कार्य कर सकें।

स्थानीय संस्थाओं की आर्थिक स्थिति पर दृष्टि—

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारे देश मे स्थापित संस्थाओ के जिम्मे कुछ बहुत महत्वपूर्ण कार्य रक्खे गये है परन्तु इन कार्यों पर खर्च करने के लिये इनके पास पर्याप्त साधन नही हैं। साइमन कमीशन ने इनकी आय के विषय में कहा था, सब प्रकार की स्थानीय दरों, नगर तथा ग्राम, से १९२७-२८२५ लाख (२२ million) पौंड की आय प्राप्त हुई, जो कि उस वर्ष मे केवल लन्दन काउन्टी कौंसिल की दरो की आय से कुछ ही अधिक है।

भारतीय कर जांच समिति के अनुसार उनकी आयको बिना लोगो का कर-भार बढाए निम्नलिखित ढग से बढा सकते हैं।

(१) मालगुजारी को उचित बना दिया जाय जिससे कि इन संस्थाओ को ऊंची दर पर भूमि उपकर (Land cess) लगाने का अवसर मिल जाय।

(२) प्रातीय सरकारों द्वारा एकत्र किए गये भूमि के किराये तथा गैर कृषि भूमि की बढी हुई आय मे से स्थानीय संस्थाओ को कुछ भाग दिया जाय।

(३) नगरपालिकाओ को विज्ञापनो पर कर लगाने का अधिकार दिया जाय।

(४) मोटर पर से आयात कर को घटाया जाय जिससे कि प्रान्तीय सरकारें उन पर कर लगा सकें तथा उसको स्थानीय संस्थाओ मे बाँट सकें।

(५) प्रान्तीय सरकारें इनको अधिक आर्थिक सहायता दें।

बम्बई तथा उत्तर प्रदेश की स्थानीय स्वशासन जाँच समितियो ने इन सुझावो का अनुमोदन किया तथा उत्तर प्रदेश की समिति ने कुछ और भी सुझाव दिये।

(६) प्रान्तीय कोर्ट फीस का कुछ भाग इनको दिया जाय।

इनके अतिरिक्त ये संस्थायें अपनी आय लोगो को बिजली, पानी, गैस आदि देकर तथा अपनी मोटर आदि चला कर बढ़ा सकती है।

१९४९ में नियुक्त स्थानीय वित्तीय जाँच समिति तथा १९५३ ई० मे नियुक्त कर जांच आयोग ने स्थानीय संस्थाओं के वित्त के विषय मे जाँच की। इनमे से स्थानीय वित्तीय जांच समिति ने सुझाव दिया है कि रेल, समुद्र तथा हवाई जहाज से ले जाने वाले माल (Terminal Taxes) तथा यूनियन लिस्ट के ८९वें मद के अन्तगत रेल भाडे तथा किराये पर लगाये गये कर स्थानीय संस्थाओ के लिये सुरक्षित

रहने चाहियें। इसने यह भी सुझाव दिया है कि भूमि, इमारतो, खानो के अधिकारो, स्थानीय सस्थाओ के क्षेत्र मे आने जाने वाले माल, बिजली की बिक्री व उपभोग, अखबार के अतिरिक्त दूसरे विज्ञापनो, सडक तथा पानी से ले जाने वाले माल व यात्रियों, गाडियो, पशुओ, पालतू, जानवरो, पेशो, विलासिताओ आदि पर कर तथा विधान की सातवी तालिका मे राज्यो के लिये निश्चित मार्ग शुल्क तथा प्रति व्यक्ति कर स्थानीय सस्थाओं के काम आने चाहियें।

कर जाँच आयोग का मत है कि राज्यो की वर्तमान प्रवृत्ति जिसके कारण वे स्थानीय सस्थाओ के कर लगाने के अधिकारो मे हस्तक्षेप करती है, बडी खराब है तथा उसको समाप्त करना चाहिये और कुछ कर केवल स्थानीय सस्थाओ के लिये सुरक्षित रहने चाहियें। आयोग का मत है कि इसके लिए विधान मे सशोधन करने की आवश्यकता नही है। राज्य सरकारो को चाहिये कि वे स्वय ही हस्तक्षेप करना छोड दे तथा स्थानीय सस्थाओ को उन करो को लगाने का प्रोत्साहन दें जो उनके लिये निश्चित किए हुए हैं। आयोग यह बात भी पसन्द नही करता कि राज्य व स्थानीय सस्थायें आपस मे कर का बँटवारा करे। आयोग का मत है कि विशेष कामो के लिए सहायक अनुदान देना तथा अच्छे स्तर का काम करने के लिये सहायता देना अधिक उचित है।

आर्थिक योजना तथा राष्ट्रीय आय

Q 100. Describe the cheif features of the first Five Year Plan On what factors does its final success depend ?

प्रश्न १००—पचवर्षीय योजना की मुख्य बातें बताइये। इसकी अन्तिम सफलता किन बातों पर निर्भर है ?

द्वितीय महायुद्ध मे भारत की आर्थिक उन्नति के लिए बहुत सी योजनायें देश के सामने रक्खी गईं जिनमे बम्बई योजना, गांधी योजना, जन योजना मुख्य हैं। परन्तु इन योजनाओं मे कोई भी ऐसी नही थी जो देश के सब पहलुओं पर दृष्टि डालती तथा जिसमें देश के सब प्रकार के वर्तमान साधनो को ध्यान में रखते हुए एक उचित ध्येय सामने रक्खा गया हो। इस कारण उनमें से किसी को कार्यान्वित न किया जा सका। मार्च सन् १९५० ई० में एक राष्ट्रीय योजना आयोग (National Planning Commission) की स्थापना की गई जिसके अध्यक्ष हमारे प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू थे। इस आयोग ने जौलाई १९५१ ई० मे पाँच वर्ष के समय (१९५१ से १९५६ तक) के लिए एक योजना की रूप-रेखा पेश की। यह १७९३ करोड रु० की थी। इस रूप-रेखा को केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारो तथा विभिन्न सार्वजनिक सस्थाओ ने देखा तथा उस पर अपनी आलोचना की। इन सब आलोचनाओं को ध्यान मे रखकर दिसम्बर १९५२ ई० मे अन्तिम योजना को लोक-सभा मे पेश किया गया।

यह योजना तीन भागो मे बांटी गई है—पहले भाग मे बताया गया है कि एक पिछडी हुई अर्थ-व्यवस्था को किस प्रकार उन्नत किया जा सकता है तथा उस अतिम ध्येय का भी वर्णन किया गया है जिसके लिए राष्ट्र को अपनी शक्ति लगानी चाहिए। दूसरे भाग में योजना की व्यवस्था तथा सार्वजनिक सहयोग का वर्णन है। तीसरे भाग मे उन्नति के विभिन्न प्रोग्राम दिये गये हैं। इनको तीन बडे खण्डो मे बांटा गया है—(अ) कृषि, सिंचाई तथा सामुहिक विकास, (आ) उद्योग तथा यातायात, (इ) सामाजिक सेवायें तथा रोजगार।

उद्देश्य—योजना आयोग के अनुसार इस योजना का उद्देश्य उन्नति के मार्ग को खोलना है जिससे कि देश के लोगो का जीवन-स्तर ऊँचा हो जाए और उनको अच्छा जीवन बिताने के लिये अवसर प्राप्त हो जाए। इस योजना में देश के सब प्रकार के साधनो (भौतिक तथा मनुष्य सम्बन्धी) को काम मे लाने के ऊपर दृष्टि रखी गई है जिससे कि देश मे वस्तुओ तथा सेवाओ की अधिक उत्पत्ति हो सके और

धन-वितरण की असमानता दूर हो सके। योजना मे बताया गया है कि इन उद्देश्यो की पूर्ति करने के लिये हमको जल्दी नही करनी चाहिए वरन् सोच-समझ कर धीरे-धीरे काम करना चाहिए।

इस योजना मे राज्य तथा जनता के लिये कार्य क्षेत्र निश्चित किये गये हैं। राज्य का कार्य पूँजी का निर्माण करना, उत्पादन की गई पद्धति को प्रोत्साहन देने तथा चालू करने की सुविधा देना तथा समाज मे उत्पादन शक्तियो तथा वर्ग सम्बन्धो को एक सूत्र में बाँधना है। जनता को भी कार्य करने का अवसर मिलना आवश्यक है परन्तु उसको पूर्ण रूप से स्वतन्त्र नही छोडा जा सकता। खेती यद्यपि व्यक्ति स्वय करते हैं परन्तु सरकार का कर्तव्य है कि वह सिचाई, शक्ति, सडक व यातायात का प्रबन्ध करे। इसके अतिरिक्त सरकार को फसल के बेचने तथा टैक्नीकल सलाह देने मे भी सहायता करनी चाहिये। इसी प्रकार उद्योगो को यद्यपि निजी पूँजी द्वारा चलाया जा सकता है तो भी सरकार को बहुत से क्षेत्रो मे इनकी सहायता करनी पडेगी।

योजना आयोग का सुझाव है कि नियोजन अर्थ-व्यवस्था (Planned Economy) के लिए यह आवश्यक है कि मूल्यो तथा साख पर नियन्त्रण किया जाय।

योजना मे इस बात की सिफारिश की गई है कि धन वितरण की असमानता को दूर किया जाय। ऐसा तभी प्राप्त किया जा सकता है जबकि पूँजीपतियों को अत्यधिक लाभ न लेने दिया जाय तथा मृत्यु कर तथा वर्द्धमान आय कर लगाए जावे।

इस योजना मे कुछ चीजो को प्राथमिकता दी गई है। इनमे कृषि, सिचाई, शक्ति आदि सम्मिलित हैं। इस प्राथमिकता का कारण यह है कि जब तक अनाज व कच्चे माल की उत्पत्ति नही बढ़ेगी और उसमे पर्याप्त मात्रा में बचत नहीं होगी तब तक दूसरे क्षेत्रों मे उन्नति सम्भव नहीं हो सकती।

इस योजना मे अधिकतर साधन सिचाई, शक्ति तथा यातायात पर खर्च हो जायेंगे। इस कारण उद्योगो की उन्नति के लिये निजी पूँजी पर निर्भर रहना पडेगा। हाँ कुछ आधारभूत उद्योगो को उन्नत करने की जिम्मेदारी सरकार पर रहेगी। इन उद्योगो में लोहे तथा इस्पात, भारी रासायनिक बिजली के सामान आदि के उद्योग हैं।

व्यय की रूप-रेखा—

योजना मे निम्नलिखित ढग से खर्च करने का प्रोग्राम है—

	करोड रुपये	कुल व्यय का प्रतिशत
कृषि व सामूहिक विकास	३६१	१०.५
सिचाई	१६८	८.१
बहु-उद्देश्य सिचाई व शक्ति योजनायें	२६६	१२.६
शक्ति	१२७	६.१

यातायात व संवाद-वाहन	४६७	२४·०
उद्योग	१७३	८·४
सामाजिक सेवायें	३४०	१६ ४
पुनर्निवास	८५	४·१
अन्य	५२	२·५
	२०६६	१००·०

देश मे बढती हुई बेरोजगारी को देखते हुए योजना पेश करने के पश्चात् यह आवश्यक समझा गया कि उसका कुछ प्रबन्ध किया जाय। इस कारण इस समस्या के लिये योजना मे इधर-उधर कुछ वृद्धि कर दी गई है। इस प्रकार अन्त मे यह योजना २३३१ करोड़ रुपये की हो गई।

इस योजना का खर्च निम्नलिखित ढग से किया जाना था—

	करोड़ रु०
केन्द्रीय सरकार (रेलो सहित)	१२४१
राज्य भाग अ	६१०
भाग ब	१७३
भाग स	३२
जम्मू तथा काश्मीर	१३
	२०६६

यह खर्च विभिन्न मदो पर निम्नलिखित ढग से किया जाना था—

	करोड रुपये			
	केन्द्र	भाग 'अ'	भाग 'ब'	भाग 'स'
कृषि तथा सामूहिक विकास	१८६·३	१२७·३	३७·६	८·७
सिंचाई तथा शक्ति	२६५·६	२०६·१	८५·१	३·५
यातायात तथा सवादवाहन	४०६·५	५६·६	१७·४	८·८
उद्योग	१४६·७	१७·६	७·१	०·५
सामाजिक सेवायें तथा पुनर्निवास	१६१·४	१६२·३	२८·६	१०·४
विविध	४०·७	१०·०	०·७	
	१२४०·५	६१०·१	१७३·२	३१·६

योजना का धन सम्बन्धी आधार—उपर्युक्त धन को निम्नलिखित ढग से प्राप्त किया जाना था—

	केन्द्रीय सरकार	राज्य (जम्मू काश्मीर सहित)	करोड़ रु० मे योग
विकास पर धन व्यय	१२४१	८२८	२०६६

बजट सम्बन्धी साधन—

(१) चालू आय (Current revenues)	३३०	४०८	७३८
(२) पूँजी कृत (Capital) आय रक्षित कोष (Reserve) में से निकाला हुआ धन छोड़ कर।	३९६	१२४	५२०
(३) राज्यो को प्राप्त केन्द्रीय सहायता।	—२२९	२२९	
	४९७	७६१	१२५८
बाह्य साधन जो प्राप्त हो चुके हैं	१५६		१५६
योग	६५३	७६१	१४१४

इस प्रकार ६५५ करोड रुपये की कमी पडती है जिसको कि विदेशो से सहायता, आन्तरिक करो, सार्वजनिक ऋण तथा हीनार्थ प्रबन्धन (Deficit Financing) द्वारा प्राप्त किया जायेगा।

परन्तु वास्तव मे इस योजना पर केवल १९६० करोड रु० खर्च किया गया जो कि अन्तिम ध्येय बिन्दु से १७ प्रतिशत कम है। इस धन मे से २५९ करोड १९५१-५२ मे, १७३ करोड़ १९५२-५३ मे, ३४० करोड १९५३-५४ मे ४७६ करोड़ १९५४-५५ मे तथा ६१२ करोड १९५५-५६ मे खर्च किया गया। यह सब धन निम्नलिखित ढग से प्राप्त किया गया—

	करोड़ रुपये में
(१) आय के साधनो से	७५२
(२) जनता से ऋण	२०५
(३) अल्प बचत	३०४
(४) अन्य जो पूँजी कृत है	९१
(५) विदेशी सहायता	१८८
(६) हीनार्थ-प्रबन्धन	४२०
योग	१९६०

योजना मे निश्चित किये गये लक्ष्य—इस योजना से हमको अग्रलिखित वस्तुओ व सेवाओ के प्राप्त होने की आशा है—

	१९५०-५१	१९५५-५६ तक वृद्धि (योजना बिन्दु)	१९५५-५६ प्राप्ति	१९५०-५१ की अपेक्षा १९५५-५६ मे वृद्धि.	योजना बिन्दु की अपेक्षा प्रतिशत वृद्धि
(१) कृषि					
खाद्य पदार्थ (लाख टन)	५४ ०	७६	६४९	+१०९	१४३०
कपास (लाख गाँठ)	२९ ७	१२·६	४० ०	+१० ३	८२
जूट (लाख गाँठ)	३३·०	२० ९	४२ ०	+९·०	४३
गन्ना (लाख टन)	५६ २	७ ०	५८·६	+२·४	३५
तिलहन (दस लाख टन)	५० ८	४ ०	५६·६	+५ ६	१५६
(२) सिंचाई तथा शक्ति					
सिंचाई (लाख एकड)	५१० ०	१९७ ०	६५०·०	+१४०	७१
विद्युत शक्ति (स्थापित शक्ति लाख किलोवाट)	२३	१३	३४	+११	८४
(३) उद्योग					
तैयार इस्पात (लाख टन)	९·८	६·७	१२·८	+३·०	४५

कच्चा लोहा (लाख टन)	१५·७	१२·७	१७·९	+२ २	१७
सीमेंट (लाख टन)	२६·९	२१·१	४५·९	+१९·०	९०·०
खाद (हजार टन)	४६·०	४०४·०	३९४·०	+३४७ ७	८६
रेल के इंजन (संख्या)	३	१७०	१९९	+१९६	१०४
मिल का कपड़ा (लाख गज)	३७१८०	९८२०	५१०२०	+१३८४०	१४१·०
जूट का बना माल (हजार टन)	८२४	३७६	१०५४	+२३०	६१
बाइसिकिल (हजार)	९७	४३३	५१३	+४१६	९६
(४) यातायात					
जहाज (लाख G. R. T.)	३ ९	२·२	४·८	+०·९	४१
राष्ट्रीय सड़कें (हजार मील)	१२·३	०·६	१२·९	+०·६	१००·०
राज्य सड़कें (हजार मीलों में) पक्की	९७ ५	—	१२१·६	+२४·१	—
कच्ची	१५१·०	—	१९५·१	+४४·१	—
(५) स्वास्थ्य					
हस्पताल के बिस्तर	११३	१२	१२६ (१९५४ ५५ में)	—	—
दवाई खाने तथा हस्पताल (संख्या)	८६००	१४००	९८०६	—	—

योजना का आय तथा रोजगार पर प्रभाव—

१९५०–५१ ई० मे हमारी राष्ट्रीय आय ८८५० करोड थी। योजना के अन्त मे यह बढकर १०४८० करोड रुपये हो गई। इस प्रकार इसमे १८.४% की वृद्धि हो गई। इस बीच प्रति व्यक्ति आय २४६ रु० से बढकर २७४ रु० हो गई। इस प्रकार इसमे ८ प्रतिशत वृद्धि हो गई।

रोजगार के सम्बन्ध मे योजना में बताया गया है कि भारतवर्ष मे बेरोजगारी की इतनी समस्या नहीं है जितनी कि कम समय के लिए रोजगार मिलने की है। जैसे-जैसे योजना के ऊपर खर्च होता जायगा वैसे-वैसे रोजगार के साधन बढते जायेंगे। इसके अतिरिक्त योजना के कारण जितनी पूँजी एकत्र होगी उससे दूसरी योजना में रोजगार के साधन खुलेंगे।

व्यवस्था तथा सहयोग—

योजना मे बताया गया है कि सरकार का यह कर्तव्य है कि वह मालूम करे कि लोगो की आवश्यक जरूरतें क्या हैं और उनको कैसे पूरा किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त देश मे प्रशिक्षित लोगो की कमी के कारण सरकार का यह भी कर्तव्य हो जाता है कि वह लोगो को ध्यानपूर्वक देखें कि उनको कहाँ लगाया जा सकता है। देश मे अपनी जिम्मेदारी को निभाने तथा लोगो की आशाओं को पूरा करने के लिये बहुत से शासन सम्बन्धी सुधार करने पडेंगे। इन सुधारो का उद्देश्य शासन मे सच्चाई, कार्य-कुशलता, मितव्ययिता तथा जन सहयोग प्राप्त करना है। इस योजना में इस बात पर जोर दिया गया है कि योजना को सफलता पूर्वक पूरा करने के लिये पग-पग पर जनता के सहयोग की आवश्यकता है।

योजना के अन्तर्गत आर्थिक नीति—

इस योजना की आर्थिक नीतियों को निम्नलिखित ढग से बता सकते हैं—

(१) योजना का ढग—भारत मे योजना प्रजातान्त्रिक ढग से चलनी चाहिए। ऐसा ढग अपनाने में यद्यपि कुछ कठिनाइयाँ आती हैं तो भी राष्ट्र के लोगों की उत्पन्न करने की सुप्त-शक्ति का उपयोग करके लिये यही एक सबसे अच्छा ढग है।

(२) खाद्यान्न नीति—देश मे उस समय तक नियन्त्रण रहे जब तक कि खाद्यान्न उत्पत्ति ७६ लाख टन न हो जाय। प्रारम्भ से ही नियन्त्रण न रखने से मूल्य स्तर ऊँचा हो जायगा जिसके कारण सब प्रकार का खर्च बढेगा तथा योजना के चलाने मे बडी बाधा उत्पन्न होगी।

(३) मूल्य नीति—मूल्य नीति का उद्देश्य यह है कि सापेक्षित (Relative) मूल्य ढाँचा इस प्रकार का हो जिससे कि योजना मे निश्चित किये गये लक्ष्य को पूरा करने के लिये उसमे साधन लगाए जा सकें। इस फल को प्राप्त करने के लिये आर्थिक तथा भौतिक नियन्त्रण की आवश्यकता है। योजना के प्रारम्भ मे द्रव्य आय

उत्पादन की अपेक्षा अधिक वेग से बढती है जिसके कारण मुद्रा-स्फीति का डर है। इस डर के लिए मुद्रा तथा साख नीति के हथियार को अपनाना आवश्यक है।

(४) प्राथमिकता—इस योजना में (जैसा पहले बताया जा चुका है) कृषि जिसमे सिंचाई तथा शक्ति सम्मिलित हैं प्राथमिकता दी गई है।

(५) भूमि सम्बन्धी नीति—इस योजना मे इस बात की सिफारिश की गई कि उच्चतर सीमा निश्चित कर दी जाय, बडे क्षेत्र वालो को सहायता दी जाय। छोटे छोटे तथा बीच वाले किसानो मे सहकारी ढग को प्रोत्साहन दिया जाय।

(६) विदेशी पूंजी—विदेशी पूंजी का स्वागत किया जाय। इस पूंजी को उन नये स्थानों पर लगाया जाय जहाँ विशेष अनुभव तथा टेक्नीकल योग्यता की आवश्यकता है।

(७) कुटीर उद्योग—कुटीर उद्योगो में सहकारिता को प्रोत्साहन दिया जाय। इन उद्योगो की सहायता उनके लिये उत्पादन के क्षेत्रो को निश्चित करके कच्चे माल को देकर तथा अनुसधान (Research), बिक्री और प्रशिक्षा (Training) सम्बन्धी सस्थायें स्थापित करनी चाहियें।

(८) श्रम नीति—श्रमिक झगडे मध्यस्थता (Arbitration) से सुलझाने चाहियें। मजदूरो को उचित मजदूरी दिलाने के लिये विशेष प्रकार के बोर्डों का निर्माण करना चाहिये।

(९) व्यापारिक नीति—व्यापारिक नीति का उद्देश्य यह होना चाहिये कि निर्यात कर स्तर ऊँचा रहे। भुगतान आधिक्य (Balance of Payments) की कमी देश के विदेशी विनिमय के साधनो के अन्दर ही रहे। आयात और निर्यात में सम्मिलित की जाने वाली वस्तुयें देश की अर्थ तथा मूल्य नीतियो को ध्यान मे रख कर सम्मिलित करनी चाहियें तथा नीति निरन्तर चलनी चाहिए।

आलोचनात्मक निरूपण (Crit cal estimate)—

पचवर्षीय योजना एक यथार्थ योजना है। इसमे देश की प्राय सभी प्रकार की समस्याओं का विचार किया गया है। इस योजना में कृषि, सिंचाई, यातायात आदि को प्राथमिकता देकर देश की वास्तविक समस्या को ध्यान मे रक्खा गया है। बिना इनके उन्नत हुये देश की किसी प्रकार की भी उन्नति सम्भव नही थी। उद्योग-धन्धो में विशेषत आधारभूत उद्योगो की स्थापना पर जोर दिया गया है। कुटीर उद्योगों को भी प्रोत्साहन देने का प्रयत्न किया गया है। देश मे बढती हुई बेरोजगारी की समस्या को सुलझाने के लिये १७५ करोड रुपये की व्यवस्था की गई है। इस बात का भी प्रयत्न किया गया है कि निजी उद्योगों को बढ़ाने का अवसर मिले। इसके अतिरिक्त इस योजना को प्रजातान्त्रिक ढग से चलाना इस बात का सबूत है कि सरकार देश के सभी विचारधारा के लोगों को इस योजना में हाथ बटाते देखना चाहती है। इस योजना में यह बात स्पष्ट रूप से कही गई है कि बिना जनता के सहयोग के अधिक सफलता होने की आशा नहीं है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि हमारी योजना की अन्तिम सफलता निम्न-बातों पर निर्भर है—

(१) देश में पर्याप्त मात्रा मे पूँजी हो तथा बचत भी पर्याप्त हो।
(२) देश के लोग योजना को सफल करने मे पूरा-पूरा सहयोग दें।
(३) सरकारी कर्मचारी जो इस योजना के कार्य मे लगे हुए हैं, वे सच्चाई व ईमानदारी से काम करें।
(४) राज्य सरकारें इसकी सफलता के लिये पूरा-पूरा प्रयत्न करें।
(५) विदेशी सहायता पर्याप्त मात्रा मे प्राप्त हो।
(६) कृषि उत्पादन मे पर्याप्त वृद्धि हो।
(७) देश मे एक उचित मूल्य-स्तर कायम हो सके।

Q. 101. Discuss the outline of the Second Five Year Plan.

प्रश्न १०१—द्वितीय पचवर्षीय योजना की रूप-रेखा का वर्णन कीजिये।

पहली पचवर्षीय योजना मार्च १९५६ ई० मे समाप्त हुई। इस योजना से एक ऐसा आधार तैयार हुआ जिस पर एक ठोस और सर्वांगीण अर्थ-व्यवस्था और विविधतापूर्ण प्रगति की इमारत खडी की जा सके। इस योजना के फलस्वरूप कृषि और औद्योगिक उत्पादन बढा, मूल्य उचित स्तर पर है और वैदेशिक अर्थ-सम्बन्ध भी मजबूत हैं। सभी महत्त्वपूर्ण लक्ष्यो को पूर्ण किया जा चुका है। केवल इस्पात के एक नये कारखाने, बिजली के बडे कारखाने खोलने की जो व्यवस्था थी, उसमें आंशिक प्रगति हुई और शिक्षा, ग्रामोद्योग तथा लघु उद्योगो में भी सीमित प्रगति ही हो सकी है। योजना की अवधि में राष्ट्रीय आय मे अनुमानतः १८ प्रतिशत वृद्धि हुई। आशा केवल ११ प्रतिशत बढने की थी। इस योजना के कारण देश मे आशा का वायुमण्डल फैल गया।

द्वितीय योजना के लक्ष्य—

इस योजना के चार लक्ष्य हैं—(१) आय तथा सम्पत्ति की विषमताओं को दूर करना तथा आर्थिक शक्ति का अधिक समान वितरण, (२) रोजगार सम्बन्धी सुविधा के क्षेत्र का विस्तार, (३) औद्योगीकरण की गति को तेज करना तथा मूल और भारी उद्योगो का अधिकाधिक विकास, (४) राष्ट्रीय आय तथा जनता के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा करना।

इस योजना के द्वारा यह प्रयत्न किया जाएगा कि इस देश मे समाजवादी जनतन्त्र की स्थापना हो। समाजवादी रूप देश की आर्थिक नीति का उद्देश्य माना जा चुका है। इस उद्देश्य की प्राप्ति पर हमारे रहन-सहन का स्तर ऊँचा होगा,

हमारे अवसरो मे वृद्धि होगी तथा हम मे यह विश्वास उत्पन्न होगा कि देश के स
प्रयासो मे हमारा योग है और यह हमारे कल्याण के लिये हो रहा है।

योजना का आकार व रूप—

इस योजना पर कुल ७२०० करोड रुपया खर्च होगा जिसमे से ४८०० करोड रुपये सरकार तथा २४०० करोड निजी उद्योगपति खर्च करेंगे। इस प्रकार जहा प्रथम योजना मे सरकार व उद्योगपतियो का भाग ५०, ५० प्रतिशत था वहा दूसरी योजना में क्रमश ६१ व ३९ प्रतिशत है।

सरकार इस धन को निम्नलिखित ढग से खर्च करेगी—

(१) खेती, सामुदायिक योजना और राष्ट्रीय विस्तार सेवा (खेती पर ३४१ करोड रु० सामुदायिक योजना पर व राष्ट्रीय विस्तार सेवा पर २०० करोड रु०)	५६८ करोड रु०	११ ८%
(२) सिंचाई और बिजली (सिंचाई व बाढ रोकने पर ४८६ करोड रु० तथा बिजली पर ४२७ करोड रु०)	९१३ ,,	१९ ,,
(३) उद्योग तथा खानें (बडे उद्योगों और खानों पर ६९० करोड रु० व कुटीर उद्योगो पर २०० करोड रु०)	८९० ,,	१८ ५ ,,
(४) यातायात व सवादवाहन (रेलो पर ९०० करोड रु०, सडको पर २६३ करोड रु०, जहाजो, बन्दरगाहो व आतरिक जल, यातायात पर ९६ करोड रु० व डाक व तार, हवाई जहाज, आदि पर ११९ करोड रु०)	१३८५ ,,	२८·९ ,,
(५) सामाजिक सेवाओ, मकानो तथा पुनर्वास पर २३६ करोड रु० व शिक्षा पर ३०७ करोड रु०, स्वास्थ्य, पानी व सफाई पर २७४ करोड रु०, श्रम व श्रम हितकारी कार्य पिछडी व अछूत जातियों की उन्नति पर १२० करोड रु० पुनर्वास पर ९० करोड रु०)	९४५ ,,	१९·७ ,,
(६) विविध	९९ ,,	२ १ ,,
योग	४८००	१०० ०

सरकार इस योजना के लिये निम्नलिखित ढग से धन प्राप्त करेगी--

(१) चालू बचत	३५० करोड रुपये
(२) अतिरिक्त कर	४५० ,,
(३) रेलें	१५० ,,
(४) प्रोविडेन्ट फण्ड आदि	२५० ,,
(५) जनता से ऋण तथा अल्प बचत	१२०० ,,
	२४०० करोड रुपये

घाटा—यह निम्नलिखित साधनो से पूरा किया जायगा—

(६) विदेशी सहायता	८००
(७) हितार्थ प्रबन्धन (*Deficit Financing*)	१२००
(८) शेष जो आन्तरिक व बाह्य साधनो से पूरा किया जायगा	४००
	२४००

योजना मे कहा गया है कि यदि मदिरा निषेध आदि सामाजिक कार्य करने हैं तो उससे आय की कमी होगी। इस कारण अतिरिक्त आय के साधनो को ढूंढना पडेगा। इसके अतिरिक्त मुद्रा स्फीति को कम करने के लिये और अधिक करों को लगाना पडेगा। ५०० करोड रुपये छोटी बचतो से प्राप्त करने के लिये सरकार देश के हर नागरिक से अपील करेगी कि वह योजना को सफल बनाने मे अपना कुछ न कुछ हाथ बँटाये।

हीनार्थ प्रबन्धन—योजना मे १२०० करोड रुपये के हीनार्थ का प्रबन्ध किया गया है जिसमे से २०० करोड रुपये पौंड पावने में से निकाल कर शेष १००० करोड रुपये के नोट छापे जायेंगे। नोट छापने मे सावधानी से काम लेना पडेगा जिससे कि मूल्य स्तर मे वृद्धि न हो तथा बढा हुआ धन सट्टेबाजों के हाथ मे पडकर योजना की सफलता मे बाधा न डाले। इसी कारण रिजर्व बैंक को दूसरे व्यापारिक बैंकोपर नियन्त्रण करने की और अधिक शक्ति दी गई है।

कन्ट्रोल—यदि आवश्यक हुआ तो मूल्यो पर कन्ट्रोल भी लगाये जा सकते हैं। परन्तु ऐसा करने मे यह सावधानी करनी पडेगी कि उनके कारण उत्पादन मे कमी न हो। इसके अतिरिक्त गल्ले व दूसरी आवश्यक चीजो को स्टॉक किया जायगा जिससे कि वह मूल्य स्तर को अधिक बढने से रोके।

अतिरिक्त कर—योजना में अधिक कर प्राप्त करने के लिये सम्पत्ति कर, नजराना-कर तथा पूँजी लाभ कर लगाने का सुझाव दिया गया है।

विदेशी सहायता—८०० करोड़ रुपये की विदेशी सहायता इस प्रकार प्राप्त की जायगी—

९४ करोड पिछले मंजूर किये हुये जो काम मे न लाये जा सके । ६३ करोड भिलाई इस्पात के कारखाने के लिये रूस द्वारा उधार दिये जायेंगे परन्तु इसी से २० करोड रुपये लौटाने पडेगे जिससे ४३ करोड इस साधन से प्राप्त होगे । ३ करोड रुपये ब्रिटिश सरकार व बैंको द्वारा दुर्गापुर के इस्पात के कारखाने के लिये दिये जायेंगे । इस प्रकार ६३० करोड रुपये की सहायता का प्रबन्ध करना पडेगा। आशा है कि निजी-उद्योगो को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष व बैंक तथा दूसरे साधनो से १०० करोड रुपये प्राप्त हो जायेंगे । यदि विदेशी सहायता आवश्यकता से कम प्राप्त हुई तो हमे अपने साधनो को बढ़ाना पडेगा ।

योजना के कुछ ध्येय बिन्दु—योजना मे अतिरिक्त गल्ले के उत्पादन का ध्येय १५ प्रतिशत, कपास का ३१ प्रतिशत, गन्ने का २२ प्रतिशत, तेल निकालने वाले बीजो का २७ प्रतिशत तथा जूट का २५ प्रतिशत रक्खा गया है । परन्तु इससे अधिक उत्पन्न करने का प्रयत्न करना चाहिये । खनिज पदार्थों का उत्पादन भी बढाया जायगा । इसमे कोयले के उत्पादन का विशेष उल्लेख किया गया है । दक्षिणी भारत मे ४५ मिलियन टन का एक लिगनाइट (Lignite) का कारखाना लगाया जायगा जिससे २११,००० क्लोवाट बिजली भी उत्पन्न की जा सकेगी । खाद बनाने की दो नई फैक्टरी भी लगाई जायेगी । इसके अतिरिक्त बहुत सा धन पानी के जहाजों, हवाई जहाजो, रेडियो, तार, टेलीफोन आदि पर भी खर्च किया जायगा । आशा की जाती है कि १९३१ ई० तक ११ वर्ष की आयु तक वाले ६३ प्रतिशत बच्चो व ११ साल से १४ साल तक की आयु वाले २२·५ प्रतिशत बच्चो के लिये शिक्षा का प्रबन्ध किया जा सकेगा । इन्जीनियरिंग की शिक्षा देने के लिये ९ कालिज और खोले जायंगे । ऊँची शिक्षा देने के लिये कालिजो की सख्या बढाई जायगी । डाक्टरो, नर्सों, स्वास्थ्य सहायको (Health Assistants) की संख्या में क्रमश १८, ४१ व ७५ प्रतिशत की वृद्धि की जायगी । ४ करोड रुपये घरेलू योजना के लिये भी रक्खे गये हैं ।

भारत की विभिन्न योजनाओ मे इस बात का प्रयत्न किया जायगा कि खेती पर से जनसख्या का भार कम हो । इस प्रकार १९७५-७६ तक खेती पर निर्भर रहने वाले केवल ६० प्रतिशत रह जायेंगे ।

यह भी प्रयत्न किया जायगा कि दक्षिणी-पूर्वी एशिया व अफ्रीका के देशो से अपने व्यापारिक सम्बन्ध बढाये जायें तथा आपस मे एक दूसरे से लाभ उठाने का प्रयत्न किया जाय ।

यह भी प्रयत्न किया जायेगा कि देश के सभी भागो की आर्थिक उन्नति समान हो । इस कारण उद्योगो के विकेन्द्रीकरण का प्रयत्न किया जायगा तथा उद्योगो को विभिन्न भागो मे चालू किया जायगा ।

प्राथमिकता मे बदल—जहाँ पहली योजना मे खेती व उद्योग को बढ़ाने तथा उन्नत करने का प्रयत्न किया गया वहाँ दूसरी योजना मे उद्योगो की उन्नति पर

विशेष ध्यान दिया जायगा। उद्योगो मे भी ८९१ करोड रुपये मे से ६९१ करोड रुपये बडे पैमाने के उद्योगो व खानो पर खर्च किय जायेंगे। उद्योगों के साथ रेलो का विकास भी करना आवश्यक है। प्रथम योजना मे उद्योगो, खानो व रेलो पर कुल का ½ खर्च किया गया परन्तु इस योजना मे इसको बढाकर आधा कर दिया गया है। प्रथम योजना मे औद्योगिक विकास के लिए जितनी रकम मजूर की गई थी उससे कम खर्च हुआ। इसलिए दूसरी योजना मे औद्योगिक उन्नति पर विशेष ध्यान दिया गया है।

यद्यपि खाद्य तथा अन्य आवश्यक कच्चे मालो की कमी दूर हो चुकी है, पर देश की बढती हुई आबादी की सख्या को ध्यान मे रखते हुये इस योजना में खेती की पैदावार बढ़ाने पर उचित ध्यान दिया गया है। सिचाई, अच्छे बीज और खाद पहुँचाने, पशुपालन और खेती के तरीको मे सुधार आदि के कार्य-क्रमो को पूरा करने के साथ साथ दूसरी योजना मे देहातो का पुनर्गठन करने तथा राष्ट्रीय विस्तार तथा सामुदायिक विकास के काय क्रमो को युक्ति सगत प्राथमिकता दी गई है।

४८०० करोड रुपए के कुल खर्च में से २५५९ करोड रुपये केन्द्रीय सरकार द्वारा तथा २२४१ करोड रुपए राज्यो द्वारा खर्च किये जायेंगे। सामाजिक क्षेत्र के कुल ४८०० करोड रुपए के खर्च में ३८०० करोड रुपये तो नयी विकास सम्पत्ति पर तथा १००० रुपए चालू उन्नति की योजनाओ पर खच होंगे।

निजी क्षेत्र मे खर्च का अनुमान इस प्रकार है—

(१) सगठित उद्योग व खानें	५७५ करोड रुपए
(२) चाय आदि के बाग बिजली, यातायात (रेलो को छोडकर)	१२५ " "
(३) निर्माण (Construction)	१००० " "
(४) खेती व कुटीर उद्योग	३०० " "
(५) स्टॉक	४०० " "
कुल	२४००

राष्ट्रीय आय—

इस योजना के फलस्वरूप हमारी राष्ट्रीय आय जो १९५५-५६ मे १०८०० करोड रुपए थी वह बढकर १९६०-६१ मे १३४८० करोड रुपए हो जायेगी। इस प्रकार उसमे १५ प्रतिशत वृद्धि हो जायेगी। इस प्रकार हमारी प्रति व्यक्ति आय २८१ रु० से बढकर ३३० रुपए हो जायेगी।

रोजगार में वृद्धि—

आशा की जाती है कि इसके फलस्वरूप ८० लाख लोगो को रोजगार मिल सकेगा। यह भी प्रयत्न किया जायेगा कि कम रोजगार मिलने की समस्या को भी हल किया जाय।

योजना की सफलता के लिए आवश्यक शर्तें—

दूसरी योजना के ड्राफ्ट में कहा गया है कि योजना की सफलता निम्नलिखित बातों पर निर्भर होगी—

(१) कृषि उत्पादन में पर्याप्त उत्पत्ति,

(२) घरेलू बचतो में निरन्तर वृद्धि,

(३) विदेशी विनिमय की कमी को पूरा करने के लिए विदेशी सहायता,

(४) एक ऐसा मूल्य स्तर कायम रखना जिसमें अधिक परिवर्तन न हो तथा जो उत्पादकों व उपभोक्ताओं दोनो के लिये न्याय सगत हो,

(५) व्यवस्था की कार्य कुशलता और विशेषत वे साधन जो प्रथम योजना में निर्माण किये गये हैं तथा दूसरी योजना मे निर्माण किये जायेंगे, उनका उचित उपयोग करना।

योजना के खर्च मे किए गए हेर-फेर—

जिस समय दूसरी योजना बनाई गई थी उस समय विभिन्न मदो पर खर्च का जो अनुमान लगाया गया था उसमें आगे चलकर कुछ बातों के कारण हेर फेर करना पडा। परन्तु सार्वजनिक क्षेत्र के खर्च का अनुमान वही ४८०० करोड रुपए रहा।

अभी हाल ही मे राष्ट्रीय विकास काउन्सिल (National Development Council) ने सुझाव दिया है कि ४८०० करोड रुपए के खर्च को दो भागो मे बांटना चाहिए। भाग 'अ' में वे सब योजनायें सम्मिलित होंगी जो महत्वपूर्ण हैं और जिनका सम्बन्ध खेती का उत्पादन बढाना तथा उन योजनाओ को पूरा करना है जो पूरी होने के समीप हैं। इन योजनाओ पर खर्च का अनुमान ४५०० करोड रु० होगा। भाग 'ब' म शेष योजनायें सम्मिलित होगी और उनपर केवल ३०० रु० खर्च होगा। काउन्सिल का कहना है कि हमारे वर्तमान साधनो का खर्च ४२६० करोड रु० है। इस प्रकार २४० करोड रु० की कमी रहेगी। योजना आयोग ने सुझाव दिया है कि इस घन को अतिरिक्त करो, ऋणों, अल्प बचतो तथा खर्च मे कमी करके पूरा किया जाय। भाग 'ब' मे सम्मिलित योजनाओ को तभी पूरा किया जायेगा जबकि उनके लिए साधन उपलब्ध होंगे। इस प्रकार विभिन्न मदो पर खर्च का जो अनुमान लगाया गया है वह अगले पृष्ठ की तालिका से पता चल सकता है।

योजना की प्रगति पर विचार—

अप्रल १९५६ और अगस्त १९५७ ई० के बीच थोक मूल्यो मे १४ प्रतिशत वृद्धि हो गई। उसके पश्चात् उनमे कुछ कमी हो गई परन्तु अब भी वे १०६—१०७ हैं। अप्रैल १९५६ से मार्च १९५८ तक हमारे विदेशी विनिमय के साधनो मे ८२१ करोड रु० की कमी रही। उसको कम करने के लिये बहुत से पग उठाये गये। परन्तु फिर भी विदेशी विनिमय का सकट बना हुआ है।

मद	प्रारम्भिक अनुमान	कुल का प्रतिशत	कुछ योजनाओं का मूल्य बढने से ४८०० करोड रु० के खर्च मे हेर फेर	कुल का प्रतिशत	वर्तमान साधनो के अनुसार खर्च में परिवर्तन	कुल का प्रतिशत
	करोड़ रु०		करोड़ रु०		करोड़ रु०	
(१) खेती तथा सामुदायिक विकास	५६८	११'८	५६८	११'८	५१०	११'३
(२) सिचाई तथा शक्ति	९१३	१९'०	८६०	१७'९	८२०	१८'२
(३) ग्राम तथा छोटे उद्योग	२००	४'२	२००	४'२	१६०	३'६
(४) उद्योग तथा खनिज	६९०	१४ ४	८८०	१८'४	७९०	१७'५
(५) यातायात तथा सवाद वाहन	१३८५	२८ ९	१३४५	२८'०	१३४०	२९'८
(६) सामाजिक सेवाये	९४५	१९'७	८६३	१८'०	८१०	१८'०
(७) विविध	९९	-'०	८४	१'७	७०	१'६
योग	४८००	१००'०	४८००	१०० ०	४५ ०	१०९'०

पहले तीन वर्षों मे २४६६ करोड रुपए खर्च किये गये। यह योजना के कुल खर्च का ५० प्रतिशत के लगभग है। पहले तीन वर्षों मे २४६६ रुपए निम्नलिखित साधनो से प्राप्त हुये—

	करोड रुपए में
आय से बचत	४२८
रेलो से	१२६
जनता से ऋण	४४१
अल्प बचतें	२११
दीर्घकालीन ऋण व पूंजी प्राप्ति	—८० (Minus 80)
विदेशी सहायता	४५८
हीनार्थ प्रबन्धन	८८२
योग	२४६६

योजनाकाल के शेष दो वर्षों मे यह खर्च इस प्रकार होने की आशा है—

आय से बचत	३२२ करोड़ रुपए
रेलो से	१२४ ,,
जनता से ऋण (वास्तविक)	२७७ ,,
अल्प बचतें	१७३ ,,
दीर्घकालीन ऋण व विविध	

पूंजी प्राप्ति	६ ,,
विदेशी सहायता	६४२ ,,
हीनार्थ प्रबन्धन	२१० ,,
	१७५४ ,,

इस प्रकार यह आशा की जाती है कि अगले दो वर्षों मे केन्द्र व राज्य १७५४ करोड रुपये प्रदान कर सकेंगे। परन्तु ४५०० करोड रुपए का खर्च पूरा करने के लिये २०३४ करोड रुपए की आवश्यकता है। इस प्रकार लगभग २८० करोड रुपए की कमी रहेगी। इसमे से १९८ करोड रुपए केन्द्र में तथा ८२ करोड रुपए राज्यो मे कमी होगी।

इस कमी को ध्यान मे रखते हुए नवम्बर १९५८ मे राष्ट्रीय विकास परिषद् ने निश्चय किया कि (१) राज्य को गल्ले मे थोक व्यापार करना चाहिए। (२) ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को फिर से बनाने के लिए ग्रामीण सहकारी समितियो पर जोर देना चाहिये। (३) केन्द्र तथा राज्यो को प्रयत्न करना चाहिए कि वे निर्माण कार्य में मितव्ययिता से काम लें तथा अतिरिक्त साधन प्राप्त करने का प्रयत्न करें। (४) मई १९५८ मे निश्चित किये हुए खर्च के ४५०० करोड रुपए के प्रोग्राम को कायम रक्खें।

हीनार्थ-प्रबन्धन—अभी तक विदेशी साधनो मे जो कमी होती थी वह विदेशी विनिमय के साधनो से पूरी कर ली जाती थी। परन्तु क्योकि अब हमारे विदेशी विनिमय के साधन २०० करोड रुपए से भी कम रह गये हैं इस कारण अब हम उनको और नही घटा सकते। अगले दो वर्षों में हम आशा करते हैं कि प्रत्येक वर्ष १०० करोड रुपए के नोट छापे जायेंगे। परन्तु इसको जितना भी हो सके कम करना चाहिए। परन्तु यह तभी हो सकता है जब कि हमारे देश मे गल्ले का उत्पादन बढे। मार्च १९५९ तक हमको ३५० मिलियन डालर का वचन दिया गया है। परन्तु अगले दो वर्षों मे हमको ६५० मिलियन डालर की सहायता चाहिए।

द्वितीय योजना के विषय मे अन्तर्राष्ट्रीय बैंक के टेकनीकल मिशन के विचार—

मिशन इस योजना की मोटी रूप-रेखा से सहमत है परन्तु उसने इस योजना को 'बहुत कुछ उत्कृष्ट आकाक्षा वाली' बताया है। उसने सरकार से कहा कि हीनार्थ प्रबन्धन करने में बड़ी सावधानी से काम लेना चाहिए तथा मूल्यो को बढ़ने से रोकने के लिये अधिक गल्ले का स्टॉक करना चाहिए।

मिशन ने बताया है कि देश की यातायात की हालत बहुत खराब है और सिफारिश की है कि इस समस्या को रेल, सडक, तटीय जहाजरानी तथा आन्तरिक जल मार्ग उन्नत करके सुलझाना चाहिए।

मिशन ने कहा है कि सूती उद्योग तथा हाथ-करघा के बीच मे जो समझौता किया गया है, वह नही चल सकेगा इससे निर्यात करने मे बाधा पड़ सकती है।

मिशन ने कहा है कि विदेशी विनिमय कमाने के लिये अधिक सूती कपडा, द्रव्य, फसलें आदि विदेशो को निर्यात करनी चाहियें। उसका यह भी कहना है कि निजी पूँजी को योजना में सहयोग देने का अवसर देना चाहिये। उसका यह भी सुझाव है कि विदेशी पूँजी व योग्यता को प्राप्त करने के लिये खूब प्रयत्न करना चाहिए।

मिशन यह भी कहता है विभिन्न योजनाओ पर किये गए खर्च के आँकडे बहुत पुराने हो गये हैं। उनको ठीक करना चाहिए जिससे कि खर्च की गडबड दूर की जा सके।

मिशन ने सुझाव दिया है कि सरकार को रेलो के भाडे की दर, बिजली दर तथा बन्दरगाहो पर खर्च की दर बढाकर अधिक आय प्राप्त करनी चाहिए।

मिशन का कहना है कि कुटीर उद्योगों द्वारा राष्ट्रीय आय मे उतनी वृद्धि न हो सकेगी जितनी कि योजना मे बताई गई है।

मिशन ने यह भी कहा कि उपयोग की वस्तुयें पैदा करने के लिये फैक्टरी तथा गैर फैक्टरी उत्पत्ति का जो बँटवारा किया गया है वह ठीक नहीं है क्योंकि गैर फैक्टरी उत्पत्ति पर अधिक भरोसा नहीं किया जा सकता।

मिशन ने आगे कहा है कि योजना मे निर्यात बढाने के ऊपर विशेष ध्यान नही दिया गया है। सरकार उद्योगो की प्रतियोगी शक्ति को बढाने के लिये कोई विशेष ध्यान नही दे रही है।

Q 102 What in your opinion, is going to be the outline of the Third Five Year Plan ?

प्रश्न १०२—आप के विचार में तृतीय पचवर्षीय योजना की रूप-रेखा क्या होने वाली है ?

द्वितीय योजना अभी दो वर्ष मे समाप्त होने वाली है। परन्तु अभी से तृतीय पचवर्षीय योजना की रूप रेखा तैयार होनी आरम्भ हो गई है। आशा है कि यह १९५९ के अन्त तक बन कर तैयार हो जायगी।

तीसरी योजना की रूप रेखा का आधार पहली दो योजनायें ही होगी। इस योजना में हमारा ध्येय निम्नलिखित होगा —

(१) उपभोग स्तर का बढाना तथा लोगों की आर्थिक आध्यात्मिक तथा समुद्नी उन्नति करना।

(२) रोजगार के अवसर बढ़ाना।

(३) द्रुत गति से औद्योगीकरण करना।

(४) आय तथा धन की असमानता को कम करना।

पहली दो योजनाओ में हम ने कुछ क्षेत्रों मे पर्याप्त मात्रा मे उन्नति की है परन्तु कुछ दिशाओ मे हमको निराशा का मुँह ताकना पडा है। उदाहरण के लिये

इन योजनाओ को सफल बनाने मे जनता का इतना सहयोग प्राप्त नही हुआ जितना कि आशा की जाती है । इसके अतिरिक्त इन दोनो योजनाओ मे रोजगार की समस्या सुलझ नहीं पाई । योजनाओ को सफल बनाने के लिए लोगों मे जितने उत्साह तथा कठिन परिश्रम की आवश्यकता है, वह भी दिखाई नही पडता । इन दोनो योजनाओ मे भौतिक साधनो पर जोर न देकर आर्थिक साधनो पर जोर दिया गया है ।

इसी कारण तीसरी योजना की रूप रेखा तैयार करते समय हमे,बहुत ही सतर्क रहना चाहिए । दूसरी योजना मे हमने जो अनुभव प्राप्त किये उनके आधार पर ही हमे तीसरी योजना की इमारत खडी करनी चाहिए । अभी तक इस योजना के विषय मे जो चर्चायें चल रही हैं उनके आधार पर हम यह कह सकते हैं कि यह योजना लगभग ११,००० करोड रुपए की होगी । इसमे से लगभग ८५०० करोड रुपए सार्वजनिक क्षेत्र में तथा शेष २५०० करोड रुपए निजी क्षेत्र मे खर्च होगे। परन्तु पहली और दूसरी योजनाओ का अनुभव हमे यह सोचने पर मजबूर करता है कि आखिर इतना धन आयेगा कहाँ से । श्री ए० डी० गोरवाला ने अपने एक लेख में बताया है कि तीसरी योजनाकाल मे हमको ३००० करोड रुपए से अधिक विदेशी सहायता प्राप्त नही हो सकती । इसमे से लगभग ७२० करोड रुपए ब्याज आदि देने मे समाप्त हो जायेंगे । इस प्रकार वास्तविक विदेशी सहायता लगभग २२८० करोड़ रुपए होगी । ऐसा अनुमान है कि देश के भीतरी साधनो से २८०० करोड रुपए प्राप्त हो सकेंगे । इस प्रकार हमारे कुल साधनो का अनुमान लगभग ५०८० करोड रुपए है जबकि सार्वजनिक क्षेत्र के खर्च का अनुमान ८५०८ करोड रुपए है । इस प्रकार ८५०८—५०८०=३४२८ करोड रुपए की खाई होगी । इस खाई को यदि हीनार्थ प्रबन्धन द्वारा पाटा गया तो देश के अन्दर मूल्य-स्तर बहुत अधिक ऊँचा हो जायगा । इसी कारण श्री गोरवाला का मत है कि तीसरी योजना केवल ५०८० करोड रुपए की होनी चाहिए । परन्तु दूसरे बहुत से आदमियो का मत इससे भिन्न मालूम पडता है । उनका मत है कि तीसरी योजना का आकार बडा होना चाहिए । इसके लिये वे भिन्न-भिन्न साधन बताते हैं ।

तीसरी योजना की विचारधारा का आधार समाज का समाजवादी ढाँचा खडा करना होगा । परन्तु गरीबी का तो समाजीकरण हो नही सकता । इसी कारण तीसरी योजना मे औद्योगिक विकास को तेजी से बढाना होगा । परन्तु इसके साथ ही साथ हमें अपनी खेती की उन्नति की ओर भी पूरा ध्यान देना होगा । हमको न केवल खेती की उपज ही बढानी होगी वरन् यह भी देखना होगा कि खेती पर निभर रहने वाले लोगो की सख्या न बढने पाये । इसी कारण इस बात की आवश्यकता है कि गाँवो मे कुटीर उद्योगो को उन्नत किया जाय तथा इस बढती हुई जनसख्या को इन उद्योगो मे लगाया जाय । इन उद्योगो को उन्नत करने के लिए गाँवो को बिजली प्रदान करनी पडेगी तथा इन उद्योगो को मिल उद्योगो की प्रतियोगिता से बचाना पडेगा।

समाज के अन्दर समाजवाद का ढांचा खडा करने के लिये हम को गांवो मे सहकारी समितियो तथा ग्राम पंचायतो को उन्नत करना पडेगा। भविष्य मे हमको चाहिए कि सहकारी समिति को ही ग्राम की समस्त दौड धूप का केन्द्र बनाये। यदि उत्पादन तथा उपभोग के क्षेत्र मे सहकारी समितियां स्थापित हो गईं तो हमको पूंजी निर्माण करने मे भी बडी सहायता मिलेगी।

समाज के अन्दर बराबरी लाने तथा सब को सामाजिक न्याय प्रदान करने के लिये यह आवश्यक होगा कि तीसरी योजना मे बिना खेती के मजदूरो तथा नीचे मध्य वर्ग की ओर ध्यान दिया जाय। बिना खेती के मजदूरो की हालत भूमि सुधारो, उन्नत खेती करने के ढगो, कुटीर-उद्योगो आदि से सुधर सकती है। परन्तु नीची मध्य श्रेणी की हालत उन्नत करने के लिये हम को उनके लिये रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करने पडेंगे। परन्तु अधिक रोजगार बढाने के लिये इस बात की आवश्यकता होगी कि देश की आर्थिक उन्नति हो तथा हमारे देश मे विद्या के ढग को उन्नत किया जाय। आजकल यह अनुभव किया जा रहा है कि हमारी शिक्षा पद्धति का सम्बन्ध हमारी उन्नतिशील अर्थ व्यवस्था से हो। यह आवश्यक है कि शिक्षित वर्ग को बेरोजगारी का मुंह न ताकना पडे। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि हमारी शिक्षा पद्धति कम महँगी हो। यह भी आवश्यक है कि गाँव के लोगो मे गाँव मे रहने के प्रति कोई ग्लानि उत्पन्न न हो।

साधनों का गतिचलन—

इतनी बडी योजना के लिये साधनो को कैसे चालना दी जाय, यह एक बडा महत्वपूर्ण प्रश्न है। एकत त्र शासन मे तो इस प्रश्न का हल कोई कठिन नही है परन्तु प्रजातन्त्र मे इस प्रश्न को हल करना थोडा कठिन है। हमारे देश मे अभी तक मनुष्य-शक्ति को काम मे लाने के लिये बहुत कम प्रयत्न किया गया है। हमारे देश मे जन-सख्या १½ से २ प्रतिशत तक बढती है। इसीलिये ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि तीसरी योजना पर १०,००० करोड रु० खर्च करके भी हम १ २०,००,००० आदमियो को रोजगार प्रदान कर सकेंगे। परन्तु बेकारो की सख्या तीसरी योजना के प्रारम्भ मे जहाँ ७० लाख होगी वहाँ वह तीसरी योजना के अन्त म ९० लाख हो जायगी। इसी कारण श्री गुलजारीलाल नन्दा ने कहा है कि हमारे लिये इस बात की आशा करना वास्तविकता न होगी कि तीसरी योजना २ करोड १० लाख आदमियो को रोजगार प्रदान कर सकेगी। इसीलिये मैं अनुभव करता हूँ कि हम देश मे रोजगार के कुछ ऐसे नये साधन ढूंढ जहाँ पर कि वे लोग जो साधारण ढग से काम पर न लगाये जा सके उनको किसी उत्पादक काम मे लगाया जा सके। यह एक बहुत बडा काम है जिसको पूरा करना हमारे लिये बहुत ही आवश्यक है।

साधारण बेरोजगारी के अतिरिक्त कृषि क्षेत्रो की बेरोजगारी एक अलग सिर दर्द पैदा कर रही है। वर्तमान भारत मे २ करोड लोग कृषि क्षेत्र मे बेकार

हैं। इन सब के लिये भी काम की व्यवस्था करनी बड़ा आवश्यक है जिससे कि अल्प व्यय मे ये खप सकें।

मनुष्य शक्ति को काम मे लाने के अतिरिक्त हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम देश मे प्राप्त सभी साधनो का उपयोग करें। पहली दोनो योजनाओ मे केवल शहरो से प्राप्त आय पर ही ध्यान दिया गया था। परन्तु हमारे देश की कुल आय का लगभग ५० प्रतिशत गाँवो मे जाता है। यह आवश्यक है कि इस धन का उपयोग किया जाय। डा० के० एम० राज, दिल्ली स्कूल ऑफ इकौनोमिक्स का सुझाव है कि भारत के ५ लाख गाँवो मे ४ हजार करोड रु० की नयी बीमा पालिसियाँ बेचनी कोई अवास्तविक लक्ष्य नही कहा जा सकता। यदि इतनी रकम की पालिसियाँ जारी की जा सकें, तो देश को प्रीमियम द्वारा प्रतिवर्ष २०० करोड रु० की बचत होगी। उन्होने यह भी कहा है कि भारत में उपभोग वस्तुओ पर जितना खर्च होता है उसमे से गाँवो मे प्राय ६ प्रतिशत और शहरो प्राय ४ प्रतिशत विभिन्न प्रकार के पारिवारिक समारोहो मे खर्च हो जाता है। यह असम्भव नही है कि इस तरह के खर्च को घटा कर आधा कर दिया जाय। इस प्रकार छोटी छोटी बचतो से बहुत वृद्धि हो जायगी। उन्होने यह भी कहा है कि नाज के थोक व्यापार से सरकार को थोडा लाभ हो सकता है परन्तु इस साधन पर बहुत निर्भर रहना बुद्धिमानी नहीं होगी। इतना ही काफी है कि सरकार थोक व्यापार द्वारा नाज की कीमतो को स्थिर कर सके। कृषि की कीमतो को स्थिर करने के लिये न केवल यह आवश्यक कि सरकार स्वयं खरीद और बिक्री का काम अपने हाथ मे ले, वरन् नाज आदि को बडे-बडे गोदामो मे भरने की भी बहुत आवश्यकता है।

डा० राज ने यह भी कहा है कि शहरी क्षेत्रो मे भी करो में और वृद्धि करने की अभी गुंजायश है। खास तौर से ६ हजार रु० से २५ हजार रु० प्रतिवर्ष की आय के स्तर मे वृद्धि की जा सकती है। इस वर्ग के लोग प्रत्यक्ष करो के रूप मे कुल जितनी रकम देते हैं वह इस वर्ग के दूसरे देशो के लोगो की अपेक्षा बहुत कम है।

श्री सद्दीक अली का सुझाव है कि राजकीय उद्योगो जैसे रेलो आदि की ठीक व्यवस्था करने से भी बहुत आय बढ सकती है। इसके अतिरिक्त उन्होंने कहा है कि लोगों को कर बचाने से रोक कर हम अपनी आय को ५० से ७५ करोड रु० वार्षिक से बढा सकते हैं।

कुछ आंकडे—

ऐसा अनुमान लगाया गया है कि प्रति व्यक्ति १५ औंस चावल, आटा और ३ औंस दाल की खपत के हिसाब से १९६५-६६ तक १० करोड टन गल्ले की आवश्यकता पडेगी। इसके अलावा उत्पादको द्वारा अधिक उपयोग निर्यात